निकोलाई चेर्नीशेव्स्की

क्या करें?

निकोलाई चेर्नीशेव्स्की

नये लोगों की कहानियां

उपन्यास

रादुगा प्रकाशन · मास्को

पीपुल्स पब्लिशिंग हाउस (प्रा.) लिमिटेड
५ ई, रानी झांसी रोड, नई दिल्ली-११००५५

राजस्थान पीपुल्स पब्लिशिंग हाउस (प्रा.) लि.
चमेलीवाला मार्केट, एम. आई. रोड, जयपुर 302001

अनुवादक : वीरेन्द्र त्रिपाठी

संपादक विनय शुक्ला

चित्रकार ओ० वेरेइस्की

Н. Г. Чернышевский

ЧТО ДЕЛАТЬ?

На языке хинди

Nikolai Chernyshevsky

What Is to Be Done?

In Hindi

© हिन्दी अनुवाद ● रादुगा प्रकाशन ● 1989

सोवियत संघ में प्रकाशित

ISBN 5—05—002404—8

अनुक्रम

प्रस्तावना। (अनुवादक—विनय शुक्ला) 7

क्या करें?

नये लोगो की कहानियां

1. अहमक। 27
2. अहमकवाले क़िस्से की पहली कड़ी। 31
3. भूमिका। 37
पहला अध्याय। वेरा पावलोव्ना अपने मां-बाप के घर में 42
दूसरा अध्याय। प्रथम प्रेम और विधिवत् विवाह 102
तीसरा अध्याय। विवाहित जीवन और दूसरा प्रेम 227
चौथा अध्याय। दूसरा विवाह 439
पांचवां अध्याय। नये चेहरे और यवनिका 534
छठा अध्याय। दृश्य परिवर्तन 615

हर दिन प्रगतिशील, मानवतावादी साहित्य पाने के लिए

- सुबह-सुबह प्रगतिशील कविताएं, कहानियां, उपन्यास, गीत-संगीत
- देश के महान क्रान्तिकारियों भगतसिंह, राहुल, गणेश शंकर विद्यार्थी आदि का साहित्य पीडीएफ में
- देश-दुनिया की हर महत्वपूर्ण घटना पर मजदूर वर्गीय दृष्टिकोण से लेख
- हर रविवार किसी महत्वपूर्ण पुस्तक की पीडीएफ

बिगुल

मजदूर बिगुल व्हाटसएप्प चैनल से जुड़ने के लिए इस लिंक का इस्तेमाल करें

www.mazdoorbigul.net/whatsapp

जुड़ने में समस्या आने पर अपना नाम और जिला लिखकर इस नम्बर पर भेज दें – 9892808704

वैकल्पिक नम्बर : 9619039793

फेसबुक पेज : fb.com/unitingworkingclass

टेलीग्राम चैनल : www.t.me/mazdoorbigul

प्रस्तावना *

प्राय: असाधारण पुस्तकों का इतिहास भी निराला होता है।

8 फ़रवरी 1863 को पीटर्सबर्ग के लितैनी प्रोस्पेक्ट पर एक सामान्य क्लर्क को एक लिफ़ाफ़ा पड़ा मिला, उसमें 'क्या करें?' जैसे अजीब शीर्षकवाली किसी पांडुलिपि का शुरू का हिस्सा था। उस क्लर्क को इसका तनिक भी अनुमान न था कि उसे कितनी विलक्षण चीज़ मिली।

क्लर्क को मिली पांडुलिपि वास्तव में असाधारण थी और उसका निराला इतिहास भी शुरू हो चुका था। यह एक चमत्कार ही था कि यह रचना सेंसरों ने पास कर दी हालांकि वह किसी भी हालत में पास नहीं होनी चाहिये थी। प्रकाशन के तुरंत बाद यह कहकर इस पुस्तक पर कठोरतम प्रतिबंध लगा दिया गया कि यह राज्य के अस्तित्व ही के लिए अत्यंत खतरनाक रचना है। पर इसके बावजूद वह हस्तलिखित प्रतियों में प्रसारित होने लगी, उसे बड़ी उत्सुकता से पढ़ा जाता, वह लोगों को नये, सुंदर जीवन के लिए संघर्ष करना सिखाती, उसने कई पीढ़ियों के क्रांतिकारियों को जनता के ध्येय के लिए असंख्य पराक्रमों की प्रेरणा दी। इस पुस्तक ने जनमानस को इतना प्रभावित किया, जितना कि दशकों से किसी

---

* © विश्व साहित्य-माला (रूसी में) "खुदोभेस्तवेन्नाया लितेरातूरा" प्रकाशनगृह, मास्को, 1969.

भी अन्य रूसी रचना ने नहीं किया था और कुछ वर्ष बाद वह रूस की सीमाओ से बाहर फैलकर बहुत-से अन्य देशो के लोगों का मन-मस्तिष्क जीतने लगी।

यह पुस्तक किसी आरामदेह कक्ष या सार्वजनिक पुस्तकालय मे बैठकर नहीं बल्कि पेत्रोपावलोव्स्की किले के कुख्यात अलेक्सेयेव्स्की परकोटे की कालकोठरी में लिखी गयी थी और उसका लेखक राजनीतिक बंदी था। नौ दिन के अनशन के दौरान भी उसने पुस्तक का लेखन नही छोडा—"राजद्रोही" निकोलाई चेर्नीशेव्स्की (1828—1889) को एक नागरिक और मानव के नाते 'नये लोगो की कहानियां' लिखने की इतनी प्रबल आवश्यकता महसूस होती थी।

सरसरी नजर से देखने पर पुस्तक में कोई राजद्रोही बात मिलना कठिन ही था, उपन्यास 'अहमक़' शीर्षक अध्याय से शुरू होता था, किसी सामान्य रोमांचकारी उपन्यास की तरह उसमें भी सनसनीखेज वारदात—लितैनी पुल पर रहस्यमय आत्महत्या का वर्णन था और अगले अध्याय में पारिवारिक कलह का.

चेर्नीशेव्स्की की मनोवैज्ञानिक चाल सफल रही। चेर्नीशेव्स्की के मामले की जांच करनेवाले आयोग मे शामिल "महाबुद्धिशाली" अधिकारी रूस में उन्नीसवीं सदी के साठवाले दशक के दौरान क्रांतिकारी आंदोलन मे ज्वार से आतंकित थे। अपने बंदी को वे विद्रोहियो का सरगना मानते थे इसलिए वे उससे आग की तरह डरते थे। शायद उससे उन्हें आग की तरह ही धधकती रचना की अपेक्षा थी पर किसी अजीब-से "पारिवारिक" या रोमांचकारी उपन्यास के दो अध्याय पढ़कर उन्होंने सोचा कि बाक़ी सब इसी प्रवाह में चलेगा।

रूसी उपन्यासों के लिए ऐसी अपरंपरागत शुरूआत का (उपन्यास की अन्य विशेपताओं का भी) कारण केवल सेंसरों को चकमा देना ही नहीं था बल्कि लेखक जिज्ञासा उत्पन्न करनेवाले कथानक के माध्यम से अधिकाधिक पाठकों को आकर्षित करके उन्हे महत्त्वपूर्ण और गभीर समस्याओं से अवगत कराना चाहता था। अब 'क्या करें?' उपन्यास की इस अत्यंत कौतूहलपूर्ण शुरूआत के बिना, दूसरे अध्याय की अतिनाटकीयता के बिना कल्पना करना ही असंभव है, या उसके तीसरे अध्याय को ही लें जिसे लेखक ने 'भूमिका' शीर्षक देने

की "गुस्ताख़ी" की और जो इन शब्दों से शुरू होता है: "इस कहानी का विषय प्रेम है, और नायिका—औरत,—यह अच्छी बात है, चाहे कहानी बुरी ही हो..." इस व्यंग्यपूर्ण 'भूमिका' के बिना पुराने रूसी जीवन की रूढ़ियों और निरर्थक परिपाटी के प्रतीक "अनुभूतिक्षम पाठक" की इतनी सही-सटीक छवि अधूरी रह जाती।

'क्या करें?' उपन्यास को ध्यान से पढ़ने पर उसके यूटोपियन स्वरूप, चेर्नीशेव्स्की के कई व्यावहारिक निष्कर्षों और प्रस्तावों के भोलेपन के आभास के बावजूद पाठक के समक्ष एक आश्चर्यजनक, भव्य इमारत-सी बनती है। उसकी सज्जा में चाहे कुछ कमी खटकती हो, चाहे वह ज्यामिति की दृष्टि से समग्र न भी हो परंतु वह अपने उदात्त मिशन के पूर्णत: अनुरूप है—वह मनोबल को ऊंचा उठाती है, मानव का अपनी गरिमा में विश्वास जगाती है।

'क्या करें?' उपन्यास उन कृतियों की कोटि में आता है, जिनमें रूसी साहित्य की लाक्षणिक विशेपता—उच्चस्तरीय सामाजिकता, जनता, प्रगति, पृथ्वी के निवासियों के लिए बेहतर जीवन के निर्माण के ध्येय की आत्मत्याग से सेवा का भाव स्पष्ट रूप से प्रतिबिंबित होता है। यह वही विरली घटना है जब ललित साहित्य की कोई रचना अपने देश और काल की श्रेष्ठतम सामाजिक और आर्थिक विवेचना भी होती है। लेखक के लिए यह उपन्यास सही मायनों में उसका—क्रांतिकारी, विद्वान, साहित्यकार का पैना अस्त्र था। उसका जन्म भी संघर्ष की आग में हुआ और उसने संघर्ष हेतु उठ खड़े होने का आह्वान भी किया।

यह पुस्तक रूस के इतिहास के एक विकट काल में लिखी गयी। सन् 1853—1856 के क्रीमिया युद्ध में उसकी पराजय ने भू-दास व्यवस्था की निपट कमज़ोरियों को ही नहीं दर्शाया बल्कि ज़ारशाही के अस्तित्व पर ही प्रश्न-चिन्ह लगा दिया। अपनी सैन्य पराजय से दुर्बल और जमीनदारों के विरुद्ध किसानों के विद्रोहों से भयभीत ज़ारशाही सरकार को सन् 1861 में भू-दास प्रथा का अंत करने को बाध्य होना पड़ा। परंतु इस सुधार के पाखंडी, जनविरोधी स्वरूप के कारण किसानों के नये विद्रोह हुए। छात्र आंदोलन भी बढ़ता जा रहा था, गुप्त क्रांतिकारी संगठनों का जाल फैलता जा रहा था, "भड़काऊ" पर्चे और आह्वान फैलाये जा रहे थे। ज़ार की सरकार

आतंकित थी और रूस के सभी ईमानदार और प्रगतिशील लोग अधीरता के साथ जन-आक्रोश के विस्फोट, जन-क्रांति की आशा कर रहे थे।

निकोलाई गव्रीलोविच चेर्नीशेव्स्की का जन्म 12 जुलाई 1828 को सरातोव नगर में हुआ। सन् 1846 में उन्होंने पीटर्सबर्ग विश्वविद्यालय के इतिहास और भाषाविज्ञान संकाय में प्रवेश लिया। सन् 1850 में उन्होंने अपनी शिक्षा संपन्न की और एक वर्ष बाद सरातोव लौटकर वहा के हाई स्कूल में साहित्य का अध्यापन शुरू किया। मई 1853 मे चेर्नीशेव्स्की पीटर्सबर्ग चले गये जहां उन्होने कुछ समय तक कैडेट कालिज मे अध्यापन किया, एक थीसीस लिखी और पत्रकारिता के क्षेत्र में पदार्पण किया। शुरू मे उन्होंने मासिक पत्रिका "ओतेचेस्तवेन्नीये जापीस्की" में और बाद में "सोव्रेमेन्निक" मासिक में काम किया जहां उनको बड़ी प्रतिष्ठा प्राप्त हुई।

"सोव्रेमेन्निक" के संपादक निकोलाई नेक्रासोव, जनवादी क्रांतिकारी चिंतक और साहित्य मर्मज्ञ निकोलाई दोब्रोल्यूबोव के साथ मिलकर चेर्नीशेव्स्की ने सच्चाई और मानवतावाद के उच्च आदर्शों के प्रसार हेतु रूसी साहित्य मे जनवादी प्रवृत्ति का सूत्रपात किया। "सोव्रेमेन्निक" में छपे अपने साहित्यक लेखों, 'यथार्थ और कला का सौंदर्यबोधात्मक सह-संबंध' शीर्षक अपने सुप्रसिद्ध शोध-प्रबंध में (1855) चेर्नीशेव्स्की ने इस विचार का प्रतिपादन किया था कि साहित्य को "जीवन की पाठ्य-पुस्तक" होना चाहिये, उसे वास्तविकता के क्रांतिकारी कायाकल्प का आह्वान करना चाहिये। कला केवल तभी समग्र होती है जब वह जनहित की सेवा करती है। "सोव्रेमेन्निक" में चेर्नीशेव्स्की का क्रियाकलाप जनहित से अविच्छेद था।

ज़ार की सेंसरशिप के अनुसार चेर्नीशेव्स्की के लेख (नेक्रासोव की कविताओ और दोब्रोल्यूबोव के लेखो की तरह ही) राजतंत्र की नींव पर कुठाराघात करते थे। इस दृष्टि से ज़ार की पुलिस बिलकुल सही थी जो चेर्नीशेव्स्की को एकतंत्रीय सत्ता का एक सबसे भयंकर शत्रु मानती थी। उनकी गतिविधियों पर नज़र रखी जाने लगी, उनके लेखों को छापने पर प्रतिबंध लगाया गया और सन् 1862 में ज़ार के सेंसरों ने "सोव्रेमेन्निक" को आठ महीने के लिए बंद कर दिया।

उसी वर्ष की जुलाई में चेर्नीशेव्स्की को गिरफ्तार करके पेत्रोपावलोव्स्की किले मे बंद कर दिया गया।

कालकोठरी की भयंकर क़ैद की परिस्थितियों में चेर्नीशेव्स्की को पुलिस के जाली आरोपों का भंडाफोड़ करने के लिए जांच आयोग के साथ प्रचंड संघर्ष करना पड़ता था। पुलिस के पास उनके अपराध का कोई भी वैध प्रमाण नहीं था। यह समझ में ही नहीं आता कि ऐसी परिस्थितियो में वे 'क्या करें?' उपन्यास समेत तीन हजार से अधिक पृष्ठों की सामग्री लिख कैसे पाये।

इसकी केवल एक ही व्याख्या दी जा सकती है, वह यह कि वे अपने मत के अडिग और सचेत सेनानी थे। शायद इसी कारणवश 'क्या करें?' उपन्यास ने रूस के सामाजिक चिंतन, लोगों के मन-मस्तिष्क, लेखक के मित्रों और शत्रुओं दोनों पर ही इतना प्रबल प्रभाव डाला। शत्रु तो इस उपन्यास पर पिल पड़े, उसके नायकों, उसके आदर्शों, उपन्यास के महत्व, अपने पक्ष में कुछ कहने की संभावना से वंचित लेखक पर मौखिक और लिखित आक्षेपों की बाढ़-सी आ गयी। पर सरकार के प्रतिबंध के बावजूद यह पुस्तक अपना जीवन जीती रही।

रूसी सिद्धांतकर और मार्क्सवाद के प्रचारक प्लेखानोव ने अपनी एक रचना में लिखा था: "मैं पूछता हूं: हममें से ऐसा कौन है जिसने इस विलक्षण रचना को बार-बार नहीं पढ़ा? कौन है ऐसा जो उस पर मंत्रमुग्ध न हुआ हो, जो उसके हितकारी प्रभाव से स्वच्छ, बेहतर, उत्साहित और निर्भीक न बना हो? ऐसा कौन है जो नायकों की नैतिक पवित्रता से अछूता रहा हो? ऐसा कौन है जिसने इस उपन्यास को पढ़ने के बाद अपने जीवन के अर्थ, अपनी इच्छा-आकांक्षाओं पर पुनर्विचार न किया हो? हम सबने उससे नैतिक शक्ति भी और बेहतर भविष्य में विश्वास भी प्राप्त किया।

और असीम विश्वास भी
श्रम में निःस्वार्थ...

...क्या हमें कोई रूसी साहित्य की कोई अन्य रचना बता सकता है जो देश के नैतिक और बौद्धिक विकास पर अपने प्रभाव की दृष्टि

से 'क्या करें?' उपन्यास के समतुल्य हो?! कोई भी नहीं बता सकता।*

'क्या करें?' उपन्यास में सुविवेचित और तर्कयुक्त क्रांतिकारी दर्शन और समाज के समाजवादी कायाकल्प के स्पष्ट विचारों और पात्रों के अत्यंत निजी जीवन के सजीव, कहीं-कहीं भावुकतापूर्ण, वर्णन का स्वाभाविक, सामंजस्यपूर्ण समावेश है। ललित साहित्य की यह एक ऐसी अनुपम कृति है जिसमें लेखक ने एक पत्रकार की दृष्टि से समाज की ज्वलंत समस्याओं का बेबाक चित्रण किया, एक क्रांतिकारी के नाते राजनीतिक आह्वान किया और मानवजाति के उच्च आदर्शों, मानवता के शाश्वत नैतिक मूल्यों की महत्ता को दर्शाया है।

साहित्य और स्वतंत्रता हेतु संघर्ष के इतिहास में यह एक विलक्षण परिघटना है।

'क्या करें?' उपन्यास शुरू से लेकर आखिर तक विलक्षण, असाधारण है।

उपन्यास का स्पष्ट राजनीतिक स्वरूप भी अपने आप में असाधारण है। उसमे वे सभी गुण हैं जो किसी सामाजिक-राजनीतिक रचना, क्रांतिकारी घोषणापत्र या कार्यक्रम के लिए लाक्षणिक हैं। 'क्या करें?' उपन्यास मे उस तत्कालीन स्थिति का गहन विश्लेषण है जिसे अब ईमानदार लोग आगे सहने को तैयार नहीं—ये उस दुनिया की झांकियां हैं जिसमें मार्या अलेक्सेयेवना, स्तोरेश्निकोव, जान, सेर्ज जैसे लोगो और उनकी पीठ पीछे खडे अन्य ऊंचे-उंचे पदो पर आसीन लोगो का बोलबाला है, यह वेरा पावलोव्ना का दूसरा सपना है जिसमें जीवन का यथार्थ मैदान के रूप में दर्शाया गया है। उपन्यास में उस आर्थिक व्यवस्था का उल्लेख किया गया है जिसके माध्यम से इस दुनिया का नयी, मानवोचित दुनिया मे कायाकल्प किया जा सकता है। उपन्यास में वह आदर्श समाज वर्णित है जिसके लिए संघर्ष करना चाहिये—वेरा पावलोव्ना के चौथे सपने में इस भावी जीवन के प्रेरणादायी दृश्य चित्रित किये गये हैं।

---

* G. V. Plekhanov, Selected Philosophical Works, Progress Publishers, Moscow, 1980, Vol. IV, p. 149.

जैसा कि लेनिन ने कहा था चेर्नीशेव्स्की का समाजवाद यूटोपियाई है। चेर्नीशेव्स्की को लगता था कि रूस का पुराना अर्द्ध-सामंती कृषक समुदाय समाजवाद में संक्रमण का प्रथम चरण बन सकता है। इसीलिए लेखक द्वारा उपन्यास मे भविष्य के सुखी जीवन के प्रस्तुत किये गये दृश्य किसी अमूर्त आदर्श की अभिव्यक्ति करते हैं न कि ऐतिहासिक प्रक्रिया के ठोस परिणामों की।

पर उनमें भी अपना ही आकर्षण है। उनमें दर्शाया गया है कि स्वतंत्र मानव भौतिक और आत्मिक जीवन के विकास में कितनी विशाल सफलतायें प्राप्त करता है, वह प्रकृति के गूढ़ रहस्यों को कितनी गहराई से समझ लेता है। चेर्नीशेव्स्की द्वारा उपन्यास में प्रस्तुत ये भावोत्तेजक और रंगारंग, आशावाद और रोमांच, लोगों के आत्मिक परिष्कार की काव्यात्मकता से परिपूर्ण दृश्य मानव की महत्ता का गुणगान करते हैं, इसीलिए अपनी कृत्रिमता के बावजूद उन्होंने अपने समकालीनों के चितन पर इतना प्रबल प्रभाव डाला। "हर मस्तिष्क में लुक-छिपकर उथल-पुथल हो रही थी" चित्रकार रेपिन ने लिखा था, "वह चुपके-चुपके भविष्य के आशामय विचारों के सहारे जी रहा था, उसे वेरा पावलोव्ना के तीसरे स्वप्न में पुनीत आस्था थी"।*

पर प्रमुख बात यह नहीं है। चेर्नीशेव्स्की उन पश्चिम यूरोप के यूटोपियाई समाजवादियों से भिन्न थे जो शांतिपूर्ण मार्ग द्वारा समाजवाद में संक्रमण के सपने देखते थे।

'क्या करें?' उपन्यास मे चेर्नीशेव्स्की ने दर्शाया कि शांतिपूर्ण, सामान्य विकास की राह से उज्ज्वल भविष्य तक पहुंचना असंभव है। वेरा की कार्यशालाओं की नियति इसे प्रमाणित करती है, जिन्हें एकतंत्रवादी रूस की कटु वास्तविकता की परिस्थितियों में अपना विकास रोकने को विवश होना पड़ा। चेर्नीशेव्स्की ने अपने उपन्यास में पुरानी व्यवस्था को बल-प्रयोग द्वारा उखाड़ने की आवश्यकता को रेखांकित किया और क्रांतिकारी संघर्ष को अवश्यंभावी बताकर उसका आह्वान किया (इसके लिए उन्होंने कुछ व्यावहारिक सुझाव भी दिये,

* इल्या रेपिन, 'दूर की निकट यादें,' मास्को, 1953, पृ० 198 (रूसी में)।

उदाहरण के लिए षड्यत्र के सिद्धांत)। पेशेवर क्रांतिकारी रहमेतोव की छवि, और उससे संबधित बाते, वार्तालाप, संकेत आदि, उपन्यास का अंतिम, छठा अध्याय 'दृश्य परिवर्तन' कूट रूप में क्रांति की विजय को चित्रित करते हैं।

उपन्यास का कथानक भी असाधारण है। लेखक ने घटनाक्रम के चित्रण मे भी "मनमानी" बरती है—बीच का हिस्सा लेकर शुरू मे रख दिया है। बीच-बीच मे लेखक अपने पात्रो से लम्बी-लम्बी बातचीत करता है—नायिका के साथ प्यार भरी, दिल खोलकर भावपूर्ण बाते, मार्या अलेक्सेयेव्ना के साथ कुछ व्यग्य भरी, "पब्लिक" के साथ गहरी-गभीर, कभी-कभी तो करुणाजनक बातें करता है। "अनुभूतिक्षम पाठक" का तो वह निर्दयता से उपहास करता है (कभी-कभी तो लेखक बात अधूरी छोड़कर आगे बढ़ जाता है), चार बार वेरा पावलोव्ना के सपने कथातर कर देते हैं। लेखक शुरू से लेकर आखिर तक बिना कोई मुखौटा लगाये मंच पर अपने पात्रों के बीच रहता है, वह खुलकर अपनी आस्थाओ, आकांक्षाओं को व्यक्त करता है, घटनाक्रम पर अपना मत व्यक्त करता है, अपने विचारों का प्रचार करता है, अपने सामाजिक, सौंदर्यशास्त्रीय और नैतिक दृष्टिकोण की व्याख्या करता है।

निःसंदेह लेखक का चिंतन ही उपन्यास की प्रमुख शक्ति है। लेखक की चिंतनधारा ही कथानक को निरूपित करके नये-नये पात्रों की रचना करती है, व्यक्तित्वो और घटनाओ की समष्टि का निर्माण करती है।

प्रारभ मे हम मार्या अलेक्सेयेव्ना और स्तोरेश्निकोव जैसे लोगों की दुनिया में घुटती युवती के अत्यंत निजी जीवन की झलक पाते हैं। इस युवती का जीवन अपने काल के लिए लाक्षणिक है। इसीलिए परिवार की दासता से हज़ारो ऐसी युवतियों—वेरा की "बहनों" की मुक्ति का विषय उभरता है। पर यह भी महिलाओं की मुक्ति की आम समस्या का एक ही पहलू है।

पर यह समस्या इससे भी व्यापक प्रश्न से जुड़ी है, जो है—मानव के व्यक्तित्व की स्वतत्रता, उत्पीडन से **मानव** की मुक्ति। पुराने समाज को नष्ट करके, नये का निर्माण करके ही इस प्रश्न को पूर्ण रूप से हल किया जा सकता है।

महिला की वास्तविक मुक्ति के लिए मां-बाप के दकियानूसी परिवार से निकलकर सुखी दांपत्य जीवन की ही नहीं बल्कि आर्थिक आत्मनिर्भरता की भी आवश्यकता है। इसी प्रकार कार्यशाला का विचार मूर्तिमान् हुआ।

आर्थिक मुक्ति का यह साधन उन "बहनों" की सहायता का भी साधन बन गया जो वेरा पावलोव्ना की तरह ही स्वाधीनता की कामना करती हैं और इस प्रकार वह जनहित की साधना के सामाजिक कर्तव्य में परिवर्तित हो जाता है।

पर वास्तविकता की ठोस परिस्थितियों में जनहित की "शांतिपूर्ण" साधना, सामाजिक कर्तव्य का शांतिपूर्ण निष्पादन असभव सिद्ध होते हैं। "अशांतिपूर्ण" क्रांतिकारी कायाकल्प का प्रश्न उठता है।

नायिका के सामाजिक जीवन का तर्क यही है।

परिवार में समानता के संबंधों के विना महिला की पूर्ण मुक्ति की कल्पना करना कठिन है। शुरू में वेरा पावलोव्ना को लोपुखोव से विवाह सौभाग्य लगता है जिसने उसे स्वावलंबन पाने में सहायता दी पर शीघ्र ही वह खलने लगा। सच्चे प्रेम के बिना विवाह जो कम से कम स्वतंत्रता का हनन तो होता ही है, दोनों के लिए आत्मवलिदान, परस्पर नैतिक बंधन बन गया। अंततः संकट का समाधान हो जाता है: लोपुखोव मंच से हट गया। किरसानोव के साथ विवाह में वेरा पावलोव्ना को दांपत्य सुख प्राप्त होता है जो मैत्री, परस्पर आदर, आम आदर्शों पर ही नहीं बल्कि गहन प्रेम पर भी आधारित था।

परंतु यह स्वतंत्रता भी पूर्ण नहीं थी। किरसानोव और वेरा पावलोव्ना के बीच औरत जात की "कमजोरी" के बारे में परंपरागत धारणाओ के विषय में लाक्षणिक वार्तालाप हुआ। वेरा पावलोव्ना का कहना था कि "आदमी के पास कोई ऐसा काम होना चाहिये जिसे क्षण भर के लिए भी टाला न जा सके। यही संकल्प का प्रवल स्रोत है।" आगे इस काम को "व्यक्तिगत ध्येय" बताया गया है। अडिगता की मूर्ति रहमेतोव के प्रसंग में इसे "आम ध्येय" की संज्ञा दी गयी (दिसंबरवादियो को याद करें जिन्होंने लैटिन के "respublica" (जनतंत्र) के शब्दशः अनुवाद "आम ध्येय" को

अपना नारा बनाया था)। इस संदर्भ में रहमेतोव की छवि मात्र सयोग नही है जिसकी उडान इतनी ऊंची थी कि किरसानोव और वेरा पावलोव्ना जैसे "सामान्य लोग" भी नहीं उठ सकते। "आम ध्येय" का उल्लेख भी मात्र सयोग नही है।

निष्कर्ष यही निकलता है कि पात्रों के जीवन की सभी राहें क्रांति की ही ओर जाती हैं जिसके माध्यम से ही पूरी मानवजाति के जीवन में अर्थात् उनके जीवन में भी सर्वांगीण परिवर्तन संभव हैं। लेखक ने "निजी", "परिवार" की समस्याओं के दर्पण में सभी लोगो से सबंध रखनेवाली आम, व्यापक समस्याओं को दर्शाया है। कथानक के सभी "सस्तरो" पर लेखक ने "क्या करें?" प्रश्न का तर्कयुक्त उत्तर दिया है।

पर बात तर्क की ही नहीं है। चेर्नीशेव्स्की के उपन्यास के पात्र लेखक के विचारो के अभिवक्ता मात्र, निर्जीव कठपुतलियां, उसकी कोरी कल्पना कदापि नहीं हैं। ये जीते-जागते लोग हैं जिनसे लेखक को लगाव है, जिनके सुख की वह कामना करता है, जिनके भाग्य के प्रति वह उदासीन नहीं है।

ये जीते-जागते लोग हैं पर वे असाधारण भी हैं। उनके काम, विचार, पारस्परिक सबध, रहन-सहन — सब असाधारण हैं। यह बात भी असाधारण है कि उनके आंतरिक जगत में संवेगो का नहीं बल्कि बौद्धिक पक्ष का पलड़ा भारी है। अपने कृत्यों के अलावा वे व्यापक सामाजिक समस्याओं पर अपने विचार-विमर्श, वार्तालापो, वाद-विवादों के माध्यम से भी अपनी अभिव्यक्ति करते हैं। और उनका यह विचार-विमर्श अमूर्त, पडिताऊ नहीं है, बल्कि उसका सार्विक, जीवंत महत्व है, इसी में नायको की प्रमाणिकता निहित है।

उनकी नैतिकता भी असाधारण है: वे आत्मत्याग से उदात्त कार्य करते हैं पर यह करते हुए उदात्तता और आत्मत्याग के बारे मे तनिक भी नहीं सोचते, वे कहते हैं कि यह वे अपने ही लाभ हेतु, "विवेकपूर्ण स्वार्थ" के लिए करते हैं। इस नैतिकता की सभी सीमितताओं के बावजूद उसकी विशिष्टता और उदात्तता से इंकार नही किया जा सकता। इसके अनुसार मानव के लिए अपने कृत्य की सच्चाई, विवेकपूर्णता और नैतिकता की अनुभूति से अधिक बडा नैतिक "लाभ" नही होता है।

इन लोगों की विष्टिताओं में से एक ऐसी भी है जो शायद सर्वप्रमुख ही हो। चेर्नीशेव्स्की ने इसका उपन्यास में बारंबार उल्लेख किया — यह नये प्रकार का मानव है जो जीवन की भी और उनकी लेखनी की भी उत्पत्ति है। "इस कोटि के लोग हमारे साथ बहुत अधिक देर से नहीं हैं। अभी हाल तक केवल अग्रदूत तो थे, विरल अपवाद जो अपने को अलग-थलग-से, अशक्त-से महसूस करते थे और इस कारण निष्क्रिय निराश अथवा उत्तेजित होते अथवा रोमानी और काल्पनिकता के रंग में डूब जाते अर्थात् दूसरे शब्दों में इस कोटि की मुख्य विशिष्टता उनमें नहीं हो सकती थी — इसकी सुशान्त व्यावहारिकता, इसकी निश्च्छल और सुविचारित कार्यकुशलता और सक्रिय विवेक उनमें नहीं होते। यद्यपि प्रकृति तो उनकी ऐसी ही थी, लेकिन वे इस कोटि के लिए अविकसित ही थे, जिसकी नवीनता को नये सिरे से प्रतिष्ठित करना आवश्यक है..." जैसा कि चेर्नीशेव्स्की ने स्वयं कहा उन्होंने एकाकी नायकों की परंपरा को तोड़ दिया जो उच्च भावों और सद्विचारोंवाले मानव होते हैं पर अपने इन सद्विचारों को वे कार्य रूप में परिणत करने की संभावना से वंचित होते हैं, भले होते हैं पर निर्बल या अपनी शक्ति का समुचित उपयोग नहीं कर पाते। जोर्ज सैंड और डिकन्स के नायक ऐसे ही हैं।

चेर्नीशेव्स्की ने उनके और रूसी साहित्य के इसी प्रकार के "फालतू आदमी" के स्थान पर **नये मानव** को अपना नायक बनाया। साहित्य में, जहां पहले प्रायः नेकी और उदात्तता दुर्बलता के साथ-साथ चलते थे और शक्ति का पलड़ा खल नायक के पक्ष में भारी होता था पर चेर्नीशेव्स्की का यह नया मानव शक्तिसंपन्न है। और उसकी शक्ति उसके विचारों में ही नहीं, बल्कि उसके संतुलित विवेक, उसकी निष्ठुर व्यावहारिकता, उसके यथार्थ और जीवन व समाज के नियमों को समझने की उत्कंठा में निहित है। इन लोगो की शक्ति इसमें है कि वे "अपवाद" नहीं हैं, कि वे अकेले नहीं हैं। बकौल चेर्नीशेव्स्की के "हाल ही में इस प्रकार के लोग हमारे बीच आये हैं और उनकी संख्या तेज़ी से बढ़ती जा रही है।" 'क्या करें?' उपन्यास इस विचार की पुष्टि करता है, बात इसी में नहीं कि उसमें गुणी के धनी नायकों की भरमार है, इसमें भी नहीं कि लेखक ने उनकी मित्र-मंडली के अनेक सदस्यों

के चरित्रो की रूपरेखा प्रस्तुत की और कहीं-कहीं तो उनका सजीव चित्रण किया बल्कि कथानक की संरचना और पात्रों के परस्पर सबंधो में भी है। किरसानोव समाज के "रसातल" से नास्त्या को उबारता है कतेरीना पोलोज़ोवा का उपचार करता है और इस प्रकार उसे नया अर्थपूर्ण जीवन जीने के लिए तैयार करता है। लोपुखोव वेरा पावलोव्ना को "कालकोठरी" से निकालकर मुक्त करता है और उसे "नया मानव" बनने में सहायता देता है और वेरा पावलोव्ना नास्त्या को यही राह दिखाती है, पोलोज़ोवा को सामाजिक क्रियाकलाप मे आकर्षित करती है जो बाद मे ब्यूमोट-लोपुखोव की पत्नी बनती है। रहमेतोव, जिसमें मोते "विशिष्ट मानव" को एक समय किरसानोव ने जगाया था, कठिनाई के क्षण मे वेरा पावलोव्ना की सहायता के लिए आगे आता है और उसे हताश होकर शुरू किये गये काम को छोडने से रोकता है... इस प्रकार नेकी और पारस्परिक सहायता की अटूट शृखला निरूपित होती है, नायक हरदम उनके प्रति की गयी भलाई के बदले दूसरो की भलाई करते जाते हैं जिसके फलस्वरूप "नये लोगों" का परिवार बढता और समृद्ध होता जाता है।

चेर्नीशेव्स्की को इसका विशाल श्रेय जाता है कि उन्होंने रूसी साहित्य मे सक्रिय और शक्तिशाली नायक का निर्माण किया। नये लोग सद्हृदय स्वप्नदर्शी नहीं हैं, वे प्रचंड संघर्ष करने मे समर्थ हैं, वे न केवल ईंट के बदले पत्थर से चोट करनेवालों में हैं बल्कि पुरानी रीतों, जीवन के पुराने मानकों पर चढ़ाई भी करते हैं, वे ठंडे दिमाग से परिस्थितियों को आंकना सीखते हैं ताकि उनके ध्येय पर कोई आंच न आये।

इसी वातावरण मे रहमेतोव जैसे शक्तिशाली, अनोखे मानव की छवि उत्पन्न होती है। 'क्या करें?' उपन्यास के अनेकानेक समीक्षक इस बात में सहमत हैं कि रहमेतोव के गिर्द रहस्य का वातावरण, जिसके दो—बाह्य और आंतरिक—कारण थे (सेंसर की समस्या और रहमेतोव का षड्यंत्रकारी स्वभाव), उसकी छवि को काव्यमय बनाता है। वास्तव में रहमेतोव उपन्यास के क्रिया-व्यापार में लगभग कोई भाग नहीं लेता, पर इससे उपन्यास में उसकी उपस्थिति का महत्व बढ ही जाता है। यह सयोग नहीं है कि लेखक इतनी देर तक अपने

इस नायक की छवि के बारे में बातें करता है, इतनी उपहासपूर्ण "धृष्टता" के साथ "अनुभूतिक्षम पाठक" से उपन्यास में प्रकट हुई इस छवि की "पहेली" बूझने को कहता है। लेखक ने यह संयोगवश नहीं कहा कि यह नायक सुरुचि की सर्वप्रमुख, मूलतम मांग की पूर्ति हेतु मंच पर लाया गया है जिसका प्रयोजन पाठक को वस्तुओं को उनके "सच्चे रूप में" दिखाना है। और सच्चाई तो यह है कि अपने सभी सद्गुणों के बावजूद न लोपुखोव, न ही किरसानोव या वेरा पावलोव्ना अपने काल के नायक हैं बल्कि रहमेतोव जैसे ही लोग ही वास्तव में युग-पुरुष, "सभी के प्रेरणा स्रोत और धरती की खुशबू की खुशबू", केवल वे ही रूस को तंद्रा से जगा सकते हैं, उन्हीं की ओर लेखक आस लगाकर देखता है। दूसरे शब्दों में कहा जाय- तो उपन्यास में रहमेतोव की छवि एक प्रकार से क्रांति के समतुल्य है और क्रांतिकारियों की कई पीढ़ियों पर गहनतम प्रभाव डालनेवाले उसके व्यक्तित्व, उसके जीवन का उदाहरण वास्तव में क्रांतिकारी संघर्ष का आह्वान है।

उल्लेखनीय है कि अपनी कठोरता, अतिवाद जैसे अन्य गुणों के बावजूद रहमेतोव की छवि में असीम मानवीयता सन्निहित है। रहमेतोव के मानवीय गुण उच्च आदर्शों में ही नहीं या इसीमें नहीं प्रकट होते कि स्वयं लेखक ने अपने नायक को भलाई से उत्कट प्रेम करनेवाला मानव बताया, कि वेरा ने उसकी विष्षणता और रुखाई के बावजूद उसकी स्नेही और नेक आत्मा को पहचाना। असल में बात उन शब्दों के सार में है जो रहमेतोव के बारे में अन्य नायक और लेखक कहते हैं, जैसे—"असाधारण व्यक्ति, अत्यन्त विरल जाति का नमूना"। पर वास्तव में रहमेतोव में कुछ भी अतिमानवीय, लौह नहीं है। बस वह अन्य लोगों से अधिक बलवान है, जीवन में भी तो यही होता है। हालांकि रहमेतोव अनुकरणीय उदाहरण है पर अवश्यकरणीय नहीं, लेखक पाठक से यह नहीं कहता कि "ज़रूर उस जैसा बनो, नहीं तो तुम तुच्छ होगे।" वह लोगों से रहमेतोव जैसों को समझने, उनका आदर और उनसे प्रेम करने, उनकी अगुआई में चलने का आह्वान करता है पर वह उनसे हरगिज़ यह मांग नहीं करता, जिनमें इसकी शक्ति नहीं, कि वे रहमेतोव जैसा बनें। लेखक पाठकों से अपने ऊपर अपनी शक्ति

से अधिक भारी बोझ लादकर चलने और इसे अपने जीवन का मानक बनाने को नही कहता। रहमेतोव के समक्ष हम नतमस्तक होते है पर वेरा पावलोव्ना, किरसानोव और लोपुखोव के प्रति हमारा आदर इसलिए कम नही हो जाता कि वे ईमानदारी से यह स्वीकार करते है कि रहमेतोव उनसे ऊंचा है। आखिर "नयी पीढ़ी के सामान्य भद्र लोगों" के बीच ही रहमेतोव ऐसा बना, चेर्नीशेव्स्की सभी लोगो से "सामान्य भद्र लोगों" के इस स्तर तक ही तो उठने का आह्वान करते है जिनके बीच रहमेतोव जैसे विशिष्ट लोग पैदा होते हैं।

"विचित्र" कथानक, असाधारण नायकों और उन्मुक्त संरचनावाला यह उपन्यास लेखक के स्वतंत्र सृजन का प्रमाण है। पर यह स्वतत्रता—अराजकता नही है। यह प्रमाणित करने की शायद ही आवश्यकता हो कि चेर्नीशेव्स्की ने यथार्थवाद के नियमो और यथार्थ सौंदर्य-मीमासा के उन सिद्धांतो का कड़ाई से पालन किया है जो उनके उपरोक्त शोध-प्रबंध में वर्णित हैं। जीवन की सच्चाई को चेर्नीशेव्स्की साहित्यिक रचना की मूल कसौटी मानते थे और उनका 'क्या करें?' उपन्यास इस कसौटी पर खरा उतरता है। "मेरी रचना के सभी गुण इसकी सत्यता, केवल सत्यता में निहित हैं," अपनी प्रस्तावना मे उन्होंने पूरे आधार के साथ यह लिखा था।

इसी कारणवश पिछली सदी के 60 वाले दशक में इस उपन्यास की समाज मे धूम मच गयी। रूसी क्रांतिकारियों की कई पीढ़ियों के लिए यह उपन्यास "जीवन की पाठ्यपुस्तक" था, चेर्नीशेव्स्की ने अपने शोध प्रबध में लिखा था कि प्रत्येक कलाकृति को यही भूमिका निभानी चाहिये।

इस उपन्यास की "सत्यता" सत्य-सादृश्यता मात्र नहीं है। उपन्यास की एक विशेषता यह है कि "नये लोगों" का जो जीवन में अभी अल्पसख्यक हैं, चेर्नीशेव्स्की ने विकास की प्रवृति निर्धारित करनेवाली लाक्षणिक परिघटना के रूप में चित्रण किया है। नि:संदेह उच्च आदर्श, सद्‌चरित्र नायक लेखक के दिमाग की उपज नहीं हैं। वे वास्तविकता के "भव्य" स्रोत हैं। नवीनता की उत्पत्ति ही तो गति की प्रक्रिया है, समाज के विकास में यही तो सबसे "रोचक बात" है, यही तो जीवन की शान है।

'क्या करें?' उपन्यास में हमं चेर्नीशेव्स्की की विलक्षण मनोवैज्ञानिक प्रतिभा को भी देखते हैं। कुछ नायकों के चारित्रिक और आत्मिक विकास, उनके चिंतन के विकास और वेरा पावलोव्ना के तीसरे सपने (जब वह समझ गयी कि वह लोपुखोव से प्रेम नहीं करती) जैसी घटनाओं के चित्रण में उन्होंने सूक्ष्म मनोवैज्ञानिक विश्लेषण किया है।

'क्या करें?' पुस्तक ललित साहित्य की कृति न बनती अगर उसमें सब कुछ उच्च नैतिकता के आदर्श से ओत-प्रोत न होता। नैतिकता का भाव वह नींव और शिखर है जो इस गहन राजनीतिक रचना को ललित साहित्य की रचना बनाते हैं। कथा-प्रसंग को बीच-बीच में रोककर लेखक ने "अनुभूतिक्षम पाठक" से वार्तालाप में कई बार उन तथाकथित उदारपंथियों का निर्दयता के साथ उपहास किया है जिनकी नज़र में "भौतिकवादी" एक "अनैतिक" आदमी होता है जिसके लिए "कोई भी चीज़ पवित्र नहीं होती"। इस उपन्यास के संदर्भ में ऐसा नज़रिया खास तौर से बेहूदा लगता है क्योंकि पुस्तक में जिन बातों का प्रचार किया गया है वे "खाओ-पिओ और मौज़ उड़ाओ" की भ्रष्ट नैतिकता का प्रचार नहीं हैं वल्कि उनका सर्वोपरि लक्ष्य लोगों के लिए सच्चे अर्थों में सच्ची मानवीय नैतिकता और सच्चे अर्थों में आध्यात्मिकता से समृद्ध जीवन का प्रचार करना है।

अव भी कभी-कभी यह विचित्र मत व्यक्त किया जाता है कि 'क्या करें?' में चेर्नीशेव्स्की कड़े सेंसर के कारण प्रत्यक्ष रूप से क्रांतिकारियों और सामाजिक संघर्ष के विषय में विस्तार से नहीं बता सकते थे इसलिए उन्हें "पारिवारिक उपन्यास" के रूप में अपने क्रांतिकारी और जनवादी विचारों को व्यक्त करना पडा।

पर यह मानना न केवल भोलापन होगा बल्कि यह उपन्यास की भावना और सरचना के ही नहीं उसकी वैचारिक और सौंदर्य-मीमांसात्मक अवधारणा के भी विपरीत होगा। उपन्यास की मौलिकता और नैतिक शक्ति उसके रूप, उसके "पारिवारिक कथानक" से अविच्छेद हैं। आखिर यही कथानक लेखक को क्रांति की अवश्यंभाविता और आवश्यकता के विषय को विभिन्न पक्षों से उजागर करने, विश्वास के साथ यह कहने की संभावना

प्रदान करता है कि क्रांति ही सामाजिक समस्याओं को हल करके लोगों के निजी, व्यक्तिगत जीवन की समस्याओं के भी समाधान मे सहायता करेगी। "पारिवारिक" कथानक की बदौलत ही चेर्नीशेव्स्की व्यष्टि और समष्टि के तथा समष्टि और व्यष्टि के तर्क पर अपने विचारो से पाठको को विश्वसनीय रूप से अवगत कर सके।

पर तर्क ही मुख्य बात नही है। मानवतावादी लेखक के नैतिक रवैये, उपन्यास के लहजे का भी कम महत्व नहीं है जो किसी सिद्धांतकार का शोध प्रबंध नहीं बल्कि भावविभोर मानव का प्रेम और सच्चाई की सीख देनेवाला उपदेश है। चेर्नीशेव्स्की परिवार को उपन्यास के कथानक का केन्द्रबिंदु बनाये बिना नहीं रह सकते थे क्योंकि मानव के लिए परिवार ही सबसे पुनीत और प्रिय होता है, चूंकि समाजवाद मे आस्था लेखक के रोम-रोम में बसी थी और वे समाजवाद के विषय में एक मानव की तरह दिल की बात कहना चाहते थे। मुख्य बात तो यही है कि समाजवाद उनके लिए न केवल ऐतिहासिक आवश्यकता था बल्कि सच्चे मानव की गहनतम, नैसर्गिक आवश्यकता भी, ठीक उसी तरह जैसे मानव को प्रेम और सुख की आवश्यकता होती है।

अगर इसी दृष्टिकोण से 'क्या करे?' उपन्यास का विश्लेषण किया जाय तो 'भूमिका' के ये शब्द न्यायपूर्ण और निष्कपट लगेंगे कि "इस कहानी का विषय प्रेम है..." इस दृष्टि से देखकर यही ज्ञात होता है कि यह राजनीतिक, सामाजिक और दार्शनिक उपन्यास, उपन्यास रूपी यह आह्वान वास्तव में **प्रेम की पुस्तक** है। 'प्यार-मुहब्बत का उपन्यास नहीं" बल्कि सच्चे अर्थों में प्रेम की पुस्तक जो यह बताती है कि असली, सच्चा प्यार क्या होता है और लोगो को मानव की तरह जीने और प्रेम करने के लिए किस चीज़ की जरूरत है।

लोपुखोव के प्रति प्रेम के साथ वेरा की "कालकोठरी" से मुक्ति की प्रक्रिया प्रारभ होती है। प्रेम नास्त्या को मानवोचित जीवन शुरू करने मे सहायता देता है। वेरा पावलोव्ना और किरसानोव का प्रेम उनके जीवन मे नया अर्थ भर देता है और उन्हे सारगर्भित जीवन और श्रम की प्रेरणा देता है। प्रेम ही लोपुखोव और कतेरीना को

जीवन साथी बना देता है। उपन्यास के सर्वश्रेष्ठ पृष्ठ क्रांति और प्रेम ही को समर्पित हैं। लोपुख़ोव क्रांति को अपनी "मंगेतर" कहता है। वेरा पावलोव्ना के चौथे सपने में मानवजाति के विकास के विभिन्न चरणों—प्रेम के विभिन्न चरणों—के प्रतीकों के रूप में अस्तारता, अफ्रोदीता प्रकट होती हैं। और यह गौर सुन्दरी भावी कम्युनिस्ट समाज में सार्विक प्रेम और बंधुत्व का प्रतीक है।

उपन्यास के अंत में एक और महिला की छवि मंच पर आती है, यह "काले लिबासवाली महिला" है। समीक्षक अभी तक कोई निश्चित मत नहीं बना पाये हैं कि लेखक ने इस रूप में किसको चित्रित किया है, रहमेतोव की प्रेमिका को या अपनी पत्नी ओल्गा सोक्रातोव्ना को। चाहे जो भी हो पर मुख्य बात यह है कि उपन्यास का अंतिम दृश्य भी प्रेम के विजयगान से मुखरित है जिसमें क्रांति की विजय का चित्रण है जब "काले लिबासवाली महिला" "गुलाबी लिबासवाली महिला" में परिवर्तित हो गयी।

यह पुस्तक मनोरंजन और मनबहलाव के लिए नहीं है। यह परिपक्व और चिंतनशील पाठक के लिए है। "लेनिन के साथ भेंटें" पुस्तक में भूतपूर्व मेन्शेविक न० वलेन्तीनोव ने चेर्नीशेव्स्की के किसी आलोचक को लेनिन के कड़े उत्तर का यह उद्धरण दिया है: "...'क्या करें?' उपन्यास के संदर्भ में 'आदिम' और 'रद्दी' शब्द सर्वथा अस्वीकार्य हैं। उसके प्रभाव से सैकड़ों लोग क्रांतिकारी बने। अगर चेर्नीशेव्स्की की रचना रद्दी और आदिम होती तो क्या यह संभव होता? उदाहरण के लिए उन्होंने मेरे भाई और मुझे भी प्रेरणा दी। **उन्होंने मेरे मन की गहराइयों को मथ डाला।** आपने कब पढ़ा था यह उपन्यास? अगर आपके होंठों पर मां का दूध नहीं सूखा तो उसे पढ़ना बेकार है। चेर्नीशेव्स्की का उपन्यास इतना जटिल और गहन है कि उसे अल्पायु में समझना असंभव है। मैंने खुद, जहां तक याद है, 14 वर्ष की आयु में उसे पढ़ने की कोशिश की थी। तब यह व्यर्थ, सतही पठन था। पर बड़े भाई को मृत्युदंड दिये जाने के बाद मैंने उसे फिर से ध्यान से पढ़ने का फ़ैसला किया क्योंकि मुझे मालूम था कि 'क्या करें?' उपन्यास मेरे भाई की प्रिय पुस्तक था। और तब मैं उसे कई दिन नहीं, कई सप्ताह तक पढ़ता रहा।

तभी मैं उसकी गहराई को समझा। यह एक ऐसी पुस्तक है, जो आजीवन उत्साह प्रदान करती है।"*

सदियों से तानाशाह और कूपमंडूक साहित्य से आग की तरह डरते रहे हैं, वे इसे अपने अस्तित्व के लिए खतरा मानकर साहित्य को मात्र मनोरंजन का साधन या अपना आज्ञाकारी दास बनाने की कोशिशों में जुटे रहे। पर सदा ऐसी पुस्तकें रही हैं जो साहित्य के प्रति आदर की भावना का विकास करती थीं, उसकी सामाजिक भूमिका को नये धरातल पर उठाती थीं। उन्होंने लोगों को मानवजाति के नये जीवन हेतु संघर्ष करना सिखाया। चेर्नीशेव्स्की का उपन्यास 'क्या करें?' इन्हीं पुस्तकों की कोटि में आता है। यह जीवन की पाठ्य-पुस्तक, लेखक का पराक्रम है।

प्योत्र निकोलायेव

* 'साहित्य और कला के विषय में लेनिन के विचार,' मास्को 1967, पृ० 653 (रूसी में)।

नये लोगों की कहानियां

प्रिय मित्र ओ० सो० चे० *को समर्पित

1

अहमक़

मोस्कोवस्की रेलवे स्टेशन के पास पीटर्सबर्ग के एक बड़े होटल के कर्मचारी 11 जुलाई 1856 को सबेरे भयभीत तो नहीं लेकिन परेशान ज़रूर हो गये। उससे पहलेवाली शाम को आठ बजे के बाद एक सज्जन हाथ में सूटकेस लिये हुए आये, किराये पर कमरा लिया, अपना पासपोर्ट नाम दर्ज कराने के लिए दिया, चाय और चॉप मंगायी और आदेश दिया कि उन्हें परेशान न किया जाये क्योंकि वह थके हुए थे और सोना चाहते थे, पर सबेरे आठ बजे उन्हें ज़रूर जगा दिया जाये क्योंकि उन्हें ज़रूरी काम निबटाना था। इतना कहकर उन्होंने अपना दरवाज़ा अंदर से बंद कर लिया और कुछ देर छुरी-कांटे और प्याले-तश्तरियां खटकाने-खड़खड़ाने के बाद वह चुप हो गये—शायद सो गये थे। सबेरा हुआ; आठ बजे नौकर ने उन सज्जन का दरवाज़ा खटखटाया, लेकिन सज्जन ने चेतना का कोई प्रमाण नहीं दिया; नौकर ने फिर दरवाज़ा खटखटाया, ज़्यादा ज़ोर से, और भी ज़्यादा ज़ोर से, लेकिन सज्जन की ओर से कोई संकेत नहीं मिला। ज़रूर थककर चूर हो गये होंगे। नौकर ने उन्हें पंद्रह मिनट की मोहलत और दी, फिर खटखटाया और फिर कोई जवाब नहीं मिला। तब उसने अन्य नौकरों तथा कैंटीनवाले से सलाह की। "तुम्हारा क्या खयाल है, कुछ हो तो नहीं गया है?"—"हमें

* ओल्गा सोक्रातोव्ना चेर्नीशेव्स्की—लेखक की पत्नी।—सं०

दरवाजा तोडना पड़ेगा।"--"नही, नहीं, ऐसा नहीं करना; इसके लिए तो पुलिस बुलानी पडेगी।" उन लोगों ने आखिरी बार एक और कोशिश करने का, खूब जोर से दरवाज़ा खटखटाने का फ़ैसला किया और अगर उससे भी काम न चला तब तो पुलिस बुलवानी ही पडेगी। दरवाज़ा उन्होंने खटखटाया तो, लेकिन नतीजा कुछ नहीं निकला। उन लोगों ने पुलिस बुलवायी और यह देखने का इंतज़ार करने लगे कि पुलिस क्या पता लगाती है।

कोई दस बजे पुलिस अफसर आया, उसने दरवाज़ा खटखटाया, कर्मचारियों से भी ऐसा ही करने को कहा—लेकिन इस सब का नतीजा भी पहले से ज़्यादा कुछ न निकला। "अच्छा, जवानो, अब हमारे पास दरवाज़ा तोड़ने के अलावा कोई चारा ही नहीं रह गया है।"

दरवाज़ा तोड़ा गया। अंदर कोई भी नहीं था। "ज़रा पलंग के नीचे तो देखो।" पलंग के नीचे भी कोई सज्जन नहीं थे। पुलिस अफसर बढ़कर मेज की ओर गया, मेज़ पर एक काग़ज़ रखा था और उस कागज़ पर मोटे-मोटे अक्षरो मे लिखा था:

"मै ग्यारह बजे बाहर जा रहा हूं और वापस नहीं लौटूंगा। रात के दो और तीन बजे के बीच लितैनी पुल पर मेरी खबर मिलेगी। इस मामले में किसी और का कोई हाथ नहीं है।"

"अच्छा, तो यह थी बात। खैर इससे वह मामला तो साफ़ हो गया जिसका कुछ सिर-पैर ही हम लोगों की समझ में नहीं आ रहा था," पुलिस अफसर ने कहा।

"आख़िर वह मामला था क्या, दरोग़ा जी?" होटल के नौकर ने पूछा।

"चाय पिलाओ, तब सारा क़िस्सा बताऊंगा।"

दरोग़ा जी ने जो क़िस्सा सुनाया वह बहुत समय तक चर्चा और सोच-विचार का विषय रहा। क़िस्सा इस तरह था।

बहुत रात गये—और रात भी घोर अंधेरी और बादलों मे घिरी हुई—लितैनी पुल के बीचोंबीच एक कौंध हुई और पिस्तौल की गोली चलने की आवाज़ सुनायी दी। आस-पास से चौकीदार भागे हुए घटनास्थल पर आये और इक्का-दुक्का राहगीर भी। न कोई आदमी दिखायी दे रहा था, न कोई सुराग ही मिल रहा था। इस

बात से किसी और अपराध की अपेक्षा आत्महत्या का ही संकेत मिलता था। कई जोशीले लोग नदी में गोता लगाने को तैयार थे; आख़िर में नावों की कुछ कंटियां और मछली पकड़ने के जाल जैसी कोई चीज़ लायी गयी। उन लोगों ने ग़ोता लगाया, उन्होंने नदी में जाल खींचा, नदी की तली को छान मारा, कोई पचास बड़े शहतीर तो उनके हाथ ज़रूर लगे लेकिन लाश के नाम पर कहीं एक तिनका भी न मिला। इसके अलावा और उम्मीद ही क्या जा सकती थी? ऐसे घुप अंधेरे और बाक़ी सब परिस्थितियों में? जबकि उसे समुद्र की ओर बह जाने के लिए दो घंटे का समय मिल चुका था? इसी तरह की बातों की बुनियाद पर प्रगतिवादियों ने अपनी जवाबी दलील पेश की "अरे, लेकिन शायद शुरू से ही लाश कहीं थी ही नहीं। हो सकता है कि कोई शराबी हो या कोई शरारती आदमी शरारत कर रहा हो; वह गोली चलाकर रफ़ूचक्कर हो गया हो। फिर यह भी तो हो सकता है कि वह यहीं इस भीड़-भाड़ के बीच खड़ा अपने पैदा किये हुए हंगामे पर बग़लें बजा रहा हो।"

लेकिन बहुमत, जो ऐसे मौक़ों पर जहां समझदारी का बोलबाला हो रूढ़िवादी ही रहता है, हमेशा की तरह शुरूवाली राय पर ही जमा रहा, अर्थात्: "सज्जनो, इसमें शरारत की कोई गुंजाइश नहीं है, सीधी-सादी बात है, दोनों आंखों के बीच गोली मारी, काम तमाम!" प्रगतिवादियों की पराजय हुई, लेकिन विजयी दल में फ़ौरन ही अपनी विजय के बाद फूट पड़ गयी। आत्महत्या तो थी, पर उसका कारण क्या था? "शराब," कुछ रूढ़िवादियों की राय थी। "पैसे की तंगी होगी," दूसरों का कहना था। फिर, किसी ने एलान कर दिया, "सरासर सीधी-सादी हिमाक़त" थी। इस सीधी-सादी-सरासर-हिमाक़तवाले फ़ैसले को सभी ने मान लिया, उन लोगों ने भी जो आत्महत्यावाली अटकल के विरोधी थे। इतना तै है कि किसी अहमक़ शराबी या फ़िज़ूलखर्च दिवालिये ने अपने गोली मार ली हो या किसी अहमक़ शरारती को बस यह शरारत करने की सूझी हो, बहरहाल थी वह सरासर बेवक़ूफ़ी की अहमक़ाना हरकत।

लितैनी पुल की घटना रात को यहीं पर समाप्त हो गयी। अगले दिन सबेरे मास्कोवस्की रेलवे स्टेशन के पासवाले होटल में पता यह चला कि वह अहमक़ कोई बेवक़ूफ़ी की हरकत नहीं कर रहा था;

उसने सचमुच अपने गोली मार ली थी। पराजित दल के लिए फिर भी इस कांड का एक पहलू ऐसा था जिससे वे सहमत थे। अर्थात् यह कि वह आदमी गोली मारने के मामले में आंखों में धूल नहीं झोंक रहा था, फिर भी वह अहमक़ था। सभी संबंधित पक्षों के लिए संतोषजनक यह दलील इसलिए और भी ठोस हो गयी थी कि उससे रूढ़िवादियों की विजय को बल मिलता था; और सचमुच पुल पर उस अहमक़ ने अपने जो गोली न मारी होती, तो इससे सिर्फ़ यह पता चलता कि वह निरा बेवक़ूफ़ था या सिर्फ़ शरारती था। बहरहाल, पुल पर उसने पिस्तौल की लिबलिबी दबायी थी—ईमान की बात तो यह है कि भला कोई पुल पर भी अपने गोली मारता है! क्या, पुल पर? पुल पर ही क्यों? और भी बहुतेरे हास्यास्पद स्थान हो सकते हैं!—मतलब है कि उस आदमी के बेवक़ूफ़ होने में कोई शक ही नहीं है।

इस सिलसिले में कुछ लोगों के दिल में फिर एक हल्का-सा शक पैदा हुआ: उस आदमी ने पुल पर अपने गोली मारी, पर पुल पर कोई अपने गोली नहीं मारता—इसलिए साफ़ साबित होता है कि उसने अपने गोली नहीं मारी। लेकिन उसी दिन शाम को होटल के कर्मचारी थाने बुलाये गये और उन्हें नदी में से निकाली गयी टोपी दिखायी गयी जिसमें गोली का छेद था। सब ने पहचान लिया कि वह वही टोपी थी जो होटल के लापता ग्राहक ने पहन रखी थी। इस तरह आत्महत्यावाली बात बिल्कुल पक्की हो गयी और विरोध तथा प्रगति की भावना को मुंह की खानी पड़ी।

अब हर कोई उस आदमी के अहमक़ होनेवाले अनुमान से संतुष्ट था और सब ने एक स्वर से चिल्लाकर कहा: "हद है चालाकी की, पुल पर ऐसा करना! इस तरह ज़्यादा देर तकलीफ़ नहीं झेलनी पड़ती, अगर गोली ठीक निशाने पर न भी लगे तब भी मामूली-सी खरोंच भी सीधे नदी में पहुंचा देने के लिए काफ़ी होती है और आपको पता भी नहीं चलता और आप डूब जाते हैं। जी हां, कमाल की चालाकी थी, वह पुलवाली बात!"

अब तो कुछ समझना न मुमकिन था—अहमक़ भी और अक़्लमंद भी।

2

अहमक़वाले क़िस्से की पहली कड़ी

उसी दिन सबेरे ग्यारह बजे के कुछ ही बाद कामेन्नी द्वीप के एक छोटे-से तीन कमरोंवाले बंगले के एक कमरे में युवती बैठी कुछ सी रही थी और दबे-दबे कोमल स्वर में कोई लहकता हुआ फ़ांसीसी गीत गा रही थी।

उसके गीत के बोल थे: "हम ग़रीब हैं तो क्या हुआ पर हम मेहनत करनेवाले लोग हैं और हमारे हाथ मज़बूत हैं। हम जाहिल भले ही हों पर हम नासमझ नहीं हैं और हमें भी ज्योति की कामना है। हम ज्ञान प्राप्त करेंगे और वह ज्ञान हमें मुक्ति दिलायेगा; हम श्रम करेंगे और उस श्रम से हमारा उत्थान होगा; हमारा भी दिन आयेगा।

Ça ira
Qui vivra, verra.*

"अगर हम जाहिल हैं, तो उसके कारण कष्ट हम स्वयं झेलते हैं। अगर हमारे मन में पूर्वाग्रह भरे हैं, तो उनका बोझ हम स्वयं ढोते हैं, यह हम महसूस करते हैं। हम सुख की चेष्टा करेंगे, हम मनुष्यता को प्राप्त करेंगे, हम अच्छाइयों को खोज निकालेंगे, हमारा भी दिन आयेगा—अभी क्या है, अभी देखते जाओ।

"ज्ञान के बिना श्रम कोई फल नहीं देता; दूसरों के सुख के बिना हमारा सुख भी संभव नहीं है। हम में जागृति आयेगी और हमारा उत्थान होगा, सभी भाई-बहन, हम सुखी होंगे, हमारा भी दिन आयेगा—अभी क्या है, अभी देखते जाओ।

"हम श्रम करेंगे और ज्ञान प्राप्त करेंगे, हम गीत गायेंगे और प्रेम करेंगे और धरती पर स्वर्ग उतर आयेगा। हम जीवन का आनंद

---

* «Ça ira»... फ़ांसीसी क्रान्ति (1789—1794) के समय का राष्ट्रीय गीत।—सं०

लेंगे, हमारा भी दिन आयेगा, जल्दी ही आयेगा, हम सब उसका सुप्रभात देखेंगे।

Donc, vivons,
Ça bien vite ira,
Ça viendra,
Nous tous le verrons." *

गीत में बांकापन था और लहक थी और उसकी धुन में मौज थी—उसमें उदासी के इक्के-दुक्के जो स्वर थे भी वे पूरे गीत की उल्लास भरी लय में विलीन हो गये थे, गीत के अंतिम छंद ने उनका बिल्कुल ही सफ़ाया कर दिया था, कम से कम अभिप्राय तो यही था कि वे विलीन हो जायें और उनका सफ़ाया कर दिया जाये और अगर युवती की मनोदशा भिन्न होती तो होता भी यही; परंतु उस समय वे इने-गिने उदास स्वर ही छा गये और इस बात की ओर ध्यान जाते ही वह चौंक-सी पड़ी, उसने उदास स्वरों को दबाने और उनकी जगह उल्लास भरे स्वरों को उभारने की कोशिश की, लेकिन एक बार फिर उसके विचार लय की ओर से उन चिंताओं की ओर भटक गये जिनमें वह खोयी हुई थी, और एक बार फिर वे उदास स्वर उभर आये। स्पष्टत: यह युवती उदास स्वभाव की नहीं थी: यह बात भी इतनी ही स्पष्ट थी कि उदासी को दूर करने की लाख कोशिश करने पर भी उसका भारी मन उसे चैन नहीं लेने दे रहा था। फिर भी, उल्लास भरी धुन बदलकर उदास हो जाती हो या वह फिर उसे वैसी ही पुलक के साथ गाने लगती हो, जैसे उसे गाया जाना चाहिये, पर युवती अपने सीने-पिरोने में पूरी तरह तल्लीन थी। वह इसमें दक्ष भी थी।

---

* ध्येय फलेगा,
जो जियेगा वही देखेगा।
तो हम जियेंगे,
शीघ्र ही आयेगा वह दिन
ज़रूर आयेगा,
हम उसे देखेंगे। (फ्रांसीसी)

इतने में एक नौजवान लड़की, जो उसकी नौकरानी थी अंदर आयी।

"क्या ख़्याल है तेरा, माशा, मैं सिलाई अच्छी करती हूं न। तेरे ब्याह के लिए मैं जो पोशाक बना रही हूं उस पर लगाने के लिए कफ़ मैंने समझो पूरे कर लिये हैं।"

"लेकिन ये उतने फ़ैंसी नहीं हैं जैसे आपने मेरे लिए बनाये थे!"

"ठीक ही तो है! अपने ब्याह में दुल्हन बाक़ी सब औरतों से ज़्यादा सजीली लगानी ही चाहिये।"

"आपकी चिट्ठी आयी है, वेरा पावलोव्ना।"

लिफ़ाफ़ा खोलते हुए मालकिन के चेहरे पर क्षण भर को आश्चर्य की झलक-सी पैदा हुई: उस पर पीटर्सबर्ग की मुहर लगी थी। "लेकिन ऐसा हो ही नहीं सकता! वह तो मास्को में हैं।" जल्दी-जल्दी उसने लिफ़ाफ़े के अंदर रखा हुआ पत्र खोला और कुछ ही क्षण में उसके चेहरे का सारा रंग जैसे निचुड़ गया; ख़त बग़ल में गिर पड़ा।" नहीं, यह नामुमकिन है। मैंने अभी तक उसे पूरा पढ़ा नहीं है, उसमें ऐसी कोई बात नहीं कही गयी है!" उसने ख़त फिर उठा लिया। कुल दो सेकंड की तो बात थी। लेकिन ख़त को दुबारा पढ़ते समय जब वह अपने सामने कुछ लाइनों पर नज़रें जमाये बड़ी देर तक घूरती रही तो उसकी आंखों से चमक ग़ायब हो गयी; वे धुंधला गयीं, ख़त ढीले हाथों से सिलाई की मेज़ पर गिर पड़ा और वह अपना चेहरा ढककर सिसक-सिसककर रोने लगी। "यह क्या किया मैंने? यह किया क्या मैंने?" और वह फिर सिसकियां लेने लगी।

"वेरा, मेरी जान! बात क्या है? अरे, तुम रो रही हो? आख़िर हुआ क्या है?"

एक युवक तेज़ी से लेकिन बड़ी सावधानी से हल्के-हल्के क़दम रखता हुआ कमरे में आया।

"वह ख़त ... मेज़ पर ..."

उसने रोना तो बंद कर दिया लेकिन मूर्तिवत् बैठी रही; लगता था वह सांस भी नहीं ले रही है।

युवक ने पत्र उठा लिया और उसके चेहरे का रंग भी उड़

3 1127

गया। उसके हाथ कांपने लगे और वह देर तक बड़े ध्यान से उस पत्र को पढ़ता रहा जो वास्तव में बहुत ही छोटा-सा पर्चा था—कुल मिलाकर पच्चीस-तीस शब्द होंगे।

"मैं तुम्हारे मन की शांति में बाधा बना हुआ था; मैं अपनी मर्ज़ी से हट जाता हूं। मुझ पर तरस न खाना—मुझे तुम दोनों से इतना प्यार है कि अपने इस फ़ैसले पर मुझे बहुत ख़ुशी है। ख़ुश रहो।"

युवक वहां काफ़ी देर खड़ा रहा: उसने अपना माथा पोंछा, अपनी मूंछों को ऐंठा और अपने कोट की आस्तीन का निरीक्षण करता रहा। आख़िरकार, अपने होश-हवास संभालकर उसने युवती की ओर क़दम बढ़ाया, जो पहले की तरह ही दम साधे मूर्तिवत् बैठी थी, मानो उसका शरीर अकड़ गया हो। युवक ने उसकी ओर हाथ बढ़ाया।

"वेरा, मेरी जान!"

उसके हाथ के स्पर्श का अनुभव करते ही वह भय से चीख़कर उछल खड़ी हुई, जैसे बिजली का तार छू लिया हो; वह युवक के पास से छटककर पीछे हट गयी और उन्माद की सी दशा में उसे परे ढकेल दिया।

"दूर हटो! मुझे मत छूना! तुम्हारे हाथ ख़ून में सने हैं! उसके ख़ून में! मैं तुम्हारी सूरत तक नहीं देखना चाहती! मैं तुम्हें छोड़ दूंगी! चले जाओ यहां से!" और यह कहते हुए वह अपने हाथ ज़ोर-ज़ोर से हिलाने लगी यहां तक कि वह अचानक लड़खड़ायी और निढाल होकर कुर्सी पर गिर पड़ी और दोनों हाथों से उसने अपना चेहरा ढक लिया।

"उसका ख़ून... वह मेरे हाथों पर भी है! मेरे हाथों पर! क़सूर तुम्हारा नहीं है, मेरा है... मेरा और सिर्फ़ मेरा! यह क्या किया मैंने? हाय, यह क्या किया मैंने!"

सिसकियों से उसका शरीर कांप उठा।

"वेरा, मेरी जान वेरा!" युवक ने साहस बटोरकर बड़ी नरमी से लज्जित स्वर में कहा।

वह लाख कोशिश करने पर भी ठीक से सांस नहीं ले पा रही

थी; वह शांत लेकिन अभी तक कांपते हुए स्वर में बोली, बल्कि उसने अपने आपको बोलने पर मजबूर किया।

"मेरे प्यारे, इस वक़्त मुझे अकेला छोड़ दो। घंटे भर बाद आना, तब तक मेरा जी अच्छा हो जायेगा। मुझे एक गिलास पानी लाकर दे दो और जाओ।"

उसने चुपचाप हर आदेश पूरा कर दिया। अपने कमरे में जाकर वह फिर उसकी मेज़ के सामने बैठ गया जहां अभी पंद्रह ही मिनट पहले वह इतनी शांति और संतोष अनुभव कर रहा था, और उसने अपना क़लम उठा लिया... "ऐसे ही क्षणों में तो धीरज रखना ज़रूरी होता है। मैं अपने इरादे का पक्का हूं, यह भी गुज़र जायेगा, सब गुज़र जायेगा..." अनजाने ही उसका क़लम भटककर उस लेख पर पहुंच गया था जिसे वह तैयार कर रहा था। "क्या वह इसे बर्दाश्त कर सकेगी? उफ़, कितनी भयानक बात है, सारा सुख मिट्टी में मिल गया..."

"प्रिय, अब मैं बिल्कुल ठीक हूं। मैं तुमसे बात करना चाहती हूं।" युवती की पासवाले कमरे से आती हुई आवाज़ सपाट लेकिन दृढ़ थी।

"प्रिय, हम लोगों को अलग होना पड़ेगा। मैंने अपना इरादा पक्का कर लिया है। ऐसा करना मुश्किल होगा, यह मैं जानती हूं। लेकिन एक-दूसरे से मिलते रहना और भी मुश्किल होगा। मैं हत्यारिन हूं। मैंने तुम्हारी ख़ातिर उसे मार डाला।"

"लेकिन, वेरा, इसमें तुम्हारी क्या ग़लती है?"

"बस, अब इसके आगे कुछ न कहना, मेरी सफ़ाई देने की कोशिश न करना वरना मैं तुमसे नफ़रत करने लगूंगी। दोष मेरा ही है, हर चीज़ के लिए। मुझे माफ़ कर दो, मेरे प्यारे, मैं जानती हूं कि मेरे फ़ैसले से तुम्हें बेहद दुःख पहुंचेगा, मुझे भी दुःख होता है, मेरी जान, मुझे भी दुःख होता है! लेकिन मेरे सामने और कोई रास्ता नहीं है; कुछ समय बाद तुम ख़ुद समझने लगोगे कि ऐसा ही होना चाहिये। और कोई चारा नहीं है, मेरे दोस्त। अच्छा, अब ध्यान से सुनो, मैं पीटर्सबर्ग छोड़कर जा रही हूं। अपनी यादों से दूर, बहुत दूर मेरे लिए जीना ज़्यादा आसान होगा। मैं अपना सारा सामान बेच दूंगी, उससे मुझे कुछ समय तक रहने के लिए

काफ़ी पैसा मिल जायेगा—लेकिन कहां? ...त्वेर में, निज्नी में, पता नहीं, और सच पूछो तो उससे फ़र्क़ ही क्या पड़ता है? मैं गाना सिखा सकती हूं, अगर मैं किसी काफ़ी बड़े शहर में जाकर बस जाऊं तो सीखनेवाले बहुत मिल जायेंगे। यह न हुआ तो मैं गवर्नेस की नौकरी खोजने की कोशिश करूंगी। मैं समझती हूं कि मुझे किसी चीज़ की तंगी नहीं होगी, लेकिन अगर हुई तो मैं तुम्हारा सहारा ज़रूर लूंगी; मेरे लिए कुछ बचाकर ज़रूर रखना, शायद ज़रूरत पड़ ही जाये; तुम तो जानते ही हो कि कौड़ी-कौड़ी दांत से पकड़ने के बाद भी मेरे कितने सारे छोटे-मोटे ख़र्चे हैं; इसके बिना मेरा काम नहीं चलेगा। सुन रहे हो मेरी बात? मैं तुम्हारी मदद लेने से इंकार नहीं करूंगी। इसे इस बात का सबूत समझो कि मैं हमेशा तुम्हें अपना प्यारा, प्यारा दोस्त समझती रहूंगी... और अब आओ, हम आख़िरी बार एक-दूसरे से विदा लें! शहर वापस चले जाओ... अभी, इसी वक़्त! अकेले रह जाने पर मैं इतनी तकलीफ़ महसूस नहीं करूंगी। कल तक मैं जा चुकी हूंगी—तब वापस आ जाना। मैं मास्को जाकर कुछ पूछ-ताछ करूंगी कि किन दूर-दराज़ शहरों में पढ़ाने का काम सबसे आसानी से मिल सकता है। मैं तुम्हें मना किये देती हूं कि मुझे छोड़ने स्टेशन न आना। विदा, मेरी जान; आख़िरी बार मुझे अपना हाथ तो दो।"

वह उसे सीने से लगाने के लिए आगे बढ़ा लेकिन उसने उसे बीच में ही रोक दिया।

"नहीं, इसकी कोई ज़रूरत नहीं है,... ऐसा मत करो! यह उसकी याद का अपमान होगा। मुझे हाथ तो देना। देखो, मैं उसे कैसे कसकर पकड़ती हूं। अच्छा, तो विदा!"

वह किसी तरह उसका हाथ छोड़ ही नहीं रहा था।

"बस। अब जाओ।" उसने अपना हाथ छुड़ा लिया, और उसने भी उसे रोकने का साहस नहीं किया। "जाओ न, मैं कहती हूं!"

विदा होते समय वेरा की आंखों में जो कोमलता थी उसके बावजूद उसके दूर होते हुए क़दमों में दृढ़ता थी; अपने कमरे के एकांत में वापस जाते हुए उसने एक बार भी पीछे मुड़कर नहीं देखा।

वह बड़ी देर तक अपना हैट खोजता रहा; लगभग बिल्कुल नशे

जैसी बेहोशी में उसने कम से कम पांच बार उसे उठाया और फिर भी उसे नहीं पहचान पाया। आखिरकार उसकी समझ में आया कि यही हैट, यही जो ठीक उसकी नाक के सामने था—जी हां—वही था जिसे वह खोज रहा था और उसने प्रवेश-कक्ष में जाकर अपना कोट पहना और फाटक की ओर गया। वह अभी आधे रास्ते ही गया होगा कि... "पीछे से यह कौन भागा चला आ रहा है? नौकरानी माशा ही होगी... कहीं उसकी तबियत तो खराब नहीं हो गयी!..." उसने मुड़कर देखा और... वेरा ने उसकी गर्दन में अपनी दोनों बांहें डाल दीं और बड़ी देर तक आवेश के साथ उसे चूमती रही।

"मुझसे बर्दाश्त नहीं हो सका, मेरी जान! लेकिन अब—विदा, हमेशा के लिए विदा!"

और वह भागती हुई जाकर अपने बिस्तर पर गिर पड़ी और जिन आंसुओं को उसने इतनी देर छिपाये रखा था अब धारा बनकर फूट निकले।

3

भूमिका

"इस कहानी का विषय प्रेम है, और नायिका—औरत,—यह अच्छी बात है, चाहे कहानी बुरी ही हो," कोई भद्र पाठिका कहती है।

"ठीक ही है आपका कहना," मैं कहता हूं।

पाठक महोदय आलोचना इतनी आसानी से करनेवाले नहीं हैं, क्योंकि स्त्री की अपेक्षा पुरुष की बौद्धिक क्षमता जीव-विज्ञान और सांस्कृतिक दृष्टि से अधिक विकसित होती है। कहते हैं—और पाठिका संभवत: उनसे सहमत भी हैं, हालांकि वह इसे उल्लेख करने योग्य भी नहीं समझतीं (जिस कारण मेरे पास उनसे बहस करने का कोई आधार ही नहीं रह जाता)—हां, तो चर्चा यह हो रही थी कि पाठक महोदय कहते हैं: "मैं पक्के तौर पर जानता हूं कि वह

आत्महत्या कोई आत्महत्या थी ही नहीं।" उनकी इस पक्के-तौर-पर-जानता-हूं वाली बात को पकड़कर मैं जवाब देता हूं: "आपको, जनाब, इस तरह की कोई जानकारी नहीं है क्योंकि आपको इस तरह की कोई बात बतायी नहीं गयी है; आपको तो बस उतना ही मालूम है जितना आपको बताया गया है, उससे ज़्यादा कुछ भी नहीं। आपको तो यह भी नहीं मालूम कि जिस तरह मैंने अपनी यह कहानी शुरू की थी वह दाढ़ी नोचने और मुंह पर तमाचा मारने जैसी बात थी। अहा! यह बात आपको, पक्के तौर पर, नहीं मालूम थी, या थी मालूम? ख़ैर, अब तो मालूम हो गयी।"

यह बिल्कुल सच है कि शुरू के पन्नों से पता चलता है कि पब्लिक के बारे में मेरा कितना बुरा ख़याल है। मैंने एक आज़मायी हुई तरकीब इस्तेमाल की: प्रसंग से अलग करके मैंने अपनी कहानी के बीच से या शायद अंत से दो-एक सनसनीखेज़ दृश्य लेकर उन्हें रहस्य की चादर में लपेट दिया। आप, सामान्य पाठकगण नेक लोग हैं, बहुत ही नेक, जिसकी वजह से आपके दिमाग़ में उलझाव रहते हैं और आप बातों को जल्दी समझ नहीं पाते। आप पर भरोसा नहीं किया जा सकता कि आप किसी किताब के शुरू के पन्ने पढ़कर यह पहचान सकें कि वह पढ़ने लायक़ है कि नहीं; आपकी सहजवृत्तियां सारी की सारी ग़लत हैं, आपको किसी न किसी बैसाखी की ज़रूरत होती है, और आपके पास चुनने के लिए बस दो तरह की बैसाखियां हैं—या तो लेखक मशहूर हो या वह सनसनीखेज़ ढंग से लिखता हो। चूंकि यह आपके हाथों में मेरी पहली ही कृति है इसलिए आपको अभी मेरी साहित्यिक प्रतिभा बनानी है (हालांकि कितने ही लेखकों को आप यह सम्मान प्रदान कर चुके हैं) या सच तो यह है कि उसके अभाव के बारे में अपनी राय बनानी है; अभी तक मेरा नाम तो ऐसा है नहीं कि मैं आपको लुब्ध करने की आशा कर सकूं, इसलिए मैं अपनी कंटिया में सनसनी का चारा लगाने पर मजबूर हूं। इसकी वजह से मुझे बुरा न समझिये, सच पूछिये दोष तो आपका है, आपके अछूते भोलेपन ने ही मुझे इतना नीचे गिरने पर मजबूर किया। लेकिन अब मैंने आपको चूंकि उस जगह पहुंचा दिया है जहां मैं चाहता था, इसलिए मैं अपनी कहानी अब जिस तरह चाहूं जारी रख सकता हूं और ख़ुराफ़ात बातों से छुटकारा पा

सकता हूं। अब बाक़ी कहानी में कोई रहस्य नहीं है; कथानक में जितने भी घुमाव आयेंगे उनमें से हर एक को आप उसके आने से बीस पृष्ठ पहले ही जान लेंगे। सबसे पहले तो मैं आपको यह बता दूं कि इसका अंत हंसी-ख़ुशी के बीच होगा, जिसमें पीना-पिलाना और गाना-बजाना सभी कुछ होगा, और इसमें कोई उस तरह की तड़क-भड़क या सनसनी नहीं होगी जिसके कि आप आदी हैं। तड़क-भड़क, भले लोगो, इस लेखक के दिमाग़ में कहीं दूर-दूर तक नहीं है, क्योंकि उसे तो चिंता आपके दिमाग़ की उथल-पुथल की और उस अनावश्यक, अंतहीन रूप से अनावश्यक विपदा की है जो आपके सोचने के बिल्कुल ही औंधे ढंग की वजह से हममें से एक-एक को झेलनी पड़ती है। मुझे आप सब लोग दयनीय ढंग से मनोरंजक लगते हैं, क्योंकि आप बीमार, बेहूदा छोटे-छोटे लोग हैं, और यह सब कुछ इसलिए कि आपकी खोपड़ी में न जाने कितनी ख़ुराफ़ात बातें भरी हुई हैं।

आप लोग आम आदमी के साथ जिस बेहूदा तरीक़े से पेश आते हैं उस पर मेरा ख़ून खौल उठता है; क्या आप यह नहीं महसूस करते कि वह आम आदमी आप ही हैं? क्यों, आख़िर क्यों आप अपने साथ इतना बेहूदा सलूक करते हैं? अगर मैं आपको लताड़ रहा हूं तो उसकी वजह है। लेकिन आपकी बेहूदगी का रूप बौद्धिक जर्जरता का है; ऐसी हालत में, मैं आपको चाहे जितना लताड़ूं, लेकिन मेरा कर्त्तव्य है कि मैं आपकी मदद भी करूं। मैं शुरू कहां से करूं? अच्छा, तो, आइये, उसी बात से शुरू करते हैं जो आपके दिमाग़ में ठीक इस क्षण है, अर्थात्: "गुस्ताख़ तो बहुत देखे... लेकिन आख़िर यह लेखक अपने को समझता क्या है?" मैं आपको बताता हूं कि मैं अपने आपको किस तरह का लेखक समझता हूं।

मुझ में रत्ती भर साहित्यिक प्रतिभा नहीं है। मेरी रूसी भी बहुत बुरी है। कोई बात नहीं—पढ़ते जाइये, भले लोगो, आप देखेंगे कि आपका समय व्यर्थ ही नष्ट नहीं हुआ। सत्य अत्यंत गौरवशाली ध्येय है, और जो लेखक इस ध्येय की सेवा करता है उसके सारे दोषों का विमोचन हो जाता है। इसीलिए मैं आपको इतना बता देना चाहता हूं: अगर मैंने आपको पहले से चेतावनी न दे दी होती तो शायद आप इस पुस्तक को एक कलाकृति समझ

बैठते और इसके लेखक को एक प्रतिभाशाली साहित्यकार लेकिन आपको पहले से चेतावनी मिल चुकी है कि मुझमें कोई प्रतिभा नहीं है; इसीलिए आप अच्छी तरह समझ सकेंगे कि मेरी कहानी में जो भी गुण हैं उनमें से एक-एक सत्य और केवल सत्य की बदौलत है।

और फिर, मेरे बेहद नेक लोगो, आपको हर बात खोलकर समझानी पड़ती है—आप पर्याप्त मात्रा में संकेत को चाहे जितना पसंद करते हों, फिर भी आप उसे पहचान सकने में उतने दक्ष नहीं हैं, या हैं? मेरे यह कहने की वजह से कि मुझमें रत्ती भर भी साहित्यिक प्रतिभा नहीं है और मेरी कहानी बहुत घटिया दर्जे की रचना या कृति है आप झट से इस निष्कर्ष पर न पहुंच जाइयेगा कि मैं उन क़िस्से गढ़नेवालों से किसी भी तरह बुरा हूं जिन्हें आप महान समझते हैं या मेरी क़िस्सों की गढ़ाई किसी भी तरह उनसे बुरी है। मेरा यह मतलब नहीं है। मेरा मतलब यह है कि तकनीकी प्रयास के रूप में मेरी कहानी सचमुच प्रतिभावान लोगों की कृतियों की तुलना में बिल्कुल फीकी लगती है, मगर आपके प्रसिद्ध उपन्यासकारों की बहु-चर्चित कृतियों की तुलना में आप उसे अगर बेहतर नहीं तो अच्छा तो कहेंगे ही और आपका ऐसा कहना किसी ग़लती के डर के बिना ठीक ही होगा! इसमें निश्चित रूप से उनकी अपेक्षा वह चीज़ कहीं ज़्यादा है जिसे कला कहते हैं—और इसका आप पूरा भरोसा रख सकते हैं।

आपको सचमुच मेरा आभार मानना चाहिये; आप हमेशा अपने निंदकों की लल्लो-चप्पो करते रहते हैं, तो फिर मेरी भी लल्लो-चप्पो करने में हर्ज ही क्या है?

ध्यान रहे, आपमें से कुछ का, सच तो यह है कि अब तक आपकी काफ़ी बड़ी संख्या का मैं सम्मान करता हूं। लेकिन जिनसे मैं ढिठाई का रवैया अपनाता हूं वह है आपका विशाल बहुमत, यानी पब्लिक। उन लोगों के प्रति जिनका मैंने अभी उल्लेख किया है, मैंने कम ढिठाई का, बल्कि कहना चाहिये कि बिल्कुल ही विनम्रता का रवैया अपनाया होता। लेकिन उन लोगों को हर चीज़ को खोलकर समझाने की कभी ज़रूरत नहीं होती है। उनकी राय की बहुत क़द्र करने की वजह से मैं जानता हूं कि वह शुरू से ही मेरे पक्ष में है। आप अच्छे, मज़बूत, ईमानदार, योग्य लोग हैं और हमारे बीच अभी

नये-नये आये हैं, लेकिन आपकी संख्या इस समय भी काफ़ी बढ़ चुकी है और दिन दूनी रात चौगुनी बढ़ती जा रही है। अगर आप पब्लिक होते तो मेरे मन में क़लम उठाने की प्रेरणा ही न जागती,.. लेकिन आप वैसे नहीं हैं, आप उस पब्लिक का एक हिस्सा हैं, और यही वजह है कि मैं अब भी उस काम को शुरू कर सकता हूं और मुझे करना चाहिये जो कि मेरे सामने है।

पहला अध्याय

वेरा पावलोव्ना अपने मां-बाप के घर में

1

वेरा पावलोव्ना का लालन-पालन अत्यंत परंपरागत ढंग से हुआ था। डाक्टरी के छात्र लोपुख़ोव से भेंट होने से पहले उसने जो जीवन व्यतीत किया था उसमें उल्लेखनीय क्षण दो-एक ही आये थे, लेकिन उनमें भी कुछ ऐसा नहीं था जिसे असाधारण कहा जा सके। फिर भी, स्वयं उसमें कुछ ऐसा था जो बहुत ही असाधारण था।

वह सदोवाया सड़क और सेम्योनोव्स्की पुल के बीच गरोख़ोवाया सड़क के एक कई मंज़िले घर में पली-बढ़ी थी। आजकल तो इस इमारत को बाक़ायदा उसके नंबर से पहचाना जाता है, लेकिन 1852 में सड़क की हर इमारत को क्रमानुसार नंबर देने की प्रणाली प्रचलित होने से पहले उस पर एक तख़्ती लगी रहती थी: "स्वत्वाधिकारी—काउंसिलर ऑफ़ स्टेट इवान ज़ख़ारोविच स्तोरेश्निकोव।" तख़्ती पर यही लिखा था हालांकि वह सज्जन 1837 में परलोक सिधार गये थे, और तब से उनका बेटा मिख़ाईल इवानोविच मालिक हो गया था, कम से कम मिल्कियत के दस्तावेज़ में यही लिखा था। उस घर के रहनेवालों को ज़्यादा सही जानकारी थी: नौजवान स्तोरेश्निकोव आज तक मालकिन का बेटा ही था और असली मालकिन स्वयं आन्ना पेत्रोव्ना स्तोरेश्निकोवा थीं।

अब की तरह तब भी यह घर, जिसकी हम चर्चा कर रहे हैं, काफ़ी बड़ा था; दो बड़े-बड़े फाटक थे, सड़क से अंदर आने के चार अलग-अलग दरवाज़े थे और अंदर तीन अहाते थे। नीचे की मंज़िल

पर गाड़ियों के आने-जाने के सदर फाटक से मिला हुआ मकान का जो हिस्सा था उसमें 1852 से आज तक मकान-मालकिन और उनका बेटा रहते आये थे। आन्ना पेत्रोव्ना का नारी-सुलभ डीलडौल आज भी उतना ही आकर्षक है जितना उस समय था। उनका बेटा भी उस समय की तरह ही आज भी एक सजीला-सलोना फ़ौजी अफ़सर है।

पहले अहाते से नौकरों-चाकरों के आने-जाने के लिए जो असंख्य दरवाज़े हैं उनमें से सबसे गंदेवाले के दाहिनी ओर तीसरी मंज़िलवाले फ़्लैट में आजकल कौन किरायेदार है यह तो मुझे मालूम नहीं, लेकिन 1852 में उसमें उस बिल्डिंग के मैनेजर पावेल कोन्स्तान्तीनिच रोज़ाल्स्की, जो ख़ुद नाटे क़द के अच्छे-ख़ासे आदमी थे, अपने परिवार के साथ रहते थे। उनकी बीवी मार्या अलेक्सेयेव्ना मज़बूत काठी की लंबी-तगड़ी और छरहरी महिला थीं; उनकी जवान बेटी वही वेरा पावलोव्ना थी जिससे हम लोग पहले ही मिल चुके हैं; और फिर था उनका नौ साल का छोटा बेटा फ़ेद्या।

मैनेजर के काम के अलावा पावेल कोन्स्तान्तीनिच एक सरकारी दफ़्तर में असिस्टेंट हेड क्लर्क की भी नौकरी करते थे। इस नौकरी से उनकी कोई आमदनी नहीं होती थी, और मैनेजरी से हद से हद बहुत ही मामूली; उनकी जगह कोई दूसरा होता तो इसी में काफ़ी ज़्यादा रक़म बना लेता, लेकिन रोज़ाल्स्की के, जैसा कि वह ख़ुद कहते थे, कुछ नैतिक सिद्धांत थे; दूसरी ओर मालकिन स्तोरेश्निकोवा उनकी सेवाओं से कुछ ज़्यादा ही संतुष्ट थीं, जबकि उन्होंने अपनी चौदह साल की नौकरी में लगभग दस हज़ार रूबल बचा लिये थे, जिनमें से कोई तीन हज़ार रूबल स्तोरेश्निकोवा की जेब से आये थे। बाक़ी रक़म सूद से आयी थी, जिसकी वजह से उनकी मालकिन को कोई नुक़सान भी नहीं हुआ था। रोज़ाल्स्की चीज़ें गिरवी रखकर रक़म उधार देते थे।

उनकी बीवी ने अपनी अलग थोड़ी-बहुत पूंजी जोड़ रखी थी, यही कोई पांच हज़ार के लगभग, जैसा कि वह अपनी पुरानी गप लड़ानेवालियों से कहती थीं; सच पूछा जाय तो इससे कुछ ज़्यादा ही होगी। उन्होंने पहली बार पूंजी बटोरना कोई पंद्रह साल पहले शुरू किया था, जब उन्होंने समूर का वह ओवरकोट और कुछ और

छोटी-छोटी फ़र्नीचर की चीज़ें और कपड़े बेचे थे, जो उन्हें उनके भाई की मृत्यु के बाद मिले थे, जो सरकारी नौकर था। उसमें जो डेढ़ सौ रूबल का मुनाफ़ा हुआ था वह उन्होंने चीज़ें गिरवी रखकर सूद पर चलाना शुरू कर दिया था; इस मामले में वह अपने पति से कहीं ज़्यादा जोखिम के सौदे करती थीं, जिसकी वजह से कितनी ही बार उन्हें लेने के देने पड़ गये थे। एक बार किसी नीच उचक्के ने अपना परिचय-पत्र उनके पास रखवाकर उन्हें पांच रूबल की चोट दे दी थी, क्योंकि वह परिचय-पत्र चोरी का निकला और मार्या अलेक्सेयेव्ना को फंदे में से अपनी गर्दन निकालने के लिए पंद्रह रूबल और देने पड़ गये थे। एक और लुच्चे ने बीस रूबल में सोने की एक घड़ी गिरवी रखी थी और जब पता चला कि वह किसी लाश से उड़ायी गयी थी तो उस झंझट से जान छुड़ाने के लिए उस भलीमानस को सचमुच मोटी रक़म चुकानी पड़ी थी। भले ही उन्हें उस तरह के नुक़सान उठाने पड़ते हों जिनसे उनके पति अपने गाहकों को ज़्यादा समझदारी से चुनकर दूर रहते थे, फिर भी उन्हें मुनाफ़े में ज़्यादा मोटी रक़में मिलती थीं और ज़्यादा तेज़ी से मिलती थीं। थोड़ी-बहुत आमदनी आंख बचाकर कर लेने में भी कोई हर्ज नहीं समझती थीं। एक बार, जब वेरा छोटी बच्ची ही थी—उसकी मां ने सयानी लड़की के देखते वैसी हरकत कभी न की होती, लेकिन उस वक़्त जो हालत थी उसे देखते हुए हर्ज ही क्या था, और फिर बच्ची को पता भी क्या चलता? और सचमुच बच्ची वेरा को कभी पता चलता भी न अगर खाना पकानेवाली न होती और उसने सारी पोल न खोल दी होती, कैसी-कैसी बातें सामने आयीं, और खाना पकानेवाली कभी वह भेद खोलती भी न क्योंकि ऐसी बातें बच्चों के सुनने की नहीं होतीं, लेकिन जो होना था सो हो गया; वह सब कुछ उसके मुंह से उस वक़्त निकला था जब अपने आशिक़ के साथ चुहलबाज़ी पर उसे मालकिन ने बुरी तरह फटकारा था (ध्यान रहे, कभी ऐसा नहीं होता था कि मत्र्योना के नील न पड़ा रहता हो—मालकिन की कृपा से नहीं बल्कि अपने आशिक़ की बदौलत, और इसमें उनका, यानी मालकिन का कोई हर्ज़ भी नहीं था, क्योंकि जिन खाना पकानेवालियों के नील पड़ा रहता था वे कम पैसों पर काम करने

को तैयार हो जाती हैं)। बहरहाल; एक बार हुआ यह कि मार्या अलेक्सेयेव्ना की एक अनन्य सहेली, जो ख़ूबसूरत और शानदार हो नेके अलावा कपड़े भी बहुत सुंदर पहने हुए थीं, उनके यहां आकर ठहरीं। पहला सप्ताह तो काफ़ी शांति से बीत गया, अलावा इसके कि एक उतने ही ख़ूबसूरत ग़ैर-फ़ौजी सज्जन अकसर वहां आ जाते थे और वेरा को मिठाइयां और बड़ी सुंदर-सुंदर गुड़ियां दिया करते थे; और उन्होंने वेरा को दो किताबें भी दी थीं, दोनों में तस्वीरें थीं, एक में तो शहरों और जानवरों की बड़ी ख़ूबसूरत तस्वीरें थीं और दूसरी में, वह दूसरी किताब तो उन सज्जन के जाते ही उसकी मां ने हथिया ली थी, इसलिए वेरा ने वे तस्वीरें बस उसी एक बार देखी थीं जब उन सज्जन ने उसे दिखायी थीं। उनके मेहमान लगभग एक सप्ताह रहे, और बहुत ही शांत था वह सप्ताह: एक बार भी वेरा की मां ने वह अल्मारी नहीं खोली (जिसमें वह शराब की बोतल रखती थीं), जिसकी चाभी वह कभी अपनी नज़रों से ओझल नहीं होने देती थीं, और न उन्होंने मत्र्योना या वेरा को कभी पीटा और न ही उनमें से किसी पर चीख़ीं-चिल्लायीं। फिर एक रात हुआ यह कि मेहमान के कमरे से आती हुई भयानक चीख़ों और घर में लगातार चहल-पहल की वजह से वेरा रात भर जागती रही। अगले दिन सबेरे मार्या अलेक्सेयेव्ना उस अल्मारी के पास अपनी आदत के ख़िलाफ़ कुछ ज़्यादा ही देर तक मंडलाती रहीं और लगातार यही बुदबुदाती रहीं कि "चलो, ख़ैरियत हुई, सब कुछ ठीक-ठाक निबट गया, भगवान की कृपा से", यहां तक कि उन्होंने मत्र्योना को बुलाकर उससे जाम टकराते हुए कहा "ख़ुश रहो, मत्र्योना, तुमने अपना काम ख़ूब निभाया।" और बाद में भी कोई चीख़ना-चिल्लाना या मार-कुटाई नहीं हुई; उन्होंने बस वेरा को एक प्यार किया और बिस्तर पर लेट गयीं। पूरे एक और हफ़्ते तक बिल्कुल शांति रही; उनकी मेहमान के कमरे से एक भी चीख़ नहीं सुनायी दी, जो हर वक़्त बस अपने कमरे में रहती थीं और फिर एक दिन चली गयीं। दो दिन बाद कोई बिल्कुल ही दूसरे ग़ैर-फ़ौजी सज्जन आये, लेकिन वह अपने साथ पुलिस लाये थे और उन्होंने उसकी मां को बहुत बुरा-भला कहा। मार्या अलेक्सेयेव्ना अपनी

बात से तिल भर भी नहीं हटीं। "मालूम नहीं आप क्या बातें कर रहे हैं। आप ज़ानना चाहते हैं कि मेरे यहां कौन ठहरा था? किरायेदारों का रजिस्टर देख लीजिये! सावास्त्यानोवा, व्यापारी की बीवी जो प्स्कोव से आयी थीं और मेरी बहुत अच्छी सहेली हैं। बस, साहब, यही बात है!" आखिरकार काफ़ी गाली-गलौज और उसके बाद और गाली-गलौज करके वह ग़ैर-फ़ौजी सज्जन चले गये, और फिर कभी पलटकर नहीं आये। वेरा ने जब यह सब कुछ होते देखा था वह आठ साल की थी और मत्र्योना ने उसे सारी बात समझायी थी तब वह नौ साल की थी। फिर यह भी बात थी कि वैसा बस तभी एक बार हुआ था, दूसरे मामले उससे अलग तरह के थे और इतने अधिक थे भी नहीं।

जब वेरा दस साल की थी और अपनी मां के साथ बाज़ार जा रही थी तो गरोख़ोवाया और सदोवाया सड़कों के नुक्कड़ पर उसे अप्रत्याशित फटकार सुननी पड़ी: "वह जिसे तुम घूर रही हो वह गिरजाघर है, बेवक़ूफ़; अभी तक किसी ने तुम्हें अपनी उंगलियों से सलीब का निशान बनाना नहीं सिखाया? तुमने सुना तो होगा कि सभी भले लोग कैसे अपने सामने सलीब का निशान बनाते हैं?"

जब वेरा बारह साल की हुई और बोर्डिंग स्कूल में भरती हुई तो उसको प्यानो सिखाने के लिए एक टीचर रखा गया, जो शराबी तो था लेकिन बहुत ही नेकदिल जर्मन था और अपने काम में निपुण भी था मगर शराबी होने के कारण उसकी फ़ीस कम थी।

तेरह साल की उम्र में वह सारे परिवार का सीना-पिरोना करने लगी थी, हालांकि इतना ज़रूर है कि परिवार में लोग बहुत नहीं थे।

सोलहवीं वर्षगांठ आते-आते उसकी मां कुछ इस तरह उसे डांटने-फटकारने लगी थी: "अरी, अपना थोबड़ा तो धोय डाल! क्या, समझे क्या है अपने आपको, कोई बंजारिन है क्या? धोय से कुछ चमकने तो लगैगा नहीं, तू पैदा ही कौआहंकनी की सूरत लैके हुई थी, न जानै किसे पड़ी है!" अपनी सांवली रंगत की वजह से वेरा को इतना कुछ सहना पड़ा कि वह अपने बारे में सोचने लगी कि वह बड़ी बदसूरत लगती होगी। पहले तो उसकी मां उसे चीथड़े या लगभग चीथड़े पहनकर घूमने देती थी, लेकिन इस बीच अंतर यह

हुआ था कि वह उसे बना-संवारकर बाहर निकालने लगी थी। वह भी, अच्छा पहना-ओढ़ाकर अपनी मां के साथ गिरजाघर जाते हुए सोचती थी: "इतने बढ़िया कपड़ों में मेरी जगह कोई दूसरी लड़की होती तो कैसी सुंदर लगती! मुझे तो कुछ भी पहना दो, चाहे लट्ठा हो या रेशम, मैं हमेशा लगूंगी बंजारिन-कौआहंकनी ही। लेकिन सुंदर लगने में कितना मजा आता! मेरा कितना जी चाहता है कि मैं भी सुंदर लगूं!"

आखिरकार जब वह सोलह साल की हो गयी तो प्यानो सीखने और साथ में बोर्डिंग स्कूल की भी छुट्टी कर दी गयी; उसने उसी स्कूल में पढ़ाना शुरू कर दिया और थोड़े दिन बाद मां ने कुछ ट्यूशनें और दिला दीं।

कोई छ: महीने बाद मार्या अलेक्सेयेव्ना ने अपनी बेटी को बंजारिन-कौआहंकनी कहकर डांटना-फटकारना छोड़ दिया और उसे पहले से अच्छा पहनाने-ओढ़ाने लगीं, और उधर मत्र्योना ने—तब तक यह तीसरी मत्र्योना थी, सबसे पहली की बायीं आंख के नीचे स्थायी रूप से नील पड़ा रहता था और इसवाली के कुछ और नीचे, और कुछ ऐसा स्थायी भी नहीं—तो मत्र्योना ने वेरा को सूचना दी कि उसके बाप के ऊपरवाले अफ़सर, जो सचमुच महत्त्वपूर्ण ऊंचे अफ़सर थे और बहुत बढ़िया मेडल वग़ैरह भी लगाते थे, उसका रिश्ता भेजने के लिए आने की बात कर रहे थे। बात सच भी थी, क्योंकि विभाग में काम करनेवाले छोटे बाबुओं का कहना था कि इधर कुछ समय से रोज़ाल्स्की पर उसके ऊंचे अफ़सर की कृपादृष्टि कुछ ज़्यादा ही बढ़ती जा रही थी, जब कि उस अफ़सर ने अपने बराबरवालों के बीच यह बात साफ़ कर दी थी कि वह एक सुंदर-सी दुलहन चाहते थे, अगर ज़रूरत हो तो वह दहेज को भी ठोकर मारने को तैयार थे और यह कि रोज़ाल्स्की कुछ ऐसा बुरा क्लर्क नहीं था।

इस सबका नतीजा क्या निकलता यह तो कोई भी नहीं कह सकता है, लेकिन वह अफ़सर इतने दिन तक हर मामले में समझदारी बरतते रहे कि उनकी जगह कोई और ही चीज़ सामने आ गयी।

मकान-मालकिन के बेटे ने मैनेजर के यहां आकर कहा कि मां

चाहती हैं कि रोज़ाल्स्की दीवार पर चिपकाये जानेवाले क़ागज़ के कुछ नमूने ले आये, क्योंकि मां दीवारों को फिर से सजाना चाहती हैं। पहले इस प्रकार का आदेश बटलर के ज़रिये ही दिया जाता था। यह मार्या अलेक्सेयेव्ना और उसके पति जैसे कम व्यवहारकुशल लोगों के लिए भी, बेशक, साफ़ बात थी। मकान-मालकिन का बेटा लगभग एक घंटे तक रुका और इस बीच ख़ुशबूदार चाय का प्याला भी पी डाला। अगले ही दिन मार्या अलेक्सेयेव्ना ने अपनी बेटी को नेकलेस उपहार में दिया, जो उसके पास गिरवी पड़ा था और रखनेवाला उसे छुड़ाने नहीं आया था और उसके लिए उच्च कोटि की दो पोशाकें भी सिलवायीं। सिर्फ़ कपड़े के लिए ही उसे एक के लिए 40 और दूसरे के लिए 52 रूबल देने पड़े। और दोनों पोशाकों पर, कढ़ाई, झालर और रिबनों की क़ीमत मिलाकर कुल 174 रूबल के लगभग ख़र्च करने पड़े, मतलब यह कि अपने पति को तो उसने यही रक़म बतायी। अलबत्ता वेरा को, जो उसके साथ इस ख़रीद के समय थी, यह मालूम था कि कुल ख़र्च 100 रूबल से कम ही आया—मगर 100 रूबल में भी दो बहुत बढ़िया पोशाकें ख़रीदी जा ही सकती हैं। उसे इन पोशाकों और नेकलेस को पाने की बड़ी ख़ुशी थी; लेकिन सबसे बड़ी ख़ुशी तो इस बात की थी कि उसकी मां अन्तत: इस पर सहमत हो गयी कि वह कोरोल्योव की बहुत बढ़िया दुकान से जूते की जोड़ी ख़रीद ले क्योंकि बाज़ार में मिलनेवाले जूते निहायत भद्दे होते हैं और यह तो सभी जानते हैं कि कोरोल्योव की दुकान पर पैरों में फबने और अच्छी तरह फ़िट होनेवाले जूते मिलते हैं।

पोशाकों पर ख़र्च बिल्कुल उचित रहा; मकान-मालकिन के बेटे को मैनेजर के यहां झांकने का चसका लग गया था। अलबत्ता, हमें यह बताने की ज़रूरत नहीं कि वह मैनेजर अथवा उसकी भली बीवी के साथ बतियाने के स्थान पर उनकी बेटी से ही ज़्यादा बातचीत करता था। मैनेजर और उसकी बीवी भी उसके लिए पलकें बिछाते थे, यह बात साफ़ थी। और मार्या अलेक्सेयेव्ना भी अपनी बेटी को ऊंच-नीच के बारे में समझाती रहती—उसकी उन सब हिदायतों का ज़िक्र न भी करें सो भी चलेगा, क्योंकि यह सब तो बाबा आदम के ज़माने से चली आ रही शिक्षा है।

एक दिन डिनर के बाद मां ने कहा:

"वेरा, कपड़े बदल ले, ज़रा बढ़ियावाले पहनना। बताऊं तुझे—हम लोग ऑपेरा देखने जा रहे हैं। मेरे पास ड्रेस सर्कल के टिकट हैं—जहां हमेशा जनरलों की बीवियां बैठती हैं। सब कुछ तेरे लिए करती हूं, बेवक़ूफ़। सब कुछ ख़र्च करती हूं तेरे लिए। और तेरे बेचारे बाप की तो तुझ पर ख़र्च करते-करते कमर ही टूट गयी। ज़रा सोच तो हमने बोर्डिंग स्कूल में और प्यानो बजाने की तेरी पढ़ाई पर कितनी रक़म ख़र्च की: लेकिन तुझे यह सब सोचने की फ़ुर्सत कहां और हो भी क्यों, तू तो घोर कृतघ्न है। मैं क़सम खाकर कह सकती हूं, तू हृदयहीन है, निपट भावनाशून्य!"

बस उसने इतना ही कुछ कहा। और डांटा-फटकारा, मगर इसमें क्या बुराई है? यह तो मां की ओर से बेटी से बातचीत की कुछ झलक थी। वह फटकारना तो जाने कब बन्द कर चुकी थी और अपने पति के अफ़सर के बारे में फैली अफ़वाह के बाद से तो उसने बेटी पर एक बार भी हाथ नहीं उठाया।

वे ऑपेरा देखने गये। पहले एक्ट के बाद मकान-मालकिन का बेटा अपने दो मित्रों के साथ उनके बॉक्स में आया। इनमें से एक साधारण पोशाक में छरहरा लेकिन अत्यन्त सुरुचिसम्पन्न था और दूसरा फ़ौजी वर्दीधारी थुलथुल और कुछ बहुत शिष्ट नहीं लगता था। वे बैठ गये और तत्काल ही खुसर-पुसर में डट गये। खुसर-पुसर मुख्य रूप से मकान-मालकिन के बेटे और सिविलियन के बीच हो रही थी। फ़ौजी ज़्यादा नहीं बोला। यद्यपि मार्या अलेक्सेयेव्ना के कान उधर ही लगे थे और वह एक-एक शब्द सुन पा रही थी, लेकिन बात का सिर-पैर नहीं समझ पा रही थी क्योंकि बातचीत फ़्रांसीसी में हो रही थी। पूरी बातचीत में उसके पल्ले कोई आधा दर्जन शब्द ही पड़े—सुन्दरी, आकर्षक, प्रेम, सौभाग्य—लेकिन इतने से होता क्या? अपनी बंजारिन बेटी के लिए सुन्दरी और आकर्षक शब्द तो न जाने कब से वह सुनती आ रही थी और जहां तक प्रेम-प्रणय का सम्बन्ध था तो वह देख ही रही थी कि वह तो लट्टू दीख रहा था और जहां प्रेम-प्रणय हो वहां सौभाग्य तो होगा ही—लेकिन इससे क्या हुआ? असल बात तो तब बनेगी जब शादी का प्रस्ताव किया जायेगा।

4—1127

वह अपनी बेटी के कान में फुसफुसायी: "वेरा, तू कितनी कृतघ्न है, निपट कृतघ्न। क्यों तू अपना थोबड़ा उनसे फेर रही है? बुद्धू, तेरे पास बैठकर उन्होंने तुझे इज़्ज़त बख़्शी, सचमुच इज़्ज़त। वेरा, फ़्रांसीसी में शादी के लिए क्या शब्द है? और दुलहिन और दूल्हे के लिए और विवाह के लिए—हैं, क्या हैं?"

वेरा ने उसे शब्द बता दिये।

"नहीं, ऐसी कुछ बातचीत और शब्द मैंने नहीं सुने... अच्छा वेरा, क्या तूने मुझे सचमुच सही शब्द बतलाये हैं; ठीक-ठीक बता न बेटी?"

"मैंने तो ठीक ही ठीक बताया, मगर ऐसे शब्द तुम शायद ही सुनो। अच्छा, चलो अब, मुझे तो पल पर भी यहां ठहरना गवारा नहीं।"

मार्या अलेक्सेयेव्ना का चेहरा तमतमा उठा: "क्या, क्या कहा तूने, चुड़ैल?"

"घर चलें। वहां तुम जो चाहो वह कर लेना मेरे साथ लेकिन यहां मैं पल पर भी नहीं ठहरना चाहती। कारण मैं तुम्हें बाद में बता दूंगी।" फिर उसने ज़ोर से कहा: "अम्मी जान, मेरा सर दर्द से फटा जा रहा है। अब बैठ पाना मुश्किल है। आओ, हम वापस चलें, चलें न मां।"

और वेरा खड़ी हो गयी।

भद्र पुरुष भी तपाक से खड़े हो गये।

मां ने तीखे स्वर में किन्तु शालीनता से कहा: "अभी ठीक हो जायेगा दर्द। वेरा बेटी, ज़रा गलियारे में मिख़ाईल इवानोविच के साथ चहलक़दमी कर आओ, ठीक हो जाओगी।"

"नहीं मां, नहीं। मेरी तबीयत बहुत बिगड़ी जा रही है। जल्दी चलें न मां।"

भद्र पुरुष ने उनके लिए बॉक्स का द्वार खोला और उसकी कुहनी थामनी चाही, लेकिन उसने मौक़ा ही नहीं दिया, चुड़ैल कहीं की! उन्होंने अपने-अपने कोट पहनने में मां और बेटी की मदद की और उन्हें गाड़ी तक छोड़ा भी। गर्व से उत्फुल्ल मार्या अलेक्सेयेव्ना ने वर्दीधारी नौकरों पर नज़र डाली। "देख रहे हो गंवार, आज भद्र पुरुष चाकरी कर रहे हैं हमारी? यहवाला मेरा भावी दामाद

है! मैं खुद भी दो-चार तुम जैसे गंवारों को पाल लूंगी। मिस साहिबा अगर तूने अपनी थूथनी ज़्यादा इधर-उधर घुमायी तो मैं तेरी बत्तीसी झाड़ दूंगी।" बस कर, बस! उसका लाड़ला दामाद उस घिनौनी छोकरी को बग्घी में बिठाते-बिठाते क्या कह रहा है? Sahtè का मतलब होगा स्वास्थ्य-कामना, savoir का मतलब पता लगाना होगा और visite तो शायद मुलाक़ात ही होगा और permettez का मतलब लगता है इजाज़त है न। लेकिन इन शब्दों से उसके क्रोध में कोई कमी नहीं आयी, ताहम उनको ध्यान में तो रखना ही पड़ेगा। गाड़ी चल पड़ी।

"उसने गाड़ी में बिठाते समय क्या कहा था तुझसे?"

"उसने कहा था कि वह कल सुबह आकर मेरी तबीयत के बारे में दरियाफ़्त करेगा।"

"कल सुबह? तू झूठ तो नहीं बोल रही अब मुझसे?"

वेरा ने कोई उत्तर नहीं दिया।

मार्या अलेक्सेयेव्ना के धीरज का बांध आखिर टूट ही गया, "अपने भाग्य को सराह, छोकरी!" और फिर उसने अपनी बेटी को झोंटे से पकड़ लिया और धौल जमायी, बस एक ही और वह भी अत्यन्त हल्के हाथ से। "अच्छा, अच्छा। अब मैं तुझ पर अंगुली भी नहीं उठाऊंगी, लेकिन याद रख—कल ज़रा मुखड़ा आनंदमय बनाये रखना! मीठी-मीठी नींद लेना रात भर, बुद्धू! और रोने की कोशिश हरगिज़ न करना। कल सुबह अगर मुझे थकी-मांदी और उनींदी दिखायी दी, तो फिर समझ लेना... अब तक तो मैंने बरदाश्त कर लिया है, लेकिन वैसी मिली तो ख़ैर नहीं। मैं इस सलोने मुखड़े को भी नहीं बख़्शूंगी, भले ही उसका रूप बिगड़ ही क्यों न जाए। कम से कम मैं अपने मन की तो निकाल लूंगी!"

"तुम्हें तो पता है, मैंने रोना जाने कब से छोड़ दिया है।"

"ठीक है, ठीक है। मगर चुप न रहना।"

"हां, कल मैं उससे बातचीत करूंगी।"

"अच्छा, लेकिन अब तो तुम्हारे चतुर हो जाने का समय आ चुका है।"

"अरे छोकरी, ईश्वर से डर और मां की इज़्ज़त कर।"

दस मिनट बीत गये।

"प्यारी वेरा, ग़ुस्सा मत कर। मैं तो प्यार से ही धमकाती हूं, तेरी भलाई जो चाहती हूं। तुझे क्या मालूम मां अपने बच्चों को कितना प्यार-दुलार करती है। नौ महीने तुझे कोख में रखा! वेरा बेटी, बदले में क्या तू अच्छी लड़की नहीं बन सकती? मालूम होगा आगे चलकर सब कुछ तेरे भले के लिए ही तो कहती-करती हूं। जैसा मैं कहती हूं, वैसा ही करना तो कल ही वह विवाह का प्रस्ताव कर देगा।"

"मां, तुम्हारा सोचना ठीक नहीं। उसका इरादा विवाह-प्रस्ताव करने का बिल्कुल नहीं। काश, तुम जान पाती मां, कि वे आपस में क्या कह रहे थे।"

"मालूम है, सब मालूम है मुझे! यदि विवाह की बातें न होतीं तो पता है क्या बातें होतीं। बस, इस बार वह बाज़ी हार गया है। हम उसे तोड़कर ही मानेंगे। मैं उसे टाट की बोरी में ठूंसकर गिरजाघर ले जाऊंगी और वेदी के चक्कर लगवा दूंगी और वह फिर भी मुझे धन्यवाद ही देगा। लेकिन तुझे यह सब बताने से लाभ ही क्या? पहले ही बहुत कुछ तुझे बता चुकी हूं। बेटी को मां से इतना कुछ पता चलना ही नहीं चाहिये कि वह बेटी के लिए क्या-कुछ कर रही है। लड़की को वही करना चाहिये, जो कि उसे बताया जाय क्योंकि उसे कुछ पता नहीं होता। इसलिए जैसे मैं बताऊं तू उससे वैसे ही बात करना।"

"हां, मैं उससे बात ज़रूर करूंगी।"

"पावेल कोन्स्तान्तीनिच, क्यों बैठे हो मिट्टी के माधव की तरह? कुछ अपनी तरफ़ से भी तो कहो। बाप के रूप में कहो अपनी बेटी से कि वह जैसा मां कह रही है, वैसा ही करे। कहो उससे कि मां उसे कोई ग़लत राय हरगिज़ नहीं देगी।"

"मार्या अलेक्सेयेव्ना, तुम बड़ी चतुर स्त्री हो, लेकिन यह मामला ज़रा अधिक पेचीदा है, ज़्यादा जल्दबाज़ी करना उचित न होगा, है न?"

"चुग़द! बच्ची के सामने ऐसी बेवक़ूफ़ी बातें कर रहे हो। मेरी ग़लती है कि मैंने तुम्हें छेड़ा, नाहक़; कहते हैं न, सोने ही दिया होता कुम्भकर्ण को। बदनसीबी मेरी। गुड़ गोबर कर दिया! अरे अब

गुमसुम क्यों बैठ गये। कुछ कहो, कुछ बताओ तो हमें: क्या बेटी को मां का कहना नहीं मानना चाहिये? हां, ना, कुछ तो कहो!"

"क्यों नहीं, मैंने कब कुछ और कहा?"

"तो फिर नेक बाप की तरह आज्ञा दो।"

"वेरा बिटिया, हमेशा वही करो, जो मां कहे। तुम्हारी मां चतुर स्त्री है, व्यवहारकुशल है। वह तुम्हें कोई ग़लत सलाह क्यों देगी। बाप के नाते मैं यही आज्ञा देता हूं।"

गाड़ी उनके मुख्य द्वार पर रुक गयी।

"बस बहुत हो गया मां। मैं कह चुकी हूं कि मैं उससे बात कर लूंगी। अब मैं बिल्कुल थक गयी हूं। अब मुझे सोना है।"

"जा और जाकर सो जा। मैं तुझे परेशान नहीं करूंगी। कल स्वस्थ रहने के लिए नींद तेरे लिए ज़रूरी है। घोड़े बेचकर सोना।"

और सचमुच जब तक वह सीढ़ी चढ़कर ऊपर तक पहुंची पूर्ण शान्ति रही, उसे कितना आत्म-नियंत्रण करना पड़ा और फिर जब वेरा ने चाय का प्याला पीने से इनकार किया तो कितनी कोशिश करके उसने अपनी आवाज़ को नरम बनाते हुए, पुचकारकर कहा:

"वेरा प्यारी, इधर तो आना।" वेरा आ गयी। "मैं तुम्हें सोने से पहले आशीर्वाद देना चाहती हूं, लाड़ली। झुको तो।" वेरा झुक गयी। "भगवान तुझे निहाल करे, बेटी। यही मेरा आसीस है।"

उसने तीन बार क्रॉस का चिन्ह बनाया और अपना हाथ चुम्बन के लिए बढ़ा दिया।

"नहीं मां, मैं तो तुमसे बहुत-बहुत पहले कह चुकी हूं, मैं तुम्हारा हाथ नहीं चूमूंगी। अब मैं जाऊं। सचमुच, मेरी तबीयत ठीक नहीं है।"

मां की आंखें क्या अंगारों की तरह फिर दहक न उठेंगी, ताहम उसने ख़ुद पर क़ाबू कर लिया और इतना भर कहा:

"जा भाग, सो ले कुछ।"

अभी वेरा ने अपने कपड़े उतारे ही थे, और बढ़िया पोशाक को एक ओर रखा कि—वास्तव में तो इस सब काम में काफ़ी समय लग गया क्योंकि वह बार-बार दिवास्वप्न में डूब जाती थी, उसने अपना कंगन उतारा और उसे हाथ में लिये बैठी रही; फिर कान की बालियां उतारीं और फिर सोच में डूब गयी, इस सब में पर्याप्त

समय निकल गया, तब कहीं जाकर उसे याद आया कि वह सचमुच, निश्चित रूप से इतनी बुरी तरह थक गयी है कि वह आईने के सामने भी खड़ी न रह सकी और निढाल होकर पास पड़ी कुर्सी में धंस गयी। उसे याद आया कि वह अपने कमरे तक कैसे पहुंची, तभी उसने कपड़े जल्दी-जल्दी उतारने की और सोने की बात सोची थी—और जैसे ही वह बिस्तर में लुढ़की ही थी कि मार्या अलेक्सेयेव्ना ट्रे में बापवाला बड़ा मग रखे और न जाने कितने रस्क उसमें रखे कमरे में पधारी।

"वेरा, तेरे लिए चाय लायी हूं, और जल्द ही चंगी हो जाओ। मैं तेरे लिए ख़ास बना के लायी हूं। देख तेरी मां कितना ध्यान रखती है तेरा। मैं बैठे-बैठे सोचती रही, मेरी लाड़ली बेटी बिना चाय ही सोने चली गयी और मैं हूं कि चाय पी रही हूं। मैं हर दम तेरे ही बारे में सोचती रहती हूं। इसलिए मैं तेरे लिए चाय के साथ कुछ खाने को भी ले आयी। खा ले, मेरी लाड़ली।"

वेरा को अपनी मां की आवाज़ कुछ अजीब-सी लगी। निश्चय ही इसमें इतनी मिठास और नरमी थी, जो पहले कभी सुनने को नहीं मिली थी। उसने मां की ओर हैरानी से ताका। मार्या अलेक्सेयेव्ना के गाल तमतमा रहे थे और आंखें कुछ चमक रही थीं।

"चाय पी ले, लाड़ली। मैं थोड़ी देर बैठकर तुझे देखूंगी, बस। पी ले, तो फिर जल्दी से तेरे लिए दूसरा प्याला ले आऊं।"

चाय में ख़ूब ज़ायकेदार मलाई पड़ी थी। उसे देखकर भूख जग आयी। वह कुहनी पर टिककर चाय की चुस्कियां लेने लगी। "जब चाय गर्म और कड़क होती है और उसमें ढेर-सी शक्कर और मलाई पड़ी हो तो कितनी ज़ायकेदार लगती है! बहुत ही तो अच्छी!.. मटमैले पानी जैसी चाय से बिल्कुल ही अलग, जिसमें ज़रा-सी शक्कर हो—बिल्कुल ही बदज़ायका। जब मेरे पास अपना पैसा होगा, तो मैं इसका पूरा ध्यान रखूंगी कि जो चाय मैं पीऊं वह बढ़िया हो!"

"शुक्रिया, मां।"

"अभी सो मत जाना। मैं तेरे लिए एक प्याला चाय और लाती हूं।" कुछ ही देर में वह एक और प्याला ज़ायकेदार चाय ले आयी। "पी ले, मैं ठहरती हूं।"

एक या दो मिनट के मौन के बाद उसने सहसा विचित्र-से

भाषण का प्रवाह छोड़ दिया। जल्दी-जल्दी में वह शब्दों को चबाती अथवा धीरे-धीरे बोलने लगती।

"वेरा, तूने अभी-अभी मुझे धन्यवाद दिया। न जाने कितना अरसा हो गया तेरे मुंह से शुक्रिया का शब्द सुने हुए। तू सोचती है मैं अधम हूं। ज़रूर है, लेकिन कोई हो भी क्यों न। वेरा, मैं कमज़ोर हो गयी हूं, मदिरा के तीन गिलास चढ़ाकर सुस्त हो गयी, और मेरी आयु में क्या—तीन गिलास क्या होते हैं! और इस पर, वेरा तूने मुझे अशांत कर दिया। तूने मेरे दिल को चीर दिया। इसलिए मैं यहां व्याकुल हो बैठी हूं। वेरा, मुझे बड़ा कठोर जीवन भोगना पड़ा। नहीं चाहती कि तुझे भी वही कुछ भोगना पड़े। तू ख़ूब-ख़ूब ख़ुशहाल रहे। मैंने जाने कितनी पीड़ा झेली है, वेरा, बहुत निर्मम पीड़ा! तुझे तो अपने पिता की और मेरी वह ज़िन्दगी याद भी नहीं होगी, जो इस घर के मैनेजर का काम संभालने से पहले हमने बितायी। बहुत ग़रीबी में, अकल्पनीय निर्धनता में हमने जीवन काटा। तब मैं ईमानदार औरत थी, लेकिन अब बिल्कुल नहीं हूं। अपने बारे में सच बताने में कोई पाप थोड़े ही कर रही हूं मैं। बिल्कुल नहीं। मगर अब वे दिन बीत चुके हैं, बहुत पहले ही बीत चुके हैं। तू तो पढ़ी-लिखी है वेरा, और मेरे लिए काला अक्षर भैंस बराबर। लेकिन मुझे वह सब मालूम है, जो कुछ तुम्हारी किताबों में लिखा है। उनमें लिखा है कि किसी के साथ भी ऐसा सलूक न हो, जो मेरे साथ हुआ। लोग कहते हैं 'मैं ईमानदार नहीं'। लेकिन तेरा बाप—वह तेरा बाप है, अलबत्ता नाद्या का नहीं—वह जन्मजात मूर्ख हमेशा मुझे इसके लिए लज्जित करता रहता था, मेरा अपमान करता रहता था! तो मुझमें भी कमीनापन जाग उठा। मैंने कहा अगर मैं ईमानदार नहीं मानी जाती, तो फिर मैं ईमानदार बनी क्यों रहूं, बस। तभी नहीं पेट में आयी नाद्या। हां, तभी। किसने मुझे उकसाया ऐसा करने के लिए? और तरक़्क़ी किसकी हुई इसके बाद? मेरा पाप ही तो दोनों के पापों में कम है। वे मुझसे छीनकर उसे ले गये और किसी परित्यक्त शिशु-गृह में उसे छोड़ आये। मुझे कभी पता नहीं चल सका कि कहां था वह शिशु-गृह, मैं उसे फिर कभी नहीं देख पायी, जाने वह अब ज़िन्दा भी है या नहीं... सोचती हूं कि शायद ही

ज़िन्दा हो! अब तो स्मृति का बोझ उतरा हुआ-सा लगता है, लेकिन तब भूल पाना इतना आसान नहीं था। बस, तभी मैं अधम बन गयी। हां, बिल्कुल अधम! तभी से दिन फिरने लगे। तुम्हारे इस नामाक़ूल बाप को नौकरी किसने दिलायी? मैंने, और किसने? किसने उसे मैनेजर की नौकरी दिलवायी? मैंने ही तो। तभी हम अच्छी तरह रहने-खाने लगे। और यह सब हुआ कैसे? क्योंकि मैं कमीनी और धूर्त्त बन गयी। मुझे सब कुछ मालूम है, वेरा, तुम्हारी किताबों में यही लिखा है कि अच्छी ज़िन्दगी केवल कमीनों के लिए है, उनके लिए नहीं, जो ईमानदार हैं। यह सच है, वेरा। सोलह आने सच। अब तेरे बाप के पास धन है। मैंने ही उसे धन दिलाया और मेरे पास भी धन है, शायद उससे भी ज़्यादा धन इस समय है—लेकिन मैंने ख़ुद ही कमाया है उसे—अपना बुढ़ापा किस बूते पर काटूंगी। और तेरा बुद्धू बाप इसीलिए मेरी इतनी इज़्ज़त करता है कि मेरे इशारे पर नाचता है—मैंने उसे अच्छी पट्टी पढ़ायी है। हालांकि पहले वह मुझ पर उबलता रहता था, इतना बेइज़्ज़त करता था कि मैं रो पड़ती थी। किसलिए? क्या हैसियत थी किसी की तब, बस इतनी-सी बात थी, उन दिनों मैं इतनी कमीनी नहीं बनी थी। लेकिन तुम्हारी किताबों में तो यही लिखा है न, उस तरह रहने से भला क्या होता है—तू समझती है, मैं यह नहीं जानती? उन्हीं किताबों में यह लिखा है—अगर हमें उस तरह जीना गवारा नहीं, तो सब कुछ दूसरे ढंग से करना होगा; क्योंकि आज जैसा कुछ है उसमें अपनी मनपसन्द इच्छा के अनुसार रह पाना कठिन है—तो फिर उन्हें इस जाल को तोड़ने का रास्ता क्यों नहीं सूझता? वेरा, वेरा, क्या तू समझती है कि तेरी किताबों में नये ढर्रों के बारे में जो लिखा है, वह सब मैं नहीं जानती। अच्छे हैं वे, मुझे मालूम है। बस बात इतनी-सी है, मैं और तू वह दिन नहीं देख पायेंगी। लोग निहायत मूर्ख हैं, उनके जैसों की मदद से कैसे कोई अच्छी बात की जा सकती है? इसलिए हम पुराने ढर्रे पर ही चलते रहेंगे। तुम भी उन्हीं पर चलो। वे पुराने ढर्रे हैं क्या? तुम्हारी किताबों में सभी कुछ तो लिखा है—लूट-खसोट और धोखाधड़ी; और क्या? मेरी रानी बिटिया, यह सच है। जब, कोई नया रास्ता नहीं, पुराने से ही चिपके रहो,

धोखा दो और लूटो-खसोटो। मैं तुझसे यह सब किसलिए कह रही हूं, इसीलिए न कि मैं तुझे प्यार करती हूं, प्यार..."

मार्या अलेक्सेयेव्ना का धारा-प्रवाह भाषण खर्राटों में गुम हो गया और वह वहीं पसर गयी।

2

मार्या अलेक्सेयेव्ना को भली-भांति मालूम था कि ऑपेरा में क्या कुछ कहा गया था, लेकिन उसका परिणाम क्या निकलनेवाला था, यह जानना अभी शेष था।

जब वह, अपनी बेटी के कारण पूरी तरह से विचलित और पंच में रम की ख़ासी मात्रा मिला कर पीने के कारण खर्राटे लेते हुए निद्रा में डूबी थी, उस समय युवा मिख़ाईल स्तोरेश्निकोव अपने सांध्यकालीन साथियों के साथ किसी फ़ेशनेबुल रेस्तरां में भोजन कर रहा था, उनके बीच एक फ़्रांसीसी युवती भी थी, जिसे सैनिक अधिकारी ने इस मण्डली में शामिल किया था। भोजन समाप्त ही होनेवाला था।

"श्रीमान स्तोरेश्नीक!" स्तोरेश्निकोव गद्गद हो गया: युवती ने तीसरी बार उस शाम, उसकी ओर मुड़कर उसे इसी तरह सम्बोधित किया था। "श्रीमान स्तोरेश्नीक, कृपया मुझे आप इसी नाम से सम्बोधित करने दें, यह सुनने में इतना अच्छा लगता है और ज़बान से भी अच्छी तरह निकलता है—श्रीमान स्तोरेश्नीक, मुझे तो गुमान भी न था कि आज की शाम मैं ही आप लोगों के बीच अकेली महिला होऊंगी। मुझे तो उम्मीद थी कि आपके साथ अदेल भी होगी। वह होती तो कितना मज़ा आता। उससे तो बहुत कम मुलाक़ात हो पाती है।"

"दुर्भाग्य से अदेल और हम अब मित्र नहीं रहे।"

सैनिक अधिकारी कुछ कहना चाहता था, लेकिन कहते-कहते रुक गया।

"मिस जूली, रत्ती भर भी विश्वास मत कीजिये आप इस बात का।" ग़ैर-फ़ौजी सज्जन बोला। "यह आप से सच कहते डरता है।

इसका ख़्याल है कि अगर आपने यह जान लिया कि इसने फ़्रांसीसी युवती को किसी रूसी युवती के लिए छोड़ दिया है, तो आप आग-बबूला हो उठेंगी।"

सैनिक अधिकारी बोला: "पता नहीं हम लोग यहां आये ही क्यों?"

"ऐसा क्यों कहते हो, सेर्ज, जान ने हमें आमंत्रित किया और मैं श्रीमान स्तोरेश्नीक से मिलने की बात सोचकर प्रफुल्लित हो गयी। लेकिन सच तो यह है श्रीमान स्तोरेश्नीक, आपकी रुचि सचमुच अच्छी नहीं। यदि आपने उस जार्जियन परी के लिए, जिसके बॉक्स में आप थोड़ी देर पहले थे, अदेल को छोड़ा होता तो मैंने आपत्ति न की होती; लेकिन रूसी के लिए फ़्रांसीसी युवती को छोड़ना... कल्पना कर सकती हूं: फीकी-फीकी आंखें, छितरे-छितरे और आभाहीन बाल और फिर मुखड़ा लावण्यशून्य और भावशून्य! जी नहीं, क्षमा करें, मुखड़ा होगा आप रूसियों के शब्दों में ख़ून और क्रीम का घोल या ऐसा ही कुछ जिसे एस्किमो ही हज़म कर सकता है। जान, उसे एशट्रे तो पकड़ाना, जिसने सुन्दरियों के प्रति पाप किया है। उसे अपने दुष्ट सिर पर राख झाड़नी ही चाहिये।"

सैनिक अधिकारी ने कहा: "तुमने ऐसी बातें कही हैं कि राख तुम्हारे सिर पर डालनी होगी। जिसे तुमने जार्जियन परी कहा है, वही तो वास्तव में वही रूसी युवती है, जिसकी चर्चा हुई।"

"मज़ाक़ तो नहीं कर रहे?"

"शत प्रतिशत रूसी।

"असंभव!"

"अगर तुम समझते हो कि रूसी भी फ़्रांसीसियों की तरह एक ही प्रकार के सौन्दर्य में ढले होते हैं, तो ग़लती पर हो। इसके अलावा फ़्रांस में भी तो पर्याप्त संख्या में हल्के सुनहरे बालोंवाली महिलायें होती हैं। लेकिन, जूली, हमारी नस्ल मिली-जुली है; सुनहरे बालोंवाली फ़िनवंशियों ('निस्सन्देह फ़िनवंशी!' जूली ने सोचा) से लेकर श्यामवर्णी, इटालवियों से भी अधिक श्यामवर्णी, अर्थात् तातार, मंगोल ('मुझे मालूम है वे कौन हैं'), इन सभी जातियों का रक्त हममें मिला है! जिन सुनहरे बालोंवाली स्त्रियों को तुम तुच्छ समझते हो, वे स्थानीय हैं, काफ़ी प्रचलित हैं, लेकिन प्राधान्य नहीं।"

"अद्‌भुत! लेकिन वह रूसी युवती सचमुच चित्ताकर्षक है! वह स्टेज पर काम क्यों नहीं करती? लेकिन, श्रीमनो, मैं उसी की चर्चा कर रही हूं जिसे मैं देख चुकी हूं। लेकिन सबसे महत्त्वपूर्ण सवाल अभी बचा है, अर्थात् उसके पांव कैसे हैं? मुझे बताया गया कि तुम्हारे प्रसिद्ध कवि करासिन ने कहा था कि सारे रूस में पांच जोड़े कमनीय पांव भी नहीं मिलेंगे।"

"जूली, उसका नाम करामज़ीन है करासिन नहीं और करामज़ीन इतिहासकार था, कवि नहीं। वह रूसी भी नहीं था, तातार था, तातार। इससे भी यह सिद्ध हो जाता है कि हम लोग मिली-जुली नस्ल के हैं। पांवों के बारे में यह उक्ति पुश्किन की है। उनका काव्य अपने युग में बढ़िया था, लेकिन अब उसका अधिकांश लालित्य खो चुका है। अरे हां, यह भी तो कि एस्किमो अमरीका में रहते हैं, हमारे यहां के बर्बर, वही जो रेनडियर का रक्तपान करते हैं समोयेद * कहलाते हैं।"

"बहुत, बहुत कृपा आपकी, सेर्ज, करामज़ीन इतिहासकार हैं, पुश्किन के बारे में मैं जानती हूं, एस्किमो अमरीका में रहते हैं, रूसियों में समोयेद होते हैं—लेकिन सुनने में यह कितना भला लगता है, स-मो-येद। अब मैं यह बिल्कुल नहीं भूलूंगी। श्रीमनो, मैं सेर्ज से कहती हूं कि वह इस सबको दोहराये जब हम अकेले हों अथवा किसी दूसरी मित्र-मण्डली में हों। इसके वार्तालाप में मज़ा आ जाता है। और फिर ज्ञानार्जन तो मेरी सनक है। मैं तो दूसरी मदाम स्ताल ** बनने के लिए ही पैदा हुई हूं। मैं सच कहती हूं। पर छोड़िये इस बात को, हम तो पांवों की बात कर रहे थे न।"

"मिस जूली, यदि कल आप मुझे अपने यहां आने दें तो मैं उसका जूता आपको पेश करके सम्मानित महसूस करूंगा अपने को।"

"बड़ी ख़ुशी से तशरीफ़ लायें। मैं उस जूते को पहन के देखूंगी। मेरा कौतूहल, क्या कहते हैं उसे, जाग उठा है।"

स्तोरेश्निकोव फूला नहीं समाया, समाता नहीं भला क्योंकि वह

---

* सोवियत संघ के उत्तर में नेनेत जाति के लोग।—सं०

** प्रसिद्ध फ़्रांसीसी लेखिका (1766—1817)।—सं०

जान का दुमछल्ला और जान भी सेर्ज का दुमछल्ला ही था और जूली सेर्ज की मण्डली की गण्य-मान्य फ़्रांसीसी महिलाओं में से सबसे सुन्दर थी—निस्सन्देह, सम्मान बड़ा था!

जान ने पुष्टि की: "उसका पांव तो उत्तीर्ण हो ही जायेगा। लेकिन ठोस यथार्थ में विश्वास करनेवाले के रूप में मेरी अधिक दिलचस्पी ऊंची बातों में है। मैंने तो उसके वक्ष पर बड़ा ग़ौर किया।"

स्तोरेश्निकोव ने इस पर कि उसकी सुरुचि ने कितनी बेहतर स्थिति में उसे ला बिठाया है फूले न समाते हुए कहा: "उसका वक्ष अत्यन्त सुन्दर है।" उसने सोचा कि अब वह जूली के रूप की प्रशंसा कर सकता है, जिसकी हिम्मत उसे अब तक नहीं थी। "हां, मगर यहां किसी और के वक्ष की प्रशंसा करना पाप होगा।"

"हा-हा-हा! यह सज्जन मेरे वक्ष की सराहना करना चाहते हैं। मैं पाखण्डी नहीं। मैं आपको छलूंगी नहीं श्रीमान स्तोरेश्नीक। न तो मैं अपनी झूठी तारीफ़ करती हूं और न मैं अपनी कमज़ोरियों के लिए झूठी तारीफ़ ही सहन कर सकती हूं। ईश्वर की कृपा है, मेरे पास बहुत है, जिस पर मैं गर्व कर सकती हूं, सचमुच। लेकिन मेरा वक्ष हा-हा-हा! जान, तुम तो देख चुके हो इसे बोलो न। जान, तुम कुछ बोलते क्यों नहीं? अपना हाथ तो बढ़ाइये श्रीमान स्तोरेश्नीक।" उसने हाथ थाम लिया और बोली: "देखो तो, यहां पर बिल्कुल मांस नहीं है क्या? यहां और यहां, कुछ महसूस होता है? मैं तो स्कर्ट या ब्लाउज़ की तरह ही नक़ली छातियां भी पहनती हूं। अपने को ख़ुश करने के लिए नहीं—अगर मुझसे पूछो तो मैं इस पाखण्ड के बिना ही भली—लेकिन मर्यादा का ध्यान भी तो रखना पड़ता है। कोई भी स्त्री, जो मेरे जितना जीवन भोग चुकी है—और मैंने कैसा जीवन बिताया है श्रीमान स्तोरेश्नीक! मैं आज तो जो थी उसकी तुलना में संत हूं, अपरिग्रही हूं!—ऐसी स्त्री अपना वक्ष यथापूर्व बनाये नहीं रह सकती!" सहसा उसकी आंखों से आंसुओं की धारा फूट पड़ी। "मेरा वक्ष, ओह मेरा वक्ष, मेरी निर्मलता! हे भगवान, मेरा जन्म ही क्यों हुआ?"

"आप लोग झूठ बोलते हैं," वह चीख़ी और तमककर उसने अपनी मुट्ठी मेज़ पर दे मारी। "झूठी निंदा करनेवाले! आप सभी

कपटी हैं। वह इस पुरुष की रखैल नहीं! यह उसे ख़रीदना चाहता है! मैंने देखा था उस युवती ने अपना मुंह फेर लिया था। मैंने देखा था कि वह घृणा और रोष से उबली पड़ रही थी। कितनी दुष्टता है यह सब!"

ग़ैर-फ़ौजी सज्जन ने अंगड़ाई लेते हुए कहा: "अरे रे, स्तोरेश्निकोव, तुम तो बहुत जल्द ही डींग हांकने लगे। अभी तो तुम दोनों के बीच कुछ तय नहीं हुआ और तुम बताने लगे कि वह तुम्हारी रखैल है। तुमने अदेल को भी छोड़ दिया, ताकि इस बात की विश्वसनीयता बढ़ जाय। तुम्हारी कहानी है तो बहुत आकर्षक, लेकिन अभी तक है निरी गप ही। अलबत्ता, हो सकता है कि एक-आध हफ़्ते में इसका कुछ परिणाम निकल ही आये। लेकिन तुम अपनी कहानी सुनाने में भी निराश नहीं होगे, हो सकता है, तुमने जो कल्पना की, असलियत उससे कहीं बेहतर हो। मैंने पड़ताल कर ली है। तुम्हें पूर्ण सन्तोष होगा।"

स्तोरेश्निकोव तिलमिला उठा।

"नहीं, मिस जूली नहीं, मैं आपको विश्वास दिलाता हूं कि आपका निष्कर्ष ग़लत है। क्षमा करें कि मैं आपकी बात का खण्डन करने का साहस कर रहा हूं, लेकिन वह मेरी रखैल है। आज की शाम प्रेमियों की मामूली नोकझोंक के सिवा और कुछ भी नहीं थी: उसने मुझे ऑपेरा के पहले एक्ट में मिस मतील्दा के बॉक्स में बैठे देख लिया था, बस इतनी-सी बात थी।"

जान ने उबासी लेते हुए कहा: "प्यारे, बिल्कुल झूठ बोल रहे हो।"

"यह झूठ नहीं, मैं झूठ नहीं बोल रहा!"

"तो फिर सिद्ध करो। मैं ज़रा पक्की-पोढ़ी बात में यकीन करता हूं, सुनी-सुनायी में नहीं।"

"क्या सबूत दूं मैं तुम्हें, कैसा?"

"अच्छा तो अब तुम पीछे हट रहे हो, अपनी बात से मुकर रहे हो। कैसे सबूत की बात करते हो? अरे यह क्या मुश्किल बात है? अच्छा, कल हम यहां पर डिनर के लिए मिलते हैं। मिस जूली कृपा करके सेर्ज को भी ले आयेंगी और में अपनी महबूबा बेर्था के साथ आऊंगा और तुम अपनी प्रेमिका के साथ आना। अगर वह आ गयी तो मैं बाज़ी हार गया और डिनर का

बिल मैं चुकाऊंगा और अगर नहीं तो हम लोग तुमको अपमानित करके अपनी मण्डली से निकाल देंगे।" जान ने घंटी का बटन दबाया। वेटर हाज़िर हुआ। "सिमोन, कल शाम छह लोगों के लिए डिनर का इन्तज़ाम रखना जैसा क्रिसमस से पहले, जब मैं बेर्था को पत्नी के रूप में यहां लाया था, तब तुमने परोसा था; याद है न तुम्हें? हां, कृपया उसी पुराने कमरे में रखना मेज़ हमारे लिए।"

"उस डिनर को कोई कैसे भूल सकता है, जनाब! आप चिन्ता न करें, सब ठीक रहेगा।"

वेटर चला गया।

"बदज़ात, कमीनो! पेरिस में सड़कों पर दो साल तक भटकते, छः महीनों तक चोरों के अड्डे में रहते समय भी मेरा ऐसे मनहूसों से कभी वास्ता नहीं पड़ा, जैसे कि तुम तीनों हो! हे भगवान, उच्च समाज में मुझे कैसे लोगों की संगत में रहने को मजबूर होना पड़ा है! हे भगवान, क्यों मुझे इस प्रकार की ज़िल्लत उठानी पड़ रही है?" वह घुटनों के बल बैठ गयी। "हे मेरे भगवान! मैं निर्बल हूं। भूख मैं सह सकती थी, लेकिन पेरिस में सर्दियों में कितनी ठण्ड होती है! ठण्ड इतनी तीखी थी और लालच कितना बड़ा! मैं ज़िन्दा रहना चाहती थी, प्रेम करना चाहती थी—मेरे भगवान, वह पाप तो नहीं था। क्यों दण्ड दे रहे हो मुझे ऐसा? मुझे इन लोगों से और उनकी गंदगी से कहीं दूर ले चलो! शक्ति दो मुझे कि मैं फिर पेरिस की वेश्या हो जाऊं, कुछ और नहीं चाहिये मुझे, इससे अधिक मुझे और मिल भी क्या सकता है, मैं इसी के योग्य हूं। अलबत्ता, मुझे इन लोगों से बचाओ, इन वीभत्स, जघन्य लोगों से!" वह लपककर सैनिक अधिकारी की बांहों में झूल गयी। "सेर्ज, तुम इन लोगों जैसे तो नहीं हो? हां, तुम इन लोगों से बेहतर हो!" (भावशून्य फ़ौजी अफ़सर ने पुष्टि की: "बेहतर"।) "तुम्हें यह सब वीभत्स नहीं लग रहा?"

"लग क्यों नहीं रहा, जूली?"

"और फिर भी तुम ख़ामोश हो, कुछ नहीं कर रहे हो? मानो तुम इससे सहमत हो? तुम इस सब में भागीदार हो?"

"मेरी जान, मेरे आग़ोश में आ जाओ।" उसने जूली को शान्त करने की कोशिश से कहा। "ऐसे ही पलों में तो मैं तुम पर निसार

हो जाता हूं। तुम विलक्षण स्त्री हो। मुझसे विवाह क्यों नहीं कर लेतीं तुम? कितनी बार तो मैं कह चुका हूं यह! कर लो न मुझसे विवाह।"

"विवाह? दासता और अंधविश्वास? मैं और विवाह? कभी नहीं! इस तरह की मूर्खतापूर्ण बात नहीं करने दूंगी तुम्हें। मुझे गुस्सा मत दिलाओ अब। लेकिन सेर्ज, प्यारे-प्यारे सेर्ज, मना करो न इसे। यह तुमसे ही डरता है, बचाओ उस लड़की को इससे!"

"जूली, जूली क्या हो गया है तुम्हें, कहां है तुम्हारी बुद्धि? असंभव है यह। यदि वह युवती इसे नहीं मिलती, तो किसी और को मिलेगी, इससे तो कोई फ़र्क़ नहीं पड़नेवाला है। देख नहीं रही हो, जान तो उसको हड़पने के लिए साज़िश भी रचने लगा है। तुम्हें मालूम ही होगा, हज़ारों ऐसे ही जान फिर रहे हैं। तुम उन सबको भगा सकती हो, लेकिन जब उसकी मां ही उसका सौदा कर रही है तो यह कैसे संभव है? रूसियों में कहावत है न, दीवार से सिर टकराने से कोई लाभ नहीं, और जूली, फिर हम लोग तो अक़्लमंद हैं। इसी सिद्धान्त पर अमल करके ही तो मेरी मानसिक शांति यथापूर्व रहती है।"

"कभी नहीं। तुम दास हो, पर फ़्रांसीसी स्त्री स्वतन्त्र महिला होती है। वह लड़ती है, वह पतिता हो सकती है, लेकिन प्रतिप्रहार करती है। मैं नहीं होने दूंगी ऐसा। क्या नाम है उसका? कहां रहती है वह? पता है तुम्हें?"

"क्यों नहीं।"

"तब हम चलें वहां। उसे आगाह करना ज़रूरी है।"

"आधी रात को? नहीं, इस समय तो सोना ही बेहतर होगा। शुभ रात्रि, जान। शुभ रात्रि, स्तोरेश्निकोव। कल अपनी डिनर-पार्टी में हमारी प्रतीक्षा मत करना, देख नहीं रहे हो, यह कितनी उत्तेजित है। सच पूछो तो मुझे भी यह मामला पसन्द नहीं। दिलचस्पी नहीं। अलबत्ता, मेरी राय का तुम्हारे लिए क्या महत्व। शुभ रात्रि।"

उनके जाने के बाद, असैनिक व्यक्ति ने उबासी और अंगड़ाई लेते हुए कहा: "हे भगवान, कैसी चण्डी थी यह फ़्रांसीसी। वैसे तो बड़ी चुलबुली है ही, लेकिन आज तो हद ही कर दी। जब सुन्दर औरत नाराज़ होती है, वह अच्छी लगती है देखने में, लेकिन चार वर्ष की बात तो क्या, ऐसी के साथ तो मैं चार घंटे भी नहीं निभा

सकता। उसकी सनक से हमारे डिनर का कार्यक्रम टल नहीं सकता। उनके स्थान पर मैं पॉल और मतील्दा को ले आऊंगा। अच्छा, बड़ी देर हो गयी अब, चले अपनी-अपनी राह पर। मुझे बेर्था से मिलने जाना है पहले और फिर अपनी गुड़िया-सी लोत्हेन के यहां।"

3

"कितनी अच्छी है मेरी प्यारी बिटिया, वेरा। आज की सुहावनी सुबह रोनी-सी सूरत हरगिज़ नहीं। समझ रही है न, तेरी मां सौ प्रतिशत सही है और ईश्वर जानता है, तू हमेशा ही मेरा विरोध करती रही है।" वेरा ने विकलता व्यक्त की। "ठीक है, ठीक है, मैं चुप हो जाऊंगी, तू परेशान मत हो। और हां, रात जब तेरे ही कमरे में मेरी आंख लग गयी, तो हो सकता है, मैंने कुछ ऐसा कह दिया हो, जो मुझे नहीं कहना चाहिये था। मैं कल रात आपे में नहीं थी। ध्यान मत देना उस पर, जो मैंने चाय लाते समय कहा। सुन रही है न? कोई भी ध्यान मत देना।"

वेरा ने देखा कि पहले जैसी मार्या अलेक्सेयेव्ना उसके सामने है इस समय। पिछली रात वेरा को लगा कि उसने पशु की खाल में इंसानी झलक-सी देखी थी; लेकिन अब तो उसके सामने पशु, हां, केवल पशु ही मौजूद था। वेरा अपने भीतर उमड़ी जुगुप्सा को चाहे जितना झटकने की चेष्टा करे, वह तो उसके समक्ष शक्तिहीन थी। पहले वह अपनी मां से केवल घृणा ही करती थी, लेकिन कल उसने सोचा मानो घृणा करुणा में बदल गयी है, केवल करुणा में। लेकिन इस समय उसे लगा, जैसे घृणा लौट आयी है और करुणा भी उसमें रह गयी।

"जल्दी कर, कपड़े-वपड़े पहन। वह किसी भी पल यहां आ सकता है।" मार्या अलेक्सेयेव्ना ने अपनी बेटी के कपड़ों पर सहमी-सी दृष्टि डाली। "बेटी, अगर तूने ढंग से, होशियारी से आचरण किया तो मैं तुझे मरकत जड़े बुन्दों की जोड़ी दूंगी। हैं तो वे पुराने फ़ैशन के लेकिन तू उन्हें नये ढंग से जड़वा कर जड़ाऊ पिन बनवा लेना। गिरवी रखने पर मैंने 150 रूबल दिये थे,

लेकिन ब्याज मिलाकर अब 250 के हो गये होंगे, वैसे उनकी क़ीमत 400 से ऊपर होगी। सुन रही है न? तुझे मिल सकते हैं वे।"

स्तोरेशिनकोव आया। पिछली तमाम रात वह इसी उधेड़-बुन में लगा रहा कि कैसे वह उस मुसीबत से छुटकारा पायेगा, जिसमें उसने ख़ुद को अपने-आप फंसा लिया है। वह रेस्तरां से पैदल लौटते समय भी सारे रास्ते तरकीबें सोचता रहा और घर पहुंचने तक वह निर्णय ले चुका था और इस समय वह अपने आप से ख़ुश भी था।

उसने वेरा की तबीयत के बारे में पूछा। "ठीक है, धन्यवाद," उत्तर मिला। यह सुनकर वह बहुत ख़ुश हो गया और फिर उसने बातचीत को इस विषय की ओर मोड़ा कि निश्चय ही अच्छे स्वास्थ्य का पूरा लाभ उठाना चाहिये,—"क्यों नहीं", "ख़ास तौर से युवावस्था में तो यह और भी ज़रूरी है।" वेरा की मां का यही विचार था जिसका पूर्ण समर्थन वह ख़ुद भी करता था। क्यों न इसी शाम का उपयोग शहर के बाहर सैर-तफ़रीह के लिए किया जाय। मौसम कितना सुहावना है और सड़कें भी तो कितनी बढ़िया और जगमग हैं। लेकिन इस सैर पर जायेगा कौन-कौन? "हम तीन और कौन—आप, मार्या अलेक्सेयेव्ना, वेरा पावलोव्ना और मैं।" तब तो बिल्कुल ठीक! मार्या अलेक्सेयेव्ना राज़ी हो गयी और फिर वह काफ़ी और बिस्कुट लाने गयी और जाते-जाते वेरा से गीत गाने के लिए कहा। "ठीक है न बेटी?" उसने यह ऐसे कहा, जैसे वह "न" सुनने के लिए तैयार न हो। "ज़रूर!"

वेरा प्यानो बजाने के लिए बैठी और नेक्रासोव की कविता 'त्रोइका' पर आधारित (जिसको अभी हाल में ही धुन में बांधा गया था) गीत गाना शुरू किया। मार्या अलेक्सेयेव्ना ने बग़ल के कमरे में खड़े-खड़े इस पसन्द का हार्दिक अनुमोदन किया, विशेष रूप से उसका वह प्रसंग जिसमें युवती अफ़सर की ओर कनखियों से देखती है। "मेरी बेटी वेरा, जब चाहती है तो बेहद तेज़-तर्रार हो सकती है, अलबत्ता जब चाहती है; चुड़ैल कहीं की!" जल्द ही वेरा ख़ामोश हो गयी, सब कुछ वैसे ही चल रहा था, जिसकी हिदायत मार्या अलेक्सेयेव्ना ने दी थी: पहले कुछ संगीत, और फिर गपशप। अरे यह क्या हुआ, मां को झुंझलाहट हुई, फ़्रांसीसी में क्यों बोलने लगी। "कैसी मूर्ख बुढ़िया हूं मैं; यह तो कहना भूल ही गयी

5—1127

कि सिर्फ़ रूसी में ही बातचीत करना।" ताहमं, वेरा धीमी आवाज़ बोल रही है... मुस्करायी भी—ठीक ही है। लेकिन यह क्या? युवक ने आंखें क्यों फाड़ लीं? लेकिन बुद्धू तो बुद्धू ही है, आंखें झपकने के अलावा कुछ नहीं आता उसे, ऐसा ही तो चाहते हैं हम इन युवकों को। क्या कहने, वेरा ने अब उसे अपना हाथ पकड़ा दिया है, बड़ी अक्लमंद हो गयी है, मेरी प्यारी बिटिया।

"श्रीमान स्तोरेश्निकोव, मैं असली मुद्दे पर आती हूं। आपने कल शाम ऑपेरा में बॉक्स इसलिये लिया ताकि अपने मित्रों को मुझे अपनी रखैल के रूप में दिखा सकें। मैं यह नहीं कहूंगी कि आपकी नीयत बद थी, लेकिन अगर आपको कुछ भी समझ होती तो आपने हरगिज़ वैसा न किया होता, जो आपने किया। लेकिन मैं आपको चेतावनी दे रही हूं कि अगर आयन्दा कभी आपने थियेटर में, सड़क पर, अथवा कहीं और मेरे पास आने की जुर्रत की, तो आपके गाल पर कस कर तमाचा पड़ेगा। मेरी मां भले ही इसके लिए मेरी चमड़ी उधेड़ दे (और यही कहते हुए वेरा मुस्करायी थी), लेकिन मैं सब कुछ झेल लूंगी! आप को मेरी मां की ओर से नोट मिल जायेगा, जिसमें लिखा होगा, मेरे बीमार पड़ जाने के कारण शाम की सैर रद्द कर दी गयी है।"

वह आंखें फाड़े बुद्धू की तरह खड़ा था, ठीक वैसे, जैसे मार्या अलेक्सेयेव्ना ने उसे कुछ देर पहले देखा था।

"मैं समझती हूं कि आपमें रंच मात्र आत्म-सम्मान की भावना नहीं है। लेकिन यह भी हो सकता है कि अभी आप इतने नीचे न भी गिरे हों। अगर ऐसा हो तो मैं आपसे यही कहूंगी, हमारे यहां आना बन्द कर दें। तभी मैं आपको अपनी बदनामी के लिए क्षमा कर सकूंगी। मानते हैं यह बात, तो लाइये, हाथ बढ़ाइये।" उसने ख़ुद अपना हाथ बढ़ा दिया और स्तोरेश्निकोव ने वास्तव में कुछ भी समझे बिना उसका हाथ अपने हाथ में ले लिया।

"धन्यवाद। अब कृपया तशरीफ़ ले जायें। कहियेगा कि आपको जल्दी है क्योंकि घोड़ों को आज शाम के लिए चुस्त-चौकस करना है न।"

उसने फिर अचरज से देखा। वेरा फिर प्यानो बजाने लगी; जहां से 'त्रोइका' की धुन छोड़ी थी, उसी से आगे का सुर पकड़ लिया।

काश वहां कोई रसिक होता, उसे यह संगीत मनोरंजक लगता। दावे से कहा जा सकता है कि गीत-गायन में इतनी भावना बहुत कम होती है, यद्यपि यह भावना कुछ अतिरंजित ही थी, च् च्, इतनी अरुचिपूर्ण।

कुछ ही देर में मार्या अलेक्सेयेव्ना और महरी वहां आयीं। महरी के हाथों में कॉफ़ी और बिस्कुटों से भरी ट्रे थी। लेकिन, बैठने के बजाय युवक स्तोरेश्निकोव पीछे की ओर, द्वार की ओर मुड़ा।

"अरे, मिख़ाईल इवानोविच, इतनी जल्दी जा रहे हैं?"

"मार्या अलेक्सेयेव्ना, मैं जल्दी में हूं; आज शाम के लिए घोड़ों को तैयार करना है न।"

"उसके लिए तो बहुतेरा समय पड़ा है, मिख़ाईल इवानोविच।" लेकिन स्तोरेश्निकोव तब तक दरवाज़े से बाहर निकल चुका था।

मार्या अलेक्सेयेव्ना ड्योढ़ी से कमरे की ओर लपकी। उसकी मुट्ठियां कसी हुई थीं।

"क्या कर दिया तूने मुंहजली डायन?" लेकिन मुंहजली डायन तो कमरे में थी ही नहीं। मां बेटी के कमरे की ओर झपटी लेकिन उसका तो दरवाज़ा भीतर से बन्द था। उसने अपना पूरा ज़ोर दरवाज़े पर डाला, लेकिन फिर भी दरवाज़ा खुला नहीं। तभी मुंहजली ने मुंह खोला।

"अगर तुम दरवाज़े को तोड़ोगी, तो मैं खिड़की का शीशा फोड़ डालूंगी और मदद के लिए शोर मचाऊंगी। तुम ज़िन्दा तो मुझे क़ब्ज़े में कर नहीं पाओगी।"

मार्या अलेक्सेयेव्ना काफ़ी देर तक लाल-पीली होती रही और वाही-तबाही बकती रही, लेकिन दरवाज़े को नहीं पीट रही थी। अन्ततः, जब वह चिल्लाते-चिल्लाते थककर चुप हो गयी, तो वेरा फिर बोली।

"मां, मैं पहले तुमको पसंद नहीं करती थी, लेकिन कल रात से मुझे तुम पर रहम आ रहा है। तुमने बहुत दुःख झेला है जीवन में—इसीलिए तुम जैसी हो वैसी बनी। मैं अब तक ख़ामोश रही, लेकिन अब मैं तुमसे बात करना ही चाहती हूं। लेकिन पहले तुम ग़ुस्सा थूक दो, शान्त हो जाओ। तभी हम जी भरके बात करेंगी, ऐसी बातचीत, जो पहले हम दोनों ने कभी नहीं की।"

यद्यपि यह भाषण मार्या अलेक्सेयेव्ना को बिल्कुल ही नहीं सुहाया, तथापि तनी हुई नसों को राहत तो चाहिये ही थी और उसके मन में यह विचार भी आया कि अगर यह मुंहजली इतनी बेक़ाबू हो गयी है तो चतुराई-चालाकी बरतने में ही भला है। बिना उसकी मर्ज़ी के तो कुछ होनेवाला नहीं, मिख़ाईल बुद्धू से उसका विवाह ऐसे किया नहीं जा सकता; यह हक़ीक़त है और यह भी तो नहीं मालूम कि बेटी ने मिख़ाईल से कहा क्या है। उन्होंने तो हाथ मिलाये थे, लेकिन आख़िर इस सबका मतलब हुआ क्या, क्या हुआ?

और इसी उधेड़बुन में निढाल-सी मार्या अलेक्सेयेव्ना कुर्सी पर पड़ी-पड़ी क्रोध अथवा शान्तिपूर्वक व्यवहार के हानि-लाभ सोचती रही। तभी बाहर के दरवाज़े की घंटी घनघनायी। सेर्ज और जूली पधारे थे।

4

उस सबेरे, आंख खुलते ही जूली के पहले शब्द थे: "सेर्ज, क्या उसकी मां फ़्रांसीसी भाषा जानती है?"

"मुझे नहीं मालूम। अभी भी तुम्हारा विचार बदला नहीं, क्या?"

बदलता भी तो कैसे। ऑपेरा में हुई बातचीत के आधार पर उन्होंने यही तय किया था कि मां को इस भाषा पर शायद दक्षता प्राप्त नहीं थी। जूली ने सेर्ज को अपने साथ अनुवादक के रूप में ले लिया था। सचमुच, उसके भाग्य में यही बदा था चाहे वेरा की मां कार्डिनल मेज़ोफ़ेन्दी* ही होती उसे फिर भी जाना ही पड़ता, उसे कार्नेल के उपन्यास की नायिका की सखी की तरह जूली के साथ सर्वत्र जाना पड़ता था, लेकिन फिर भी उसने कभी शिकायत नहीं की थी। फिर जूली देर से सोकर उठी थी, रास्ते में वीख़मन के फ़ैशन स्टोर में और दो-चार दुकानों पर किसी काम से होते हुए

* जुज़ेपे मेज़ोफ़ेन्दी (1774—1849)—बोलोन के विश्वविद्यालय का प्रोफ़ेसर, जो लगभग 50 भाषाओं का ज्ञाता था।—सं०

जब तक जूली और सेर्ज लितैनी सड़क से गरोख़ोवाया तक पहुंचे, तब तक श्रीमान स्तोरेश्निकोव को वेरा से बातचीत करने और मार्या अलेक्सेयेव्ना को लाल-पीला होकर शान्त होने का मौक़ा मिल चुका था।

"हम बहाना क्या करेंगे? ओफ़ कितना गन्दा ज़ीना है, इतना गन्दा तो मैंने पेरिस में कहीं भी नहीं देखा।"

"जो मन में आये कह देना। बुढ़िया चीज़ें गिरवी रखती है, उस जड़ाऊ पिन को उतार लो। मगर नहीं, बेटी प्यानो बजाना सिखाती है। हम कहेंगे कि तुम्हारी भतीजी सीखना चाहती है।"

मत्र्योना को जीवन में पहली बार नील पड़े गाल से शरमाहट महसूस हुई—सेर्ज की वर्दी और विशेष रूप से जूली के सौन्दर्य और अभूतपूर्व शान-शौकत को देखकर उसकी आंखें खुली की खुली रह गयीं। मत्र्योना ने जब कर्नल और उनकी पत्नी की चरण-धूलि पड़ने के बारे में जब मार्या अलेक्सेयेव्ना को सूचित किया तो वह भी गदगद हो गयी। विशेष रूप से उनकी पत्नी के आने की सुनकर। उसने अब तक जो चर्चा सुनी थी वह केवल काउंसिलर ऑफ़ स्टेट के स्तर तक के लोगों के बारे में थी, असली उच्च वर्ग के बारे में तो अफ़वाहें आधे रास्ते से कहीं खोकर उस तक नहीं पहुंचती थीं, इसलिए जब जूली और सेर्ज ने पेरिस के रिवाज के अनुसार अपने को "पति-पत्नी" कहा उसने इसे सच मान लिया। वेरा की मां ने तुरन्त ही अपने को संभाला और फटाफट बैठक में पहुंच गयी।

सेर्ज ने "कल रात परिचय होने पर बड़ी ख़ुशी हुई" आदि जैसे जुमले बोले और अपनी पत्नी की भतीजी के बारे में चर्चा की, रूसी न जानने का खेद प्रकट किया पत्नी की ओर से और इसीलिए उसके दुभाषिये के रूप में कार्य करने की बात कही।

"जी, मैं तो ईश्वर को धन्यवाद देती हूं," मार्या अलेक्सेयेव्ना ने कहा। "वेरा प्यानो बजाना सिखाने में कुशल है। मैं तो इसे अपना सौभाग्य मानूंगी कि वह आप जैसे ऊंचे परिवार में सिखाये। अलबत्ता, मेरी लाड़ली की तबीयत इस समय ठीक नहीं है।" उसने अपनी आवाज़ ऊंची कर दी ताकि वेरा सुन ले और यह समझ ले कि शांति का पैग़ाम उसे पहुंचाया जा रहा है। और ऐसा कहते-कहते वह अपने अतिथियों को आदरपूर्वक और विस्फारित नेत्रों से ताके जा

रही थी। "फिर भी वह आ तो सकती ही है और वैसे प्यानो बजाना जानती है, यह आपको दिखा सकती है। वे-रा, प्यारी वेरा, बाहर आ रही हो क्या तुम?"

क्यों नहीं। अजनबियों के सामने तो कलह होगी नहीं। वेरा ने दरवाज़ा खोला, एक नज़र सेर्ज पर डाली और रोष और लज्जा से दहक उठी।

अत्यन्त मूढ़ नयन भी उसकी प्रतिक्रिया को सहज देख सकते थे और फिर जूली की दृष्टि तो बहुत ही तेज़-चौकन्नी थी, मार्या अलेक्सेयेव्ना की तीखी नज़र से भी अधिक तीखी और भेदी। फ़्रांसीसी महिला तत्काल मतलब की बात पर उतर आयी।

उसने कहना शुरू किया: "प्यारी बिटिया, तुम किसी ऐसे को देखकर विस्मय और झिझक में डूब गयी हो, जिसने कल रात को हुए तुम्हारे अपमान को देखा और शायद उसमें भाग भी लिया। मेरे पति लापरवाह लम्पट हैं, लेकिन हैं बहुतों से अच्छे। इस तरह आ जाने को तुम उसे मेरी ख़ातिर माफ़ कर दोगी, लेकिन मैं नेक इरादे से आयी हूं। मेरी भतीजी की प्यानो-शिक्षा, सब बहाना है, लेकिन ऐसा, जिसे बनाये रखना ज़रूरी है। कोई संक्षिप्त-सी धुन बजाओ और फिर हम तुम्हारे कमरे में जाकर मतलब की बात करेंगे। मेरा अनुरोध है, मेरी बच्ची, जैसा मैं कहती हूं, वैसा करो।"

क्या यह वही जूली है जिस पर पीटर्सबर्ग के नौजवान लट्टू हैं? क्या यह वही जूली है जिसकी शरारतें एक से अधिक लम्पटों को शर्मिन्दा कर चुकी हैं? नहीं, हमारे सम्मुख उपस्थित शहज़ादी के कानों में अब तक एक भी भौंडा शब्द नहीं पड़ा।

वेरा ने कला-प्रदर्शन के लिए प्यानो बजाया। जूली उसके पास खड़ी रही और सेर्ज वेरा की मां से स्तोरेश्निकोव के साथ उनके संबंधों के बारे में तरह-तरह की जानकारी हासिल करने में लगा रहा। दो-तीन मिनट ही बीते कि जूली ने वेरा से रुकने के लिए कहा, उसकी कमर में हाथ डाला और बैठक में दो-एक चक्कर काटे और फिर दूसरे कमरे में ले गयी। सेर्ज ने बताया कि उसकी पत्नी वेरा के ज्ञान से सन्तुष्ट है और अब उसके दिलोदिमाग़, आदि के बारे में जानने की कोशिश कर रही है, और फिर बातचीत को स्तोरेश्निकोव की ओर मोड़ दिया। सब ठीक-ठाक चल रहा था,

अलबत्ता, मार्या अलेक्सेयेव्ना की भौंहें तन रहीं थीं और उसके मन में सन्देह बढ़ रहा था।

वेरा के कमरे में पहुंचते ही जूली ने कहा: "प्यारी बच्ची, तुम्हारी मां बड़ी दुष्ट स्त्री है। लेकिन, तुमसे कुछ भी कहने से पहले, यह जानना मेरे लिए ज़रूरी है कि तुम कल रात क्यों और कैसे ऑपेरा में गयी, मेहरबानी करके, बताओ। यद्यपि अपने पति से मैं सब कुछ सुन चुकी हूं, लेकिन तुम्हारे बताने से मुझे तुम्हारे चरित्र के बारे में कुछ गहराई से पता चल जायेगा। डरो नहीं मुझसे, मेरी बच्ची।" वेरा की कथा सुनने के बाद उसने कहा: "हां, इस तरह के चरित्रवाली से मैं खुलकर बात कर सकती हूं।" और फिर अत्यन्त चतुराई के साथ उसने गत रात जो शर्त्त लगी थी, उसके बारे में बताया। इस पर वेरा ने प्रस्तावित सैर का ज़िक्र किया।

"बताओ तो? वह तुम्हारी मां को झांसा देने के चक्कर में है अथवा वे दोनों ही तुम्हारे विरुद्ध एकजुट हैं?" कुछ उग्रता के साथ वेरा ने आश्वासन दिया कि उसकी मां इतनी कुटिल नहीं है। जूली बोली: "मैं अब समझ गयी हूं। तुम यहीं रहो। वहां बाहर तुम्हारी आवश्यकता नहीं होगी।" इतना कहकर वह बैठक में लौट आयी।

"सेर्ज, उसने बेटी और उसकी मां को आज शाम सैर के लिए दावत दी है। मां को कल रात के डिनर में हुई बात के बारे में बता दो।"

"आपकी बेटी मेरी पत्नी को ठीक जांचती है, बस अब फ़ीस के बारे में सहमति की आवश्यकता है—मुझे इसमें सन्देह नहीं कि हम यह कर लेंगे। हां, मैं अपनी वह बात तो पहले समाप्त कर लूं जो मैं हमारे परिचित के बारे में कह रहा था। आप तो उसकी बड़ी तारीफ़ कर रही हैं। क्या आपको मालूम है कि वह आपके परिवार से अपना क्या संबंध बताता है? पता है आपको कि कल रात वह हमें आपके बॉक्स में क्यों लाया था?"

मार्या अलेक्सेयेव्ना के नेत्रों में इस सवाल से कोई अधिक तात्कालिक जिज्ञासा उत्पन्न नहीं हुई, अलबत्ता उसकी आंखों ने यह कहा: "तो यह बात है!"

उसने कुछ अनमने होकर उत्तर दिया: "मैं इधर-उधर की गप में रुचि नहीं लेती और न ही इधर की उधर करती फिरती हूं, ध्यान भी नहीं देती गप पर!" उसके शब्दों में कुछ तीखापन था, अलबत्ता अतिथि के प्रति आदर-भाव में किसी प्रकार की कमी की झलक उनमें नहीं थी। "नौजवान लोग हर तरह की गप्पें हांकते हैं, उन पर ध्यान देने की कोई ज़रूरत ही नहीं होती।"

"अच्छा, श्रीमती जी, इसको क्या आप गप्पें कहेंगी?" और फिर वह डिनर के दौरान हुई बातचीत बताने लगा। मार्या अलेक्सेयेव्ना ने उसे बात पूरी करने का मौक़ा नहीं दिया, शर्त की बात सुनते ही तमक उठी और अपने अतिथियों की शान और औक़ात तो वह क्रोध में बिल्कुल भूल गयी।

"अच्छा तो यह है उसका मंसूबा! उचक्का कहीं का! नीच, निकम्मा पाजी! तो आज रात वह इस इरादे से हमें वहां ले जाने की सोच रहा था! शहर से हम बाहर होते कि वह मेरी जान लेकर कहीं धता बता देता, ताकि मेरी बेटी की अस्मत लूट सके! कितना कमीना निकला!.." और भी न जाने क्या-क्या वह इसी प्रकार का प्रलाप करती रही। फिर उसने अतिथियों का, अपनी जान और अपनी बेटी की इज़्ज़त बचाने के लिए, शुक्रिया अदा किया। "आप तो जानते ही हैं, मान की रक्षा कितनी बड़ी बात है। मुझे तो शुरू से ही दाल में कुछ काला नज़र आ रहा था। आप यों ही नहीं आये यहां पर, मुझे पता है, प्यानो-शिक्षा की बात तो बहाना थी, आपके आने का मक़सद भिन्न था, बस अनुमान मेरा ग़लत निकला। सचमुच मैं तो समझी कि आपकी नज़र में उसके लिए कोई दूसरी लड़की है, जिसके लिए आप उसे हमसे दूर करना चाहते हैं। मैंने आपके साथ सचमुच अन्याय किया है, क्या मुझे, बूढ़ी पापिन को आप क्षमा कर देंगे? आपने, सचमुच हमारे साथ भलाई की है, हम जन्म-जन्मांतर तक इसे भूलेंगे नहीं, सचमुच नहीं भूलेंगे..." वह कहती रही यह सब और गालियां बकती रही, कृतज्ञता प्रकट रही और पश्चाताप भी।

जूली इस सब लम्बी-चौड़ी तीखी फटकार सुनने को भला क्यों बैठती। जो कुछ कहा जा रहा था इसका सार तो आवाज़ और हावभाव से भली-भांति समझ चुकी थी। मार्या अलेक्सेयेव्ना अभी

अपने धाराप्रवाह भाषण में उत्तेजना का पुट बढ़ा ही रही थी कि जूली उठी और वेरा के कमरे में पहुंच गयी।

"सचमुच ही तुम्हारी मां इसमें शामिल नहीं थी, और अब बहुत नाराज़ है। उसकी तरह के लोगों को मैं बहुत अच्छी तरह जानती-समझती हूं। उनकी भावनायें ज़्यादा देर तक टिकती नहीं। भगवान ने उन्हें गढ़ा ही ऐसे है। शीघ्र ही वह तुम्हारे लिए कोई और अमीर दूल्हा ढूंढ़ने में जुट जायेगी। इसका अन्त क्या होगा; भगवान ही जाने, लेकिन एक बात ज़रूर है तुम्हें तो यह सब झेलना ही पड़ेगा। कुछ समय तक के लिए तो वह तुमसे कुछ नहीं कहेगी, लेकिन विश्वास करो मेरा, ऐसा अधिक देर नहीं चलेगा। अब तुम क्या करोगी? पीटर्सबर्ग में तुम्हारे कोई रिश्तेदार हैं?"

"जी नहीं।"

"दु:ख की बात है! क्या तुम्हारा कोई प्रेमी है?" वेरा समझ न पायी कि इसका उत्तर क्या दे, बस कौतूहल से टुकुर-टुकुर निहारती रह गयी। "माफ़ करना मुझे, मैं सब समझ गयी, लेकिन तुम्हारे लिए यही मुसीबत है कि तुम किसी के पास जा नहीं सकती। अब हम करें भी तो क्या? सुनो, मैं वह नहीं जो दिखायी पड़ रही हूं। मैं उसकी याने सेर्ज की पत्नी नहीं, मैं उसकी रखैल हूं। पूरा पीटर्सबर्ग मुझे विश्व की सर्वाधिक भ्रष्ट स्त्री के रूप में जानता है। लेकिन तो भी मैं सत्यवादी हूं। तुम मेरे पास आओगी, तो तुम्हारी प्रतिष्ठा मिट्टी में मिल जायेगी। मैं यहां एक बार आ गयी यही बहुत जोखिम का काम हुआ, दूसरी बार आयी तो शायद तुम कहीं की भी न रहोगी। तो भी हमें फिर से मिलना तो होगा ही एक नहीं, बल्कि अनेक बार। हां, यह तभी संभव होगा, जब तुम मुझ पर विश्वास करोगी। करती हो विश्वास? तो कल तुम्हें कब फ़ुर्सत होगी?"

"बारह बजे के लगभग।" जूली के लिए यह बहुत सवेरे था, लेकिन कोई बात नहीं, वह जगाने के लिए कह देगी और वेरा से गोस्तीनी द्वोर की उस दीर्घा में मिलेगी, जो नेव्स्की प्रोस्पेक्ट के विपरीत है और सबसे छोटी है, जहां एक दूसरे को ढूंढ़ना बहुत सहज होगा और सबसे बड़ी बात तो यह कि वहां पर जूली को कोई पहचाननेवाला नहीं मिलेगा।

"अरे हां, मुझे एक और बात सूझी: काग़ज़ है तुम्हारे पास? मैं उस पाजी के लिए कुछ लिख दूं, जिसे पढ़कर वह अपनी औक़ात समझ लेगा।" जूली ने लिखा: "श्रीमान स्तोरेश्निकोव, आप बुरी तरह मुसीबत

में फंस चुके हैं और अगर आप इस उलझन भरी मुसीबत से निकलना चाहते हैं, तो सात बजे मेरे यहां हाज़िर हो। जूली।" — "और अब ख़ुदा हाफ़िज़!"

उसने अपना हाथ बढ़ा दिया, लेकिन वेरा लपककर उससे लिपट गयी, कंधे पर आंसुओं की बूंदें लुढ़कायीं और फिर गले लग गयी। जूली उससे भी अधिक गद्‌गद हो गयी। आंसुओं के मामले में वह वेरा के संयम को लांघ गयी। वह कुछ भलाई करने के उल्लासमय गर्व से विभोर हो उठी। भावातिरेक में वह जाने क्या-क्या कहती रही, आंसू झरते रहे, हार्दिक आलिंगन में आबद्ध अन्तत: उसने कहा:

"प्यारी, प्यारी गुड़िया बेटी, ईश्वर करे तुम्हें कभी यह न महसूस करना पड़े, जैसा कि अभी मैं महसूस कर रही हूं। न जाने कितने वर्षों में पहली बार मेरे होंठ निष्कलंक होंठों का स्पर्श कर रहे हैं! प्रेम के बिना एक भी चुम्बन मत देना किसी को, भले ही तुम्हें मर ही जाना क्यों न पड़े!"

5

युवा मिख़ाईल स्तोरेश्निकोव की योजना, मार्या अलेक्सेयेव्ना के अनुमान से कहीं कम घातक थी। और फिर यह भी तो है कि उसने तो अपने घिनौने ढंग से क्या कुछ होनेवाला था, इस बारे में बढ़ा-चढ़ाकर ही सोचा। अलबत्ता, उसने योजना का सार समझ लिया था। स्तोरेश्निकोव अपने दोनों मेहमानों को बाद में उस सांझ को उसी रेस्त्रां में खाने के लिए ऐसे समय पर ले जानेवाला था, जब उन्हें निश्चित रूप से ठंड और भूख दोनों ही लग रही होंगी और एक प्याला चाय पीकर वे गरमाहट लाना चाहते होंगे। तभी वह बुढ़िया के प्याले में कुछ चुपके से अफ़ीम मिला देगा और वेरा अपनी मां को बेहोश देखकर सकते में आ जायेंगी और तब वह वेरा को उस प्रायवेट डाइनिंग रूम में ले जायेगा, जहां उसके मित्र होंगे और बस! वह शर्त जीत जायेगा। इसके बाद चाहे जो हो। असमंजस में वेरा अजनबियों की मण्डली में शामिल होने पर सहमत हो सकती है और अगर वह दामन झटककर वहां से चली भी आयी तो यही समझकर अनदेखा कर दिया

जायेगा कि रोमांचक ज़िन्दगी के नौसिखिये से और उम्मीद की भी क्या जा सकती है, पहली बार तो इस प्रकार की हरकत स्वभाविक है न। मार्या अलेक्सेयेव्ना से तो वह बाद में किसी दिन पैसे-वैसे देकर सुलह कर सकता है, तब जब कि उसके हाथ से सब कुछ निकल चुका होगा और वह कुछ भी कर पाने में असमर्थ हो चुकी होगी।

अब वह क्या करे? उसने अपने दोस्तों के सामने शेख़ी बघारने के लिए अपने को कोसा। वेरा के अचानक और कट्टर प्रतिरोध से वह सहसा ठगा-सा रह गया—कैसी शर्मिंदगी का सामना करना पड़ेगा उसे। लेकिन जूली की चिट्ठी उसके खुले घाव के लिए मरहम बन गयी। अभेद्य अंधकार में आशा की किरण टिमटिमायी, दलदल में धंसते व्यक्ति के पैरों के नीचे मानो चट्टान आ गयी हो। अहा, वह अवश्य सहायता करेगी मेरी, महिलाओं में सर्वाधिक बुद्धिसम्पन्न, वह कोई भी युक्ति सोच सकती है, महिलाओं में सर्वाधिक उदात्त! निश्चित समय यानी सात बजे से दस मिनट पहले ही वह जूली के द्वार पर पहुंच गया। "मेम साहबा आपकी प्रतीक्षा कर रही हैं। कहा था, जैसे ही आप आयें, तत्काल भीतर ले आऊं।"

बैठने का ढंग कितना आभिजात्यपूर्ण, भव्य, लेकिन नेत्रों में निर्ममता! जूली ने उसके अभिवादन का उत्तर बस सिर हल्का-सा हिलाकर ही दिया। "आपको देखकर बड़ी प्रसन्नता हुई। बैठिये न।" उसके मुखड़े की एक भी नस से किसी क़िस्म की कोई हरकत नहीं हुई। स्तोरेश्निकोव को लगा कि उसे तीखी फटकार पड़नेवाली है—"कोई बात नहीं फटकारो, बस, मुझे बचा लो।"

जूली ने धीरे-धीरे, निष्ठुर लहजे में कहना शुरू किया: "श्रीमान स्तोरेश्नीक, आपने उस विषय के बारे में मेरी राय जान ली है, जिस बारे में आज मिले हैं—समझती हूं, अब मुझे कुछ भी दोहराने की ज़रूरत नहीं। मैं उस युवती से मिल आयी हूं, जिसकी बाबत हम लोगों ने कल रात बातचीत की थी। और आज सुबह मुझे आपके वहां जाने के बारे में जानकारी मिल चुकी है। इसलिए, मुझे सब कुछ मालूम पड़ गया है और मुझे ख़ुशी है कि मुझे आपसे खोद-खोदकर पूछने का कष्ट नहीं उठाना पड़ेगा। मैं आपकी दुर्गति को बिल्कुल वैसे ही समझती हूं जैसे कि आप अनुभव कर रहे हैं। (अपराधी ने सोचा: काश वह मुझे गालियां दे!) मैं समझती हूं कि आप इस झंझट से बिना बाहरी मदद के नहीं निकल सकते और न ही आप मेरे सिवा किसी और का मुंह इसमें सफलता के लिए ताक

सकते हैं। अलबत्ता, अगर आप कुछ कहना चाहें, तो मैं सुनने के लिए तैयार हूं। (और थोड़ी देर रुककर उसने कहा,) इसलिए आप मानेंगे ही कि कोई और आपकी मदद करने की स्थिति में है ही नहीं। इसलिए, मेहरबानी करके सुनिये कि मैं आपके लिए क्या कर सकती हूं और क्या करूं। अगर मेरी मदद आपके कुछ काम आ सके तो मैं उन शर्तों को बयान करने के लिए तैयार हूं, जिन पर मैं यह मदद करूंगी।"

दफ़्तरी भाषा के ढंग से लम्बे और अरुचिकर रूप में बात जारी रखते हुए उसने कहा कि वह जान को इस तरह का पत्र भेजेगी, जिसमें वह कहेगी कि उसने कल रात की अपनी खीझ पर दुबारा ग़ौर किया है और उनकी डिनर-पार्टी में बड़ी ख़ुशी से शामिल होगी, लेकिन व्यस्तता के कारण आना मुश्किल है; इसलिए क्या जान स्तोरेश्निकोव को इस पर राज़ी कर लेंगे कि वह अपनी शर्तवाली दावत किसी और दिन के लिए मुल्तवी कर दें। और डिनर की तारीख़ वह और जान आपस में तय करके बता दें। उसने पत्र पढ़कर सुनाया तो स्तोरेश्निकोव को लगा कि वह शर्त जीत सकता है, लेकिन अपनी इस जीत को वह मुल्तवी नहीं करना चाहता था। ठीक है यह पत्र? क्यों नहीं। फिर जूली ने दफ़्तरी लहजे में बोलना जारी रखा। जूली वह पत्र केवल दो शर्तों पर भेजेगी जिन्हें वह "अपनी इच्छानुसार मंजूर या नामंजूर कर सकते हैं। अगर आप राज़ी हैं, तो मैं पत्र जान को भिजवा दूंगी, और अगर कोई आपत्ति हो आपको तो इसे जला दूंगी" आदि धाराप्रवाह बोलती गयी, जिससे उसके एहसान में दबा वह व्यक्ति और भी व्याकुल हो गया। अंत में जूली ने अपनी शर्तें बतायीं। वे दो थीं: पहली, "इस युवती का पीछा करने का हर इरादा छोड़ दीजिये, और दूसरी, उसका नाम फिर कभी भूलकर भी मत होंठों पर लाना।" स्तोरेश्निकोव अचम्भे में पड़ गया। "बस इतनी-सी बात है? और मैं सोच बैठा कि वह मुझसे न जाने क्या मांगेंगी, मगर मैं तो हर शर्त पूरी करने को तैयार था।" वह राज़ी हो गया, मन ही मन उसे प्रसन्नता हुई कि सस्ते छूट गया। जूली अभी भी पहले जैसी ही निष्ठुर बनी उसकी ओर तीखी नज़रों से ताक रही थी। "पहली शर्त तो उसके (अर्थात् युवती के) भले के लिए है और दूसरी भी है, लेकिन दूसरी आपकी भलाई के लिए अधिक है। मैं डिनर-पार्टी को एक हफ़्ते के लिए टलवा दूंगी और फिर और एक सप्ताह के लिए। तब तक सब लोग भूल भी जायेंगे इस बारे में बशर्ते कि आप यह अच्छी तरह समझ लें कि लोग इसे तब तक नहीं भूलेंगे, जब तक कि आप उस

युवती का नाम अपनी ज़बान पर आने देंगे ..." वह इसी रौ में बोलती गयी, हर संभावना का उल्लेख और उसके परिणाम का लेखा-जोखा करती गयी और इस सबमें जान को उचित समय पर यह पत्र मिल जाने की बात भी शामिल थी। "मैंने पता लगा लिया है, वह बेर्था के यहां भोजन करनेवाला हैं। आपके यहां वह भोजनोपरान्त सिगार पीने के बाद ही आयेगा।" और वह इसी रौ में आगे कुछ इस प्रकार बोली: "तो ठीक है, मुझे ख़ुशी है कि पत्र भेजा जा रहा है। ज़रा मेहरबानी करके इसे फिर पढ़ लें — मैं न तो यह मानती हूं और न ही चाहती हूं कि आप मुझ पर विश्वास करें। पढ़ लिया? लीजिये, आप ख़ुद ही लिफ़ाफ़े में बन्द कर दें इसे। मैं घंटी बजाकर नौकरानी को बुलाती हूं। पोलीना, कृपा करके इस पत्र को दे आओ ..."—"पोलीना, याद रखना, श्रीमान स्तोरेश्नीक आज मुझसे मिलने नहीं आये, समझ में आ गयी न बात?" और लगभग एक घंटे तक, मुसीबत से अपना उद्धार करवाने की यह प्रक्रिया चलती रही। अन्ततः पत्र भिजवा दिया गया और पिंड छुड़ा लेनेवाले ने जब राहत की सांस ली, पर वह पसीने से सराबोर हो रहा था, जूली ने फिर कहना शुरू किया:

"कोई पन्द्रह मिनट में आपको फटाक से अपने घर पहुंचना पड़ेगा, ताकि जान वहां पहुंचे, तो आप मौजूद हों। अभी आपके पास पन्द्रह मिनट हैं, और इसका लाभ उठाकर मैं आपको सलाह देना चाहती हूं—आप इसे मानें या न मानें आपकी मर्ज़ी, लेकिन मेरी बात पर ख़ूब ध्यानपूर्वक सोच-विचार कीजियेगा। किसी युवती का नाम उछालने के सिलसिले में किसी भी ईमानदार व्यक्ति की उसके प्रति कुछ ज़िम्मेदारी होती है, मैं उसका ज़िक्र नहीं करूंगी; मैं अपनी सोसायटी के नौजवानों को अच्छी तरह जानती हूं, इस बारे में उनसे कोई अनुरोध करने का कोई फ़ायदा नहीं। तो भी मेरा विश्वास है कि अगर आप उस युवती से विवाह कर लें तो आपके लिए अच्छा ही होगा। स्पष्टवक्ता महिला के नाते, मैं अपनी बात और स्पष्ट कर दूं। मैं जो कई तर्क दूंगी, उनमें से आपको कुछ अटपटे लग सकते हैं; लेकिन आपके मना करने भर की देर है, मैं तत्काल चुप हो जाऊंगी। आप जैसे दब्बू स्वभाववाले व्यक्ति को कोई भी कुटिल स्त्री जब चाहे उंगलियों पर नचा सकती है। वेरा बेहतर और अधिक कुलीन सांचे में ढली है; वह आपके साथ कोई ग़लत बात नहीं करेगी। आपकी तुलना में साधारण परिवार में पैदा होने और ग़रीबी में पालन-पोषण के बावजूद, यदि आप उससे विवाह कर लेंगे तो यह आपकी उन्नति में सहायक सिद्ध

होगा। आपकी दौलत और अपनी सुन्दरता, अपनी बुद्धि और चारित्रिक दृढ़ता के बल पर उच्च समाज में प्रवेश करते ही वह जाने कहां से कहां, बहुत ऊंचे पहुंच जायेगी—और निश्चय ही यह किसी भी पति के लिए गौरव की बात होगी। इस प्रकार की पत्नी से विवाह करने के फलस्वरूप प्राप्त लाभों को आप अथवा आप जैसे लोगों को ऐसी युवती के सहारे की—और अगर दो टूक शब्दों में कहूं तो—उसके पथप्रदर्शन की विशेष आवश्यकता है। मैंने अपने हर शब्द को तोल-तोलकर कहा है और प्रत्येक बात मैंने उस प्रशंसनीय तरुणी को देखने-समझने के बाद कही है। मैं यह आग्रह नहीं करती कि आप मेरी प्रत्येक बात ब्रह्म वाक्य समझकर मान लें; अलबत्ता मैं यही कहूंगी कि मेरी बात पर सावधानीपूर्ण विचार करें। मुझे सन्देह है कि वह आपकी पत्नी बनने पर राज़ी होगी, लेकिन मान लें अगर वह हो भी गयी तो आपको इससे बहुत लाभ होगा। हां, अब मैं आपको अधिक देर तक रोके नहीं रखूंगी, आप जल्दी से अपने घर पहुंच जाइये।"

6

यह कहने की आवश्यकता नहीं कि मार्या अलेक्सेयेव्ना को जैसे ही यह पता चला कि वह कूढ़मग़ज़ मिख़ाईल उसी को चकमा देनेवाला था, उतना बेवक़ूफ़ नहीं था, जितना वह समझ बैठी थी, वेरा को उसका निमंत्रण ठुकराने के लिए खरी-खोटी कहना बन्द कर दिया। वेरा को उसने बिल्कुल नहीं छेड़ा और दूसरे दिन वेरा बिना किसी रुकावट के जूली से मिलने के लिए घर से निकल पड़ी।

जूली बोली: "कड़ाके की ठंड है, और मैं ठण्ड बरदाश्त नहीं कर सकती हूं। हमें कहीं और चलना चाहिये। लेकिन कहां? अच्छा ठहरो यहां पर, मैं ज़रा उस दुकान में झांककर आती हूं।" उसने वेरा के लिए मोटा नक़ाब ख़रीदा। "इसे पहन लो। अब मेरे घर आने में तुम्हें कोई ख़तरा नहीं है। जब तक हम अकेले न हों, तब तक बस नक़ाब मत उघाड़ना। मेरी नौकरानी पोलीना ठीक-ठाक है, लेकिन मैं नहीं चाहती कि वह भी तुम्हें देखे। मेरी लाड़ली, मैं तुम्हारे बारे में बहुत सतर्क रहना चाहती हूं।" निस्संदेह, वह स्वयं अपनी नौकरानी की टोपी लगाये थी और उसका

लबादा पहने हुए थी। और काफ़ी मोटा नक़ाब भी डाले हुए थी। बस गरमाहट आते ही उसने वेरा की ख़बरें जानना चाहीं। फिर उसने स्तोरेश्निकोव से अपनी मुलाक़ात के बारे में बताया।

"अब वह शादी का प्रस्ताव ज़रूर करेगा। उसकी तरह के लोग, जैसे ही उनका प्रस्ताव ठुकरा दिया जाता है, तत्काल उन्मादपूर्ण प्रेम में पड़ जाते हैं। क्या तुम जानती हो मेरी प्यारी गुड़िया, तुमने कितनी प्रवीण नख़रेवाली की तरह उसके साथ व्यवहार किया? नख़रे की कला—मेरा मतलब सच्ची कला; उसकी परछाईं अथवा फूहड़ नक़ल नहीं, ये किसी भी अच्छी चीज़ की नक़ल की तरह घिनौनी होती हैं—को पुरुषों के साथ हम औरतों को अपने व्यवहार में बड़ी चतुराई और कौशल से प्रयुक्त करना होता है। इसी कारण पूर्ण रूप से भोली युवती चतुराई और कौशल के ही आधार अत्यन्त निपुण नख़रेबाज़ को अनजाने ही मात दे जाती है। मेरे तर्कों का उस पर असर पड़ सकता है, लेकिन अन्ततः तो निर्णय तुम्हें ही लेना है। बहरहाल, वह विवाह-प्रस्ताव रखेगा और मैं यही सलाह दूंगी कि तुम उसे मान लेना।"

"कल तो आपने यह कहा था कि बिना प्रेम के चुम्बन देने से तो मर जाना बेहतर होता है?"

"अरे मेरी मुनिया, वह तो तात्कालिक उत्तेजना में कही गयी बात थी—उस क्षण के लिए वह बिल्कुल सही और सच्ची थी, लेकिन आम ज़िन्दगी के कारोबार के लिए नहीं।"

"जी नहीं, बिल्कुल नहीं! वह घृणित है, मुझे तो यह बात तक वीभत्स लगती है! मैं इतना नीचे नहीं गिरूंगी, चाहे मेरा अंग-प्रत्यंग ही क्यों न काट डाला जाय, मैं खिड़की से कूदकर जान दे दूंगी, भीख मांगना मुझे मंजूर है... लेकिन मैं उस कमीने से शादी का प्रस्ताव हरगिज़ नहीं स्वीकार करूंगी, मैं इससे पहले मरना बेहतर मानूंगी।"

जूली ने ऐसा कर लेने के फ़ायदे बताये: तुम्हारी मां फिर तुम्हें सता नहीं पायेगी; अभी तो तुम्हें मां के द्वारा बेच दिये जाने का जोखिम उठाना पड़ रहा है; और स्तोरेश्निकोव हृदयहीन नहीं है, अधिक हाज़िरजवाब नहीं है। तीव्र बुद्धि और दृढ़ चरित्रवाली किसी भी स्त्री के लिए इसी प्रकार का सहानुभूतिपूर्ण और मंदबुद्धि व्यक्ति सर्वोत्तम हो सकता है—तुम अपने घर में पूर्ण रूप से स्वामिनी होगी। उसने अभिनेत्रियों और नर्त्तकियों के जीवन के लुभावने विवरण विस्तारपूर्वक बताये, जो अपनी स्वतंत्रता बनाये रखती

हैं और प्रेम में अपना पलड़ा भारी रखती हैं। "इस संसार में कोई स्त्री इससे अधिक और किस बात की आशा कर सकती है कि समाज प्रेम में उसके प्रभुत्व और स्वच्छन्द अधिकारों को औपचारिक मान्यता प्रदान करे—जिस मर्यादा का उपभोग ऐसी पत्नी करती है, जिसका पति प्रशंसक के रूप में उसे अपने रंगमंच की रानी मानता है।" जूली ने बहुत कुछ कहा और वेरा ने भी। दोनों उत्तेजित भी हो गयीं, और वेरा तो करुणा-स्निग्ध हो उठी:

"आप कहती हैं कि मैं बहुत आदर्शवादी हूं; आप यह जानना चाहती हैं, आख़िर जीवन से मैं अपेक्षा क्या करती हूं। न तो मुझे अधिकार चाहिये, न पराधीनता। न मैं छल पसन्द करूंगी और न ढोंग करूंगी। मैं नहीं चाहती कि मैं दूसरों की राय पर चलने को विवश होऊं, जो दूसरे कहें, वही करूं। नहीं, मुझे यह करने की ज़रूरत नहीं। न तो धन-दौलत में पली हूं और न ही मुझे इसकी ज़रूरत महसूस होती है। तो फिर मैं क्यों इसके पीछे भागूं, क्यों इसीलिए कि दूसरे यह सोचते हैं कि सभी को इसको पाने की इच्छा होती है और इसीलिए यह मेरी भी इच्छा बन जाय? मैंने उच्च समाज में कभी क़दम नहीं रखा और न कभी यह महसूस किया कि वैभवशाली बन जाने का अर्थ क्या होता है और न ही ऐसा बनने की कोई लालसा ही मुझमें है—क्योंकि लोग ऐसा चाहते हैं, क्या इसीलिए मैं चमकदमक भरे शिखर तक पहुंचने के लिए अपना बलिदान करूं? जब तक मुझे अपने लिए अथवा समझिये अपनी किसी छोटी-से छोटी सनक के लिए—किसी चीज़ की किसी निश्चित आवश्यकता के लिए दरकार नहीं होगी, तब तक उसके लिए मैं कोई बलिदान नहीं करूंगी। मैं अपनी स्वतंत्रता चाहती हूं, अपना जीवन अपनी मर्ज़ी के मुताबिक़ जीना चाहती हूं। और जो मुझे सचमुच चाहिये, उसके लिए मैं हर तरह से तैयार हूं और जिसकी मुझे आवश्यकता नहीं वह मुझे नहीं चाहिये, और न मैं वह लूंगी। मुझे नहीं मालूम कि मुझे किस-किस चीज़ की आवश्यकता पड़ेगी। आप कहती हैं मैं अभी जवान हूं, अनुभव की कमी है मुझमें और समय मुझे बदल देगा—तो क्या हुआ, बदल गयी, तो बदल गयी; लेकिन फ़िलहाल मुझे यह सब नहीं चाहिये, कुछ भी नहीं, ऐसा कुछ भी नहीं, जिसका चुनाव मैं ख़ुद न करूं! आप पूछती हैं, मुझे क्या चाहिये अभी? ठीक है, ठीक है, अभी इसका उत्तर मुझे नहीं मालूम। क्या मैं किसी पुरुष से प्रेम करना चाहती हूं? नहीं मालूम, कल सुबह जब मैं सोकर उठी तो मुझे

यह पता भी नहीं था कि मैं आप से प्रेम करना चाहूंगी, मिलने से घंटों पहले तक भी मुझे यह पता नहीं था और सोचा भी नहीं था कि जब मिलने आऊंगी तो कैसा महसूस होगा। इस समय मुझे यह नहीं मालूम कि अगर कभी मैं प्रेम में पड़ी भी, तो मुझे कैसा लगेगा, बस मुझे यह मालूम है कि मैं किसी पुरुष के सामने झुकना नहीं चाहती; मैं स्वतंत्र रहना चाहती हूं, किसी भी पुरुष के प्रति किसी भी ज़िम्मेदारी से मुक्त, ताकि कोई भी पुरुष मुझसे यह कहने की हिम्मत न कर सके कि मैं उसकी आज्ञानुसार काम करूं। मैं अपनी मर्ज़ी से, केवल अपनी मर्ज़ी से काम करना चाहती हूं और यह भी चाहती हूं कि मेरा साथी भी इसी प्रकार अपनी मर्ज़ी से काम करे। मैं किसी दूसरे की स्वतंत्रता का अतिक्रमण नहीं करना चाहती और न ही यह चाहती हूं कि कोई पुरुष मेरी स्वतंत्रता का अतिक्रमण करे।"

जूली विचारों में डूबी-सी यह सब सुनती रही, तमतमा उठी फिर—सामने बैठी उस आवेशपूर्ण युवती की सहायता क्या वह ज्वाला बने बिना कर सकती है? वह विह्वल होकर खड़ी हो गयी और कंपकंपाते स्वर में बरस पड़ी:

"ठीक कहती हो, मेरी बच्ची, बिल्कुल ही तो ठीक! अगर मैं तुम्हारी जगह होती और जैसी बिगड़ी हुई हूं, वैसी न होती तो मैं भी यही महसूस करती। और लोग जिसे पतिता की ज़िन्दगी कहते हैं, उसने मुझे नहीं भ्रष्ट किया और न ही मैंने जो यातना भोगी है अथवा दुःखकातर होकर मैंने जो आंसू बहाये अथवा मेरे शरीर को जो अपवित्रता झेलनी पड़ी उसने भी नहीं भ्रष्ट किया। मैं तो अपनी काहिली और ऐश्वर्य-भोग की लालसा से ऐसी भ्रष्ट हुई। मैं अपने बल-बूते नहीं रह सकती, मुझे दूसरों की दरकार है और इसीलिए मुझे उनकी ज़रूरतों की— अपनी नहीं—पूर्ति करनी पड़ती है—यही तो है भ्रष्टाचरण। भूल जाओ जो मैंने अभी तुमसे पहले कहा, मेरी लाड़ली। मैंने तुम्हें भी भ्रष्ट कर दिया होता—कितना यातनापूर्ण विचार है! मैं किसी भी पुनीत वस्तु को स्पर्श करूं और वह अपवित्र हो जाय; जल्दी जाओ यहां से मेरी बच्ची, मैं घृणास्पद जीव हूं—भूल कर भी उच्च समाज के बारे में न सोचना अब! इसमें मुझसे भी ज़्यादा घिनौने जीव भरे पड़े हैं; आलस्य से कुख्याति उत्पन्न होती है। जाओ, मेरी बच्ची, भाग जाओ।"

6—1127

7

स्तोरेश्निकोव पिछले कुछ समय बहुधा यही सोचता रहा: "क्यों मैं उस युवती से शादी न करूं?" वह ऐसी लाक्षणिक स्थिति में पहुंच चुका था, जिसका सामना न केवल किसी ढुलमुल को ही करना पड़ता है, बल्कि पूर्ण रूप से उन्मुक्त भावनावाले अथवा पूरे के पूरे राष्ट्रों को अपने इतिहास के दौरान करना पड़ता है—ह्यूम और गिबन, रांके और टियेर्री * ने इस प्रकार की घटनाओं के बारे में पन्ने के पन्ने रंग डाले हैं, लोग एक ही दिशा में केवल इसलिए धक्का-मुक्की करते हैं, क्योंकि उन्हें ऐसा सुझाव देनेवाली आवाज़ सुनने को ही नहीं मिलती: "अरे किसी दूसरे रास्ते जाने की कोशिश क्यों नहीं करते तुम?" यह इशारा समझते ही पूरी की पूरी जनता पलट जाती है और विपरीत दिशा की ओर चल पड़ती है। स्तोरेश्निकोव ने धनिक युवकों को निर्धन परन्तु सुन्दर युवतियों को रखैल के रूप में रखने के बारे में सुना था और वेरा को उसी रूप में रखने के लिए उसने यथोचित किया भी था—उसे यही शब्द, रखैल ही—वेरा के सन्दर्भ में याद आया था और जैसे ही उसे "पत्नी" नामक शब्द सुनायी पड़ा, उसे कुछ सोचने का सामान मिल गया, अब तक केवल रखैलों की ही सोचता रहा था।

यही तो आम लक्षण है, युवक स्तोरेश्निकोव भी मानवजाति के उन नब्बे प्रतिशत व्यक्तियों में से था, जो यही सोचते हैं। तथापि, इतिहासकार और मनोवैज्ञानिक प्रत्येक घटना को अपरिहार्य स्थानिक, लौकिक, समयगत, जनजातीय अथवा व्यक्तिगत परिस्थितियों के माध्यम से "विशिष्टता" प्रदान कर देते हैं (यह शब्द उन्हीं का है) और इन परिस्थितियों को अत्यन्त महत्त्वपूर्ण माना जाता है; दूसरे शब्दों में, यद्यपि सभी चम्मच तो सिर्फ़ चम्मच ही होते हैं, तथापि हर व्यक्ति अपना शोरबा उसी विशेष चम्मच से पीता है, जो उसके हाथ में उस क्षण-विशेष में होता है, और वही चम्मच हमारा विशेष ध्यान आकृष्ट करने का अधिकारी होता है। और ऐसा हो भी क्यों न?

जूली ने ही तो असल बात कही थी (मानो उसने रूसी उपन्यास पढ़े हुए

---

* डेविड ह्यूम (1711—1766)—अंग्रेज़ दार्शनिक और इतिहासकार।
एडवार्ड गिबन (1737—1794)—अंग्रेज़ इतिहासकार।
लियोपोल्ड रांके (1795—1886)—जर्मन इतिहासकार और समालोचक।
आगस्टीन टियेर्री (1795—1856)—फ़्रांसीसी इतिहासकार।—सं०

हों, जिनमें इसी विषय का राग हर दम अलापा जाता है), अर्थात् प्रतिरोध से ही उत्कट इच्छा उत्पन्न होती है। स्तोरेश्निकोव के मन में किसी न किसी दिन वेरा को "पा लेने" का विचार घर कर गया था। जूली की तरह मैं भी सच्चाई को बिना किसी लागलपेट के आम शब्दों में ही कहना बेहतर समझता हूं, जिनमें कि हम सब हमेशा सोचते और बोलते हैं। इस युवक ने कई सप्ताह अपने स्नेह के पात्र के सम्बन्ध में, विभिन्न दृष्टिकोणों से, काल्पनिक चित्र बनाने में लगाये थे और वह अपने सपनों को सच बनाने के लिए आतुर था। यदि युवती ने रखैल के रूप में सहयोग न दिया, वास्तव में दिया भी नहीं, तो वह उसकी पत्नी बनकर तो निश्चय ही सहयोग कर सकती है। कुछ भी कहो, मुख्य बात है उसका सहयोग अथवा उस पर अधिकार प्राप्त कर लेने की बात। कितना तुच्छ विचार है! कोई भी किसी इंसान पर "अधिकार" प्राप्त करना चाहे! "अधिकार" शब्द तो ड्रेसिंग गाउन अथवा चप्पलों की जोड़ी के संदर्भ में इस्तेमाल करते हैं। बकवास: सच तो यह है कि हम पुरुषों में से प्रत्येक किसी न किसी युवती को अधिकार में रखता ही है, तुम बहनों में से ही किसी को। यह भी बकवास ही है, वास्तव में तुम हमारी बहनें कहां से हुईं? तुम हमारी नौकरानियां हो। तुममें से कुछ, तुममें से बहुत अधिक हम पर शासन करती हो — भले ही, अनेक ऐसे नौकर भी होते हैं, जो मालिक को नकेल बांध कर उसे हांकते हैं।"

स्तोरेश्निकोव की कल्पना को ऑपेरा की रात के बाद उत्तेजना के पंख ही लग गये थे। अपने सपनों की रखैल का अपने मित्रों से परिचय कराने पर उसने खुद देखा कि रखैल उसकी कल्पनाओं से कहीं अधिक सुन्दर थी। मानी हुई बात है कि या तो सौन्दर्य हो, या बुद्धिमता, या कोई अन्य गुण तभी पूर्ण रूप से सराहा जाता है, जब उसके बारे में आम राय बन जाय। हर एक तो सुन्दर मुखड़े को सुन्दर कह सकता है, लेकिन कितना सुन्दर यह उसका प्रमाण पत्र प्रदान किये जाने से पहले कौन कहेगा? वेरा की ओर दीर्घाओं अथवा पिछली पांतों में कहीं बैठ होने पर न तो कोई ध्यान देता और न ही इसकी आशा ही थी; लेकिन जैसे ही उसने दूसरी ड्रेस सर्कल में पांव रखा अनेकों दूरबीनें उसकी ओर उठ गयीं और जब वह वेरा को बाहर छोड़कर लॉबी में वापस आया तो सराहना के कितने समवेत स्वर उसे सुनायी दिये! और सेर्ज? अत्यन्त परिष्कृत रुचिवाला व्यक्ति? और जूली? जब इस प्रकार का सुख मिलता है, तो उसके अधिकारी को कौन क्या कहता है, इसकी परवाह क्या?

यह सुनकर कि "मुझे बहुत सन्देह है कि वह आपका शादी का प्रस्ताव स्वीकार करेगी भी", उसके आत्म गौरव और वासना को चोट लगी और साथ ही अन्य प्रकार से भी दुख पहुंचा। उसका प्रस्ताव स्वीकार नहीं करेगी, उसके रुतबे और उसकी धन-दौलत को देखते हुए भी? जी, जनाबा, आपको खुद नहीं मालूम कि आप क्या फ़रमा रही हैं, फ़्रांसीसी मेमसाब। ज़रूर स्वीकार करेगी मेरा प्रस्ताव, आप देखती रहिये, आगे-आगे होता क्या है?

इसी तरह एक और भी कारण तो मौजूद है बीच में—उसकी मां, जो इस तरह की घटना में उच्च समाज के जनमत का काम करेगी—वह निश्चय ही उसकी जोड़ी का विरोध करेगी। उसे अपनी मां से बहुत भय लगता था और इसलिए स्वाभाविक ही था कि वह मां पर अपनी निर्भरता को बिल्कुल पसन्द नहीं करता था। ढुलमुल लोग ही इस सूत्र की ओर सर्वाधिक आकृष्ट रहते हैं: "मुझे डर किस बात का, खास तौर से अपने ठोस चरित्र को देखते हुए।"

हमें इस विचार का उल्लेख करने की आवश्यकता नहीं जो उसने उच्च समाज के जीवन में आगे बढ़ने के लिए अपनी भावी पत्नी का उपयोग करने के लिए किया।

और सबसे बड़ी बात तो यह थी कि वेरा से पिछली किसी पहचान के बल-बूते तो वह मिलने जा नहीं सकता था, ताहम वह उसे देख पाने के लिए मरा जा रहा था।

संक्षेप में यही कि उसके मन में प्रतिदिन यह संकल्प पक्का होता जा रहा था कि वह वेरा से विवाह करे। एक सप्ताह बाद, रविवार के दिन जब मार्या अलेक्सेयेव्ना प्रार्थना के बाद घर लौटी और इसी उधेड़बुन में थी कि स्तोरेश्निकोव को किस तरह जाल में फंसाये कि वह अपने आप ही वहां आ पहुंचा और विवाह का प्रस्ताव रख दिया। वेरा अपने कमरे से बाहर नहीं आयी इसलिए उसे अपना विवाह-प्रस्ताव उसकी मां के समक्ष ही रखना पड़ा। सहज ही मार्या अलेक्सेयेव्ना ने कहा कि अपनी ओर से वह इसे बड़ा सम्मान मानती है, लेकिन वह स्नेहमयी मां है, इसलिए उसके लिए आवश्यक है कि अपनी बेटी की राय जाने और इसलिए वह यही चाहती है कि उत्तर पाने के लिए स्तोरेश्निकोव कल प्रातः पधारे।

घटनाक्रम में सहसा आ गये इस मोड़ से विस्मित मार्या अलेक्सेयेव्ना ने अपने पति से कुछ शान से कहा: "देखा तुमने मेरी बेटी वेरा को! कैसे

उसने उस नौजवान को अपने चंगुल में फंसा लिया! और मैं तो अपनी उधेड़बुन में ही फंसी रही, उसने तो मुझे भी शह दे दी। मैं तो यही सोचती-विचारती रही किस लालच से, किस तरकीब से उस नौजवान को फिर से जाल में फंसाऊं। मैं समझती थी कि वेरा ने सब मामला चौपट कर दिया है, लेकिन कहां, बिल्कुल नहीं। मेरी लाड़ली तो नेक काम कर रही थी। उसे पता था कि कैसे यह हासिल किया जा सकता है। वह सचमुच बड़ी चालाक है।"

उसके पति ने स्वर में स्वर मिलाया: "भगवान बच्चों को सद्बुद्धि अवश्य देता है।"

यद्यपि पति परिवार के मामलों में बहुत कम ही कोई भाग लेता था, लेकिन उसकी पत्नी पुराने रीति-रिवाजों की कट्टर समर्थक थी और शादी के प्रस्ताव की घोषणा को अत्यन्त महत्त्वपूर्ण पुनीत अनुष्ठान और ऐसा सम्मान मानती थी जो परिवार के मुखिया तथा गृहस्वामी के लिए अपेक्षित था। पति और पत्नी दोनों ही सोफ़े पर विराजमान हो गये, उन्होंने इस स्थान को अवसर के लिए अत्यन्त उपयुक्त समझा और मत्र्योना को अपनी तरुणी बेटी को बुलाने के लिए भेजा।

पिता ने कहना शुरू किया: "वेरा, मिख़ाईल इवानोविच ने तुम्हारा हाथ मांगकर हमें सम्मान प्रदान किया है। तुम्हें प्यार करनेवाले माता-पिता के नाते हमने उनसे कहा है कि हम तुम्हारी इच्छा के विपरीत कुछ नहीं करेंगे, लेकिन ताहम हमें इसका गर्व अवश्य है कि ऐसा हुआ। और हमें अच्छी तरह मालूम है कि तुम हमेशा ही आज्ञाकारी, अच्छी बेटी रही हो, और समझ ही सकती हो कि क्या भला है और क्या बुरा—इससे अच्छे वर की तो हम भगवान से मांगने की हिम्मत भी नहीं कर सकते थे। ठीक है न, वेरा?"

वेरा ने उत्तर दिया: "जी नहीं, ग़लत।"

उसका पिता गरज उठा: "क्या?" इस प्रकार के उत्तर को सुनकर पिता वेरा की मां से पूछे बिना ही गरज सकता था।

और मार्या अलेक्सेयेव्ना ने मुट्ठियां भींचकर तान लीं और गरजी: "छोकरी, तेरे होशोहवास तो दुरुस्त हैं?"

वेरा उठकर खड़ी हो गयी, बोली: "मां, माफ़ कर दो मुझे, लेकिन अगर तुमने मुझे अंगुली भी छुआयी तो मैं चली जाऊंगी घर से। अगर तुमने मुझे कमरे में बन्द किया तो मैं खिड़की से नीचे कूद जाऊंगी। मैं पहले

से ही इसका अनुमान लगा चुकी थी और मैं अपना कार्यक्रम तय कर चुकी थी। बैठ जाओ, चुपचाप या तुम चाहती हो मैं सचमुच यहां से चली जाऊं।"

मार्या अलेक्सेयेव्ना फिर से बैठ गयी: कितनी बड़ी बेवक़ूफ़ी है हमारी, हमने बाहर के दरवाज़े पर ताला नहीं डाला। इससे पहले कि हम कुछ भी कर पायें वह सिटकनी खोलकर खटाखट बाहर निकल जायेगी। कैसी घोर पागल है यह लड़की!"

"मैं उस आदमी से शादी नहीं करूंगी। और बिना मेरी मर्ज़ी के तो शादी का सवाल ही नहीं उठता।"

मार्या अलेक्सेयेव्ना रुंधे से स्वर में बोली: "वेरा, पागल हो गयी है क्या?"

"कैसे हो सकता है यह? कल हम उससे क्या कहेंगे?" पिता ने कहा।

"इसमें आपकी कोई ग़लती नहीं। मना तो मैं कर रही हूं शादी से।"

दो घंटे या इससे अधिक समय तक क़ोहराम मचा रहा। मार्या अलेक्सेयेव्ना ने एक के बाद दूसरा पैंतरा बदला। बीसियों बार वह चीखी-चिल्लायी, मुट्ठियां भींचती रही, लेकिन वेरा हर बार एक ही बात कहती रही: "तुम उठी नहीं मां कि मैं घर छोड़कर बाहर निकली।" पति-पत्नी दोनों गरजते रहे और कोसते-कांखते रहे, लेकिन वे बेबस-लाचार हो चुके थे। अन्ततः, जब मत्र्योना यह पूछने के लिए आयी कि खाना परोसे या नहीं—पायी तो कब से तैयार हो चुकी है, तभी यह हंगामा ख़त्म हुआ।

"आज शाम तक का वक़्त है तेरे पास सब सोचने-विचारने के लिए और ठीक से सोचना, समझी मन्दबुद्धि।" यह कहकर मार्या अलेक्सेयेव्ना मत्र्योना के कानों में कुछ फुसफुसायी।

"मां, तुम गड़बड़ मंसूबा बना रही हो मेरे बारे में। मेरे कमरे के ताले में से चाबी निकाल लेने अथवा इसी प्रकार की कुछ गड़बड़ करने की। जो कुछ भी मंसूबा हो, मत करना उस पर अमल, वरना पछताओगी।"

मार्या अलेक्सेयेव्ना ने रसोईदारिन से कहा: "अच्छा, रहने दो।"—"हे भगवान, कैसी डायन हो गयी है हमारी वेरा! काश कि वह नौजवान इसके रूप पर न रीझा होता तो मैं इसे मार-मारकर सुजा देती, लेकिन अब क्या करूं, यह सब तो कर नहीं सकती। और यह बेवक़ूफ़ तो अपने को कुछ भी कर सकती है! आंखें कितनी दिखा रही है, मरजानी!"

खाने के लिए उठे। सबने एक भी शब्द बोले बिना भोजन किया। खाना खाने के बाद वेरा अपने कमरे में चली गयी। पिता प्रतिदिन की तरह

अपनी झपकी लेने के लिए पसरा ही था और अभी पहली पलक भी नहीं झपक पाया था कि मत्र्योना ने आकर यह घोषणा की कि मालकिन का आदमी आया है, वह कह रहा है कि मालकिन बुला रही है—मत्र्योना पत्ती की तरह कांप रही थी, न मालूम क्यों?

8

कोई कांपे क्यों न, जबकि इस सब गड़बड़ झाले की जड़ वही हो। वेरा को अपने माता-पिता के पास भेजने के फ़ौरन बाद ही वह मकान-मालकिन के रसोइये की बीवी को यह कहने पहुंच गयी थी कि "तुम्हारे नौजवान मालिक ने हमारे मालिक की बेटी से विवाह का प्रस्ताव रखा है।" मकान-मालकिन की नौकरानी को उन्होंने बुलाया और उसे इसलिए खरी-खोटी सुननी पड़ी कि वह कैसी दोस्त है कि उसने इतनी देर तक कुछ भी नहीं बताया; और नौकरानी यह बिल्कुल नहीं समझ सकी कि क्या न बताने के लिए उसे डांटा-फटकारा जा रहा है, जबकि उसने तो कुछ भी कभी नहीं छिपाया और जब उसे असली बात बतायी गयी तो उसने कहा: "मैं तो ऐसा पहली बार सुन रही हूं।" उस बेचारी पर झूठा इल्ज़ाम लगाने के लिए माफ़ी मांगी गयी, तभी उसने जाकर मुख्य नौकरानी को सब कुछ जा बताया और इस नौकरानी ने यही निष्कर्ष निकाला कि "यह सब छोटे मालिक ने अपनी मां से छिपाकर ही किया होगा, क्योंकि मालकिन तो जो कुछ जानती है, मैं वह सब कुछ जानती हूं।" और उसने अपनी मालकिन को यह सब सूचना देने में ज़रा भी देरी नहीं की। तो यह बात है। सब मत्र्योना की करनी है। "अपनी बरबादी के लिए ख़ुद ज़िम्मेदार होने के लिए मुझे अपनी जीभ ही काट लेनी चाहिये", उसने अपने आपको कोसा और उचित ही, क्योंकि मार्या अलेक्सेयेव्ना को यह पता लगाने में कोई मुश्किल नहीं होगी कि यह इधर की उधर करनेवाला आख़िर है कौन। लेकिन जैसा कि बाद में हुआ मार्या अलेक्सेयेव्ना ने तो इस प्रकार की हर इच्छा अपने मन से निकाल ही फेंकी थी।

श्रीमती स्तोरेश्निकोवा चीख़ी-चिल्लायी और ठीक दो बार मूर्च्छित हुई, नौकरानी ही अकेली इसकी साक्षी बनी, इसका मतलब था कि

मालकिन बहुत घबड़ा गयी। उन्होंने तत्काल ही अपने बेटे को बुला भेजा। वह ऊपर पहुंचा।

"मिखाईल, क्या जो कुछ मैंने सुना, वह सच है?" (उन्होंने यह इस प्रकार कहा जैसे उसे पीड़ा सहनी पड़ी हो।)

"मम्मी, क्या सुना है तुमने?"

"कि तुमने उससे... उस... उस... अपने मैनेजर की बेटी से विवाह का प्रस्ताव रखा है।"

"हां, मम्मी।"

"बिना अपनी मां से पहले सलाह किये?"

"मैं उससे हामी पा लेने के बाद ही तुम्हारा आशीर्वाद लेने की सोच रहा था।"

"लगता है तुम्हें उसकी ओर से आश्वासन की परवाह मुझसे अधिक है।"

"मम्मी, आजकल तो इसी तरह चलता है: पहले लड़की से पूछो और फिर अपने माता-पिता को बताओ।"

"तो इस तरह होता है आजकल! क्या यह भी आज की रीत है कि उच्च समाज के धनवान परिवारों के बेटे भगवान जाने किससे विवाह करते फिरें और उन बेटों की बेबस मांयें सब कुछ चुपचाप सहती रहें?"

"वह भगवान जाने क्या नहीं है, मां। एक बार उसे जान जाओगी, तो मुझे विश्वास है तुम मेरी पसन्द का अनुमोदन कर दोगी।"

"उसे जानकर एक बार! नहीं, ऐसा तो मेरी मौत पर ही हो सकेगा। क्या कहता है—मैं तेरी पसन्द का अनुमोदन करूं! ख़बरदार, जो अपनी तथाकथित 'पसन्द' पर ज़रा-सा भी समय गंवाया। सुन रहा है न मेरी बात? ख़बरदार कर रही हूं तुझे मैं!"

"मम्मी, इन दिनों ऐसा नहीं होता। मैं इतना छोटा बच्चा नहीं कि आप मेरी अंगुली पकड़कर मुझे चलायें। मुझे मालूम है कि मैं किधर जाऊंगा।"

श्रीमती स्तोरेश्निकोवा ने "हे भगवान!" कहकर अपनी आंखें बन्द कर लीं।

यदि युवक स्तोरेश्निकोव ने मार्या अलेक्सेयेव्ना, जूली और वेरा के सामने घुटने टेक दिये थे, तो वे तीनों ही बुद्धिमान और हठी महिलायें थीं; लेकिन इधर तो बुद्धि की दृष्टि से बराबरी थी और अगर मां का

पलड़ा उसके स्वभाव के कारण थोड़ा-सा भारी था तो बेटे के पांव ठोस ज़मीन पर टिके थे; वह अपनी मां से आदतन डरता था, लेकिन दोनों को ही इस कठोर सत्य का पूर्ण ध्यान था कि मकान-मालकिन वास्तव में मकान-मालकिन नहीं थी बल्कि मकान-मालिक की केवल मां थी और मकान-मालकिन का बेटा, जो और कोई नहीं, उसका बेटा ही था, अब पूर्ण रूप से मिल्कियत का स्वामी हो चुका था। इसीलिए श्रीमती स्तोरेश्निकोवा ने अपनी बात तत्काल मनवाने की हठ त्याग दी। इस आशा से कि समय बीत जाने पर शायद उसका बेटा, वास्तव में इधर या उधर निर्णय किये जाने के समय तक, कुछ ढीला पड़ जायेगा। पर युवक गृहपति मिखाईल इतनी दूर निकल चुका था कि वापस लौटना कठिन हो गया था और वह अपने नये निश्चय पर डटे रहने की आवश्यकता को समझते हुए दृढ़ संकल्प था।

"मम्मी, मैं क़सम खाकर कहता हूं, उससे अच्छी बहू आपको नहीं मिलेगी।"

"अरे राक्षस, तू अपनी मां की मौत का कारण सिद्ध होगा!"

"मम्मी, क्यों न अब हम ठंडे दिमाग़ से इस मामले पर विचार करें। कभी न कभी तो मुझे विवाह करना ही है और विवाहित व्यक्ति के ख़र्च कुंआरे व्यक्ति से कहीं ज़्यादा होते हैं। मैं अवश्य ही ऐसी पत्नी ला सकता था, जो हमारे मकान से आनेवाली सारी आमदनी को ख़र्च कर डाले; लेकिन वेरा पावलोव्ना तुम्हारे लिए ऐसी शालीन बेटी सिद्ध होगी, कि हम सब साथ-साथ रह सकेंगे।"

"राक्षस! मां का हत्यारा! चला जा मेरी नज़रों से दूर!"

"मम्मी! मत होओ इतनी नाराज़। मैंने तो तुम्हें कोई नुकसान नहीं पहुंचाया।"

"किसी कमीनी से शादी करना क्या मुझे नुकसान पहुंचाना नहीं है?"

"ठीक है मां, तुम्हारी नज़रों से ओझल हो जाता हूं मैं। उसके बारे में इस प्रकार की बातें मैं किसी से भी नहीं सुन सकता।"

"तू ही मेरी मौत का कारण होगा!" वह फिर मूर्च्छित हो गयी और मिखाईल वहां से चला गया। मन ही मन अपने को शाबाशी देता हुआ कि पहला क़िला तो उसने फ़तह कर लिया है। यही तो सबसे महत्त्वपूर्ण था, और कितनी चतुराई से उसने यह लड़ाई लड़ी।

अपने बेटे को गया देखते ही श्रीमती स्तोरेश्निकोवा मूर्च्छा से जग

गयी। यह लड़का तो बिल्कुल ही हाथ से निकला जा रहा था! जब यह कहा कि "मैं यह सब बरदाश्त नहीं करूंगी" तो कैसे पलट कर बोला, घर उसका है! उसने अपने को कोसा, बुरा-भला कहा और मन का भार हल्का करने के लिए, मुख्य नौकरानी से व्यथा-कथा कह डाली। भला मैनेजर की बेटी के लिए मालकिन के मन में जो निरादर की भावना थी, उससे नौकरानी सहानुभूति क्यों न करती! मालकिन ने उससे मशविरा करके मैनेजर को बुलवा भेजा।

"अब तक मुझे किसी क़िस्म की शिकायत का कोई कारण नहीं था, रोज़ाल्स्की, लेकिन ये कुचक्र हम लोगों के बीच कैसे, कहां से आ गये। मैं समझती हूं कि इसमें, हो सकता है, तुम्हारी कोई साझेदारी न हो।"

"लेकिन, रानी साहिबा, ईश्वर साक्षी है, मैंने तो कुछ भी ग़लती नहीं की है।"

"मुझे कुछ समय से यह मालूम है कि मिख़ाईल तुम्हारी बेटी का आशिक़ हो गया है। मैंने अब तक यह मानकर कोई हस्तक्षेप नहीं किया कि युवक को अपने लिए कुछ मनोरंजन तो चाहिये होता है। इधर-उधर मुंह मारता फिरे, तो मैं इस पर ध्यान नहीं देती लेकिन अगर मेरे कुल को कलंकित करने जैसी कोई हरकत की जायेगी, तो मैं बरदाश्त नहीं कर सकती। तुम्हारी बेटी के मन में ऐसी इच्छा आयी कैसे?"

"रानी साहिबा, वह तो इस के बारे में सपना देखने तक की भी हिम्मत नहीं कर सकती। वह तो भली लड़की है। हमने उसका पालन-पोषण ऐसे किया है कि वह अपना कर्त्तव्य भली-भांति समझती है।"

"क्या मतलब?"

"वह आपकी इच्छा के विरुद्ध कभी कुछ नहीं करेगी, रानी साहिबा।"

रानी साहिबा को अपने कानों पर विश्वास ही नहीं हुआ। क्या इस प्रकार सौभाग्य वास्तव में प्राप्त हो सकता है, क्या सचमुच?

"तुम अच्छी तरह जानते ही हो कि मेरी आशा इस सम्बन्ध में क्या है... इस प्रकार की बेमेल जोड़ी की इजाज़त मैं नहीं दे सकती—मैं इसे लज्जास्पद मानती हूं।"

"हम इसे अच्छी तरह समझते-मानते हैं, हम और वेरा भी। उसने तो यह कहा भी, उसने कहा: 'मैं रानी साहिबा को ग़ुस्सा दिलाने की सोच भी नहीं सकती'।"

"यह सब हुआ कैसे?"

"रानी साहिबा, बात ऐसी है। मिखाईल बाबू ने मेरी पत्नी को अपने इरादे के बारे में सूचित किया और मेरी पत्नी ने कहा कि वह कल से पहले 'हां' या 'ना' कुछ नहीं कह सकती और मैं और मेरी पत्नी आपके पास आकर सब कुछ बताना भी चाहते थे रानी साहिबा, लेकिन इतने बेवक़्त आकर हम आपके आराम में विघ्न नहीं डालना चाहते थे। जब मिखाईल इवानोविच हमारे यहां से चले आये, तो हमने अपनी बेटी वेरा को सब कुछ बताया। वह बोली: 'मम्मी-पापा, मैं आपसे बिल्कुल सहमत हूं। हमारे जैसे तो इस तरह के रिश्ते के बारे में सोच भी कैसे सकते हैं'।"

"तब तो वह निष्कपट और समझदार लड़की है?"

"क्यों नहीं, रानी साहिबा, उसे अपनी औक़ात मालूम है!"

"हूं ऽ! मुझे खुशी है कि हमारे सम्बन्ध यथापूर्व बने रहेंगे। मैं इसके लिए तुम्हें यथोचित पुरस्कार दूंगी। मैं तो इसी समय ऐसा करने के लिए तत्पर हूं। मुख्य द्वार की पहली मंज़िल पर दर्ज़ी के पासवाला फ़्लैट इस समय खाली है न?"

"तीन दिन में वह खाली हो जायेगा, रानी साहिबा।"

"वह तुम्हारा हो गया। तुम उसको ठीक-ठाक कराने में सौ रूबल तक खर्च कर सकते हो। इसके अलावा मैं तुम्हारी तनखा 240 रूबल सलाना बढ़ा रही हूं।"

"रानी साहिबा, मुझे अपना हाथ चूमने की इजाज़त दें।"

"ठीक है, ठीक है। तत्याना!" मुख्य नौकरानी हाज़िर हो गयी। "मेरा नीला मखमलवाला कोट तो लाना। यह तुम्हारी बीवी के लिए है, रोज़ाल्स्की। इस पर मैंने 150 रूबल (असल में 85) खर्च किये थे और मैंने इसे दो बार ही पहना होगा (अलबत्ता, पहना बीस बार से अधिक होगा)। और यह तुम्हारी बेटी के लिए", ऐसा कहकर उन्होंने छोटी-सी लेडीज़ घड़ी उसे दी। "मैंने यह 300 रूबल (ज़्यादा से ज़्यादा 120 ही होगी) में खरीदी थी। मैं इनाम देना जानती हूं, आगे भी तुम्हें नहीं भूलूंगी। अलबत्ता जहां तक नौजवानों की रंग-रलियों का सवाल है, तो मैं उन्हें अनदेखा करने के लिए तैयार हूं।"

मैनेजर के जाने के बाद श्रीमती स्तोरेश्निकोवा ने फिर तत्याना को पुकारा।

"मिखाईल इवानोविच को ऊपर आने का संदेश दो, रहने दो,

मैं ही वहां चली जाती हूं।" उसे डर था कि कहीं नौकरानी बेटे के ख़िदमतगार को सब कुछ बता न दे और उसके ज़रिये उनके बेटे तक समाचार पहुंच जाय कि मैनेजर ने क्या कहा और इससे गिरनेवाली बिजली की कड़क ही मर जाय और वह बेटे के सिर से बदमाशी का भूत उतारने के आनंद से वंचित रह जाय।

वह बदमाश, अपनी मूंछों पर ताव देते हुए, मन ही मन फूला नहीं समा रहा था। "यह खूसट बुढ़िया क्यों आयी है यहां? इसे पता है मैं यहां बेहोशी भगाने के स्मेलिंग साल्ट का भण्डार नहीं रखता।" खड़े होते-होते वह इसी आश्चर्य में डूबा रहा। लेकिन उसने जिस मूर्ति के दर्शन किये वह तो विजेता की मुस्कान बिखेरती महिला थी।

वह आकर बैठ गयी और बोली:

"उठो मत, मिख़ाईल, कुछ गपशप करेंगे हम।" उसने बेटे की ओर कुछ देर ज़रा व्यंग्य से देखा और फिर बोली। "मैं बहुत खुश हूं, मिख़ाईल, सोच सकते हो क्यों?"

"क्या कहूं मम्मी मैं; सब कुछ अजीब-सा लगता है..."

"बिल्कुल नहीं, तुम खुद ही समझ लोगे: बस ज़रा-सा ज़ोर डालो दिमाग़ पर, हो सकता है तुम जान लो!"

फिर थोड़ी देर शान्ति छाई रही। बेटा अपने दिमाग़ पर ज़ोर डाल-डालकर थक गया और मां अपनी जीत पर इतराती रही।

"नहीं अनुमान लगा सकते तुम, हां न। कोई बात नहीं, मैं ही बताये देती हूं। बिल्कुल सीधी-सी बात है। अगर तुम में ज़रा-सी भी कुलीन भावना होती, तो तुमने खुद ही समझ लिया होता। तुम्हारी रखैल," पहले तो उसे अपनी बात घुमा-फिरा कर कहनी होती, लेकिन अब तो इसकी कोई आवश्यकता नहीं थी क्योंकि उसके प्रतिपक्षी का तुरुप का पत्ता तो उससे छिन गया था, "तुम्हारी रखैल—मेरी बात मत काटिये जनाब, आप ही थे, जिन्होंने चीख़-चीख़कर यह एलान किया था कि वह आपकी रखैल है—वह नीच कुल में उत्पन्न, अशिष्ट, उजड्ड छोकरी। उस तिरस्करणीय जन्तु ने भी..."

"मम्मी, मैं अपनी होनेवाली वधू के बारे में इस तरह की बातें सुनने के लिए हरगिज़ तैयार नहीं।"

"नहीं मैं, अगर मैं यह विश्वास करती होती कि वह कभी

तुम्हारी वधू बनेगी। लेकिन मैं तो यहां बिल्कुल इसके विपरीत कुछ सिद्ध करने के प्रयोजन से आयी हूं। पहले तुम मुझे अपनी बात बराय मेहरबानी ख़त्म कर लेने दो; फिर उसके बाद तुम मुझे इस प्रकार के विशेषणों के लिए खरी-खोटी सुना सकते हो। यदि तुम उचित समझो—बस पहले मुझे बात पूरी कर लेने दो। तो मैं कह रही थी कि तुम्हारी वह रखैल, जाहिल, अशिष्ट, भावनाशून्य, नाचीज़, वही तुम्हें लज्जित करती है, वह भी इस बात को भली-भांति समझती है कि तुम्हारे मंसूबे कितने नापाक हैं..."

"क्-क्या..? मम्मी, क्या बात है? कहो न!"

"तुम्हीं बीच में टोकाटाकी कर रहे हो। तो मैं कह रही थी—वह भी! सुन रहे हो न? उसके जैसी छोकरी भी मेरी भावनाओं को समझती है; जब उसने अपनी मां से तुम्हारे प्रस्ताव के बारे में सुना, तो जानते हो उसने क्या किया; उसने अपने बाप को मेरे पास भेजा, यह आश्वासन देने के लिए कि वह मेरी इच्छा के विरुद्ध कभी कोई कार्य नहीं करेगी और न ही हमारे कुल के नाम को अपनी नीच औक़ात से मिलाकर कलंकित करेगी।"

"मुझे धोखा तो नहीं दे रही हो, मम्मी?"

"नहीं बेटा, मेरे और तुम्हारे दोनों की ही खुशी के लिए—नहीं। उसका कहना है कि वह..."

लेकिन बेटा अब सुन कहां रहा था, वह तो अफ़रा-तफ़री में कोट पहन रहा था।

श्रीमती स्तोरेश्निकोवा चीखी: "रोको उसे! प्योत्र, उसे रोको!" इस प्रकार के अनोखे आदेश को सुनकर प्योत्र गावदी-सा खड़ा रह गया और युवक स्तोरेश्निकोव खटाखट ज़ीना उतरता चला गया।

9

मार्या अलेक्सेयेव्ना अपने पति पर बरसी: "फिर?"

"श्रीमती जी, और कुछ अच्छी बात हो ही नहीं सकती थी, उन्हें मालूम हो गया, पहले से ही और वे बोलीं—'तुम्हारी हिम्मत

कैसे हुई' और मैंने कहा — 'बिल्कुल नहीं, वेरा ने तो विवाह-प्रस्ताव ठुकरा भी दिया है'।"

"क्-क्या? तुम इतने मूर्ख निकले, क्या यही कह डाला?"

"मार्या अलेक्सेयेव्ना!"

"जड़बुद्धि, कमीने, मुझे कहीं का नहीं रखा तूने! खूनी हत्यारे ले" और इस "ले" के साथ ज़ोरदार धौल पड़ा। "और ले!" फिर दूसरा धौल पड़ा। "इसी से तुझे शिक्षा मिलेगी बकवादी!" और उसने पति के बाल पकड़ कर झकझोरना शुरू कर दिया। यह शिक्षा काफ़ी देर तक चलती रही, इतनी देर तक कि स्तोरेश्निकोव अपनी मां की डांट-फटकार को सुनने के बाद रोज़ाल्स्की के बैठक में ताबड़तोड़ पहुंच चुका था और वहां पहुंचकर देखा कि घर की मालकिन पूरे जोश के साथ सबक़ सिखा रही थी।

"अरे बौड़म, दरवाज़ा तक बन्द नहीं किया। चाहे जो घुसा चला आता है घर में! लाज-शर्म बेच डाली, कमीने?" मार्या अलेक्सेयेव्ना को इसके अलावा और कुछ नहीं सूझा।

"वेरा पावलोव्ना कहां है? मुझे उससे मिलना है! तत्काल! यह मत कहना कि वह मुझसे विवाह करने को मना कर रही है?"

बात इतनी बिगड़ चुकी थी कि वह सिर्फ़ खिसिया के ही रह गयी। स्थिति कुछ वैसी ही थी जैसी कि वाटरलू की लड़ाई के बाद नेपोलियन की हुई थी, और मार्शल ग्रुशी उसके मूर्ख पति की तरह निरा उल्लू निकला और लफ़ायेत वेरा की तरह बिदक गया* और बेचारा नेपोलियन अपने को कोस रहा था, युद्ध-कला के चमत्कार दिखाता था, लेकिन पल्ले कुछ भी नहीं पड़ा, कोई विकल्प भी तो नहीं था उसके सामने, बस खिसियाते हुए यही कह सका: "मैं रास्ते से हट जाता हूं, अलबत्ता जो जी में आये मेरे साथ करो।"

"वेरा पावलोव्ना, आप मेरा प्रस्ताव स्वीकार नहीं करेंगी?"

"खुद ही सोचो, कैसे कर सकती हूं?"

"वेरा पावलोव्ना! मैंने तुम्हारा बुरी तरह अपमान किया है, माफ़ी मांगता हूं, मैं निर्ममतम दण्ड का भागी हूं, लेकिन

* वाटरलू की लड़ाई 18 जून 1815 को लड़ी गयी। इमानुएल द' ग्रुशी (1766—1847) नेपोलियन की मुख्य सेना के साथ जुड़ने में असफल रहा। — सं०

मैं तिरस्कार सहन नहीं कर सकता..." वह इसी रौ में कहता चला गया।

वेरा कुछ देर तक सुनती रही, लेकिन सब्र का बांध टूट जाने पर, उसने अपनी बात कहने की ठान ली।

"बहुत हो गया, मिखाईल इवानोविच। बस, मैं आपका प्रस्ताव स्वीकार नहीं कर सकती, किसी भी क़ीमत पर नहीं।"

"अच्छा, एक दया की भीख तो दे दो। मैंने तुम्हारा जो अपमान किया उसकी कसक अभी है... अभी मत उत्तर दो मुझे, अवसर दो मुझे कि मैं तुम्हारी क्षमा का भागी बन सकूं! तुम मुझे घृणा के भी हीन पात्र समझती हो न, लेकिन कुछ मोहलत दो और मैं अपने तौर-तरीक़ों में शायद सुधार कर लूंगा... मैं सब कुछ करने के लिए तैयार हूं, इस के लिए! मदद करो मेरी, मार मत डालो मुझे, कुछ समय दो! तुम जो कहोगी वह सब कुछ मैं करूंगा! मैं तुम्हारे हाथ का खिलौना बनकर रहूंगा, हो सकता है तुम्हें कुछ अच्छाई मुझमें दीख जाय—बस मुझे मोहलत दो, मोहलत!"

वेरा ने उत्तर दिया: "दया आती है मुझे आप पर। देख रही हूं आपका प्रेम सच्चा है। (वेरा! ऐसी कोई बात नहीं, यह तो सस्ती कामुकता और घटिया अश्लीलता का मिश्रण है! यह प्रेम जैसी कोई बात नहीं, यह तो वही कामवासना है जो तिरस्कृत किये जाने के बाद भड़कती है, यह कुछ भी नहीं और फिर भी तुम अपने भोलेपन में इससे द्रवित हो गयीं।) आप चाहते हैं कि इस समय मैं कोई उत्तर नहीं दूं—जैसी आपकी मर्ज़ी। लेकिन एक बात की चेतावनी दे दूं, मोहलत से भी कोई फ़ायदा नहीं। मैं आपको वही उत्तर दूंगी, जो आज दिया है, दूसरा कोई नहीं।"

"नहीं, नहीं मैं इसके योग्य बनूंगा, मैं तुमसे दूसरा उत्तर पाने के योग्य बनूंगा। इस समय तुम मुझे बचा रही हो।" और वह युवती का हाथ चूमने लगा।

मार्या अलेक्सेयेव्ना कमरे में घुसी। वह उसी क्षण भावातिरेक में प्यारे बच्चों को तत्काल आशीर्वाद देना चाहती थी, औपचारिकता के बिना, अर्थात् अपने पति के बिना ही, जिसे वास्तविक आशीर्वाद के लिए तत्काल बुलाया ही जा सकता था। लेकिन स्तोरेश्निकोव ने उसकी आशा पर पूर्ण रूप से पानी फेर दिया, उसने चुम्बन

7 1127

लेते-लेते यह बताया कि वेरा पावलोव्ना ने उसे स्वीकार तो नहीं किया, पर न ही दो-टूक रूप से इनकार ही किया है, उत्तर देने के लिए मोहलत दी है। यह कुछ अच्छी स्थिति नहीं थी, तो भी पहली स्थिति से तो बेहतर ही थी।

स्तोरेश्निकोव घर लौटा तो विजय में झूम रहा था। एक बार फिर मिल्कियत आदि की चर्चा हुई और एक बार फिर मां के लिए मूर्च्छा के सिवा और कोई विकल्प नहीं बचा, और इस विकल्प का उपयोग कई बार हुआ।

मार्या अलेक्सेयेव्ना अपनी बेटी के आचरण को समझ ही नहीं पा रही थी। उसकी बेटी जो कुछ कहती और करती थी, वह हर तरह से उसकी इच्छाओं से बिल्कुल भिन्न था, लेकिन इसका नतीजा ऐसा था कि उसकी मां जिन रुकावटों को दूर नहीं कर सकती थी, उन सबको उसने पार कर लिया था। इस परिणाम से यही पता चलता था कि बेटी मां की ही आकांक्षाओं की सहभागी है; बस बात इतनी-सी थी कि बेटी उनकी प्राप्ति के लिए अपने ही निपुण और सूक्ष्म मार्ग का उपयोग करती है। यदि ऐसी बात थी तो उसने बस यह क्यों नहीं कहा: "मां, मैं आपके साथ हूं। कोई चिन्ता मत करो!" अथवा बेटी उसे इतना नापसन्द करती है कि जिस बात में सर्वाधिक सहयोग दरकार है, उसमें भी वह अकेले चलना बेहतर समझती है? उसने अपने प्रेमी के प्रस्ताव की स्वीकृति को टाला है, यह बात तो अच्छी तरह समझ में आती है; यह तो उस बुद्धू को इतना वशीभूत कर लेना चाहती है कि वह उसके इशारे के बिना खांसने-छींकने की भी हिम्मत न कर सके और उसकी मां को इतना आतंकित करे कि वह वेरा को स्वीकार करने पर विवश हो जाय। अपनी मां से भी अधिक चंट बेटी इतना सब कर सकती है, यह बिल्कुल स्पष्ट हो गया था। यह सोचकर और सोचती तो थी ही वह इस बारे में। और बेचारी मार्या अलेक्सेयेव्ना अनिवार्य रूप से इसी निष्कर्ष पर पहुंचती थी। लेकिन उसकी आंखों और कानों की गवाही सतत रूप से इसका खण्डन करती। और यदि वह वास्तव में ग़लती पर थी, उसकी बेटी का वास्तविक इरादा उस व्यक्ति से विवाह करने का नहीं था, तो ऐसे में वह क्या करेगी? इस डायन के मनोबल को कैसे तोड़ा जा सकता है, यह वह कहां जानती थी।

मार्या अलेक्सेयेव्ना में कहीं अधिक सामान्य विवेक था कि वह वेरा को षडयंत्रकारी नहीं मान सकती थी, लेकिन वह यह सब खेल क्यों खेल रही थी; क्या उसने जीतने के लिए दांव लगाया था (केवल शैतान ही जाने कि उसके मन में क्या है!) ताकि वह भावी पति, अपनी भावी सास और सारे घर की स्वामिनी हो जाय? बेचारी मां वास्तव में करे भी तो क्या? अब इसके सिवा विकल्प ही क्या है: चौकसी और इन्तज़ार। यदि वेरा अभी यह सब नहीं चाहती, तो वह इस विचार की आदी हो जायेगी और फिर उसे प्यार करने लगेगी... थोड़ी-बहुत धौंस... शायद... बस समय लगेगा। लेकिन इन्तज़ार करना पड़ेगा। और उसने ऐसा किया भी। ताहम, अपने सामान्य विवेक के बावजूद यह सोचना कितना लुभावना लगता था कि वेरा विवाह की वेदी के मार्ग पर चल रही है। हर चीज़, सिवा उसके कि जो कुछ यह लड़की वास्तव में कहती और करती है, यही संकेत करती थी। वर उसके अंगूठे के नीचे था, मंगेतर की मां भी बेटे द्वारा बार-बार मिल्कियत की धौंस दिये जाने से तीन सप्ताह के भीतर टूटने-सी लगी थी—उसने वेरा से मिलने की इच्छा प्रकट की पर वेरा ने टाल दिया था, मिली नहीं थी। मार्या अलेक्सेयेव्ना ने सबसे पहले तो यही सोचा कि अगर बेटी की जगह वह होती तो बेहतर यही मानती कि उसकी मां के निमंत्रण को इस प्रकार अनसुना न किया जाय; लेकिन दुबारा ग़ौर करने पर वह समझी कि इस प्रकार डटे रहना ही शायद सर्वोत्तम नीति थी। चालाकी के भी क्या कहने! कोई दो सप्ताह बाद मकान-मालकिन ख़ुद वहां पधारी, ज़ाहिरा तौर पर वह उनके नये फ़्लैट में होनेवाली पुनर्सज्जा देखने के लिए आयी थीं। वह रुखाई और अत्यन्त कठोरता से औपचारिकता निभा रही थी, दो-तीन कटाक्षपूर्ण बातें सुनकर वेरा उठी और अपने कमरे में चली गयी और जब तक श्रीमती स्तोरेश्निकोवा चली नहीं गयी तब तक मां सोचती थी कि वेरा को इस प्रकार नहीं चले जाना चाहिये था; कटूक्तियों का उत्तर तो और तीखी कटूक्तियों से देना था, लेकिन जैसे ही वह कमरे से बाहर निकली कि मार्या अलेक्सेयेव्ना ने वेरा की होशियारी की पूरी दाद दी—मां से निपटने का काम बेटे के लिए छोड़ना ही वास्तव में सर्वोत्तम समाधान था। लगभग दो सप्ताह बाद मकान-मालकिन फिर आयी, इस बार किसी भी बहाने के बिना; उसने कहा कि इस बार सिर्फ़ मिलने के लिए ही आयी थी और वेरा की मौजूदगी में उसने अपनी भाषा पर भी नियन्त्रण रखा।

इस तरह समय बीतता गया। वेरा के मंगेतर ने वेरा की मां के माध्यम से अनेक भेंटें भेजीं, जिन्हें मां ने अपने ही पास रख लिया, जैसे कि श्रीमती स्तोरेश्निकोवा द्वारा भेजी गयी कलाई-घड़ी भी उसने रख ली थी—लेकिन हर चीज़ नहीं: सस्ती चीजें वेरा को "गिरवी रखनेवाले ने इन्हें छुड़ाया नहीं" बताकर दे दी गयीं इसलिए कि भेंट देनेवाला कभी तो यह चाहेगा कि उसकी दी गयी चीज़ों में से एकाध तो कभी पहनी जाय। पहने देखकर उसे विश्वास होता कि वेरा ने अन्ततः यह तय कर लिया है कि वह उससे विवाह करेगी; अन्यथा उसने उसके तोहफ़े क्यों स्वीकार किये होते, पर देर क्यों हो रही है? लेकिन उसे इस सवाल का जवाब मालूम था, मार्या अलेक्सेयेव्ना उकसाती जो रहती थी—वेरा चाहती है कि उसकी सास पूर्ण रूप से आत्म-समर्पण कर दे... इस बीच वह दुगने उत्साह और पर्याप्त आनन्द के साथ अपनी मां को साधता रहा।

इस प्रकार वेरा आराम से रह रही थी और उसकी लल्लो-चप्पो भी होती रहती थी। वह इस चमचागीरी से इतनी उकता गयी थी कि उसको जुगुप्सा होती इसीलिए वह मां से मिलने में भरसक कतराती। और यह बात भी जब कमरे में वेरा होती तो मां हरगिज़ वहां पैर नहीं रखती—जिसका मतलब हुआ सुबह, दोपहर और रात और लगभग हर समय ही उसकी ओर से कोई बाधा-विघ्न नहीं होता। वेरा स्तोरेश्निकोव को कभी-कभी अपने कमरे में आने देती और हर बार ही वह बच्चों की तरह उसका कहना मानता। जब उससे कहा जाता "पढ़ो" तो वह इतने मनोयोग से पढ़ता, जैसे परीक्षा में बैठनेवाला विद्यार्थी हो; हालांकि वह बहुत कुछ समझ नहीं पाता था, फिर भी कुछ न कुछ करने-कहने की कोशिश करता और वह उसके मन की बात जानने के लिए उसे पर्याप्त प्रोत्साहित करती, क्योंकि वह लिखित भाषा के स्थान पर संवाद को अधिक तत्परता के साथ हृदयंगम कर लेता था। वह जो कुछ भी प्रगति कर पाया, बहुत धीमी और नगण्य थी, लेकिन प्रगति तो की ही। अपनी मां के साथ उसके व्यवहार में कुछ सुधार आया क्योंकि वह क्रोध के स्थान पर संयम से काम लेना बेहतर समझने लगा।

ऐसे ही तीन या चार महीने गुज़र गये। सुलह थी, शान्ति थी, पर किसी भी समय फूट पड़ने की आशंका बनी रहती थी। वेरा के मन पर यह भार बना ही रहता था कि किसी भी दिन मिख़ाईल इवानोविच अथवा मां उससे वचन मांगेंगे, कभी न कभी तो उनके धीरज का बांध टूट ही जायेगा।

अगर मैं कोई टकराव चित्रित करना चाहता, तो मैं समापन को लोमहर्षक बनाता, मगर वास्तव में वह ऐसा नहीं था। और अगर रहस्य के बूते आकर्षित करना चाहता तो मैं अभी से यह न कहता कि ऐसा कुछ भी नहीं हुआ, लेकिन मैं तो साफ़-साफ़ लिखनेवालों में हूं और मैं पहले से यह बताये देता हूं कि तलवारों से बात न की जायेगी, रक्तपात, झंझावात अथवा वज्रपात के बिना ही सब कुछ अपने आप ही ठीक-ठाक हो जायेगा।

दूसरा अध्याय

प्रथम प्रेम और विधिवत् विवाह

1

हमें अच्छी तरह पता है कि पुराने ज़माने में, पटाक्षेप कैसा होता यदि नीच परिवार में उत्पन्न विलक्षण युवती को विवश होकर ऐसे अभद्र व्यक्ति से विवाह करना पड़ता, जिसे वह पसन्द नहीं करती, और जो ख़ुद भी नीच था और यदि उसे उसी के हाल पर छोड़ दिया जाता, तो और भी कमीना बन जाता, लेकिन युवती के पल्ले बंध जाने से, उसके प्रभाव से कुछ न कुछ सुधरकर अगर बहुत अच्छा नहीं बन जाता, तो कम से कम सहनीय तो बन ही जाता। ऐसी स्थिति में जब युवती पहले उसके प्रस्ताव को अस्वीकार कर चुकी होती है, वह भी धीरे-धीरे उसे अपने वश में रखने की आदी हो जाती है; और वह यह समझ जाती है कि अपने कमीने परिवार और ऐसे पति—इन दो बुराइयों में से किसी एक को चुनना हो तो पति का चयन कम बुराई होगी, तो वह प्रेमी को सुखी व्यक्ति बनाती है और प्रेमविहीन समर्पण कितना घिनौना है, इसे समझ जाती है। फिर भी उसका पति आज्ञाकारी प्राणी सिद्ध होता है और अनुराग स्वभाववश उत्पन्न हो जाता है। दोनों ही बातें उसे अत्यन्त साधारण-सी बना देती हैं, जो वैसे तो अच्छी

ही बात है, लेकिन वह अपने साधारण जीवन से ही सन्तोष कर लेती है और अर्थहीन अस्तित्व का जीवन जीने लगती है। था ऐसा कभी समय जब विलक्षण युवती और विलक्षण युवक का यही भविष्य था—वे सब अच्छे-भले बुजुर्गों में बदल जाते थे और व्यर्थ ही अपना जीवन जीते थे। कभी दुनिया की ऐसी ही रीत थी, तब ऐसे भले लोग कम थे, जो इसे बदलने की सोचते। कोई भी मनुष्य अपने अस्तित्व को कुंठित किये बिना अकेला नहीं रह सकता। या तो निर्जीव बन जाओ अथवा नीचता से समझौता कर लो।

इन दिनों तीसरा विकल्प ज़ोर पकड़ रहा है: शालीन लोग एकजुट होने लगे हैं, प्रति वर्ष उनकी बढ़ती हुई संख्या को देखते हुए यह अपरिहार्य ही है। समय आयेगा जब यह सामान्य रीति हो जायेगी; और समय बीत जाने पर यह नियम सार्वजनीन हो जायेगा, क्योंकि तब केवल शालीन लोग ही होंगे। और जीवन निस्सन्देह, बहुत खुशनुमा होगा।

जैसा कि अब वेरा का है। वास्तव में, मैंने उसकी अनुमति से ही, उसकी कथा कहने का बीड़ा इस साधारण कारणवश उठाया है कि, जहां तक मुझे ज्ञात है, वह उन पहली महिलाओं में है, जिन्होंने अपने जीवन को इतनी अच्छी तरतीब दी है। पुरोगामी इतिहासकारों की रुचि आकृष्ट करते हैं, ठीक उसी तरह जैसे वसन्त में प्रकट होनेवाली पहली रौबिन चिड़िया पर उत्तरी लोगों की नज़र पड़ती है।

वेरा की नयी और अच्छी ज़िन्दगी का अनुमान निम्न घटना से लगाया जा सकता है। वेरा के छोटे भाई को पाठशाला के लिए तैयार करने का समय आने पर उसके पिता ने दफ़्तर में किसी सस्ते ट्यूटर के बारे में चर्चा की और उसे डाक्टरी पढ़नेवाले विद्यार्थी लोपुखोव का नाम सुझाया गया।

अपने शिष्य को पांच या छ: बार पढ़ाने के बाद ही लोपुखोव की दृष्टि वेरा पर पड़ी। वेरा का कमरा और बालक फ़ेद्या को जिस कमरे में वह पढ़ाता था, वे फ़्लैट के अलग-अलग छोरों पर थे। अकादमी की परीक्षा के दिन निकट आने के साथ-साथ ट्यूशन पढ़ाने का समय सुबह के स्थान पर शाम के लिए खिसका दिया गया, क्योंकि सुबह उसे अपनी पढ़ाई करनी होती थी। और जब वह शाम को आया, तो उसने पूरे परिवार को चायपान के लिए एकत्र पाया।

उसने देखा कि सोफ़े पर उसके शिष्य के माता-पिता बैठे हैं, स्वयं शिष्य अपनी मां के पास कुर्सी पर बैठा है और इन तीनों से अलग-थलग,

लम्बी और लावण्यमयी अपरिचित युवती बैठी है, जिसका रंग कुछ-कुछ सांवला था, काले केश—"सुन्दर और घने", आलूचे जैसी आंखें—"अच्छी, बहुत अच्छी" और दक्षिणी नाक-नक़्श—"उक्रइनी, नहीं, शायद काकेशियाई लगती है; बुरी नहीं, अति सुन्दर मुखड़ा, मगर रूखा, जो कि दक्षिणी स्वभाव के बिल्कुल अनुरूप नहीं था; बढ़िया स्वास्थ्य—अगर सब ऐसे होते हम डाक्टरों की कोई ज़रूरत न रहती। गालों पर लाली, चौड़ी छाती जिसका कभी भी स्टेथेस्कोप से वास्ता न पड़ेगा। जब सोसायटी में क़दम रखेगी तो तहलका मचा देगी। लेकिन मुझे क्या लेना-देना इससे।"

वेरा ने भी ट्यूटर पर दृष्टि डाली। "अभी किशोरावस्था पार ही की है, औसत लम्बाई अथवा औसत से कुछ अधिक ही, गहरे भूरे बाल, शुद्ध, यहां तक कि सुन्दर नाक-नक़्श और नेत्रों में गौरव भरी चुनौती—बुरा नहीं और सौम्य भी है, देखने में तो ऐसा ही लगता है, बस ज़रूरत से ज़्यादा गंभीर न होता तो अच्छा होता।"

यदि वह मन ही मन यह नहीं बोली: "लेकिन मुझे क्या लेना-देना इससे", तो इसका कारण यही था कि उसे यह पता ही न था कि उसे उसमें कोई दिलचस्पी होगी। भला फ़ेद्या ने उसके विषय में उसे इतना अधिक नहीं बताया कि सुन-सुनकर वह ऊब गयी थी? "दीदी, वह अच्छा व्यक्ति है। बस, बहुत ही घुन्ना है। जब मैंने कहा कि तुम ही हमारे घर में सुन्दर हो तो बोला: 'तो क्या हुआ?' सच कहता हूं दीदी, मैंने इस पर कहा: 'सभी सुन्दर मुखड़े को पसन्द करते हैं' और उसने कहा: 'हर मूर्ख करता है।' मैंने कहा: 'इसका मतलब आप नहीं पसन्द करते?' तो उसने जवाब दिया कि 'मेरे पास इस सब के लिए समय नहीं है।' इस पर मैंने पूछा कि 'आप दीदी से परिचय नहीं करना चाहते?' उसने जवाब दिया: 'तुम्हारी दीदी के बिना भी मेरे अनेक परिचित हैं।'" यह पहले दिन की पढ़ाई के बाद की रिपोर्ट थी। फ़ेद्या इसी तरह बक-बक करता और कभी कोई नया ब्योरा जोड़ देता, जैसे: "आज मैंने उनसे कहा कि 'तुम जब भी कहीं जाती हो तो सब लोग तुम्हारी ओर देखते हैं' तो उन्होंने कहा: 'अच्छी बात है।' इस पर मैंने पूछा कि 'आप क्या खुद उसे नहीं देखना चाहेंगे?' तो बोले: 'कभी देखूंगा।'" अथवा यह: "मैंने उनसे कहा कि 'तुम्हारे हाथ बहुत कोमल हैं', लेकिन उन्होंने केवल यही कहा कि 'क्या तुम्हें

(यानी मुझे) इस तरह की बक-बक करने के अलावा कुछ और करने-सोचने के लिए नहीं रह गया है?'."

इसी ढंग से ट्यूटर को फ़ेद्या की बहन के बारे में वह सब कुछ पता चल गया, जिसकी उसे ज़रूरत थी। उसने फ़ेद्या को पारिवारिक गपशप करने से रोकने की पूरी चेष्टा की, लेकिन नौ बरस के छोकरे की बक-बक को भला बिना धमकाये बन्द किया जा सकता है क्या—जब तक आप उसे रोकें तब तक तो उसका इंजन चालू हो चुका होता है और एक बार चालू होने पर अपनी बात कहे बिना बच्चा रुकता कब है। इस प्रकार घर की पूरी ख़बरों के साथ-साथ लोपुख़ोव को ये बातें भी सुनने को मिलीं: "मेरी दीदी का एक सचमुच धनी मंगेतर है! अलबत्ता मां का यह कहना है कि 'वह निपट बुद्धू है।' और मां तो उसकी कैसे-कैसे मिज़ाजपुरसी करती है! मां कहती है: 'तुम्हारी बड़ी बहन ने उसको फंसाया है!' मां ने यह भी कहा: 'वेरा इतनी चतुर है कि वह अपनी बूढ़ी मां को भी मात दे सकती है!' और फिर: 'हम लोग उस मंगेतर की मां को उसके घर से निकाल बाहर करेंगे,'" और इन बातों के सिवा और भी बहुत कुछ।

एक-दूसरे के बारे में इस प्रकार की सूचनायें मिलने से, यह स्वाभाविक ही था कि दोनों युवजन आपस में मिलने को अनिच्छुक थे। इस समय तो हम केवल इतना ही जानते हैं कि वेरा की ओर से यह स्वाभाविक ही था। वह तो इस समय "असभ्य को सभ्य बनाने" अथवा "उस गंवार को शिष्टाचार सिखाने" की बात सोच भी नहीं सकती थी, क्योंकि उसके पास पहले ही पर्याप्त सिरदर्द मौजूद था। निर्द्वन्द्व छोड़ दिया जाना तो स्वर्ग ही था, वह तो वैसे ही बहुत सताई हुई और टूटी हुई थी। किसी तरह से ऐसी सुखद स्थिति में इस समय दुबकी-सी थी, जिससे टूटे हुए हाथ की पीड़ा कम हो जाती है और पसली में होनेवाली अनवरत पीड़ा कुछ रुक जाती है, कुछ भी हरकत करने से भयभीत, कहीं जोड़-जोड़ में दर्द फिर न कसक उठे। नये दोस्त और उस पर नौजवान दोस्त बनाने की उसमें ताक़त कहां?

हां, यह तो ठीक है, वेरा; पर वह युवक कैसा है? फ़ेद्या के विवरण के अनुसार वह निपट जंगली, ऐसा जंगली, जिसके दिमाग़ में किताबें ही किताबें और शरीर रचना विज्ञान के नमूने भरे हैं, कोई भी आत्मसम्मानी, डाक्टरी पढ़नेवाला विद्यार्थी जिनके बीच रहता है, जिनसे सांस लेता है और जिन्हें पूर्ण रूप से प्यार करता है। अथवा फ़ेद्या ने उसके बारे में ग़लत बयानी की?

2

जी नहीं, उसने ग़लत बयानी नहीं की थी। वास्तव में लोपुख़ोव के दिमाग़ में किताबें ही किताबें भरी थीं—लेकिन ये किताबें थीं किस प्रकार की यह हम किताबों के बारे में मार्या अलेक्सेयेव्ना के निम्न शोध से ही जान जायेंगे—और ऐसे शरीररचना विज्ञान के नमूने भरे थे, जिनकी पूर्ण बहुलता न होने पर प्रोफ़ेसर बन पाना आसान नहीं था, और लोपुख़ोव तो यही आस लगाये बैठा था। जैसा कि हम देखते हैं अपनी बहन के बारे में फ़ेद्या द्वारा दिये गये विवरण से लोपुख़ोव को हमारी नायिका के बारे में कोई बहुत सही जानकारी नहीं मिली, इसलिए फ़ेद्या ने अपने ट्यूटर के बारे में जो कुछ बताया था, उसमें दो-एक बातें और जोड़नी पड़ेंगी ताकि लोपुख़ोव के बारे में हमें कुछ अधिक पूर्ण जानकारी मिले।

वित्तीय दृष्टि से लोपुख़ोव उस अति विरल प्राइवेट छात्र अर्थात् सरकारी वज़ीफ़े से वंचित विद्यार्थी वर्ग का था, जो वास्तव में दुर्दिन को अपने से दूर रख सकता है। उनकी बहुसंख्या किस प्रकार गुज़ारा करती है, यह ईश्वर तो जानते हैं, लेकिन निरीह प्राणी की समझ के बाहर है। मगर हम अपनी कथा में पोषाहार की कमी से पीड़ित व्यक्ति का वर्णन नहीं करना चाहते अत: लोपुख़ोव के लिए इस अत्यन्त कठिन समय के बारे में संक्षेप में ही बतायेंगे।

ऐसी बात नहीं कि वह लम्बे अरसे तक इससे पीड़ित रहा हो—कोई तीन वर्ष, इससे कुछ कम ही। अकादमी पूर्व के वर्षों में खाद्य प्रचुर मात्रा में उपलब्ध रहा। उसके पिता, र्याज़ान के निवासी थे, लेकिन सामान्य नागरिक की स्थिति में कुछ अधिक ही सुखपूर्वक रहते थे, अर्थात् न सिर्फ़ रविवार के दिन मांस का शोरबा खाते थे, यहां तक कि चाय भी हर दिन पीते थे। तनिक-सी मितव्ययता से बेटे की पाठशाला का खर्च पूरा हो जाता था, यद्यपि यह बात अवश्य है पन्द्रह बरस की उम्र पर पहुंचते ही बेटे ने ट्यूशन आदि का काम करके मदद करना शुरू कर दिया था। पीटर्सबर्ग में विद्यार्थी को पढ़ा पाना बाप के बस की बात नहीं थी,

फिर भी विद्यार्थी को घर से पहले दो वर्षों में प्रत्येक वर्ष पैंतीस रूबल भेजे गये और इतनी ही धनराशि वह स्वयं वीबोर्ग इलाक़े के किसी थाने में नक़ल उतारने का पार्टटाइम काम करके कमा लेता था—बस, यही अवधि उसके लिए वास्तव में कठिन रही। इसके लिए वह स्वयं ही दोषी था। जान लीजिये, उसी की बेवक़ूफ़ी के कारण उसे छात्र-वृत्ति मिलते-मिलते रही, वह कोई झगड़ा कर बैठा। और उसे जैसे-तैसे गुज़र करने पर विवश होना पड़ा। तीसरे वर्ष में स्थिति सुधरने लगी, डिप्टी थानेदार ने कुछ समय के लिए उसे ट्यूटर रख लिया, फिर उसे दूसरे घरों में ट्यूशन का काम मिलने लगा। तो पिछले दो वर्षों में उसकी स्थिति काफ़ी सुधर गयी और वह एक साल पहले दो कमरे के मकान में पहुंच गया (इस स्थिति को तो समृद्धि ही कहना होगा), इसमें वह अपने जैसे ही सौभाग्यशाली किरसानोव के साथ रहने लगा। दोनों बहुत अच्छे मित्र बने। प्रत्येक ने जीवन की अरुणाई में ही सीख लिया कि अपना मार्ग कैसे, बिना किसी की मदद के, प्रशस्त किया जाय। वह बात उन अनेक समान बातों में से एक थी, जो दोनों में थीं। लेकिन समान बातें इतनी थीं कि उनको अलग-अलग देखने पर यही लगता था कि उनका चरित्र एक ही था। यदि आप उन्हें साथ-साथ देख पाते तभी आप यह समझ सकते थे कि हालांकि दोनों स्पष्टवादी और प्रयोजन-शक्ति के समान रूप से स्वामी हैं, पर दोनों में से लोपुख़ोव कुछ मितभाषी-संकोची था और किरसानोव अधिक उन्मुक्त हृदय। इस समय हमारे वर्णन का विषय केवल लोपुख़ोव है; किरसानोव की चर्चा अभी कुछ देर से होगी, तो भी लोपुख़ोव की अकेले चर्चा से भी वही प्रकट होगा, जो किरसानोव के और उन दोनों के बारे में उल्लेखनीय होगा। उदाहरण के लिए, इस समय लोपुख़ोव की सबसे बड़ी चिन्ता है कि पढ़ाई पूरी करने पर अपनी ज़िन्दगी कैसे व्यवस्थित की जाये। उसके और किरसानोव दोनों के लिए ही कुछ ही महीने का समय शेष है; इसके अलावा दोनों ने जो योजनायें बनायी हैं, वे भी तो एक ही जैसी हैं।

लोपुख़ोव को विश्वास था कि पीटर्सबर्ग के किसी सैनिक अस्पताल में उसे इन्टर्न डाक्टर का पद—सभी यह बड़े सौभाग्य की बात मानते थे—और निकट भविष्य में अकादमी में कोई विभाग मिल

जायेगा। उसका प्रैक्टिस करने का कोई इरादा नहीं था—विचित्र इच्छा थी और इसने गत दस वर्षों में, हमारे कुछ सर्वोत्तम विद्यार्थियों के मन में घर कर लिया था और एक के बाद दूसरा यही पहले से ही क़सम खाकर कहने लगता था कि स्नातक बनने के बाद जीविकोपार्जन का एकमात्र साधन यही होगा, लेकिन अन्य सहयोगी विज्ञानों, शरीररचना, रसायन और ऐसे ही अन्य विज्ञान के क्षेत्र में पहला अवसर मिलते ही डाक्टरी को पूर्ण रूप से छोड़ देने का संकल्प ले लेते थे। निस्सन्देह विचित्र, जबकि उन सबको यह मालूम है कि डाक्टरी प्रैक्टिस से तीस वर्ष की आयु तक ही ख्याति, पैंतीस वर्ष तक आजीवन आरामदेह रहन-सहन और पैंतालीस तक अपार सम्पदा सुनिश्चित है। लेकिन वे दूसरा ही दृष्टिकोण अपनाते हैं; उनका तर्क है कि चिकित्साविज्ञान इतनी बचकाना अवस्था में है कि जब तक हम वास्तविक डाक्टरों के आगमन के लिए आधार-भूमि तैयार न करें तब तक चिकित्सा करने का तो प्रश्न ही नहीं उठता। और इसलिए अपने प्रिय विज्ञान के नाम पर (चिकित्साविज्ञान के अत्यन्त कठोर आलोचक, उन्होंने अपना सर्वस्व इसके ध्येय के लिए समर्पित कर दिया है),—वे धन-दौलत अथवा आरामपूर्वक जीवन-यापन से मुंह मोड़ लेते हैं और अस्पतालों में टिककर ऐसे पर्यवेक्षण करते हैं, जिनके बारे में वे दावा करते हैं कि ये विज्ञान के लिए रुचिकर हैं, मेंढकों और लाशों को चीरते हैं, प्रतिवर्ष सैंकड़ों की संख्या में, ज़रा-सा भी मौक़ा मिलने पर रसायन की प्रयोगशालायें बना डालते हैं। इस उदात्त लक्ष्य का अनुसरण कितना स्थिर सिद्ध होगा, यह तो निस्सन्देह, प्रत्येक की घरेलू आवश्यकताओं पर निर्भर करेगा: अगर अपने परिवार की आवश्यकताओं के लिए यह नहीं चाहिये तो प्रैक्टिस को हाथ भी नहीं लगायेंगे और इस प्रकार दायमी अथवा आपेक्षिक निर्धनता के आगे घुटने टेक देंगे; और जिन स्थितियों में परिवार की हालत देखते हुए कोई विकल्प नहीं होगा उतने ही रोगियों की चिकित्सा का बोझ उठायेंगे, जितने की उनकी विशेष स्थिति को आवश्यकता होगी, दूसरे शब्दों में सीमित संख्या में, सचमुच रोगियों और चिकित्साविज्ञान की वर्तमान दयनीय अवस्था में, वास्तव में रोगमुक्त हो सकनेवाले व्यक्तियों तक सीमित संख्या में—संक्षेप में, ऐसे रोगियों की चिकित्सा से कोई लाभ नहीं। तो इसी कोटि में हम

लोपुख़ोव और किरसानोव को पाते हैं। उन्होंने अपना यह इरादा घोषित किया था कि अगले वर्ष अपना कोर्स समाप्त कर लेने के बाद वे बिना कोई देर लगाये एम० डी० की परीक्षा देंगे और इस बीच वे दोनों अपने शोध प्रबन्धों की तैयारी में जी-जान से जुट गये और इस प्रक्रिया में ढेरों मेंढकों का नाश कर रहे थे। दोनों ने ही स्नायु-प्रणाली में विशेषज्ञता प्राप्त करना तय किया था और सटीक रूप से कहें तो डिगरी के अपने-अपने प्रबन्धों के लिए उन्होंने सामग्री मिलकर एकत्र की थी।

और अब अन्तत: केवल लोपुख़ोव पर ही ध्यान केन्द्रित करें। समय था, जब उस बीते ज़माने में चाय का और बहुधा एक जोड़ी बूटों का उसके लिए अभाव था तो पीने को ही उसने महत्त्वपूर्ण मान लिया था—पीनेवाले की मनोवृति की दृष्टि से पीने के लिए अत्यन्त अनुकूल परिस्थितियां थीं, उसके लिए साधनों का तो ज़िक्र ही क्या क्योंकि शराब खाने अथवा जूतों से सस्ती थी। मगर शराबख़ोरी तो ग़रीबी की वजह से उत्पन्न उदासी से बचानेवाला साधन ही है, और कुछ नहीं। पिछले कुछ समय से लोपुख़ोव से अधिक कठोर परहेज़गार और कौन मिलता। और परहेज़ केवल शराब तक ही सीमित नहीं था। पहले तो उसकी ज़िन्दगी प्रेम-लीला से परिपूर्ण थी। उदाहरण के लिए एक बार वह नगर में आयी नृत्यांगना पर लट्टू हो गया और इतना बेबस हो गया कि किसी न किसी प्रकार उस नृत्यांगना के दरवाज़े पर जाकर दस्तक दे ही दी। "फ़रमाइये?" दरबान ने पूछा। "मेरे पास फ़लां काउंट का ख़त है।" और बिना किसी ख़ास ग़ौर उसकी विद्यार्थी की वर्दी को मुंशी अथवा असाधारण अर्दली की पोशाक समझ लिया गया। "लाओ दो मुझे, क्या तुम इसका जवाब लेने के लिए रुकोगे?"—"काउंट का हुक्म यही है।" आश्चर्यचकित-सा दरबान लौटा। "तुम्हें अन्दर बुलाया है।"—"अच्छा, तो आप हैं! कितनी बार ऐसे ज़ोर से 'शाबाश' चिल्लाते थे कि मुझे अपने ड्रैसिंग-रूम में सुनायी देता था! मेरी शान में गुस्ताख़ी करने के लिए आप पुलिस-चौकी कितनी बार ले जाये गये?"—"दो बार!"—"बस केवल दो बार? और आज कैसे आना हुआ?"—"दीदार करना चाहता था आपका।"—"बहुत ख़ूब, और अब जब आपने दीदार कर लिया तो?"—"नहीं मालूम, आप जो

कहें करूं।"—"जी हां, मुझे तो पता है, मुझे क्या करना है। मैं तो नाश्ता करना चाहती हूं। देख ही रहे हैं, मेज़ सजी हुई है। आइये, आप भी बैठिये।" एक और कुर्सी मेज़ के पास रख दी गयी। नृत्यांगना उसे देखकर हंसी और वह अपने पर हंसा। वह युवक था और आकर्षक था, मूर्ख भी नहीं था, क्यों न थोड़ा लुत्फ़ उठाया जाय, बिल्कुल नया अनुभव था न? और इसलिए उस नृत्यांगना ने लुत्फ़ लिया, कोई दो हफ़्ते तक और फिर धता बता दी: "भागो!"—"मैं तो ख़ुद ही काफ़ी पहले चला गया होता अगर मैंने यह न सोचा होता कि इससे आपकी शान में बट्टा लगेगा।"—"इसका मतलब हम लोग दोस्त की तरह जुदा हो रहे हैं?" दोनों आख़िरी बार गले मिले। कितना अच्छा था वह सब लेकिन यह तो काफ़ी पहले की, तीन बरस पहले की बात है और अब तो दो बरस हो चुके हैं कि वह ऐसी सब शैतानियां ख़त्म कर चुका है।

अपने सहपाठियो, दो या तीन प्रोफ़ेसरों के सिवा, जो उसे कर्त्तव्यनिष्ठ वैज्ञानिक समझते थे, लोपुख़ोव केवल अपने शिष्यों के परिवारों में ही जाता-आता था। और यहां पर भी वह बड़ी दृढ़ता के साथ अलग-थलग ही रहता था। घनिष्ठता से भयाक्रान्त होने के कारण वह अपने तरुण शिष्यों के सिवा और सबके प्रति रूखा और भावशून्य हो गया था।

3

हां, तो लोपुख़ोव ने कमरे में प्रवेश किया और देखा कि परिवार चाय पीने के लिए बैठा है। वेरा इस समूह में है। चायवाले समूह की भी दृष्टि उठी, वेरा की भी, उन्होंने देखा कि ट्यूटर सामने है।

मार्या अलेक्सेयेव्ना ने आमन्त्रित किया: "आइये, बैठिये। मत्र्योना, एक और प्याला लाना।"

"अगर आप प्याला मेरे लिए मंगवा रही हैं, तो न मंगवायें, शुक्रिया। मैं चाय नहीं पिऊंगा।"

"मत्र्योना, प्याला मत ला!" (कितना शिष्टाचारपूर्ण है यह!) "पी लीजिये न?"

उसने अपनी मेज़बान की ओर और यदि जानबूझकर नहीं तो संयोग से ही वेरा की ओर भी दृष्टिपात किया, या शायद जानबूझकर ही? क्या उसने ऐसा देखा कि वेरा ने अपने कंधों से सूक्ष्म-सी हरकत की। "अवश्य ही उसने मुझे लजाते देखा।"

"जी नहीं, शुक्रिया, मैं अपने घर के अलावा और कहीं भी चाय नहीं पीता।"

मेज़ के कोने से निःशब्द निर्णय हुआ: "पुनर्विचार करने पर लगता है, इतना जंगली तो नहीं है, यदि वह अदब-आदाब इतनी अच्छी तरह निभा सकता है।" मेज़ के दूसरे कोने पर ऐसा निष्कर्ष निकाला जाता है: "अपनी मां के फूहड़पन पर बिगड़ैल छोकरी द्वारा लज्जालु हो उठना, हरगिज़ बुरा नहीं।"

फ़ेद्या ने जल्द ही अपनी चाय पी ली और पढ़ने के लिए तैयार हो गया। इस प्रकार इस पहले आमने-सामने का मुख्य प्रभाव यह हुआ कि मार्या अलेक्सेयेव्ना ने ट्यूटर को अच्छा समझा, यह देखकर कि पढ़ाई के लिए शाम के खाने के बाद का समय तय करने से उसकी चाय-चीनी का खर्च बढ़ेगा नहीं।

दो दिन बाद ट्यूटर फिर उस समय पहुंचा, जब परिवार चाय-पान कर रहा था और जब एक बार फिर चाय पीने का निमन्त्रण अस्वीकार कर दिया, तो मार्या अलेक्सेयेव्ना की रही-सही आशंका भी बिल्कुल मिट गयी। और लोपुखोव ने अपनी मेज़बान के साथ मेज़ पर बिल्कुल नये चेहरे को देखकर, यानी फ़ौजी अफ़सर को, और यह देखकर कि वेरा की मां किस तरह उसकी खातिरदारी कर रही थी, अपने आपसे कहा: "ओह, तो यह है मंगेतर!"

और मंगेतर ने अधिकारी और सम्पत्तिशाली व्यक्ति के रूप में यह अनिवार्य समझा कि वह ट्यूटर पर दृष्टिपात करे, साधारण नहीं, बल्कि जैसा उच्च समाज में किया जाता है, सिर से पैर तक, काफ़ी लापरवाह और ठंडा। लेकिन, जैसे ही उसने यह जांच-पड़ताल की नज़र डालनी शुरू की, उसे लगा कि ट्यूटर ने भी वही भंगिमा

अपनायी, बल्कि बुरी बात तो यह रही कि उसकी आंखों में तमाचे जैसी तेज़ी थी, इतनी तीव्रता थी कि शिकार ने अपनी पड़ताल समाप्त की और बोला:

"मैं समझता हूं श्रीमान लोपुख़ोव, आपने काफ़ी कठिन विषय अपने लिए चुन लिया है, मेरा मतलब डाक्टरी से है।"

बिना पलक झपके उसने उत्तर दिया: "हां, कठिन विषय तो है।"

मंगेतर का बायां हाथ, बिना किसी प्रयोजन के यूं ही अपने कोट के दूसरे और तीसरे बटनों को टटोलने लगा; कुछ और नहीं सूझा, तो अपने प्याले की चाय गटक ली और मेज़बान से दूसरे प्याले की फ़रमाइश कर दी।

"अगर मैं ग़लती नहीं करता, तो आपकी वर्दी किसी रेजिमेंट की है।"

"जी हां।"

"आप काफ़ी लम्बे अरसे से हैं उस रेजिमेंट में?"

"नौ बरस से।"

"तो आप सीधे भरती हुए?"

"बिल्कुल सीधे।"

"आपकी अपनी कोई कम्पनी अभी है कि नहीं?"

"अभी तो नहीं।" (यह तो मुझसे ऐसे खोद-खोद कर सवाल पूछ रहा है मानो मैं उसका नया अरदली होऊं!)

"कब तक आशा करते हैं आप ऐसा होने की?"

"फ़िलहाल तो नहीं।"

"हूं।" ट्यूटर के लिए इतना पर्याप्त था; उसने "अरदली" की आंखों पर अन्तिम बार पैनी नज़र डालकर अपनी कड़ी परीक्षा समाप्त कर दी।

वेरा कसमसायी: "पुनर्विचार करने पर, पुनर्विचार करने पर, लेकिन है क्या मेरा पुनर्विचार?" आख़िर उसे विचार मिल ही गया। "पुनर्विचार करने पर लगता है कि यह सेर्ज की तरह, वही जो प्यारी जूली के साथ आया था, उसकी तरह व्यवहार करता है। नहीं, वह जंगली नहीं है। तो फिर वह सुन्दर युवतियों के बारे

में ऐसी विचित्र बातें क्यों कहता है, जो केवल मूर्खों को अच्छी लगेंगी? और इसके अलावा, इसके अलावा... इसके अलावा क्या?" आ गया दिमाग़ में। "इसके अलावा वह मेरे बारे में कोई बात क्यों नहीं सुनना चाहता, क्यों कहा उसने कि कोई दिलचस्पी नहीं है उसे?"

वेरा ने अभी अपना दूसरा प्याला ख़त्म ही किया था कि मार्या अलेक्सेयेव्ना ने कहा: "बिटिया वेरा, तुम मेरे लिए और श्रीमान स्तोरेश्निकोव के लिए सुर छेड़ो न।"

"अच्छा, ठीक है।"

"आप कोई भी गीत गा दें, वेरा पावलोव्ना।" श्रीमान स्तोरेश्निकोव ने भी उसकी ख़ुशामद की।

"अच्छा, ठीक है।"

ट्यूटर ने सोचा: "यह 'अच्छा, ठीक है' तो इस ढंग से कहा गया, मानो कहा जा रहा हो 'तुम्हारी बकबक से तो कुछ भी बेहतर'।" निश्चय ही लोपुख़ोव जिन पांच मिनटों तक वहां बैठा था, उसने ख़ुद एक बार भी युवती की ओर दृष्टिपात नहीं किया था, तिस पर भी उसने यह भांप लिया था कि युवती ने अपने मंगेतर पर एक बार भी दृष्टि नहीं डाली थी, बस केवल उसे छोड़कर, जो उसने अन्यमनस्क होकर अपने उत्तर देते समय डाली थी। और वह दृष्टि भी अत्यन्त भावशून्य थी, बिल्कुल वैसी ही कठोर और शत्रुतापूर्ण जैसी कि वह अपने माता-पिता के लिए आरक्षित रखती थी। तो इसका मतलब यह हुआ कि फ़ेद्या जो चबर-चबर करता है, बात उससे कुछ अलग ही है। और फिर, ऐसी बात भी नहीं कि जितना घमण्डी और भावशून्य उसे बताया जाता है वह वैसी हो, कि वह समाज में अपना प्रवेश बड़े वैभव और ठसक के साथ करना चाहती है और यदि जैसा कि वह चाहती है वैसा विलक्षण वर उसे नहीं मिला, वह मंगेतर का तिरस्कार करती है, पर उसे स्वीकार करती है क्योंकि वह उसके लक्ष्य की पूर्ति में उपलब्ध एकमात्र सहायक एवं उपयुक्त साधन है। हूं ऽऽ। मगर इस सब में कोई कुतूहल की बात है।"

"फ़ेद्या, अब तुम खिसको यहां से।"

"क्यों भगा रही हैं आप बच्चे को, मार्या अलेक्सेयेव्ना? अगर कुमारी वेरा को कोई एतराज़ न हो तो, मैं भी संगीत सुनना चाहूंगा।"

वेरा के हाथ में जो पहली संगीत-पुस्तक आयी उसने उठा ली और

8—1127

बिना दृष्टि डाले ही मुखपृष्ठ पलटा, और जो पृष्ठ सामने खुला उसी को सामने रखकर, बिना किसी उत्साह के बजाना शुरू कर दिया—जल्दी से जल्दी फ़रमाइश पूरी कर देने के लिए कोई भी चीज़ काफ़ी थी। लेकिन यह कोई भी चीज़ सचमुच अच्छी निकली, यह काफ़ी अच्छे ऑपेरा का अंश थी और उसकी उंगलियां भी प्यानो पर उसी ढंग से थिरकने लगीं। और अंश समाप्त होने पर उसने उठने की चेष्टा की।

"लेकिन वेरा पावलोव्ना, आपने तो गाने का वादा किया था। और यदि अनुमति दें तो कहूंगा कि आप 'रिगोलेतो' ऑपेरा का गीत गायें।" (उस शीत काल में 'La donna è mobile'* बहुत ही लोकप्रिय था।)

"क्यों नहीं।" उसने गीत गाया, खड़ी हुई और कमरे से बाहर निकल गयी।

"नहीं, वह निष्ठुर और स्वार्थी युवती नहीं है। कुतूहल की बात है यह।"

"अच्छा है न?" स्तोरेश्निकोव ने ट्यूटर की ओर मुड़कर कहा, लेकिन अब कोई ख़ास अन्दाज़ अथवा तौलने जैसी बात नहीं थी—किसी भी व्यक्ति को जो तुम्हारे ही विरुद्ध किसी मातहत से पूछ-ताछ कर सकता है अपने विरुद्ध कर लेने की क्या आवश्यकता है, बेहतर यही है कि सीधी-सीधी बात करो और किसी प्रकार की ग़लतफ़हमी हो गयी हो तो उसे दूर कर दो।

"बहुत ही अच्छा।"

"तो आप भी संगीत के बारे में कुछ जानते हैं?"

"हां, कुछ-कुछ।"

"क्या आप भी संगीतज्ञ हैं?"

"कुछ हद तक।"

मार्या अलेक्सेयेव्ना यह सब सुन रही थी, पूछ ही तो बैठी:

"आप क्या बजाते हैं, श्रीमान लोपुख़ोव?"

"प्यानो।"

"कष्ट करेंगे कुछ ताकि हम भी आपकी कला का आनन्द ले सकें?"

"ख़ुशी से।"

---

* औरत तो बदल जाती है। (इटालियन)

उसने प्यानो बजाया। उत्कृष्टता से तो नहीं, लेकिन अच्छी तरह से, काफ़ी अच्छी तरह से।

पढ़ाई समाप्त होते-होते मार्या अलेक्सेयेव्ना ने आकर बताया कि अगली सांझ बेटी के जन्मदिवस के उपलक्ष्य में वे छोटी-सी पार्टी कर रहे हैं और क्या ट्यूटर महोदय आने का कष्ट करेंगे?

स्पष्ट था कि पुरुषों की कमी थी—सदैव ही रहती है, लेकिन छोड़िये उसे, युवती को निकट से देखने का अवसर तो मिलेगा, जो निश्चय ही कुतूहल के आवरण में लिपटी थी। "आपकी बड़ी कृपा, मैं आऊंगा।" लेकिन वह ग़लती पर था: मार्या अलेक्सेयेव्ना के मंसूबे नृत्य में भागीदारों से कहीं अधिक दूर की बात सोचने में लगे थे।

प्यारे पाठको, इसमें कोई सन्देह नहीं कि आप यह आशा करेंगे कि इस पार्टी में वेरा और लोपुख़ोव के बीच की ग़लतफ़हमी साफ़ हो जायेगी और इसका अन्त दोनों में प्रेम उत्पन्न होने से होगा? स्वाभाविक ही है।

4

मार्या अलेक्सेयेव्ना जन्मदिवस को बड़ी धूमधाम का अवसर बनाना चाहती थी, लेकिन वेरा ने उससे ऐसा न करने का आग्रह किया; भावी वर को तड़क-भड़क दिखाना उसका इरादा था और बेटी के लिए दु:खदायक अग्निपरीक्षा। अन्त में उन दोनों में यह सहमति हुई कि पार्टी में आमंत्रितों की संख्या कम से कम रखी जाय, बस अपने निकटतम मित्रों को ही बुलाया जाय। रोज़ाल्स्की के कई साथियों (जो उससे पद में बड़े थे), मार्या अलेक्सेयेव्ना की दो अंतरंग सहेलियों और तीन युवतियों को जो वेरा की अधिक घनिष्ठ सहेलियां थीं आमंत्रित किया गया था।

तेज़ नज़र डालने पर ही लोपुख़ोव को पता चल गया कि पुरुषों की कमी नहीं थी: प्रत्येक युवती अपने ही मंगेतर से, पक्के अथवा कच्चे से, जैसा भी उचित-उपयुक्त हो घिरी हुई थी। यह तो वह समझ गया कि नृत्य के लिए भागीदारों की तो वहां दरकार नहीं थी। फिर क्या बात थी? एक क्षण विचारने से उसे स्मरण हो आया कि प्यानो पर कला-प्रदर्शन की उसकी परीक्षा के बाद ही उसे निमंत्रण मिला था। तो उसे प्यानोवादक का

पारिश्रमिक बचाने के लिए दावत दी गयी है। उसने सोचा: "अच्छी बात है, लेकिन मार्या अलेक्सेयेव्ना, आगे-आगे देखिये होता है क्या।" और वह उसके पति की ओर बढ़ गया।

"श्रीमान रोज़ाल्स्की, ताश की बाज़ी के बारे में आपकी क्या राय है? बड़े-बूढ़ों का भी तो कुछ मनोरंजन चाहिये?"

"तुम्हारा दांव क्या है?"

"कुछ भी और सभी।"

बाज़ी बंट गयी तुरन्त और लोपुख़ोव खेल में रम गया। वीबोर्ग इलाक़े में स्थित अकादमी द्यूत-क्रीड़ा के प्रतिष्ठित संस्थानों में है और इसके छात्रावास के कुछ कमरों में छत्तीस घंटों की अनवरत बाज़ियां कोई अचरज की बात नहीं। अलबत्ता, यह सच है कि दांव उतने ऊंचे नहीं होते, जितने कि इंगलिश क्लब में लगते हैं। इसके विपरीत यहां खिलाड़ी अप्रतिम दक्षता प्रदर्शित करते हैं। और लोपुख़ोव अपने पुराने अथवा निराशोन्मत्त दिनों में बड़ा ही उत्कट खिलाड़ी था।

"क्या करें हम, भद्र महिलाओ! बारी-बारी से प्यानो बजाना तो अच्छी बात है, लेकिन एक बार में सात ही होते हैं हम, नृत्य के लिए हमेशा ही एक भद्र महिला अथवा भद्र पुरुष की कमी रह जाती है।"

पहली बाजी ख़त्म होनेवाली थी कि युवतियों में से एक अत्यन्त ज़िन्दादिल युवती ने लोपुख़ोव से इठलाकर कहा:

"श्रीमान लोपुख़ोव, आपको नृत्य करना ही चाहिये!"

"एक शर्त पर।" वह उठा और हल्का-सा झुका।

"वह क्या?"

"आपकी पहली नृत्य-माला में मैं रहूं।"

"हे भगवान, पहली तो लग हो चुकी है, लेकिन दूसरी अभी बाक़ी है।"

वह एक क्षण के लिए फिर झुका। दूसरे दो सज्जन बारी-बारी से प्यानो बजा रहे थे। लोपुख़ोव ने वेरा से तीसरी नृत्य-माला के लिए अनुमति मांगी; पहला नृत्य वेरा स्तोरेश्निकोव के साथ किया था, और दूसरे के लिए वह चंचल तरुणी से वादा कर चुका था।

इस समय वेरा का जो रूप उसने देखा, उससे यह निश्चित रूप से पुष्ट हो गया कि वह उस युवती को कठोर जीव समझ कर ग़लती पर था, जो ऐसे व्यक्ति से विवाह करने पर आमादा थी, जिसे वह तिरस्कारपूर्ण दृष्टि

से देखती है। यह तो सामान्य युवती है, जो ऐसे हंस और नृत्य कर सकती है मानो उसका मन पूरी तरह उन्हीं में हो; जी हां, प्रिय पाठक, वेरा के लिए लज्जा की बात है लेकिन है सही—अपनी अन्य बहनों की तरह उसे भी नृत्य करना अच्छा लगता है। वह पार्टी के क़तई ख़िलाफ़ थी, लेकिन अब पार्टी तो चल ही रही थी, छोटी-सी थी और जिसका उसे इतना डर न था। वह सब तड़क-भड़क नहीं थी; उसे अचरज हुआ कि उसका दु:ख कहां तिरोहित हो गया, क्योंकि दिल इस उम्र में कहां पसन्द करता है दु:ख को, वह तो हंसी-ख़ुशी में डूबकर उस बात को भुलाने के तनिक-से भी अवसर को हाथ से नहीं जाने देता, भले ही यह विस्मृति थोड़ी ही देर के लिए क्यों न हो। लोपुख़ोव के मन में अब सहानुभूति की भावना उत्पन्न हुई, लेकिन अभी तो उसे और भी बहुत कुछ जानना शेष था।

उसकी स्थिति की विचित्रता से लोपुख़ोव की दिलचस्पी और भी जाग गयी।

वेरा ने कहा: "मैंने सोचा भी न था कि कभी आपको नृत्य करते देखूंगी।"

"क्यों नहीं? क्या नृत्य करना बहुत कठिन है?"

"बिल्कुल भी नहीं। नियमत: तो नहीं। लेकिन आपके मामले में यह कुछ अजब-सा लगता है।"

"क्यों भला?"

"क्योंकि मैं आपका भेद जानती हूं—अर्थात् फ़ेद्या के अनुसार। आप स्त्रियों का तिरस्कार करते हैं।"

"फ़ेद्या मेरी बात को ठीक से नहीं समझा। मैं स्त्रियों का तिरस्कार नहीं करता, मैं तो उनसे कतराता हूं। आप जानती हैं क्यों? मेरी जो मंगेतर है, वह इतनी ईर्ष्यालु है कि उसने उनका अर्थात् स्त्रियों का रहस्य बताया ताकि मैं ऐसा करूं।"

"आपकी मंगेतर है?"

"हां।"

"कैसी आकस्मिक बात है! अभी आप विद्यार्थी हैं और आपकी मंगनी भी हो चुकी! क्या वह सुन्दर है? क्या आप उसे प्रेम करते हैं?"

"वह बहुत सुन्दर है और मैं उसे बेहद प्रेम करता हूं।"

"स्वर्णकेशी अथवा श्यामला?"

"यह नहीं बता सकता। यह रहस्य की बात है।"

"अच्छा ऐसी बात है, तो फिर न बताइये। लेकिन उसने क्या रहस्य बताया है कि आप स्त्रियों से दूर रह सकते हैं?"

"जब उसे पता चला कि मैं उदासी पसन्द नहीं करता तो उसने मुझे कुछ बताया जिसके कारण मैं किसी भी स्त्री को देखने से पहले उदास हुए बिना नहीं रह सकता। इसलिए मैं महिला वर्ग से ही दूर रहता हूं।"

"आप किसी भी स्त्री को इस दृष्टि से भी तो देख सकते हैं, जिससे जुगुप्सा न हो? आप शिष्टाचार के मामले में भी कोरे ही दिखते हैं, है न?"

"इसके लिए और कोई दूसरा शब्द नहीं। करुणा—यह तो उदासी ही होती है।"

"तो हम क्या इतने अधिक करुणा के पात्र हैं?"

"क्या आप स्त्री नहीं? बस मैं केवल आपकी सबसे मनोगत बात कह दूं तो आप तत्काल मान जायेंगी। प्रत्येक स्त्री यही तो चाहती है।"

"तो बताइये न।"

"आप सभी, सभी स्त्रियां पुरुष होने के लिए सब कुछ दे सकती हैं। आज तक मुझे कोई स्त्री नहीं मिली, जो ऐसा करने के लिए तैयार न हो, यदि वह अपनी आत्मा को टटोलेगी, तो स्वीकार लेगी। लेकिन अधिकांश इस आत्मावलोकन को पूर्ण तिलांजलि दे सकती हैं: और यह बात पहली ही गड़बड़ में इस रूप में प्रकट हो जाती है, 'हम बेचारी महिलाओं पर दया करो' अथवा 'पुरुष! वे महिलाओं से बिल्कुल ही भिन्न होते हैं!' अथवा यह स्पष्ट और साधारण-सा कथन 'काश मैं पुरुष का जन्म लेकर संसार में आती!'"

वेरा मुस्करायी; सच ही बात तो थी, किसी भी स्त्री के बारे में ऐसा कहा जा सकता है।

"इसीलिए, आप समझ रही हैं न, स्त्रियां इतनी दयनीय हैं कि यदि प्रत्येक का चिरवांछित सपना सच भी हो जाय, तो इस धरती पर एक भी स्त्री नहीं बचेगी।"

"हूं, हो सकता है, आपकी बात में कुछ दम है।"

"और इसी प्रकार यदि एक-एक व्यक्ति का चिरवांछित सपना सच हो जाय तो एक भी निर्धन नहीं बचेगा। इसलिए आप इससे सहमत होंगी कि स्त्रियों पर इतनी कुछ दया दिखाने की आवश्यकता तो नहीं है। जैसे कि किसी भी निर्धन पर, लेकिन निर्धनता देखकर किसे सुख मिलता है? बस उतना ही तो जितना कि जब से मैंने स्त्रियों का रहस्य जाना तबसे मुझे

महिलाओं के सान्निध्य से। मेरी ईर्ष्यालु प्रेमिका ने मुझ पर यह रहस्य उसी दिन प्रकट कर दिया, जिस दिन मैंने उसको अपना वचन दिया। तब तक मैं स्त्रियों का बहुत भक्त था लेकिन उसके बाद मैं नया इंसान बन गया। मेरे वचन ने मुझे चंगा कर दिया।"

"आपकी मंगेतर बुद्धिमती और पुण्यात्मा है। यह सच है कि हम स्त्रियां दया की पात्र हैं, हम हैं भी कितनी दुःखी! लेकिन वह युवती कौन है? आप उसको इतना रहस्यमय क्यों बना रहे हैं?"

"यह मेरा रहस्य है, फ़ेद्या भी इसमें आपकी मदद नहीं कर सकता। मैं ग़रीबों की इस इच्छा में पूरी तरह से उनके साथ हूं कि ग़रीबी का दुनिया से नामोनिशान मिट जाय, देर-सबेर हम उनकी यह इच्छा पूरी भी कर सकेंगे, लेकिन..."

"ग़रीबी का ख़ात्मा? मैंने भी हमेशा ही ऐसा सोचा है कि ऐसा होगा, लेकिन कैसे, यह मैं कभी नहीं समझ पायी—आप बताइये कैसे होगा?"

"यह मैं आपको नहीं बता सकता, केवल मेरी मंगेतर ही बता सकती है। यहां उसकी अनुपस्थिति में केवल इतना मैं आपको बता सकता हूं—वह इस पर काम कर रही है और वह बलवान है, किसी भी जीवित मनुष्य से अधिक बलशाली। लेकिन हम तो साधारण स्त्रियों के बारे में बात कर रहे हैं, उसके बारे में नहीं। और क्योंकि मैं निर्धन लोगों की निर्धनता समाप्ति की कामना का समर्थन केवल इसीलिए करता हूं कि मेरी वधू ऐसा कर सकती है और करेगी भी, फिर भी मैं स्त्रियों की चिरवांछित मनोकामना की पूर्ति का समर्थन नहीं कर सकता क्योंकि वैसा हो नहीं सकता, और जो कभी हो नहीं सकता उसमें कोई हाथ बंटाना भी नहीं चाहता मैं। अलबत्ता, मैं यह चाहूंगा कि महिलायें मेरी मंगेतर से मेलजोल करें। वह उनकी ज़रूरतों की परवाह करेगी, जैसे वह अन्य बहुतों की, वास्तव में प्रत्येक की करती है। यदि वे उसी भली प्रकार जान-समझ लें तो फिर क्यों उन पर दया दिखाऊं और वे भी यह सब कहना छोड़ देंगी 'काश कि मैं पुरुष के रूप में उत्पन्न हुई होती!' यदि वे उसे अच्छी तरह जान लेंगी, तो वे अपने भाइयों से किसी भी तरह से हीन नहीं रहेंगी।"

"श्रीमान लोपुख़ोव, क्यों न हम लोग एक और नृत्य करें? अवश्य ही!"

"वाह, वेरा पावलोव्ना, वाह!" उसने वेरा का हाथ दबाया,

कोमलता से, इतनी शालीनता से मानो वह उसकी सहेली हो और वेरा उसका साथी हो। "कब खाली हैं आप?"

"अन्तिम दौर में।"

"ठीक है।"

इस नृत्य-दौर के दौरान, मार्या अलेक्सेयेव्ना उनके पास से दो या तीन बार तो निकली ही होगी। क्या सोचा होगा उसने यदि वह इन दोनों के बीच हो रही बातचीत का कुछ अंश सुन पायी होगी तो? हम, जिन्होंने यह वार्तालाप आदि से अन्त तक सुना है, इसे अभी भी नृत्य के समय होनेवाली बातचीत की दृष्टि से विचित्र ही समझते हैं।

नृत्य के अन्तिम दौर का समय आया।

लोपुखोव ने फिर संवाद आरंभ किया: "हमने अब तक केवल मेरे बारे में बातचीत की, जो मेरे लिए बड़ी अभद्र बात थी, मैं केवल नाचीज़ के बारें में ही बकता-झकता रहा। लेकिन अब मैं शिष्टाचार का स्मरण करके कहूंगा, अब हम आपके बारे में बात करें। आप जानें, आपके बारे में मेरे मन में जो पहली-पहली भावनायें जागृत हुईं, वे आपने मेरे बारे में जो भी सोचा हो, उससे भी बदतर थीं। लेकिन अब... हुं ऽऽ खैर, वह तो फिर भी कहा-सुना जा सकता है। अलबत्ता एक बात मेरे पल्ले नहीं पड़ती। शायद आप मदद कर सकें मेरी। आपका विवाह कितनी जल्द हो रहा है?"

"कभी नहीं हो रहा।"

"यह बात मैं तभी समझ गया था, जब तीन घंटे पहले मैंने ताश की बाज़ी छोड़ी थी। लेकिन फिर उसे आपका वर क्यों बताया जाता है?"

"क्यों बताया जाता है?.. सचमुच क्यों! कुछ तो मैं इस के बारे में बता नहीं सकती हूं क्योंकि वह बहुत दुःखदायी है। लेकिन मैं इतना तो आपको बता ही सकती हूं: मुझे उसके प्रति करुणा होती है। वह मुझे इतना प्यार करता है। आप कहेंगे कि मैं इस विवाह-कारोबार के बारे में क्या कुछ सोचती हूं उसे दो-टूक शब्दों में बता देना चाहिये। मैं बता चुकी हूं। लेकिन वह यही अनुरोध करता रहता है 'ऐसा मत कहो, मैं यह सहन नहीं कर सकता, एक भी शब्द नहीं'।"

"यह तो हुआ दूसरा कारण। और जो कारण आप मुझे स्वयं नहीं बतला सकतीं वह है यह: आप के साथ इस घर में घोर दुर्व्यवहार होता है।"

"नहीं, अब ऐसी बात नहीं। उन्होंने अब मुझे जली-कटी सुनाना बन्द कर दिया है क्योंकि वे प्रतीक्षारत हैं: अब तो मुझे एकाकी छोड़ दिया गया है।"

"लेकिन ऐसा अधिक देर तक तो चल नहीं सकता। और अब वे फिर पुराना राग अलापना शुरू कर देंगे, तब क्या करेंगी?"

"कुछ नहीं। बहुत विचार किया है इस पर मैंने और मैंने अपना मन पक्का कर लिया है। मैं घर छोड़कर चली जाऊंगी। बस स्टेज पर। कैसा वांछनीय जीवन होगा! स्वाधीनता! परम स्वतंत्रता!"

"और तालियां की गड़गड़ाहट और शोहरत भी तो!"

"हां वह भी। लेकिन मुख्य बात तो स्वाधीनता ही है! जो मन आवे, सो करो, मनपसन्द ज़िन्दगी जियो, किसी से भी कुछ न फ़रमाइश, न किसी की चाह, किसी पुरुष की तरफ़ भी निगाह नहीं! कितना चाहती हूं मैं इस तरह जीना!"

"सचमुच, बहुत ही आकर्षक जीवन! लेकिन एक प्रार्थना—मैं यह पता लगाऊंगा कि कैसे यह होता है, किससे मिला जाय, ठीक है?"

"बड़ी अहसानमंद रहूंगी आपकी!" वेरा ने उससे हाथ मिलाया। "बराय मेहरबानी, देर न लगायें इसमें। मैं इस वीभत्स, अपमानजनक और असहनीय स्थिति से किसी भी तरह छुटकारा पाना चाहती हूं! मैं अपने से कह सकती हूं कि यह सब ठीक है, मैं ऐसा कह सकती हूं—लेकिन क्या, बात सचमुच ऐसी ही है? मैं देख रही हूं कि मेरे नाम से क्या कुछ हो रहा है। मुझे अच्छी तरह मालूम है कि वे मेरे बारे में क्या सोचते हैं, जो भी यहां आज रात आये हैं, उनमें से प्रत्येक गुप्त रूप से यह सोचता है कि उच्च समाज की ज़िंदगी, प्रेमी के नाम के वैभव और ऐसे पति के पीछे पड़ी है, जिसे वह अंगूठे के नीचे, मन्द और असंदेही रख सके। लेकिन मैं ऐसा जीवन नहीं चाहती, नहीं चाहती!" सहसा वह विषाद-ग्रस्त हो गयी। "इस पर हंसिये मत कि मैं यह कहती हूं कि मुझे उस पर रहम आता है—बात सचमुच ऐसी ही है। वह इतना अधिक प्यार करता है!"

"प्यार? क्या वह आपकी ओर ऐसे देखता है, जैसे मैं देखता हूं? जैसे मैं इस समय देख रहा हूं?"

"इतनी उन्मुक्तता से, इतने सहज? नहीं, आपकी चितवन में कोई अपमान की भावना नहीं है।"

"तो समझ लो वेरा पावलोव्ना, ऐसा इसीलिए है क्योंकि ... ओह, भूल जाइये। मैं तो उसके देखने के बारे में पूछ रहा हूं।"

वेरा सलज्ज मौन रही।

"समझीं आप—वह आपसे प्रेम नहीं करता। यह प्रेम नहीं।"

वेरा हकलाते-हकलाते "लेकिन..." कहकर रुक गयी।

"आप यही तो कहनेवाली थीं न, कि अगर प्यार नहीं तो क्या है? चलिये क्यों इस बात के पीछे पड़ें इस समय। लेकिन यह प्रेम नहीं है, इसे आप भी स्वीकार करेंगी। आप सबसे अधिक प्यार किसे करती हैं? उस अर्थ में नहीं, मेरा तात्पर्य परिवार के लोगों से है, मित्रों से है।"

"मेरा ख़्याल है किसी ख़ास को नहीं। विशेष रूप से किसी को नहीं। लेकिन मैं अभी उस दिन अत्यन्त असाधारण महिला से मिली। उसने अपने बारे में न जाने क्या-क्या घृणास्पद बातें बतायीं और यह भी कहा कि 'फिर कभी उससे मत मिलना'—बस एक अपवाद उसने किया, अगर कभी कोई आपात स्थिति उत्पन्न हो जाय, ऐसी स्थिति कि उसके पास जाने या मरने के सिवा और कुछ नहीं हो, उसने कहा था तभी मेरे पास आना, तभी वह मुझसे मिलेगी। उस स्त्री ने मेरा हृदय जीत लिया।"

"क्या आप उसको अपनी ओर से किसी प्रकार का कष्ट पहुंचा सकती हैं अथवा उसे ख़तरे में डाल सकती हैं?"

वेरा मुस्करायी। "निश्चय ही, इसका तो प्रश्न नहीं उठता।"

"ज़रूरी तो नहीं। मानो आप उससे कुछ ऐसा करने के लिए कहें जो आपके लिए परमावश्यक है और वह जवाब दे कि ऐसा करने से उसे बहुत चोट पहुंचेगी, तो क्या आप उससे दोबारा वैसा करने को कहेंगी, आग्रह करेंगी क्या?"

"मैं मरना बेहतर समझूंगी।"

"बस यही बात है। और आप इसे कहती हैं प्रेम, मैं नहीं कहता। यह केवल साधारण स्नेह जैसा प्रेम है, तीव्र अनुराग से उलट। तो अनुरागपूर्ण प्रेम क्या होता है? मात्र स्नेह से यह किन अर्थों में अलग है? अपनी उत्कटता की दृष्टि से। यथा, यदि प्रेम अपने साधारणतम और निर्बलतम रूप में (और स्नेह अनुराग के मुक़ाबले में निस्तेज सिद्ध होता है), यदि यही निस्तेज प्रेम आपको यह कहने पर विवश कर सकता है कि आप उसे पीड़ा पहुंचाने के स्थान पर मरना बेहतर समझेंगी, तो सहस्रों गुना अनुराग की भाषा क्या होगी? इसका मर्म तो यही है कि तुच्छ से तुच्छ मांग करने

से पहले ही मर जाना बेहतर मानेंगी आप—जी नहीं। बल्कि आप जिस व्यक्ति से प्रेम करती हैं, उसे ऐसा कोई काम अपने लिए करने की अनुमति नहीं देंगी, जिसे वह संभवतया अरुचिकर माने, वह आपके लिए तनिक-सा भी त्याग करे अथवा ज़रा-सी भी रियायत दे, उससे पहले आप मर जाना पसन्द करेंगी। यह यही भाषा है अनुराग की, यही है प्रेम। यदि कोई अनुराग कुछ और बतलाता है तो यह निपट वासना है, जिसका प्रेम से कोई वास्ता नहीं। अच्छा, वेरा पावलोव्ना, अब मैं चलूं। मुझे जो कहना था कह दिया।"

वेरा ने उससे हाथ मिलाया।

"शुभ रात्रि, लेकिन आप मुझे बधाई क्यों नहीं देते? आप जानते ही हैं, आज मेरा जन्मदिवस है और यह दिन मेरे लिए अविस्मरणीय रहेगा।"

लोपुख़ोव ने उसकी ओर दृष्टिपात किया। "काश, ऐसा ही हो... हो भी सकता है। यदि आप सही कहती हैं तो मेरे लिए भी यह अविस्मरणीय ही है।"

5

पार्टी के बाद अपने कमरे में अकेले होने पर वेरा ने विचारा: "कितने सहसा! कैसी आकस्मिक घटना! क्या इतना संक्षिप्त-सा वार्तालाप दो व्यक्तियों को इतना घनिष्ठ बना सकता है! आधे घंटे पहले कोई भी तो दोनों में से एक-दूसरे के बारे में कुछ भी नहीं जानता था और एक घंटे बाद कैसे दोनों एकजान हो गये! आश्चर्यजनक!"

यह आश्चर्यजनक बात बिल्कुल नहीं, वेरा। लोपुख़ोव जैसे लोगों में दलितों और पीड़ितों को आकर्षित करने की सम्मोहक शब्दावलि होती है। और ये शब्द उसकी मंगेतर कहती है। लेकिन वास्तव में विस्मयकारी तो—यद्यपि हम और तुम यह बेहतर जानते हैं, वेरा—यह है कि तुम इतनी शान्त हो। प्रेम को तो घबरानेवाली भावना माना जाता है, लेकिन तुम आज रात बच्चे जैसी कोमल निद्रा में मग्न हो जाओगी, किसी प्रकार के स्वप्न तुम्हें नहीं सतायेंगे, अलबत्ता ऐसे स्वप्न हो सकते हैं, जिनमें बच्चों के खेलों का उन्मुक्त दृश्य हो, आंख-मिचौनी का खेल और शायद एक या

दो नृत्य, पर ये भी उल्लासपूर्ण और मनोरंजक होंगे। हमारे पाठकों को यह चाहे जितना विस्मयकारी लगे, वेरा, तुम यह नहीं समझ पा रहीं कि ऐसा कैसे हो गया और मैं तो स्पष्ट समझ रहा हूं। ऐसा क्यों न होता? प्रेम में उत्पन्न होनेवाली सिहरन, प्रेम की सिहरन नहीं होती बल्कि प्रफुल्ल और परमानंदपूर्ण अनुभव के स्वभाव के प्रतिकूल जो हुआ है, उसकी सिहरन होती है।

वेरा ने सोचा: "विस्मयकारी, कितने बार मैं उस सब पर सोच-विचार कर चुकी हूं, जो उसने निर्धनता, और महिलाओं, और प्रेम की डगर के बारे में कहा—ऐसा कैसे हो सकता है? क्या मैंने यह सब उन पुस्तकों से ग्रहण किया, जिन्हें मैंने पढ़ा है? नहीं तो, पुस्तकों में तो इससे कुछ भिन्न है, सब कुछ सन्देहों की बाधाओं से घिरा और शर्तों से जुड़ा मानो यह बिल्कुल अजीब अथवा पूर्ण रूप से असंभाव्य हो, ऐसा अच्छा सपना हो, जो वास्तविक्ता से बिल्कुल परे हो! लेकिन कितना सहज और कितना साधारण लगता था यह सर्वथा, इतना स्वाभाविक इसे होना ही था, अवश्य ही और असंदिग्ध! और मैं सोचती थी कि जो कुछ सर्वोत्तम है वह मैं पढ़ चुकी हूं। जोर्ज सैंड को ही ले लो, बढ़िया ईमानदार लेखिका, बस वह केवल सपने ही तो देखती है! अथवा हमारी रूसी, नहीं पुनर्विचार करने पर यही कहना होगा, हम तो सपना ही देखना नहीं जानते। डिकन्स को लें, डिकन्स में यह बात है, लेकिन उस पर आशा का महल नहीं खड़ा करता वह, बस केवल अपने विवेक के स्थान पर करुणामय हृदय की कामना ही व्यक्त करता है। क्यों नहीं समझ पाते वे यह कि हमें वास्तव में और सच्चे मन से और अनिवार्य रूप से यह सुनिश्चित करना ही चाहिये कि कोई भी हमेशा निर्धन और दुःखी न बना रहे। क्या वे कम से कम इस प्रकार का कुछ कहते नहीं? नहीं, वे केवल करुणा उपजाते हैं, वे यह विश्वास ही नहीं करते कि किसी भी चीज़ में कभी कोई बदलाव आयेगा, वे केवल छोटे-मोटे और विशुद्ध रूप से ऊपरी सुधारों के बारे में सोच पाते हैं। जो कुछ उन्होंने अनकहा छोड़ा, वह मैंने स्वयं खोजा। अन्यथा, अगर वे इसके बारे में कहते, तो इसमें कोई सन्देह न होता कि बुद्धिमान और अच्छे लोगों ने मुझसे पहले यही सोचा, जबकि मुझे इस पर विश्वास हो गया कि मैं एकाकी हूं। अपनी

मूर्खता में एकाकी, एकमात्र जो वास्तव में सोच रहा है और प्रतीक्षा कर रहा है। और अब वह मुझे बताता है कि उसकी मंगेतर ने प्रत्येक को, जो उसे प्रेम करता है, यह बताया कि सब कुछ ठीक उसी तरह होगा, जिसकी परिकल्पना मैंने की है और यह सब इतना स्पष्ट कर दिया है कि उसके सभी प्रेमी उसी दिशा में काम भी करने लगे हैं। कितनी बुद्धिशीला है वह स्त्री! लेकिन वह है कौन? मैं पता लगाऊंगी, अवश्य ही पता लगाऊंगी। जीवन कितना भला होगा निर्धनता के बिना, उत्पीड़न के बिना, जब हंसी-खुशी और करुणा एवं सुख का बोल-बाला होगा..."

और यह सोचते-सोचते वह प्रगाढ़ और स्वप्नशून्य निद्रा में निमग्न हो गयी।

वास्तव में, वेरा, इसमें कुछ भी विचित्र नहीं कि तुमने इस सब पर अपने मन ही मन विचार किया, तुम जो निर्दोष बाला हो, जिसने कभी नहीं सुना ऐसे व्यक्तियों के बारे में जिन्होंने यह सिद्ध करने के लिए कुछ लिखा है कि ऐसा होना चाहिये, कि इसकी आवश्यकता है और एक न एक दिन ऐसा होना अवश्यम्भावी है। इसमें कोई भी अचरज नहीं कि तुमने इसे अपने मन में बिठा लिया यद्यपि तुम्हारी किसी पुस्तक में तो इसकी डगर बतायी नहीं गयी है, क्योंकि तुमने जिन लेखकों को पढ़ा है उन्होंने उन संकल्पनाओं पर दक्षता तब प्राप्त की, जब वे केवल संकल्पनायें ही थीं, आह्लादकारी अवश्य, लेकिन मात्र संकल्पनायें ही। अब वेरा, ये विचार सजीव हो उठे हैं और नयी पुस्तकें और नये लेखक उपलब्ध हैं, जो इन्हें अच्छे तो मानते हैं, लेकिन अजीब नहीं। आज वे उस वायु में हैं, जिसमें हम सांस लेते हैं, जैसे खेतों में फूलों की गन्ध; वे हर जगह हैं, तुम्हारी मदिरासक्त मां के होंठों पर भी, उसके इस कथन में कि जीवन को भोगना आवश्यक है और क्यों इसे चोरी-चकारी और झूठ के बल पर जीना है, क्योंकि तुम्हारे विचारों पर प्रहार करते समय क्या उसने वास्तव में उनको और सशक्त करने में मदद नहीं पहुंचायी? क्या तुमने उस निर्लज्ज और कलंकित फ़्रांसीसी स्त्री में अपना समर्थन नहीं पाया जो अपने प्रेमी को खिलौने अथवा कठपुतली की तरह अपनी ओर डोर में बांधकर चाहे जहां खींच ले जाय, लेकिन तो भी वह अपनी दासता के बारे में, उन प्रतिकारों

और समर्पणों के बारे में ज़रा-ज़रा-सी बात पर ही सोचने लगती है, जिसके सम्मुख उसे कितनी पीड़ा भोगकर भी झुकना पड़ता है, जिसे दयालु और कोमल सेर्ज के साथ जीवन के बारे में, दुनियादारी की भावना से कह सकती है "यह सब घिनावना है, मेरे जैसे अधम जीव के लिए भी घिनावना!" नहीं वेरा, तुमने जो विचार धारण कर लिये हैं उनको ग्रहण करने में कुछ भी ऐसा नहीं जो गठिन हो। दूसरे लोग ये विचार नहीं अपनाते, लेकिन तुम्हें विरल और भला बनानेवाली बात यही है कि तुमने उनको मन में बिठा लिया है। इसमें किसी प्रकार की सनक बिल्कुल नहीं—स्वतंत्रता और सुख-लाभ की कामना में क्या सनकीपन है? यह साधारण-सी चाह ही तो है, किसी विद्वान की ऐसी खोज तो नहीं जो दिमाग़ को चकरा दे अथवा किसी नायक का विस्मयकारी करतब तो नहीं।

वेरा, विचित्र तो यह है कि दूसरे बिल्कुल ही भिन्न लक्ष्यों के लिए इस चाह की अवहेलना कर सकते हैं, वे तुम्हारे इस सोचने को विचित्र मानें कि तुम अपने प्रेम की पहली रात को यही सोचते-सोचते सो गयीं, अपने बारे में, अपने प्रेमी के बारे में और अपनी नव-जागृत् भावनाओं के बारे में और फिर अपने साथी पुरुष के बारे में, कि कैसे इस प्रकार का सुख कैसे प्रत्येक को मिले और कैसे इसके आगमन को द्रुतगति प्रदान की जाय। कितना विचित्र है, यह तुम नहीं जानतीं और मैं जानता हूं कि कितना अधिक विचित्र यह नहीं है, क्योंकि इससे अधिक स्वाभाविक, अधिक मानवोचित और क्या हो सकता कि कोई व्यक्ति यह कहे कि "मैं प्रसन्न हूं" और मानववादी तात्पर्य होता है "मैं सभी को प्रसन्न होते देखना चाहता हूं" और दोनों ही बातें एक ही हैं। वेरा, तुम अच्छी हो और तुम सहज बुद्धिसम्पन्न भी हो, लेकिन क्षमा करना अगर मैं तुम्हारे बारे में ऐसा कुछ नहीं सोचता तुम असाधारण हो, जबकि जिन युवतियों को मैं जानता हूं उनमें से आधी से अधिक (अलबत्ता संख्या इतनी है कि मैंने कभी गिनने की चेष्टा ही नहीं की) तुम से बदतर नहीं हैं और कुछ तो (यदि तुम फिर मुझे क्षमा करो) बेहतर ही होंगी।

सच है, लोपुखोव तुम्हें असाधारण समझता है, इसमें कुछ भी असाधारण नहीं, प्रेम में पड़े व्यक्ति के लिए तो कदापि नहीं। और इसमें भी कोई आश्चर्य

नहीं, कि वह तुम पर फ़िदा हो गया, तुम होम्ही प्यार के क़ाबिल और एक बार जब वह फ़िदा हो गया तो उसका यही कर्त्तव्य है कि तुम्हें वह अपनी कोटि का निराला ही माने।

6

नृत्य के पहले दौर में जोड़े ने मार्या अलेक्सेयेव्ना को भले ही हड़बड़ी में डाल दिया हो, लेकिन दूसरे दौर में तो वह वेरा से दूर रही और पूरी तरह अपने अतिथियों के खाने की तैयारी के काम में लगी रही। और जब अंततः उसे अवकाश मिला कि वह ट्यूटर के बारे में कुछ पूछ-ताछ करे तब तक वह जा चुका था।

दो दिन बाद वह पढ़ाने के लिए आया था। दिन के उस समय, सदैव की तरह समोवार खदबदा रहा था। मार्या अलेक्सेयेव्ना पढ़ाई के कमरे में उन्हें चाय पीने के लिए बुलाने आयी—आम तौर पर मत्र्योना फ़ेद्या को बुलाने आती थी—तो ट्यूटर ने वहीं बैठे रहना बेहतर समझा, पहले कभी भी तो वह चाय पीने नहीं गया और इस समय का वह फ़ेद्या की कापी जांचने में सदुपयोग कर सकता था। उसकी मेज़बान ने इसरार किया कि वह भी उनके साथ चाय पिये, क्योंकि वह उससे कुछ विचार-विमर्श करना चाहती है। वह जाकर मेज़ के सामने उचित स्थान पर बैठ गया।

मार्या अलेक्सेयेव्ना ने फ़ेद्या की पढ़ाई और उसकी बुद्धि के बारे में प्रश्न पूछने तथा किस प्रकार स्कूल में उसे भर्ती कराया जाय से बातचीत आरम्भ की। उसने पूछा, क्या यह बेहतर नहीं होगा कि उसे बोर्डिंग स्कूल में रखा जाय। लोपुख़ोव को सभी प्रश्न स्वाभाविक और उचित यद्यपि असामयिक लगे। एक प्याला चाय पीने का उसका अनुरोध इतनी उत्सुकता और सभ्यता से किया गया था कि इस बार लोपुख़ोव मानने के लिए विवश हो गया था। कुछ समय बाद वेरा भी वहां पहुंची, दोनों में सभ्याचार का आदान-प्रदान हुआ, मानों उनके बीच कभी कुछ था ही नहीं और इस बीच मां फ़ेद्या के बारे

9 -1127

में बात चलाती रही। सहसा वार्तालाप लोपुखोव के ही बारे में बदल गया—वह कौन है, क्या करता है वह, उसके सगे-सम्बन्धी कौन हैं, उसकी आर्थिक स्थिति क्या है, इस समय वह आजीविका किस प्रकार चलाता है और उसकी भावी योजनायें क्या हैं। इन सभी प्रश्नों के ट्यूटर ने संक्षिप्त और अनिश्चित उत्तर दिये। परिवार के अन्य लोग हैं, प्रदेश में रहते हैं, बहुत धनी नहीं हैं, आजीविका के लिए ट्यूशन करता है, भविष्य में राजधानी में डाक्टर का पद पाने का इरादा है—इस सबका अर्थ तो यही था: कुछ नहीं। इस प्रकार के दुराग्रह से प्रश्नकर्त्ता ने और भी आक्रामक रवैया अपनाया।

"तुम्हारे कहने का मतलब है कि तुम अपना नाम-पट्ट लटकाना चाहते हो, लेकिन मेरा तो अनुमान है, कि पीटर्सबर्ग में डाक्टर को अच्छे जीवन के लिए ईश्वर की कृपा पर ही निर्भर रहना पड़ता है। अभी विवाह के बारे में कुछ सोचा-विचारा? अथवा कोई लड़की पहले से ही चुन रखी है?"

क्या है यह सब? वह अपनी काल्पनिक मंगेतर को भूला ही था, और उसके होंठों पर "नहीं मदाम" आते-आते रह गया कि उसे याद आया कि मां ने उसकी बातें चोरी-छिपे सुन ली होंगी। यह सोचकर ही हंसी आती है कि उसे इस तरह की बकवाद का सामना करना पड़ेगा। "क्यों, आखिर क्यों? क्या आवश्यकता थी रूपक गढ़ने की उसे। अब तो मुसीबत का सामना करना ही पड़ेगा, कहते हैं न कि प्रचार का मतलब ही मुसीबत होता है। देखो न, मेरी बात से इस महिला को क्या हो गया, उसका तात्पर्य तो हानि पहुंचाने का बिल्कुल नहीं था। लेकिन यदि वह उसी प्रकार ग्रहण करना चाहती है, तो मैं कौन हूं उसे रोकनेवाला।"

प्रकटत: उसने कहा: "हां, है।"

"तो क्या तुम्हारा विवाह तय हो गया है?"

"जी हां।"

"सभी औपचारिकतायें हो चुकी हैं अथवा तुम दोनों ने ही अभी बात तय की है?"

"सभी औपचारिकतायें हो चुकी हैं।"

अभागी स्त्री! कनसुई लेने की आदत से उसे पर्याप्त मिल चुका था—"मंगेतर", "अनुराग" और "सुन्दर युवती" का अर्थ और

होता भी क्या?—इससे वह पुन: आश्वस्त हो गयी थी कि ट्यूटर की दृष्टि उसकी बेटी पर नहीं थी और इसीलिए नृत्य के दूसरे दौर में वह निश्चिन्त होकर खाने के प्रबंध की ओर अपना पूरा ध्यान लगाने में लिप्त हो गयी थी। अब वह कुछ और अधिक जानकारी चाहती थी, आश्वासन की पुष्टि के लिए कुछ और विवरण। वह पहले की ही तरह प्रश्न करती रही, क्योंकि हर व्यक्ति सान्त्वना से प्रसन्न होता है और कुतूहल की पूर्ति के लिए तो समय या स्थान देखा नहीं जाता। उसे जो उत्तर मिले वे उत्तरदाता की आदत के अनुसार संक्षिप्त भले ही हों, थे सारगर्भित। "क्या वह सुन्दर है?"—"अप्रतिम।"—"और दहेज़?"—"इस समय तो कुछ भी नहीं, लेकिन उसे शीघ्र ही सम्पत्ति विरासत में मिलनेवाली है।" —"विशाल सम्पत्ति?"—"अपरिमित।"—"फिर भी कितनी?"— "अत्यधिक।"—"क्या एक लाख?"—"इससे कुछ अधिक।"— "लेकिन फिर भी कितनी?"—"समझिये, काफ़ी भारी धनराशि।"— "मतलब नक़दी से है?"—"नक़दी भी मिलेगी।"—"अच्छा, तो अधिकांश सम्पत्ति भूमि होगी?"—"भूमि भी मिलनेवाली है।"—"कब तक?"—"जल्द ही।"—"और विवाह कब तक होनेवाला है?"—"शीघ्र ही।"—"आप ठीक ही करेंगे युवती द्वारा विरासत पाने से पहले ही विवाह करके, अन्यथा, बाद में उसके लिए रिश्ते भेजनेवालों की संख्या की गणना भी नहीं हो पायेगी।"—"बिल्कुल ठीक।"—"कैसी अच्छी बात है कि वह इतना भाग्यशाली है। उस युवती को अपने फेर में फंसाने के लिए और कोई युवक नहीं?"—"निस्सन्देह, वह भाग्यशाली है, किसी और को इसका लेशमात्र सन्देह नहीं था कि उसे विरासत मिलनेवाली है।"—"लेकिन उसने इसकी गंध पा ली थी?"—"उसने इतना कुछ पता लगा लिया था, अवश्य।"—"बतायेंगे नहीं कि कैसे?"—"उसे मानना पड़ा कि इसके लिए काफ़ी परेशानी उठानी पड़ी। लम्बे अरसे तक इस ताक में रहा।"—"तब तो बस मज़े ही मज़े रहे, है न?"—"क्यों नहीं, उसने सभी काग़ज़ात ख़ुद जो देखे हैं।"—"ख़ुद?"—"ख़ुद। सबसे पहले यही किया।"—"पहली बात?"—"निस्सन्देह: कोई भी सही दिमाग़वाला व्यक्ति उचित काग़ज़ात देखे बिना एक भी क़दम नहीं उठाता।"—"निश्चय ही

9*

द्मीत्री सेर्गेइच, निश्चय ही। कितना बड़ा भाग्य, हालांकि उसके माता-पिता ने आसमान सिर पर उठा लिया था, उसमें कोई सन्देह नहीं।"

चाय पीने से मना करने के समय से ट्यूटर ने वेरा की मां का मन मोह लिया था; दृढ़मना, उत्तरदायित्वपूर्ण व्यक्ति, यह तो बिल्कुल ही स्पष्ट था, और इतना मित-भाषी था यह तो और भी अच्छी बात थी क्योंकि वह गंभीर जो था। जितना कुछ कम उसने कहा मार्या अलेक्सेयेव्ना को पसन्द आया, विशेष रूप से धन के विषय के बारे में। दो दिन पहले उसने इस युवक को वास्तव में बढ़िया खोज माना था क्योंकि वह अपने शिष्य के परिवार की किसी लड़की के साथ इश्कबाज़ी को वर्जित कर्म समझने के गुण से सम्पन्न था—नौजवान इन सब बातों के बारे में बहुत कम दो-टूक मत प्रकट करते हैं। और आज रात वह इस युवक से प्रसन्न हुए बिना भला कैसे रह सकती थी। भरोसे का है वह, इसमें ज़रा-सा भी सन्देह नहीं था। उसने अपनी धनी मंगेतर के बारे में भी झूठी-सच्ची गप नहीं हांकी थी, उसने एक-एक बात तो युवक के मन से निकलवा ली थी। और धनी मंगेतर के संबंध में जानकारी प्राप्त करने के लिए उसने पैनी पूछ-ताछ की, इसके लिए आप समझिये युवक ने काफ़ी समय लगाया था और वह यही कल्पना कर सकी थी कि इस समय यह युवक अपनी प्रियतमा में कितना डूबा हुआ है। और युवक को यह भली-भांति पता था कि वह क्या कुछ कह रहा है। बहुत ढंग से उसने बात शुरू की थी। उसने कहा था "बेशक, यदि इंसान अपने होशोहवास में हो"। ऐसी ही ठोस बातें करनेवालों को तो वह पसन्द करती थी।

पहले तो वेरा अपनी मुस्कान को हंसी में बदलने से रोकने में लगी रही, लेकिन फिर धीरे-धीरे वह भी सन्देहाकुल हो उठी—लेकिन यह संभव कैसे हो सकता है? नहीं, यह असंभव है! लेकिन यह सच है—लोपुख़ोव के उत्तरों का लक्ष्य उसकी मां कम थी, वह स्वयं अधिक। ठीक है, मां से वह केवल ठट्ठा कर रहा था, लेकिन सच, सम्पूर्ण सच, सच के सिवा और कुछ नहीं, उसी के सुनने के लिए विशेष रूप से कहा जा रहा था।

क्या यह केवल उसकी कल्पना थी अथवा कुछ और? किसे मालूम?

युवक को तो मालूम ही था, और वेरा भी समझ पायी थी मगर जहां तक तुम्हारा और मेरा सम्बन्ध है तो हमें सिर्फ़ कठोर तथ्यों की ज़रूरत है। और ये तथ्य निम्न हैं: पहले तो वेरा मुस्करायी और फिर उसे यह स्पष्ट आभास मिला कि लोपुख़ोव बात तो उसकी मां से कर रहा है, लेकिन संकेत उसी की ओर है और वह भी पूरी गंभीरता के साथ। मार्या अलेक्सेयेव्ना ने तो बातचीत का एक-एक ब्योरा बिल्कुल सही माना और फिर अपनी बेटी की ओर मुड़कर बोली: "वेरा, तुम क्यों इस तरह मुंह लटकाये बैठी हो? तुम द्मीत्री सेर्गेइच को अब तक अच्छी तरह जान गयी हो। तुम गाओ और उन्हें प्यानो बजाने को कहो, गाओगी न गीत?" यह सब कह तो रही थी मार्या अलेक्सेयेव्ना, लेकिन उसके मन में जो दूसरी बात थी वह यह: "नौजवान, हमारी तुम्हारे बारे में बढ़िया राय है, परिवार के मित्र के रूप में हम तुम्हें पसन्द करेंगे ज़रूर, और मेरी लाड़ली, तुम क्यों लाज से सिकुड़ी-सिमटी जा रही हो, मैं मिख़ाईल इवानोविच से कह दूंगी कि यह तो पहले से ही किसी और युवती का मंगेतर है, इसलिए ईर्ष्या की कोई आवश्यकता नहीं।" यह वेरा और द्मीत्री सेर्गेइच के लिए (अब वह उसकी नज़रों में 'ट्यूटर' नहीं रह गया था), कहा गया था, लेकिन तीसरे, व्यक्तिगत, सहज और तात्कालिक अर्थ में उसका तात्पर्य यही था: "हमें इसको लल्लो-चप्पो करके साधे रखना है, अब यह धनी हो जायेगा तो काम आ सकता है, कहीं का" अथवा इसी प्रकार का आम विचार-प्रवाह; लेकिन इसके अलावा इस सब में विशेष अर्थ भी था: "बस एक बार लल्लो-चप्पो से सध जाने दो इसे, तब तो मैं इसे कह सकती हूं कि हम निर्धन जन एक रूबल एक पाठ के लिए दे पाने में बड़ी कठिनाई महसूस करते हैं।" तो मार्या अलेक्सेयेव्ना के शब्दों में अपार अर्थ-सम्पदा छिपी हुई थी। लोपुख़ोव ने उसके प्रस्ताव के उत्तर में कहा कि पाठ समाप्त कर लेने के बाद वह प्रसन्नता से प्यानो बजायेगा।

7

यदि मार्या अलेक्सेयेव्ना के शब्दों में अपार अर्थ-सम्पदा छिपी हुई थी, तो वे उपलब्ध परिणामों की दृष्टि से कुछ कम फलदायक भी नहीं थे। उसके अपने चौथे और अत्यन्त विशेष प्रयोजन अर्थात् ट्यूशन की फ़ीस बचाने के सिलसिले में तो उसे आशा से कहीं अधिक सफलता मिल गयी। दो ही पाठों के बाद उसने अपने वित्तीय दुखड़े का रोना रोया, लोपुख़ोव ने भी जी-जान से सौदेबाज़ी में कोई कसर नहीं छोड़ी, वह प्रति ट्यूशन पौने एक रूबल पर डटा ही रहा (यदि आपको याद हो तो तब पुराने 75 कोपेकवाले सिक्कों का प्रचलन था); मार्या अलेक्सेयेव्ना ने एक पल के लिए भी यह नहीं सोचा था कि लोपुख़ोव अपनी बात से टलेगा; लेकिन जैसे चमत्कार हो गया, उसने ट्यूटर को साठ कोपेक पर राज़ी कर लिया। सस्ते में ट्यूशन का यह व्यक्तिगत लक्ष्य उसके इस विचार का खण्डन करता था कि द्मीत्री सेर्गेइच धन-लोलुप बदमाश है: इस प्रकार का धन-लोलुप उसकी ग़रीबी से द्रवित क्यों हो? और अब यह सभ्य पुरुष अपने पारिश्रमिक को घटाने के लिए तैयार हो गया तो उसे घोर निराशा होनी चाहिये थी कि यह युवक इतना लापरवाह अर्थात् अविश्वसनीय है। यदि यह मामला मार्या अलेक्सेयेव्ना से सम्बन्धित न होता तो उसने ऐसा कह भी दिया होता। लेकिन यह तो मानव-स्वभाव है कि अपने बारे में किसी भी निर्णय में वह कम तटस्थ होता है, सदैव ही वह अपने ही अनुकूल अपवाद बनाता रहता है। जब कोलिजियेट सेक्रेटरी इवानोव कोलिजियेट काउनसिलर पेत्रोव को आश्वासन देता है कि वह उसके लिए सब कुछ करने के लिए प्रस्तुत है, पेत्रोव को अपने अनुभव से अच्छी तरह मालूम है कि उसे किसी अन्य से, विशेष रूप से इवानोव से कुछ भी आशा करना व्यर्थ है, जो अपने बाप को सस्ते में पांच बार बेच चुका है, जबकि स्वयं पेत्रोव ने आज तक तीन बार ही ऐसा किया है! फिर भी इवानोव चाहे जो कहे और करे उसको पेत्रोव बिना कुछ दुम हिलाये मान लेता है अथवा उस पर विश्वास न करते हुए भी अपने को धोखा खाने का अवसर तो देता ही है—संक्षेप में पेत्रोव विश्वास

न करते हुए भी विश्वास करता है। मानव-मन की विशेषता ही ऐसी है। और इसमें परिवर्त्तन होने के कोई आसार भी नहीं हैं। दुर्भाग्यवश इस करुणापूर्ण और चिन्ताजनक कमज़ोरी से मार्या अलेक्सेयेव्ना भी मुक्त नहीं थी बिल्कुल वैसे ही जैसे अन्य कोई भी धन-लोलुप, धोखेबाज़ और अधम नीच। बस केवल दो अपवाद हैं इसमें और दोनों ही नैतिक पैमाने के दो छोर हैं। पहला, दुर्बोध दुर्जन, अतिविशिष्ट दुष्टता के विश्व का आठवां आश्चर्य, उदाहरण के लिए, अलबानिया के अली पाशा, सीरिया के अहमद जेज़्ज़ार और मिस्र के मुहम्मद अली *, जिन्होंने यूरोप के उत्कृष्टतम कूटनीतिज्ञों (जेज़्ज़ार मामले में स्वयं महान नेपोलियन) को ऐसा झांसा दिया कि वे मानो बच्चे हों, जब कि अगले ने अपने को ऐसे दुर्भेद्य कवच में बंदकर रखा था कि जिसे भेदकर किसी भी मानवीय कमज़ोरी की झलक नहीं पायी जा सकती थी : न महत्वाकांक्षा की, न आत्मभिमान की, न सत्ता-प्रेम की, न स्वार्थ इत्यादि की, लेकिन ऐसे लोगों की संख्या है बहुत कम, असत्य के ये राक्षस यूरोप की धरती पर कदाचित् ही मिले हों, जहां के पामरों की कला में मानव की दुर्बलताओं के कारण सफ़ाई नहीं रही। इसलिए, अगर आपको किसी ठग से कभी मिलाया जाय और यह कहा जाय कि यह निश्चय ही अविजेय है, तो आप के लिए, ईमानदार व्यक्ति के लिए, इसके कम अवसर हैं कि उस नीच को आप मात दे दें, लेकिन यदि आप चाहें और हिम्मत करें तो इसके पूर्ण अवसर हैं कि आप उसको मात दे दें, क्योंकि वह तो अपने गुण-स्वभाव के अनुसार, दंभ के साथ अपने आपको चूना लगाने की चाल चलेगा ही, सभी धूर्त्त चालबाज़ों की यही तो निशानी होती है, उनका सामान्य गुण होता है कि देर अथवा सबेरे वे अपनी ही चाल के जाल में बुरी तरह फंस जाते हैं।

---

* अली पाशा (1741—1822), जिसे जानिना का शेर कहा जाता था, दक्षिणी अल्बानिया का संरक्षक।

अहमद जेज़्ज़ार पाशा (1735—1804)—राजनीतिक दुस्साहसी, जिसने कि 1799 में काफ़ी समय तक नेपोलियन का डट कर मुक़ाबला किया।

मुहम्मद अली (1769—1849)—मिस्र का उप-रीजेंट, जो कि उस समय तुर्की के शासन में था।—सं०

लुई फ़िलिप और मैटरनिख* जैसे अति चतुर भी अपनी मनोकामना पूरी नहीं कर पाये, दोनों ही पेरिस और वियना की चहल-पहल से खिसककर ऐसे पाताल लोक में पहुंच गये, कि पूछो नहीं। और नेपोलियन जो इन दोनों की संयुक्त धूर्तता से भी अधिक धूर्त था और, जैसा कि सभी कहते हैं उसमें विलक्षण प्रतिभा भी थी, बड़े करतब से अपने को चूना लगाकर एल्बा पहुंचा और फिर भी उसे यह कम लगा और असंख्य अवरोधों को पार करके सेंट हेलेन के अन्तिम लक्ष्य तक जा पहुंचा, बहुत ख़ूब! '1815 के युद्धाभियान' का शरास लिखित इतिहास** पढ़ें, जिसमें आत्म-प्रवंचना का उत्साह और विदग्धता प्रत्येक धड़कन में समायी हुई है! हा हन्त, मार्या अलेक्सेयेव्ना इस घातक दोष से मुक्त नहीं थी।

यदि छल-कपट की कला में एकनिष्ठ दक्षता भ्रम के विरुद्ध निराशाजनक सिद्ध होती है, तो साधारण निष्कपटता अनगिनत लोगों के लिए भाग्यशाली सिद्ध हुई है। निस्सन्देह इस संसार के विदोकों और वान्का-कईनों*** के अनुसार ज़रा से भी तर्क अनुभव से सम्पन्न किसी निष्कपट साधारण व्यक्ति को धोखा देना बहुत कठिन काम है। व्यक्तिगत रूप से चतुर व्यक्ति किसी भी लालच के जाल में नहीं फंसते। बल्कि वे तो उसी प्रकार की एक और लेकिन अत्यन्त विषाक्त कमज़ोरी के, व्यापक भ्रान्ति के प्रति अतिसंवेदनशीलता के शिकार होते हैं। ऐसे लोगों में से कोई भी धोखे की ओर से असावधानी की अवस्था में नहीं रहता, ज़रा से इशारे पर ही

* लुई फ़िलिप (1773—1850), जिसने कि 1848 की क्रान्ति के बाद राज सिंहासन का परित्याग किया और भाग करके इंगलैंड में शरण ली।

मैटरनिख, क्लेमेन्स वेन्सल (1773—1859)—आस्ट्रियाई कूटनीतिज्ञ, संपूर्ण यूरोप में चल रहे क्रान्तिकारी आन्दोलनों के दमन के लिए 1815 में जिस "होली एलायन्स" का निर्माण हुआ, उसका एक प्रमुख कर्णधार।—सं०

** जान बापतीस्त शरास (1810—1865)—फ़्रांसीसी इतिहासकार, जिसने '1815 के युद्धाभियान का इतिहास' लिखा। यह पुस्तक 1858 में पेरिस में प्रकाशित हुई।—सं०

*** यूजीन फ़्रांसुआ विदोक (1775—1857)—कुख्यात फ़्रांसीसी पुलिस भेदिया और संस्मरणों का लेखक।

वान्का-कईन (इवान ओसिपोव)—(1718—1755?)—पहले चोर था, फिर पुलिस भेदिया, अनेक सस्ती किताबों और गप्पों का नायक भी था।—सं०

वे एक स्वर में मुंडी हिलाने को तैयार रहते हैं। इसके विपरीत धोखेबाज़, जो अकेले होने पर अपना ही सबसे बड़ा दुश्मन होता है, समग्र रूप से उतना ही चतुर। और इसी में तो मानवजाति के इतिहास का रहस्य छिपा है।

लेकिन, हमें अपने मुख्य विषय से क्षेपकों में भटक जाने की आवश्यकता नहीं, आख्यान जो लिखना है। चलिये, आख्यान की ओर मुड़ें।

मार्या अलेक्सेयेव्ना के लघु भाषण का पहला परिणाम तो यही हुआ कि बेटे की ट्यूशन फ़ीस में कटौती हो गयी। और दूसरा यह कि ट्यूटर के (बल्कि कहें द्मीत्री सेर्गेइच के) ऊपर उसका भरोसा और बढ़ गया। अब उसे यह विश्वास हो गया था कि उसके वार्तालाप से वेरा को स्तोरेश्निकोव के साथ विवाह करने के लिए धकेलने में बड़ी मदद मिलेगी—अपने आप तो वह इतने बढ़िया ढंग के तर्क कर ही न पाती, यदि उसकी झोली में (वेरा पर लोपुखोव के अच्छे प्रभाव का) अकाट्य प्रमाण न आ गया होता। हुआ कैसे यह अप्रत्याशित लाभ? आगे पढ़ें।

उसके शब्दों का तीसरा परिणाम यह हुआ: वेरा और लोपुखोव उसकी सहमति और प्रोत्साहन से पर्याप्त समय एक-साथ बिताने लगे। आठ बजे ट्यूशन का समय समाप्त होने के बाद लोपुखोव दो या तीन घंटे और ठहर जाता, कभी गृह-स्वामिनी, गृह-पति या वेरा के मंगेतर से ताश खेलने या किसी भी काम में हाथ बंटाने के लिए। दोनों बतियाते, लोपुखोव प्यानो बजाता और वेरा गाती अथवा वेरा प्यानो बजाती और वह सुनता और कभी-कभी एकान्तिक भेंट करते।

लेकिन मां दोनों पर नज़र बराबर रखती थी। द्मीत्री सेर्गेइच भले ही अच्छा युवक हो लेकिन जैसे कि पुरानी कहावत में कहा गया है: माल संभालकर रखो, चोर को बेकार ललचाओ मत। लोपुखोव की प्रलोभन-उन्मुखता—दुर्गुण नहीं बल्कि सद्गुण के बारे में कोई सन्देह नहीं हो सकता था: नहीं तो वह उस व्यक्ति का सम्मान क्यों करती अथवा उससे मित्रता के बंधन क्यों जोड़ती? आप किसी बेवक़ूफ़ से तो दोस्ती बढ़ायेंगे नहीं, है न? बिल्कुल नहीं, अलबत्ता उसकी बेवक़ूफ़ी से कुछ लाभ होनेवाला हो तो बात दूसरी है। जहां तक द्मीत्री सेर्गेइच का सम्बन्ध है, अभी तक उससे कोई लाभ नहीं

उठाया जा सकता। इसका तात्पर्य यही हुआ कि उससे हेलमेल बढ़ाना था केवल उसके सद्‌गुणों के लिए अर्थात् उसकी बुद्धिमत्ता अथवा विश्वसनीयता, मितव्ययी स्वाभाव और अपनी कार्य-कुशलता के लिए। यदि औसत व्यक्ति के मन में ऐसा कुछ हो सकता है, जिसकी कल्पना से हम सिहर उठें तो फिर इस प्रकार के चतुर व्यक्ति के मन में क्या हो सकता है। इसके बारे में क्या कहा जाय। लोपुख़ोव पर इसलिए चौकस दृष्टि रखनी है। और तदनुसार, मार्या अलेक्सेयेव्ना निगरानी रखती थी। और फिर भी उसे ऐसा कुछ नहीं पता चला, जो विश्वसनीयता और सद्‌भावनाओं के प्रतिकूल हो। उदाहरण के लिए, गुप्त-प्रणयलीला को कैसे पकड़ा जा सकता है? युवक युवती की चोली पर ललचाई दृष्टि डाल रहा हो। बिल्कुल ठीक। वेरा इस समय प्यानो बजा रही है, लोपुख़ोव उसके पास खड़ा सुन रहा है, मार्या अलेक्सेयेव्ना की दृष्टि इस पर लगी हुई है कि लोपुख़ोव के नैन कहां भटक रहे हैं, लेकिन किधर भी तो नहीं, ज़रा-सी भी जुम्बिश नहीं। और फिर कई बार तो वे वेरा की ओर होते भी नहीं, जाने कहां भटक रहे होते हैं और जब वे भटक कर वेरा की ओर मुड़ते भी हैं, तो बिल्कुल सपाट दृष्टि होती है, इतने प्रशान्त दिखते हैं कि उन्हें देखकर सहज ही कोई भी कह सकता है कि उसके मन में सद्‌व्यवहार के सिवा तथा भारी-भरकम दहेज़ की लालसा के सिवा और कुछ भी नहीं है—जब कि मिख़ाईल इवानोविच की आंखों में अब वासना की ज्वाला धधक रही है। और भी कुछ गपड़चौथ की कि ख़ैर नहीं! मीठी-मीठी बातें, लेकिन कहां होती हैं यहां पर और उन दोनों को बातचीत का समय भी कितना कम मिलता है, लोपुख़ोव तो वेरा की मां से ही अकसर बातें करता है। जब उसने वेरा को पुस्तकें लाकर देना शुरू कीं और एक बार वह किसी सहेली के यहां गयी हुई थी और मिख़ाईल इवानोविच आया हुआ था, तब मार्या अलेक्सेयेव्ना ने उसे ये पुस्तकें दिखायी थीं।

"मिख़ाईल इवानोविच, देखो तो, अब तो मैं फ़्रेंच ख़ुद भी अच्छी तरह समझने लगी हूं। मेरा विचार है कि 'समाज' का सम्बन्ध उच्च समाज में शिष्टाचार से है। लेकिन जर्मन तो मेरे बिल्कुल ही पल्ले नहीं पड़ती।"

"मार्या अलेक्सेयेव्ना, 'समाज' तो नहीं, यह 'Destinèe' अर्थात् 'समाज का भविष्य'।"

"भविष्य? तुम्हारा मतलब, यह उपन्यास है? अथवा सपनों की पथ-प्रदर्शिका?"

"अभी देखते हैं, मार्या अलेक्सेयेव्ना, पुस्तक को पलटकर।" उसने कई पृष्ठ पलटे फिर बोला: "यह तो किसी गंभीर विषय के बारे में लगती है, पर्याप्त बौद्धिक विषयवस्तु है।"

"गंभीर? तब तो ठीक है, यह अर्थशास्त्र की पेचीदा पुस्तक होगी।"

"बिल्कुल ठीक कहा, मार्या अलेक्सेयेव्ना।"

"और यह जर्मन पुस्तक?"

"'धर्म के बारे में, लुई... द्वारा अध्ययन'*, मार्या अलेक्सेयेव्ना, यह लुई चौदहवां होगा, लुई चौदहवें की किताब है, फ़्रांस का सम्राट था और उस सम्राट का पिता, जिसकी गद्दी पर बोनापार्ट बैठ गया।"

"तो यह धार्मिक पुस्तक है?"

"बिल्कुल ठीक, मार्या अलेक्सेयेव्ना।"

"फिर सब ठीक है। मुझे वैसे पहले ही मालूम था। मुझे पता था कि द्मीत्री सेर्गेइच अच्छा बेलौस नौजवान है लेकिन फिर भी शंका तो बनी ही रहती है।"

"मार्या अलेक्सेयेव्ना, वह उसके फेर में नहीं पड़ा है। फिर भी मैं आपका बहुत कृतज्ञ हूं कि आपने उस पर नज़र रखी हुई है।"

"मिखाईल इवानोविच, और कर भी क्या सकती हूं इसके सिवा। मां का यही तो कर्त्तव्य है कि अपनी बेटी को निष्कलंक रखे और मैं आपसे गारंटी करती हूं मेरी वेरा ऐसी ही है। बस मुझे आश्चर्य केवल इस बात का है मिखाईल इवानोविच, यह सम्राट है किस सम्प्रदाय का?"

"रोमन कैथोलिक, और किसका।"

"वह हमें तो कैथोलिक नहीं बनाना चाहता, न?"

---

* यहां जर्मन भौतिकवादी दार्शनिक लुडविग फ़ायरबाख़ (1804—1872) की पुस्तक 'Das Wesen des Christentums' (1841) की ओर का संकेत है।—सं०

"मैं तो यह नहीं कहूंगा, मार्या अलेक्सेयेव्ना। निस्सन्देह, यदि वह पुस्तक धर्माध्यक्ष ने लिखी हो तो निश्चय ही कैथोलिक प्रचारी होगी। लेकिन सम्राट को तो इससे बेहतर और भी बहुत-से काम करने हैं; बुद्धिमान और राजनीति-विशारद शासक होनें के नाते वह यह अवश्य चाहेंगे कि लोग ईश्वर से प्रेम करें।"

निश्चय ही इसके सिवा और क्या? मार्या अलेक्सेयेव्ना को मानना ही पड़ा, कि मिखाईल इवानोविच की सीमित बुद्धि भी तर्क पुष्ट दे रही थी, फिर भी उसने इस मामले को पूरी तरह से हल करना उचित समझा। तीन दिन बाद, स्तोरेश्निकोव और लोपुखोव के साथ ताश खेलते समय वह सहसा लोपुखोव को बोली:

"महाशय, कुछ दिनों से मैं आपसे कुछ पूछना चाह रही थी। अन्तिम फ़्रांसीसी सम्राट के पिता, जिनसे बोनापार्ट ने गद्दी सम्भाली थी, क्या वे सभी को कैथोलिक बनाने के समर्थक थे?"

"नहीं, बिल्कुल नहीं मार्या अलेक्सेयेव्ना।"

"लेकिन द्मीत्री सेर्गेइच, क्या चर्च आफ़ रोम, यानी कैथोलिक धर्म अच्छा है?"

"नहीं, ऐसा नहीं है, मार्या अलेक्सेयेव्ना। मेरे पास ईंट के सात बड़े पत्ते हैं।"

"द्मीत्री सेर्गेइच, जिज्ञासा है मेरे मन में, मैंने पोथियां तो पढ़ी नहीं हैं, इसीलिए जानना चाहती हूं। अरे, तुमने तो इस बाज़ी में मेरी ऐसी-तैसी ही कर दी।"

"क्या करना, मार्या अलेक्सेयेव्ना। अकादमी ने यही शिक्षा दी है। आयुर्विज्ञान से सम्बन्धित व्यक्ति को अपने पत्तों की जानकारी होनी ही चाहिये।"

और आज तक लोपुखोव यह नहीं समझ सका कि मार्या अलेक्सेयेव्ना ने उससे यह क्यों पूछा कि फ़िलिप एगालिते ने कैथोलिक धर्म प्रचार का आदेश दिया था या नहीं।

भला उसे क्या अपनी चौकसी में कोताही करने का कोई अधिकार था या नहीं था? जब लोपुखोव वेरा की चोली पर लोलुप दृष्टि नहीं डालता था अथवा तनिक-सा भी भावोद्रेक प्रकट नहीं करता था, जबकि उसने जो पुस्तकें पढ़ रखी थीं उनमें ईश्वर से प्रेम का भरपूर उल्लेख था, तो इससे अधिक वह और चाहती भी क्या?

लेकिन, फिर भी उसने अपनी इस धारणा की परीक्षा की, मानो उसने यह तर्क पढ़ा हो कि "निश्चित परस्पर सम्बन्धों के रहस्य पर अधिकाधिक प्रकाश डालने से लक्षित प्रायोगिक परिस्थितियों में उत्पन्न होनेवाले सहज स्फूर्त सत्याभास की पुष्टि" की मांग करने का पूर्ण अधिकार है और यह उसने महिला के छद्म रूप में वन में हैमलेट की परीक्षा के सैक्सो ग्रामैटिकस* के विवरण के अनुरूप किया।

8

हैमलेट की परीक्षा

एक दिन मार्या अलेक्सेयेव्ना ने चाय के समय सिर में ज़ोर से दर्द होने की बात कही, प्यालों में चाय डाली, चीनी के बर्तन को अलमारी में रखा और लेटने के लिए चली गयी, कमरे में वेरा और लोपुख़ोव को अकेले छोड़ कर; यह कमरा रोगी के बेडरूम से बिल्कुल लगा हुआ था। कुछ ही क्षणों बाद उसने फ़ेद्या को आवाज़ दी: "अपनी बहन से कहो कि उनके बात करने से मुझे नींद नहीं आ रही। कहो कि वे कहीं चले जायें, कहीं भी जहां से मेरी शान्ति भंग न हो। और हां, कहना ज़रा ढंग से ताकि द्मीत्री सेर्गेइच को बुरा न लगे, तुझे तो पता ही है वे तेरा कितना ख़्याल रखते हैं।" फ़ेद्या ने आकर अपनी मां का संदेश कह सुनाया। "मेरे कमरे में चलिये द्मीत्री सेर्गेइच, वह इतनी दूर है यहां से, किसी की भी शान्ति भंग नहीं होगी।" मां ने यही तो सोचा था! पन्द्रह मिनट बाद वह चुपके से, पैरों में सिर्फ़ मोज़े पहने, वेरा के कमरे के द्वार तक आयी। द्वार खुला-सा था, इसी दरार में उसने आंख गड़ा दी, दोनों कान खड़े कर लिये और देखा:

वेरा के कमरे की दो खिड़कियां और उनके बीच लिखने की मेज़, वेरा एक खिड़की के पास यानी मेज़ के एक छोर पर बैठी थी

* सैक्सो ग्रामैटिकस (1140—1206)—डेनिश लेखक। उसकी पुस्तक 'Historia Danica' में वह आख्यायिका है, जिससे प्रेरित होकर शेक्सपीयर ने 'हैमलेट' लिखा।—सं०

और तन्मयता के साथ अपने पिता का ऊनी मफ़लर बुन रही थी, जिसको बनाने का आदेश मां ने दिया था। लोपुख़ोव दूसरी खिड़की के पास और मेज़ के दूसरे छोर पर बैठा था, जिस पर उसने सिगार पकड़े अपने हाथ की कुहनी टिका रखी थी और दूसरा हाथ जेब में था और दोनों—वेरा और लोपुख़ोव—दोनों के बीच अगर कम नहीं तो कम से कम डेढ़ गज़ का फ़ासला अवश्य था; अर्थात् वेरा अपनी बुनाई में मगन थी और लोपुख़ोव सिगार के कश लगाने में, संक्षेप में अत्यन्त आश्वासनदायक व्यवस्था।

और मार्या अलेक्सेयेव्ना ने जो कुछ सुना, वह यह:

"...जीवन को देखने-समझने का यही तरीक़ा है?"

"अवश्य, वेरा पावलोव्ना, मुझे पक्का विश्वास है।"

"अच्छा तो तटस्थ और व्यावहारिक मानसवाले व्यक्ति सच कहते हैं? इंसान केवल अपने ही हित में कार्य करता है?"

"यही सच है। आत्म-हित, स्वार्थ की तुलना में और सामान्य रूप से उदात्त अथवा आदर्श का अनुगमन करने की प्रक्रिया बिल्कुल भी कुछ नहीं है, हर दृष्टि को ध्यान में रखते हुए भी। सच तो यह है कि उदात्तता भी आत्म-हित से, स्वार्थ से ही उत्पन्न होती है।"

"आप पर भी यही बात लागू होती है?"

"आखिर क्या कहलवाना चाहती हैं, वेरा पावलोव्ना, आप? मेरा उद्देश्य क्या है आप यह जानना चाहती हैं? अब तक मेरा सम्पूर्ण जीवन केवल पढ़ाई तक ही सीमित रहा है। ठीक। लेकिन मेरे पिता जी ने मुझे स्कूल में ही पढ़ने क्यों भेजा? वे सदैव ही मुझसे कहते रहे: 'बेटे, पढ़ो, सरकारी नौकरी में चिपको ताकि तुम अपने बूढ़े माता-पिता का पोषण कर सको और जीवन-सुख भोग सको।' मुझे पढ़ने का अवसर इसी तरह से मिला वर्ना क्या वे अतिरिक्त कमाऊ को छोड़ते। और न ही मैंने समय व्यर्थ गंवाया होता, हालांकि ऐसा करने में कितना मज़ा आता मुझे, यदि मैंने यह न सोचा होता कि मेरा श्रम मय ब्याज के मुझे मिल जायेगा। स्कूल की पढ़ाई पूरी करते समय मैंने अपने पिता जी को इस पर राज़ी कर लिया कि नौकरी को फ़िलहाल टाल दें और मुझे अकादमी में प्रवेश ले लेने दें। हुआ कैसे यह? हम दोनों ने ही यह समझ लिया कि डाक्टर की ज़िन्दगी दफ़्तरी अथवा हेड क्लर्क की ज़िन्दगी से कहीं अधिक बेहतर

होती है, मैं उस समय यही कुछ पाने की ही तो आशा कर सकता था। बस, तभी मैंने मेडिकल अकादमी में अपना नाम लिखवाया, केवल द्रव्यार्जन के लिए। यदि द्रव्यार्जन की चाह न होती, तो मैं अकादमी में न प्रवेश लेता और न जाने कब का इसे छोड़ चुका होता।"

"लेकिन आपको तो स्कूल की पढ़ाई उसी तरह पसन्द थी, जिस तरह अब आप आयुर्विज्ञान की करते हैं?"

"सच है। लेकिन यह तो रोटी पर चुपड़े घी के समान है, वह उपयोगी तो होता है, लेकिन बहुधा दिखायी नहीं पड़ता, जब कि आत्म-हित को, स्वार्थ को सदैव प्रस्तुत किया जाता है। अपने काम को पसन्द करना तथ्य के बाद की बात है, वास्तविक प्रेरणा तो सदैव ही विशुद्ध स्वार्थ रही है।"

"लगता है कि आप ठीक ही कहते हैं, बल्कि आप ठीक ही हैं। जिस बात के बारे में भी मैं सोच पाती हूं, उसी का आधार स्वार्थ है। फिर भी यह विचार कितना भावशून्य प्रतीत होता है।"

"सिद्धान्त तो होता ही है भावशून्य। निर्णय बड़ी निष्ठुरता से लिये जाने चाहिये।"

"लेकिन इसमें कहीं कोई करुणा नहीं।"

"कपोल-कल्पनाओं के लिए करुणा नहीं, क्योंकि इनमें कुछ धरा नहीं होता और हानि पहुंचाने के सिवा अन्य कुछ करती भी तो नहीं।"

"लेकिन यह सब कितना नीरस है।"

"काव्य विज्ञान की भाषा नहीं होता।"

"तो सारांश यह हुआ कि आपका सिद्धान्त, जिसे मैं स्वीकार करने के सिवा और कुछ नहीं कर सकती, हम सभी को भावशून्य, हृदयहीन, काव्यरहित अस्तित्व की ओर ही ले जाता है।"

"नहीं वेरा पावलोव्ना, ऐसा नहीं है। यह सिद्धान्त भावशून्य है, लेकिन यह हमें बताता है कि हम भावना का निर्माण कैसे करें। दियासलाई की तीली, माचिस की डिबिया और जिस लकड़ी को जलाने के लिए इसका प्रयोग किया जाता है उसकी ही तरह ठंडी होती है, लेकिन जब ये सब मिल जाती हैं तो आग उत्पन्न करती हैं, जो हमारा भोजन गर्म करती है और हमारे शरीर को

भी उष्णता प्रदान करती हैं। सिद्धान्त है करुणाहीन, लेकिन इसका अनुसरण करके लोग खोखली सहानुभूति के करुणा भरे पात्र नहीं रह जायेंगे। नश्तर अनम्य होता है, अगर ऐसा न होता तो हमें रोगी पर करुणा उपजती, जिसे इससे कुछ भी लाभ होनेवाला नहीं था। सिद्धान्त चाहे जितना भी नीरस क्यों न हो यह जीवन के सबसे सच्चे मूल-स्रोत से उसका साक्षात्कार कराता है और काव्य का निवास तो सचाई में ही होता है। शेक्सपीयर सर्वोच्च कवि क्यों है? क्योंकि अतीत और वर्तमान के किसी कवि की तुलना में उसके काव्य में इस जीवन की सचाई अधिक और भ्रान्तियां सबसे कम हैं।"

"यदि यही करुणाहीनता है द्मीत्री सेर्गेइच, तो मुझे भी उसका समर्थक समझ लीजिये," वेरा ने मुस्कराकर कहा। "आत्म-प्रशंसा में न फंस जाइये कि आपने अपने सिद्धान्त के अत्यन्त कट्टर विरोधी को अपने तर्कों से अपना अनुयायी बना लिया। आपसे मिलने अथवा आपकी पुस्तक पढ़ने से बहुत पहले से ही मैं भी कुछ इसी प्रकार का ऊहापोह करती आयी हूं। लेकिन क्योंकि मैं मानती थी कि मैं बुद्धिमान, शिक्षित व्यक्ति जो सोचते हैं, उससे कुछ अलग और अकेली हूं, इसलिए हिचकिचाती रहती थी। जो कुछ भी पढ़ा उसमें से अधिकांश भाव अपने विचारों के विपरीत लगे और वे हम में से प्रत्येक में उपलब्ध विचार-वृत्ति के विरुद्ध व्यंग्यात्मक कटु आलोचना से परिपूर्ण हैं। जीवन, प्रकृति और सामान्य विवेक एक दिशा में खींचते हैं और पुस्तकें दूसरी दिशा में। पता है, मुझे खुद मालूम है कि अभी-अभी मैंने ही जो आपत्तियां उठायी थीं वे अंशत: हास्यास्पद थीं।"

"बिल्कुल ठीक कहा, वेरा पावलोव्ना।"

वह फिर हंसी: "ईमानदारी से कहते हैं आप! कैसी एक दूसरे की प्रशंसा करते हैं हम लोग! मैं जिसने कहा: 'द्मीत्री सेर्गेइच, आप आत्मप्रशंसा दिल खोलकर मत करने लगिये' और आप कह रहे हैं: 'इस प्रकार के सन्देह पाल कर आप बेतुकी बात कर रही हैं, वेरा पावलोव्ना!'"

"तो?" वह भी मुस्कराया। "क्योंकि सूक्ष्मता से खिलवाड़ करना हमारे हित में नहीं है, इसलिए हम ऐसा नहीं करते।"

"ठीक है, द्मीत्री सेर्गेइच। हम सब दंभी हैं, ठीक है? आपने

मुझे अपने बारे में सब कुछ बता दिया है। अब मैं अपने बारे में बताना चाहती हूं।"

"क्यों नहीं, अवश्य बताइये। हर कोई अपने बारे में ही तो सबसे अधिक सोचता है।"

"ठीक है। देखें कि मेरे व्यक्तिगत मामलों के बारे में आप पकड़ में आते हैं कि नहीं।"

"देखते हैं।"

"एक धनी व्यक्ति ने मुझसे विवाह करने का प्रस्ताव किया है। मुझे उसमें कोई रुचि नहीं। क्या मैं उसका प्रस्ताव स्वीकार कर लूं?"

"यह तो आपको ही निर्णय करना है कि क्या सर्वोत्तम रहेगा।"

"सर्वोत्तम! आपको पता है कि मैं धनवान नहीं हूं। एक ओर तो मैं उस व्यक्ति को नापसन्द करती हूं और दूसरी ओर मुझे उस पर अधिकार, उसकी धन-दौलत मिल जाने का अवसर है, उच्च समाज में प्रवेश करने और अनेकानेक प्रशंसक मिल जाने की संभवना है।"

"लाभ और हानि, दोनों पहलुओं को तोल कर विचार कीजिये और फिर जो सर्वोत्तम हित साधक लगे, उसी को चुन लीजिये।"

"और यदि मैं धनी पति और अनेकानेक प्रशंसक चुनूं तो?"

"मैं तो यही कहूंगा कि आपने वही किया जो सर्वोत्तम समझा।"

"आप मेरे बारे में क्या कहेंगे?"

"यदि आपका चयन आवेगहीन और सुविचारित है, तो मुझे यही कहना पड़ेगा कि यह यथोचित है और बाद में इस पर खेद की आवश्यकता नहीं।"

"लेकिन क्या इसे निंदनीय कहा जायेगा?"

"बकबक करनेवाले तो मनमुताबिक़ बकते-झकते रहेंगे ही; लेकिन कोई भी सही ढंग से सोचनेवाला यही कहेगा कि आपने वही किया, जो करना उचित था; कि आपने जो किया उसका निश्चय आपके चरित्र और उस समय उपलब्ध परिस्थितियों ने किया; संक्षेप में आपके पास कोई विकल्प नहीं था।"

"मेरी कोई निन्दा तो नहीं करेगा? बुरा-भला तो नहीं कहेगा?"

"किसी को क्या अधिकार है कि उसी तथ्य का जो लाभ हुआ, उसकी भर्त्सना करे। आपका चरित्र और आपकी परिस्थितियां तथ्य

10—1127

के रूप में हैं और आपकी कार्रवाई तत्समय की व्यवस्था के परिणाम के रूप में हैं। आपको उनके लिए उत्तर नहीं देना है और उनकी भर्त्सना करना उचित नहीं।"

"आप तो अपने सिद्धान्त के कट्टर अनुयायी हैं, हैं न? और आप मेरे बारे में कोई बुरी धारणा नहीं बनायेंगे, यदि मैं विवाह कर लूं तो?"

"मैं हास्यास्पद ही लगूंगा अगर मैंने यह किया।"

"तो मुझे आपकी अनुमति और शायद आपका आशीर्वाद तथा संभवतया दो टूक शब्दों में यह अनुशंसा है कि जैसा मैं कहूं वैसा ही करूं।"

"मेरा परामर्श कभी नहीं बदलेगा; अपने सर्वोत्तम हितों का ध्यान रखकर ही क़दम उठाइये। इस परामर्श का अनुसरण कीजिये और मेरा आशीर्वाद आपको है।"

"धन्यवाद। इससे मेरे व्यक्तिगत मामले की समस्या तो हल हो गयी। अब आम मामलों पर दृष्टिपात कर लें। हमारी बात यहां से आरंभ हुई थी कि मनुष्य आवश्यकता के आदेशों का अनुसरण करता है, कि उसके कार्यों का निश्चय आनुषंगिक प्रभाव करते हैं, जिसमें से प्रबल प्रभाव वरीयता ग्रहण कर लेते हैं। फिर हम विषयान्तर से यह नोट करते हैं कि यदि कार्य का स्वरूप लौकिक है, तो हम इन प्रेरक शक्तियों को स्वार्थ के विभिन्न प्रतिफल कहते हैं और व्यक्ति में उनकी अन्तर-क्रिया को स्वार्थ की वृत्ति, जो इस रूप में हमारे प्रत्येक पग का पथ-प्रदर्शन करती है। मैं ठीक से कह पा रही हूं न?"

"बिल्कुल ठीक।"

"देखिये, कितनी अच्छी शिष्या मैं हूं। अब हम व्यावहारिक कार्य-विवरण के विशिष्ट प्रश्न से निपट चुके हैं। लेकिन अभी सामान्य स्तर पर कुछ ऊबड़-खाबड़ है। आपकी पुस्तक में लिखा है कि मनुष्य आवश्यकता के आदेशों का पालन करता है। लेकिन कुछ मामलों में यह व्यक्तिगत सनक की बात ही अधिक सिद्ध होती है। जैसे कि जब मैं प्यानो बजाती हूं तो मैं संगीत-नोटेशन के काग़ज़ों को दोनों में से किसी भी हाथ से पलट सकती हूं और पलटती भी हूं। अगर एक बार मान लीजिये कि बायां हाथ होता है, तो क्या मैं सीधा

हाथ इस्तेमाल नहीं कर सकती थी? तो क्या यह मेरी सनक पर ही निर्भर नहीं कि मैं कौन-सा हाथ इस्तेमाल करूं?"

"नहीं, वेरा पावलोव्ना, बात ऐसी नहीं है। यदि आप पृष्ठ पलटने के लिए किस हाथ का इस्तेमाल करें, यह सोचने के लिए नहीं रुकतीं, तो आप सुविधा की दृष्टि से, न कि सनक के वशीभूत होकर हाथ का चुनाव करेंगी। यदि आप यह सोचने के लिए रुक गयी कि 'इस बार दाहिना हाथ इस्तेमाल किया जाय' तो आप ऐसा उसी विचार के परिणामस्वरूप करेंगी, जो आपकी सनक का प्रतिफल नहीं, बल्कि अन्य अनेक बातों का आवश्यक प्रतिफल है..."

बस, इसी स्थल पर मार्या अलेक्सेयेव्ना की कनसुई का अन्त हो गया। "अरे ये 'बड़ी-बड़ी गंभीर' बातचीत में अब उलझ गये हैं, मेरी तो समझ से ही बाहर है यह सब, अलबत्ता मुझे इन सबकी दरकार भी क्या है। मैं तो कहूंगी कितना हाज़िरजवाब, गंभीर नवयुवक है, कितना उदार! वेरा के दिमाग़ में भी कैसी-कैसी बढ़िया बातें भर रहा है! इसी को तो कहते हैं शिक्षा। भला, मैंने ही ऐसी बातें वेरा से कही होतीं तो क्या वह ध्यान देती ज़रा-सा भी, फ़ौरन भड़क जाती, लेकिन मैं उससे यह सब कह भी कैसे सकती थी, मुझे तो ऐसे बोलना आता भी नहीं। लेकिन वह बोल सकता है और वह भी तो तत्काल उसकी बात पकड़ लेती है, मानो ईश्वरीय वाक्य हो और समर्थन भी करती है। बिल्कुल ठीक, इसी लिए तो कहते हैं कि अज्ञानता ही अंधकार है और शिक्षा ही प्रकाश! काश कि मैंने भी कुछ किताबें पढ़ ली होतीं तो सब कुछ बदल न जाता? क्यों नहीं? पति को जनरल बनवा देती, सप्लाई विभाग में अथवा इसी तरह के किसी दूसरे काम में फंसा दिया होता। सभी ठेकेदारों से मैं ही निपटती क्योंकि रोज़ाल्स्की की तो उनसे बातें करते टांय-टांय फिस्स हो जाती। और तब मैं इस घर को दस गुने से भी अधिक सजा-संवरा और आकर्षक बना देती। हज़ारों दास होते। लेकिन अब, आज की दशा में तो मैं कुछ भी नहीं कर सकती। बड़ा ज़रूरी है कि बड़ों-बड़ों को प्रभावित किया जाय, लेकिन मैं न तो फ़्रांसीसी भाषा न कोई और भाषा ही जानती हूं, तो मैं क्या करूं? वे तो कहेंगे कि मेरा कोई शिष्टाचार नहीं, बस केवल मछियारों के साथ बक-झक करना ही मुझे आता है। सच, बिल्कुल भी अच्छी नहीं मैं।

अज्ञानता ही अंधकार है। बिल्कुल ठीक है न यह। शिक्षा ही प्रकाश।"

इस थोड़े-से टोह-कार्य से मार्या अलेक्सेयेव्ना को यह विश्वास हो गया कि वेरा के साथ लोपुखोव की बातचीत हानिकर नहीं (यह वह पहले भी जानती थी) बल्कि लाभदायक है—यह मेल-जोल उसे अपनी इस चिन्ता के मिटने में मदद देगा, कि वेरा लड़कियोंवाले फूहड़ विचारों को तिलांजलि देकर और विवाह की वेदी पर बैठकर, शीघ्रातिशीघ्र सब कुछ सुखान्त बना दे।

9

लोपुखोव के साथ मार्या अलेक्सेयेव्ना के सम्बन्ध लगभग हास्यजनक थे और मार्या अलेक्सेयेव्ना खुद भी हास्यास्पद लगती थी। लेकिन मेरा इरादा ऐसा कुछ भी नहीं था। यदि हम रूसी, जिसे सौन्दर्य-बोध के प्रभाव कहते हैं, उसकी मुझे तनिक-सी चिन्ता होती, तो मैंने उनके सम्बन्धों को उभारा न होता जिनसे इन अध्यायों में प्रहसन की झलक आ गयी है। यह तो बिल्कुल साधारण बात हुई होती। वे घटना-क्रम के मूल विकास के लिए परमावश्यक नहीं हैं, क्योंकि इसमें क्या अस्वाभाविकता है कि घर में पढ़ाने आनेवाला ट्यूटर, मार्या अलेक्सेयेव्ना की कृपा अथवा अकृपा से उसकी बेटी के साथ बातचीत का समय निकाल ले। भला, आरंभिक प्रेम को पल्लवित होने के लिए कितने शब्दों की आवश्यकता होती है? मार्या अलेक्सेयेव्ना का सहयोग वेरा-लोपुखोव मिलन के प्रसंग में आगे क्या कुछ घटित होनेवाला है उसमें निश्चय ही गौण था। बहरहाल, मेरी वर्णनशैली किसी आलोचना की प्रशंसा की मोहताज नहीं, बल्कि जो हुआ वैसा ही मैंने वर्णन किया। और मुझमें, जो उपन्यासकार है, उसे इसका अत्यन्त खेद है कि उसने इतने विस्तार से प्रहसन लेखन की शैली का सहारा लिया।

घटना को जैसे का तैसा, न कि अपनी सुविधा को ध्यान में रखते हुए वर्णन करने का संकल्प, मेरे लिए एक और समस्या

उत्पन्न कर रहा है। मैं मार्या अलेक्सेयेव्ना की इस हास्यास्पद छवि से बिल्कुल प्रसन्न नहीं हूं कि जिस प्रकार वह लोपुखोव की कल्पित वधू के बारे में अथवा उसने वेरा को जो किताबें पढ़ने को दीं उनके बारे में उटपटांग अटकलबाज़ी करती है, ऐसी बातें पूछती है कि फ़िलिप एगालिते अपनी फ़्रांसीसी प्रजा को कैथोलिक बना पाया कि नहीं अथवा सम्राट लुई चौदहवां किस प्रकार का लेखक था। हम सभी भूलें करते हैं, उनमें से कुछ तो जब हम अपनी समझ के परे की बातों के बारे में बोलते हैं, कितनी हास्यास्पद लगती हैं। तो भी, मार्या अलेक्सेयेव्ना ने जो भद्दी भूलें कीं, उन्हीं को लोपुखोव से उसके व्यवहार का मूल आधार मान लेना उचित नहीं होगा। भारी-भरकम दहेज़ अथवा पुण्यात्मा फ़िलिप दोनों में से किसी ने भी उसके सामान्य विवेक को क्षण भर के लिए भी मलिन न किया होता, यदि उसे लोपुखोव के व्यवहार में सन्देह की थोड़ी-सी भी झलक झांकने को मिल गयी होती। बल्कि वह तो अपनी तरुणाई और उत्साह के बावजूद ठीक उसी तरह से व्यवहार कर रहा था, जो उसके अर्थात् मार्या अलेक्सेयेव्ना के विश्वास के अनुसार किसी भी अपने जैसे को करना चाहिये: वह किसी भी अति सुन्दर लड़की को न तो आंखों से पी रहा था और न ही उसके पीछे भाग रहा था अथवा उसकी मां के साथ ताश की एक भी बाज़ी खेलने से इनकार नहीं कर रहा था इस बहाने से कि "मैं वेरा पावलोव्ना के साथ बातचीत करूंगा"। जीवन के प्रति उसका दृष्टिकोण मार्या अलेक्सेयेव्ना को अपने जैसा ही लगता था: उसी की तरह लोपुखोव भी यही आग्रह करता था कि संसार अपने स्वार्थ का ध्यान रखे, कोई धूर्त यदि लज्जाजनक हरकत कर रहा हो तो यह बताकर कि उसके सिद्धान्त क्या होने चाहिये, लाल-पीले होने की क्या आवश्यकता, कापुरुष तो उचित परिस्थितियों के कारण ही कापुरूष होता है और उसमें किसी अन्य वृत्ति की आशा करना, असंभव के सिवा, अनर्गल है, मात्र हास्यास्पद कहना ही उचित नहीं। जी हां, मार्या अलेक्सेयेव्ना ने उचित ही यह समझा कि उन दोनों में—उसमें और लोपुखोव में बहुत अधिक साम्य है।

मैं भली-भांति समझता हूं कि मेरे प्रबुद्ध पाठकों की दृष्टि में मार्या अलेक्सेयेव्ना की लोपुखोव के प्रति सहानुभूति लोपुखोव को

कितने संकट में डाल रही है। फिर भी मैं किसी के प्रति विशेष अनुराग नहीं प्रकट करूंगा, मैं किसी साक्ष्य को दबाऊंगा नहीं—और मैंने अभी-अभी यह सिद्ध किया है कि मैं ऐसा बहुत आसानी से कर सकता था—भले ही मेरे नायक को कुछ भी हानि पहुंचे। बल्कि अब तो मैं यह प्रकट करूंगा कि वह मार्या अलेक्सेयेव्ना का प्रीतिभाजन निष्कपट रूप से बना।

निस्सन्देह, जैसा कि वेरा के साथ विचार-वितर्क से प्रकट है, मार्या अलेक्सेयेव्ना सरीखे लोगों को दुनियादारी के बारे में लोपुख़ोव के विचार उनकी अपेक्षा सहज रूप से मनोनुकूल लगते हैं, जो सुन्दर आदर्शों के वाक्पटु पैरोकार हैं। वह चीज़ों को उसी प्रकार देखता है, जैसे अधिकांश जन देखते हैं, आदर्शों के उपरोक्त पैरोकारों को छोड़कर। यदि स्तोरेश्निकोव के विवाह-प्रस्ताव के बारे में मार्या अलेक्सेयेव्ना लोपुख़ोव के तर्क बड़ी ख़ुशी से दोहरा सकती थी, तो लोपुख़ोव भी नशे की हालत में वेरा के समक्ष मार्या अलेक्सेयेव्ना की आत्मस्वीकृति का अनुमोदन प्रसन्नतापूर्वक कर सकता था। उन दोनों के दृष्टिकोण कितने समान हैं, हमारे प्रख्यात उपन्यासकारों, पत्रकारों और जनमत के प्रत्येक अन्य प्रवक्ता ने बहुत पहले ही यह उद्घोषित कर दिया कि लोपुख़ोव जैसे व्यक्ति बिल्कुल मार्या अलेक्सेयेव्ना जैसे होते हैं। यदि हमारे सर्वोत्तम लेखक और विचारक लोपुख़ोव की कोटि के व्यक्तियों को ऐसा मानते हैं, तो हम मार्या अलेक्सेयेव्ना को कैसे दोष दे सकते हैं कि उसने लोपुख़ोव के बारे में निर्णय के लिए कोई दूसरी कसौटी नहीं अपनायी।

सच तो यह है कि लेखक जितना कुछ जानते हैं उसका आधा ज्ञान भी उसे होता तो मार्या अलेक्सेयेव्ना समझ लेती कि लोपुख़ोव की संगत उसके लिए ख़राब है। लेकिन अज्ञानता ही उसकी एकमात्र ग़लती नहीं थी: लोपुख़ोव ने उसके लिए बहुत कुछ अनकहा छोड़ दिया था। वह प्रचारक तो था, लेकिन सुन्दर विचारों का प्रेमी नहीं जो उल्लास में अपनी भावना को मार्या अलेक्सेयेव्ना जैसे लोगों के मन में भरने की ताक में रहते हैं। उसमें पर्याप्त समझ थी कि वह पचासवर्षीय प्रौढ़ा को सुधारने के चक्कर में न पड़े। लोपुख़ोव और मार्या अलेक्सेयेव्ना एक ही ढंग से घटनाओं को समझते थे और उनकी विवेचना करते थे। अपनी सैद्धांतिक शिक्षा की

कृपा से वह तथ्यों से निष्कर्ष निकाल सकता था, पर यह करना मार्या अलेक्सेयेव्ना जैसे लोगों के बस की बात नहीं थी जो अपने दैनंदिन कार्य-व्यापार और सामान्य-बुद्धि—सूक्तियों, लोकोक्तियों जैसे मानवजाति के प्राचीन, पुरातन नीति-वचनों के सिवा और कुछ नहीं जानती थी। जी नहीं, मार्या अलेक्सेयेव्ना जैसे लोग किसी निष्कर्ष पर पहुंच ही नहीं सकते। लोपुख़ोव ने वेरा के साथ जिस 'आत्म-हित' अथवा स्वार्थ के बारे में बहस की थी, यदि उसने व्याख्या करने की कोशिश की होती तो मार्या अलेक्सेयेव्ना संभवतया यह जानकर चौंक जाती कि वह उसकी अपनी संकल्पना से कितना भिन्न है। लेकिन लोपुख़ोव ने वेरा से उस विषय पर बात ही नहीं की और न ही उसे अपने शब्दों को कभी परिभाषित ही किया, क्योंकि वेरा ने उन पुस्तकों से यह भेद करना सीख लिया था, जिनके आधार पर उनका विचार-विमर्श आरंभ हुआ था। और इसी आधार पर, लोपुख़ोव ने मार्या अलेक्सेयेव्ना की नशे में की गयी भावुक आत्मस्वीकृति का अनुसमर्थन करते हुए यह भी जोड़ दिया होता: "मार्या अलेक्सेयेव्ना, क्योंकि आप स्वयं यह स्वीकार करती हैं कि नये तरीक़े पुरानों से बेहतर हैं, इसलिए मैं किसी भी ऐसे व्यक्तियों का विरोधी नहीं, जो उनकी संस्थापना की दिशा में कार्य करने में आनंद पाते हैं। और जहां तक इस बात का प्रश्न है कि लोगों की मूर्खता नयी व्यवस्था की स्थापना में बाधक है, मैं मानता हूं कि वह बाधा है, लेकिन यह तो आपको भी मानना पड़ेगा कि जैसे ही वे इसमें अपना कुछ लाभ देखेंगे जो वे पहले नहीं देख पाये तो तत्काल अक़्लमंद हो जायेंगे। आप यह भी मानेंगी कि उन्हें अक़्ल पाने का अभी अवसर ही कहां मिला; लेकिन अवसर मिलते ही वे इसका पूरा-पूरा लाभ उठाने में देर नहीं लगायेंगे।" लोपुख़ोव ने उसके साथ इतनी खुलकर बात करने की नौबत ही नहीं आने दी, अपनी सावधानी के कारण नहीं, हालांकि वह सावधान तो रहता था। बस उसी सामान्य विवेक और शिष्टाचार के अनुरूप जो उसे उस बेचारी प्रौढ़ा के साथ लैटिन में बतियाने अथवा मार्या अलेक्सेयेव्ना के लिए अपरिचित आयुर्विज्ञान के क्षेत्र में नवीनतम सफलताओं के बारे में बतलाने की अनुमति नहीं देता था। वह इतना अनुभूतिक्षम और विचारशील था कि मार्या

अलेक्सेयेव्ना को अपनी उद्घोषणाओं से न सताये, जिनको वह समझ पाने में पूर्ण रूप से असमर्थ थी।

यह सब मैं केवल मार्या अलेक्सेयेव्ना की ओर से लोपुख़ोव के संबंध में असावधानी के लिए उसे निरपराध सिद्ध करने के हेतु कह रहा हूं जो उसकी असलियत न भांप पायी, लेकिन लोपुख़ोव की सफ़ाई देने के लिए नहीं। वास्तव में, मैं लोपुख़ोव को दोषमुक्त करने की चेष्टा करूं तो ग़लत होगा। पाठकगण इस बात को आगे पढ़कर भली-भांति समझ जायेंगे। यदि लोग अपने मानवप्रेम से अभिप्रेरित होकर, उसकी सफ़ाई दिये बिना सीधे-सीधे क्षमा के लिए आग्रह करें, तो वे उसे क्षमा करने में असफल रहेंगे। उदाहरण के लिए, वे उसको क्षमा करने के लिए कह सकते हैं कि वह आयुर्विज्ञान का छात्र था। उसे प्राकृतिक विज्ञानों का अध्ययन करना था, जिससे उसमें भौतिकवादी दृष्टिकोण का पल्लवन हुआ। पर यह ग़लत होगा क्योंकि अनेक अन्य विषय (गणित, इतिहास, समाजविज्ञान तथा इसी प्रकार के अन्य विषय) भी तो इसी प्रवृत्ति का पोषण करते हैं। यह भी तो है कि समस्त ज्यामिति शास्त्रियों, खगोलज्ञों, इतिहासकारों, राजनीतिक अर्थशास्त्रियों, न्यायविदों और अन्य सभी प्रकार के विद्वानों में, प्रत्येक तो स्वत: भौतिकवादी नहीं होता। ऐसा बिल्कुल नहीं। इसलिए लोपुख़ोव दोषमुक्त नहीं हो जाता। आप में से जो नरम दिलवाले हैं, वे लोपुख़ोव की सफ़ाई न देते हुए भी, उसके एक अथवा दो प्रशंसनीय गुणों की ओर भी ध्यान दिला सकते हैं: सचेत रूप से किया गया दृढ़ संकल्प जिसके आधार पर उसने अपने ही जैसे लोगों के हेतु काम करने के लिए भौतिक पुरस्कारों और सम्मानों का परित्याग कर दिया और इस काम से मिलनेवाले सुख को ही अपना सर्वोत्तम पारिश्रमिक मान लिया। इतनी सुन्दर युवती के प्रति जिसने उसका हृदय जीत लिया था उसकी दृष्टि अत्यन्त निष्कपट थी, बहन के प्रति भाई के प्रेम से भी अधिक साधु भाव से परिपूर्ण थी। उसके इस भौतिकवाद के समर्थन में इस तर्क पर हमें पलट कर यह कहना पड़ेगा कि कोई भी व्यक्ति ऐसा नहीं होता, जिसके चरित्र में ऐसा कुछ न हो जो निष्कलंक है। भौतिकवादी में चाहे जो भी अच्छाई हो, पर वह होता तो भौतिकवादी ही है। बस बात ख़त्म। और क्योंकि सभी भौतिकवादी प्रमाणित अनैतिक असमर्थनीय

सुअर होते हैं, और इन अभागों का पक्ष लेना उनके भौतिकवाद में सहायक सिद्ध होता है। इसलिए, लोपुख़ोव को क्षमा कर देने का अर्थ तो उसे दोषमुक्त कर देना ही होगा। और इसके अलावा क्या उसे ऐसी अवस्था में दोषमुक्त किया जा सकता है, जबकि उदात्तता के हमारे प्रेमी, उच्च विचारों के रक्षक, जिन्होंने भौतिकवाद को नैतिक दृष्टि से जघन्य घोषित किया है, पिछले कुछ समय से अपनी बुद्धि व चरित्र के लिए भी भले लोगों का, भौतिकवादी और अभौतिकवादी, दोनों ही प्रकार के लोगों का समान रूप से इतना अधिक समर्थन प्राप्त कर चुके हैं कि ऐसे में उनके आरोपों के विरुद्ध किसी का बचाव करना अपनी शक्ति का अपव्यय करना है और उनके आरोपों पर अंगुली उठाना, आपत्ति करना असभ्यता, अत्यधिक असभ्यता होगी।

10

सच तो यह है कि वेरा और लोपुख़ोव के वार्तालापों का मुख्य विषय यह नहीं था कि कौन-सी विचार-धारा का पक्ष लेना अधिक उचित है, उनकी बातचीत भी बहुत कम ही होती थी और कभी-कभार होनेवाले लम्बे वार्तालाप के समय अमूर्त विषयों तथा विचारों आदि के बारे में मत-मतान्तरों का विनिमय होता था। यह भी तो है कि दोनों को इसका भली-भांति ज्ञान था कि तीक्ष्ण नेत्र उनकी ओर लगे हुए हैं। इसलिए वे गाने-बजाने के लिए स्वरलिपि का चुनाव करते समय अपने मुख्य विषय के बारे में दो शब्दों में बात करते थे और बहुधा करते नहीं थे। कभी-कभी जो छोटी-मोटी बातचीत करने का उन्हें मौक़ा मिल भी जाता था उसमें भी व्यक्तिगत बात होती ही नहीं थी—एक दूसरे के प्रति उनके मन में जो भावनायें थीं वे उनकी प्रमुख रुचि का विषय नहीं थीं, इस बारे में एक शब्द भी नहीं कहा गया था, पहली बार पार्टी के अवसर पर जो थोड़ा-बहुत कह दिया गया था फिर कभी उसका उल्लेख नहीं किया गया था क्योंकि समय कम होता था, कनसुई

के भय से मुक्त दो अथवा तीन ही मिनट तो, जो किसी भी ऐसे प्रश्न के बारे में कुछ भी कहने के लिए अपर्याप्त होते, न ही तब कुछ भी व्यक्तिगत कहने के लिए अवसर होता और न ही अभिरुचि— बेचारी वेरा को उसकी भीषण दुर्दशा से कब और कैसे मुक्त कराने का अत्यन्त परेशान करनेवाला और अत्यन्त चिन्ताजनक प्रश्न मुंह बाये खड़ा था।

उसके साथ अपनी पहली भेंट के बाद अगले दिन सुबह लोपुखोव रंगमंच पर जीवन आरंभ करने के साधनों और उपायों की पड़ताल के लिए निकला। इस प्रकार का संकल्प करनेवाली युवती के समक्ष उपस्थित अनेक खतरों से पूर्ण अवगत होते हुए भी उसने यह मान लिया कि दृढ़ संकल्प से युवती अवश्य सफल होगी। लेकिन उसे पता चला कि वह ग़लती पर था। और जब वह दो दिन बाद ट्यूशन पढ़ाने के लिए घर पहुंचा तो उसने अत्यन्त खेद के साथ कह भी दिया: "वेरा, मैं आपको यही परामर्श दूंगा कि आप अभिनय करने की बात भूल जायें।"—"क्यों भला?"—"क्योंकि इससे अधिक अच्छा यह है कि आप शादी का प्रस्ताव स्वीकार कर लें।" और बात यहीं पर समाप्त हो गयी। उस समय वे स्वरलिपि-पत्रक चुनने में लगे थे: उसे प्यानो बजाना था और वेरा को गाना था। वेरा अनमनी हो गयी थी, वह कई बार अटकी-भटकी, हालांकि उसे गीत अच्छी तरह आता था। और गीत के अंत में जब वे अपने अगले चुनाव के विषय में विचार कर रहे थे, वेरा ने कहा: "मैं तो इसे अपना सर्वोत्तम अवसर मान बैठी थी। कैसी निराशा हुई। कोई बात नहीं, ज़िन्दगी कुछ और कठोर हो जायेगी, लेकिन चलती तो रहेगी ही। तो अब मैं गवर्नेस बनने की कोशिश करूंगी।"

और दो दिन बाद जब लोपुखोव फिर पढ़ाने पहुंचा तो वेरा ने बताया: "कोई ऐसा मिलता ही नहीं कि जिससे मैं गवर्नेस की नौकरी मांग सकूं। द्मीत्री सेर्गेइच, बड़ी कृपा होगी, आप ही कुछ कीजिये न, आपके सिवा और कोई दूसरा है भी तो नहीं।"

"अफ़सोस की बात है, मैं बहुत कम ऐसे लोगों को जानता हूं, जो इस मामले में हमारी मदद कर सकें। मेरे वर्तमान अथवा पुराने विद्यार्थियों में से भी कोई ऐसा नहीं, जिसका परिवार समृद्ध हो

अथवा किसी खाते-पीते परिवार से सम्बन्धित हो। तो भी जो कर सकूंगा, अवश्य करूंगा।"

"प्रिय मित्र, मैं आपको कष्ट देना तो नहीं चाहती, लेकिन कोई और चारा भी तो नहीं है।"

"वेरा पावलोव्ना, मित्र के लिए तो जान भी हाज़िर रहती है।"

वेरा मुस्करायी और लजा गयी; कितने अप्रत्याशित रूप से यह "प्रिय मित्र" सम्बोधन उसके मुंह से निकल गया था। लोपुख़ोव प्रत्युत्तर में मुस्कराया:

"वेरा पावलोव्ना, आप मुझे इस तरह नहीं पुकारना चाहती थीं। यदि आपको संकोच हो रहा है, तो यह शब्द लौटा लें।"

वेरा फिर मुस्करायी। "बहुत देर हो गयी अब तो।" और यह कहकर वह फिर लजा गयी। "मुझे बिल्कुल संकोच नहीं।" और इसके बाद तो जैसे लज्जा में गड़ गयी।

"कभी भी मेरी आवश्यकता पड़ी तो आप जान पायेंगी कि मैं कितना सच्चा मित्र सिद्ध हो सकता हूं।"

उन्होंने हाथ मिलाये।

पार्टी के बाद उन दोनों के बीच हुई दो मुलाक़ातों का सार और सत्व यही है। दो दिन बाद "पुलिसगज़ट" अख़बार में निम्न विज्ञापन प्रकाशित हुआ: "फ़्रांसीसी, जर्मन आदि भाषा-भाषी भद्र युवती गवर्नेस पद की अभिलाषी है, पूछताछ का पता है: श्री० ... मकान ... सड़क ... कोलोम्ना।"

...अब लोपुख़ोव वेरा के लिए अपना पर्याप्त समय व्यय करने लगा। हर सुबह वह, अधिकतर पैदल ही वीबोर्ग इलाक़े से कोलोम्ना के उपर्युक्त पते पर जाता—जगह कुछ बहुत पास नहीं थी, लेकिन उपयुक्त घरेलूपन और उचित "स्टेटस" जैसी अनेक शर्तें पूरी करनेवाला ऐसा कोई बढ़िया फ़्लैट, जिसका स्वामी कुछ घनिष्ठ मित्र हो नज़दीक मिल नहीं पाया। बस्ती घटिया होने से काम के प्रस्ताव भी घटिया आते, क्योंकि अस्तव्यस्त और अनाकर्षक ढंग से बसर करनेवाले की सिफ़ारिश उसके बारे में कोई अच्छा प्रभाव उत्पन्न नहीं कर सकती, जिसकी सिफ़ारिश की गयी हो। और इसमें भी कोई सन्देह नहीं कि वह अपना पता भी नहीं दे सकता था: कोई क्या

समझेगा उस युवती के बारे में, जिसका संरक्षक और कोई नहीं बल्कि कुंआरा विद्यार्थी है? इस प्रकार हमारे कुंआरे विद्यार्थी की रोज़ बड़ी चलायी हो जाती। कोलोम्ना में रहनेवाले परिवार के यहां से वह उन व्यक्तियों की सूची लेता और परिवार के मुखिया के भतीजे के रूप में, जो वेरा से बड़ी दूर की रिश्तेदारी का दावा करता था, सबके यहां पहुंचता, क्योंकि सभी से यही कहा जाता था कि बात पक्की करने के लिए भतीजा उनके यहां पहुंचेगा। भतीजा पहुंचता—यह ध्यान रखने की बात है कि पैदल पहुंचता—और बहुधा निराशा ही हाथ लगती। किसी परिवार में अहंकार का बोल-बाला मिलता, तो किसी में मां आदर्श होती और पिता मूर्ख और किसी परिवार में इसके उलट होता। और जिस किसी परिवार में परिस्थितियां सन्तोषजनक दिखतीं तो वहां रोज़गार की शर्तें उचित नहीं होतीं, तो कोई परिवार अंग्रेज़ी-भाषी गवर्नेस चाहता, जिससे वेरा अनभिज्ञ थी, किसी परिवार को आया की ज़रूरत प्रतीत होती तो कोई हर तरह से आदर्श होते हुए भी गवर्नेस के लिए आवास की व्यवस्था करने में असमर्थ होने का उल्लेख करता, पेशकश करता कि वह दो उछलते-कूदते बच्चों और दूध पीते बच्चों के साथ, आया और धाय के साथ एक ही कमरे में रह सकती है। ताहम, "पुलिसगज़ट" में विज्ञापन बराबर छपता रहा, गवर्नेस चाहनेवाले उत्तर देते रहे, और लोपुख़ोव आशा लगाये रहा।

इस तरह पखवाड़ा बीत गया। पीटर्सबर्ग की सड़कें नापने के पांचवें दिन, वह अपने पलंग पर पसरा पड़ा था कि किरसानोव ने उससे कहा:

"द्मीत्री, पिछले कुछ दिनों से तुम काम में मेरी मदद नहीं कर रहे हो, बहुत कम घर पर टिकते हो—पूरी सुबह ग़ायब रहते हो और सांझें भी आधी गुज़र जाती हैं। ढेरों ट्यूशनें ले बैठे हो क्या? यह समय है क्या और ट्यूशनें पकड़ने का? मैं तो सोच रहा हूं कि अपने सभी शिष्यों को फ़िलहाल छोड़ दूं। मैंने चालीस रूबल बचा लिये हैं, इनसे कोर्स समाप्त होने तक के तीन महीने तो काम चल ही जायेगा। तुम्हारे पास तो अच्छी-ख़ासी रक़म थी, सौ रूबल, है न?"

"लगभग डेढ़ सौ। लेकिन बात ट्यूशनों की नहीं—सिर्फ़ एक लड़के को छोड़कर, बाक़ी सब मैंने छोड़ दी हैं। एक काम है, जो

मुझे पूरा करना है। बस, पूरा होते ही, तुम्हें कभी यह शिकायत नहीं होगी कि मैंने साथी को भुला दिया है।"

"है क्या बात आख़िर?"

"दरअसल बात यह है मैंने जिस बच्चे की ट्यूशन जारी रखी हुई है उसका परिवार है तो बड़ा नीच, लेकिन उसमें एक शालीन युवती भी है। वह घर से बाहर निकलना चाहती है और मार्ग उसने चुना है—गवर्नेस बनने का। मैं उसके लिए काम की व्यवस्था करने में लगा हुआ हूं।"

"क्या वह इस योग्य है?"

"बिल्कुल है।"

"ठीक है, तब चिपके रहो।" और बस दोनों की बात इसी पर ख़त्म हो गयी।

अहो सज्जनो! मेरे बुद्धिमान सज्जनो! आपको तो इसका तनिक-सा भी अनुमान नहीं कि कितने उल्लेखनीय रूप में यह सब बढ़िया है! किरसानोव को यह सूझा ही नहीं कि वह पूछे कि युवती क्या सुन्दर है अथवा लोपुख़ोव को भी तो वह ध्यान नहीं रहा कि वह इस तथ्य का उल्लेख करे। किरसानोव ने खोद-खोदकर यह पूछने की सोची ही नहीं: "कहीं तुम उसे सचमुच प्यार तो नहीं करते, मेरे यार, जो इतनी भाग-दौड़ कर रहे हो?" न ही लोपुख़ोव ने उसे यह बताया: "मेरे यार, मुझे बहुत रुचि है इस लड़की में।" अथवा अपने मित्र द्वारा सब कुछ भांप लेने की स्थिति की पेशबंदी करते हुए न यह कहा कि "यह मत समझ लेना कि मैं उसे कुछ प्यार-व्यार करता हूं।" क्योंकि आप यह जान लीजिये, अनुभूतिक्षम पाठक, दोनों ने यह मान लिया कि मदद का हाथ बढ़ाने का मतलब युवती की सुन्दरता महत्वहीन है और जहां तक प्रेम में पड़ने का सवाल है, इसका इस सन्दर्भ से कोई सरोकार ही नहीं। इसके अलावा यह पूर्वानुमान यंत्रवत् कर लिया गया था—और इस प्रसंग में यही अत्यन्त सराहनीय पक्ष है, बिना सोचे-विचारे तथ्य को स्वीकार कर लेना।

और फिर क्या यह सब अनुभूतिक्षम पाठक को (जैसा कि यह साधारण समीक्षकों के अधिसंख्य को अर्थात् सभी कुशाग्र-बुद्धिवालों को) संकेत नहीं देता कि दोनों ही शुष्क, औपचारिकता और

सौन्दर्य-बोधक प्रवृत्ति में शून्य हैं? मैं इस शब्दावलि का उपयोग कर रहा हूं जिसका पिछले दिनों हमारे सौन्दर्यबोधी और उच्च भाव-धारावाले पारखी अत्यधिक प्रयोग कर रहे थे। हो सकता है यह अभी भी प्रचलित हो। बात बस इतनी है कि पिछले काफ़ी समय से मैं ऐसे किसी वर्ग में गया नहीं हूं। दूसरे शब्दों में दोनों युवकों के लिए, अगर उनमें तनिक भी सुरुचि और भावना होती, क्या यह स्वाभाविक है कि वे युवती के बारे में बातचीत करते समय उसके रूप—वर्णन की अवहेलना करते। बेशक, दोनों में से किसी में भी लालित्य नहीं है (फिर वही सौन्दर्य-बोधक प्रवृत्ति)। फिर भी जिन्होंने हमारे सौन्दर्य-बोधी साहित्यकारगण की तुलना में और भी ऊंचे मंडलों में जहां सौन्दर्य-बोध अधिक समृद्ध है, मानव-प्रकृति का पर्यवेक्षण किया है, उनकी राय है कि युवकगण चर्चित युवती के नख-शिख व शील-स्वभाव का वर्णन अत्यन्त विस्तार के साथ करने के आदी होते हैं। अपने समय के लिए यह बात बिल्कुल सच है, जो कि अब अतीत हो चुका है। आज भी बिल्कुल सच है यह। बस अपवाद हैं तो वे जिन्हें हम आधुनिक युवक कहते हैं। प्यारे पाठको, आज के नौजवान बस विचित्र ही हैं।

11

"क्या प्रिय दोस्त, नहीं दिया भाग्य ने साथ अब तक?"

"नहीं, वेरा पावलोव्ना। लेकिन निराश मत होओ, कुछ न कुछ तो हो ही जायेगा। आज मैं दो-तीन परिवारों से मिलनेवाला हूं। देर-सबेर कोई बढ़िया ऑफ़र आ ही जायेगा।"

"लेकिन मेरे दोस्त, काश कि आप यह जानते कि यहां पर रहना अब कितना कठिन हो गया है। जब इस पंक से, इस स्थायी अपमान से बच निकलने का कोई अवसर नहीं दीखता था, तो मैं जीवनहीन व्यामोह में बन्दकर लेती थी अपने को। लेकिन अब, मेरे दोस्त, यह बदबूदार वीभत्स हवा मेरे लिए असहनीय हो गयी है।"

"धीरज रखो, वेरा पावलोव्ना, कोई न कोई रास्ता हम निकाल ही लेंगे।"

एक सप्ताह तक यही चलता रहा।

मंगलवार आया:

"धीरज रखो, वेरा पावलोव्ना, थोड़ा धीरज और हम रास्ता निकाल लेंगे।"

"प्रिय दोस्त, मैंने कितना कष्ट दिया है आपको, कितना समय गंवाया है आपने मेरे लिए! कैसे मैं इससे उऋण हो पाऊंगी?"

"प्यारे मित्र, बस, नाराज़ मत होओ, मेरे लिए यही सबसे बड़ा पुरस्कार होगा।"

लोपुख़ोव यह बोलकर झेंप गया। वेरा ने उसकी ओर ताका। नहीं, वह बात कहते-कहते रुक नहीं गया था, उसका इरादा जब तक वेरा उत्तर न दे तब तक कुछ भी आगे कहने का नहीं था।

"भला किस बात के लिए, प्यारे दोस्त?"

इससे तो लोपुख़ोव और भी अधिक सकपका-सा गया। उसका मुंह उतर गया।

"क्या बात है, प्यारे दोस्त?"

उसने करुणा भरे शब्दों में कहा: "तो आपने ध्यान भी नहीं दिया," और फिर खुलकर हंसा। "हे भगवान, मैं कितना मन्द-बुद्धि हूं, बेहद मन्द-बुद्धि! क्षमा कर दो, मेरे मित्र।"

"क्या कह रहे आप, किस बारे में?"

"छोड़िये भी, मुझे मेरा पुरस्कार मिल गया।"

"तो यह बात है। सच, आप भी नमूना ही हैं। छोड़िये, कहिये जो कहना चाहते हैं मुझे।"

गुरुवार को बतर्ज़ सैक्सो ग्रामाटिकस हैमलेट की परीक्षा हुई। इसके बाद मार्या अलेक्सेयेव्ना ने अपने अपलक नेत्र का पलक संक्षिप्त (अत्यन्त संक्षिप्त) रूप से झपकने दिया।

शनिवार को चाय के बाद वह धोबिन द्वारा लाये गये कपड़ों को गिनने के लिए उठकर गयी।

"प्रिय मित्र, लगता है, अब हमारा संकट दूर हो गया है।"

"सच? यदि ऐसा है तो... हे भगवान, हे भगवान... जितना

सौन्दर्य-बोधक प्रवृत्ति में शून्य हैं? मैं इस शब्दावलि का उपयोग कर रहा हूं जिसका पिछले दिनों हमारे सौन्दर्यबोधी और उच्च भाव-धारावाले पारखी अत्यधिक प्रयोग कर रहे थे। हो सकता है यह अभी भी प्रचलित हो। बात बस इतनी है कि पिछले काफ़ी समय से मैं ऐसे किसी वर्ग में गया नहीं हूं। दूसरे शब्दों में दोनों युवकों के लिए, अगर उनमें तनिक भी सुरुचि और भावना होती, क्या यह स्वाभाविक है कि वे युवती के बारे में बातचीत करते समय उसके रूप—वर्णन की अवहेलना करते। बेशक, दोनों में से किसी में भी लालित्य नहीं है (फिर वही सौन्दर्य-बोधक प्रवृत्ति)। फिर भी जिन्होंने हमारे सौन्दर्य-बोधी साहित्यकारगण की तुलना में और भी ऊंचे मंडलों में जहां सौन्दर्य-बोध अधिक समृद्ध है, मानव-प्रकृति का पर्यवेक्षण किया है, उनकी राय है कि युवकगण चर्चित युवती के नख-शिख व शील-स्वभाव का वर्णन अत्यन्त विस्तार के साथ करने के आदी होते हैं। अपने समय के लिए यह बात बिल्कुल सच है, जो कि अब अतीत हो चुका है। आज भी बिल्कुल सच है यह। बस अपवाद हैं तो वे जिन्हें हम आधुनिक युवक कहते हैं। प्यारे पाठको, आज के नौजवान बस विचित्र ही हैं।

11

"क्या प्रिय दोस्त, नहीं दिया भाग्य ने साथ अब तक?"

"नहीं, वेरा पावलोव्ना। लेकिन निराश मत होओ, कुछ न कुछ तो हो ही जायेगा। आज मैं दो-तीन परिवारों से मिलनेवाला हूं। देर-सबेर कोई बढ़िया ऑफ़र आ ही जायेगा।"

"लेकिन मेरे दोस्त, काश कि आप यह जानते कि यहां पर रहना अब कितना कठिन हो गया है। जब इस पंक से, इस स्थायी अपमान से बच निकलने का कोई अवसर नहीं दीखता था, तो मैं जीवनहीन व्यामोह में बन्दकर लेती थी अपने को। लेकिन अब, मेरे दोस्त, यह बदबूदार वीभत्स हवा मेरे लिए असहनीय हो गयी है।"

"धीरज रखो, वेरा पावलोव्ना, कोई न कोई रास्ता हम निकाल ही लेंगे।"

एक सप्ताह तक यही चलता रहा।

मंगलवार आया:

"धीरज रखो, वेरा पावलोव्ना, थोड़ा धीरज और हम रास्ता निकाल लेंगे।"

"प्रिय दोस्त, मैंने कितना कष्ट दिया है आपको, कितना समय गंवाया है आपने मेरे लिए! कैसे मैं इससे उऋण हो पाऊंगी?"

"प्यारे मित्र, बस, नाराज़ मत होओ, मेरे लिए यही सबसे बड़ा पुरस्कार होगा।"

लोपुख़ोव यह बोलकर झेंप गया। वेरा ने उसकी ओर ताका। नहीं, वह बात कहते-कहते रुक नहीं गया था, उसका इरादा जब तक वेरा उत्तर न दे तब तक कुछ भी आगे कहने का नहीं था।

"भला किस बात के लिए, प्यारे दोस्त?"

इससे तो लोपुख़ोव और भी अधिक सकपका-सा गया। उसका मुंह उतर गया।

"क्या बात है, प्यारे दोस्त?"

उसने करुणा भरे शब्दों में कहा: "तो आपने ध्यान भी नहीं दिया," और फिर खुलकर हंसा। "हे भगवान, मैं कितना मन्द-बुद्धि हूं, बेहद मन्द-बुद्धि! क्षमा कर दो, मेरे मित्र।"

"क्या कह रहे आप, किस बारे में?"

"छोड़िये भी, मुझे मेरा पुरस्कार मिल गया।"

"तो यह बात है। सच, आप भी नमूना ही हैं। छोड़िये, कहिये जो कहना चाहते हैं मुझे।"

गुरुवार को बतर्ज़ सैक्सो ग्रामाटिकस हैमलेट की परीक्षा हुई। इसके बाद मार्या अलेक्सेयेव्ना ने अपने अपलक नेत्र का पलक संक्षिप्त (अत्यन्त संक्षिप्त) रूप से झपकने दिया।

शनिवार को चाय के बाद वह धोबिन द्वारा लाये गये कपड़ों को गिनने के लिए उठकर गयी।

"प्रिय मित्र, लगता है, अब हमारा संकट दूर हो गया है।"

"सच? यदि ऐसा है तो... हे भगवान, हे भगवान... जितना

जल्द हो उतना ही अच्छा! क़सम खाकर कहती हूं कि अगर यह यूं ही लम्बा घिसटता रहा, तो मैं जान दे दूंगी। कब? कैसे?"

"कल पता चलेगा, लेकिन हम पक्का ही समझ सकते हैं।"

"पक्का? क्या सचमुच?.."

"संयम, संयम, मेरे मित्र, दीवारों के भी कान होते हैं! खुशी से इतनी उतावली क्यों हुई जा रही हो? मां किसी भी काम से यहां आ सकती है।"

"यह मैं उसी से सुन रही हूं, जो खुशी से इतना दमकता चेहरा लेकर आया कि मेरी मां, आप से अपनी नज़रें हटा ही नहीं पा रही थी।"

"सुनिये न, मैंने उन्हें इसका कारण बताया। मैंने सोचा, ऐसा मुझे करना ही पड़ेगा। मैंने उनसे कहा कि मैंने अच्छी नौकरी ढूंढ़ ली है।"

"असहनीय, अक्षम्य पुरुष! मतलब की बात बताये बिना मुझे चेतावनी दे देकर टाल-मटोल कर रहे हैं आप। बताइये न, कृपा करके मुझे?"

"आज सुबह किरसानोव ने—आप तो जानती ही होंगी, मेरे साथी का नाम किरसानोव है..."

"मैं जानती हूं यह, असह्य प्राणी, मैं जानती हूं। बन्द कीजिये यह बकवास, जल्दी-जल्दी मुझे असली बात बताइये!"

"मेरी मित्र, आप ही तो बीच बीच में टोका-टाकी कर रही हैं।"

"हे भगवान, ये हज़रत असली बात बताने की जगह इधर-उधर को बक-झक ही करते रहेंगे। क्या करूं मैं आपके साथ—चाहती तो यह हूं कि घुटनों पर खड़ा होने को कह दूं, लेकिन कैसे, यहां तो नहीं कह सकती। मैं आदेश देती हूं कि घर पहुंचते ही आप ऐसा करें। और आपके किरसानोव महोदय, आप पर नज़र रख सकते हैं—पुष्टि के रूप में पत्र भेज सकते हैं—सुन रहे हैं न आप?"

"अच्छा, अच्छा, मैं घुटनों पर खड़ा हो जाऊंगा। लेकिन अब ख़ामोश हूंगा। जब सज़ा मुझे मिलेगी और आप मुझे माफ़ करेंगी तब बताऊंगा।"

"माफ़ करती हूं, बताइये, न!"

"शुक्रिया। आप माफ़ करती हैं, वेरा पावलोव्ना, लेकिन ख़ुद तो बेजा हरकतें कर रही हैं। आप ही तो बीच बीच में टोका-टाकी कर रही हैं।"

"क्या है यह सब? फिर वही वेरा पावलोव्ना? 'मेरी मित्र' सम्बोधन का क्या हुआ?"

"मेरी मित्र, यह तो आपकी प्रताड़ना थी। मैं बड़ा कठोर व्यक्ति हूं और जल्दी बुरा मान जाता हूं।"

"प्रताड़ना? आप मेरी प्रताड़ना करने की हिम्मत कर रहे हैं? मैं कुछ भी सुननेवाली नहीं।"

"नहीं सुनेंगी आप?"

"हरगिज़ नहीं! सुनने के लिए है क्या? आपने सब कुछ तो कह लिया, जो चाहते थे कि सब कुछ क़रीब तय हो गया है, कल पता चलेगा—मेरे दोस्त, आप यह नहीं समझ पा रहे कि अभी आप स्वयं अंधेरे में हैं! और क्या कह सकते हैं आप? अलविदा, मेरे दोस्त!"

"अरे सुनो तो मेरी मित्र! कृपा कर सुनो तो?"

"नहीं सुनूंगी अब कुछ भी। मैं जा रही हूं।" और लौटकर उसने कहा: "तत्काल बताइये, मैं टोकूंगी नहीं। हे भगवान, काश आप समझ सकते कि आप कितनी ख़ुशी लाये हैं मेरे लिए! बढ़ाइये न अपना हाथ। देखिये कितनी दृढ़ता से, कितनी अधिक दृढ़ता से मैं इसे पकड़ती हूं।"

"लेकिन ये आंसू क्यों?"

"मैं कितनी अधिक कृतज्ञ हूं। कितनी-कितनी अधिक कृतज्ञ।"

"आज सुबह किरसानोव ने एक भद्र महिला का पता मुझे दिया, जिनसे मैं कल मिलूंगा। यह ठीक है कि मैं उन्हें व्यक्तिगत रूप से नहीं जानता, लेकिन मैंने उनके बारे में जान-पहचानवाले से बहुत कुछ सुना है, उसी ने हमें एक दूसरे से मिलाया। उनके पति को मैं जानता हूं, हम उसी परस्पर मित्र के घर पर कई बार मिल चुके हैं। जितना कुछ पता चला, उसके आधार पर मैं कह सकता हूं उनका परिवार शालीन है। और भद्र महिला ने जब उन्होंने मुझे अपना पता बतलाने के लिए मेरे साथी को कहा तो यह आश्वासन भी दिया कि उन्हें विश्वास है कि हममें समझौता हो

11—1127

जायेगा। इसलिए मेरी मित्र, हम इस काम को सम्पन्न हो गया मान सकते हैं।"

"बहुत बढ़िया! मैं अत्यन्त प्रसन्न हूं!" वेरा ने बारम्बार यही कहा। "लेकिन मुझमें इन्तज़ार का सब्र नहीं, इन्तज़ार कर ही नहीं सकती। आप वहां से बात करके सीधे यहां आयेंगे क्या?"

"नहीं, मेरी मित्र। इससे सन्देह उत्पन्न हो जाने की आशंका है। आप तो जानती ही हैं कि मैं केवल पढ़ाने के लिए आता हूं। हां, मेरी योजना यह है। मैं आपकी मां के पास यह पत्र भेज दूंगा कि मैं मंगलवार को आने में असमर्थ हूं ट्यूशन पढ़ाने, इसलिए बुधवार को आऊंगा। यदि पत्र में लिखा हो बुधवार सुबह तो सब कुछ ठीक है और यदि उसमें बुधवार शाम लिखा हो तो समझना बात बनी नहीं। लेकिन मुझे पक्का विश्वास है कि उसमें बुधवार सुबह ही लिखा होगा। तुम्हारी मां फ़ेद्या को, तुम्हारे पिता जी को और तुम्हें बतायेंगी।"

"पत्र यहां पहुंचेगा कब तक?"

"शाम की डाक से।"

"इतनी देर से! नहीं, इतना धीरज मैं कहां से लाऊंगी। और फिर पत्र मुझे इसका सिवा और क्या बतायेगा 'सब ठीक है' और 'बुधवार तक इन्तज़ार करो'? कितना पीड़ादायक है यह! यदि सब कुछ ठीक हो गया तो मैं जल्द से जल्द इस भद्र महिला के यहां चली जाऊंगी। लेकिन असल बात यह है कि मैं पक्की बात होते ही जानना चाहूंगी। ऐसा हम कैसे कर सकते हैं? अब मेरी योजना सुनिये। जैसे ही आप बात करके लौटेंगे मैं आपको मोड़ पर मिलूंगी।"

"मेरी मित्र, यह तो मेरे सीधे यहां आने से भी अधिक दुस्साहसिकता होगी। बेहतर यही होगा कि मैं ही आऊं।"

"और अगर तब हमारी बातचीत ही न हो पायी तो। मां कुछ कम तेज़ नहीं, वह ज़रूर भांप लेगी कि दाल में कुछ काला ज़रूर है। नहीं, मेरी योजना ही दोनों में बेहतर है। और मेरा नक़ाब भी काफ़ी मोटा है, कोई भी मुझे पहचान नहीं पायेगा।"

"हां ऽऽ तब तो बात कुछ बन सकती है। आओ, इसको भली-भांति जांच-परख लें।"

"इसका समय नहीं। मां किसी भी पल टपक सकती है। यह महिला रहती कहां है?"

"गलेर्नी सड़क पर, पुल के पास।"

"किस समय आप वहां पहुंचेंगे?"

"उन्होंने बारह बजे आने के लिए कहा है।"

"कल बारह बजे मैं कोन्नोग्वार्देइस्की मार्ग पर पुल के पास के निकटतम कोने से आख़िरी बेंच पर बैठी मिलूंगी। जैसा मैंने बताया मेरा मुंह मोटे नक़ाब से ढका होगा। मेरे हाथ में स्वरलिपियों का पुलिंदा होगा, वही मेरी पहचान है। अगर मैं वहां पहले से न होऊं तो, समझना कहीं अटक गयी हूं। आप वहां ख़ुद बैठकर इन्तज़ार करें। मैं देरी से आ सकती हूं, लेकिन आऊंगी अवश्य। कैसी बढ़िया योजना है! मैं कितनी ऋणी हूं आपकी। कितनी सुखी मैं हूंगी! अरे हां, द्मीत्री सेर्गेइच, आपकी मंगेतर कैसी है? देखा, आपकी पदावनति हो गयी, मित्र से द्मीत्री सेर्गेइच हो गये। कितनी पुलकित हूं मैं!" और वह लपककर प्यानो तक पहुंची और उसे बजाने लगी।

"मेरी मित्र, कला का कैसा अपमान कर रही हो, सोचो तो कि स्वयं अपनी ही सुरुचि को कितनी हानि पहुंचा रही हो! क्यों इतनी बेरहमी से राग-कुराग कर रही हो?"

"ज़रूर करूंगी!"

कुछ ही पल में मार्या अलेक्सेयेव्ना नमूदार हो गयी। लोपुख़ोव उससे ताश की बाज़ी खेलने के लिए राज़ी हो गया। पहली बाज़ी उसने जीती और दूसरी हार गया—कुल मिलाकर 35 कोपेक—यह पहली ऐसी जीत थी, जो उसने मेज़बान को जानबूझकर जीतने दी। जब वह वहां से रवाना हुआ तो मार्या अलेक्सेयेव्ना सचमुच ख़ुश थी, जीत की रक़म से नहीं बल्कि जीत हासिल कर पाने की भावना से क्योंकि अत्यन्त कट्टर से कट्टर भौतिकवादी हृदय में कुछ अकाट्य आदर्शवादी भावनायें भी होती हैं—भौतिकवादी विचारधारा की अपर्याप्तता का प्रमाण।

12

वेरा पावलोव्ना का पहला सपना

वेरा सपना देख रही है। अपने सपने में वह अंधेरे सीलन भरे तहखाने में बन्द है कि सहसा दरवाज़ा फटाक से खुल जाता है और अब वह मैदान में है, दौड़-भाग रही है, अचरज कर रही है कि "मैं तहखाने से बच कैसे निकली?"—"इसीलिए कि मैंने मैदान नहीं देखा था, देखा होता तो ज़रूर ही मर जाती,"—दौड़े ही जा रही है वह। सपना देखती है कि उसे लक़वा मार गया है और अचरज करती है कि कैसे उसे यह हो गया। "बूढ़े-बुढ़ियों को तो लक़वा मारता है, लेकिन युवतियों को तो नहीं।" किसी अजनबी की आवाज़ उसे सुनायी देती है: "नहीं-नहीं, ऐसा होता है, अकसर होता है। लेकिन तुम अभी बिल्कुल भली-चंगी हो जाओगी, मेरे हाथ के स्पर्श से ही तुम बिल्कुल ठीक हो जाओगी; उठो, बच्ची।"—"कौन बोल रहा है? अरे, कितना अच्छा हो गया है यह सब! कष्ट पूरी तरह दूर हो गया।" वह उठती है और चल पड़ती है; दौड़ती है वह और एक बार फिर मैदान में उछलती-कूदती है और अचरज करती है कि वह अपनी अशक्तता को कैसे झेल पायी। "पैदा ही विकलांग हुई थी, इसीलिए मुझे चलना और दौड़ना आता ही कहां था और अगर मुझे पता होता तो फिर सह भी कैसे पाती।" उछल-कूद जारी है। अब मैदान में एक और लड़की भी है और कितनी विचित्र-सी—उसके नैन-नक़्श, चाल-ढाल सभी कुछ तो पल-पल बदलता ही रहता है, अभी वह अंग्रेज़ है, अभी फ़्रांसीसी और फिर जर्मन, पोलिश और देखो तो? रूसी, फिर अंग्रेज़, जर्मन और फिर रूसी बनने का सिलसिला—क्या यह एक ही मुखड़ा हो सकता है? आखिर अंग्रेज़ औरत और उसकी फ़्रांसीसी बहन अथवा जर्मन और रूसी लड़की में कोई भी तो समरूपता नहीं? और तब भी। नैन-नक़्श बराबर बदल ही रहे हैं लेकिन सर्वदा है वही चेहरा—कैसी विचित्र बात है! उसके हाव-भाव भी लगातार बदल रहे हैं: अभी बिल्कुल सहमी, फिर रुष्ट, प्रसन्न, दु:खी, हर बार अलग, हमेशा हार्दिक—लेकिन ठहरिये! रोषपूर्ण दृष्टि हार्दिक कैसे हो सकती है? और कितना सौन्दर्य! चाहे जो रूपान्तरण हो रहा हो,

लेकिन सब कुछ हो रहा है बेहतर, और भी बेहतर। वह वेरा के पास तक पहुंच गयी है। "कौन हो तुम?"—"पहले वह मुझे वेरा पावलोव्ना कहता था और अब केवल 'मेरी मित्र' कहता है।"—"तो तुम हो वेरा, जिसका दिल मैंने जीता?"—"दिल और आत्मा, हां ठीक। लेकिन तुम हो कौन?"—"मैं तुम्हारे वर की वधू हूं।"—"कैसा वर?"—"मुझे नहीं पता। मुझे नहीं मालूम कि किसने मुझसे वचन भरे हैं—वे मुझे जानते हैं लेकिन मैं भला कितनों को जान सकती हूं। अपने लिए उनमें से चाहे किसी को चुन लो। चुनना उन्हीं में से पड़ेगा तुम्हें।"—"मैंने तो अपना चुनाव कर लिया है।"—"मत बताओ नाम उसका, मुझे नामों से कोई सरोकार नहीं। बस इतना समझ लो कि वह उनमें से एक है, जिन्हें मैंने चुन रखा है। मेरी इच्छा तो यही है कि मेरी बहनें और वर केवल एक दूसरे को चुनें। तुम तो तहख़ाने में क़ैद थीं न? तुम लक़वे की मारी और अपाहिज थीं?"—"थी तो।"—"अब ठीक हो गयीं?"—"जी हां।"—"और मैं वही हूं जिसने तुम्हें रोगमुक्त किया है, जिसने तुम्हें स्वतन्त्र किया है। याद रखो अभी अनेकों हैं जो इसी तरह यातना भोग रही हैं। अब तुम उनको रोगमुक्त करो, तुम्हें उनको स्वतन्त्र करना ही चाहिये। करोगी न?"—"करूंगी क्यों नहीं, लेकिन कृपा करके अपना नाम तो मुझे बताइये। कितना चाहती हूं आपका नाम जानना मैं।"—"मेरे अनेक नाम हैं, हर नाम अलग। पुकारनेवालों को जो अच्छा लगे, उसी नाम से मैं पुकारने देती हूं उसे। तुम मुझे जनता के लिए प्रेम समझ सकती हो। मेरा असली नाम ऐसा ही है। और इस नाम से मुझे बहुत कम लोग जानते हैं। और तुम उन थोड़े-से लोगों में बनो।" शहर में लौटने पर वेरा कोई तहख़ाना देखती है, जिसमें युवतियां क़ैद हैं। वह ताले पर हाथ डालती है, ताला टूटकर गिर पड़ता है। वह कहती है: "आओ, बाहर आओ!" और क़ैदी बाहर निकल आते हैं। फिर वह ऐसे कमरे में पहुंचती है जो विकलांग बहनों से भरा पड़ा है। वह कहती है: "उठो!" और वे सब उठकर चलने भी लगती हैं और चलते-चलते सभी दौड़ने, चौकड़ी भरने लगती हैं उसी मैदान में—

आह, कितना आनन्ददायी है, उससे कहीं अधिक जो उसने अकेले महसूस किया था! कितना निराला, निराला आनन्द!

13

पिछले कुछ दिनों से लोपुख़ोव को समय ही कहां था कि वह अपने साथी विद्यार्थियों से मिल-जुल पाता। किरसानोव ने, जो अकादमी में साथ पढ़नेवाले विद्यार्थियों से सम्पर्क बनाये रहता था, लोपुख़ोव के बारे में की जानेवाली नाना प्रकार की पूछ-ताछ के उत्तर में बता दिया कि उसका मित्र किस काम में व्यस्त है। जैसा कि हम जान ही चुके हैं, कि इसी मण्डली के एक सदस्य ने उसे वह पता दिया था, जिस पर लोपुख़ोव अभी जा रहा था।

उस दिशा में चलते-चलते लोपुख़ोव ने सोचा: "यदि बात बन जाय यहां तो सटीक समाधान हो जायेगा। अब से दो अथवा ढाई साल में मुझे अकादमी में पद मिल जायेगा, जीवन-निर्वाह के लिए पर्याप्त रहेगा। तब तक वह मदाम ब० के साथ सुखपूर्वक रहेगी बशर्ते कि मदाम ब० वास्तव में अच्छी महिला हों, जिस बात में मुझे सन्देह करने का कोई कारण नहीं है।"

और सचमुच ही उसे वह महिला बुद्धिमती, मिलनसार लगी, जिसमें आडंबर लेश मात्र भी नहीं था यद्यपि अपने पति के पद अथवा अपनी ही परिसम्पत्ति तथा पारिवारिक सम्पर्कों के फलस्वरूप उसमें बनावट और आडंबर उत्पन्न हो सकते थे। उनकी शर्तें उचित थीं, उनका घर वेरा के लिए पर्याप्त आरामदेह था—सब कुछ बढ़िया था, ठीक वैसा ही जिसकी लोपुख़ोव को आशा थी। इसी प्रकार मदाम ब० ने अपनी पूछ-ताछ के बाद वेरा का जो चित्र मन में बनाया उससे वे पूर्ण रूप से सन्तुष्ट थीं। सफलता मिलने ही वाली थी, बातचीत का आधा घंटा बीतने के बाद मदाम ब० ने कहा: "यदि आपकी जवान बुआ मेरी शर्तों से सहमत हो तो मैं यही कहूंगी कि मेरी ओर से तो वह चाहे जब, जल्द से जल्द यहां आ जाय।"

"वह तो सहमत हैं। उन्होंने मुझे अपनी ओर से स्वीकृति देने

का अधिकार दिया है। और अब जबकि सब बात तय हो चुकी मैं आपको कुछ बताना चाहता हूं, जिसका उल्लेख पहले करना उपयुक्त नहीं था। युवती मेरी कोई सम्बन्धी नहीं है। वह उस क्लर्क की बेटी है, जिसके बेटे को मैं पढ़ाता हूं। मेरे सिवा और कोई दूसरा था नहीं, जिसे वह इस मामले को सौंपती। फिर भी हम किसी भी रूप में सम्बन्धी नहीं हैं।"

"मैं जानती थी यह, श्रीमान लोपुख़ोव। आपकी ही तरह प्रोफ़ेसर न० (उन्होंने उन सज्जन की ओर इशारा किया, जिन्होंने किरसानोव को पता बताया था) और आपके साथी ने इस पर परामर्श किया था, आप तीनों ही एक दूसरे को सम्मानजनक मानते हैं, जिससे आप किसी युवती से अपनी मित्रता के बारे में उसे दूसरों की दृष्टि में बिना गिराये निस्संकोच बातचीत कर सकते हैं। प्रोफ़ेसर न० मेरे बारे में भी ऐसा ही सोचते हैं और यह जानते हुए कि मुझे गवर्नेस की ज़रूरत है, उन्होंने इसे अपना अधिकार समझा कि वे मुझे यह बता दें कि युवती आपकी सम्बन्धी नहीं है। उनके विवेक की निन्दा न करें—वे मुझे भली-भांति जानते-समझते हैं। श्रीमान लोपुख़ोव, मैं स्वयं निष्कपट स्त्री हूं और मुझे पता है कि किसका सम्मान करना चाहिये, विश्वास कीजिये इस बात का कि मैं प्रोफ़ेसर न० का उतना ही विश्वास करती हूं, जितना अपना; वैसे ही जैसे प्रोफ़ेसर न० आपका विश्वास करते हैं। लेकिन न० को युवती का नाम नहीं मालूम था; मेरा विश्वास है कि अब हम लोगों ने सब बात तय कर ली है और वह निकटतम भविष्य में मेरे परिवार में शामिल होने के लिए आ रही है, तो मैं आपसे उसका नाम पूछ सकती हूं।"

"नाम है वेरा पावलोव्ना रोज़ाल्स्की।"

"एक बात मैं और स्पष्ट करना चाहूंगी। आप सोच सकते हैं कि कितनी विचित्र बात है कि कोई मां, उस युवती को देखे बिना ही सब कुछ तय कर ले, जो उसके बच्चों से इतना घनिष्ठ होनेवाली है। सच तो यह है कि मैं आपकी मण्डली के बारे में अच्छी तरह जानती हूं। मैं यह भी जानती हूं कि यदि आप में से कोई भी किसी व्यक्ति में इस प्रकार की हितैषी रुचि लेता है तो वह ऐसी मां के लिए नायाब ही होगा जो यह चाहती है कि उसकी

बेटी वास्तव में भली स्त्री के रूप में विकसित हो। इसीलिए मैंने यह समझ लिया कि व्यक्तिगत निरीक्षण असभ्य और अनुचित कार्य होगा। मैं अपने को बधाई देती हूं, आपको नहीं महाशय।"

"और मैं कुमारी रोज़ाल्स्की के लिए प्रसन्न हूं। अपने परिवार में उसका जीवन इतना नारकीय है कि वह किसी भी सामान्य परिवार में खुश ही रहेगी। मैंने तो सपने में भी नहीं सोचा था कि उसे कभी सच्ची खुशहाली नसीब होगी, वह आपके साथ बहुत खुश रहेगी।"

"जी हां, न० ने कहा तो था कि उसका परिवार बुरा है।"

"यह तो बहुत नरम शब्द है।" इसके बाद लोपुख़ोव ने वेरा के बारे में वह सब बताया, जिसका ज्ञान मदाम ब० के लिए आवश्यक था ताकि वह उसे पिछली ज़िन्दगी के बारे में स्मरण न दिला पायें। मदाम ब० ने सब कुछ बहुत ध्यान लगाकर सुना और अन्त में लोपुख़ोव का हाथ थाम लिया।

"बस, श्रीमान लोपुख़ोव, नहीं तो मैं फूट-फूटकर रोने लगूंगी और मेरी जो उम्र है—पता है मैं चालीस की होनेवाली हूं—उसमें यह प्रदर्शित करना कितना हास्यास्पद होगा कि मैं अब भी पारिवारिक अत्याचार और बर्बरता के बारे में सुन नहीं सकती, जिससे कि मैं अपने बचपन में अपने घर में इतनी दुखी रह चुकी हूं।"

"अनुमति हो तो, बस एक बात और कहूंगा। आप शायद इसे अत्यन्त तुच्छ महत्त्व ही देंगी, लेकिन पहले से बता देना ही बेहतर होगा। वेरा की मां ने जो मंगेतर उसके लिए ढूंढ़कर उस पर थोप दिया है, वह उससे बचने के लिए भाग रही है।"

मदाम ब० सोच में पड़ गयीं। लोपुख़ोव ने उनकी ओर देखा और देखता ही रहा, फिर वह भी सोच में डूब गया।

"अगर मेरा अनुमान ग़लत नहीं है तो यह परिस्थिति आपको उतनी तुच्छ नहीं लगती, जितनी कि मैंने मान ली थी।"

मदाम ब० बड़ी परेशान लग रही थीं।

जब उसने देखा कि महिला कुछ भी नहीं कह पा रही है, तो लोपुख़ोव ने ही कहा: "मुझे खेद है। इस बात से आप सचमुच विचलित हो गयी हैं।"

"जी हां, महाशय, समस्या पेचीदा और गंभीर है। निस्सन्देह,

अपने माता-पिता की इच्छा के विपरीत घर छोड़ना ही भिड़ के छत्ते में हाथ दे देने के बराबर है। लेकिन उससे मुझे कोई अन्तर नहीं पड़ता। अगर उनके अत्याचार से छुटकारा पाने का ही साधारण मामला होता, तो उसको तो किसी न किसी तरह हल किया जा सकता था—ज़रूरत पड़ने पर कुछ रक़म भी दी जा सकती थी इसके लिए। जैसा मैंने कहा, यह तो कुछ बात न होती। लेकिन जब मां, उस तरह की मां शादी के लिए इसरार करे, इसका मतलब यह मंगेतर धनवान और लाभदायक है।"

"इसमें तो कोई दो राय हो नहीं सकतीं।" लोपुख़ोव का स्वर मर-सा गया था।

"बिल्कुल यही बात है, महाशय और बस इसीलिए तो मुझे चिन्ता उत्पन्न हो गयी। इसका मतलब तो यही हुआ कि मां कभी तुष्ट नहीं होगी, चाहे कुछ भी रक़म दी जाय। पता है आपको माता-पिता के अधिकार क्या हैं। इस तरह के मामले में वे उन अधिकारों का पूरा-पूरा लाभ उठायेंगे, मामले को अदालत में ले जायेंगे और सर-धड़ की बाज़ी लगाकर अन्त तक लड़ेंगे।"

लोपुख़ोव उठकर खड़ा हो गया।

"मुझे और कुछ नहीं कहना, बस यही अनुरोध करता हूं कि आज जो कुछ बातचीत हुई उसे भूल जाइये।"

"नहीं, नहीं रुकिये तो। मुझे अपनी छोटी-मोटी सफ़ाई देने का अवसर तो दीजिये। आप सोचेंगे कि मैं कितनी अधम हूं! जिस स्थिति में प्रत्येक स्वाभिमानी जीव सहानुभूति और समर्थन से अभिभूत हो जाता है, मैं उसी से सीधे हट जाती हूं। कितने दयनीय हैं हम सब!"

वह वास्तव में ही दयनीय प्रतीत हो रही थीं, उसकी कातरता पूर्णरूपेण सच्ची थी। काफ़ी देर तक वह कर्त्तव्य विमूढ़ हकलाती-लड़खड़ाती रहीं, लेकिन अन्त में उसने अपने को संयत कर ही लिया। हतबुद्धि, शान्त अथवा जो भी विचार हो, अब उसे लोपुख़ोव से कुछ नयी बात तो कहती नहीं थी, क्योंकि वह ख़ुद ही कुछ कम विचलित नहीं था। उसने लोपुख़ोव के समक्ष जो विचार व्यक्त किये थे उन्हीं में लीन लोपुख़ोव उनकी बुद्धिसंगत व्याख्याओं

की ओर ध्यान देने में असमर्थ था। उसने मदाम ब० को अपनी बात कहने दी और फिर बोला:

"आप खेद मत प्रकट कीजिये। मैं इसीलिए रुका रहा कि मेरा चला जाना कहीं आपको अशिष्ट न लगे, अथवा आप यह न मान लें कि मैं आपको दोषी समझता हूं अथवा मेरे मन में आपके प्रति कोई दुर्भाव है। लेकिन यह मैं आपसे स्वीकार करूं कि आपने जो कुछ कहा, उसका एक शब्द भी मैंने नहीं सुना। काश मैं नहीं समझा कि आप कितना सही हैं! और न होतीं तो कितना सुखद होता! मैं वेरा से यही कह दूंगा कि बात बनी नहीं अथवा आप मुझे अच्छी नहीं लगीं और हम लोग मुसीबत से बच निकलने की उम्मीद लगाये रह सकते हैं। क्या कहूं मैं उससे?"

मदाम ब० रो पड़ीं।

आखिरी सीढ़ी पर पहुंचते-पहुंचते लोपुख़ोव ने फिर पूछा: "क्या कहूं वेरा से?" गलेर्नी सड़क के मोड़ से कोन्नोग्वार्देइस्की मार्ग में मिलनेवाली सड़क तक उसके मन में यही विचार आते रहे: "क्या करेगी आखिर वह? क्या करेगी भला?"

यह कहने की आवश्यकता नहीं कि मदाम ब० असंदिग्ध रूप से वैसे ही सही नहीं थीं, जैसे कि वह वयस्क जो अपने बच्चे को यह आश्वासन देता है कि चांद को नहीं छुआ जा सकता। अपनी सामाजिक स्थिति तथा पति के पद के कारण उपलब्ध सम्पर्कों के रहते यदि वह मन पक्का करके चाहतीं तो वेरा को रख सकती थीं और निश्चित रूप से वेरा की मां न तो मदाम ब० के हाथों से वेरा को छीन सकती न मदाम ब० अथवा उनके पति को गंभीर रूप से तकलीफ़ दे सकती थी, जिसके ऐसे मामले में क़ानूनी प्रतिवादी बन जाने की उन्हें भीषण आशंका थी। कुछ भी होता, मुसीबत तो खड़ी हो ही जाती और इसके बदले में कुछ अप्रिय टकराव भी उत्पन्न हो जाते; तब उन्हें अपनी ही किसी आपात स्थिति के लिए सहेज कर रखे गये उपकारकों में से किसी की सहायता लेने पर विवश होना पड़ता। अपराध का दायित्व कहां, कोई भी विवेकशील व्यक्ति भला मदाम ब० द्वारा चुने गये मार्ग

के सिवा और कौनसी कार्रवाई करता? हमें उनकी भर्त्सना करने का कोई अधिकार नहीं और न ही इसी तर्कणा के आधार पर लोपुख़ोव को बिल्कुल ग़लत नहीं कहा जा सकता कि वेरा को मुसीबत से बचा न पाने से वह निराशा में डूब गया।

14

और इस पूरे समय—और कितना लम्बा समय था यह—वेरा पहले से निर्धारित बैंच पर बैठी थी, मोड़ पर दिखायी देनेवाली हर टोपी को देखकर उसका दिल धड़क उठता था। जाने कितने लोग निकल चुके थे, और तब अन्ततः! उसका दोस्त अन्ततः! वह उछल कर खड़ी हो गयी और उससे मिलने दौड़ी।

बैंच के पास आते-आते उसने अपने मुख पर आयी उदासी को छिपाने की चेष्टा अवश्य कर ली होती, लेकिन सब अप्रत्याशित हो गया। ताहम, उसने वेरा का अभिवादन किया।

"बात नहीं बनी न?"

"नहीं, मेरी मित्र।"

"लेकिन सब कुछ तो ठीक-ठाक था, था न? फिर क्या हुआ? बात कैसे टूटी?"

"चलो मित्र, तुम्हें घर तक छोड़ दूं। रास्ते में वह सब बात भी कर लेंगे। बस, अभी सब कुछ बताता हूं; पल-दो पल सांस तो लेने दो। मैं तो अभी भी ऊहापोह में ही फंसा हुआ हूं। हमें, समस्या हल करने के लिए कोई बिल्कुल नयी योजना बनानी पड़ेगी। हम हार हरगिज़ नहीं मानेंगे।" और यह कहकर वह कुछ आश्वस्त हुआ, लेकिन उत्साह की मात्रा नगण्य थी।

"अब बताइये भी, मैं और इन्तज़ार नहीं कर सकती। कहते हैं आप बिल्कुल नयी योजना बनायेंगे—तो क्या यह मतलब है आपका कि पुरानी से बिल्कुल काम नहीं चलेगा? मैं गवर्नेस नहीं बन सकती? कितनी अभागी हूं, कितनी बदनसीब हूं मैं!"

"क्यों धोखे में रखूं? गवर्नेस नहीं बन सकतीं तुम। मैं यही तो

बताने जा रहा था। लेकिन मेरी मित्र, धीरज रखो! मान कड़ा करो! मज़बूत दिल ही जीतता है।"

"मेरे दोस्त, मैं मज़बूत हूं, लेकिन कितनी कुर्बानी देकर।"

कुछ क्षण मौन बीत गये। दोनों चलते रहे।

क्या है यह? वह अपने लबादे के भीतर क्या छिपाये हुए है?

"मेरी मित्र, तुम्हारे पास कुछ है, लाओ मुझे दो।"

"नहीं, नहीं इसकी ज़रूरत नहीं। भारी नहीं है, सच, नहीं।"

दोनों चलते रहे। नि:शब्दता, लम्बी नि:शब्दता उग उठी।

"पता है, मैं रात को दो बजे तक कितनी उत्तेजित थी। और जब मैं अन्तत: नींद की गोदी में समायी तो मैंने बड़ा विचित्र सपना देखा! मैंने सपना देखा कि मैं वायुहीन तहख़ाने से अभी-अभी रिहा हुई हूं और लक़वे के रोग से मुक्त हुई हूं। मैं खेत में दौड़कर पहुंचती हूं, जहां मुझे अनेकों सहेलियां मिलती हैं, उसी तरह रोग से मुक्त और स्वतन्त्र, जैसे कि मैं हुई थी, और कितनी खुश—असीम मैदान में दौड़ती, कूदती, फांदती! लेकिन ऐसा होना कहां था! मैंने तो यह सोचा था कि अब मुझे घर लौटकर नहीं जाना पड़ेगा।"

"मेरी मित्र, अपनी पोटली मुझे दे दो, अब तो खेल ख़त्म हो गया है।"

एक बार फिर नि:शब्दता पसर गयी। वे चलते रहे। समय बीतता गया।

"सुनिये मेरी मित्र, उस महिला और मेरा दोनों का ही यह विचार है कि तुम अपनी मां की इच्छा के विपरीत घर नहीं छोड़ सकतीं। बिल्कुल भी नहीं—लेकिन, कृपया मेरा हाथ पकड़ लीजिये, तुम्हें देखकर मुझे चिन्ता हो रही है।"

"चिन्ता न करें, यह तो नक़ाब की वजह से है—मैं सांस नहीं ले पा रही," और उसने नक़ाब पीछे पलट दिया। "हां, अब बेहतर है।"

("कितनी पीली लग रही हैं!") "मैंने जो कहा उसे भूल जाओ मित्र, बात वैसे नहीं हुई, जिस ढंग से मैंने बताया। हम किसी न किसी तरह कामयाब हो ही जायेंगे।"

"लेकिन कैसे, मेरे प्यारे? आप ऐसा इसलिए कह रहे हैं, कि मुझे बुरा न लगे। कुछ भी तो नहीं कर सकते हम।"

वह एक भी शब्द नहीं बोला। वे लोग मौन चलते रहे।

("कितनी पीली पड़ गयी है यह!") "एक और मार्ग है, मेरी मित्र।"

"क्या है वह, मेरे प्यारे?"

"ज़रा-सी संयत हो जाइये, तभी बताऊंगा। इसके लिए संतुलित मन से सोचने की ज़रूरत है।"

"तुरन्त बताइये। जब तक मैं सुन नहीं लूंगी, तब तक चैन नहीं आयेगा मुझे।"

"नहीं मेरी मित्र, इस समय तुम बहुत उद्वेलित हो। ऐसी स्थिति में कोई महत्त्वपूर्ण निर्णय लेना शायद तुम्हारे लिए संभव नहीं। कुछ समय बाद, अलविदा मेरी मित्र। जैसे ही मुझे विश्वास हो जायेगा कि तुम्हारा मन संतुलित हो गया है, बता दूंगा।"

"कब?!"

"परसों, जब मैं फ़ेद्या को पढ़ाने आऊंगा तब।"

"परसों तो बहुत दूर है।"

"अच्छा तो कल मैं विशेष रूप से आ जाऊंगा।"

"मैं इतना भी इन्तज़ार नहीं कर सकती!"

"तो फिर आज संध्या को ही।"

"नहीं, मैं आपको जाने नहीं दूंगी। आप मेरे साथ ही चलें। आप कहते हैं मैं अशान्त हूं, आप कहते हैं कि मैं ठीक-ठीक सोच नहीं सकती हूं—कोई बात नहीं, आप दोपहर के खाने तक रुकें। दोपहर आपको पता चल जायेगा कि मैं शिला की तरह अचल हूं। मां के खाने के बाद कुछ झपकी लेती है, हम तभी बात कर लेंगे।"

"लेकिन मैं ऐसे कैसे अचानक आ सकता हूं? और अगर हम साथ-साथ पहुंचे तो आपकी प्यारी माता जी इस बार तो आपत्ति किये बिना नहीं रहेंगी।"

"मैं परवाह नहीं करती! नहीं, मेरे दोस्त, तुम्हें चलना ही पड़ेगा। मैं यहां नक़ाब ऊपर करके चल रही हूं। कोई भी हमें देख सकता था।"

"बिल्कुल ठीक कह रही हैं आप।"

15

बेटी लोपुख़ोव के साथ आयी है, यह देखकर सचमुच ही मार्या अलेक्सेयेव्ना चौंक गयी। दोनों को छिद्रान्वेषी दृष्टि से ताकने लगी।

"मैं तो यही कहने आया हूं कि मैं परसों काफ़ी व्यस्त हूं। इसलिए 'पढ़ाने के लिए कल ही आऊंगा। बैठ जाऊं? बहुत थक गया हूं और उद्विग्न। दम भर बैठकर सांस लेना चाहता हूं।"

"क्या बात है द्मीत्री सेर्गेइच, आप तो सचमुन बहुत ही हैरान-परेशान प्रतीत हो रहे हैं।"

यह सब बहानेबाज़ी है या ये सचमुच ही एक दूसरे को कहीं मिल गये? अगर वे जानबूझकर मिले होते तो युवक कुछ ज़्यादा चुलबुला होता। क्या ये दोनों प्रेमियों जैसी नोक-झोंक करके आ रहे हैं, और अगर लड़की ने इसे नाराज़ कर दिया है, तो वह निश्चय ही दु:खी होता, लेकिन तब वह घर क्यों चला आया होता। और वह तो सीधे अपने कमरे में चली गयी है और उसकी दिशा में दृष्टिपात तक नहीं किया; इससे भी झगड़े का कोई संकेत नहीं मिलता; बस लगता तो यही है कि इनकी मुलाक़ात आखिर आकस्मिक ही थी। फिर भी इन दोनों की ओर से आंखें बिल्कुल ही तो नहीं मूंदी जा सकतीं। अच्छा यही होगा कि खोज-ख़बर रखी जाय।

"मैं तो ठीक-ठाक ही हूं, मार्या अलेक्सेयेव्ना, लेकिन वेरा पावलोव्ना कुछ पीली-उदास दिखती हैं, हो सकता है यह मुझे लगा।"

"वेरा? अरे वह तो ऐसी ही है।"

"शायद, मुझे ऐसा लगा। आपको बताता हूं, मेरा सर चकरा रहा है तरह-तरह के विचारों से।"

"क्या बात है, द्मीत्री सेर्गेइच, कहीं अपनी मंगेतर से तो तकरार नहीं कर बैठे, क्या?"

"नहीं मार्या अलेक्सेयेव्ना, उधर कोई समस्या नहीं। अपने मां-बाप से मुझे दो-दो बातें ज़रूर करनी हैं।"

"द्मीत्री सेर्गेइच! क्या ऐसा किया जाता है, अपने ही माता-पिता से झगड़ा? मुझे आश्चर्य हो रहा है, जनाब।"

"कोई विकल्प भी तो नहीं मार्या अलेक्सेयेव्ना, उनसे तो ऐसे ही निपटना पड़ेगा। उनकी फ़रमाइशें पूरी करना किसी इंसान के बस में तो है नहीं।"

"हां, यह बात दूसरी है। अब सबको ख़ुश तो किया भी नहीं जा सकता, कितना कुछ करे कोई। अगर ऐसी बात है—मैं समझती हूं बात कुछ रक़म की बाबत होगी—तो फिर मैं आपको दोष नहीं दे सकती।"

"यदि यह दुस्साहस न मानें तो मैं कहूं, मार्या अलेक्सेयेव्ना, मुझे ऐसी परेशानी लायी है कि मुझे ऐसी संगत में कुछ आराम करके अपना मन बहलाने की आवश्यकता है जहां मैं अपनापन महसूस करता हूं, जिसका मैं सम्मान करता हूं, मुझे केवल आपके ही घर में यह मिलता है आपकी कृपा से, मैं आज खाने के लिए यहीं रुक जाता हूं। आप मत्र्योना को मेरी ओर से कुछ चीज़ें ख़रीदने के लिए बाज़ार जाने की अनुमति दें। डेन्कर की दुकान पास ही है, वहां की मदिरा अधिक उच्च कोटि की तो नहीं, लेकिन काफ़ी अच्छी है।"

खाने के उल्लेख से तो हमारी मेजबान के क्रोध का पारा चढ़ गया था, लेकिन मत्र्योनावाली बात सुनते ही पारा उतर गया और कुटिल-सी मुस्कान झलक आयी: "देखें यह छोकरा, क्या कुछ फ़रमाइश करता है। डेन्कर से मंगायेगा? शायद अच्छी ही होगी।" लेकिन इस छोकरे ने मार्या अलेक्सेयेव्ना के चेहरे पर आये उतार-चढ़ाव की ओर देखा तक नहीं, बल्कि सिगरेट केस में रखे न जाने किसी पत्र के एक हिस्से को फाड़ा और पेंसिल निकालकर, काग़ज़ के उस टुकड़े पर लिखने लगा।

"अगर आप अन्यथा न मानें, मदाम, तो बतायें आप कौनसी मदिरा बेहतर समझेंगी?"

"द्मीत्री सेर्गेइच, सच कहूं तो मैं इस बारे में कुछ भी नहीं जानती—मैं तो चाय-पानी पीनेवालों में हूं। बिल्कुल ठीक ही तो है। स्त्रियों को मदिरापान नहीं करना चाहिये न।"

("तुम्हारी सूरत देखते ही पता चल जाता है, मदाम!")

"निस्सन्देह यह ठीक है, मार्या अलेक्सेयेव्ना। लेकिन युवतियां भी तो चेरी की मदिरा पसन्द करती हैं। सूची में जोड़ दूं इसका नाम?"

"चेरी की मदिरा कैसी होती है, द्मीत्री सेर्गेइच?"

"यह मादक तो होती ही नहीं, लेमनेड जैसी अधिक होती है।" उसने दस रूबल का नोट निकाला। "इससे काम चल जायेगा, आपका क्या विचार है?" सूची की पड़ताल की गयी। "पांच और दे दूं, शायद ज़रूरत पड़ जाय।"

तीन सप्ताह की आय, एक महीने का ख़र्च। लेकिन वह करता भी क्या, गुड़ तो डालना ही पड़ता मिठास के लिए। वेरा की मां की आंखों में चमक आ गयी, कृत्रिम मिठास की मुस्कान चेहरे पर फैल गयी।

"कहीं आस-पास मिठाईवाला भी है? पता नहीं उसके यहां अखरोट का केक मिलेगा कि नहीं—मैं तो इसे सबसे अधिक पसन्द करता हूं, मदाम—लेकिन अगर नहीं, तो जो भी हो उसे ले लें।"

और वह मत्र्योना को हिदायत देने के लिए किचन में चला गया।

"खायें-पियें और मौज उड़ायें, मार्या अलेक्सेयेव्ना, मैं अपने मां-बाप से निपट पाने के अवसर पर जश्न मनाना चाहता हूं। इसके अलावा क्यों नहीं अपनी उम्मीदों के चिराग़ की लौ बढ़ाते रहें? मेरी मंगेतर से संबंधित योजना क़रीब पूरी हो गयी, सामने नयी ज़िन्दगी पड़ी है, हंसी-ख़ुशियों से भरी ज़िन्दगी—ठीक है न, मार्या अलेक्सेयेव्ना?"

"ठीक कहते हैं, द्मीत्री सेर्गेइच। लेकिन ऐसी क्या बात है कि आप इस तरह पैसे फूंक रहे हैं? कभी सोचा भी नहीं था कि आपके जैसा संयत मस्तिष्कवाला भी ऐसे कर सकता है। लगता है आपकी मंगेतर ने कुछ पेशगी दे दी है?"

"ऐसी बात तो नहीं, मार्या अलेक्सेयेव्ना। यद्यपि, धन पास में हो तो उसमें से थोड़ा तो ख़र्च किया ही जा सकता है। पेशगी क्या है? इस संदर्भ में बिल्कुल ही निरर्थक। अरे, कुछ छोटी-मोटी पेशगी से क्या काम चल सकता है। ऐसे मामलों में ईमानदारी भली

है, नहीं तो सन्देह उत्पन्न हो सकता है। और यह ईमान की बात भी नहीं।"

"आप ने तो ठीक ही कहा, द्मीत्री सेर्गेइच, बिल्कुल ठीक कहा आपने। और अगर आप मुझसे पूछें तो सभी मामलों में ईमानदारी भली है।"

"सच कहा आपने, मार्या अलेक्सेयेव्ना।"

खाने का समय होने तक के आध-पौन घण्टे के दौरान मान-सम्मान के बारे में हर प्रकार के पहलू पर अत्यन्त हार्दिक विचार-विनिमय चलता रहा। इसी दौरान, स्पष्टवादिता की झोंक में, लोपुख़ोव ने अपने विवाह की तिथि का उल्लेख किया, जो धीरे-धीरे बहुत निकट आ रही थी और वेरा पावलोव्ना के विवाह की प्रगति कैसी है? मार्या अलेक्सेयेव्ना कुछ कह नहीं सकती क्योंकि उसने लड़की पर कभी दबाव नहीं डाला। निस्सन्देह, ऐसा होना भी नहीं चाहिये, लेकिन लोपुख़ोव का सुविचारित मत था कि वेरा शीघ्र ही विवाह के बारे में अपना मन पक्का कर लेगी; नहीं, उसने बताया नहीं है ऐसा लोपुख़ोव को, लेकिन सच बात तो यह है कि वह अपनी आंखों का इस्तेमाल ढंग से कर ही सकता है। मार्या अलेक्सेयेव्ना, मैं और आप दोनों ही मंजे हुए लोग हैं, हम को कोई आसानी से मूर्ख नहीं बना सकता। मैं उम्र में छोटा हो सकता हूं, लेकिन आप यह नहीं कह सकतीं कि मैं कल का छोकरा हूं, है न, मार्या अलेक्सेयेव्ना?"

"बिल्कुल नहीं, निश्चयपूर्वक नहीं द्मीत्री सेर्गेइच।"

संक्षेप में, उनकी आपस की बढ़िया बातचीत से लोपुख़ोव इतना उत्फुल्ल हो गया कि विषाद नाममात्र के लिए भी नहीं रहा! वह इतना अधिक जोशीला हो रहा था जैसा कि उसकी संभाषी ने पहले कभी उसे नहीं देखा था। कैसा शैतान नौजवान है, बदमाश कहीं का—अपनी प्रेमिका से कम से कम कुछ हज़ार झटक लिये और जब मां-बाप को पता चल गया कि वह अपनी जेब भर रहा है और भरते ही जायेगा तो झट उसके पास पहुंचे तब वह कहता है: "मैं बेटे का कर्त्तव्य निभाने के लिए हर समय तैयार हूं। लेकिन एक भी कोपेक आपको दिवाल नहीं।" क्या यह बदमाशी नहीं! लेकिन ऐसे व्यक्ति से बातचीत करने में सचमुच बड़ा मज़ा आता है। विशेष

रूप से जब मत्र्योना के वापस आने की आहट मिल गयी हो, यह कहकर कि सोने के कमरे से रूमाल लाने के बहाने किचन में लपक कर जा पहुंचेगी यह देखने कि 12 रूबल 50 कोपेक की मदिरा—यह तो पता ही है कि खाने के समय तो इसका तिहाई ही पिया जायेगा—और साथ ही 1 रूबल 50 कोपेक का मिठाई की दुकान से ख़रीदा केक भी आ गया है। यह तो बिल्कुल फ़िज़ूल ख़र्ची ही है। अलबत्ता, इसमें से कुछ बचेगा भी तो, जिसे अतिथियों को जेम की जगह परोसा जा सकेगा, और यह भी कोई घाटे का सौदा नहीं, बैंक में रक़म के ही बराबर है।

16

वेरा अपने कमरे में बैठी हुई थी।

"क्या मैंने उन्हें यहां लाकर ठीक किया? मां ने कैसी तीखी नज़रों से देखा था।

"कितनी अनुपयुक्त स्थिति में ला डाला उनको। खाने तक कैसे रुक सकेंगे वे?

"हे भगवान, मेरा क्या होगा, कैसी हतभागी प्राणी हूं मैं!

"उन्होंने कहा—एक और मार्ग है, नहीं मेरे प्रिय, कोई रास्ता नहीं है!

"हां, है, अवश्य है, यह खिड़की। जब पानी सर के ऊपर से निकल जायेगा, हां ऐसा हो जायेगा, तो मैं इस खिड़की से बाहर कूद जाऊंगी।

"बेवक़ूफ़ लड़की, कब पानी सर के ऊपर से निकल जायेगा—आज क्या स्थिति बेहतर है?

"जब तुम खिड़की से बाहर कूदो तो उड़ान भरो और तेज़ी से उड़ो, इतनी तेज़ी से कि तुम गिर नहीं रही हो बल्कि सचमुच, उड़ रही हो—यह बहुत ही आनंदप्रद होना चाहिये, अर्थात् जब तक तुम पटरी से न जा टकरा-ओ—चट्टान की तरह कठोर पटरी; और पीड़ा? उसके लिए समय कहां, लेकिन सोचती हूं कितना निर्मम कठोर होगा यह, लेकिन क्षण भर के लिए ही तो और ये क्षण

कितने कम होंगे, जबकि उस क्षण से पहले वायु मुलायम गद्दे की नरमाई से अधिक नरम होगी, हल्की, मुलायम, कोमल... वह तो आनंदप्रद होता ही है न...

"और फिर इस सब के बाद? हर कोई गर्दन उचकाकर फटी हुई खोपड़ी, कुचला हुआ चेहरा, रक्त-रंजित, धूल-धूसरित... लेकिन काश कि पहले से साफ़ रेत का छिड़काव वहां कर लो तो—नीचे कितनी गन्दगी है—निर्मलतम और श्वेततम रेत का... तब तो निश्चय ही बढ़िया रहेगा: निर्मल, बिना कुचला चेहरा, किसी भी आंख में भय का लेश भी नहीं।

"पेरिस में तो दु:खी युवतियां चिमनी का मुंहबन्द करती हैं और धुएं से घुटकर मर जाती हैं। हां, यह विचार बहुत बढ़िया है। खिड़की से बाहर कूदना उतना अच्छा नहीं। यही ठीक है!

"कितनी ज़ोर-ज़ोर से वे लोग बात कर रहे हैं। क्या बात कर रहे हैं, किस बारे में?.. अरे मुझे तो कुछ भी समझ में नहीं आ रहा।

"मैं उनके लिए पत्र छोड़ दूंगी, जिसमें सब कुछ लिख दूंगी। क्या मैंने नहीं कहा था तब कि यह मेरे लिए अत्यन्त स्मरणीय दिन है? इतनी बहादुर भी हो सकती हूं मैं क्या? कैसे हुआ यह सब? मुझे तो कुछ भी पता नहीं, तब मैं कितनी मूर्ख थी, कुछ भी नहीं समझती थी।

"लेकिन, पेरिस की दु:खी युवतियां कितनी चतुर होती हैं! निश्चय ही, मैं भी चतुर बन सकती हूं। कितना विचित्र होगा, वे लोग दम घुटनेवाले धुआं भरे कमरे में घुसेंगे, कुछ नहीं देख सकेंगे, हरे धुएं की वजह से कितने चौंक जायेंगे वे—क्या हुआ? वेरा कहां है?—मां पिता जी की ओर मुड़कर चीखेगी: 'खड़े-खड़े क्या रहे हो, उस खिड़की को तोड़ो, खोलो' और जब वे उसे खोलेंगे, तो देखेंगे कि मैं ड्रेसिंग टेबल के पास सिर लुढ़काये पड़ी हूं और मेरा चेहरा मेरे हाथों में छिपा हुआ है। 'वेरा धुएं ने तुम्हें डस लिया है।' लेकिन मैं कुछ भी नहीं कहती। 'वेरा, कुछ तो बोल, बेटी, कुछ तो बोल।'—'वह मर चुकी है!' और उस पर रोना-पीटना शुरू हो जाता है—कैसा विचित्र लगता है यह सोचना कि वे रोयेंगे और मां सब से, हरेक से कहेगी कि वह वेरा को कितना प्यार करती थी।

"सच है कि लोपुख़ोव को शोक होगा। लेकिन, उन्हें मेरा पत्र तो मिल ही जायेगा।

"मैं ऐसा कर सकती हूं, कर सकती हूं, करूंगी मैं ऐसा जैसे मुझ से पहले पेरिस भी दुःखी युवतियां कर चुकी हैं। और मैं चाहे जो कहूं, वह करूं, मुझे भय नहीं सताता।

"और भय की बात भी क्या है? यह इतनी सुहावनी है। लेकिन जिस योजना की उन्होंने चर्चा की थी, यह कैसी है? कोई भी नहीं। यूं ही कहा था, मुझे सान्त्वना देने के लिए।

"सान्त्वनाप्रद शब्दों में कुछ भी नहीं धरा। कैसी सान्त्वना जब सहायता के लिए कुछ भी नहीं किया जा सकता? अपनी सभी चतुराई के बावजूद वह मुझे शान्त करना चाहते थे। क्यों? ऐसा सचमुच आवश्यक नहीं है।

"लेकिन कैसे स्वर उभर रहे हैं ये? प्रफुल्ल! वह प्रफुल्लित प्रतीत हो रहे हैं!

"कहीं उन्हें वास्तव में कोई उपाय तो नहीं सूझ गया?

"नहीं, यह असंभव है।

"लेकिन अगर ऐसा न होता तो वह इतना प्रफुल्लित क्यों प्रतीत होते?

"उन्हें क्या विचार सूझा?"

17

मां ने आवाज़ दी: "वेरा, खाने का समय हो गया!"

अच्छा तो पावेल कोन्स्तान्तीनिच भी घर लौट आये, कचौड़ी, नानबाई की नहीं, मत्र्योना की ही पकायी हुई, कल के सूप से निकले मांस की—मेज़ पर इन्तज़ार कर रही थी।

"मार्या अलेक्सेयेव्ना, आपने खाने से पहले कभी थोड़ी वोद्का चखने की कोशिश नहीं की है न? बहुत अच्छी है आपके लिए, विशेष रूप से यह कड़वी, डाक्टर के रूप में आपसे सिफ़ारिश कर रहा हूं मैं। चखिये न बराये मेहरबानी। अवश्य लीजिये। डाक्टर का कहा तो मानिये।"

"अच्छा, डाक्टर का आदेश पालन करने के लिए यह भी सही, लेकिन बस एक अंगुल भर ही।"

"क्या बात करती हैं, मार्या अलेक्सेयेव्ना? एक अंगुल से तो कुछ भी भला होनेवाला नहीं।"

"लेकिन आप क्यों नहीं पीते, द्मीत्री सेर्गेइच?"

"मैं न जाने कितनी पी चुका हूं पहले, काफ़ी है, मार्या अलेक्सेयेव्ना। मैंने तौबा कर ली है।"

"ठीक कहते हैं आप, वह गर्माती है।"

"हां, गर्माती है, इसका फ़ायदा इसी में है, मदाम।

("सचमुच प्रफुल्लित है लोपुख़ोव। क्या सचमुच, निश्चयपूर्वक कोई उपाय है? इतने घुल-मिल कैसे गये दोनों? वह मेरी ओर तो देखता ही नहीं, बड़ा चतुर धोखेबाज़ है!")

वे मेज़ पर बैठ गये।

"हां, मैं और पावेल कोन्स्तान्तीनिच इस पेय का गिलास पियेंगे। बिल्कुल बियर की तरह, इससे तेज़ नहीं। ज़रा घूंट तो भरिये मदाम।"

"यदि यह बियर है, जैसा कि आप कह रहे हैं, तो मैं भी घूंट भर लूंगी।"

("हे भगवान, कितनी बोतलें हैं! कैसी मूर्ख हूं मैं। तो इस अचानक घनिष्ठता का रहस्य यह है!")

("कितना चतुर, आश्चर्यजनक रूप से चतुर है वह, ख़ुद नहीं पी रहा, बिल्कुल नहीं, बस अपने पेय की चुस्की ले रहा है। अलबत्ता है बढ़िया चीज़, मिले-जुले अन्न की तल्ख़ी और अपना ख़ास नशा, सचमुच बढ़िया नशा। जैसे ही मैं अपनी छोकरी को स्तोरेश्निकोव से बांध दूंगी मैं भी वोद्का की जगह ऐसीवाली बियर पीने लगूंगी, बिल्कुल... अरे... उसका होश-हवास कभी उड़ेगा नहीं! यह आदमी थोड़ा भी नहीं चख रहा! ऐसी बात नहीं कि मैं इससे ख़ुश नहीं। फिर भी लगता है कि जब इस पर धुन सवार हो जाय तो मछली की तरह पिये ही जानेवालों में है।")

"आप ख़ुद एक-दो बूंद भी नहीं लेंगे, द्मीत्री सेर्गेइच?"

"मैं बहुत पी चुका हूं मदाम, पहले, इतनी कि बहुतेरे दिन के लिए काफ़ी होगा। जब मैं बेकार था और पैसा भी नहीं था, तो

मैं पीतां था। अब मेरे पास दोनों है, मुझे पीने की क्या ज़रूरत और फिर मैं इसके बिना भी बहुत सुखी हूं।"

और खाना इस तरह चलता रहा। फिर मिठाई की दुकान से आया केक परोसा गया।

"अरे, मत्र्योना बीबी, मिठाई के साथ क्या होना चाहिये?"

"अभी लाती हूं, अभी।" और वह शेम्पेन की बोतल लेकर हाज़िर हो गयी।

"वेरा पावलोव्ना, आपने कुछ नहीं पिया और न ही मैंने पी है। आइये अब हम लोग भी पियें। मेरी वधू और आपके मंगेतर के लिए!"

(वेरा मन ही मन आश्चर्य से भर उठी: "क्या है यह सब? आख़िर क्या है?")

मार्या अलेक्सेयेव्ना ने दुआ दी, "ईश्वर तुम दोनों उम्मीदवारों को आशीर्वाद दे। और वह हमें, बूढ़े-बुढ़िया को अपनी वेरा की शादी, शीघ्र ही दिखाये।"

"भय की कोई बात नहीं, आपके धीरज का फल अच्छा ही निकलेगा और शीघ्र ही। क्या कहती हैं, वेरा पावलोव्ना आप? हां?"

"क्या वह सचमुच यह कहते हैं?" वेरा ने सोचा।

"'हां' ही कहो, वेरा पावलोव्ना। निस्सन्देह है तो यही। 'हां' कहिये।"

उसने कह दिया 'हां'।

"ठीक है, वेरा पावलोव्ना, मां को संदेह में डालने की क्या ज़रूरत है। हमें तो बस 'हां' से मतलब है। और अब हमारी दूसरी मनोकामना: वेरा पावलोव्ना के विवाह-दिवस के लिए—शीघ्र आये यह दिन! पीजिये, वेरा पावलोव्ना, पीजिये, आपके लिए लाभदायक सिद्ध होगा यह पेय। लेकिन पहले हम अपने जाम तो टकरायें। आपकी शादी जल्द हो, इसी मनोकामना के लिए जाम!"

गिलासों की टकराहट।

"हे ईश्वर, रहम। और शुक्रिया तुम्हारा, प्यारी बेटी वेरा, तुम मेरे बुढ़ापे का सुख हो!" मार्या अलेक्सेयेव्ना ने अपनी नम हो गयी

आंखों को पोंछा। बियर और मदिरा के घाल-मेल से वह भावुक हो उठी थी।

उसके पति ने तोते की तरह दोहराया: "हे ईश्वर रहम।"

खाना समाप्त होने पर मार्या अलेक्सेयेव्ना ने कहा: "द्मीत्री सेर्गेइच, तुमने हमारा बहुत मनोरंजन किया! भरपेट मनोरंजन! इतनी बड़ी दावत और वह भी हमारे ही घर में। जैसे कोई त्योहार हो।" यह कहने तक उसकी दृष्टि में चमक कम और नरमाई अधिक आ गयी थी।

हर चाल चतुराई से सफल इतनी नहीं होती, जितनी अपने आप हो जाती है। लोपुख़ोव को जब उसने मदिरा मंगाने की सोची थी यह आशा नहीं थी कि प्रभाव इतना अच्छा होगा; उसका एकमात्र उद्देश्य अपनी मेज़बान को घूस देना था ताकि वह खाने तक ठहरने के लिए कहे तो उसकी अनुकूलता बनी रहे। और वह किसी बाहरी व्यक्ति की मौजूदगी में पीती कैसे, जिसके गुणों की वह बहुत सराहना करती हो पर जो उसका विश्वास न था, सच तो यह है कि इसका पात्र और कोई दूसरा भी तो नहीं था? और न ही वह इतनी जल्दी से पीना चाहती थी, वह तो वास्तविक आनन्द का उपभोग चाय के बाद चाहती थी। लेकिन शरीर तो निर्बल होता है। वोद्का और अन्य परिचित पेयों को तो वह झेल सकती थी, लेकिन नयी तरह की बियर और दूसरे ललचानेवाले पेय तो उसके सीधेपन के लिए कहीं अधिक प्रलोभनकारी सिद्ध हुए।

यह वास्तव में भव्य और शानदार दावत साबित हुई। मार्या अलेक्सेयेव्ना ने माहौल बनाये रखने के लिए मत्र्योना से समोवार उबालने को कहा। लेकिन वह और लोपुख़ोव, दो ही ऐसे थे, जिन्होंने इस भद्रता का सत्कार किया। वेरा ने कहा, वह चाय नहीं पीना चाहती और उठकर अपने कमरे में चली गयी, जबकि असभ्य पावेल कोन्स्तान्तीनिच खाने के तत्काल बाद अपनी प्रति दिन की आदत के मुताबिक़ झपकी लेने उठ गया। लोपुख़ोव चाय स्वाद ले लेकर पी रहा था, पहला प्याला समाप्त करने के बाद उसने दूसरे की फ़रमाइश की। इस पर उसकी मेज़बान ने जो बेकाबू-सी हो रही थी, खेद प्रकट करते हुए, तमाम दिन तबीअत ख़राब रहने का राग छेड़ा, लोपुख़ोव ने विनयपूर्वक कहा कि वह औपचारिकता में न फंसें

और तब वह अकेला रह गया। दूसरा और फिर तीसरा प्याला उसने पिया। अपनी कुर्सी में ही ऊंघने लगा—मत्र्योना के विचार के अनुसार बिल्कुल स्वामिनी की तरह नशे में हो गया। उधर लाड़ली बड़े मज़े में खर्राटे ले रही थी और उन्हीं से लोपुख़ोव जागा, तब तक मत्र्योना समोवार और प्याले उठाकर ले जा चुकी थी और ख़ुद भी किचन में जा घुसी थी।

18

"क्षमा करना, वेरा पावलोव्ना," लोपुख़ोव ने उसके कमरे में घुसते ही कहा—इतने धीमे-से कि उसका स्वर कांप रहा था, लगता ही नहीं था कि खाने के समय पाटदार आवाज़ में बोलनेवाला और यह दोनों एक ही थे। "मेरी दोस्त" की स्थान "वेरा पावलोव्ना" ने फिर ग्रहण कर लिया था,—"धृष्टता क्षमा करना मेरी... आप तो समझ ही गयी होंगी कि अभी मैंने जो कुछ कहा, तो मेरा तात्पर्य यही कि पत्नी को उसके पति से कौन छीन सकता है। इससे आपको पूर्ण स्वतन्त्रता मिल जाती है।"

"मेहरबान, क्या तुम देख नहीं पाये कि तुम जब घुसे तो मैं रो रही थी? वे ख़ुशी के आंसू थे।"

लोपुख़ोव ने वेरा का हाथ एक बार चूमा और फिर कई बार।

"तुम मुझे कालकोठरी से मुक्त करा रहे हो, परमप्रिय, तुम कितने दयालु और चतुर हो। तुमने ऐसा सोचा कैसे?"

"जिस रात हम दोनों साथ-साथ नाचे, अचानक मेरे मन में यह बात कौंध गयी।"

"दिलबर! मुझे तब भी पता था कि तुम दयालु हो। परमप्रिय, तुमने मुझे मुक्त कर दिया है। अब मैं धीरज धरे रह सकती हूं, अब मुझे पता है कि मैं इस कालकोठरी को छोड़ूंगी ही, अब मुझे इतनी घुटन महसूस नहीं होगी—अब मुझे मालूम पड़ गया है कि मैं यहां से पिंड छुड़ा सकूंगी। लेकिन परमप्रिय, यह तो बताओ, मैं यहां से निकलूंगी कैसे?"

"सुनो वेरा। अब अप्रैल ख़त्म होनेवाला है। जुलाई के शुरू तक

मैं अकादमी की शिक्षा समाप्त कर चुकूंगा—शिक्षा तो समाप्त करनी ही होगी अगर दाल-रोटी कमाना-खाना है। जैसे ही ऐसा हो जायेगा, तुम इस कालकोठरी से निकल सकोगी। केवल तीनेक महीने और बल्कि इससे भी कम और फिर तुम सचमुच ही यहां से निकल सकोगी। मुझे नौकरी मिल जायेगी, वेतन तो बहुत अधिक नहीं होगा, लेकिन पर्याप्त अवश्य रहेगा। मैं कुछ रोगियों को प्रायवेट रूप में भी देख सकता हूं—उतने ही जितने कि आवश्यकता हो—बस फिर हम आराम से रह सकेंगे।"

"परमप्रिय, हमारी आवश्यकतायें तो बहुत ही कम होंगी। लेकिन मैं वह सब नहीं चाहती। मैं केवल तुम्हारी आय पर ही नहीं रहूंगी। मेरे भी तो अपने शिष्य हैं, याद है न। निस्सन्देह, मुझे उन्हें छोड़ना पड़ेगा क्योंकि मां सबसे यही कहती फिरेगी कि असल चुड़ैल मैं ही हूं। लेकिन उनके स्थान पर और नये शिष्य मिल जायेंगे। ठीक है न ऐसा? मैं कभी नहीं चाहूंगी कि तुम मेरा भार उठाओ, है न?"

"मेरी प्रिय वेरा, यह किसने कहा तुमसे?"

"ज़रा देखो, पूछते हैं किसने कहा मुझसे? तुम ही नहीं कहते रहते थे बार-बार इसके बारे में? और तुम्हारी किताबें क्या कहती हैं? आधे से अधिक में तो इसी सवाल पर चर्चा हुई है, समझे जनाब?"

"मैं? मेरी पुस्तकें? कब, कब कहा वेरा?"

"कब? क्यों यह किसने कहा था कि हर बात लौट फिर कर धन पर आके टिक जाती है? किसने, द्मीत्री सेर्गेइच?"

"तो क्या हुआ?"

"तुम समझते हो मैं इतनी बोदा दिमाग़ हूं कि मैं, जैसा कि आपकी किताबों में कहा गया है, निश्चित सूत्रों से निष्कर्ष भी नहीं निकाल सकती?"

"कैसा निष्कर्ष? ईश्वर ही जाने कि तुम कहना क्या चाहती हो, प्रिय वेरा।"

"अरे वाह, भले षड्यंत्रकारी! तो अब यह दासी और निरंकुश का खेल खेल रहे हैं हज़रत? समझ लीजिये श्रीमान जी, ऐसा हरगिज़ नहीं होगा। मेरी बात पल्ले पड़ रही है न?"

"पहले यह तो बताओ कि तुम कहना क्या चाहती हो, तभी तो कुछ पल्ले पड़े।"

"महाशय, आप स्वयं ही तो कहते रहे हैं कि सभी चीज़ों का आधार और जड़ है द्रव्य। और आपकी पुस्तकों के अनुसार, जिसके पास धन है उसी के पास शक्ति और परमाधिकार हैं, तात्पर्य यही हुआ न जब तक स्त्री का भरण-पोषण पुरुष करता है, वह उस पर निर्भर है—या आप इससे सहमत नहीं, द्मीत्री सेर्गेइच? आप सोचते थे, कि मैं बात समझ नहीं पायी हूं, सो आपकी दासी बनना क़बूल कर लूंगी, लेकिन महाशय, मैं आपको अपना विधाता नहीं बनने दूंगी, चाहे, जितने कृपालु-दयालु होने का उद्देश्य आपका हो। दो टूक सूनिये, हरगिज़ ऐसा नहीं होगा। तो फिर हम रहेंगे कैसे, मेरी जान? तुम बीमारों की चीर-फाड़ करोगे, उन्हें कड़वी-कड़वी दवाइयां दोगे और मैं प्यानो बजाने की शिक्षा दूंगी। अब तुम हमारे भविष्य के बारे में कुछ और मुझे बताओ।"

"अच्छा, अच्छा, वेरा। हम एक दूसरे से अपनी स्वाधीनता की संरक्षा के लिए यथा-शक्ति सब कुछ करेंगे; प्यार हमारा एक दूसरे के लिए चाहे भी जितना गाढ़ा क्यों न हो, कितना भी एक दूसरे का विश्वास हो। तुम कर पाओगी ऐसा कुछ या नहीं, कहना कठिन है मेरे लिए, गोकि बात कोई बहुत महत्त्वपूर्ण भी नहीं—मंसूबा बना लेना ही अपने आप में बहुत है, इससे यह विश्वास उत्पन्न होता है कि अपने बल-बूते जिया जा सकता है, आवश्यकता हो तो किसी के सहारे के बिना भी, और इसी की सर्वाधिक आवश्यकता होती है किसी को भी। फिर भी हमारी कितनी अजीब जोड़ी है वेरा, तुम आग्रह के साथ कह रही हो कि तुम मुझे अपना भरण-पोषण नहीं करने दोगी और मैं इसके लिए तुम्हारी सराहना कर रहा हूं। कौन करता-कहता है इस दुनिया में ऐसी बातें, वेरा?"

"जानेमन, अजीब हो सकते हैं हम—लेकिन हमें इसकी क्या परवाह? हम अपने ढंग से, अपने मन के मुताबिक़ अपना जीवन चलायेंगे। और कोई सुझाव हैं आपके पास?"

"मैं तो अपना सुझाव बता चुका, वेरा पावलोव्ना, वही जिसे आपने अपने प्रति-प्रस्ताव से धराशायी कर दिया। आपने मुझे अत्याचारी और निरंकुश कहा। हमारे विवाहित जीवन के अन्य

पहलुओं के बारे में कृपया आप अपनी ही योजनायें बतायें। मैं नहीं चाहता कि इस विषय पर मैं अपने विचार प्रकट करूं और फिर उसी दंड का भागी बनूं। वेरा, परमप्रिय सखी, बताओ हम लोग किस तरह रहें। मैं बस इतना भर और कहूंगा: मेरी परमप्रिय, कितनी बुद्धिमती है हर मामले में!"

"क्या है यह सब? आप मेरी प्रशंसा करने पर उतर आये हैं, महाशय? लेकिन जैसा कि मैं भली-भांति जानती हूं लल्लो-चप्पो तो निरंकुशता को ढकने के लिए नम्रता का मुखौटा ओढ़ना है। मैं चाहती हूं कि भविष्य में आप सीधी-सच्ची बात करें! परमप्रिय, सचमुच ही तुम मुझे आसमान पर चढ़ाये दे रहे हो। मुझे लाज आती है। बस मेहरबानी से रुक भी जाओ, वर्ना मैं गुमान करने लगूंगी।"

"अच्छी बात है, वेरा पावलोव्ना। यदि आप चाहती हैं तो मैं अशिष्ट बन जाता हूं। कितनी कम स्त्री-सुलभता है आपमें; बेधड़क कह सकता हूं आपकी योजनायें भी सांगोपांग पुरुषोचित हैं।"

"द्मीत्री! सखा! स्त्री-सुलभता से तात्पर्य क्या है आपका? मुझे मालूम है स्त्री-स्वर मंद होता है और पुरुष स्वर भारी, मगर क्या यह सचमुच इतना महत्त्वपूर्ण है? क्या हमें यह आदेश देने की आवश्यकता है कि हम अपनी आवाज़ मंद रखें? क्यों हमसे इसकी प्रार्थना की जाती है? क्यों सब इस बारे में चिन्तित रहते हैं कि हम अपनी स्त्री-सुलभता बनाये रहें? क्यों नहीं समझते मेरे प्रिय, कि यह सब बेहूदा बात है?"

"बेहूदा और बिल्कुल घिसी-पिटी।"

"फिर मैं स्त्री-सुलभता की चिन्ता क्यों करूं, मेरी जान, और अब आपकी अनुमति से द्मीत्री सेर्गेइच, मैं अपने दोनों के भविष्य के बारे में पूर्ण रूप से पुरुषोचित संकल्पना प्रस्तुत करूंगी। हम लोग दोस्त रहेंगे। लेकिन मैं आपकी सर्वोत्तम सखी बनना चाहूंगी। मैंने अभी आपको यह नहीं बताया कि मैं आपके चहेते किरसानोव को कितना नापसन्द करती हूं?"

"सचमुच नहीं करना चाहिये तुम्हें ऐसा, वेरा, वह बहुत अच्छा आदमी है।"

"फिर भी मैं उससे घृणा करती हूं। मैं कहती हूं आप भी उससे न मिलें।"

"वाह, क्या ख़ूब शुरूआत की है हमने। ख़ुद तो इतनी भयभीत हो कि तुम्हें मैं धौंस-दबाव में रखूंगा और ख़ुद मुझे आप अपने इशारों पर नाचनेवाला बनाना चाहती हैं। फिर भला, जिस आदमी के साथ मैं रहता हूं, उससे कैसे नहीं मिलूंगा?"

"तमाम दिन एक दूसरे से लिपटकर गुटरगूं करते रहते हो।"

"बेशक, दोपहर और शाम के भोजन के समय। लेकिन चाय का प्याला थामे पीते समय लिपटना है थोड़ा कठिन काम, हाथ जो खाली नहीं होते।"

"तो आप अभिन्न हैं।"

"बिल्कुल। वह अपने कमरे और मैं अपने में—तभी तो मैं कहता हूं बिल्कुल अभिन्न।"

"अगर ऐसी बात है तो फिर उसे बिल्कुल ही छोड़ क्यों नहीं देते?"

"हम मित्र हैं, आख़िर और कई मौक़े ऐसे भी होते हैं, जब बतियाने को जी चाहता है। अब तक किसी ने एक दूसरे को उबाया नहीं है।"

"अच्छा तो ऐसे जुड़ गये हैं एक दूसरे से, गुटरगूं और नोंकझोंक, नोंकझोंक और गुटरगूं। मैं उस आदमी से नफ़रत करती हूं।"

"क्या हो गया है, वेरा, तुम्हें? हम कभी नहीं झगड़ते। हम अलग-थलग रहते हैं और यह भी सच है कि हम बहुत अच्छे दोस्त हैं लेकिन तुम क्या कहना चाहती हो आख़िर?"

"कैसा बेवक़ूफ़ बनाया, प्राणप्रिय, कितनी चतुराई से बेवक़ूफ़ बना दिया मैंने तुम्हें! यह नहीं बताना चाहते थे न कि हमारे भावी जीवन के बारे में आपकी परिकल्पना क्या है, लेकिन अभी आपने सब कुछ भण्डाफोड़ कर दिया। कैसा बेवक़ूफ़ बनाया! अब मैं बताऊं कि आपकी परिभाषा के अनुसार हमारा भावी जीवन कैसा होगा। पहली बात तो यह कि हमारे दो कमरे होंगे, एक आपका और दूसरा मेरा और तीसरा कमरा होगा चाय और भोजन के लिए तथा उन अतिथियों के स्वागत के लिए, जो हम दोनों से ही मिलने आया

करेंगे। दूसरी बात यह है कि मैं भूलकर भी तुम्हारे कमरे में क़दम नहीं रखूंगी, कहीं तुम चिढ़ न जाओ—किरसानोव तो सपने में भी ऐसा नहीं सोच सकता, इसीलिए आपकी आपस में कभी लड़ाई नहीं होती। और यही बात आपके मेरे कमरे में प्रवेश पर लागू होती है। यह भी मेरी दूसरी बात। और तीसरी है यह—क्या किरसानोव तुम्हारे व्यक्तिगत मामलों में टांग अड़ाता है अथवा तुम उसके मामलों में। क्या एक दूसरे से पूछताछ करने का अधिकार आपको है?"

"बस अब मैं समझ गया यह किरसानोव का चक्कर है क्या! मैं नहीं जवाब देता।"

"कुछ भी कहो पर मैं उस आदमी से नफ़रत करती हूं। लेकिन जवाब देने की तकलीफ़ उठाने की ज़रूरत नहीं। मुझे मालूम है, एक दूसरे का भेद ले पाने की सकत दोनों में से किसी को नहीं है। तो फिर तीसरी बात हुई यह कि मुझे आपसे सवाल करने का कोई अधिकार नहीं। अगर आप चाहेंगे अथवा ज़रूरी समझेंगे तो अपने मामलों के बारे में बतायेंगे बस यही मेरी ओर से भी होगा। यही तीन नियम मेरे हैं। कुछ और इनमें जोड़ना चाहेंगे आप?"

"आपके दूसरे नियम में तनिक-सी सान चढ़ाई जा सकती है। हम चाय या भोजन के समय अपने तीसरे, किसी के भी नहीं कमरे में, एक दूसरे से मिला करेंगे। ऐसी स्थिति में इस असमंजसता पर ध्यान देने का कष्ट करें। हमने सुबह की चाय पी ली, मैं अपने कमरे में हूं और आपके कमरे के पास तक आने की धृष्टता नहीं कर सकता, तो इसका मतलब यही हुआ न, कि मैं आपके दर्शन भोजन के समय से पहले नहीं कर सकता, है न?"

"निस्सन्देह, ऐसा ही।"

"ठीक है। कोई दोस्त आके मुझे बताता है कि फ़लां दोस्त दो बजे आयेगा पर मुझे एक बजे तक घर से बाहर जाना है—तो क्या मैं आपके पास दूसरे मित्र के लिए संदेश छोड़ सकता हूं, क्या मैं आपसे इस अनुकम्पा की आशा कर सकता हूं, बशर्ते कि आप उस समय घर में हो?"

"बेशक, आप आशा कर सकते हैं। लेकिन मैं वैसा करूं या न करूं, यह बात दूसरी है। अगर मैं वैसा न करूं तो आप इसका बुरा नहीं मानेंगे और इस सिलसिले में आपको जवाब भी तलब करने

नहीं दिया जायेगा। आप केवल यह पूछ सकेंगे कि कोई विशेष सेवा आपकी मैं करूंगी अथवा नहीं।"

"ठीक। लेकिन मुझे क्या पता कि सुबह के नाश्ते के समय मुझे क्या चाहिये और आपके कमरे में प्रवेश की तो मुझे इजाज़त न होगी। फिर मैं आपसे सवाल कैसे करूंगा?"

"क्या बात है, कैसे भोले-भाले बन रहे हैं! और कैसा असमंजस, मानना पड़ेगा! आप यह करेंगे ऐसे में द्मीत्री सेर्गेइच। आप हमारे उस कमरे में तशरीफ़ लायेंगे, जो हममें से किसी का भी विशेष रूप से नहीं और चिल्लायेंगे: 'वेरा पावलोव्ना!' अपने कमरे से मैं जवाब दूंगी: 'क्या है, द्मीत्री सेर्गेइच?' आप कहेंगे: 'मैं बाहर जा रहा हूं, लेकिन मेरे कोई दोस्त आनेवाले हैं। उनके लिए मैं संदेश छोड़ना चाहता हूं। वेरा पाव्लोव्ना, क्या आप उन्हें मेरा संदेश दे देंगी?' अगर मैं कहूं 'न', तो बात ख़त्म। और अगर मैं कहूं 'हां', तो मैं कमरे में आऊंगी और आप मुझे बता देंगे जो कुछ अपने दोस्त को कहलवाना चाहते हैं। आ गयी बात समझ में मेरे भोंदू सनम?"

"बिल्कुल समझ गया, जानेमन, बिल्कुल। मगर मसख़री रहने दे, तो भी आपका तरीक़ा ही रहने के लिए सर्वोत्तम है। लेकिन जनाबा को ऐसे विचार मिलते कहां से हैं? मैं भली-भांति परिचित हूं इनसे। मुझे तो यह भी याद है कि किस किताब में मैंने इन्हें पढ़ा है। तुम उन किताबों की परछाई भी नहीं पा सकतीं, क्योंकि जो किताबें मैंने तुम्हें पढ़ने के लिए दीं, उनमें इस प्रकार का ब्योरा उपलब्ध ही नहीं। तुम्हें कोई बतानेवाला भी नहीं था। सच तो यही है कि मैं ही पहला भलामानस था, जिससे तुम्हारी कभी मुलाक़ात हुई।"

"जानेमन, जानेमन, क्या अपने अनुभव से यह निष्कर्ष निकाल पाना इतना मुश्किल है? पता है, मैंने भी पारिवारिक जीवन देखा है—ठीक है अपना ख़ुद का नहीं, हमारी बात तो कुछ दीगर है, हम तो अजूबे हैं,—मगर मेरी सहेलियां हैं, जिनके घर मेरा आना-जाना रहा है और आप अनुमान नहीं लगा सकते कि मियां-बीवियों के बीच कितनी अनबन पायी जाती है!"

"मैं तो लगा सकता हूं थोड़ा-बहुत अन्दाज़ा।"

"क्या तुम्हें इसका कुछ भी अन्दाज़ा है कि मैं क्या सोचती हूं, जानेमन? लोगों को ज़िन्दगी उस तरह नहीं गुज़ारनी चाहिये, जैसे कि वे गुज़ारते हैं, हमेशा ही एक दूसरे के साथ-साथ। दम्पतियों को एक दूसरे से मिलना किसी काम से चाहिये अथवा तब जब कि साथ मिलकर आमोद-प्रमोद करने का, आराम करने का मन हो। मुझे तो इस पर अचरज बना रहता है कि हम सब परिवार के बाहर इतने शालीन-सभ्य कैसे बने रहते हैं, दूसरों के सामने हम क्यों अच्छे होने का, मुखौटा लगाये रहते हैं अथवा हम बाहरी लोगों के साथ होने पर ही क्यों अधिक प्रसन्न-प्रफुल्ल बने रहते हैं, आखिर क्यों, भला? हम उनका संग-साथ क्यों बेहतर समझते हैं, बनिस्बत अपने सगे-सम्बन्धियों अथवा आंख के तारों के? पता है, मैं क्या चाहती हूं; मैं यही चाहती हूं कि तुम सदा मेरे साथ वैसा ही बर्ताव करो, जैसा कि अब तक करते आये हो। क्या तुमने मुझे प्यार करना बन्द कर दिया है अथवा क्या हमने एक दूसरे को घनिष्ठतम मित्र मानना बन्द कर दिया है। और अब तक तुमने किस प्रकार का बर्ताव किया है? क्या कभी तुमने निरादर किया अथवा उपहासपूर्ण व्यवहार? कभी नहीं! क्या समाज को विस्मय नहीं होता जब कोई पुरुष दूसरे व्यक्ति की पत्नी अथवा बेटी से दुर्व्यवहार करता है अथवा उसे डांटता-फटकारता है? यह ठीक है कि मैं तुम्हारी मंगेतर हूं और शीघ्र ही पत्नी भी हो जाऊंगी, लेकिन तुम मेरे साथ वैसा ही व्यवहार करो, जिसकी अनुज्ञा समाज किसी भी अन्य स्त्री से व्यवहार करने की देता है। यही है, प्रिय मित्र, वह बात जो मेरे विश्वास के मुताबिक निरंतर सामंजस्य और चिरस्थायी प्रेम का सर्वोत्तम संकल्प है। ठीक है न, प्रिय?"

"समझ में नहीं आता, वेरा, कि मैं क्या समझूं! अलबत्ता, तुम तो मुझे पहले भी हैरत में डाल चुकी हो।"

"प्रिय और अच्छे द्मीत्री, तुम तो चापलूसी पर उतर आये। इतना कठिन तो नहीं है समझ पाना, जैसा कि तुम्हारा विश्वास है। मैं कोई अकेली थोड़े ही हूं: मेरे ही जैसी अनेक लड़कियां और युवतियां भी इसी ढंग से सोचती हैं। लेकिन वे अपने मन की बात अपने पति और प्रेमी से कह नहीं सकतीं, क्योंकि उन्हें पता है कि अगर उन्होंने ऐसा किया तो उन्हें अनैतिक समझ लिया जायेगा। लेकिन क्योंकि तुम वैसे नहीं हो, इसीलिए मैं तुम्हें अपना दिल

दे बैठी हूं। क्या तुम्हें पता है, यह हुआ कब? पहली ही बातचीत के मौक़े पर, मेरी सालगिरह की पार्टी के दिन, जब तुमने महिलाओं की दीनता की चर्चा की थी और अपनी करुणा उंडेली थी उनके प्रति बस तभी मैं तुम्हारी दीवानी हो गयी थी।"

"और मैंने कब जाना कि मैं तुम्हें प्यार करता हूं? उसी रात, लेकिन यह तो तुम्हें मालूम ही है, मगर मुख्य बात यह है कि कब, किस क्षण?"

"तुम तो बड़े ही दिलचस्प हो, जिस ढंग से तुम बता रहे हो, उससे तो अनुमान कर लेना कुछ असंभव नहीं और जैसे ही मैं कहूंगी, तुम फिर से मेरी भूरि-भूरि प्रशंसा करने लगोगे।"

"तो हर्ज ही क्या है; सोचकर बताओ तो।"

"तभी न, जब मैंने यह पूछा था कि क्या लोगों को सुखी बना पाना वास्तव में संभव है क्या।"

"लाओ, इसी बात पर मैं तुम्हारा हाथ चूम लूं।"

"यह तो अब बहुत हो चुका है, प्रिय, मैं महिलाओं के हाथों को चूमे जाने के पक्ष में नहीं।"

"क्यों, भला क्यों?"

"तुम्हें पता तो है, प्रिय, क्यों पूछते हो फिर मुझसे? बराये मेहरबानी, ऐसे फ़िज़ूल सवाल मत पूछो।"

"बिल्कुल ठीक है मेरी दोस्त, नहीं पूछना चाहिये मुझे। ऐसा करना वाजिब भी नहीं। आयन्दा मैं कभी इस प्रकार के फ़िज़ूल सवालों से तुम्हें तंग नहीं करूंगा, तभी पूछूंगा जब मैं सचमुच यह समझूंगा कि मैं तुम्हारा तात्पर्य नहीं समझ पाया। हां, इस समय तुम्हारा तात्पर्य यही था न कि किसी को भी अपना हाथ चूमने की, एक दूसरे को इजाज़त नहीं देना चाहिये।"

वेरा मुक्त भाव से हंस पड़ी।

"जाओ, अब माफ़ कर दिया। अब मैं तुमसे बहुत खुश हूं। है न यही बात, कि तुम मेरी परीक्षा लेने पर आमादा थे, अलबत्ता तुम्हें यह समझ नहीं आ रही थी कि गड़बड़ी कहां पर है। यह सच है कि किसी को अपना हाथ चूमने नहीं देना चाहिये, लेकिन मेरा मतलब यही नहीं था, कोई सामान्य नियम नहीं ऐसा, लेकिन पुरुष द्वारा महिला के हाथ चूमने का विशिष्ट उदाहरण था यह तो। यह

निरर्थक है। महिलाओं को यह हरकत नागवार गुज़रनी चाहिये, क्योंकि इस क्रिया का निहितार्थ यही है न कि उन्हें बराबरी का दर्जा नहीं दिया जा रहा, कोई पुरुष स्त्री के संदर्भ में अपने को इतना ओछा नहीं कर सकता, दोनों के बीच इतनी खायी है कि कोई पुरुष स्त्री के लिए किसी भी हद तक गिर सकता है पर फिर भी उसके जितने नीचे स्तर पर नहीं पहुंचेगा। लेकिन प्रिय मेरे, अगर तुम्हारे विचार कुछ और ही हैं तो फिर क्यों चूमा तुमने मेरा हाथ? प्रिय मेरे, कल्पना कर सकते हो क्या लगता है मुझे इससे, यही कि हम लोग वर-वधु हरगिज़ नहीं, अथवा हैं क्या?"

"हां, सच ही कहती हो। ऐसा कम ही लगता है, वेरा, फिर क्या है हम दोनों के बीच रिश्ता?"

"प्रिय मेरे, यह तो ईश्वर ही जानता है। मेरे मन से तो मुझे ऐसा लगता है कि हम तो युग-युगान्तरों से विवाहित हैं।"

"बिल्कुल ऐसा ही। हम अभी भी तो पुराने मित्र हैं, कुछ भी तो नहीं बदला है।"

"बस एक ही चीज़ बदली है, प्रिय—अब मुझे पता चल गया है कि मैं इस कालकोठरी को त्यागनेवाली हूं।"

19

इस प्रकार उनका वार्तालाप समाप्त हुआ। भावी पति पत्नी के बीच पहले विचार-विनिमय की दृष्टि से यह विचित्र ही था। उन्होंने हाथ मिलाये, लोपुख़ोव चला गया और वेरा ने ख़ुद उठकर दरवाज़ा बन्द किया। मत्र्योना पब (शराबघर) में इसी आशा से देर तक टिकी रही कि उसकी मालकिन काफ़ी देर तक नींद की गोद में पड़ी रहेगी। और सचमुच वह सोती भी रही।

छह बजे के बाद घर पहुंचने पर लोपुख़ोव ने कुछ काम करने की कोशिश की, लेकिन कर नहीं पाया, क्योंकि मन ही नहीं लगा। उसके मन में तो जाने क्या-क्या विचार उथल-पुथल कर रहे थे—सेम्योनोव्स्की पुल से वीबोर्ग इलाक़े तक के मार्ग में बराबर ही

तो सोचता-विचारता चला आया था। कह सकते हैं, प्रेम की बातें। बिल्कुल ठीक, लेकिन वैसा कुछ नहीं, जो आपने सोचा। अल्प साधनों के बलबूते जीवन-यापन की तो अपनी ही कुछ नीरस-सी विचारावलि होती है। और लोपुख़ोव वही कुछ सोच-विचार रहा था। हम सभी भली-भांति जानते हैं कि भौतिकवादी के मन पर आत्महित (स्वार्थ) कितना हावी रहता है, और यही वास्तव में, इस समय लोपुख़ोव भी सोच रहा था; इसीलिए प्रेम के बारे में उदात्त, काव्यमय और रूपंकर चिन्तन के स्थान पर वह अपने ही उपयुक्त कुछ स्थूल कोटि की बातों की ऊहापोह में फंसा हुआ था।

"बलिदान—इस विचार को मन से हटा पाना लगभग असंभव है। और यह बुरी बात है। यदि आप किसी के प्रति अपने को परम-ऋणी मानते-सोचते हैं, तो सम्बन्धों की सहजता में बाधा पड़ती है। अर्थात् वेरा को भी निश्चय ही यह पता तो लग ही जायेगा। मेरे दोस्त, लोग उसे बता देंगे कि मेरा कैरियर कैसा होनेवाला था। और अगर उन्होंने न भी बताया, तो भी वह समझ ही जायेगी। 'तो यह है जिसका बलिदान तुमने मेरे लिए किया—यह है कैरियर जो तुम्हारे सामने खुला था! बहरहाल, धन की बात तो नहीं ही होगी। इस बात को न तो वह उछालेगी और न ही मेरे दोस्त। यह क्या कम है कृतज्ञ होने के लिए। वह यह कल्पना न करे कि 'वह मेरे लिए ग़रीब रहा, अन्यथा वह धनवान हो सकता था'। नहीं, वह ऐसा नहीं सोचेगी। लेकिन इतना तो जान ही जायेगी कि मैं विज्ञान के क्षेत्र में नाम कमाना चाहता था और कमा भी सकता था और यही बात उसे कसमसाती रहेगी: 'उसने मेरे लिए इतना बड़ा बलिदान किया!' ऐसी बात नहीं कि मेरे मन में ज़रा-सा भी इरादा ऐसा कुछ करने का था। अभी तक तो मैं इतना मूर्ख नहीं हुआ और यह भरोसा है कि आयन्दा कभी भी ऐसा नहीं होऊंगा। मैं कुछ त्याग-बलिदान करनेवाले प्राणी की कोटि का नहीं। और सच तो यह है कि कोई भी ऐसा नहीं होता, यह तो भ्रम है, त्याग-बलिदान, बस कोरी बकवास ही तो है। वही करो जो मन को भाये। खुद सब कुछ सोच विचारकर तय करो। सिद्धान्त रूप में तो यह अच्छा लगता है, मगर यथार्थ का पुट इसमें मिल जाय और हम सभी विभोर हो उठते हैं 'मेरे त्राता'।

क्या हम किसी सुसंस्कृत व्यक्ति का यह वाक्य पहले नहीं सुन चुके 'तुमने मुझे स्वतंत्र किया। तुम कितने अच्छे हो'? यदि मैं नहीं चाहता होता तो क्या मैंने इसकी परवाह की होती? तुम सोचती हो कि मैंने तुम्हें स्वतंत्र किया? यदि मुझे यह अनुकूल प्रतीत न हुआ होता, तो क्या मैं किंचित प्रयास करता? शायद मैंने तो अपने को ही स्वतंत्र किया। जी हां, यही बात है, इसमें किसी भी प्रकार के संदेह की गुंजायश नहीं। पता है, मैं जीना चाहता हूं, प्यार करना चाहता हूं। यह सब मैंने अपने लिए ही किया। मैं कृतज्ञता की इस घातक भावना को अकाल ही में कैसे कुचल सकता हूं? अन्ततः, इसका बोझ उसके मन पर पड़े बिना रहेगा क्या? कुछ न कुछ रास्ता खोज ही निकालेंगे हम। उसे इतनी तो समझ है कि उसकी मुक्ति का मोल तो कुछ कौड़ियों के बराबर भी नहीं। यह सच है कि वैसा कुछ नहीं हुआ, जैसा कि मैंने सोचा था। मैंने तो यही सोचा था न, कि अगर वह घर से बाहर निकल आये, तो हम कुछ वर्षों के लिए योजना को टाल सकते हैं, पर्याप्त समय मिल जायेगा, इतने में मुझे प्रोफ़ेसरी मिल जायेगी और आर्थिक दशा भी ठीक हो जायेगी। लेकिन अब तो लगता है कि समय गंवाने का अवसर ही कहां है। बड़ी सांसत में फंस गया हूं: क्या करूं, क्या न करूं? पहले आर्थिक सुरक्षा की व्यवस्था करूं—क्या वास्तव में मुझे इसकी दरकार है? आदमी के लिए धन की कोई ज़रूरत है क्या? बिल्कुल नहीं। अलबत्ता, महिलाओं को इसकी कमी खलती है। एक जोड़ी बूट, साफ़-सुथरे कपड़े, बन्दगोभी के सूप से भरी कटोरी, कमरे में गरमायी—बस, इसके सिवा और क्या चाहिये मुझे? और इसमें रंचमात्र सन्देह नहीं कि इतना कुछ मुझे मिलता रहेगा। तो फिर मुझे क्या मुसीबत है कि यह सब सोचूं-विचारूं। अलबत्ता, महिला, युवती और सुन्दर महिला को ज़रूर ही कमी महसूस होगी। उसे सांसारिक सुख-सुविधा चाहिये, समाज में मान-सम्मान चाहिये। और इनमें से किसी के लिए भी उसके पास धन नहीं होगा। इसमें कोई सन्देह नहीं कि वह इस अभाव के बारे में कुछ भी नहीं सोचेगी: निष्कपट और बुद्धिमती युवती की नाईं वह अपने आपसे यही कहेगी कि यह सब तुच्छ बातें हैं, तिरस्कार योग्य छोटी-छोटी बातें। और वह इनको तुच्छ मानेगी भी। लेकिन क्या बात इतने से ही हल हो जायेगी,

क्या ख़ुद को उस अभाव के बारे में समझाना और विश्वास दिलाना आसान होगा, जो महसूस हो रहा है? कल्पना-भ्रान्ति, भ्रम-मोह—यही तो है न यह सब। मानव स्वभाव तक, परिस्थितियों और अहंकार के वशीभूत होकर अवरुद्ध हो जाता है, मानवीय चेतना में प्रविष्ट नहीं हो पाता और जीवन की जड़ों को ही चुपचाप कुतरते रहता है। किसी युवती के लिए क्या यह कोई जीवन है, किसी सुन्दर युवती के लिए इसमें कोई जीवन नहीं! कैसे हो सकता है ऐसा कि वह अपनी बहनों से भी ख़राब कपड़े पहने अथवा अभाव के कारण उसकी चुलबुलाहट, उसकी शोख़ी मुरझा जाय। बड़ी दया उपजती है तेरे लिए, मेरी प्यारी बाला। मैंने तो आशा की थी कि मैं तुझे कुछ बेहतर ज़िन्दगी दे पाऊंगा। लेकिन मेरी बला से? मैं तो विजेता हूं न अब, कौन कह सकता है कि दो साल बाद भी वह मुझे स्वीकार कर लेती, और अब जब वह..."

"द्मीत्री, चाय बन रही है।"

उसके और किरसानोव के कमरे तक पहुंचने के बीच भी सोचने का समय था। "कितना सच है यह। अहंभाव हमेशा ही प्रबल रहता है। मैंने अपने ही अहम् से सोचना शुरू किया और घूम-फिर कर उसी पर लौटा। कहां से सोचना शुरू किया था मैंने बलिदान से न! छल! प्रोफ़ेसर पद का बलिदान, प्रोफ़ेसर की प्रसिद्धि की बलि, सब कुछ बकवास, इस सब का कुछ मतलब है क्या? मुझे तो अभी भी काम करना पड़ेगा और किसी न किसी दिन पद भी मिल ही जायेगा। मैं फिर भी आयुर्विज्ञान की प्रगति में सेवारत रहूंगा। सिद्धान्तवादी को यह जानकर कितना कौतूहल होता है कि अहम्वाद उसके विचारों का कैसा व्यावहारिक उपहास कर सकता है।"

मैं अपने पाठकों को हर बात के बारे में पहले से ही चेता देना चाहता हूं, इसी लिए मैं आपको यह सलाह दूंगा कि आप यह न मान लें कि उपयुक्त स्वकथन में लेखक ने ऐसा कोई दुर्बोध संकेत दिया है कि वेरा और लोपुख़ोव के सम्बन्धों में कोई प्रमुख प्रवृत्ति प्रवाहित होनेवाली है। वेरा को सामाजिक चमकदमक की अथवा बढ़िया पोशाक की कोई कमी नहीं खलेगी और न ही कृतज्ञता की कोई घातक भावना ही लोपुख़ोव के साथ उसके संसर्ग-समागम

में कोई कड़वाहट उत्पन्न होगी। मैं उस तरह का लेखक नहीं जिसके प्रत्येक शब्द के पीछे कोई न कोई संकेत होता है। मैं तो केवल उसी का वर्णन करता हूं, जो दूसरों ने सोचा और मेरे सामने किया है। यदि कोई क्रिया अथवा वार्तालाप अथवा स्वगत विचार मेरे पात्र की मन:स्थिति को वर्णित करने में सहायक सिद्ध होता है, तो मैं वही लिख देता हूं, भले ही उसका कोई भी भावी परिणाम हो अथवा न भी हो।

"अलेक्सान्दर, अब तुम्हें काम में मेरे पिछड़ जाने की कोई भी शिकायत नहीं होगी। मैं जल्द ही बराबर आ जाऊंगा।"

"तुमने उस लड़की का काम करवा दिया?"

"हां।"

"वह बी० की गवर्नेस बनेगी न?"

"नहीं, बिल्कुल नहीं। हमने कुछ और ही हल ढूंढ़ लिया है। कुछ ऐसा जिससे उसे अपने ही परिवार में थोड़ी सुकून की ज़िन्दगी मिली रहेगी, फिलहाल।"

"हुं ऽऽ। अच्छी बात है। वैसे गवर्नेसी बच्चों का खेल है भी नहीं। हां, मैं इस बीच नेत्र-तंत्रिका को रट चुका हूं और अब इसके बाद अगले युग्म की बारी है। तुमने कहां छोड़ा था?"

"मुझे अभी भी कुछ छोटी-मोटी बातों को सुलझाना बाक़ी है..."

इसके बाद शरीर-रचना और आकृतिक समस्याओं के बारे में न जाने कैसे-कैसे अजब-अजब शब्दों की धारा प्रवाहित होती रही।

20

"आज 28 अप्रैल है। उसने कहा है कि वह अपनी समस्याओं का समाधान जुलाई के आरंभ तक, लगभग 10 जुलाई तक कर लेगा। यह बिल्कुल ही आरंभ तो नहीं, फिर भी हम 10 जुलाई अथवा शायद 15 जुलाई मान लेते हैं ताकि बिल्कुल निश्चिन्तता रहे। मगर नहीं, 10 ही सर्वोत्तम है—अब कितने दिन बाक़ी हैं उसके आने तक? आज को तो गिनने की ज़रूरत नहीं, अब तो दिन बीतने

में बस केवल पांच घंटे ही तो बचे हैं। दो दिन अप्रैल के, उसमें जोड़ दें 31 मई के—अर्थात् 33 दिन, फिर 30 जोड़ दें जून के, इस प्रकार हुए 63, अब जुलाई के 10 दिन भी मिला दें तो हुए—बस केवल 73 दिन? कुछ ज़्यादा हैं क्या? 73 दिन के बाद स्वतंत्रता? इस कालकोठरी से मुक्ति के लिए? भाग्यवान लड़की! कितनी बढ़िया जुगत सोची है, मेरे मनमोहन ने! कितनी भाग्यशाली हूं मैं!"

रविवार की सांझ। सोमवार को ट्यूशन का दिन था, अगले मंगलवार के स्थान पर सोमवार को ही निश्चित कर लिया गया था।

"मेरे प्यारे मित्र, मेरे मनमोहन, कितनी खुश हूं मैं फिर तुम्हारे साथ होने पर, भले ही यह क्षण भर को ही क्यों न हो! क्या तुम्हें पता है कि मुझे इस कालकोठरी में अब कितने दिन और रहना है? कब तुम्हारा सब काम पूरा हो जायेगा? 10 जुलाई तक न?"

"तब तक ज़रूर।"

"आज की रात न गिनूं तो अब मुझे केवल 72 दिन और प्रतीक्षा करनी है। मैंने एक दिन कम कर भी दिया है। मैंने अपने लिए पंचांग बना लिया है, पता है, वैसे ही जैसे स्कूली बच्चे बना लेते हैं और मैं उसमें दिन-तारीख़ को काटती जाती हूं। बड़ा मज़ा आता है ऐसा करके!"

"वेरा, मेरी जान, मेरी गुड़ियां, अब तुम्हें यहां अधिक दिन यातना नहीं भोगनी पड़ेगी। मुक्ति के बीच खड़े ढाई महीने तो पलक झपकते बीत जायेंगे।"

"ओह, स्वर्ग मिल जायेगा तब तो! पर अब मुझसे एक शब्द भी इस बारे में न कहो और ऐसे देखो भी मत मेरी तरफ़; जब भी तुम आओगे, तो हम प्यानो से हर बार छेड़छाड़ नहीं करेंगे और फिर मैं हर बार अपने कमरे से बाहर भी नहीं आऊंगी। मगर, बरदाश्त कैसे कर सकूंगी नहीं आना, मैं हर बार बाहर निकलूंगी, भले ही पल भर के ही क्यों न हो और मैं तुम्हारी ओर बिल्कुल ही बेमुरुव्वती और बेरुखी से नज़र डालूंगी। अब मैं इसी क्षण अपने कमरे में जा रही हूं। फ़िलहाल अलविदा, मेरे प्रिय। कब आओगे फिर?"

"गुरुवार को।"

"तीन दिन बाद! कितनी लम्बी प्रतीक्षा करनी होगी! तब तो केवल 68 दिन ही बच रहेंगे।"

"और भी कम कर सकती हो तुम कुछ दिन। क़रीब 7 तारीख़ को ही तुम यहां से निकल लोगी।"

"सात तारीख़? तो फिर अब केवल 69 दिन ही बचे हैं। तुमने तो मेरी ख़ुशी की इन्तिहा ही कर दी! अलविदा, जानेमन!"

गुरुवार।

"प्रिय द्मीत्री, अब मेरे लिए सिर्फ़ 66 दिन बचे हैं यहां रहने को।"

"बिल्कुल ठीक, वेरा, वह समय बस जल्द ही आ रहा है।"

"जल्द? तुम ग़लती पर हो, प्रिय। दिन कितने लम्बे हो गये हैं! पिछले तीन दिन तो ऐसे बीते, मानो पूरे का पूरा महीना। फिर अलविदा, प्यारे, हमें अधिक देर तक बात नहीं करना चाहिये—हम चालाक नहीं हैं क्या? शुभरात्रि, अभी तो मुझे इस कालकोठरी में 66 दिन और बिताने हैं।"

("क्यों नहीं! मगर मैं तो ऐसा महसूस नहीं करता, मेरा तो समय काम करते-करते ही फुर्र हो जाता है। और फिर मैं कोई कालकोठरी में थोड़े ही हूं। सच है न।")

शनिवार।

"64 ही दिन बचे हैं, प्रियतम! यहां तो बहुत ही नीरसता है! पिछले दो दिन तो पहले तीन दिनों से भी अधिक घिसटते से बीते। कैसी उदासी, उचाटपन। काश आप जान पाते यहां कितनी अकथनीय वीभत्सता है! प्रियतम प्यारे, मेरे दुलारे, शुभरात्रि। अब तो दर्शन मंगलवार को ही होंगे। अगले तीन दिन तो पिछले पांच दिनों से अधिक धीमे घिसटेंगे। शुभरात्रि, प्रिय।"

("बिल्कुल ठीक। मुझे नयन अच्छे नहीं लगते। उसे रोने से नफ़रत है। यह कुछ अच्छा नहीं दीखता! मगर, चारा ही क्या।")

मंगलवार।

"अब तो, प्यारे, मैंने दिन गिनने ही छोड़ दिये हैं। बस जैसे ठक से रुक गये हैं दिन!"

"वेरा, प्यारी गुइयां वेरा, एक बात पूछना चाहता हूं तुमसे। हमें दिल खोलकर बात करनी ही पड़ेगी। तुम स्वतंत्र होने के लिए तड़प रही हो। तो फिर कुछ तो स्वतंत्र बनो—क्या, हमें बातचीत नहीं करनी चाहिये?"

"सो तो हमें चाहिये, ज़रूर चाहिये, प्रियतम।"

"तो फिर एक बात सुन लो। कल तुम्हारी सुविधा से—कोई भी समय ठीक रहेगा—बस निश्चित समय बता दो—कोन्नोग्वार्देइस्की मार्ग पर अपनी उसी पुरानी बेंच पर पहुंच जाओ। कर सकोगी ऐसा?"

"क्यों नहीं जानेमन, मैं बिना चूक वहां पहुंच जाऊंगी। ग्यारह बजे, ठीक है न?"

"बिल्कुल ठीक। शुक्रिया, प्रिय दोस्त।"

"शुभरात्रि, प्रियतम। कितने कल्पनाशील हैं आप! मैं खुद यह बात क्यों नहीं सोच सकी, कम अक्ल हूं न। शुभरात्रि। हम लोग बातचीत तो करेंगे ही और मैं कम से कम खुली हवा में उन्मुक्त भाव से सांस तो ले सकूंगी। शुभरात्रि, प्रिय। ग्यारह बजे, चाहे जो हो मिलेंगे ज़रूर।"

शुक्रवार।

प्यारी बिटिया, वेरा, कहां के लिए निकल रही हो?"

"अरे मां, मैं?" वह झेंप-सी गयी। "नेव्स्की प्रोस्पेक्ट तक जा रही हूं, मां।"

"चल, मैं भी तेरे साथ चलती हूं, बिटिया। मुझे भी ज़रा गोस्तीनी द्वोर में झांकना है। लेकिन यह किस प्रकार के कपड़े पहनकर तुम नेव्स्की प्रोस्पेक्ट को निकल रही हो! वहां के लिए तो ज़रा सज-धज के निकलना चाहिये—कुछ चहलक़दमी और कुछ मौज-मस्ती।"

"मुझे यह पोशाक पसन्द है। बस एक सेकंड, मां। मैं कमरे से एक चीज़ ले आऊं।"

दोनों बाहर निकलीं और चल पड़ीं। गोस्तीनी द्वोर पहुंचे, सदोवाया सड़क की गैलरी पर गये, जो नेव्स्की के ही बिल्कुल पास थी और फिर पहुंच गयीं रूज़ानोव की दुकान तक।

"मां, मैं तुमसे कुछ कहना चाहती हूं।"

"क्या बात है, वेरा?"

"अलविदा, मां, नहीं मालूम हमारी मुलाक़ात अब कब हो—कल जब तुम आपे से बाहर नहीं होओगी।"

"क... क्या, कहा, वेरा?"

"अलविदा, मां, मैं अपने पति के यहां जा रही हूं। द्मीत्री सेर्गेइच और मैं, दो दिन पहले शादी कर चुके हैं। कोचवान, कारावान सड़क की ओर चलो।"

"पच्चीस कोपेक भाड़ा होगा, मेमसाब।"

"कोई बात नहीं, बस चल पड़ो, कोचवान। मां, वह आज शाम को आयेंगे। नाराज़ मत होओ, मां।"

मार्या अलेक्सेयेव्ना को कुछ समझ ही नहीं आ रहा था, शब्द सुनायी ही नहीं पड़ रहे थे।

"कोचवान, कारावान सड़क को भूल जाओ। यह तो मैंने जल्दी करने के लिए कह दिया था, ताकि मैं उस महिला को चकमा दे सकूं। बायें नेव्स्की प्रोस्पेक्ट की ओर मुड़ जाओ। मुझे तो कारावान सड़क से भी दूर वसीलियेव्स्की द्वीप तक जाना है, वास्तव में मिडल सड़क के बाद की पांचवीं गली में। जल्दी पहुंचा दोगे, तो बख़्शीश भी दूंगी।"

"तो मेमसाब आपने मेरे साथ भी चाल चली। अब तो आपको पचास कोपेक देने होंगे।"

"ज़रूर, अगर तुम जल्द से जल्द पहुंचा दोगे तो।"

21

विवाह की तैयारियों में कोई बहुत अधिक तामझाम नहीं था, फिर भी कुछ ऐसा भी न था कि जो बिल्कुल ही पारम्परिक लगे।

जब वे एक दूसरे के बारे में वर-वधु के रूप में चर्चा करने लगे थे, उसके दो दिन बाद वेरा अपनी जल्द रिहाई पर ख़ुश होती रही।

और तीसरे दिन तक उसी के शब्दों में उसकी "कालकोठरी" तो उसके लिए अभूतपूर्व रूप से असहनीय हो उठी। चौथे दिन, उसने कुछ आंसू बहाये, हालांकि उसे ऐसा करने से नफ़रत थी, लेकिन फिर भी कुछ तो आंसू बहाये ही। पांचवें दिन तक वह कुछ संयमित हो चुकी थी, लेकिन छठे दिन तो उसने रोना-धोना बन्द ही कर दिया, मगर रात भर घोर निराशा के आलम में पलक न झपक सकी।

लोपुख़ोव ने एक बार उसकी ओर देखा, फिर कुछ कहने की चेष्टा की, कह न सका और अपने आप ही कुछ होंठों में बुदबुदाकर रह गया। पहली हरकत, मानो ऐसी थी कि वह समझ ही नहीं पा रहा है कि बात आख़िर है क्या और दूसरी से मानो उसने पहली हरकत का सटीक अर्थ समझ लिया: "किसी को स्वतंत्रता की एक झलक दिखाके उसे फिर क़ैद में ही छोड़ देना क्या कोई अच्छी बात है?" बस, दो घण्टे तक विचार-मंथन के लिए विषय मिल गया। और डेढ़ घंटा उसे सेम्योनोव्स्की पुल से वीबोर्ग इलाक़े तक पहुंचने में लगा और आधा घण्टा उसने अपने घर में पड़े पलंग पर बिताया। इसमें से भी पहले पन्द्रह मिनट में उसकी भौंहों में बल नहीं पड़े और बाक़ी के पौने दो घण्टे उसकी भौंहें जुड़ी रहीं। और इस सब ऊहापोह के बाद उसने अपने माथे पर दुहत्थड़ मारा और चीख़ पड़ा: "गोगोल के डाकबाबू से भी अधिक कूढ़मग़ज़!" फिर अपनी हाथघड़ी को देखा, "दस बजे हैं, अभी भी समय है," और वह अपने फ़्लैट से निकल पड़ा।

पहले, निश्चिन्त चौथाई घंटे में उसने सोचा: "बिल्कुल बकवास, मुतलक़, सांगोपांग, पढ़ाई का कोर्स ख़त्म करने का क्या अर्थ? डिग्री न होने से कोई मुझे फ़र्क़ पड़ता है क्या? और क्या मुझे इसकी दरकार पड़ी पहले? ट्यूशन और अनुवाद से भी तो मुझे उतना ही धन मिल जायेगा, भले ही डाक्टरी के बाद मिलनेवाले धन के बराबर न मिले। सब बकवास है!"

ऐसी स्थिति में, यदि सचाई उजागर भी हो जाय तो किसी चिन्ता की ज़रूरत कहां। समस्या का समाधान आंशिक रूप से तो आनन-फ़ानन में, उस असम्बद्ध पूर्वाभास से हो गया, जो उसके मन पर ट्यूशन जाने के आख़िरी दिन से ही हावी था। अब वह यह

समझ गया था। क्या हम उसे बलिदान की भावना के साथ आरंभ और टीमटाम पर ख़त्म ऊहापोह की याद दिलायें तो हमें पता चलेगा कि वह तो तभी, उसी क्षण इतना, कम से कम इतना तो समझ ही चुका था—वर्ना उसने यह क्यों सोचा होता कि वह अनुसंधान के कैरियर को "छोड़ दे"? अलबत्ता, उसने तब यह सोचा नहीं था कि कभी ऐसा करना पड़ सकता है। यह बात अलग है कि सहज बुद्धि का इसरार इस बात पर तात्कालिक हुआ था। यदि हम उस पर यह सोचने के लिए कि "मैं कभी भी किसी चीज़ का बलिदान नहीं करूंगा" व्यावहारिक रूप से निरर्थकतापूर्ण तर्कणा का इल्ज़ाम लगायें, तो वह सैद्धान्तिक आधार पर खट से यह जवाब देगा: "देखा, इस बात का यह और उदाहरण कि हमारा अहम् ही हमारे प्रत्येक विचार का निर्धारक है, (मुझे यह स्वयं ही समझ लेना चाहिये था, लेकिन कर इसलिए पाया क्योंकि मैं तो कुछ और ही, कुछ अलग-सी बात तलाश कर रहा था), हमारे क्रियाकलाप का तो कहना ही क्या। नहीं तो मैंने उस युवती को पूरे के पूरे अतिरिक्त सप्ताह उसकी "कालकोठरी" में क्यों पड़ा रहने दिया, अब मैं पूरी तरह से यह जान-समझ चुका था कि क्या होनेवाला है। मुझे तो तत्काल ही इस समस्या से निपटना चाहिये था।"

लेकिन, न तो इस सबका पुन:स्मरण किया गया, अथवा समीक्षा ही की गयी क्योंकि पौने दो घंटे तो इस विचार में ही लग गये कि "विवाह संस्कार सम्पन्न कौन करायेगा? और इसका उत्तर हमेशा ही एक मिला: "कोई नहीं।" सहसा इस "कोई नहीं" का स्थान ले लिया एक नाम ने: मेर्त्सालोव। और उसे याद आया यह नाम तब, जब उसका माथा थक चुका था। और वह अपने-आपको कोस रहा था। ठीक ही तो था, उसे मेर्त्सालोव के नाम की याद शुरू में आ जानी चाहिये थी। और फिर, यह बात भी तो सही है कि शादी-ब्याह के सिलसिले में मेर्त्सालोव को आम तौर पर कौन याद करता है।

आयुर्विज्ञान अकादमी में न जाने कितने क़िस्म के और कितने ही लोग हैं, उनमें ऐसे शिक्षु भी हैं जिनकी धार्मिक शिक्षा प्रदान करनेवाली अकादमी में जान-पहचान है, क्या उनमें कोई लोपुख़ोव को ऐसे बन्धन में नहीं जकड़ सकता? इस प्रकार का एक परिचित, जो

भले ही घनिष्ठ मित्र न हो, पर अच्छा मित्र तो है ही, पिछले वर्ष स्नातक बनकर निकला अब वसीलियेव्स्की द्वीप पर स्थित किसी ऐसे संस्थान में पादरी है, जिसमें न जाने कितने गलियारे हैं। लोपुख़ोव ने इसी दोस्त की ओर क़दम बढ़ाये और अपनी तात्कालिक मुसीबत को ध्यान में रखते हुए, उसने घोड़ागाड़ी लेने से भी परहेज़ नहीं किया।

मेर्त्सालोव घर पर ही था। अकेला और लुई चतुर्दश अथवा उसी के वंश के किसी और ऐसे ही सदस्य की कोई नव प्रकाशित पुस्तक को पढ़ने में तल्लीन था।

"बस, संक्षेप में बात यही कुछ है, मेर्त्सालोव। मैं उस जोखिम को भली-भांति समझ सकता हूं, जो इसके लिए तुम्हें उठानी पड़ेगी। अगर हम उसके मां-बाप से किसी तरह सुलह-सफ़ाई कर पायेंगे, तो सब कुछ ठीक-ठीक हो जायेगा, लेकिन अगर वे अदालत का दरवाज़ा खटखटा बैठे तो? तुम्हें अटल रहना पड़ेगा—क्यों नहीं, तुम्हें रहना ही होगा, लेकिन..." इसके आगे वह कुछ सोच नहीं सका। भला वह किसी दोस्त को दोस्ती की ख़ातिर भयंकर मुसीबत झेलने के लिए बाध्य भी कैसे कर सकता था?

मेर्त्सालोव इस प्रकार की जोखिम उठाने से मना करने के लिए काफ़ी देर तक और बहुत दिमाग़ पर ज़ोर डालकर "किन्तु-परन्तु" तलाशता रहा; लेकिन ढूंढ़ नहीं सका।

"तो फिर क्या किया जाय? सच कहता है, मैं तो चाहता हूं... तुम भी वही कुछ कर रहे हो, जो मैंने ठीक एक साल पहले किया था और तुम भी आख़िरकार उसी तरह की जकड़ में बंध जाओगे, जैसे कि मैं इस समय बंधा हुआ हूं। कितने शर्म की बात है। मैं सचमुच तुम्हारी मदद करना चाहता हूं। लेकिन पत्नी की ज़िम्मेदारी लेने के बाद यह जरूरी हो जाता है कि कुछ भी करने से पहले अच्छी तरह आगा-पीछा सोच लो!"

"नमस्ते, अल्योशा। परिवार ने कुशल-क्षेम बतायी-पूछी है। नमस्ते, लोपुख़ोव, काफ़ी अरसा हुआ, तुमसे मिले तो। ये पत्नियों की क्या चर्चा हो रही थी? तुम्हारी किताबों में तो हमेशा ही पत्नियों को दोषी बताया जाता है।" ख़ूबसूरत, चुलबुली, आकर्षक

स्वर्णकेशी युवती, लगभग सत्रह वर्ष की वय, मां से मिलकर घर लौटी थी।

मेर्त्सालोव ने अपनी पत्नी को सब ब्यौरा बतलाया। युवती के नैन नाच उठे।

"सचमुच अल्योशा, क्या तुम्हें सूली पर चढ़ा देंगे वह?"

"जोखिम है ही, नताशा।"

लोपुख़ोव ने भी पुष्टि की: "बहुत अधिक जोखिम।"

"कुछ भी हो, जब आ पड़ी है तो फिर जोखिम उठा लो! मेरे लिए ही सही, अल्योशा।"

"ठीक है, अगर मेरी पत्नी ही इस तरह के जोखिम के काम में बिना सोचे-विचारे कूद जाने की बाबत कुछ नाराज़गी प्रकट करनेवाली नहीं, तो मेरा क्या, ठीक है! अच्छा बताओ लोपुख़ोव, कब करना चाहते हो विवाह तुम?"

और इस तरह आख़िरी रुकावट भी दूर हो गयी।

सोमवार की सुबह लोपुख़ोव किरसानोव के पास पहुंचा।

"अलेक्सान्दर, तुम्हें मालूम है कुछ? हो सकता है मैं तुम्हें अपना आधे से अधिक कृतित्व भेंट के रूप में दे दूं। वास्तव में, मेरे सभी नोट्स और नमूने ले लो, सब तुम्हारे हैं। मैं पढ़ाई छोड़ रहा हूं, कहो कैसी रही? मैं शादी कर रहा हूं।"

उसने सब कुछ संक्षेप में बता दिया।

"द्मीत्री, अगर मैं और तुम याने कि हम में से कोई भी मूर्ख होता तो मैं यही कहता यह पागलपन है। लेकिन मैं कहूंगा नहीं ऐसा। लगता है तुम बहुत सावधानीपूर्वक, मेरी कल्पना की पहुंच से परे तक, हर तर्क-वितर्क के बारे में ऊहापोह कर चुके हो: किस तर्क को कैसे काटोगे इसकी पूरी तैयारी कर ली है तुमने। और अगर नहीं भी की है, तो क्या फ़र्क़ पड़ता है। यह क़दम बुद्धिमानी है या मूर्खता, मुझे नहीं मालूम। अलबत्ता, मैं ख़ुद इतना मूर्ख नहीं कि मैं यह जानते-बूझते कि तुम्हें डिगा पाना कठिन है, इस बात की कोशिश करूं कि तुम्हें डिगाऊं। बस इतना बताओ, मेरी ज़रूरत तुम्हें किसी काम के लिए है या नहीं?"

"मुझे किसी सस्ती बस्ती में तीन कमरेवाला फ़्लैट चाहिये। और

कल मेरे पास बहुत काम करने को है, अकादमी से अपने काग़ज़-पत्र समेटते हैं। तुम मेरे लिए फ़्लैट ढूंढ़ दो न।"

मंगलवार को लोपुख़ोव को अपने काग़ज़-पत्र मिले और वह मेर्त्सालोव-दम्पत्ति के यहां पहुंचा। उन्हें बताया कि वह विवाह कल करेगा।

"तुम्हें कौन-सा समय अधिक सुविधाजनक होगा, अलेक्सेई पेत्रोविच?" मेर्त्सालोव खाली था, पूरे दिन घर पर ही होगा। "बहरहाल, मैं किरसानोव के ज़रिये संदेश भेज दूंगा।"

बुधवार को ग्यारह बजे लोपुख़ोव, निश्चित समय पर तयशुदा स्थान पर इन्तज़ार कर रहा था। काफ़ी लम्बी प्रतीक्षा के बाद, पसीने से तर-बतर उसने देखा कि वेरा जल्दी-जल्दी चली आ रही है।

"क्या कुछ गड़बड़ हो गयी, वेरा?"

"कुछ नहीं प्रियतम, मेरी नींद ही देर से खुली।"

"तो कितने बजे रात को नींद की गोद में गयीं?"

"बताना तो नहीं चाहती थी प्यारे, लेकिन... सात बजे ही—और लेटे-लेटे बस सोचती ही रही—नहीं, शायद सात से भी पहले, वास्तव में छह बजे ही!"

"प्रिय वेरा, यही कुछ पूछना चाहता था मैं तुमसे, प्रिय साथिन, अगर हम दोनों को मानसिक शान्ति दरकार है, तो हमें शीघ्र से शीघ्र शादी कर लेनी चाहिये।"

"ठीक कह रहे हो प्रियतम, हमें शादी कर ही लेनी चाहिये। जितनी जल्दी संभव हो उतनी जल्दी।"

"तो फिर तीन या चार दिन में..."

"काश कि हम ऐसा कर सकते, प्रियतम, कितनी चतुराई का सबूत होता तुम्हारे लिए।"

"आज से तीन दिन में मैं दोनों के रहने के लिए जगह ढूंढ़ लूंगा और ज़रूरत की चीज़ें भी। फिर तो हम दोनों साथ रह सकते हैं न वहां?"

"क्यों नहीं, मेरे बुलबुल! ज़रूर रह सकते हैं, ज़रूर!"

"मगर याद रखिये, पहले हमें शादी करनी है।"

"ज़रूर, ज़रूर जानेमन। मैं तो भूल ही गयी थी यह बात।"

"हम आज ही कर सकते हैं शादी। मैं यही पूछना चाहता था तुमसे।"

"तो फिर देर क्या है, चलो कर लें—लेकिन यह इन्तज़ाम तुमने कर कैसे लिया? कितने चतुर हो, मेरे प्यारे!"

"वह सब मैं रास्ते में बता दूंगा, चलो चलें।"

पहुंच गये वहां, लम्बे गलियारों से गुज़रते हुए चेपल में; वहां के द्वारपाल को मेर्त्सालोव को बुलाने भी भेज दिया, जो वहीं पर अनन्त गलियारोंवाले मकान में ही रहता था।

"बस अब आखिरी विनती, वेरा। तुम्हें यह जानना बहुत ज़रूरी है कि इस अनुष्ठान में चुम्बन लेने-देने का विधान है।"

"मुझे मालूम है, प्रिय, यह सब! कैसी लज्जापूर्ण उलझन है!"

"बिल्कुल। तो फिर इस लज्जापूर्ण उलझन से छुटकारा पा लेने के लिए क्यों न हम अभी यह हरकत कर डालें?"

"क्यों नहीं, अगर ऐसा ही ज़रूरी है, तो क्यों नहीं, प्रिय—मगर क्या सचमुच ही हमें ऐसा करना चाहिये?"

"अगर अनुष्ठान के समय ऐसा कर पाने में झिझक हो, तो क्यों न हम इसके लिए पूरी तरह तैयार हों?"

उन्होंने चुम्बन किया।

"कितनी अच्छी बात है, प्रिय, कि हमारे पास पूर्वाभ्यास का अभी समय है। लो, द्वारपाल लौट आया है। चर्च में अब तो किसी प्रकार की उलझन नहीं होगी।"

लेकिन आनेवाला द्वारपाल नहीं था—द्वारपाल तो पादरी को बुलाने चला गया था, आनेवाला किरसानोव था, जो उनका इन्तज़ार मेर्त्सालोव के यहां कर रहा था।

"वेरा, ये हैं अलेक्सान्दर किरसानोव, जिनको तुम इतना नापसन्द करती हो कि मुझे इससे किसी भी क़िस्म का ताल्लुक रखने के लिए भी मना किया था।"

"भला दो चाहनेवाले दिलों के बीच आप क्यों दिवार बनना चाहती हैं, वेरा पावलोव्ना?"

"बिल्कुल इसी लिए क्योंकि वे एक-दूसरे के इतने लोलुप हैं," वेरा ने उससे हाथ मिलाते-मिलाते कहा और तमाम समय मुस्कराते वह यही अचरज करती रही: "क्या मैं भी इन्हें वैसे ही प्यार कर

14—1127

सकूंगी जैसे आप करते हैं? आप इन्हें बहुत ही प्रेम करते हैं, है न?"

"मैं? वेरा पावलोव्ना, मैं तो ख़ुद अपने को ही प्यार करता हूं।"

"आप द्मीत्री को चाहते नहीं?"

"एक ही कमरे में रहनेवाले दो लोगों के रूप में हमारी अच्छी निभती है और इससे अधिक कुछ मैं चाहता भी नहीं।"

"और ये आपको नहीं चाहते क्या?"

"मैंने तो कोई ऐसी बात नहीं देखी। लेकिन इन्हीं से क्यों न पूछ लें: "द्मीत्री तुम मुझे पसन्द करते हो क्या?"

"तुम्हारे विरुद्ध मेरे मन में कोई घोर द्वेष तो नहीं है।"

"अगर ऐसी बात है अलेक्सान्दर, तो फिर मैं इनको आप से मिलने के लिए मना नहीं करूंगी। मैं भी तुम्हें स्नेह करना सीख लूंगी।"

"यह तो बड़ी अच्छी बात है, वेरा पावलोव्ना।"

तभी मेर्त्सालोव आ पहुंचा, "लो मैं आ गया; चलो अब चेपल में चलें।" मेर्त्सालोव ख़ुश था और पुरमज़ाक़ भी, लेकिन अनुष्ठान के आरंभिक शब्दों पर उसकी आवाज़ थरथरा उठी—अगर मामला अदालत में पहुंच गया तो? नताशा, जाओ अपने पिता के घर चली जाओ, तुम्हारा पति तुम्हारी देखभाल नहीं कर सकता और ऐसे पति का फ़ायदा क्या, जब डैडी को सब ख़र्च उठाना पड़े? लेकिन शीघ्र ही उसने अपने पर क़ाबू पा लिया।

अनुष्ठान के अधबीच नताल्या अन्द्रेव्ना—अथवा नताशा, उसका पति उसे इसी नाम से पुकारता था—उपस्थित हो गयी। अनुष्ठान की समाप्ति पर उसने नव विवाहितों को साधारण से कलेवे के लिए निमंत्रित किया। यह उसने इन्हीं के लिए बनाया था। नाश्ता बहुत ही मज़ेदार रहा: वे नाचे भी थे और मेर्त्सालोव जो कोई अच्छा नर्तक नहीं था, वह बस वायलिन बजाता रहा। कोई डेढ़ घंटा ख़ुशी-ख़ुशी न जाने कैसे बीत गया।

वेरा ने कहा, "घर पर सब लोग मेरा इन्तज़ार खाने के लिए कर रहे होंगे। अब मुझे चलना चाहिये। अब मेरे प्रियतम, मैं तीन दिन, चार दिन और न जाने कितने दिन अपनी कालकोठरी में बिता

सकूंगी—और मैं बिल्कुल उदास, हतोत्साह नहीं होऊंगी। अब मुझे किस बात का डर! न, न, मुझे घर छोड़ने मत चलें आप। मैं अकेले ही जाऊंगी, यही ठीक रहेगा।"

"चिन्ता मत करें महानुभाव। मुझे कोई सूली थोड़े ही चढ़ायेगा। मेहरबानी करें अपनी आत्मा को तनिक भी दुखी न करें।" लोपुख़ोव और किरसानोव को विदा करते हुए मेर्त्सालोव ने कहा, जो वेरा को सुरक्षित वहां से चले जाने देने के लिए रुक गये थे। "मैं बहुत ख़ुश हूं कि नताशा ने मुझे इस सब के लिए राज़ी कर लिया।"

अगले दिन, चार दिन की तलाश के बाद, वसीलियेव्स्की द्वीप की पांचवीं गली के आख़िरी सिरे पर एक फ़्लैट मिल गया। लोपुख़ोव के पास कुल मिलाकर बस 160 रूबल ही थे, सो उसे अपने मित्र के साथ इस पर सहमत होने में कोई परेशानी नहीं हुई कि फ़र्नीचर, क्राकरी और दूसरी घरेलू चीज़ों पर ख़र्च करना इस समय असंभव है, इसी कारण तो उन्होंने तीन कमरों का ऐसा फ़्लैट तय किया, जिसमें ज़रूरत का सारा सामान था और मकान-मालिक जो उसी भवन में रहता था उनके खान-पान की भी व्यवस्था कर देगा: मकान-मालिक बूढ़ा बिसाती था जो दिन में पहली और दूसरी गलियों के बीच की मिडल सड़क पर स्टाल लगाकर बटनें, पिनें और रिबन जैसी दूसरी चीज़ें बेचता था और रात में अपनी बूढ़ी बीवी से गपशप करता था। और बीवी दिन में गुदड़ी बाज़ार से आये पुराने कपड़ों के बंडलों को खोलकर उन कपड़ों को ठीक-ठाक किया करती थी। मकान-मालिक टहल-सेवा का भार भी उठाते थे, मतलब यह कि वे नौकरों का काम भी करते थे। और इस सब के लिए 30 रूबल प्रति मास देना होता। उस समय, दस वर्ष पहले पीटर्सबर्ग अपने ही स्टेंडर्ड से इस क़दर सस्ता था। इस प्रबन्ध से उनके पास चार नहीं, तो कम से कम तीन महीनों के लिए तो पर्याप्त धन-राशि थी ही। चाय अथवा ऐसी ही अन्य किसी ज़रूरत के लिए 10 रूबल प्रति माह से तो अधिक ख़र्च आना नहीं था—और चार महीनों में, लोपुख़ोव को यक़ीन था, कि उसे ट्यूशन का, शायद साहित्यिक अथवा ज़रूरत पड़े तो किसी व्यापारिक कार्यालय में काम मिल ही जायेगा। जिस दिन फ़्लैट मिला—सचमुच ही शानदार फ़्लैट, क्योंकि तभी तो उसे ढूंढ़ने में इतना समय लगा था और मिल

हीं गया था अब, उसी गुरुवार के दिन लोपुख़ोव ने, जो अपनी नियमित ट्यूशन पढ़ाने आया था, वेरा से कहा:

"कल तुम निकल सकती हो यहां से वहां रहने के लिए, प्रिय मित्र, यह रहा पता। बस अब मैं कुछ और बात नहीं करूंगा। कहीं कोई सुन न ले।"

"प्रियतम, तुमने मेरी ज़िन्दगी बचा ली!"

लेकिन घर से निकला कैसे जाय अब? क्या बता के जाय? बता भी देती वह, लेकिन उसकी मां आग-बबूला हो उठती, मार-पीट करती और उसे ताले में ही बंद कर देती। उसने तय किया कि वह कमरे में चिट्ठी छोड़ देगी। जब मार्या अलेक्सेयेव्ना ने घोषणा की कि वह भी नेव्स्की प्रोस्पेक्ट तक चलेगी उसके साथ तो वेरा लौटकर चिट्ठी उठाने गयी, उसने सोचा, यही बात बेहतर और अधिक ईमानदारी की होगी कि वह ख़ुद ही मां को बता दे—निश्चय ही मां किसी सार्वजनिक स्थान पर बवाल खड़ा नहीं करेगी? बस उसे यही सावधानी बरतनी पड़ेगी कि जब वह मां को बताये तो उससे कुछ दूर हो और इससे पहले कि मां उसको आस्तीन पकड़ दबोचने की कोशिश कर पाये तत्काल ही गाड़ी पकड़कर भाग निकले।

रूज़ानोव की दुकान के सामने जो ज़बर्दस्त दृश्य उपस्थित हुआ था उसकी पृष्ठभूमि यही थी।

22

लेकिन उस दृश्य का तो आधा भाग ही हमने अब तक देखा है। क्षणेक और शायद इससे भी कम समय तक मार्या अलेक्सेयेव्ना स्तब्ध रह गयी, उसे कुछ भी समझ में नहीं आया, बस जड़ीभूत ठगी-सी रह गयी: कोशिश करने पर भी समझ न पायी कि उसकी बेटी ने क्या कहा। क्या मतलब था उसका और क्या हो रहा है यह सब। लेकिन यह सब कुछ क्षण भर या इससे भी कम समय तक रहा... तभी वह ज़ोर से, चीख़-चीख़कर कोसने लगी, उस समय तक बेटी नेव्स्की प्रोस्पेक्ट की ओर मुड़ रही थी, फिर वह घोड़ागाड़ी की तलाश में कुछ क़दम दौड़ी, घोड़ागाड़ी की तो बड़ी ज़रूरत थी उसे

—दनादन वह मोड़ की ओर भागी। "कोचवान!"—"किस ओर जायेंगी मेम-साहिबा?" सचमुच किस ओर? उसने सुना वेरा ने कारावान सड़क का नाम लिया था और उसे बायीं ओर नेव्स्की प्रोस्पेक्ट की तरफ़ मुड़ते देखा था। किस ओर? "उस छोकरी का पीछा करो!"—"यह सब क्या है मेम-साहिबा? देखिये, मुझे ठीक-ठीक बताइये, किधर जाना है आप को। नहीं तो मैं चलनेवाला नहीं।" यह सुनते ही मेम-साहिबा ने चुन-चुनकर गालियां देना शुरू कर दीं। "मेम-साहिबा, तुम तो नशे में हो, इतना तो मुझे पता चल ही रहा है।" और यह कहकर गाड़ीवाला वहां से रफ़ू-चक्कर हो गया। मार्या अलेक्सेयेव्ना की गालियां बदस्तूर जारी थीं, न जाने कितने लोगों को कोसा। एक साथ कई तरफ़ जाने की कोशिश की। हवा में मुक्के चलाते पांव पटके और अन्त में बाज़ार में एक खम्भे के सहारे टिककर खड़ी हो गयी। लेकिन उसके क्रोध और क्रूरता के भाव में कोई कमी नहीं आयी। इस बीच नज़ारा देखने, मज़ा लेने और हर तरह का सलाह-मशविरा देने के लिए चार-पांच छोकरे आ जमा हुए जो छुट-पुट चीज़ें बेच रहे थे। उनकी फब्तियां कमोबेश बदतमीज़ी से भरी थीं और वे विनोदपूर्ण तथा कुछ सद्भावनापूर्ण सलाह देने को जुटे हुए थे। "अरे मेम, क्यों गला फाड़-फाड़कर चीख रही हैं! आप तो शराब पीकर बड़ी भाग्यशाली दीखती हैं।"—"मेम-साहिबा, मेम-साहिबा, मुझसे कुछ नींबू ही खरीद लीजिये न, तबीयत हरी हो जायेगी। मैं आप को सस्ते में ही दे दूंगा।"—"इसकी बात का बिल्कुल भी यक़ीन न कीजिये, मेम, इसके नींबुओं से क्या भला होगा आपका। आपको तो नशा उतारने के लिए किसी और चीज़ की ज़रूरत है।"—"मेम जी, ओ मेम जी आप कोस तो बहुत अच्छा रही हैं। क्यों न हमारे बीच कोसने का मुक़ाबला हो जाय, मैं और आप, बड़ा मज़ा आयेगा?" आपे से बाहर, उसने अपने सबसे निकट खड़े प्रशंसक का कान पकड़ लिया, कोई सत्रह बरस का छोकरा होगा, उसने जीभ बांकेपन से कुछ बाहर निकाल रखी थी। उसकी टोपी गिर पड़ी और झबरीले बाल मचल पड़े। मेम साहिबा ने तत्काल झोंटा पकड़ लिया, दूसरे प्रशंसक यह हरकत देखकर वर्णनातीत खुशी में डूब गये। "क्या बात है, मेम-साहिबा! बस कसकर पकड़े रहिये,

छोड़िये मत!" अलबत्ता, कुछ ने यह भी कहा: "फ़ेद्या, सबक़ सिखा दे इसे!" लेकिन अधिकांश मार्या अलेक्सेयेव्ना के लिए जी-जान लड़ा रहे थे। "फ़ेद्या? इस महिला के मुक़ाबले में? ख़ैर नहीं इसकी! ख़ूब खींचिये मेम-साहिबा, बस मज़ा चखा दीजिये इसे। यही सज़ा है इस बदतमीज़ की!" भीड़ अब और ज़्यादा हो चुकी थी। अब कोचवानों, दुकानदारों और राहगीरों का भी जमघट लग चुका था। मार्या अलेक्सेयेव्ना ने अपने पर किसी तरह क़ाबू किया और चलते-चलते फ़ेद्या के सर पर यंत्रवत् एक धौल जमायी और अपने प्रशंसकों की ताबड़तोड़ प्रशंसा के बीच सड़क के उस पार निकल गयी।

कोर ऑफ़ पेजेज़ के गेट से निकल जाने के बाद ही उसे होश आया कि वह अपने घर की ओर जा रही है। उसने घोड़ागाड़ी रोकी और उसमें बैठकर घर पहुंच गयी। रास्ते में और कोई दुर्घटना नहीं हुई। उसके बेटे फ़ेद्या ने घर का दरवाज़ा खोला, उसे भी झापड़ खाना पड़ा। फिर अलमारी में रखी शराब का घूंट उसने लिया, मत्र्योना की भी धुनायी हुई क्योंकि वह क्या माजरा है देखने के लिए उधर आ गयी थी। फिर एक और घूंट चख ली, फिर वेरा के कमरे की ओर लपकी और तत्काल ही भीतर से लौट भी आयी। फिर दोबारा वेरा के कमरे में गयी और कुछ देर रुकी और फिर इस कमरे से उस कमरे में फिरकनी की तरह घूमती रही। अफ़सोस कि उसका झापड़ खाने के लिए कोई उसके नज़दीक नहीं था। फ़ेद्या रसोई की सीढ़ी पर चढ़ गया था और मत्र्योना वेरा के कमरे के दरवाज़े के छेद में कुछ देर झांकने रहने और मालकिन को भीतर से उठते देखकर ताबड़तोड़ वहां से खिसकी, लेकिन रसोई घर की तरफ़ नहीं बल्कि अपनी मालकिन के कमरे में जा पहुंची और उनके पलंग के नीचे छिपी रही, जब तक कि मालकिन का संयम नहीं लौटा। और तब तक वहीं पड़ी रही, जब तक कि उसे भलमनसाहत से आवाज़ नहीं दी गयी।

मार्या अलेक्सेयेव्ना एक से दूसरे सूने कमरे में कब तक, कितनी देर तक—कम या ज़्यादा देर तक गरजती बरसती रही, मत्र्योना का कोई अन्दाज़ नहीं पड़ा, लेकिन ज़्यादा ही कहना अधिक उचित होगा; क्योंकि मालिक दफ़्तर से वापस आ चुके थे और उन्हें भी इसका स्वाद मिल चुका था—दोनों ही रूपों में आदर्श एवं

भौतिक दोनों ही रूपों में। लेकिन, कौन-सी ऐसी बात है, जो ख़त्म न हो और इसलिए जब मालकिन ने आवाज़ लगायी: "मत्र्योना, हमारा खाना?" तो मत्र्योना ने समझ लिया कि तूफ़ान थम गया है। वह पलंग के नीचे से बाहर निकली और... खाना परोस दिया।

कोई शक नहीं कि खाते समय किसी भी क़िस्म की चीख़-पुकार सुनने में नहीं आयी: मार्या अलेक्सेयेव्ना ने चिड़चिड़ेपन से अधिक और कुछ प्रदर्शित नहीं किया, और उसमें भी कोई झगड़ालू तर्ज़ नहीं दिखायी पड़ी। मानो वह अपने ही संतोष के लिए कोस रही हो। और न ही वह डिनर के तत्काल बाद सोने के लिए गयी। वह अकेली बैठी रही, पहले तो बिल्कुल शान्त और फिर उसने कुछ बड़बड़ की। इसके बाद फिर देर तक शान्ति रही। और अन्त में वह चीख़ी:

"मत्र्योना, जाओ, जाके मालिक को जगाओ और उनसे कहो कि वे यहां आयें।"

मत्र्योना, जो इस डर से पब अथवा कहीं और नहीं गयी थी कि कहीं मालकिन उसे पुकार न बैठें, तुरन्त हुक्म बजा लायी। और मालिक भी वहां आकर हाज़िर हो गये।

"मकान-मालकिन के यहां जाकर उससे कहो कि तुम्हारी बेटी भाग गयी है और उसने उस धोखेबाज़ से शादी कर ली है, कि तुम्हारा आशीर्वाद था उसे। उससे कहना कि तुम मेरे विरुद्ध थे। कहना उससे कि तुमने उसके लिए ऐसा किया है। क्योंकि वह इस शादी के ख़िलाफ़ थी। कहना उससे यह सब मेरा दोष है और तुमने केवल उसकी इच्छा का पालन किया है। उससे कहना कि तुम्हीं ने दोनों को एक-दूसरे से मिलाया था। समझ गये न?"

"बिल्कुल समझ गया, मार्या अलेक्सेयेव्ना, तुम बड़ी समझदार हो, क्या बात सोची है।"

"तो फिर तुरन्त जाओ! भले ही वह खाना खा रही हो, तुम उसे, ज़रूरत पड़े तो उठा लेना मेज़ से। पहले उसे तुम ही बताओ, किसी दूसरे से उसे यह सब सुनने को न मिल पाये।"

रोज़ाल्स्की को जो कुछ कहना था वह स्पष्ट रूप से इतना सच था कि मकान-मालकिन को उसका विश्वास करना ही पड़ेगा, भले ही उसके कहने के ढंग में कोई विदग्धता न हो! और उसके कहने का

ढंग ऐसा विश्वासदायक रहा कि उसे इस बात के प्रमाण अथवा प्रमाण के बिना भी माफ़ करना ही पड़ेगा कि उसने अपनी पत्नी का लगातार विरोध किया था और वेरा को जानबूझकर लोपुखोव पर थोप दिया था ताकि युवा मालिक मिखाईल के साथ वेरा के बिल्कुल अनमेल विवाह को किसी भी प्रकार टाला जा सके। शादी उन्होंने कैसे की? रोज़ाल्स्की ने दहेज़ के बारे में तो कोई टाल-मटोल नहीं की थी—पांच हज़ार नक़द, शादी और गृह-प्रवेश का पूरा ख़र्च। वही तो उनके प्रेम-पत्र लाता-ले जाता था। उसी ने तो अपने विवाहित विभागाध्यक्ष फ़िलान्त्येव के फ़्लैट में उनके मिलन की व्यवस्था की थी। और वहां तक पहुंचाया भी ख़ुद ही था। महामहिम, मैं छोटा आदमी भले ही होऊं, लेकिन मैं अपनी बेटी की सम्मान-रक्षा का ध्यान रखना जानता हूं। भला मेरी क्या औक़ात कि मैं अपने बेटे के लिए कोई ट्यूटर रख सकूं, यह सिर्फ़ बहाना था और जहां तक उसकी पत्नी के बदनीयत के इरादों का सवाल था, उसकी तो भरपूर निन्दा की।

ऐसे में कौन उस व्यक्ति पर सन्देह करता अथवा उसे माफ़ करने से इनकार करता? और सबसे महत्त्वपूर्ण बात तो यह कि यह सब कितना आश्चर्यजनक और अनन्ददायक अवसर था। आनन्द तो कठोरतम हृदय को भी नरम कर सकता है। अपने अनुमोदन भाषण में मकान-मालकिन ने उसकी बीवी की दारुण योजनाओं और कायरतापूर्ण करतूतों का लगे हाथों बखान कर दिया, उसने तो यह मांग तक रख दी कि उस लुच्ची को कान पकड़कर घर से बाहर निकाल दे; लेकिन वह तो चिरौरी-विनती करने लगा कि ऐसी आज्ञा न दें और मकान-मालकिन भी कहां सचमुच ऐसा चाहती थी, उसने भी तो यों ही ज़रा डराने-धमकाने की गरज से कहा था ऐसा। अंत में यह तय हुआ कि रोज़ाल्स्की मैनेजर की तरह घर में बना रहे लेकिन उसे सड़कवाले फ़्लैट को खाली करके आंगन के पिछले हिस्सेवाले मकान में रहने के लिए जाना होगा और यह भी कि उसकी बीवी सामनेवाले आंगन में कभी अपनी सूरत मकान-मालकिन को नहीं दिखायेगी और मकान-मालकिन की खिड़की के पासवाले किसी गेट के स्थान पर सिर्फ़ पिछले गेट का इस्तेमाल करेगी। प्रतिमास की 20 रूबल बढ़ोतरी में से 15 काट लिये जायेंगे और 5

उसकी ईमानदारी के लिए तथा बेटी की शादी पर हुए ख़र्च को देखते हुए उसी के पास छोड़ दिये जायेंगे।

23

मार्या अलेक्सेयेव्ना ने लोपुख़ोव के आगमन पर उससे निपटने की न जाने कितनी योजनायें बनायीं। इनमें सबसे ज़ोरदार थी: रसोई में दो दरबानों को छिपाना, जो उसके इशारे पर झपट पड़ेंगे और अच्छी-ख़ासी धुनाई कर देंगे लोपुख़ोव की। अत्यन्त नाटकीय योजना के अनुसार, वह और उसके पति महोदय अपनी निरंकुश बेटी और उसके दुष्ट अभिषंगी को जी भरकर कोसेंगे और इतनी शिद्दत से कि उसका भरपूर प्रभाव हो! जैसा कि हम सभी जानते हैं, मां-बाप द्वारा अभिशप्त बच्चे क़ब्र में भी चैन से नहीं सो पाते। लेकिन ये सभी मन ही मन बनने-उठनेवाली योजनायें उतनी ही अवास्तविक थीं, जितनी कि मकान-मालकिन द्वारा की गयी, रोज़ाल्स्की से अपनी पत्नी को घर से निकालने की मांग थी। सभी प्रकार की कविता की तरह, इस प्रकार की काल्पनिक परियोजनाओं का भी कोई व्यावहारिक प्रयोजन नहीं होता, अलबत्ता आत्मतुष्टि अवश्य हो जाती है इनसे, क्योंकि न जाने कितनी कल्पनायें आती-जाती हैं, घंटों मन उनसे ही बहला रहता है: क्या-कुछ किया होता मैंने अगर मैं इतनी नरम हृदय महिला न होती (अथवा सन्दर्भ से यह व्यक्ति पुरुष भी हो सकता है)।

पीटने और शाप देने की योजनायें मार्या अलेक्सेयेव्ना की मन-तरंग का आदर्श रूप अथवा आदर्शमूलक पक्ष थीं। वास्तविक बात तो यह थी कि उसकी बुद्धि और आत्मा का तो कुछ कम प्रभावक और अधिक व्यावहारिक झुकाव था—आम तौर पर इंसानी कमज़ोरी के होते यही तो अपरिहार्य असंगति है।

कोर ऑफ़ पेजेज़ के गेट तक पहुंचते-पहुंचते उसने अपने होशोहवास पर क़ाबू पा लिया था तभी वह अन्तत: यह समझ पायी कि उसकी बेटी वास्तव में भाग गयी है। उसने शादी कर ली है और ग़ायब हो गयी है। मन ही मन उसकी चीख़-सी निकल गयी: "मैं लुट गयी!

मैं लुट गयी!" यही आह उसे बारम्बार कचोटती रही और कई बार तो यह फूट भी पड़ी मुंह से और ऐसा घर पहुंचने तक होता रहा। फ़ेद्या और मत्र्योना को अपनी पीड़ा से अवगत कराने के लिए (फिर वही इंसानी कमज़ोरी: हम सब तत्क्षण के वास्तविक हित को परे फेंककर अपनी भावुकतापूर्ण बकवास को ही तो प्रकट करते हैं) क्षण भर को रुककर वह वेरा के कमरे की ओर लपकी, सीधे सिंगार-मेज़ की ओर और फिर कपड़ों की अल्मारी की ओर। जल्दी-जल्दी उलट-पलट करने के बाद उसने देखा कि सब चीज़ें यथास्थान थीं अथवा ऐसा लग रहा था कि हैं। इसके बाद पुष्टि के लिए सांगोपांग तलाशी शुरू हुई। पता चला कि हर चीज़ और पहनने के कपड़े यथास्थान हैं, बस कानों की सोने की बालियां, मलमल की पुरानी पोशाक और वह पुराना कोट ही ग़ायब हैं, जिन्हें पहनकर वह घर से निकली थी। उसे उम्मीद थी कि उस सब सामान की सूची भिजवायेगी जो उसे, उन चीज़ों की मालकिन को भिजवा दिया जाय। मां ने तय किया कि सोने की एक भी चीज़ और दूसरी महंगी चीज़ें हरगिज़ नहीं देगी। बस केवल चार सादी-सी पोशाकें और सबसे घटिया अन्तरंग वस्त्र ही देगी—कुछ तो लोकाचार और दिखावे के लिए दिया जाना ही होगा न और मार्या अलेक्सेयेव्ना मर्यादा का पालन बड़ी कट्टरता से करती थी।

दूसरी वास्तविक समस्या थी मकान-मालकिन—उसका समाधान तो बड़ी कुशलता से हो ही चुका है—हम पहले पढ़ चुके हैं।

और अब थी तीसरी समस्या: उस कुटिल बेटी और उस अनचाहे दामाद का क्या करें? धिक्कार दें? यह तो बच्चों का खेल है, लेकिन इसके अलावा किसी ठोस चीज़ की ज़रूरत है, बस अदालत में घसीटकर जुर्म लगाना चाहिये। उत्साह की पहली झोंक में यह विचार आदर्श लगा और अत्यधिक आकर्षक भी! लेकिन जैसे क्रोध का उफान कम हुआ, सब तिरोहित हो गया। पूरे मामले को नये ढंग से सोचा-विचारा। मार्या अलेक्सेयेव्ना से बेहतर और कौन यह बात जानता है कि अदालत में मामले पैसे के ज़ोर पर चलते हैं, सिर्फ़ पैसे के ज़ोर पर और उसके द्वारा कल्पित मामले-मुक़दमों में तो बहुत ही धन और अपार समय ख़र्च होता है और परिणाम क्या होता है, बहुत ख़र्चीला शून्य!

तो फिर कोई क्या करे? बस दो बातें ही तत्काल सूझती हैं: लोपुख़ोव को इतनी लताड़ सुनाओ और इतनी कसकर जितने की कल्पना की जा सकती हो। वेरा की हर चीज़ की हर मांग को ठुकरा दो और क़ानूनी कार्रवाई करने की धमकी दो। लेकिन उसे लताड़ बहुत भयंकर सुनानी होगी, जी भरकर!

लेकिन इसका मौक़ा ही नहीं आया। लोपुख़ोव आया और उसने कुछ इस तर्ज़ को अपनाया: "वेरा और मैं आपसे माफ़ी मांगते हैं कि हमने आपकी इजाज़त के बिना यह हरकत कर डाली..." तभी मार्या अलेक्सेयेव्ना बरस पड़ी: "मैं उस नासपीटी को..."

लेकिन वह इससे आगे कुछ बोल पाये, इससे पहले ही लोपुख़ोव ने ज़रा तीखे स्वर में कहा: "मैं यहां गाली सुनने नहीं आया। मैं तो व्यावहारिक बातचीत करने आया हूं। अगर आप इस पर शान्तिपूर्वक विचार करने के लिए अभी मानसिक रूप से तैयार नहीं हैं, तो पावेल कोन्स्तान्तीनिच और हम दोनों मिलकर निपट सकते हैं सब मामले से। जब आप कुछ शान्त हो जायें तब फ़ेद्या अथवा मत्र्योना को भेजकर बुलवा लें हमें।" और वह रोज़ाल्स्की को बैठकख़ाने से उठाकर उसके अध्ययन-कक्ष में ले गया। उसने अपनी बात इतनी ज़ोर से कही थी कि उससे ऊंचे स्वर में बोल पाना असंभव ही था। अलबत्ता मार्या अलेक्सेयेव्ना बुदबुदाकर कोसने से बाज़ नहीं आयी।

लोपुख़ोव ने रोज़ाल्स्की को दरवाज़े की ओर धकेला और फिर मुड़कर बोला:

"मार्या अलेक्सेयेव्ना, ऐसा लगता है कि हम लोग आख़िरकार बातचीत कर सकते हैं लेकिन याद रखिये, बातचीत तभी अच्छी तरह हो सकती है जब दिमाग़ शान्त हो, संतुलित हो!"

वह फिर कुछ चीख़ने ही वाली थी कि लोपुख़ोव बीच में ही बोल पड़ा:

"अगर आप संतुलित नहीं रह सकतीं, तो हम यहां से चलते हैं।"

वह किसी तरह चीख़ ही पड़ी: "अरे, जड़बुद्धि, किसलिए उसके पीछे-पीछे फुदक रहे हो?"

"वही ले जा रहा है, है न?"

"अगर पावेल कोन्स्तान्तीनिच भी सुनने-वुनने को तैयार नहीं, तो

फिर मैं यहां से बिल्कुल चले जाना ही बेहतर समझूंगा। ठीक ही कह रहा हूं। मुझे कोई फ़र्क़ नहीं पड़ता। जनाब, आप क्यों अपनी पत्नी को इस तरह गाली देने दे रहे हैं? मार्या अलेक्सेयेव्ना को क़ानून के बारे में कुछ ठीक-से नहीं मालूम। वे शायद समझती हैं कि वे हमारे साथ जो चाहें, जैसा चाहें सलूक कर सकती हैं। लेकिन जहां तक आपका सवाल है, जनाब, आप तो सर्विस करते हैं और आप क़ानूनी-कार्रवाई से अच्छी तरह वाक़िफ़ हैं, बता दीजिये इन्हें कि ये अब वेरा को छू भी नहीं सकतीं, मुझे छूने की तो बात दरकिनार।"

मार्या अलेक्सेयेव्ना ने मन ही मन सोचा: "यह धूर्त जानता है कि उसका कोई बाल बांका नहीं कर सकता", लेकिन प्रकटत: उसने कहा कि वह क्षणेक के लिए उत्तेजित हो गयी थी, मां हूं न आखिर भविष्य में आपे में रहूंगी।

लोपुख़ोव फिर रोज़ाल्स्की के साथ बैठक में लौट आया। सभी बैठ गये। उसने मार्या अलेक्सेयेव्ना से कहा: "पहले मेरी बात पूरी सुन लीजिये और फिर कुछ कहिये।" और फिर उसने अपनी बात कहनी शुरू की और जब भी मार्या अलेक्सेयेव्ना बीच में टोकने की कोशिश करती वह अपनी आवाज़ तीखी कर देता और जो कुछ उसे कहना था, वह सब कुछ उनसे कह डाला अर्थात् अब शादी रद्द नहीं हो सकती, क्योंकि स्तोरेश्निकोव का प्रस्ताव हर हाल में अर्थहीन हो गया, और यह उन्हें भली-भांति मालूम भी है। इसलिए उनकी तरफ़ से कोई भी कार्रवाई और कोशिश निरर्थक सिद्ध होगी, फिर भी, वे जो अच्छा समझे करें। उसने तो यह भी कह दिया कि वह उनकी सफलता की कामना करेगा, अलबत्ता उनके पास इसके लिए धन बरबाद करने को हो। वैसे इसकी कोई ज़रूरत तो प्रतीत नहीं होती, क्योंकि वेरा उस आदमी से शादी करने के लिए कभी तैयार न होती और फिर मार्या अलेक्सेयेव्ना तो ख़ुद ही यह जानती हैं कि उसने पहले इसके लिए निवेदन भी तो नहीं किया था। और फिर यह बात भी तो है कभी न कभी तो आपको वेरा का विवाह करना ही पड़ता और विवाह में माता-पिता की जेब तो खाली हो ही जाती है—दहेज़ है, दावतें हैं और भी न जाने क्या-क्या। हालांकि मुख्य चीज़ तो दहेज़ ही है—और इस सब का तात्पर्य यही तो कि उन्हें तो अपनी

बेटी का शुक्रिया अदा करना चाहिये कि उसने आपको अच्छे-खासे खर्च के बोझ से बचा दिया। वह इसी प्रकार की बातें कहता चला गया, कहता चला गया, पूरे विस्तार से और पूरे आधे घंटे तक।

जब उसने अपनी बात समाप्त की तो मार्या अलेक्सेयेव्ना को यह भली-भांति पता चल चुका था कि इस दुष्ट व्यक्ति से किसी भी प्रकार जीत पाना कठिन है। इसलिए उसने यही बेहतर समझा कि भावुकतापूर्ण शैली अपनायी जाय। उसने कहा: "दु:ख की बात केवल यही है कि वेरा ने मां-बाप से इजाज़त लेने की भी ज़रूरत नहीं समझी। तुम तो समझ ही सकते हो कि मां के दिल को कितनी चोट लगी होगी इससे।" और एक बार मां के दिल को और उसे चोट लगने की बात हुई तो वार्तालाप स्वाभाविक रूप से दोनों के लिए ही कुछ वैसा-सा हो गया, मानो हम इस विषय से बच कैसे सकते हैं, भले ही औपचारिकता क्यों न बरतें, मार्या अलेक्सेयेव्ना ने यही तो कहा कि स्नेहमयी मां होने के नाते उसे कितना बुरा लगा इस व्यवहार से, क्या-कुछ बताये अब वह। फिर उसने विस्तारपूर्वक भावनापूर्ण विषयों की चर्चा की, कहा कि वे तो बस अपनी बेटी की भलाई ही चाहते हैं और इसमें किसी भी क़िस्म का शक करने की ज़रूरत नहीं। और जब इस प्रकार का भावनात्मक व्याख्यान काफ़ी खिंच गया तो उन्होंने चिर-परिचित लोकाचार के नाते एक दूसरे से विदा लेने की रीति-नीति बरती और काफ़ी देर तक शिष्टाचरण का दौर चला—इस सबका अर्थ केवल यही था कि वह यह भली-भांति समझता है कि मां के दिल पर क्या गुज़री है और इसीलिए वह अभी उससे यह अनुरोध नहीं करेगा कि वह अभी वेरा से मिले, क्योंकि उसका तनाव बढ़ेगा, लेकिन जब वेरा की खुशी की बात उठेगी, जो निस्सन्देह उसकी एकमात्र इच्छा रही है, तो मां के दिल पर कुछ मरहम लग जायेगा अन्तत: और फिर निश्चय ही वह अपनी बेटी से बिना किसी परेशानी के मिल-जुल सकेगी।

इस पर सहमत होकर वे शान्तिपूर्वक एक दूसरे से विदा हुए।

जब मार्या अलेक्सेयेव्ना ने उसे दरवाज़े से बाहर तक छोड़ दिया तो बुदबुदायी: "दुष्ट कहीं का!"

उसी रात मार्या अलेक्सेयेव्ना ने सपना देखा: वह खिड़की के पास

बैठी है कि तभी एक घोड़ागाड़ी निकली, बहुत ही शानदार गाड़ी, उसी की गली में चली आ रही थी। वह खड़ी हुई और उसमें से एक खूबसूरत सज़ी-धजी महिला उतरी, उसके साथ सभ्य पुरुष था और वे दोनों ही उसके कमरे में घुस आये। महिला आते ही बोली: "देख न प्यारी मां, मेरे पति मुझे कितनी शान-बान से रखते हैं," वह महिला वेरा थी और वेरा जिस कपड़े की पोशाक पहने हुए थी—उसने देखा—कि सबसे क़ीमती था और वहां खड़ी वेरा कह रही थी: "खाली कपड़े के लिए ही हमें चांदी के 500 रूबल देने पड़े; लेकिन मां, हमारे लिए यह रक़म कुछ भी नहीं। मेरे पास तो ऐसी पोशाकें पूरी दर्जन भर हैं, बढ़िया पोशाकें। और मां, इनके लिए भारी रक़म खर्च करनी पड़ती है। मेरी अंगुलियों की तरफ़ तो देख, मां।" उसने देखा और क्या देखा, वेरा अंगुलियों में बड़ी-बड़ी अंगूठियां, हीरे जड़ी अंगूठियां पहने थी। "यह 2000 रूबल की है और यह तो और भी अधिक 4000 रूबल की और देख मां, इधर तो देख यह ब्रोच तो 10 हज़ार रूबल का है!" तभी उसका संगी बोला और लोपुखोव ने, वही था न पुरुष, कहा: "मां जी, यह तो कुछ भी नहीं है हमारे लिए, असली माल तो यहां है, मेरी जेब में, प्यारी मां जी देखो न, मेरा बटुआ कितना मोटा और भारी है, सब सौ-सौ रूबल के नोट हैं, यह मेरी ओर से आपके लिए तुच्छ भेंट है। लेकिन प्यारी मां, यह तो कुछ भी नहीं है! अब इसी बटुए को लो नहीं, मैं यह नहीं दे रहा हूं—यह तो और भी मोटा है क्योंकि इसमें तो बैंकनोट भरे पड़े हैं और हर नोट उस बटुए में भरे नोटों से कहीं अधिक मूल्यवान है, जितना सब मैंने अभी तुम्हें दिया है, प्यारी मां जी!"—"मेरे प्यारे दामाद, तुमने तो साबित कर दिया है कि तुम मेरी बेटी और हमारे पूरे परिवार को भी सुख-सुविधा प्रदान करने की सामर्थ्य रखते हो लेकिन प्यारे बेटे, यह तो बताओ कि तुम इतने धनवान कैसे हो गये?"—"अरे प्यारी मां, मुझे लगान-चुंगी इकट्ठा करने का ठेका मिल गया है!"

और जागने पर उसके मन में जो पहला विचार जागा, वह यही था: "सचमुच ही, यह कोई बुरा विचार तो नहीं"।

24

मार्या अलेक्सेयेव्ना की प्रशंसा में दो शब्द

आप, मार्या अलेक्सेयेव्ना रोज़ाल्स्की, वेरा के जीवन से तिरोहित होनेवाली हैं, लेकिन इससे पहले कि ऐसा हो, लेखक आपसे यह कहना चाहता है कि आप इस पर आपत्ति न करें कि आप का निर्गम आप के लिए प्रतिकूल पड़ेगा। मेहरबानी करके यह न समझें कि हमारे मन में आपकी प्रतिष्ठा गिरने का कारण यही है। हम आपको किंकर्त्तव्यविमूढ़ स्थिति में छोड़ रहे हैं, लेकिन आप की बुद्धि के बारे में हमारी राय किसी भी तरह गिरी नहीं है। आपकी ग़लती आपकी साख को किसी तरह घटाती नहीं। आप को ऐसे लोगों से निपटना पड़ा, जैसों से आपका पहले कभी नहीं पड़ा था, इसमें आपकी ग़लती नहीं कि अपने अनुभव के आधार पर आप उन्हें ठीक से न समझ पायीं। तब तक आपने ज़िन्दगी में जो कुछ देखा था, उससे आपने यही निष्कर्ष निकाला कि मानवजाति मूर्खों और चालाकी खेलनेवाले धूर्तों के रूप में विभाजित है। आपका विचार यही था न: "अगर कोई व्यक्ति मूर्ख नहीं तो वह धूर्त है अथवा जो मनुष्य धूर्त नहीं, वह मूर्ख है।" और आप ठीक भी थीं, श्रीमती रोज़ाल्स्की, बस अभी कुछ समय पहले तक आप बिल्कुल सही थीं। आप अच्छे मृदु भाषी लोगों से मिली थीं और हरेक को आपने निरपवाद रूप से लल्लो-चप्पो करके धोखा देनेवाला अथवा जीवन से अज्ञानी वयस्क मूर्ख अथवा पूर्ण रूप से अयोग्य ही माना-समझा था। और इसी कारण, मार्या अलेक्सेयेव्ना, आपने शिष्ट और सुष्ठु वाक्यवालियों को ही अविश्वासनीय माना, आपने उन्हें बेवक़ूफ़ अथवा छलिया समझा और आप ठीक ही थीं। मानव प्रकृति के बारे में आपकी धारणा, ऐसी किसी महिला, जो न मूर्ख हो और न धूर्त, से मिलने से पहले ही, पक्की-पोढ़ी बन चुकी थी। आपके मतिभ्रम के लिए आपको क्षमा किया जा सकता है, आप यह जान और समझ न पायी कि उसके साथ सलूक कैसा किया जाये? और फिर, मानव प्रकृति के बारे में आपकी धारणा, ऐसे किसी पहले भद्र पुरुष से मिलने से पहले ही, पक्की हो चुकी थी, जो दयनीय रूप से मूर्ख नहीं था, जो

ज़िन्दगी के बारे में आपसे कुछ कम नहीं जानता था और कुछ कम बुद्धिमत्ता के साथ उसके बारे में सोचता-विचारता न हो और जो आपकी ही तरह अच्छे ढंग से कोई काम न कर सकता हो, अगर आपने उसे अपने जैसा ही चालाक लुच्चा समझा, तो हम केवल आपको क्षमा ही कर सकते हैं। मार्या अलेक्सेयेव्ना, आपकी कोई भी ग़लती मेरे मन में आपके लिए सम्मान को कम नहीं करती, आप तो बहुत चुस्त और समझदार हैं! आपने अपने पति को शून्य से बहुत कुछ बना लिया। आपने अपने बुढ़ापे का इन्तज़ाम कर लिया है—दोनों ही महत्त्वपूर्ण उपलब्धियां हैं और आपके लिए दोनों ही अत्यन्त कठिन। आपके तरीक़े कुटिल हो सकते हैं, लेकिन आप की जो परिस्थितियां थीं, उनमें वही कुछ हो सकता था। क्योंकि तरीक़ों का चुनाव परिस्थितियों के अनुसार ही तो किया जा सकता है, चरित्र के अनुसार तो नहीं। आपका विकल्प आपकी बुद्धि और इच्छा-शक्ति के लिए कोई अपमानजनक नहीं, बल्कि प्रशंसनीय है।

मार्या अलेक्सेयेव्ना, आपके लिए इतनी प्रशंसा पर्याप्त है क्या? निस्सन्देह है। आपने कभी यह ढोंग नहीं किया कि आप दयालु अथवा मृदु हैं। स्पष्टवादिता के किसी अविवेकपूर्ण क्षण में आपने ही तो यह स्वीकार किया था कि आप दुष्ट और कपटी हैं और इसे कभी भी आप कोई कमज़ोरी अथवा अपमानजनक नहीं मानतीं, जैसा कि आपने बताया भी था, जैसी परिस्थितियां थीं, उनमें आपका स्वभाव और व्यवहार कुछ दूसरा हो भी कैसे सकता था। और ऐसी स्थिति में, आप इसका अधिक बुरा नहीं मानेंगी, अगर मेरी प्रशंसा आपकी सहज-बुद्धि और दृढ़ संकल्प तक ही सीमित है और आपके गुणों की प्रशंसा नहीं की गयी है जिनका न तो आप दावा करती हैं और न ही उन्हें योग्यता मानती हैं बल्कि जिन्हें आप मूर्खता की ही निशानी कहेंगी। और ऐसी स्थिति में, आप किसी और प्रशंसा की आशा नहीं करेंगी, बस जितनी पहले की जा चुकी है उसी से सन्तुष्ट हो लेंगी। ताहम, मैं आपके पक्ष में यह अन्तिम बात अवश्य कह सकता हूं: मैं जिन लोगों को नापसन्द करता हूं और जिनसे मैं कोई भी वास्ता नहीं रखना चाहूंगा उन सब में से मैं केवल आपके साथ सम्बन्ध बना सकता हूं। यह ठीक है कि आप अपने हितों की पूर्ति के लिए बेरहम हैं; लेकिन अगर कहीं आपके हितों की बात न हो तो आप क्रोध के मूर्खतापूर्ण आवाहन पर कोई

बदमाशी नहीं करेंगी—आप सोचेंगी: क्यों समय, धन और प्रयत्न बरबाद किये जाय। निस्सन्देह, आप अपनी बेटी और उसके पति को धीमी-धीमी आंच पर भूनकर बहुत खुश होंगी, ताहम आपने प्रतिशोध की ज्वाला का शमन किया और यह सोचने का कष्ट गवारा किया कि ऐसा कर पाना आपके बलबूते के बाहर है—और यह समझते हुए कि कब हार मान लेनी चाहिये, मार्या अलेक्सेयेव्ना, आपने यह निश्चय ही प्रशंसाजनक कार्य किया! आपकी इसी बुद्धि ने तो आपको रोका कि आप ऐसा मुक़दमा दायर न करें, जिससे आपको नाराज़ करनेवालों का कुछ भी न बिगड़ेगा। आपने तय कर लिया कि अदालती कार्रवाई से उनके सामने जो छोटी-मोटी अड़चनें खड़ी होंगी उनसे कहीं अधिक असुविधा आपको होगी और धन व्यय करना पड़ेगा आप को। इसी लिए आपने क़ानूनी कार्रवाई करने का इरादा बिल्कुल ही त्याग दिया। अगर आप शत्रु को पददलित नहीं कर सकते और अगर उसे कम से कम हानि पहुंचाकर आपको खुद उससे ज़्यादा तकलीफ़ पहुंचे, तो फिर लड़ाई-झगड़ा किया ही क्यों जाय। इस समझ के साथ ही साथ आप में सामान्य विवेक है और खुद अथवा दूसरों को अनावश्यक चोट पहुंचाये बिना, अपरिहार्य के सम्मुख घुटने टेक दें और यह भी आपके लिए पर्याप्त प्रशंसनीय है। संक्षेप में यह बात है कि मैं आप के साथ तो सम्बन्ध बना सकता हूं, क्योंकि अगर आपको कोई हानि पहुंचनेवाली है वैसा करने से तो आप दूसरे का अशुभ नहीं करेंगी। यह अत्यन्त विरल और अत्यन्त मूल्यवान गुण है। लाखों लोग अपने को और दूसरों को कहीं अधिक हानि पहुंचाते हैं, यद्यपि वे देखने में आप जैसे दुष्ट नहीं लगते। सभी दुष्टों में आप सर्वोत्तम हैं क्योंकि न तो आप दुस्साहसी हैं और न ही अधकचरी। मैं आपको और आप जैसे दूसरों को इस धरती से नेस्तनाबूद करके खुश होऊंगा; लेकिन फिर भी मैं आपका सम्मान करता हूं: आप किसी के मार्ग में रोड़ा नहीं बनतीं; और अगर आप इस समय दुष्ट बनी हुई हैं, तो यह तो परिस्थितियों की ही अनिवार्यता है, लेकिन परिस्थितियों के बदलते ही आप प्रसन्नतापूर्वक उपयोगी नहीं तो बिल्कुल हानिरहित हो जायेंगी, क्योंकि आप तब तक कोई बदमाशी नहीं करेंगी, जब तक कि आपको कोई लाभ न हो और अगर लाभ होता दिखेगा, तो आप कुछ भी कर सकती हैं। इससे यही प्रकट होगा कि आप अगर आपको अपने हित

में लगेगा तो निष्कपट और भली बातें भी कर सकती हैं। मार्या अलेक्सेयेव्ना, यह गुण है आपमें, इसमें आपका क्या दोष, अगर वह निष्क्रिय पड़ा है, दूसरों ने उसे ढक रखा है, विरोधात्मक गुणों ने, जो आप में हैं। बस, इससे ज़्यादा और कुछ कहा भी क्या जा सकता है। निकम्मा किस काम का, लेकिन आप निकम्मी नहीं, आप बुरी हैं, फिर भी बेहतर हैं और नैतिक दृष्टि से कहें तो बहुतेरों से बेहतर!

"ख़ुश हैं, मार्या अलेक्सेयेव्ना?"

"किस बात से, मिस्टर? मेरी परिस्थितियां तो लीचड़ हैं?"

"यही तो बहुत अच्छी बात है, मार्या अलेक्सेयेव्ना।"

विवाहित जीवन और दूसरा प्रेम

1

वेरा को अपनी कालकोठरी से मुक्ति मिले तीन महीने बीत चुके हैं। लोपुख़ोव-दम्पत्ति मज़े में हैं। उसे कई अच्छी और उचित धन देनेवाली ट्यूशनें मिल गयी हैं। एक प्रकाशक के यहां काम मिल गया है, भूगोल की किताबों के अनुवाद का। वेरा के भी अपनी दो ट्यूशनें हैं। लेकिन इतनी अच्छी तो नहीं, फिर भी बुरी नहीं। दोनों मिलकर अब अस्सी रूबल प्रतिमाह कमा लेते हैं। यह ठीक है कि इतनी रक़म से मितव्ययतापूर्वक जीवन ही बिताया जा सकता है, फिर भी उन्हें किसी चीज़ का अभाव नहीं खटकता। उनकी आय में धीरे-धीरे बढ़ोतरी हुई है, लेकिन हुई निश्चय ही है। उन्हें आशा है कि चार या इससे भी कम महीनों में वे अपना घर जमा सकेंगे (और आगे हुआ भी यही)।

वेरा ने जीवन क्रम के बारे में कुछ मज़ाक़, कुछ गंभीरता से जो योजना बनायी थी, बिल्कुल वैसा तो नहीं हुआ। लेकिन फिर भी जो सोचा था उससे कुछ मिलता-जुलता-सा जीवन तो बन ही गया था। जिस वृद्ध दम्पत्ति के मकान में वे रहते थे, उन्होंने कई घंटे इसी बहस में बिताये थे कि यह सब कितना कुछ विचित्र है, नवविवाहितों जैसा तो उनके लिए कुछ भी नहीं अथवा पुरुष और स्त्री के जीवन के लिए, लेकिन ऐसी कुछ बात भी तो नहीं कि जिस पर वे अंगुली उठा सकें।

"जो तुम बताती हो और जो ख़ुद देखता हूं इससे लगता है,

क्या कहते हैं उसे, भाई और बहन जैसे लगते हैं, क्यों श्रीमती जी?"

"नहीं, बिल्कुल नहीं। भाई और बहन कहीं इतने चुपके-चुपके और औपचारिकता से नहीं रहते-फिरते। और ये दोनों क्या करते हैं? वह बिस्तर से उठा नहीं कि कपड़े पहनकर तैयार और फिर इंतज़ार करता है कि समोवार आये। फिर वह चाय बनाता है और उसे पुकारता है और वह भी बाहर निकलती है तो बन-ठन के, पूरी तरह पोशाक पहने। इसी को तुम भाई और बहन कहते हो न? मुझे तो ये दो बेचारे प्राणी लगते हैं, जिन्हें एक फ़्लैट में, इसलिए रहना पड़ता है क्योंकि वे इतने निर्धन हैं—मुझसे पूछो तो यही सही बात है।"

"श्रीमती जी, आप इसका क्या मतलब लगायेंगी: क्या कोई मर्द अपनी बीवी से तब तक नहीं मिल सकता, जब तक कि वह पूरी तरह कपड़े-लत्ते न पहने हो—क्या कहोगी तुम इसे?"

"पता है तुम्हें वे सोने के समय एक दूसरे से अलग हो जाते हैं। वह कहती है: 'शुभरात्रि, मज़े में सोना' बस यही तो! फिर वे दोनों अपने-अपने कमरों में चले जाते हैं। अपनी-अपनी किताबें पढ़ने लगते हैं और वह तो कुछ लिखता भी है। ज़रा सुनो तो एक बार क्या हुआ—वह पलंग पर लेटी पुस्तक पढ़ने में मशग़ूल। अरे, मुझे तो पार्टीशन के ऊपर से सुनायी पड़ जाता है, मुझे झपकी लगने में देर होती है न, तुम्हें तो पता ही है। बहरहाल, मुझे सुनायी पड़ता है कि वह उठी और पता है वह क्या करती है? जाके आईने के सामने खड़े होकर अपने बाल संवारती है; ऐसे मानो किसी से मिलने जा रही हो, समझ गये न? उसका बाहर निकलना सुनायी देता है, और मैं तत्काल गलियारे का रूख करती हूं और फिर कुर्सी पर खड़ी होकर उसके अर्थात् पुरुष के कमरे में झांकती हूं शीशे से। मुझे सुनायी पड़ता है कि वह अर्थात् युवती उसके अर्थात् पुरुष के दरवाज़े तक पहुंच गयी है। वह पूछती है: 'भीतर आ जाऊं?' और वह कहता है: 'एक मिनट, वेरा प्यारी।' समझे न वह तो लेट चुका है? फिर वह अपनी जाकट पहनता है, लगता है वह टाई भी बांधेगा, लेकिन नहीं बांधता, बस वैसे ही आ खड़ा होता है और कहता है: 'अब आ सकती हो अंदर, वेरा।' और फिर वह कहती है: 'इस किताब में मेरी समझ में यहां पर कुछ नहीं आ रहा है, समझा सकते हो क्या तुम?' और फिर वह समझाता है। इस पर

वह कहती है: 'खेद है, मैंने तुम्हें परेशान किया प्रिय,' और वह उत्तर देता है: 'अरे कोई बात नहीं, मैं तो सिर्फ़ बिस्तर पर लेटा आराम ही तो कर रहा था, क्या हुआ इसमें, कुछ भी तो नहीं।' और फिर वह कमरे के बाहर चली गयी।"

"अच्छा, चली गयी?"

"जी हां, चली गयी।"

"और उसने कुछ नहीं किया?"

"कुछ भी नहीं। मगर तुम उसके इस प्रकार निकलने पर अचरज मत करना, असली अचरज की बात तो यह है कि पहले वह कपड़े पहनती है और फिर बाहर आती है और वह कहता है 'रुको', फिर वह भी कपड़े पहनता है और तब उसे भीतर आने देता है। ज़रा दिमाग़ पर ज़ोर डालकर बताओ तो क्या माजरा है यह?"

"श्रीमती जी, बताऊं मैं, वे किसी पंथ के अनुयायी हैं—और हम-तुम दोनों ही जानते हैं आजकल तो तरह-तरह के पंथों की भरमार है।"

"लगता है, तुम सही हो, ठीक बोलते हो।"

और अब मकान-मालिक और उसकी बीवी की इस बातचीत का मुलाहिज़ा करें।

"समझे जनाब, मैंने उससे (यानी युवती से) पूछा कि वह किस पंथ की है। मैंने कहा: 'मेरे पूछने का बुरा मत मानना बेटी, किस धर्म का पालन करती हो तुम?' उत्तर दिया उसने: 'जिसका और लोग करते हैं—औथोंडॉक्स।'—'और तुम्हारे पति? वही जिसे मैं मानती हूं।'—'तुम लोग ये आजकल जो अनेक पंथ चल पड़े हैं, उनमें से तो किसी को नहीं मानते?'—'बिल्कुल नहीं।' यही उसका उत्तर रहा और फिर पूछ लिया: 'आपने यह पूछा क्यों भला?'—'बात दरसल यह है मिस या मिसेज़—मैं ठीक से समझ नहीं पायी न कि तुम्हें कैसे पुकारूं—तुम्हारी इस पुरुष से शादी हो चुकी है?' वह हंस पड़ती है और कहती है: 'हम विवाहित हैं।'"

"वह हंसी, सचमुच हंसी?"

"बिल्कुल। कहा: 'हम शादीशुदा हैं।'—'तो फिर यह क्या विधान है कि जब तक भली-भांति सजी-बजी न हो, मानो

अविवाहित हो तब तक उससे मिलने ही न जाओ?' उसका जवाब यही था: 'ताकि वे मुझे फूहड़ जैसा न देखें। इसका ताल्लुक़ किसी पंथ-वंथ से नहीं।' मैंने पूछ लिया: 'तो फिर क्या है?' बस इसका निश्चय किये रहना कि 'प्रेम घनिष्ठ रहे, उच्छृंखलता का पुट उसमें न आ पाये।'"

"इस बात में तो सचाई झलकती है, बिल्कुल ठीक बात है, श्रीमती जी। सदैव ही अत्यन्त प्रिय और न जाने क्या क्या?"

"जी हां, अलबत्ता, उसने कुछ और भी कहा। उसने कहा: 'अगर मैं यह नहीं चाहती कि अजनबी मुझे फूहड़िया-सी देखें और यदि मैं अपने पति को किसी भी अजनबी से अधिक प्रेम करती हूं, तो मैं क्यों कभी बिना सजी-संवरी उनके सामने पड़ूं?'"

"बिल्कुल ठीक कहा, श्रीमती जी; कभी सोचा है कि पुरुष इधर-उधर मुंह मारने की कोशिश क्यों करता है? इसलिए कि वह किसी अन्य महिला को कभी बिना सजी-संवरी नहीं देख पाता और उसकी अपनी पत्नी फूहड़ दिखती होती है। ऐसा ही धर्म शास्त्रों में कहा गया है। सुलैमान ने कहीं कहा है ऐसा। बड़ा ही बुद्धिमान बादशाह था वह।"

2

लोपुख़ोव-दम्पत्ति का जीवन बढ़िया ढंग से चल रहा था। वेरा हमेशा ख़ुश-मिज़ाज रहती थी, लेकिन एक बार, विवाह के पांच या छह महीने के बाद, लोपुख़ोव ट्यूशन पढ़ाकर घर लौटा तो उसने वेरा को और भी ख़ुश मूड में देखा, उसके नैनों में आनंद और गर्व की ज्योति दमक रही थी। तब उसको यह याद आया कि चंद दिन पहले उसकी पत्नी में कुछ सुखद आशंका, मंद-मंद-सी मुस्कान और सुकोमल गर्व की स्पष्ट झलक थी।

"प्यारे मित्र, लगता है कोई ख़ुशी की बात है, मुझसे क्यों नहीं अपनी यह ख़ुशी बांटती?"

"सच है, प्रिय, यह, लेकिन कुछ समय और ठहर जाओ, जब मैं ख़ुद बिल्कुल पक्की हो जाऊंगी, तो बताऊंगी। बस, कुछ दिन

और। इसमें कोई शक नहीं कि यह अवसर जश्न मनाने का होगा। आप भी खुश होंगे, मुझे पता है और किरसानोव व मेर्त्सालोव-दम्पत्ति भी।"

"बताओ न, क्या है?"

"भूल गये क्या, हम लोगों में तय हुआ था कि हम कभी खोद-खोदकर नहीं पूछेंगे कुछ भी। जैसे ही पक्का हो जायेगा, मैं तुम्हें खुद ही बता दूंगी।"

एक सप्ताह बीत गया।

"जानेमन, अब मैं आपको बता सकती हूं। मुझे आपकी सलाह दरकार होगी, आप इन सब मामलों के बारे में कितना-कुछ जानते हैं। पता है, काफ़ी अरसे से, मैं कुछ न कुछ करने की तलाश में थी। अब मैंने दर्ज़ी की दुकान खोलने का फ़ैसला किया है—क्या सोचते हो, यह बढ़िया विचार न हो?"

"प्रिय मित्र, हम लोगों ने तय किया था कि मैं तुम्हारा हाथ नहीं चूमूंगा, लेकिन यह तो आम तौर पर के लिए था, किसी ऐसे समय पर यह लागू नहीं। वेरा पावलोव्ना, अपना हाथ तो दो मुझे।"

"बाद में प्यारे, जब वास्तव में यह सम्पन्न हो जाय।"

"जब सम्पन्न हो जायेगा, तब मुझे ही नहीं अपना हाथ चूमने दोगी, किरसानोव व मेर्त्सालोव और सब लोग चूमेंगे। इस समय तो केवल मैं ही दावेदार बन रहा हूं। और यह सिर्फ़ विचार ही चुम्बन लेने लायक़ है।"

"मेरी इच्छा के विपरीत? मैं चीख पड़ूंगी।"

"ज़रूर चीखो।"

"प्यारे द्मीत्री, मुझे बहुत लाज-संकोच लगेगा और कुछ नहीं कहूंगी। मानो यह कोई शान की बात है!"

"है, मेरे दोस्त, है। क्योंकि हम सब लोग बातें तो बनाते हैं कुछ करने की, लेकिन करते कुछ नहीं। और तुम जो हम लोगों में सबसे बाद में शामिल हुईं और इस बाबत कुछ कर डाला सबसे पहले।"

वेरा ने अपने पति की छाती पर सिर टिका दिया; अपना मुंह

उसी में छिपाते हुए बोली: "प्यारे, मैं... तुम तो मुझे बहुत ही चढ़ा रहे हो।"

उसके पति ने उसका माथा चूम लिया। "मेरी चतुर कामिनी।"

"बस, बस, चुप हो जाओ, प्रिय, ऐसे कहोगे, तो कुछ भी नहीं बताऊंगी।"

"अच्छा चुप हो गया। लेकिन अपनी बात तो पूरी करो, श्रेष्ठ सुन्दरी।"

"अच्छा, ये तेवर?!"

"अच्छा तो फिर निकृष्ट महिला।"

"ठहरिये तो... हमेशा बीच में बात काटते हैं आप। बस प्यारे बच्चे की तरह बैठो और सुनो। मैं तो यह समझती हूं कि मुख्य बात यही है कि शुरू से ही ठीक लोगों का चयन किया जाय, ठोक-बजाकर परख लिया जाय कि वे ईमानदार, भले, समझदार, विश्वसनीय और अध्यवसायी हैं, अड़ियल नहीं और झगड़ों में न पड़ें, ऐसे जो दूसरों को भी ढंग से चुन सकें—ठीक है न?"

"बिल्कुल ठीक है, दोस्त।"

"मुझे तीन ऐसी युवतियां मिल भी गयी हैं। सच मानो, बड़ी तलाश के बाद मिली हैं। तीन महीनों तक दुकान-दुकान गयी, इन युवतियों से मेल-जोल किया, लेकिन मैं जैसी चाहती थी, वैसी लड़कियां मुझे मिल गयीं। तीन बढ़िया लड़कियां! अब मैं बहुत अच्छी तरह उन्हें जान गयी हूं।"

"वे तो अपनी कला की माहिर होंगी—आखिर तो आप भी प्रतियोगितात्मक उपक्रम ही तो चाहती हैं, जो बिल्कुल ही व्यावसायिक आधार पर स्थापित होगा।"

"मुझे इतनी भी समझ नहीं क्या?"

"तो फिर तुम्हें मेरी सलाह की ज़रूरत किसलिए है?"

"मेरे प्रिय, ब्योरों के लिए।"

"वह तो तुम स्वयं तैयार कर सकती हो। एक-दस की शर्त बद सकता हूं, तुमने सभी प्रकार की संभावनाओं पर विचार कर लिया है और यह भी सही है कि अपनी परिस्थितियों के अनुरूप अपने को सहज ढाल भी लोगी। तुम तो जानती ही हो, मूल बात है सिद्धान्त

की—सिद्धान्त, अभिरुचि और कुशलता। हर नयी परिस्थिति की उत्पत्ति के साथ विस्तृत स्वरूप तो यथोचित बन ही जायेगा।"

"मालूम है, लेकिन फिर भी, आपके ऐसा कहने से, मुझे और भी अधिक विश्वास जमता है।"

उन्होंने इस विषय पर विस्तार के साथ चर्चा की। लोपुख़ोव ने अपनी पत्नी की योजना में किसी प्रकार के संशोधन की आवश्यकता नहीं समझी और पत्नी के मन में इस प्रकार की बातों से योजना का और भी स्पष्ट, नया, दृढ़ स्वरूप अंकित हो गया।

दूसरे दिन उसने "पुलिसगज़ट" में निम्न विज्ञापन प्रकाशनार्थ दे दिया: "वेरा पावलोव्ना लोपुख़ोवा अब महिलाओं की पोशाकों और अन्तरंग वस्त्रों आदि के आर्डर 'उचित दरों' पर लेती हैं।"

उसी सुबह वेरा जूली से मिलने गयी। "वह मेरा विवाहित नाम नहीं जानतीं, बस उनसे कहना मिस रोज़ाल्स्की मिलने आयी हैं।"

"प्यारी बच्ची, अरे बिना नक़ाब डाले आयी हो, दिन-दहाड़े। और तुमने बटलर को अपना असली नाम भी बता दिया। प्यारी बच्ची, यह तो पागलपन है, बड़ी बदनामी होगी इससे तुम्हारी!"

"अब मैं शादीशुदा औरत हूं, चाहे जहां अपने मन-मुताबिक़ आ-जा सकती हूं।"

"लेकिन तुम्हारे शौहर, उन्हें तो पता चल ही जायेगा।"

"वह भी एक घंटे में यहीं होंगे।"

इसके बाद सवालों की बौछार शुरू हुई—एक के बाद दूसरा, तीसरा... सब का केन्द्र था: शादी कैसे हुई, कैसे कर ली! हर्षविभोर जूली ने अपनी मित्र को गले लगाया और चुम्बन लिये और आनंदातिरेक में अश्रु-वर्षा की। और जब उन्माद के ये क्षण बीत गये, तो वेरा ने अपने आने का कारण बताना शुरू किया।

"यह तो आप समझती ही हैं कि हम अपने पुराने मित्रों को तभी याद करते हैं, जब ज़रूरत पड़ती है। मुझे भी आपकी बहुत मदद की ज़रूरत है। मैं कपड़े सिलने का काम शुरू करनेवाली हूं। कुछ सिलाई का काम दे सकती हैं क्या और अपनी कुछ मित्रों से मेरी सिफ़ारिश कर सकती हैं? मैं ख़ुद अच्छी सिलाई कर लेती हूं और मेरे साथ कुछ बढ़िया दरज़िनें भी हैं। इनमें से एक को तो आप जानती भी हैं।"

सच ही था, जूली उनमें से एक लड़की को भली-भांति जानती थी, बड़ी अच्छी दरज़िन है।

"मैं अपने काम के कुछ नमूने लायी हूं आपको दिखाने के लिए। और यह जो पोशाक मैं पहने हुए हूं, मैंने ही काटी-सिली है—देख ही रही हैं कितनी फ़िट लग रही है शरीर पर।"

जूली ने बड़ी चतुराई से पोशाक की फ़िटिंग और सिलाई दोनों ही चीज़ें देखीं और देखकर सराहे बिना न रह सकी।

"प्यारी बच्ची, सचमुच तुम तरक्की करोगी, तुममें प्रतिभा है और सुरुचि भी। लेकिन इसके लिए तुम्हें नेव्स्की प्रोस्पेक्ट पर कोई फ़ैशनबल दुकान खोलनी होगी।"

"समय आने पर वहां भी ले लूंगी, बस यही लक्ष्य रखूंगी अपने सामने। अलबत्ता, फ़िलहाल मैं घर से ही अपना कारोबार चला दूंगी।"

कारोबार की बातचीत ख़त्म हुई, तो फिर वेरा के विवाह की चर्चा छिड़ गयी।

"तुम्हारा स्तोरेश्निकोव, बेचारा, पूरे दो हफ़्ते तक तो उसकी हालत बड़ी दयनीय रही, लेकिन फिर उसने अदेल के साथ सुलह कर ली। मैं अदेल के लिए खुश हूं, आखिर वह इतना बुरा आदमी तो नहीं है, बस, दयनीय बात केवल यही है कि अदेल में दृढ़ता नहीं है।"

अब तक जूली पूरे जोश में आ चुकी थी और उसने अदेल और उसके साथियों के कारनामों की पूरी रिपोर्ट देना शुरू कर दी। अब मिस रोज़ाल्स्की विवाहित महिला थी इसलिए जूली का ख्याल था कि वह बेलगाम कुछ भी कह सकती है। पहले उसने विवेक को ताक़ पर रख दिया और फिर रंगरलियों का रंगीन वर्णन आरंभ कर दिया, जो सुरसा की तरह बढ़ता ही गया। वेरा लाज-संकोच में और जूली लापरवाह खुशी में डूबी रही। किसी तरह वेरा ने खुद को संभाला और अपने मित्र को ऐसी वीभत्स रुचि से सुनती रही, जिससे कोई अपने प्रिय किन्तु रुग्ण-मानसिकतावाले चेहरे को झांकता है। पर तभी लोपुखोव का प्रवेश हुआ। जूली तत्काल ही सम्मानीय सामाजिक महिला बन गयी, अत्यन्त व्यवहारकुशलता की मूर्त्ति। इतनी सुन्दर युवती को पत्नी के रूप में फंसा लेने के लिए लोपुखोव को बधाई

देने के बाद, वह फिर धाराप्रवाह चालू हो गयी: "हमें तुम्हारे विवाह के उपलक्ष्य में जश्न मनाना ही चाहिये। नाश्ते का आदेश सभी के लिए वहीं पर लाने के लिए दे दिया गया। शेम्पेन भी इसमें शामिल थी। और वेरा को आधा गिलास अपनी शादी के उपलक्ष्य में और दूसरा आधा पीना पड़ा दर्ज़ी के काम के लिए और तीसरा जाम अपनी प्यारी जूली के लिए। पीकर मस्त हो उठी वेरा ने अपनी मित्र के साथ आसमान सिर पर उठा लिया। जूली ने वेरा के चुटकी काटी और भाग खड़ी हुई और वेरा चीखती-चिल्लाती उसे पकड़ने दौड़ी, पूरे फ़्लैट में ही उन्होंने हुड़दंग मचा डाला, कुर्सियों पर उछल-कूद की और लोपुखोव बैठा-बैठा, हंसता रहा। मामला तब तो बहुत बढ़ गया जब जूली ने शेखी बघारी: "मैं एक हाथ से तुम्हें उठा सकती हूं।" उत्तर मिला: "बिल्कुल नहीं कर सकती।" बस दोनों गुंथ गयीं और सोफ़े पर गिर पड़ीं, बस वहां से फिर उठ पाने की तमन्ना किसी में भी नहीं रही, बस चीखती-चिल्लाती रहीं और तब तक गरजती-बरसती रहीं, जब तक गहरी नींद सो न गयीं।

पता नहीं कितने वर्षों में, पहली बार लोपुखोव, इतना किंकर्त्तव्यविमूढ़ हुआ था। उन्हें जगाये कि नहीं? इतनी मौज-मस्ती का अंत अगर ऐसे भोंडेपन से हो कितनी शर्म की बात होगी। बड़ी सावधानी से वह खड़ा हुआ और इधर-उधर नज़र दौड़ायी। पढ़ने को कोई किताब ही मिल जाय? मिल गयी: 'रोशनदान से ताका-झांकी', जो फ़ोब्लांज़ से भी अधिक अश्लील थी। वह कमरे के एक कोने में पड़े सोफ़े पर आराम से बैठ गया और पढ़ने की कोशिश में, पन्द्रह मिनट में ही, घोर नीरसता के फलस्वरूप, घोड़े बेचकर सोने लगा।

दो घंटे बाद पोलीना ने अपनी मालकिन को डिनर के लिए जगाया। उन तीनों ने ही खाना खाया, सेर्ज मौजूद नहीं था, उसे किसी शानदार समारोह में भाग लेने के लिए जाना था। जूली और वेरा ने कुछ और बक-झक की, फिर उन्हें अपनी प्रतिष्ठा का कुछ अधिक विचार आया और जब विदाई का समय आया तो उनके पोर-पोर में मान-मर्यादा झलक रही थी। तभी जूली को स्मरण हो आया, वह उसे पहले स्मरण नहीं आया था, कि वेरा से यह तो पूछे कि वह दर्ज़ी का धंधा शुरू क्यों कर रही है? यदि उद्देश्य धन

कमाना था तो यह बेहतर नहीं होगा कि वह अभिनय करे अथवा गीत गाये—उसका कण्ठ कितना मधुर था! इस सवाल से दोनों फिर बैठ गयीं; वेरा अपने विचार को और विस्तार से बताने लगी और जूली फिर उमंग में आ गयी और आंसू बहाकर आशीर्वाद देने लगी। क्योंकि खुद जूली, भले ही पतित स्त्री हो, कहीं भी सद्‌गुण को देखकर उसकी सराहना करने में सक्षम थी। फिर उसके आंसू झर पड़े, उसने अपनी मित्र को गले लगाया और फिर रो पड़ी।

चार दिन बाद वह वेरा के पास अपनी ओर से सिलाई के आर्डर और साथ-साथ कई मित्रों और भावी गाहकों के पते लेकर पहुंची। वह अपने साथ सेर्ज को भी लायी थी: "लोपुखोव मुझसे मिलने आया था, इसलिए तुम्हें औपचारिकता के लिए चलना ही चाहिये।" अपनी लम्बी मुलाक़ात के दौरान उसने अत्यन्त शिष्ट एवं सम्मानजनक व्यवहार किया। वह देख ही रही थी कि यहां की दीवारें बहुत ही पतली हैं और उसे अपनी तो नहीं, लेकिन दूसरों की प्रतिष्ठा का मोल मालूम था। उसका मूड असंयमित नहीं था, बल्कि ग्रामीण-सुलभ था; उसने लोपुखोव-दम्पत्ति के साधारण रहन-सहन के हर पहलू के बारे में बड़ा मज़ा लेकर खोद-खोदकर सवाल पूछे और उसे पता चला कि इनका रहने-सहने का तरीक़ा उचित था, जीवन-यापन का एकमात्र तरीक़ा है, क्योंकि आडम्बरहीन जीवन के बिना और कहीं भी सच्चा सुख नहीं। उसने बताया कि वह और सेर्ज शीघ्र ही स्विटज़रलैंड जा रहे हैं, वहां पर वे झील के किनारे बनी कॉटेज में रहेंगे, जो खेतों व पर्वतीय चरागाहों से घिरी है, वहां वे प्रेमपूर्वक अपने दिन बितायेंगे, मछलियां पकड़ेंगे, बगीचे की देखभाल करेंगे। सेर्ज तो बिल्कुल राज़ी था; लेकिन यह कौन जानता है कि वह अगले तीन या चार घंटों के बाद क्या कुछ कह बैठेगी।

जूली की लकदक बग्घी के पहियों की गड़गड़ाहट और घोड़ों की जोड़ी ने पांचवीं गली के निवासियों को पर्याप्त अचम्भे में डाल दिया, अगर पहले नहीं तो पीटर महान के ज़माने में ही यहां इस प्रकार की शानदार बग्घी देखी गयी होगी। अनेक नयनों ने इस शानदार गाड़ी को लकड़ी के सात खिड़कियोंवाले इकमंज़िला मकान के बंद फाटक के सामने रुकता देखा और इस गाड़ी के भीतर झांकने

पर शान-शौकत का ही नज़ारा दीख पड़ रहा था—ख़ूबसूरत, सजी महिला और सजीला अफ़सर जिसके महत्व में कोई शक नहीं था। शीघ्र ही फाटक खुला और गाड़ी उसके भीतर चली गयी। जिज्ञासु दर्शकों को बड़ी निराशा हुई क्योंकि वे दूसरी झलक के कुतूहल से तब तक के लिए वंचित हो गये जब तक कि वह सजीला अफ़सर और उससे भी सजीली महिला फिर बाहर निकलें, उस घर से। बूढ़ा मकान-मालिक उस रात जब घर लौटा तो पत्नी से उसका निम्न वार्तालाप किया।

"जानते हो, हमारे किरायेदार किसी कुलीन वंश के हैं। आज उनसे कोई जनरल और उसकी पत्नी मिलने आये। वह स्त्री ऐसे शानदार कपड़े पहने थी कि इसका वर्णन मेरे तो बूते के बाहर है, उसके कंधे पर दो बड़े सितारे टंके थे।"

उस वृद्धा ने सेर्ज के अलंकरण कैसे देख लिये, जो थे ही नहीं, बड़ी ही हैरानी की बात थी। लेकिन बुढ़िया ने देख ही लिये, और न ही ग़लती से और न शेखी बघारने के लिए, मैं इसका साक्षी हूं कि उसने अलंकरण देखे। हालांकि मैं और आप जानते हैं कि सेर्ज की छाती पर कोई तमग़ा नहीं लगा था, लेकिन उस वृद्धा की दृष्टि में, उसकी सम्पूर्ण सज-धज ऐसी थी कि तमग़े होने ही चाहिये थे और इसीलिए वे थे। मैं यह पूरी गंभीरता के साथ कह रहा हूं, तमग़े थे।

"और वह प्यादा, वह क्या-कुछ पहने था? 5 रूबल प्रतिगज़वाले कपड़े की पोशाक, और क्या? कैसा रोबीला और कठोर-सा था वह लेकिन इतना शिष्ट था कि पूछे जाने पर प्रश्न का उत्तर देता था, लेकिन रोब-दाब का अहसास भी कराता था—उसकी वर्दी का कपड़ा बहुत ही बढ़िया था। लगता था कि उनके पास इस तरह की इफ़रात है। वे पूरे दो घंटे या इससे कुछ अधिक समय तक रुके। और हमारे किरायेदार उनसे किसी संकोच के बिना बातचीत कर रहे थे, हंस रहे थे। और हमारा नवयुवक उस जनरल के पास बैठा रहा, दोनों बड़े आराम से पसरे हुए थे। दोनों ही सिगरेट पी रहे थे। जनरल कुर्सी में ही पसरा कश पर कश खींच रहा था और हमारे युवक की सिगरेट बुझ जाती, तो वह जनरल की सिगरेट से अपनी सिगरेट फिर जला लेता था! बता नहीं सकती कि जनरल कितना आदरपूर्ण

व्यवहार कर रहा था। उसने हमारी युवती का हाथ चूमा। अब बताओ, तुम क्या सोचते हो उनके बारे में?"

"मैं तो यही कहता हूं कि अगर सभी कुछ भगवान की कृपा से मिलता है तो फिर मित्र और सम्बन्धी भी तो उसी से मिलते हैं।"

"बिल्कुल सही कहा तुमने, बिल्कुल सही! मेरा तो कहना यही है इन दोनों में कोई इस जनरल या उसकी पत्नी का भाई या बहन है और मैं यह भी बता दूं कि मेरी नज़रों में तो वह जनरल की बहन है।"

"श्रीमती जी, आप का यह विचार क्यों है? कुछ ज़्यादा लगता नहीं ऐसा। अगर ऐसा होता तो इनके पास भी तो धन होता।"

"जहां तक मैं सोचती हूं कि हमारी युवती पिता अथवा मां की अवैध सन्तान है। इसीलिए दोनों के चेहरे मिलते नहीं, क्योंकि यह सच है, इसीलिए तो उनमें कोई समानता नहीं।"

"हो सकता है, श्रीमती जी, तुम्हारी बात ही ठीक हो। ऐसी बातें तो होती ही हैं।"

लगातार चार दिनों तक वह अपनी बिसाती की दुकान में बहुत महत्त्वपूर्ण बनी रही। तीनों दिनों तक लगातार वह अपने गाहकों को अपनी रागमाला सुनाती रही। और इन दिनों वह अपने रफ़ू आदि के काम को भी न करती क्योंकि वह लोगों की ज्ञान-पिपासा को शान्त करना अधिक अच्छा समझती थी।

इसके फलस्वरूप, एक सप्ताह बाद, रोज़ाल्स्की अपनी बेटी और दामाद के द्वार पर आ धमका।

वेरा और उस बदमाश की करतूतों के बारे में मार्या अलेक्सेयेव्ना ने पूरी जानकारी रखी, यह ठीक है कि बहुत सावधानी से अथवा नियमित रूप से नहीं, बल्कि आम सरोकार और शुद्ध रूप से वैज्ञानिक रुचि के कारण। वसीलियेव्स्की द्वीप पर रहनेवाली एक साधारण मित्र को उसने हिदायत दी थी कि वह जब आस-पड़ोस में हो तो पूछ-ताछ करे। वह महीने में एक बार और बहुधा जब भी मौक़ा मिला तभी सूचना देती रहती थी। लगता था कि लोपुख़ोव-दम्पत्ति मजे में दिन काट रहे थे। रंगरेलियां तो हरगिज़ नहीं मना रहे थे। बस नवयुवक ही उनके यहां बड़ी संख्या में आते-जाते थे,

सभी उनके मित्र थे और सभी शान्त-स्वभाव के। वे दोनों मितव्ययता से रहते थे, लेकिन यह कोई भी कह सकता था कि उनके पास कुछ धन है। कम से कम वे अपनी चीज़ें तो नहीं बेच रहे थे। बल्कि सच में तो बात इसके विपरीत थी। युवती ने अपने लिए रेशम की दो पोशाकें बनवा ली थीं; साथ ही दो सोफ़े और उनसे मैच करती मेज़ भी ख़रीद ली थी, आधा दर्जन आरामकुर्सियां, भले ही पुरानी हों—सब कुछ 40 रूबल में। फ़र्नीचर अच्छा-ख़ासा था, असली दाम 100 रूबल से कम नहीं होगा। उन्होंने मकान-मालिक को नोटिस दे दिया था: हम लोग एक महीने में अपने फ़्लैट में रहने चले जायेंगे। हम आपके, अर्थात् वृद्ध जोड़ी के अत्यन्त आभारी हैं, इसी प्रकार यह वृद्ध जोड़ी भी उनकी आभारी है।

मार्या अलेक्सेयेव्ना को इन सूचनाओं से सान्त्वना मिलती। वह असभ्य थी और दुष्ट भी। उसने अपनी बेटी की ज़िन्दगी नरक बना दी थी। वह तो अपने फ़ायदे के लिए उसे मारने अथवा तबाह करने को तैयार थी। वह अपनी बेटी को इसलिए जब-तब कोसती रहती कि उसने मार्या अलेक्सेयेव्ना की ऐश्वर्य प्राप्त कर लेने की योजनाओं पर पानी फेर दिया था—सच, यह सब सच है, लेकिन क्या इसका मतलब यही है कि उसमें मातृत्व-स्नेह का लेशमात्र भी नहीं था? निश्चय रूप से ऐसी बात नहीं थी। अब क्या हो सकता था, अब तो वेरा उसके चंगुल से हमेशा के लिए बच निकली थी, ऐसे में मां कर भी क्या सकती थी? अब पछताये होते क्या जब चिड़ियां चुग गयीं खेत! उसकी बेटी, आख़िर उसकी ही बेटी थी, अब उसे तकलीफ़ पहुंचाकर कुछ हासिल तो नहीं किया जा सकता, इसलिए वह सच्चे मन से बेटी का भला चाहती थी, बहुत भला तो नहीं, लेकिन फिर भी भला ज़रूर ही। अलबत्ता, बेटी की हरकतों पर ज़्यादा कड़ी नज़र ज़रूर नहीं रखना चाहती थी। जासूसी उतनी ही की जा सकती थी, जितनी कि मुमकिन हो सकती थी वर्तमान परिस्थितियों में। और यही सद्भावना के बारे में कहा जा सकता था। बेटी आख़िर अपना ही तो हाड़-मांस थी। क्यों नहीं बीती बात भुला दे? ख़ास तौर से जब अपना बदमाश दामाद विशिष्ट रूप से सम्माननीय नागरिक है और किसी न किसी दिन काम आ ही सकता है। इस प्रकार, मार्या अलेक्सेयेव्ना ने धीरे-धीरे यह धारणा अपने मन में पक्की बना ली कि वह अपनी बेटी से फिर

मेल-मिलाप कर लें। अभी उसें, शायद अपने संकल्प को पक्का-पोढ़ा करने के लिए छह महीने अथवा साल भर और लगता—मालूम होता था अभी तो बहुत समय है, इसलिए जल्दबाज़ी करने की ज़रूरत क्या है। मगर जनरल और जनरल की पत्नी की ख़बर ने, उसका आधा समय बचा दिया। वह बदमाश तो बहुत ही चतुर बदमाश निकला। किसी ऐसे व्यक्ति के लिए, जो कभी विद्यार्थी था और एक-एक कोपेक के लिए लाचार था अथवा नाम के साथ किसी यश का योग नहीं था, उसने युवक और फलस्वरूप बहुत बड़े और बहुत धनी जनरल से इतनी पक्की दोस्ती बना ली और उसकी पत्नी ने भी वही कुछ किया तो इसका यही मतलब तो हुआ कि वह विद्यार्थी, ज़िन्दगी में बहुत कुछ कर गुज़रेगा। या कि वेरा ने उस जनरल की बीवी को पटा रखा था और उसके पति के रूप में जनरल को? अगर ऐसा है, तो वेरा बहुत तरक़्क़ी करेगी।

और इस तरह, जनरल के आने की सूचना मिलने के तत्काल बाद रोज़ाल्स्की को वेरा के यहां भेजा गया इसलिए कि वह वेरा को बताये कि मां ने उसे माफ़ कर दिया है, पिछली बातें भुला दी हैं और उससे मिलने की इच्छुक है। लोपुख़ोव-दम्पत्ति उसके साथ घर आये ताकि सांझ का समय वहां बितायें। मुलाक़ात भावशून्य और तनावपूर्ण रही। बातचीत का मुख्य विषय फ़ेद्या रहा, क्योंकि उसे लेकर किसी प्रकार का विवाद उत्पन्न हो नहीं सकता था। वह स्कूल में पढ़ने लगा था और उन्होंने मां से अनुरोध किया कि वह फ़ेद्या को बोर्डिंग स्कूल में रहने दे और लोपुख़ोव उसका ख़याल रखेगा और छुट्टियों के दौरान वह वेरा की निगरानी में रहे, तब वह बहुत अच्छा विद्यार्थी सिद्ध हो सकता है। किसी न किसी तरह चाय के समय तक तो सब शान्ति से निपट गया और फिर वे वहां से निकलने की जल्दी मचाने लगे, लोपुख़ोव ने कहा कि उनके यहां उसी शाम कुछ मेहमान आनेवाले हैं।

छह महीने की खुली हवा के बाद वेरा कपटी, स्वार्थ और पाखण्ड के, पतित विचारों और घृणित योजनाओं के घुटन भरे वातावरण को बिल्कुल बर्दाश्त नहीं कर सकती थी—उसे अपनी पुरानी कालकोठरी भयभीत कर रही थी। गन्दगी, तुच्छता और हर

कोटि और प्रकार की कटुता अब उसे बिल्कुल अपरिचित डंक जैसी लग रही थी।

"मुझमें इतनी घृणित बंदिशें सहने की शक्ति कहां से आयी थी? इस कालकोठरी में सांस भी कैसे ले सकी मैं? मैं ज़िन्दा हीं नहीं बल्कि स्वस्थ रूप में कैसे बच निकली इससे? कैसे मैं भलाई से प्रेम करना सीख सकी यहां बड़ी होकर? बस, कुछ भी समझ में नहीं आता, बिल्कुल नहीं आता।" वेरा घर लौटते समय इसी प्रकार की सोच में डूबती-उतराती रही। उसे लगा मानो डूबनेवाला व्यक्ति खुली हवा में सांस लेने लगा है।

उनके घर लौटने के कुछ ही समय बाद, वे अतिथि आ पहुंचे, जिनकी प्रतीक्षा उन्हें थी। मेर्त्सालोव-दम्पत्ति और किरसानोव तो आम तौर पर आते ही रहते थे और वह सांझ जैसी आम तौर पर उनके साथ गुज़रती थी, वैसे ही गुज़री। लेकिन क्या वेरा का नया जीवन, उसके निर्दोष विचार और निर्मल साथी, आम तौर की ख़ुशी को दुगना नहीं कर देते! सदा की नाईं, बातचीत दिलचस्प संस्मरणों से लेकर हर संभव विषय पर गंभीर विचार-विमर्श वर्तमान इतिहास (कान्सास में गृहयुद्ध, जिसने दक्षिण और उत्तर के बीच बड़ा युद्ध धधका दिया था और जिसके बाद अन्य महाद्वीपों में इससे भी बड़ी घटनायें घटी थीं। इस मण्डली की रुचि का विषय था: इन दिनों हर कोई राजनीति की चर्चा कर सकता है, लेकिन तब बहुत कम लोग उसमें रुचि लेते थे, जिनमें लोपुख़ोव, किरसानोव और उनकी छोटी-सी मण्डली भी शामिल थी) से लेकर उस समय के विवादों तक, जो जू० लीबिख़* के शस्यविज्ञान के रासायनिक सिद्धान्तों और ऐतिहासिक प्रगति के नियमों से संबंधित थे, उस समय कोई भी मण्डली इस विषय की चर्चा किये बिना न रहती थी, वास्तविक और कपोल-कल्पित लक्ष्यों के बीच भेद के परम महत्व की भी चर्चा होती जो अपनी ही परिपूर्ति चाहते हैं और हासिल कर लेते हैं, और जो कभी भी ज्वर की असत्य पिपासा को शान्त करने के अलावा और कुछ भी नहीं कर सकते, ऐसी परिपूर्ति जो

* जू० फ़ॉन लीबिख़ (1803—1873)—जर्मन वैज्ञानिक, जिसने खेती के क्षेत्र में रसायन शास्त्र के उपयोग के बारे में बहुत-सी पुस्तकों की रचना की।—सं०

वास्तविक लक्ष्यों की बिकृति के फलस्वरूप उन्हीं के द्वारा उत्पन्न रोग के पूर्ण रूप से उपचार के फलस्वरूप मिलती है और उसी विशिष्टता के महत्व का निरूपण नृवंश-शास्त्र के दार्शनिकों ने किया है। इस प्रकार के विषयों पर बातचीत होती, जो एक रूप में समान भी है और साधारण रूप से असम्बद्ध भी। इस विद्वत्तापूर्ण बातचीत को; जिसे इतने साधारण रूप में वर्णित कर देने से तो विद्वत्तापूर्ण लगती ही नहीं, महिलायें सुनती रहती थीं और कभी-कभार एकाध प्रश्न भी पूछ लेती थीं। लेकिन अधिकांशतय् वे कान ही नहीं देती थीं। वे कभी-कभी लोपुख़ोव और मेर्त्सालोव को शान्त करतीं, जब कि वे दोनों खनिज उर्वरकों के युगान्तरकारी प्रभाव को लेकर उत्तेजित हो उठते। यह बात दूसरी है कि दोनों ही विवादक अपनी बात से टस से मस नहीं होते थे। किरसानोव उनको बहुत कम समर्थन देता था, क्योंकि वह वास्तव में महिलाओं का पक्ष लेता था—वे तीनों देर रात तक मनोरंजन गीतों और संगीत, हंसी-मज़ाक़ में लीन रहते, तब तक गंभीर वाद-विवाद के अडिग उत्साही भी अन्ततः थककर निढाल हो चुके होते थे।

3

वेरा पावलोव्ना का दूसरा सपना

वेरा पावलोव्ना की आंख लग गयी और उसने दूसरा सपना देख डाला।

उसने देखा मैदान और उसमें उसका प्यारा शौहर मेर्त्सालोव के साथ चला आ रहा है और फिर उसने मुड़कर कहा:

"अच्छा तो आप यह जानने के इच्छुक हैं कि एक तरह की मिट्टी तो साफ़-सफ़ेद गेहूं उत्पन्न करती है और दूसरी तरह की बिल्कुल भी गेहूं पैदा नहीं करती? मैं आपको दम की दम में इस भेद को समझा सकता हूं। इस बढ़िया बाली की जड़ को ग़ौर से देखो तो, यह मिट्टी से लिपटी है, लेकिन मिट्टी ताज़ा है, इसे ही साफ़ मिट्टी कह सकते हैं, इसमें सौंधी गंध है पर आकर्षक नहीं,

लेकिन ढीली और दुर्गंधपूर्ण भी नहीं है। पता है, दार्शनिक शब्दावलि में हम हमेशा यही कहते रहे हैं कि साफ़ मिट्टी ही वास्तविक मिट्टी है। सच है कि यह मैली हैं, लेकिन ज़रा ध्यान से देखने से पता चल जायेगा कि इसका प्रत्येक घटक अलग-अलग से स्वस्थ है। मिलकर और इस विशेष सम्मिश्रण में ये मिट्टी मात्र हैं। लेकिन कण-संरचना में तनिक से भी हेर-फेर से ही कुछ और ही चीज़ का निर्माण हो जायेगा। और यह चीज़ चाहे जो भी हो, वह भी अपने पुष्टिकर तत्वों के कारण उतनी ही पुष्टिकर होगी—स्वस्थ होगी। इस पुष्टिकरता का कारण क्या है, क्यों है ऐसा? धरती की स्थिति पर ध्यान तो दो: अपवहन के कारण विगलन नहीं हो पाता।"

मेत्सालोव ने तुक मिलायी: "बिल्कुल, गति ही तो वास्तविकता है। क्योंकि गति जीवन है और गति व वास्तविकता एक हैं। जीवन में मुख्य बात है श्रम, इसलिए वास्तविकता का मुख्य तत्व है श्रम और वास्तविकता का सच्चा लक्षण है इसकी उपयोगिता।"

"तो फिर आप यह समझते हैं कि जब सूरज मिट्टी को तपा देता है और ताप उसके तत्वों को अधिक जटिल रासायनिक मिश्रण के रूप में उच्चतर जीवन-स्वरूप में पुन: संयोजित कर देता है अर्थात् मिट्टी और धूप गेहूं की बढ़िया बाली उत्पन्न करेंगी।"

मेत्सालोव ने पुष्टि की: "क्योंकि मिट्टी तो वास्तविक जीवन की मिट्टी है।"

"चलो, अब हम दूसरे मैदान चलें, दूसरा पौधा देखें और उसकी जड़ों की भी पड़ताल करें। ये भी मिट्टी से लिथड़ी हुई हैं। लेकिन इस मिट्टी को ग़ौर से देखो। सहज ही पता चल रहा है, यह दुर्गन्धयुक्त है।"

सुनकर मेत्सालोव ने उत्तर दिया: "अथवा वैज्ञानिक शब्दावली का प्रयोग करें और कहें कपोल-कल्पित।"

"बिल्कुल सही। इसके घटक अपुष्ट हैं। इसलिए यह बिल्कुल स्पष्ट है कि चाहे जो भी पुनर्संयोजन हो और इस प्रकार उत्पन्न उत्पाद में कितना भी भेद क्यों न हो अन्तिम उत्पाद अपरिवर्त्त रूप से अपुष्टकर, सड़ा हुआ होगा।"

"इसलिए ही न, क्योंकि घटक भी तो सड़े हुए हैं।"

"यह निश्चित करना कठिन नहीं कि यह संलक्षण प्रकट किस कारण होता है..."

मेत्सालोव बीच में ही बात काटकर बोला: "तुम्हारा मतलब कपोल-कल्पित सड़न से है।"

"बिल्कुल सही। इन विशेष घटकों पर असर डालनेवाली सड़न। यदि हम इस खेत की मिट्टी को ध्यान में रखें, तो यह आसान होगा। जल-निकासी के अभाव की ओर ध्यान देने पर पता चलेगा कि बरबादी और सड़ांध इसी कारण उत्पन्न होती हैं।"

"गति का न होना, दूसरे शब्दों में श्रम का न होना है, क्योंकि नृ-वंशशास्त्रीय दृष्टि से श्रम गति का, आधार और मनबहलाव अवकाश और साधारण मनोरंजन समेत सभी अन्य स्वरूपों का निर्धारणकर्त्ता है। अगर उनसे पहले श्रम न हो तो वे वास्तविकता नहीं होते। गति के बिना कोई जीवन नहीं, अथवा वास्तविकता नहीं, क्योंकि मिट्टी तो कपोल-कल्पित है, मिट्टी तो सड़ांध से भरी है। अभी कुछ समय पहले तक हम इन खेतों को फिर से स्वस्थ कर पाना नहीं जानते थे, आज हमने इलाज ढूंढ़ लिया है और इसे हम जल-निकासी कहते हैं। अतिरिक्त पानी को नाली से बहा दो, बस उतना ही बचाओ जितना गति के सुनिश्चय के लिए आवश्यक हो और खेत को उपयुक्त पदार्थ अथवा यथार्थतापूर्ण स्वरूप ग्रहण करने दो। जब तक इलाज लागू न किया जाय तब तक तो मिट्टी कपोल-कल्पित सड़ी हुई ही रहेगी और स्वस्थ पौधे को पनपाने में असमर्थ होगी। जबकि वास्तविक मिट्टी स्वाभाविक रूप से ही स्वस्थ फ़सल उत्पन्न करती है जो कि उसके स्वस्थ पदार्थ तत्व के अनुरूप ही होती है। बस जो सिद्ध करना था, कर दिया लैटिन में कहते हैं न Queadum।"

वेरा ठीक से सुन न रही थी कि लैटिन में इसे सचमुच क्या कहते हैं।

उसके प्रियतम पति ने कहा: "ग्राम्य लैटिन और निगमनिकी में तुम्हारी रुचि है, ऐसा मुझे लगता है।"

वेरा उनके पास पहुंच चुकी थी।

"सज्जनो, विश्लेषण, उपमा और मानवशास्त्र, सभी कुछ बहुत हो गया। अब मेहरबानी करके किसी ऐसे विषय की चर्चा कीजिये,

जिसमें मैं भी कुछ हाथ बंटा सकूं। बल्कि बेहतर होगा, कोई खेल खेलें।"

मेर्त्सालोव बोला: "आओ हम खेल-खेल में पापस्वीकार करें।"

वेरा ने हां में हां मिलायी: "बड़ा मज़ा आयेगा। अब क्योंकि आपने यह बात उठायी, इसलिए पहले आप ही हमारा मार्ग-दर्शन करें।"

"क्या खूब, मेरी बहना, खुशी से तैयार हूं। क्या उम्र है तुम्हारी, अठारह न?"

"बस, उन्नीस की होने ही वाली हूं।"

"लेकिन अभी हो तो नहीं, इसलिए हम अठारह ही मानेंगे और इसलिए पापस्वीकार की बात के लिए इसी उम्र को सीमा मानेंगे, यही उचित होगा। मैं अपनी पत्नी और अपनी ओर से बोलूंगा। मेरे पिता प्रान्तीय राजधानी में गिरजादार थे। वह किताबों पर जिल्द भी चढ़ाते थे, और समय-समय पर मां गुरुकुल के विद्यार्थियों को किरायेदार के रूप में रखती थीं। सुबह, दोपहर और रात वे अपने खाने-पीने की चीज़ों के बारे में बकझक करते रहते थे। पिता जी शराब पीते थे, लेकिन तभी जब परेशानियां असहनीय हो उठती थीं—सचमुच वेदना असहनीय होने पर, अथवा जब आमदनी ज़्यादा होती और वह सब मेरी मां को देते थे और खुदा का शुक्र करते हुए कहते, 'मेहरबान, अब तुझे अगले दो महीनों तक कोई ज़रूरत नहीं होगी। बस मैंने अपने पास सिर्फ़ पचास कोपेक रख लिये हैं, पीकर जश्न मनाने के लिए—और वही उनका वास्तविक आनंद होता। मेरी मां अक्सर नाराज़ होती रहतीं और कभी-कभी मुझे पीटती थीं और यह तब होता था जब वह टबों, कड़ाहियों से, हम पांचों के और पांचों विद्यार्थियों के कपड़े धोने से, फ़र्श को साफ़ करने से, जिसे हमारे जूते गंदा कर देते और गाय की देखभाल से थककर चूर होती थीं—वह नीरस, अमानवीय चाकरी की वास्तविक झुंझलाहट—अथवा जब उनकी मेहनत के बावजूद गुज़र-बसर होने की नौबत ही न आ पाती और इससे उनका तात्पर्य होता, मेरे लिए अथवा मेरे भाइयों के लिए जूतों की जोड़ी अथवा मेरी बहनों के लिए जूतों की क़ीमत चुकाने के लिए रक़म न होती तो, जैसा कि मैं बता चुका हूं, वह हम को मारती-पीटतीं। वह

प्यार भी करती थीं, जब हम सब अपनी अल्पशक्ति के बावजूद मदद करने की पेशकश करते अथवा कोई दूसरी समझदारी भरी बात करते अथवा कभी ऐसा विरल क्षण होता कि उन्हें आराम करने का समय मिलता और वे घर में होतीं—तभी सच्चा आनंद आता..."

वेरा ने कुछ तुनकते हुए कहा: "बस भी करो अब ये अपने सचमुच आनंद और निरानंद की बातें।"

"अच्छा तो अब मैं आपकी इजाज़त से नताशा की ओर से पापस्वीकृति करूंगा।"

"कोई ज़रूरत नहीं। मुझे पता है, वह भी कुछ इसी तरह की वास्तविकता होगी।"

"बिल्कुल ठीक कहा आपने।"

सहसा और रहस्यपूर्ण रूप से प्रकट हुए सेर्ज ने कहा: "हो सकता है आपको मेरा पापस्वीकार अधिक रुचिकर प्रतीत हो।"

वेरा बोली: "यह तो सुनने के बाद ही मालूम पड़ेगा।"

"मेरे माता-पिता धनवान तो थे ही, लेकिन फिर भी हर समय धन के फेर में पड़े रहते थे। पता है न, धनवान लोग भी तो उसी आम तरह की मुसीबतों का शिकार होते हैं..."

मेर्त्सालोव ने ज़रा ढंग से कहा: "तुम्हें तो सेर्ज, पापस्वीकृति करना आता ही नहीं। तुम्हें यह तो बताना चाहिये कि वे धन के बारे में क्यों इतना असंतुष्ट रहते थे। कौन-कौन से ख़र्च उन्हें परेशान करते थे और कौन-सी ऐसी ज़रूरतें थीं, जिनकी पूर्ति वे बड़ी कठिनाई से कर पाते थे।"

सेर्ज ने उत्तर दिया: "मैं समझ रहा हूं, भली-भांति कि तुम्हारा तात्पर्य क्या है, लेकिन फ़िलहाल हमें उस सब की ओर ध्यान नहीं देकर दूसरी ही ओर ध्यान देना चाहिये। उन्हें अपने बच्चों की भी बड़ी चिन्ता बनी रहती थी।"

मेर्त्सालोव ने अनुमान से ही कहा: "उनके लिए तो व्यवस्था अच्छी-ख़ासी होगी।"

"बेशक, लेकिन फिर भी..."

मेर्त्सालोव बीच में ही बोल पड़ा: "बन्द भी करो अब। हमें मालूम है तुम्हारी कथा—फ़िज़ूलख़र्ची की ओर झुकाव, बस तुच्छ चीज़ों के बारे में हर घड़ी सोच-विचार, बस इसी मिट्टी से ही तो

तुम उत्पन्न हुए, वही तो कपोल-कल्पित । देखो ज़रा अपनी ओर, दिल से न तो तुम बेवक़ूफ़ हो और न बुरे अथवा हममें से किसी से भी न ज़्यादा, न कम लेकिन फिर भी हो किस काम के?"

"जूली जहां भी ले जाय उसके सहचर के रूप में जाना, जूली की फ़िज़ूलख़र्ची के लिए व्यवस्था करना।"

मेत्सालोव ने फिर कहा: "यही मतलब निकला कि कपोल-कल्पित अथवा अपुष्टकर मिट्टी..."

वेरा ज़ोर से बोली: "मैं तंग आ गयी हूं तुम्हारी कल्पना और वास्तविकता से! तुम बहुत पहले अपनी बात कह चुके हो, बार-बार उसी को क्यों दुहरा रहे हो?"

न जाने कहां से मार्या अलेक्सेयेव्ना नमूदार हो गयी; सवाल किया: "लड़की, तू मुझसे बात नहीं करना चाहती? मैं आप महानुभावों से कहूंगी कि आप लोग यहां से तशरीफ़ ले जायें। मां को अपनी बेटी से अकेले में बात करने दें।"

सहसा सभी छूमंतर हो गये। वेरा अकेली, अपनी मां के साथ। मां का चेहरा व्यंग्यपूर्ण हो गया।

"वेरा, तुम पढ़ी-लिखी महिला हो, इतनी परिष्कृत और लच्छेदार भाषा बोलनेवाली।" उसकी मां के स्वर में रोष का पुट था। "कितनी अच्छी हो तुम, मेरे जैसी गंवार, कुटिल बुढ़िया, पियक्कड़ बुढ़िया भला तुमसे बात कर सकती है क्या? तुम्हारी मां शैतान और दुष्ट है, लेकिन अगर तुम बुरा न मानो तो क्या बताओगी, तुम्हारी मां की क्या चिन्तायें थीं? दो जून की रोटी की। जैसा कि तुम पढ़ने-लिखनेवाले कहते हो, वास्तविक मानवीय चिन्ता ही तो, ठीक है न? हां, तुम्हें गालियां सुननी पड़ीं, बहुत-सी चाल-कुचालों को भुगतना पड़ा, लेकिन मैं फिर भी यह पूछकर रहूंगी, क्यों हुआ यह सब? यूं ही व्यर्थ? हंसी-मज़ाक़ के लिए? फिर सोचिये मिस साहिबा, फिर सोचिये। तुम्हारा पारिवारिक जीवन चाहे भी जैसा रहा हो, खोखला अथवा काल्पनिक नहीं था। देखो न, मैंने भी तुम लोगों की लच्छेदार भाषा सीख ली है। तुम दुखी हो, तुम्हें लज्जा महसूस होती है कि कुटिल और दुष्ट स्त्री तुम्हारी मां है? तुम तो यही चाहती हो न कि मैं ईमानदार और अच्छी होती? मैं तो चुड़ैल हूं वेरा, अभी जादुई छड़ी घुमाऊंगी और तुम्हारे मन की मुराद पूरी

हो जायेगी। बस, ज़रा-सा ग़ौर करके देखें मिस साहिबा, कुटिल बुढ़िया मैं ग़ायब हो जाऊंगी और तुम्हारी मनोकामना पूरी हो जायेगी। ठीक है न, अपनी दयालु मां की ओर और उसकी प्यारी बेटी को एक टुक देखो तो।"

तत्काल कमरा प्रकट हो गया। दरवाज़े पर नशे में धुत, दाढ़ी बढ़ी हुई, वीभत्स आदमी खर्राटे ले रहा है। कौन था यह, बताना असंभव है, उसका चेहरा आधा तो एक हाथ से ढका है, दूसरा आधा नीलों से भरा है। बिस्तर भी तो दीख रहा है। उस पर स्त्री है, हां, यही तो मेरी मां है और वह कितनी अच्छी है! लेकिन मुरझाई-सी, या ख़ुदा, पैंतालीस वर्ष में ही इतनी जर्जर। बिस्तर के पास लड़की है, अठारह साल की; अरे यह तो मैं हूं, लेकिन कितनी फटीचर हूं मैं! और यह क्या है? मैं तो पीली पड़ गयी हूं, मेरा चेहरा खुरदरा है और कमरा कितना दरिद्र लग रहा है, फ़र्नीचर के नाम की कोई भी चीज़ तो नहीं। मां कह उठती है: "वेरा, मेरी प्यारी, नन्ही फ़रिश्ता, सो जा थोड़ी देर, मेरी गुड़िया क्यों खड़ी है वहां। मैं जल्द अच्छी हो जाऊंगी। तू तो तीन रातों से नहीं सोयी है।"

"मां, कोई बात नहीं, मैं थकी थोड़े ही हूं।"

"प्यारी बेटी, मेरी तबीअत अगर ठीक न हुई तो? क्या करेगी तू अगर मैं परलोक चली गयी? तेरा बाप तो कुछ कमाता-धमाता नहीं। तू तो सुन्दर लड़की है और दुनिया में दुष्ट जनों की कोई कमी नहीं। कौन रक्षा करेगा तेरी। मुझे बड़ी चिन्ता है तेरी।" वेरा सिसकने लगती है।

"प्यारी बच्ची, मत रो, मैं कोई डांट थोड़े ही रही हूं, यह तो नसीहत की बात है। तू उस शुक्रवार को, मेरे बीमार पड़ने से पहलेवाले दिन, बाहर क्यों गयी थी?" वेरा सिसकने के सिवा और करे भी क्या।

"बेटी, वह तेरे साथ कोई भलाई नहीं करेगा, छोड़ दे उसे।"

"नहीं कर सकती मां, ऐसा।"

दो महीने बीत गये। एक ही क्षण में कैसे उड़ गये दो महीने? अफ़सर दिखायी पड़ता है। उसके सामने मेज़ पर बोतल रखी है और गोदी में बैठी है, वेरा।

दो महीने और छिटक जाते हैं पल भर में।

महिला बैठी हुई दीख पड़ती है। और उसके सामने खड़ी है वेरा।

"तुम इस्तरी कर सकती हो क्या?"

"जी हां।"

"तुम्हारे घरवाले क्या करते हैं, खेत मज़दूर हैं या अपनी खेती है?"

"मेरे पिता सरकारी नौकरी में हैं।"

"तो तुम अच्छे घर की हो? फिर तो मैं तुम्हें नहीं रख सकती। किस प्रकार नौकरानी का काम कर सकोगी तुम? जाओ, जाओ, मैं तुम्हारी कोई मदद नहीं कर सकती।"

वेरा जो चल रही होती है, सड़क पर, तभी किसी मनचले की आवाज़ सुनायी पड़ती है: "देवी जी, श्रीमती जी! किस ओर तशरीफ़ ले जा रही हैं आप? मैं आपका हाथ पकड़ के उधर चलूं।" और वेरा नेवा नदी की ओर दौड़ने लगती है।

पहलेवाली, असली मार्या अलेक्सेयेव्ना नमूदार हो जाती है। "तो देख ली न ज़िंदगी नरम दिल मां के साथ? जादू ने डाला न कुछ असर? या मैं ग़लत कह रही हूं? बोल, बोल न छोकरी! बिल्ली ने काट ली जीभ क्या? तुझमें कहने की हिम्मत नहीं है, तो भी मैं बुलवा के ही छोड़ूंगी, जानती हूं मैं पेट की बात निकाल लेना। तुम बाज़ार गयी थीं न?"

वेरा थरथरा उठी। "गयी तो थी।"

"तुमने देखा? सुना?"

"जी हां।"

"फिर? क्या वे अच्छी तरह रहते हैं? कुछ समझ, कुछ शिक्षा है उन्हें? किताबें पढ़ते हैं या तुम्हारी तरह भलाई करने के नये तरीक़ों के बारे में सोचते हैं? बोल न! जवाब दे मेरी बात का!"

वेरा निरुत्तर खड़ी थी। उसको काटो तो ख़ून नहीं।

"नहीं कह सकतीं इतना भी कि वे अच्छी तरह रहते हैं या नहीं? मैं यही पूछ रही हूं—रहना चाहोगी तुम उन्हीं की तरह? बोल नहीं सकतीं कुछ भी? नहीं है न तुम्हारे लिए वह सब कुछ ठीक? वेरा, मेरी बात सुनो, तुम पढ़ी-

लिखी हो, मेरी ही हराम की कमाई से ही न। तुम्हारे दिमाग़ में भला करने की धुन समाई हुई है न, लेकिन अगर **मैं** इतनी बुरी न होती तो तुम्हें ज्ञान ही कैसे हो पाता कि भला होता क्या है। समझ में आ रही है न मेरी बात? तुम जो भी हो **मेरी** बदौलत, तुम **मेरी** बेटी हो, समझ में आ गया न? **मैं** तेरी मां हूं।"

वेरा रोने लगती है, कांप-कांप जाती है, देह ठंडी पड़ जाती है।

"मां, आखिर क्या चाहती हो तुम मुझसे? प्यार तो **मैं** कर नहीं सकती तुम्हें।"

"क्या मैं प्यार की भीख मांग रही हूं तुझसे?"

"मैं तुम्हारी इज़्ज़त करना चाहती हूं, पर वह भी तो नहीं कर सकती।"

"मुझे तुम्हारी इज़्ज़त की ज़रूरत है क्या?"

"तो फिर क्या चाहिये तुम्हें? किसलिए आयीं यहां, यह सब बक-झक करने? आखिर क्या चाहती हो मुझसे?"

"बस शुक्रिया के दो शब्द, कृतघ्न। भूल जा प्यार और इज़्ज़त के बारे में। मैं तो निर्दयी हूं न, क्यों करो प्यार मुझसे? मैं तो भ्रष्ट हूं—कौन इज़्ज़त कर सकता है मेरी, कभी भी? बस एक बात कान खोलकर सुन लो: अगर मैं जो कुछ हूं, वह न होती, तो तुम भी आज जो कुछ हो, वह न होतीं। तुम अच्छी हो इसलिए कि मैं भ्रष्ट रही, तुम मुझ निर्दयी बूढ़ी की करुणा हो। कुछ तो कृतज्ञता प्रकट करो, बेटी।"

"चली जाओ मां अब। मुझे अपनी बहन से बात करने दो।"

मार्या अलेक्सेयेव्ना अन्तर्धान हो जाती है...

अनेकानेक वरों की वधु और हज़ारों बहनों की बहन वेरा का हाथ पकड़ लेती है।

"वेरा, मैं हमेशा ही तुम्हारे साथ अच्छा बर्ताव करना चाहती रही क्योंकि तुम खुद भी तो बहुत अच्छी हो। और मैं तो हर किसी के साथ उसी जैसी बन जाती हूं। इस समय तुम उदास हो, दुखी हो, इसलिए तुम मुझे भी वैसा ही देख पा रही हो। कैसी लगती हूं मैं?"

"इस धरती पर किसी भी दूसरे प्राणी से बेहतर।"

"चूम लो मुझे, वेरा, क्योंकि हम दोनों ही निराश, हताश हैं। पता है, तुम्हारी मां ने सच ही कहा। भले ही मैं उसे कितना ही नापसन्द करूं, फिर भी मुझे उसकी ज़रूरत तो है ही।"

"क्या, आप उसके बिना काम नहीं चला सकती है?"

"हां, शायद बाद में, जब मनुष्य अपनी दुष्टता का परित्याग कर देगा, तब उसकी ज़रूरत नहीं रहेगी। हालांकि इस क्षण तो इसका कोई सवाल ही नहीं उठ सकता। मालूम है, सचाई अपने बल-बूते पर टिकी नहीं रह सकती और दुष्ट लोग कठोर और चालाक होते हैं। लेकिन वेरा, दुष्टों की तो भरमार है: कुछ तो संसार को बदतर बनाना चाहते हैं और कुछ बेहतर बनाना चाहते हैं—बेशक अपने ही स्वार्थ के लिए। तुम्हारी मां को तुम्हें शिक्षा दिलानी ही थी: तुमने ट्यूशनें पढ़ाके जो कमाई की, क्या वह उसने नहीं ले ली? क्या वह नहीं चाहती थी कि बेटी उसके लिए धनी दामाद फंसा लाये? आयी समझ में, उसके इरादे नापाक थे, लेकिन फिर भी उसने की तो भलाई ही, तुम्हारी भलाई, सच नहीं क्या यह? दूसरे प्रकार के दुष्ट लोगों के बारे में बात ऐसी नहीं। अगर तुम्हारी मां मदाम स्तोरेश्निकोवा होती, तो क्या तुम अच्छाई क्या है यह जान पातीं और इसे पसन्द कर पातीं? बिल्कुल नहीं, तुम्हें इसकी अनुमति ही न मिल पाती। तुम्हें तो बस गुड़िया बना दिया जाता, ठीक कह रही हूं न मैं? मदाम स्तोरेश्निकोवा अपनी बेटी के लिए गुड़ियां मांगाती क्योंकि वह भी तो गुड़िया ही है, गुड़ियों से खेलनेवाली गुड़िया। लेकिन तुम्हारी मां, वह बेचारी तो इंसान का कुरूप-सा चेहरा है, मगर है तो इंसान ही: उसे गुड़िया जैसे बच्चों की दरकार ही कहां थी। अब समझ में आया कि दुष्ट-दुष्ट के बीच क्या अन्तर होता है? पहली क़िस्म के दुष्ट मेरे मार्ग में आ खड़े होते हैं: मैं तो चाहती हूं कि लोग इंसान बने रहें लेकिन वे तो इंसानी गुड़ियों की तलाश में लगे रहते हैं। दूसरे प्रकार के दुष्ट मेरी मदद करते हैं जान-बूझकर नहीं—वे तो लोगों को मौक़ा देते हैं, इंसान बनने का साधन प्रदान करते हैं। बस मैं इतना ही कुछ चाहती हूं। यह सच है, वेरा, कि दूसरे प्रकार के दुष्ट के विरोध के लिए मुझे पहले प्रकार के दुष्ट की अनिवार्य रूप से आवश्यकता है। मेरे दुष्ट,

4

वेरा ने शीघ्र ही अपना दर्ज़ीख़ाना बना लिया। ख़ास-ख़ास बातें बिल्कुल साधारण थीं। इतनी साधारण कि उनकी चर्चा करने की ज़रूरत भी नहीं। उसने पहली तीन दर्ज़िनों से बस यही कहा कि उनकी तनख़ा, दुकानों में मिलनेवाली तनख़ा से कुछ ज़्यादा होगी। बिल्कुल दो-टूक बात थी। न तो कोई छिछोरापन और न ही मूर्खतापूर्ण। युवतियों ने उसकी पेशकश को स्वीकार करने में बिल्कुल हिचकिचाहट नहीं की। और न ही इसमें कुछ हीले-हवाले की गुंजायश थी, ऐसी स्त्री के साथ जिसके साधन स्वल्प हों पर जो अपना कपड़े सिलने का कारोबार चलाना चाहती हो। उन तीनों ने तीन या चार अन्य को सावधानीपूर्वक चुना, क्योंकि वेरा ने उनसे यही कहा था। यह शर्त न तो संदिग्ध थी और नहीं असामान्य। यदि सीमित साधनोंवाली कोई युवती यह चाहे कि उसके कर्मचारी उन्मुक्त हृदय, नेक, संयत हों और झगड़ालू न हों, तो इसमें असाधारण बात कौन-सी है? चख़-चख़ से बचे रहने की साधारण-सी बात ही तो और यह तो उसके लिए अत्यन्त विवेकपूर्ण है, और कुछ भी तो नहीं। वेरा ने उनको काम पर लेने से पहले उनसे बातचीत की और सोच-विचारकर ही उन्हें चुना। और यह भी अत्यन्त स्वाभाविक बात ही थी और भली-भांति सोचकर कुछ करनेवाली कारोबारी के लिए यह श्रेयस्कर ही था—और क्या? इससे न पुनर्विचार की दरकार और न ही किसी ग़लतफ़हमी की।

और इस प्रकार उन्होंने पहले महीने काम किया और तयशुदा उजरत उचित समय पर प्राप्त की। वेरा चूंकि हर समय मौजूद रही, इसलिए वे सब उसे अच्छी तरह जान-पहचान गयीं, मितव्ययी, व्यावहारिक और मृदु स्वभाव के बावजूद चौकस-चौकन्नी। इसमें भी कोई असाधारण बात नहीं थी। केवल अच्छी कारोबारी महिला ही सफल हो सकती है। उसे यह भली-भांति पता था कि वह क्या कुछ करना चाह रही है।

लेकिन, महीने के अन्त में, वेरा कार्यशाला में रजिस्टर लेकर आयी और उसने युवितयों से काम बन्द करने के लिए तथा उसकी

बात सुनने के लिए कहा। उसने अत्यन्त साधारण शब्दों में अत्यन्त साधारण-सी बातें कहीं, जो दर्जिनों ने पहले उसके मुंह से अथवा किसी के भी मुंह से कभी नहीं सुनी थीं।

उसने कहना शुरू किया: "अब तक हम लोग एक दूसरे को अच्छी तरह जान चुके हैं। मैं कह सकती हूं आप सब बढ़िया काम करनेवाली हैं और अच्छी लड़कियां हैं। और आप लोग भी मुझे कोई बेवक़ूफ़ तो नहीं कहती होंगी। तो चलिये, यह बात साफ़ हो गयी। अब मैं असली बात आपके सामने रखती हूं। यदि आपको मेरे कहने में कुछ विचित्र लगे, तो आप उस पर उचित रूप से सोच-विचार करें। तत्काल ही मुझसे यह न कह बैठें कि यह बेकार की बकबक है। मैं बकबक करनेवाली महिला नहीं। मेरे मन में क्या है, वह अब सुनिये।"

"अच्छे लोगों का कहना है कि पोशाक तैयार करनेवाली ऐसी शाला की स्थापना संभव है, जो काम करनेवाली युवतियों के लिए उन दर्ज़ीख़ानों के बनिस्बत लाभकर हो जिनको हम आम तौर पर जानते हैं। मैं कोशिश करना चाहती हूं। पहले महीने के परिणाम के आधार पर लगता है कि ऐसा निश्चय ही संभव है। आपको अपना वेतन नियमित रूप से मिला है, अब मैं आपको यह बताना चाहती हूं कि उसे और दूसरे ख़र्चों को काटकर, मुझे कितना मुनाफ़ा मिला है।" उसने लेखा पढ़कर सुनाया, महीने में क्या ख़र्च हुआ, क्या आया ख़र्चों में वेतन के अलावा, दूसरे सभी ख़र्च शामिल थे, इनमें किराया, रोशनी पर ख़र्च भी था। रक़म रूबल-कोपेक तक दर्ज थी। वेरा ने कार्यशाला के ख़र्च में आवाजाही के लिए एक रूबल के लगभग घोड़ागाड़ी का भाड़ा भी शामिल किया था।"

उसने कहना जारी रखा: "आप समझ ही गयी होंगी, मेरे पास अब इतने रूबल बचे हैं। क्या करूं मैं इनका? मैंने शिल्पशाला इसीलिए खोली है कि मुनाफ़ा उन्हीं युवतियों को दे दिया जाय, जो उसे पैदा करती हैं। इसीलिए, मैं पहले महीने का लाभ आप सबको बराबर बांट रही हूं। यह तो समय ही बतायेगा कि यह प्रबन्ध सर्वोत्तम, आपके लिए सबसे अधिक लाभदायक है या नहीं।" और फिर उसने सबको उनका भाग दे दिया।

कुछ देर तक तो युवतियां स्तंभित रह गयीं। फिर "धन्यवाद"

की बौछार कर दी। वेरा ने उन्हें मनमानी करने दी, कहीं ऐसा न हो कि वे अपने मत तथा अनुकूल समादर के प्रति उसके उदासीन रवैये से नाराज़ न हो जायें। फिर उसने अपनी बात का अगला क्रम जोड़ा:

"अब मैं आपसे कभी कही जानेवाली कठोरतम बात कहना चाहती हूं। समझ नहीं पा रही हूं कि किन शब्दों में उसे व्यक्त करूं। लेकिन कहना तो आवश्यक है, इसीलिए कहूंगी भी। मैंने खुद यह रक़म अपनी जेब में क्यों नहीं डाल ली; मैं कार्यशाला चलाना क्यों चाहती अगर मुझे मुनाफ़ा नहीं कमाना? मेरे पति और मैं गुज़ारा कर लेते हैं, हम धनी नहीं, लेकिन हमारे पास ज़रूरत की चीजें हैं। कभी किसी चीज़ की मुझे ज़रूरत हो, तो बस कहने भर की देर है। अगर मुझे धन की ज़रूरत हो तो तत्काल मिल सकता है। इस समय वह ऐसा कुछ नहीं करते, जिससे अधिक से अधिक धन मिले बल्कि ऐसा करते हैं जो उन्हें अत्यधिक उपयुक्त लगता है। ताहम, हम एक दूसरे को बहुत प्रेम करते हैं, और मुझे खुश करके वह बहुत खुश रहते हैं और मैं भी वैसे ही करती-धरती हूं। बात ऐसी है, और अगर हमें कुछ कमी महसूस होगी, तो वे कोई अच्छा वेतनवाला काम ढूंढ़ लेंगे और मिल भी जायेगा। उनकी इतनी जान-पहचान व साख हैं। आप लोग भी उन्हें अब तक अच्छी तरह जान गयी होंगी। अगर वे इस समय काम की तलाश में नहीं हैं तो इसीलिए कि मैं उससे खुश हूं, जो हमारे पास है। और इसका कारण यही है कि मैं धन के पीछे पागल नहीं। पता है, पागलपन तो कई तरह का होता है, सिर्फ़ धन के लिए ही नहीं, बल्कि, कुछ को डांस-पार्टियों में जाने—फैंसी ड्रैस अथवा ताश खेलने का पागलपन होता है। वे लोग अपने किसी भी उन्मादी शौक़ के लिए खुशी-खुशी अपने को बरबाद कर सकते हैं। और बहुत-से ऐसे होते हैं, जो धन के लिए पागलपन से ज़्यादा अपने किसी शौक़ के लिए ऐसा कर सकते हैं, और कोई भी इस पर आश्चर्य नहीं करता। मैं भी पागल हूं, इस कारोबार में आप लोगों के साथ मिलकर इसे सफल बनाने के लिए। ऐसा नहीं है कि इस प्रयास में अपने को बरबाद कर लूंगी मैं, एक भी फ़ालतू कोपेक इसमें खर्च नहीं करूंगी अथवा उसको कमाऊंगी ही। बस मैं इसमें लगी रहूं, यही काफ़ी है मेरे लिए।

इसमें कोई विचित्र बात नहीं। मेरा तो कहना यही है कि कोई भी अपने शौक़ में मुनाफ़ा ही नहीं देखता। अधिकांश लोग अपने शौक़ के लिए पैसे ख़र्च करेंगे, लेकिन मैं ऐसा हरगिज़ करनेवाली नहीं। इससे मुझे और भी अधिक हौसला मिलता है कि मैं अपने शौक़ में लिप्त रहूं और अपना आनंद बेमोल प्राप्त करूं, जबकि दूसरों को अपने शौक़ के लिए ख़र्च करना पड़ता है। मैंने यह विशेष शौक़ क्यों चुना? मैं बताती हूं, क्यों। बुद्धिमान और भले व्यक्तियों ने न जाने कितने पृष्ठ यह बताने के लिए रचे हैं कि अगर मजेदार ज़िन्दगी व्यतीत करनी है, तो हमें कैसे रहना चाहिये। कहते हैं कि यह नयी व्यवस्था पर आधारित होती है। तो मैं यही चाहूंगी कि हम सही क़िस्म की व्यवस्था बना पायें। यह बात शानदार घर बनाने अथवा बढ़िया उद्यान लगाने अथवा किसी ऐसी चीज़ के मालिक होने की चाह से कुछ अलग नहीं, जिसे सराहा जा सके—मैं भी ऐसी शानदार कार्यशाला चाहती हूं, जिसकी मैं सन्तोष के साथ सराहना कर सकूं।

"निस्सन्देह, इतना ही काफ़ी होगा कि मैं हर महीने मुनाफ़ा बांटती रहूं। लेकिन समझदार लोगों का कहना है कि इससे भी कुछ बेहतर कर सकते हैं, अधिक धन कमायें और उसका बेहतर इस्तेमाल करें। कहते हैं कि सब कुछ अच्छा, उम्दा किया जा सकता है। हम भी करेंगे। मैं एक-एक करके आपको बताऊंगी कि हम उन समझदार लोगों के मुताबिक़ और क्या कर सकते हैं। इसके अलावा, आप लोग ख़ुद भी समझदार हो जायेंगी और सोचने-तय करने लगेंगी। आप लोग जो भी सुझाव रखेंगी, हम उन पर सुविधानुसार अमल करने की कोशिश करेंगे। अलबत्ता, मैं इस पर ज़ोर ज़रूर दूंगी कि मैं आपकी राय बिना कोई भी परिवर्तन नहीं करूंगी। वही परिवर्तन होंगे जिन्हें आप चाहेंगी। समझदार लोगों के मुताबिक़ अगर लोग ख़ुद नहीं चाहेंगे तो उन्हें सफलता मिल ही नहीं सकती। और मैं उनसे सहमत हूं। इसलिए, आप लोग किसी भी नये क़िस्म के विचार से घबड़ायें नहीं। जब तक चुनेंगी नहीं तब तक कोई ऐसा उत्पन्न ही नहीं होगा। आपकी पसन्द ही सब कुछ है।

"और अब मैं आख़िरी बात कहूंगी, बिना आपका मश्विरा लिये हुए ही। बात यह है कि अगर हम अपना ख़र्च कम रखना चाहते

17—1127

हैं तो हमें हिसाब-किताब भी रखना होगा। पिछले महीने तो मैंने रख लिया, लेकिन अब मैं ऐसा नहीं करना चाहती। आप अपने में से कोई दो मेरी सहायता के लिए चुन लीजिये। मैं उनके बिना कोई क़दम नहीं उठाऊंगी। आखिरकार, यह आपका धन है, मेरा नहीं। आप लोगों को ही उसका हिसाब-किताब रखना चाहिये। और क्योंकि यह सब कुछ आपके लिए नया है, हम यह नहीं जान सकते कि कौन-सी युवती इस काम के लिए सर्वोत्तम है; इसलिए हम पहले कुछ समय के लिए परीक्षा-सी लेंगे किसी की। एक सप्ताह के समय में आप लोगों को यह निर्णय करने का मौक़ा मिल जायेगा कि आपने जिन्हें चुना है, वही ठीक हैं अथवा किन्हीं और को चुनेंगी।"

इस असाधारण प्रस्ताव पर लम्बा बहस-मुबाहिसा हुआ। लेकिन वेरा ने उनका विश्वास तब तक प्राप्त कर लिया था और मामला भी साफ़-साफ़ ढंग से रख दिया था। न तो उसने बहुत आगे की बात सोची थी और न ही भविष्य के लिए कोई खुशनुमा खाका ही खींचा था जो पल भर के लिए तो मन हर ले, लेकिन अगले ही पल सन्देह उत्पन्न कर दे। इसलिए, उसे पागल प्रलापी के रूप में तिरस्कृत नहीं किया गया—और यही तो उसने भी चाहा था। इस प्रकार वे सब धीमी किन्तु मन्थर गति से बढ़े।

फिर क्या हुआ। अब सुनिये इस कार्यशाला के तीन वर्षों का संक्षिप्त इतिहास, जो हमारी कथा-नायिका के भी इतिवृत्त का मुख्य पहलू था।

इस उपक्रम की रूहेरवां बन जानेवाली युवतियों को बड़ी सावधानी से चुना गया था, उन्हें अच्छा काम आता था और कार्यशाला की सफलता में उनकी प्रत्यक्ष रुचि थी, जो स्वाभाविक ही श्रेष्ठ मात्रा में उपलब्ध हुई। जिस गाहक ने एक बार उनसे काम करवाया, वह फिर कहीं और नहीं गया। अनेक प्रतिद्वन्द्वी कारोबारियों में इस सफलता से कुछ न कुछ मात्रा में ईर्ष्या जाग्रत हुई। परन्तु उसका कोई प्रभाव नहीं हुआ। अलबत्ता, वेरा को नाम-पट्ट ज़रूर बनवाना पड़ा, ताकि वे कोई नुकताचीनी न कर सकें। शीघ्र ही इतने आर्डर मिलने लगे कि वर्तमान सदस्यों के बस में नहीं रहा कि वे समुचित समय पर उनकी पूर्ति कर सकें, तो कार्यशाला

की जन-शक्ति बढ़ायी गयी, धीरे-धीरे। पहले डेढ़ सालों में युवतियों की संख्या 20 हुई और फिर इससे भी अधिक।

कारोबार की पूरी ज़िम्मेदारी युवतियों को सौंप दिये जाने के प्रारंभिक परिणाम वही हुए, जिनकी कल्पना की गयी थी। उन्होंने पहले महीने में ही यह तय किया कि वेरा को उसके काम के लिए कोई उजरत न मिले, यह ठीक बात नहीं। जब उन्होंने वेरा को अपने निर्णय के बारे में बताया तो वेरा ने कहा कि उसे सचमुच इसी प्रकार के निर्णय की आशा भी थी। उन्होंने उसे शुद्ध मुनाफ़े का तिहाई देने की पेशकश की। वेरा ने रक़म ले ली और कुछ समय के लिए उसे अलग रख दिया। लेकिन उसने यह अवश्य समझाया कि यह बात उनके कारोबार की सम्पूर्ण संकल्पना के ही प्रतिकूल है। उन्हें यह बात पचाने में काफ़ी समय लगा। हां उनकी समझ में आ गया कि उसने मुनाफ़े का इतना बड़ा हिस्सा किसी कृत्रिम अहंकार के कारण ठुकराया नहीं था बल्कि उनके ध्येय की अनिवार्यता और भावना के अनुरूप ही ऐसा किया था। तब तक उनकी सदस्य-संख्या इतनी बढ़ चुकी थी कि वेरा कटिंग का काम पूरे तौर पर संभाल नहीं पा रही थी, इसलिए दूसरा कटर ढूंढ़ा गया और वेरा को उसी के बराबर वेतन दिया गया। उसे तब तक जो धनराशि मिली थी, वह उसी के अनुरोध पर कार्यशाला की नक़दी में शामिल कर ली गयी, बस उसमें से निश्चित की गयी दर के हिसाब से पिछले समय का वेतन काट लिया गया। यही राशि उनके रिज़र्व का मुख्याधार थी। कोई एक वर्ष तक वेरा अपना अधिकांश दिन कार्यशाला में ही बिताती थी, किसी अन्य सदस्य की तरह ही समयविधि का पालन करती थी। जब उसने यह समझा कि अब इतना समय लगाना अनावश्यक है, तो उसने अपने घंटों में कटौती कर दी और उसके वेतन में भी तदनुरूप कमी कर दी गयी।

मुनाफ़े का बंटवारा कैसे हुआ? वेरा का लक्ष्य यही था कि सबमें बराबर बंटे। इसलिए हुआ भी यही, लेकिन तीसरे साल के मध्य तक ही ऐसा हो पाया। इस बीच कई दौर गुज़रे और पहले दौर में ख़ालिस आमदनी का आनुपातिक बंटवारा हुआ। सबसे पहले उन्होंने यह समझा कि बीमारी अथवा किसी दूसरे उचित कारण के फलस्वरूप एकाध दिन की ग़ैरहाज़िरी से मुनाफ़े में मिलनेवाले अंश

पर कोई प्रभाव नहीं पड़ना चाहिये—उसने कितने दिन काम नहीं किया इस पर नहीं बल्कि कुल किये गये काम और उनके कारोबार की सामान्य अवस्था पर निर्भर होना चाहिये। बाद में उन्होंने यह तय किया कि जिन्हें कटिंग, डिलिवरी और ऐसे ही दूसरे कामों के लिए विशेष दर से भुगतान किया जाता है, उन्हें मुनाफ़ों में से अतिरिक्त अंश न मिलना ठीक ही है, क्योंकि उन्हें वैसे ही पर्याप्त मिल जाता है। लेकिन अब इसे अनुचित समझा गया। जिन्हें साधारण सिलाई के वेतन मिल रहे थे, उन्होंने अपने साथ की जानेवाली ज़्यादती को, जो उनके अपने निर्णय के ही कारण थी, मिटाये जाने की बात खुद करना अयुक्तिपूर्ण समझा। बल्कि विशेषाधिकारों का उपभोग करनेवाली युवतियों ने कसमसाहट महसूस की और भेदभाव की नीति का विरोध किया, क्योंकि उन्होंने उपक्रम के प्रयास की भावना को भली-भांति समझ लिया था। ऐसी बात नहीं कि धीरज और परिग्रह, दोनों ही उत्तरोत्तर होनेवाली प्रगति के संदर्भ में कोई आपातिक बात थी, क्योंकि प्रगति का तो दोनों प्रकार के कामगारों की स्थिति पर अनुकूल प्रभाव पड़ रहा था। सबसे कठिन विचार पर अमल करना यही था कि सभी सिलाई करनेवालों को बराबर का अंश मिलना चाहिये, भले ही उनकी कमाई कुछ भी रही हो। उच्चतर अर्जन तो उच्चतर उत्पादकता के लिए उनका पर्याप्त पुरस्कार था। मुनाफ़े के बंटवारे के बारे में किया गया यह अन्तिम समंजन कार्यशाला के तीसरे वर्ष के उत्तरार्ध में तामील किया गया, जब कि अन्ततः यह समझ लिया गया कि लाभांश किसी विशेष युवती द्वारा प्रदर्शित महत्त्वपूर्ण अथवा निम्नतर कौशल की मान्यता के लिए नहीं, बल्कि उनकी कार्यशाला के संविधान और उसके सम्पूर्ण प्रयोजन के सामान्य स्वरूप की मान्यता के लिए प्रदान किया जाता है, अर्थात् प्रत्येक की विभिन्न उपलब्धियों को ध्यान में रखे बिना सभी सम्बद्ध लोगों को श्रम से समान लाभ मिले। अब अन्ततः इस को समझ लिया गया कि उपक्रम की भावना यही है कि उसमें हाथ बंटानेवालों को मुनाफ़े में बराबर हिस्सा मिले और निरपवाद रूप से ऐसा हो तथा सभी समान रूप से लाभान्वित-प्रभावित हों तो अत्यन्त भीरु अथवा न्यूनतम प्रतिभाशाली सदस्य की मौन सहमति सभी के लिए और उनके सामान्य ध्येय के लिए, लाभदायक विकास

के लिए ही नहीं बल्कि उसके अत्यन्त प्रफुल्ल और अत्यन्त प्रतिभाशाली साथी की कार्यकुशलता के लिए कुछ कम लाभदायक सिद्ध नहीं हुई।

मैंने इस प्रकरण के अनेक विवरणों को छोड़ दिया है, लेकिन कार्यशाला में हमारी रुचि वहीं तक तो है, जहां तक कि हमारी कथा-नायिका के कारनामों का सम्बन्ध है। जिनका उल्लेख मैंने किया है उनका इसके सिवा और कोई दूसरा प्रयोजन नहीं कि वे उसके आचरण को प्रकट करें, उसके उत्तरोत्तर धैर्य और अध्यवसाय को, और सामूहिक इच्छा के क्रियान्वयन में आदेशों का नहीं, बल्कि परामर्श, व्याख्या और सहायता के सिद्धान्त के प्रति अविचल परिपालन को प्रकट करें।

लाभांश प्रतिमाह बांटा जाता था। शुरू-शुरू में तो प्रत्येक युवती अपने अंश को पूर्ण रूप से अपनी व्यक्तिगत आवश्यकताओं पर व्यय करती थी, जो किसी न किसी रूप में सामूहिक निवेश की तुलना में अधिक तात्कालिक और सुपरिचित होती थीं। और जैसे ही प्रबन्ध में स्थिर सहभागिता से उन्हें कारोबार को समग्र रूप में देखने की आदत पड़ गयी, वेरा ने उनका ध्यान कारोबार के साल के भिन्न महीनों के परिमाण में होनेवाले तेज़ उतार-चढ़ाव की ओर आकृष्ट किया और सुझाया कि यह कोई बुरी बात नहीं होगी, अगर कारोबार में तेजी के दौरान कमाये गये मुनाफ़े के अपने हिस्से को ऐसे समय के लिए उठाकर रख दिया जाय, जबकि मंदी का बोलबाला होगा। गणना सटीक रूप से की जाती, ताकि अगर कोई काम छोड़ना चाहे तो उसे अपना बक़ाया तत्काल ही वापस मिल जाय। और इसलिए यह सुझाव मंज़ूर हो गया। इस प्रकार संचित लघु पूंजी धीरे-धीरे बढ़कर इतनी हो गयी कि उसे किसी काम में लगाये जाने की तलाश करनी पड़ी। थोड़े ही समय में उन्होंने समझ लिया कि इसे सर्वसम्मति द्वारा ब्याज-मुक्त आपातकालीन ऋण के रूप में इस्तेमाल किया जा सकता है—ग़रीब लोगों का विचार है कि सर्वोत्तम वित्तीय सहायता वही है जो ब्याज-मुक्त हो। ऋण-कोष के बाद खुदरा रोकड़ पर ध्यान गया। युवतियों ने समझा कि चाय, कॉफ़ी, चीनी, जूते आदि खरीदने के लिए यह अत्यन्त लाभकारी है—कार्यशाला थोक में खरीदे और

खुदरा बेचकर बचत करे। फिर उन्होंने डबल रोटी और दूसरी रोज़मर्रा की चीज़ों की सप्लाई के लिए इसी संकल्पना पर अमल करने की दिशा में क़दम उठाया और साथ ही यही सोचा कि उन सभी को पड़ोस-पड़ौस में ही तो रहना होगा। इसलिए, एक-एक करके वे सामुदायिक व्यवस्था की ओर बढ़ीं, कार्यशाला के बिल्कुल ही पास फ़्लैट चुनें और अन्ततः अपने ही खुदरा-खरीद आयोग का संघटन किया। डेढ़ वर्ष बाद, सभी लोग एक बड़े विशाल फ़्लैट में रहने लगे थे और किसी भी बड़े परिवार की तरह खाना पकाने और विभिन्न आवश्यक सामग्री पर होनेवाले व्यय में हाथ बंटाने लगे।

आधी संख्या में युवतियां अविवाहित थीं। कुछ की मां बूढ़ी थी अथवा बूढ़ी चाचियां थीं। दो अपने बूढ़े पिताओं की मदद करती थीं और कई अपने छोटे भाई-बहनों की। तीन युवतियों को इस सामुदायिक प्रबन्ध से बिल्कुल अलग रखा गया क्योंकि उनके अपने परिवार थे: एक की तो मां झगड़ालू थी, दूसरी की मां सरकारी अधिकारी की पत्नी थी, जिसे निम्न-वर्ग के लोगों के बीच रहना पसंद नहीं था और तीसरी को अपने शराबी बाप की संगत भोगनी पड़ती थी। वे खुदरा-आयोग की सेवाओं का लाभ उठाने तक सीमित रहती थीं, जैसा कि विवाहित सदस्यायें करती थीं। सभी दूसरी युवतियों ने, जिनके अपने रिश्तेदार भी थे सामुदायिक विकल्प चुना। एक कमरे में दो और तीन और अपने रिश्तेदारों को उनकी मर्ज़ी से रखा: दो बुढ़ियायें अलग-अलग कमरों में, अन्य दादियों को एकसाथ एक कमरे में, छोटे बच्चों को एक कमरे में, छोटी लड़कियों को दूसरे दो कमरों में। यह तय किया कि लड़कों को आठ वर्ष तक की आयु तक ही रखा जाय, बाद में उनके लिए प्रशिक्षु-व्यवस्था ढूंढ़ दी जाय।

हिसाब-किताब में बड़ी कठोरता बरती जाती थी ताकि सभी को इसका पक्का विश्वास रहे कि उनमें से किसी के साथ धोखाधड़ी नहीं हो रही है और न ही किसी का शोषण किया जा रहा है। अकेली युवतियों के लिए कमरा और खाना-पीना साधारण गणित ही था। जिनके आठ वर्ष के कम के भाई अथवा बहनें थीं, उनसे कुछ हीले-हवाले के बाद यह तय पाया गया कि वयस्क भाड़े का चौथाई

अतिरिक्त रूप से वसूल किया जाय। आठ और बारह वर्ष के बीच की बहनों के लिए, उसी अनुपात से तिहाई वसूल किया जाय, बारह वर्ष की आयु के बाद आधा। तेरह वर्ष की आयु में अन्य कोई व्यवस्था न हो पाने पर लड़कियों को कार्यशाला में प्रशिक्षु बना दिया जाता था। और कार्य-कुशलता का प्रमाण मिल जाने पर सोलह वर्ष की आयु में पूर्ण सदस्यता के अधिकार प्रदान कर दिये जाते थे। निस्सन्देह, वयस्क सम्बन्धियों को उसी दर से देना पड़ता था, जो ख़ुद दर्ज़िनों से लिया जाता था, अलबत्ता, अलग कमरे के लिए अतिरिक्त चार्ज देना होता था। वहां रहनेवाली लगभग सभी वृद्धायें और तीनों वृद्ध रसोई के काम में तथा दूसरे घरेलू काम-काज में मदद करते थे, और यह कहने की ज़रूरत नहीं कि इन कामों के लिए उन्हें उजरत दी जाती थी।

यह सब कहने में कितना आसान है और एक बार सब कुछ सुचारू रूप से तय हो जाने के बाद बहुत ही सहज और स्वाभाविक ढंग से काम-काज चल पड़ता है। लेकिन सुचारुता हासिल करने का मार्ग सपाट-समतल नहीं था, गति धीमी रही और एक-एक बात के लिए संघर्ष करना पड़ा। तमाम ब्योरों को बतलाना बात का बतंगड़ और उबाऊ होगा, जैसा कि मुनाफ़ा बांटने और निवेश-योजनाओं के समय करना पड़ा। काफ़ी-कुछ की अवहेलना करनी होगी और काफ़ी की चर्चा चलते-चलते ही करनी होगी, जैसे कि सदस्यों द्वारा अपने ख़ाली वक़्त में तैयार माल को बेचने के लिए स्थापित एजेंसी के पास कोई बड़ा स्टोर नहीं था बल्कि गोस्तीनी द्वोर में ही किसी दुकान के साथ विशेष सौदा किया गया। इसके अलावा गुदड़ी बाज़ार में एक छोटा खोखा भी था, जिसे दो वृद्धायें चलाती थीं। ताहम, एक बात ऐसी है, जिस पर हमारा ध्यान अवश्य जाना चाहिये।

शुरू से ही वेरा किताबें लाती थी और उन्हें अपना काम ख़त्म हो जाने पर दूसरों को ज़ोर-ज़ोर से पढ़कर सुनाती थी। और उसका पाठनक्रम आधे घंटे अथवा पूरे घंटे भर अबाध गति से चलता रहता था; अलबत्ता बीच में कोई काम पड़ जाय, तो ज़रूर रुक जाता था। युवतियों को कुछ समय आराम की छुट्टी देने के बाद वह फिर अगले अंतराल तक पढ़ती रहती। यह कोई कहने की बात नहीं कि युवतियां अगर पहले से नहीं थीं तो शीघ्र ही किताबों की दीवानी हो गयीं।

दो या तीन हफ़्तों में ही यह मनबहलाव आदत बन गया। तीन-चार महीनों में ऐसी कई सिद्ध वाचक उत्पन्न हो गयीं, यह फ़ैसला किया गया कि वे वेरा का स्थान लेंगी और आधे-आधे घंटे बारी-बारी से पढ़ेंगी तथा इसे काम का समय गिना जाता था। और जब वेरा को इस काम से पूरी तरह मुक्त कर दिया गया, तो वह अपना समय उन कहानियों को सुनाने पर लगाने लगी, जिन्हें वह कभी-कभी पुस्तक पढ़ने के स्थान पर पहले भी सुनाया करती थी। कुछ समय बाद इसने सामान्य ज्ञान के बारे में हल्के-फुल्के व्याख्यान पाठ्यक्रम का रूप धारण कर लिया। आगे चलकर, विराट प्रगति के रूप में, वह समुचित शिक्षा-पाठ्यक्रम आरंभ करने में समर्थ हुई। ज्ञान के लिए युवतियों की पिपासा इतनी तीव्र थी और वाणिज्य इतना सफल था कि उन्होंने अपने, खाना खाना के लिए मिलनेवाले समय में, अध्ययन-समय भी जोड़ने का निर्णय लिया।

मेर्त्सालोव-परिवार के फ़्लैट में पहुंचने के बाद एक बार वेरा ने कहा: "अलेक्सेई पेत्रोविच, मैं आपसे मदद चाहती हूं। नताशा तो मेरे पक्ष में पहले से ही है। मेरी कार्यशाला तेज़ी से सामान्य महाविद्यालय का रूप धारण करती जा रही है। हमारे यहां आप कोई विषय पढ़ाना आरंभ कर दीजिये।"

मेर्त्सालोव हंस पड़ा: "क्या पढ़ा सकता हूं मैं आपके यहां की युवतियों को? निश्चय ही लैटिन और ग्रीक तो नहीं या आप तर्कशास्त्र और अलंकारशास्त्र पढ़वाना चाहती हैं? मेरा विषय उतना आकर्षक नहीं, क्योंकि मैं आप से भी और किसी दूसरे परिचित व्यक्ति से ऐसा सुन भी चुका हूं।"

"नहीं, ऐसी बात नहीं। मैं तो आपके विषय के बारे में ही विशेष रूप से समुत्सुक हूं। आप तो हमारे औचित्य एवं शैक्षिक उत्कर्ष की प्रतिभूति होंगे।"

"अगर यह ब्रहमवाक्य नहीं तो, तथास्तु! समझ रहा हूं कि मेरे बिना कोई औचित्य, सुधार नहीं होगा। बताइये आप, क्या विषय पढ़ाऊं।"

"समझिये, रूसी इतिहास अथवा विश्व इतिहास के कुछ चुनींदा प्रकरण।"

"बहुत ख़ूब। मैं व्याख्यान दूंगा और मुझे सब सच्चा इतिहासज्ञ

मान लेंगे। क्या कहने! अति उत्तम। एक तीर दो शिकार। प्रोफ़ेसर और प्रतिभूत भी।"

अन्य "प्रोफ़ेसर", यही तो वे एक दूसरे को झूठ-मूठ बताया करते थे, नताशा मेर्त्सालोवा, लोपुख़ोव, वेरा तथा कुछ विद्यार्थी मित्र थे।

प्रबोधन के साथ-साथ मनोरंजन भी किया जाता था। इसमें पार्टियां थीं, और यदाकदा ग्राम्यांचल की सैरें शामिल थीं, जो बाद में ज्यों-ज्यों धन की व्यवस्था में सुधार आता गया अधिक नियमित रूप से अंजाम दी जाने लगीं। शीघ्र ही वे थियेटर में बॉक्स-सीटें भी रिज़र्व कराने लगे। और तीसरी शीत-ऋतु आने पर तो उन्होंने ऑपेरा थियेटर में पार्श्ववीथी की सीटों के दस सीज़न टिकट ख़रीदे।

वेरा कितनी प्रसन्न और कितनी सन्तुष्ट थी। कितनी मेहनत और माथापच्ची कर रही थी वह और हां उसे तिक्त क्षणों का भी तो सामना करना पड़ता था। वेरा और उसकी समूची ही टोली के लिए विशेष रूप से दु:खद रहा साशा प्रिबीतकोवा के साथ हुआ हादसा, जो आरंभ में चुनी गयी तीन युवतियों में से थी और उत्कृष्ट कार्यकर्त्ताओं में से भी, देखने-भालने में सुन्दर, मृदु व्यवहार करनेवाली और अच्छे, युवक, सिविल सेवक की वाग्दत्ता। एक बार, रात देर गये तक बाहर रहने के समय किसी बांके छैले की छेड़छाड़ का शिकार हो गयी वह। वह तेज़ क़दम हुई तो वह भी तेज़-तेज़ बढ़ा और झपटकर उसका हाथ पकड़ लिया। उसने हाथ छुड़ाने की भरपूर कोशिश की और इस प्रक्रिया में उन महानुभाव के सीने पर ज़ोर का धौल जमाया; उसकी घड़ी छिटककर पटरी पर जा गिरी। तत्काल ही सीनाज़ोरी और भलेमानस का रूप धारण करते हुए उन महानुभाव ने गुहार मचायी: "पकड़ो, चोर! पुलिस, मदद करो!" दो गश्ती सिपाही नमूदार हो गये और साशा को ले जाकर जेल में डाल दिया। पूरे तीन दिन तक कार्यशाला में कोई भी कुछ न कुछ सोच सका कि उस बेचारी युवती को क्या हो गया है। चौथे दिन, उसी जेल का एक दयावान रक्षक साशा का एक पत्र वेरा

के नाम लेकर आया। लोपुखोव तत्काल वहां पहुंचा और लड़ा-झगड़ा। उसे बुरा-भला कहा गया, उसने भी खरी-खोटी सुनायी, फिर सेर्ज के यहां पहुंचा, जो जूली के साथ कहीं दूर शानदार पिकनिक पर गया हुआ था और अगले दिन ही वापस लौटा। लेकिन सेर्ज को लौटे तीन घंटे भी नहीं हुए थे कि ज़िला पुलिस अफ़सर साशा से माफ़ी मांग चुका था और इसी काम के लिए उसके मंगेतर के पास भी हो आया था। लेकिन मंगेतर अपने निवास पर नहीं था। पिछली रात जेल में साशा से मिलने के बाद और उस बांके छैले का नाम-पता रक्षकों से पूछकर वह उस व्यक्ति से मिलने गया और उसे बाहर आने को कहा। इससे पहले कि कुछ मारपीट की जाती, बांके ने माफ़ी तो मांगी, लेकिन उसके माफ़ी मांगने का ढंग कुछ इतना कुरूप था कि जो लफ़्ज़ उसने कहे वे व्यंग में डूबे थे। "इस चुनौती को तो आपको स्वीकार करना ही पड़ेगा, महाशय" और झन्नाटे दार थप्पड़ मुंह पर जड़ दिया मंगेतर ने। महाशय ने छड़ी उठानी चाही कि मंगेतर ने सीने पर ऐसा धौल जमाया कि वह चारों खाने चित्त। शोरगुल सुनकर बांके के नौकर-चाकर दौड़े-दौड़े आये, देखा कि उनका स्वामी फ़र्श पर मरा पड़ा है, उसकी कनपटी मेज़ के एक नक्क़ाशीदार नुकीले पाये से टकराकर क्षत-विक्षत थी। मंगेतर जेल में पहुंच गया और मुक़दमे का अन्त न जाने कब होगा। फिर क्या हुआ? कुछ नहीं, बस तभी से साशा की करुणापूर्ण आकृति सभी को सालने लगी।

कार्यशाला के इतिहास में कई घटनायें घटीं, इतनी आपराधिक तो नहीं लेकिन पर्याप्त रूप से उद्विग्न करनेवाली, जिनसे युवतियों को रुदन की शरण लेनी पड़ी और युवकों तथा अधेड़ों के लिए क्षणिक आमोद का विषय बनीं। वेरा को यह भली-भांति मालूम था कि यथा-स्थिति और इसमें प्रचलित अभिवृत्तियों से इस प्रकार की घटनायें अपरिहार्य रूप से घटित होती हैं, भले ही कोई परोपकारी कितनी ही सावधानी क्यों न बरते अथवा युवतियां स्वयं भी चाहे जितनी सावधान-चौकन्ना रहें। यह तो पुराने ज़माने में हो जानेवाली चेचक की बीमारी जैसी बात है, जबकि लोग उसकी रोकथाम के बारे में कुछ भी नहीं जानते थे। आज चेचक के रोगी अपने और विशेषकर अपने पास के लोगों को इसके लिए दोष दे सकते हैं,

जबकि उसके दादा जी किसी पर इसके लिए अंगुली नहीं उठा सकतें थे, बस महामारी अथवा मनहूस क़स्बे या गांव को दोषी ठहरा सकते थे और अगर किसी पर भी बस न चले तो उस बीमार को कोस सकते थे, जिसने दूसरे किसी को छू लिया और जब तक ठीक न हो जाय तब तक अलग-थलग अपने ही घर में बन्द नहीं रहा। और यही बात इस प्रकार की घटनाओं पर भी लागू होती है। किसी न किसी दिन ये भी मिटा दी जायेंगी। साधन दिखायी पड़ने लगे हैं बस लोग अभी उनका उपयोग नहीं कर रहे, ठीक वैसे ही जैसे बरसों-बरसों तक पहले चेचक के खिलाफ़ उन्होंने कुछ भी नहीं किया था। जी हां, वेरा को पता था कि क़स्बों और ग्राम्यांचल में यह बुरी बीमारी अबाध रूप से अभी तक फैल सकती है और अत्यन्त ध्यान रखनेवाली परिजनों के बीच से भी अपने शिकार छीनं सकती है। लेकिन कितनी असन्तोषजनक बात है यह कि बस यही सुनने को मिले: "तुम मुझे दोष नहीं दे सकती, प्रिय युवती, और अपने को भी नहीं"। ताहम, प्रत्येक महामारी घटना से भारी परेशानी तो उत्पन्न होती ही है और उससे भी अधिक उसके निराकरण की। युवतियों की सहायता के लिए उपायों के सोच-विचार में वेरा ने जो भी समय बिताया, यद्यपि यह केवल सहायता, सान्त्वना और निराशा की भावना को दूर कर उत्साह भरने और क्षत-विक्षत सम्मान को पुन:जाग्रत करने और रोना-धोना बन्द करने की सलाह देने और बताने कि "रोना-धोना बन्द करते ही रोने के लिए कुछ भी नहीं बचेगा" से अधिक कुछ नहीं था।

यद्यपि अधिकांश समय तक, अब तक के अधिकांश समय वेरा को खुशी का अहसास रहा। उसे यह खुशी हर चीज़ में मिली। और सालनेवाले क्षण केवल अपवाद बनकर ही आये। आज और अगले छह महीनों में कभी, जब कभी किसी एक के लिए रोयी और अपनी सभी दूसरी बहनों के लिए प्रमुदित हुई और फिर उस अकेली के लिए भी दो या तीन हफ़्तों से कम समय में ही प्रमुदित हुई। उसके दिन खुशनुमा और चहलपहल भरे रहे और दिनचर्या में निरन्तर प्रसन्नता रही। बस अगर इसमें किसी निर्मम निराशा से कुछ व्यवधान पड़ता तो उसकी क्षतिपूर्ति किसी सुखपूर्ण अवसर के आगमन से हो जाती: किसी सदस्या के छोटे भाई अथवा बहन

के लिए कोई बढ़िया नौकरी जुट गयी, वे दो युवतियां जिन्होंने प्रायवेट ट्यूटर की परीक्षा पास कर ली—निश्चय ही ख़ुशी मनाने का मौक़ा! और इनके अलावा भी अनेक ख़ुशी के क्षण थे। सबसे ज़्यादा ख़ुशी के अवसर और यह बहुधा विवाह के अवसर होते। ऐसे मौक़े कुछ कम नहीं आये और सभी चिरकाल तक ख़ुशी रहने की भावना से ओतप्रोत। हर अवसर पर मौज-मज़ा होता, धमा-चौकड़ी मचती। पहले और बाद में पार्टियां होतीं। प्रत्येक वधू को कार्यशाला में कार्यरत अपने मित्रों की ओर से भेंटें मिलतीं तथा सामुदायिक कोष से दहेज़ मिलता। हरेक ऐसे समारोह में (कहने की ज़रूरत नहीं) वेरा बहुत ही व्यस्त रहती। बस युवतियों की शिकायत एक ही थी: न तो पहली अथवा दूसरी या तीसरी-चौथी या कोई भी वधू वेरा को संस्कार में मां की भूमिका अदा करने के लिए राज़ी नहीं कर पायीं। अक्सर यह सौभाग्य नताशा मेर्त्सालोवा अथवा उसकी मां को मिला, जो ख़ुद बहुत ही बढ़िया स्त्री थी। वेरा तो वधू को सजा के चर्च तक ले जाने का काम अंजाम देती, बस उसकी अन्य सहेलियों की तरह। जब उसने पहली बार मना किया, तो लगा मानो वह किसी बात से अप्रसन्न है, लेकिन क्यों, वेरा तो बहुत ख़ुश हुई कि उससे यह पूछा गया; उसने तो बस सच्चे मन से ही मना किया था। जब दूसरा अवसर आया तो पता चला कि किसी युवती के सरपरस्त के रूप में सार्वजनिक रूप से सामने आने पर अत्यन्त झिझक उसमें थी। वास्तव में, वह सभी प्रकार के विशिष्ट लक्षणों के प्रदर्शन से बचती थी और अपनी कार्यशाला की युवतियों को इस प्रकार आगे बढ़ाती थी कि वहां आनेवाली कई ग्राहक-महिलायें दो कटरों में से उसे अलग पहचान पाने में असमर्थ रहती थीं। शायद, सबसे अधिक सन्तोष की बात यही थी कि यह समझा जाय कि इस सम्पूर्ण कारोबार को युवतियां स्वयं ही दिशा देती हैं और उसका प्रबंध चलाती हैं। और यह उसकी इस सबसे प्रिय इच्छा की पुष्टि के लिए कि कार्यशाला का प्रबन्ध उसके बिना भी चलाया जा सकता है और स्थापना के समय से ही इसी प्रकार के उपक्रम स्वतंत्र रूप से चलाये जा सकते हैं—क्यों नहीं? यह तो कुछ बात होगी!—केवल दर्ज़िनों के विवेक और कुशलता से, किसी पराये के निर्देशन के बिना। यही वेरा का सबसे मनोगत सपना था।

5

इस प्रकार कार्यशाला की स्थापना से लगभग तीन वर्ष बीत चुके हैं और इससे भी कुछ अधिक समय वेरा पावलोव्ना के विवाह को। कितना प्रशान्त और रचनात्मक समय रहा, आनन्द और शान्ति का और बढ़िया बातों से भरा-पूरा भी।

वेरा पावलोव्ना को सबेरे-सबेरे अपने पलंग पर लेटे रहना बेहद अच्छा लगता है। मानो कोई दिवा स्वप्न देख रही हो, लेकिन पूरी तरह जाग्रत और दिन के कार्यक्रम के बारे में विचारमग्न। पड़ी भी है पलंग पर, न कोई सपना देख रही है और न ही सोच रही है या कुछ सोच ही रही है: "हुं ऽऽ कितना सुखद है और कोमल तथा सुन्दर, सबेरे-सबेरे बिस्तर में ही कुनमुनाना"; और तब तक ही जब तक कि किसी कमरे से अथवा ग़ैर आबाद कमरों में से किसी एक से आवाज़ आयी; इस तरह के अब दो कमरे हैं, उनके विवाह का चौथा वर्ष और आवाज़ उसके पति की: "वेरा, उठ गयी हो क्या?"—"हां ऽऽ प्रियतम!" यही संकेत है उसको चाय बनाने के लिए (सबेरे की चाय वही बनाता है) और उसकी पत्नी वेरा पावलोव्ना या हम यों कहें कि वह अभी जब अपने कमरे में ही अकेली होती है तो यह वेरा के लिए संकेत होता है कि अपने कपड़े पहन ले। और क्या उसे इसमें समय नहीं लगता! अथवा कपड़े पहनने में कुछ समय लगता है कि नहीं। यह तो मिनट भर में हो जाता है। बस समय तो कुल्ला-दातून में, सबेरे की लम्बी और प्यारी दिनचर्या में ही लगता है, बालों की कंघी करना, कंघी उतनी नहीं जितना कि उनसे खिलवाड़, बाल उसके लिए गर्व और प्रसन्नता का विषय हैं। कभी-कभी तो वह अपने सिंगार के प्रमुख अंग, अर्थात् ऊपर तक बटनवाले बूटों से, प्रथम श्रेणी के जूतों से खिलवाड़-सी करती है। बस यही एक उसका ख़ास शौक़ है, वर्ना तो उसका पहरावा अत्यन्त साधारण होता है।

अरे वाह! वह कमरे से बाहर आ गयी है और अपने पति को

सुप्रभात कहते हुए चुम्बन ले लिया है। "नींद बढ़िया आयी प्रियतम?" चाय पीते-पीते वह इधर-उधर की, अर्थहीन और अर्थपूर्ण दोनों ही प्रकार की गपशप में लग जाती है। यदि वेरा पावलोव्ना (नाश्ते के समय तो चलिये उसे साधारण वेरा ही बनी रहने दें), वेरा जो कुछ पी रही है उसे क्या चाय कहा जा सकता है, चाय से रंगी क्रीम नहीं, जिसमें चाय बिल्कुल नहीं के बराबर और क्रीम भरपूर है जो उसके प्याले में आधे से अधिक भरी हुई है (क्रीम उसका दूसरा शौक़ है)। यद्यपि, बढ़िया क्रीम पीटर्सबर्ग में बड़ी कठिनाई से मिलती है, तथापि वेरा बढ़िया से बढ़िया, शुद्ध और ख़ालिस क्रीम हासिल करने के लिए एड़ी चोटी एक कर देती है। उसकी इच्छा है कि किसी दिन उसकी अपनी गाय होगी और अगर काम वैसा ही चलता रहा, जैसा इन दिनों चल रहा है, तो वह दिन दूर नहीं, बस वर्ष में ही आ जायेगा। दस बज चुके हैं। प्रियतम पढ़ाने अथवा दफ़्तर (तैयार माल बनानेवाला कोई उपक्रम) के लिए रवाना हो चुका है। वेरा पावलोव्ना—अगले दिन सुबह तक अब उसका यही नाम-रूप होगा—दैनंदिन कार्य सम्पन्न करने में जुट गयी है। अब उसके पास एक ही नौकरानी है, जवान लड़की, उसे शुरू से एक-एक बात सिखानी पड़ती है और जब वह सीख जाती है तो यही क्रम फिर किसी दूसरी के लिए शुरू करना पड़ता है—कोई भी नौकरानी वेरा पावलोव्ना के यहां देर तक नहीं टिकती, हमेशा ही शादी करके चली जाती है। बस छह महीने या इतने ही समय और ठहर जाइये कि वेरा पावलोव्ना लबादे अथवा कफ़ों की बढ़िया जोड़ी पर कढ़ाई करती होंगी जो वधू की मां के रूप में पहने जायेंगे! वह तो इस बार इन्कार नहीं करेगी। ("मेमसाब, यह सब कुछ आपकी कृपा से ही तो हो रहा है, कोई और है भी तो नहीं, जिससे अर्ज़ करूं!") इस सब के कारण पढ़ाने जाने से पहले घर में काम करने के लिए बहुत-कुछ होता है (प्रति सप्ताह में दस घण्टे और अगर उसके पास समय होता भी तो वह इससे अधिक समय नहीं दे पाती) और रास्ते में वह आते व जाते दोनों ही समय कार्यशाला में झांकती है और फिर प्रियतम के साथ भोजन। और अक्सर इस मौक़े पर एक-दो अतिथि उपस्थित रहते हैं (लेकिन इससे ज़्यादा नहीं, क्योंकि दो से अधिक होने पर काफ़ी

झंझट उठानी पड़ती है, कुछ और खाना चकाना पड़ता है, ताकि सबके लिए काफ़ी हो। जब वेरा पावलोव्ना घर पर थकी-थकी पहुंचती है तो वह भोजन की तैयारी का काम नौकरानी पर ही छोड़कर, खुद अपने कमरे में आराम करती है। अन्यथा वह रसोई में पहुंचकर बिस्कुट जैसा कोई अतिरिक्त विशेष पकवान तैयार करने में जुट जाती है, जो भोजन के साथ अच्छी लगता है और क्रीम के साथ खाया जाता हो। भोजन के समय भी वेरा पावलोव्ना सब कुछ सुनना और सब कुछ बताना चाहती है, मुख्य रूप से बताना ही और इसमें कार्यशाला के ही बहुतेरे समाचार होते हैं। वह अपने प्रियतम के साथ चौथाई घंटा और रुकती है और फिर "नमस्कार" और दोनों अपने-अपने कमरे चले जाते हैं, वेरा पावलोव्ना किताब लेकर आराम से बैठ जाती है और कभी-कभी, बल्कि अक्सर और आधे समय तक, कभी घंटे और डेढ़ घंटे तक झपकी लेती है, जो कि अशोभनीय है यदि पूर्ण रूप से अभद्र नहीं, मगर क्या करें हमारी कथानायिका ऐसा करती है, रस लेती है इसमें और उसे न कोई लज्जा आती है और नहीं पश्चाताप होता है। थोड़ी-सी झपकी अथवा डेढ़-दो घंटे तक पसरे रहने, दोनों में से किसी क्रिया के बाद वह उठती है, कपड़े बदलती है और कार्यशाला जा पहुंचती है, जहां वह चाय के समय तक रहती है। चाय का समय, जो वह फिर प्रियतम के साथ ही बिताती है, गपशप का, सब कुछ बताने का होता है। आधा घंटा फिर इसी तरह व्यतीत हो जाता है और "शुभरात्रि प्रियतम" का समय और चुम्बन; फिर अपने-अपने कमरे में प्रयाण। वेरा पावलोव्ना अपनी मेज़ पर काम करने अथवा पढ़ने के लिए बैठती है, सवेरे के दो बजे तक, बीच में कभी प्यानो वादन भी कर लेती है, जो उसी के कमरे में है। पहले तो किराये का था, लेकिन अब खरीद लिया गया है। वह भी खूब दिन था, वह दिन जब उन्होंने अपना प्यानो खरीदा था। कितनी-सी बचत थी उनके पास और सौदा भी अच्छा ही रहा। पुराना प्यानो, 100 रूबल में, छोटा-सा और लगभग 70 रूबल उसे दुरुस्त कराने में तो लगे, लेकिन सुर बहुत बढ़िया निकलने लगे। कभी-कभार प्रियतम उसका गीत सुनने आता, लेकिन ऐसा कभी-कभार होता, क्योंकि वह तो अत्यन्त व्यस्त रहता था। इस प्रकार शाम काम करने, गीत-संगीत

और कुछ पठन-पाठन में बीत जाती, लेकिन अधिकांश रूप से संगीत और अध्ययन में ही। लेकिन तभी जब यह मान लें कि उनके यहां कोई मिलनेवाला न आये। युवजन—प्रियतम और वेरा से आयु में कम, जिनमें से हम सिलाई करनेवालों के कई "प्रोफ़ेसरों" को भी गिन सकते हैं,—शाम को उनके यहां आया करते हैं। लोपुख़ोव का सभी अत्यधिक सम्मान करते हैं, जिसे वे पीटर्सबर्ग के अत्यन्त बुद्धिमान लोगों में मानते हैं और शायद वे ग़लत नहीं हैं। इसीलिए वे बराबर आते भी रहते हैं, उसके साथ वार्तालाप से लाभ उठाने का दावा करते हैं न। वेरा पावलोव्ना की तो वे पूजा ही करते हैं। यहां तक कि बिना किसी अपमान की भय-भावना से वह उन्हें अपना हाथ चूमने देती है और इस तरह बर्ताव करती है, मानो वह उनसे पन्द्रह वर्ष बड़ी हो, जब वह हंसी-मज़ाक़ के मूड में नहीं होती, अर्थात् यदि सच मालूम हो तो वह अधिकांश समय इसी प्रकार होती है, तब वह उनके असीम आनन्द के लिए तरह-तरह के स्वांग रचती है और नाचती है—वाल्ज़ और घूमर—और इधर-उधर भी फिरकी की तरह घूमती है, प्यानो ख़ूब बजाती है और बहुत गपशप और क़हक़हे लगाती है गाने के बीच-बीच में काफ़ी समय। ये रंगरलियां और उल्लास उन युवजन के मन में अपनी मेज़बान के प्रति जो अगाध भक्ति-भाव और प्रशंसा-भाव है, उसे घटाते नहीं—ऐसी सम्मान-भावना जिससे बड़ी बहन को भी ईर्ष्या हो अथवा सीधी से सीधी मां को भी हमेशा नसीब नहीं होती। संगीत के प्रति उनमें पूरी निष्ठा-भावना रहती है, लेकिन फिर भी हंसी-मज़ाक़ का पुट चलता रहता है। अधिकांश समय वेरा पूरी गंभीरता से गीत गाती है या प्यानो बजाती है। जब वह प्यानो बजाती है तो श्रोता मंत्रमुग्ध, स्तब्ध हो जाते हैं। कभी-कभी अतिथि बड़ी उम्र के होते हैं। लोपुख़ोव के हमउम्र, अधिकांशतया उसके पूर्व सहपाठी अथवा उसके मित्र, दो-तीन जवान प्रोफ़ेसर, लगभग सभी अविवाहित बस मेर्त्सालोव ही इसमें विरल अपवाद है। और जब, जो बहुधा नहीं होता, लोपुख़ोव-दम्पत्ति ख़ुद कहीं और जाते हैं, तो निरपवाद रूप से वे मेर्त्सालोव-दम्पत्ति के यहां अथवा नताशा के माता-पिता के यहां जाते हैं, उदार और साधारण-से लोग; जिनके अनेक बेटे सम्मानजनक पदों पर कार्यरत हैं—सरकारी सेवा के लगभग प्रत्येक विभाग में,

ऐसे लोग जिनके समृद्ध भवन में हमारी कथानायिका को व्यापक एवं नाना प्रकार के वर्ग के समाज में प्रवेश मिल जाता है।

इस प्रकार ज़िन्दगी मुक्त है, काम और अवसर से भरपूर और सांसारिक सुखों से भी सम्पन्न: आराम करने के लिए बढ़िया गुदगुदा बिस्तर, क्रीम और बिस्कुट भी। वेरा पावलोव्ना के लिए ज़िन्दगी बढ़िया से कुछ अधिक बढ़िया है।

इस दुनिया में इससे कुछ और भी अच्छी ज़िन्दगी हो सकती है क्या? वेरा पावलोव्ना के लिए तो ऐसा प्रतीत नहीं होता।

और किसी ऐसे के लिए जो यौवन के प्रथम उन्मेष के चरण में हो, यह शायद ठीक भी है।

वर्ष बीतते रहते हैं, एक से एक बेहतर ढंग से, बशर्ते कि सब कुछ जैसा चाहिये वैसे ही गुज़रे, जैसा कि अभी वे कुछ ही लोगों के लिए गुज़रते हैं और जैसा कि एक दिन होगा, जब वे सभी के लिए इसी प्रकार बीतेंगे।

6

एक दिन, जब ग्रीष्म-ऋतु समाप्ति की ओर थी, युवतियां अपने नियमित रविवारीय सैर-सपाटे के लिए निकलीं। वर्ष के इस समय लगभग प्रत्येक अवकाश के दिन वे नाव से किसी द्वीप की सैर को निकल जातीं, अक्सर वेरा उनके साथ होती। लोपुख़ोव के भी इस असाधारण अवसर पर शामिल होने से यह मौक़ा विशेष रूप से महत्त्वपूर्ण हो गया। इस पूरे सीज़न में लोपुख़ोव के लिए यह दूसरा मौक़ा था, कि वह सैर-सपाटे में शामिल हुआ। पूरी कार्यशाला में इस समाचार से ख़ुशी की लहर दौड़ गयी। इसका तात्पर्य यही था कि वेरा पावलोव्ना और उनका सैर-सपाटा इस बार अत्यन्त रोमांचक सिद्ध होगा। जिनकी योजनायें कुछ दूसरी थीं, उन्होंने उन्हें रद्द करके मण्डली में शामिल होने का फ़ैसला किया। पहले तयशुदा चार छोटी नौकाओं में एक का इज़ाफ़ा और किया गया और जब लगा कि इतने से अर्थात् पांच से काम नहीं चलेगा, तो छठी नौका शामिल

की गयी। उनके दल में पचास अथवा इससे अधिक व्यक्ति थे। बीस से ऊपर दर्ज़िनें (कोई छह पीछे छूट गयी थीं), तीन विधवायें, दर्ज़िनों के दरजन भर बच्चे, मां, भाई और बहनें, तीन मंगेतर (एक किसी घड़ीसाज़ के यहां काम सीखनेवाला, दूसरा दुकानदार, जो तीसरे, स्कूल मास्टर से शील-स्वभाव में किसी भी रूप में कम नहीं थे), पांच अविवाहित नवयुवक थे, जो विभिन्न व्यवसायों में संलग्न थे, दो सैनिक अधिकारी और लगभग आठ विद्यार्थी थे, जिनमें कुछ आयुर्विज्ञान और कुछ ललित कलाओं के अध्ययन में रत थे। साथ की सामग्री में चार बड़े समोवार, बेकरी में पकी खाने की ढेरों चीज़ें, विशाल मात्रा में बछड़े का ठंडा मांस और दूसरी चीज़ें (युवजन की फ़ौज थी न, जो सैर-सपाटे में खूब ही सरगर्म रहेगी—और उन्हें अच्छी-खासी खुराक चाहिये होगी, यह तो मानना ही पड़ेगा), मद्य की आधा दरजन बोतलें थीं, जो कुल मिलाकर 50 व्यक्तियों के लिए, जिनमें 15 ताज़ादम नौजवान थे, अधिक नहीं थीं।

जैसी कि आशा थी, बहुत ही अच्छा दिन गुज़रा। तरह-तरह का मनोरंजन: 16 जोड़े पहले नाच में शामिल हुए, 12 दूसरे में, 18 और 20 तक जोड़े चार-जोड़े नाच में, 22 अथवा लगभग इतने ही पकड़-खेल में, अलग-अलग पेड़ों पर डाले गये तीन झूलों पर झूलने में शामिल हुए और बीच-बीच में चाय व आराम के दौर चले। पूरे आधे घंटे तक (नहीं, इससे कम, काफ़ी कम समय तक) मण्डली के आधे से अधिक लोगों ने लोपुखोव का उन दो विद्यार्थियों से वाद-विवाद सुना, जो उसकी तरुण मित्र-मण्डली के सबसे पुराने सदस्य थे और तीनों ने मिलकर एक दूसरे की असंगतता, संयम और बुर्जुआ मानसिकता की आलोचना-समीक्षा की—हर प्रकार के आरोप-प्रत्यारोप लगाये और हरेक में कुछ न कुछ विशिष्ट कमी खोजी। एक में स्वच्छन्दतावाद, लोपुखोव में मिताचार और तीसरे में संकीर्णता। निस्सन्देह, कोई भी ऐसा व्यक्ति, जो दीक्षित न हो, इस प्रकार के वाक्य-विचार प्रहारों में पांच मिनट भी नहीं टिक सकता। एक स्वच्छन्दतावादी भी डेढ़ घंटे से ज़्यादा नहीं टिक सका और भागकर नर्तन-मण्डली में शामिल हो गया, पर प्रशंसा पाये बिना नहीं। वह किसी संयमवादी पर कुपित हुआ—यदि मैं स्वयं

वहां उपस्थित होता, तो मुझ पर कुपित होता, मगर मैं वहां नहीं था—और यह जानते हुए कि उसके शिकार की उम्र काफ़ी बड़ी थी वह चिल्लाया था: "सब कुछ ग़लत समझा-जाना है आपने! अभी उस दिन ही तो एक अत्यन्त सम्माननीय व्यक्ति ने, मेधावी महिला ने मुझसे कहा था कि पच्चीस वर्ष की आयु पार कर जाने के बाद कोई भी व्यक्ति अपने सिद्धान्तों पर स्थिर नहीं रह सकता।" तभी स्वच्छन्दतावादी के दुर्भाग्य से उस सैनिक अधिकारी ने आकर कहा: "मैं उस महिला को जानता हूं। अमुक मदाम हैं वे। मैं उस समय भी मौजूद था, जब उन्होंने उक्त मत व्यक्त किया था। जैसा कि आपने कहा, वह अत्यन्त मेधावी महिला हैं लेकिन उन्होंने देवी जी को तुरंत ही याद दिलाया था कि अभी केवल आधे घंटे पहले ही उन्होंने गर्व से कहा था कि वे छब्बीस वर्ष की हैं—याद नहीं क्या कि वे हमारे साथ मिलकर कितने ज़ोरों से हंसी थीं। और अब उन चारों की हंसने की बारी थी, स्वच्छन्दतावादी वहां से मुंह छिपाकर भागते-भागते भी खिलखिला ही रहा था। सैनिक अधिकारी ने उसका स्थान ले लिया और फिर चाय के समय तक बस व्यंग्य-बाणों और क़हक़हों के गुब्बारे झूमते-झूलते रहे। मिताचारी और संकीर्ण दोनों को ही पूर्ववर्त्ती से कहीं अधिक ज़ोरदार ढंग से कटूक्तियों का शिकार बनाने के कारण सैनिक अधिकारी की ओगुस्त-कोम्तवाद* (प्रत्यक्षवाद) के समर्थक के रूप में घोर भर्त्सना की गयी। चाय के बाद सैनिक अफ़सर ने अगर मुमकिन हो सके तो कम उम्र के गिरोह में शामिल होने की उत्सुकता व्यक्त की, और कुछ कम उत्सुक लोपुखोव और संकीर्णतावादी को भी उसका अनुसरण करने के लिए विवश किया। नृत्य तो नहीं, बल्कि उद्धरणों-सूक्तियों की प्रतिस्पर्द्धा में। जब उनकी मण्डली के पुरुषों ने तेज़ दौड़, (खन्दक के पार) लम्बी कूद और कुश्ती जैसी क्रीड़ा आरंभ की, तो तीनों दार्शनिकों ने इस क्रीड़ा में पहली पंक्ति सम्भाली। सैनिक अधिकारी ने लम्बी कूद जीत ली और लोपुखोव को, जिसमें सांड जैसी शक्ति और न जाने क्या-क्या था, बुरी तरह अचकचा दिया अपनी जीत से। कुश्ती में संकीर्णतावादी की जीत के बाद उसने दूसरा स्थान

* ओगुस्त कोम्त (1798—1857)—फ़्रांसीसी दार्शनिक, सकारात्मकता का समर्थक और 1840—1860 के बीच रूस के जनतांत्रिक क्षेत्रों में लोकप्रिय इस दर्शन का प्रणेता।—सं०

प्राप्त करने की आशा की थी, लेकिन संकीर्णतावादी ने आनन-फ़ानन में जीत ली कुश्ती और दांव लगाने, उछालने और लोपुख़ोव तथा सैनिक अफ़सर दोनों को धराशायी करने में देर नहीं लगायी। दोनों में से किसी ने भी इतने प्रख्यात पहलवान की जीत पर खीझ व्यक्त नहीं की, लेकिन लोपुख़ोव को सैनिक अधिकारी से पराजित होना बहुत खल रहा था: पांच बार वे भिड़े और पांचों बार लोपुख़ोव को पछाड़ खानी पड़ी। पसीना-पसीना हो गया वह। और छठे दौर में उसने हार मान ली—वैसे दोनों ही काफ़ी थक चुके थे। फिर तीनों दार्शनिक घास पर लम्बलेट हो गये और अपने बहस-मुबाहिसे में उलझ गये। अब लोपुख़ोव प्रत्यक्षवादी की ओर झुक गया था, सैनिक अधिकारी मिताचारी की ओर तथा संकीर्णतावादी और भी अधिक संकीर्ण रवैया अपनाये रहा।

11 बजे तक वे घर की ओर रवाना हुए। वृद्ध महिलायें तथा बच्चे भी तुरन्त ही नौकाओं में सो गये। यह अच्छी बात थी कि उन्होंने पर्याप्त मात्रा में गरम कपड़े साथ ले लिये थे। जब कि अन्य लोग उत्तर-प्रत्युत्तर में बराबर उलझे रहे और छहों नौकाओं से क़हक़हे गूंजते रहे।

7

दो दिन बाद, सुबह के नाश्ते के समय, वेरा को अपने पति के चेहरे की उड़ी हुई रंगत पर टिप्पणी करनी ही पड़ी। पति ने बताया कि रात उसे ठीक से नींद नहीं आयी और पिछली शाम से ही तबीअत ढीली चल रही थी, लेकिन फिर भी हठपूर्वक यही कहता रहा कि ज़रा-सा जुकाम ही तो है, और उसे क्या पता नहीं कि वह कुश्ती और तेज़ क़दम भागने की वजह से और देर तक घास पर पड़े रहने के कारण ही ऐसा हुआ है। अपनी बेवक़ूफी को कोसते हुए उसने वेरा को विश्वास दिलाया कि चिन्ता की कोई बात नहीं और ऐसा कह अपने दैनन्दिन कामकाज पर आमादा हो गया। दोपहर के बाद की चाय के समय तक उसे यह विश्वास हो चुका था कि वह पूरी तरह ठीक हो गया है। अलबत्ता अगली सुबह उसने यह ज़रूर एलान किया कि वह कुछ समय घर पर ही आराम करे तो अच्छा रहेगा। वेरा,

जिसे कल कुछ चिन्ता उत्पन्न हुई थी, अब बिल्कुल ही घबड़ा गयी और डाक्टर को बुलाने की ज़िद्द करने लगी। "क्या बात करती हो वेरा, इस घर में तो मैं ख़ुद डाक्टर हूं—ज़रूरत हो तो मैं ख़ुद अपना इलाज कर सकता हूं। अलबत्ता, अभी इसकी ज़रूरत है नहीं। लेकिन उससे वेरा पर कोई असर नहीं पड़ा। वह अड़ी रही। किरसानोव के नाम अपने पत्र में लोपुख़ोव ने लिखा कि लक्षण नगण्य-से हैं और उसने किरसानोव को आने के लिए इसीलिए लिखा है ताकि पत्नी ख़ुश रहे।

इसी कारण किरसानोव ने कोई जल्दबाजी नहीं की। अस्पताल में डिनर तक काम करता रहा। और जब वह अन्तत: वहां अर्थात् लोपुख़ोव के यहां पहुंचा तो छह बजे के बाद का समय रहा होगा।

"मेरा विचार है, अलेक्सान्दर कि मैंने तुम्हें बुला भेजकर आख़िर ठीक ही किया। इस समय तो मैं किसी क़िस्म का ख़तरा महसूस नहीं कर रहा, लेकिन फेफड़ों में सूजन तो है ही। निश्चय ही मैं ख़ुद इसका इलाज कर सकता हूं लेकिन फिर भी तुम मुआयना कर लो तो अच्छा ही होगा। सच तो यह कि यदि मैं अपनी अन्तरात्मा पर कोई बोझ नहीं रखना चाहता तो यही करना होगा। अब मैं तुम जैसा बिना किसी ज़िम्मेदारीवाला अविवाहित तो नहीं रह गया हूं, न।"

उसने लोपुख़ोव की पसलियां बजायीं, देर तक और भली-भांति। और किरसानोव ने रोगग्रस्त छाती पर अपना कान रखा और दोनों ने ही लोपुख़ोव द्वारा किये गये निदान की पुष्टि की। न तो कोई ख़तरा था और न ही हो सकता था, तथापि फेफड़े बुरी तरह सूजे हुए थे। हिदायत दी गयी कि डेढ़ हफ़्ते तक बिस्तर पकड़े रहा जाय। लोपुख़ोव ने लापरवाही की थी, गोकि अभी रोग असाध्य नहीं हो पाया था।

किरसानोव को वेरा को आश्वस्त करने में पर्याप्त समय लगा। अन्तत: वह आश्वस्त हो गयी, उसने झूठ नहीं कहा कुछ कि निमोनिया का जो रूप है वह ख़तरनाक तो क्या, गंभीर भी नहीं लगता, लेकिन ऊपरी लक्षण भ्रमोत्पादक भी हो सकते हैं, हैं न?

किरसानोव दिन में दो बार आने लगा। रोगी और चिकित्सक इस पर सहमत थे कि न तो कोई उलझन है और नहीं ख़तरे का कोई इमकान ही दिखायी पड़ता है। चौथे दिन उसने वेरा से कहा:

"द्मीत्री चंगा हो रहा है। अगले तीन या चार दिन कुछ तो तकलीफ़ रहेगी लेकिन कल की तुलना में अधिक नहीं। इसके बाद उसकी स्थिति

में सुधार होता जायेगा। अब तो मुझे चिन्ता है आपकी, वेरा पावलोव्ना। यह जो आप बिल्कुल सोती नहीं हैं, इससे काम नहीं चलेगा। लोपुख़ोव के लिए यह ज़रूरी नहीं कि कोई उसके पास हर दम बैठा रहे। सच तो यह है कि उसे मेरी भी ज़रूरत नहीं। आप अपने स्वास्थ्य से खिलवाड़ कर रही हैं। और बिल्कुल ही बेकार-बेसूद। आपकी शक्ति वैसे ही बहुत क्षीण हो चुकी है।"

उसने हर तरह के तर्क दिये और जमा-जमाकर बातें कहीं, लेकिन वेरा ने सब कुछ अनसुना कर दिया। यह "असंभव" है और "सवाल ही नहीं उठता"; "खुश होती अगर ऐसा कर पाती, लेकिन कर नहीं सकती ऐसा"—अपने पति के सिरहाने को छोड़कर रात में नींद में डूब नहीं सकती, बस। पूरी बात उसके इस कथन के साथ समाप्त हो गयी: "जो कुछ आपने कहा, वही सब कुछ मैं उनसे भी सुन चुकी हूं, एक बार नहीं, अनेक बार। और आप तो जानते ही हैं कि अगर मैं उनकी बात नहीं सुनती, तो फिर आपकी तो कैसे सुन सकती हूं।"

इसके बाद तो फिर कहने को कुछ बचता ही नहीं था। किरसानोव अपना सिर हिलाते चला गया।

उस दिन रात कोई दस बजे लौटने पर वह डेढ़ घंटे तक वेरा के साथ लोपुख़ोव के पास बैठने के बाद बोला: "जाइये, अब तो कुछ देर सो लीजिये, वेरा पावलोव्ना। हम दोनों ही आप से अनुनय करते हैं। मैं रात भर यहीं रहूंगा।"

वेरा पावलोव्ना ने अपना सिर झुका लिया: उसे कुछ या कुछ से अधिक यह यक़ीन था कि रात भर बैठने की ज़रूरत नहीं। और अब वह इस व्यस्त व्यक्ति का समय बरबाद करनेवाली थी। कोई करे भी तो क्या करे, शायद उसे ऐसा करने की ज़रूरत भी नहीं?... लेकिन कहे कौन? नहीं, वह अपने "प्रियतम" को छोड़कर हरगिज़ नहीं जा सकती, और ऐसे में जब कोई यह नहीं कह सकता कि होगा क्या। हो सकता है कि वह सहसा जाग जाय, प्यास से या चाय के प्याले की तलब के लिए और चूंकि वह बहुत ही ख़्याल रखनेवाला है, इसलिए उसे जगाने की बात सपने में भी नहीं सोचेगा—नहीं, वह वहीं बैठी रहेगी। किरसानोव के ठहरने की ज़रूरत नहीं, वह उसे नहीं ठहरने देगी। वह कहीं नहीं जायेगी, उसने कहा, क्योंकि वह कोई थकी नहीं है और दिन में कई बार काफ़ी झपकियां ले चुकी है।

"तो फिर आप मेरे अनुरोध को अन्यथा न लें।"

उसने वेरा की बांह पकड़ी और बस कमरे से बाहर ठेल ही तो दिया।

रोगी बोला: "विश्वास करो अलेक्सान्दर, मुझे बहुत बुरा लग रहा है कि तुम्हें ऐसे रोगी के पास बैठने का अनर्गल काम सौंपा जा रहा है, जिसकी इसकी बिल्कुल ही आवश्यकता नहीं। ताहम, मैं अत्यन्त कृतज्ञ हूं। मैं वेरा को अपनी तीमारदारी के लिए नर्स रखने के लिए भी राज़ी न कर सका। वह मुझे अकेला छोड़ते हुए डरती है। वह किसी पर भी विश्वास करने के लिए तैयार नहीं मेरे मामले में।"

"सो तो ठीक, लेकिन अगर मैंने ख़ुद ही न देख लिया होता, तो मैंने सचमुच ही उसे यहां से बाहर न किया होता। अब वह ज़रा निश्चिंत होकर सोयेगी। तुम्हारी देखभाल के लिए डाक्टर को छोड़कर, तुम्हारे बहुत ही अच्छे मित्र को छोड़कर।"

और ठीक भी थी यह बात। वेरा बिस्तर तक पहुंचते ही उस पर लुढ़क गयी और नींद की गोद में समा गयी। वैसे तो बिना नींद गुज़ारी तीन रातों का तो कोई मतलब नहीं होता, और इसी प्रकार चिन्ता का भी—नगण्य तथ्य ही तो। लेकिन सब मिला लें और तीन दिन की कुल भाग-दौड़, मुसीबत के ही दिन थे। अगर इसी प्रकार के दो या तीन दिन और बीतते तो उसकी दशा तो अपने पति से भी अधिक बिगड़ जाती।

किरसानोव ने और तीन दिनों और रातों को ड्यूटी दी; कोई ख़ास परेशानी नहीं हुई उसे, क्योंकि स्वाभाविक ही वह सो लेता था और हर बार इस बात की सावधानी बरती कि उसने दरवाज़ा बन्द कर लिया, वह उस बेचारी महिला को इस प्रकार की घोर निश्चिन्तता के दृश्य से वंचित करना चाहता था। वेरा को यह सन्देह तो होता कि वह अपनी निगरानी के दौरान खर्राटे भर रहा है, तथापि वह आराम सहज करती रही बस यही सोचते-सोचते कि डर की कोई बात नहीं, क्योंकि डाक्टर को इतना पता तो होता ही है कि कब सोना चाहिये और कब नहीं। उसे तो यही शर्म लगती कि वह किरसानोव को कष्ट से बचाने के लिए समय रहते संभल नहीं पायी। उसने दृढ़तापूर्वक कहा कि अब वह किरसानोव के घर में रहे बिना भी सो सकती है, लेकिन वह कुछ भी सुनने के लिए तैयार नहीं था: "श्रीमती जी, मैं आपकी ग़लती के ही कारण यहां हूं, अब आपको उसका दण्ड तो भुगतना ही पड़ेगा। मुझे आप पर भरोसा नहीं।"

चार दिन बाद उसने जान लिया कि रोगी लगभग चंगा हो गया है। उस रात जब वे ताश खेलने बैठे तब तो पक्का प्रमाण मिल गया। इसे तो

झुठलाना मुमकिन था ही नहीं। लोपुख़ोव उठकर पीठ के सहारे बैठा था और बिल्कुल ही भला-चंगा लग रहा था। किरसानोव ने समझ लिया कि अब उसको ऊंघते-ऊंघते निगरानी करने की ज़रूरत नहीं है। और ऐसा उसने प्रकट भी कर दिया।

"अलेक्सान्दर, आप मेरी ओर से लापरवाही क्यों बरत रहे हैं? आप द्मीत्री के साथ अभी भी बहुत घनिष्ठ हैं। ये आपको बहुधा मिलने जाते रहे हैं, लेकिन इस बीमारी से, कम से कम छह महीने पहले तो मैंने कभी आप को यहां आते देखा नहीं। न जाने कब से ऐसा ही चल रहा है। क्या आपको याद नहीं कि हम शुरू-शुरू में कितने अच्छे मित्र थे?"

"बात ऐसी है, वेरा पावलोव्ना, लोग बदल जाते हैं और मैं अगर मैं न भी कहूं तो भी मैं बहुत ही अध्यवसाय से काम करता रहा हूं। मैं किसी से भी नहीं मिलता—न तो समय है और न ही मन। अस्पताल और अकादमी में नौ से पांच तक आदमी इतना उलझा रहता है कि उसके पास सिर्फ़ इतना ही समय होता है कि वह वर्दी उतारकर चोग़ा पहन सके। मित्रता बड़ी अच्छी चीज़ है, लेकिन क्षमा करें अपने ही बिस्तर पर पड़े, मुंह में बढ़िया सिगार दबाये आनंद उठाने से तो मित्रता की तुलना नहीं की जा सकती।"

सच तो यह है कि वह दो वर्ष से भी ऊपर समय से मिलने नहीं आया था। पाठकों ने भी उसे लोपुख़ोव के नियमित अतिथियों में नहीं देखा होगा, सबसे कम आनेवालों में भी वह सबसे कम ही आनेवालों में था।

8

अनुभूतिक्षम पाठक—मैं केवल पुरुष वर्ग को ही सम्बोधित कर रहा हूं; महिलायें तो अधिक बुद्धिमती होती हैं कि वे तो अपनी कुशाग्रता से समझ ही लेंगी; मैं हमेशा-हमेशा के लिए यह भली-भांति समझा देना चाहता हूं कि मैं उनको और अपने पुरुष पाठकों में से उनको जिनकी संख्या पर्याप्त है और जो मन्दबुद्धि नहीं हैं, सम्बोधित नहीं कर रहा, बल्कि अधिकांश पढ़ी-लिखी जनता, जिनमें लेखक और कुछ न कुछ लिखते रहनेवाले शामिल हैं, सभी जो अनुभूतिक्षम हैं, जिनके साथ बातचीत में मैंने हमेशा ही प्रसन्नता महसूस

की है—तो हां, अनुभूतिक्षम पाठक निस्सन्देह यह कहेगा कि उसने आनेवाले परिवर्तन भांप लिये हैं, हमारी कथा-नायिका के जीवन में प्रविष्ट होनेवाला नया प्रेम और उसमें किरसानोव जो भूमिका अदा करेगा। उसे यह भी तथ्य पता चल गया होगा: किसी न किसी प्रकार कि किरसानोव तो न जाने कब से प्रेम में पड़ चुका था और इसी कारण तो वह लोपुख़ोव के घर आने से कतराता रहा था। अरे, क्या हम इतने अनुभूतिक्षम हैं! एकदम चिल्ला पड़ते हैं: "मैं पहले ही भांप गया था" और इसके लिए मन ही मन अपने को शाबाशी भी दे लेते हैं। मैं सचमुच ही अभिभूत हो उठा हूं, अनुभूतिक्षम पाठक।

तो, वेरा के जीवन में नये पुरुष का प्रवेश हो गया है। यदि हम पहले ही उसका वर्णन न कर चुके होते तो अब करते। लोपुख़ोव का परिचय देते समय मैंने इन दो घनिष्ठ मित्रों में कुछ भी भेद कर पाने में कठिनाई महसूस की थी और सोच ही नहीं पाया था कि एक के बारे में कौन-सी ऐसी बात कहूं जो दूसरे के बारे में न कह पाऊं। निस्सन्देह अनुभूतिक्षम पाठक किरसानोव के चरित्र के बारे में निम्न विचारों से जो कुछ भी ग्रहण करेगा, वे उन्हीं का पुनर्वर्णन ही होगा जो लोपुख़ोव के लिए कहे जा चुके हैं। लोपुख़ोव धनाढ्य नागरिक अर्थात् प्रतिदिन मांस-सूप पीनेवाले वर्ग से सम्बन्धित व्यक्ति का बेटा था जबकि किरसानोव ग्रामीण पंजीयक का बेटा था, जिसके सूप में बहुधा मांस का पुट नहीं होता था और इसका प्रतिकूल भी उतना ही सच था कि मांस कभी-कभी होता था। बाल्यावस्था से, बल्कि बिल्कुल छुटपन से लोपुख़ोव ने जीवन-यापन के लिए काम किया। बारह वर्ष की आयु में किरसानोव दस्तावेज़ों की नक़ल उतारकर अपने पिता की मदद करने लगा था और स्कूल की चौथी कक्षा में उसने ट्यूशन करने का काम भी ओढ़ लिया था। दोनों ने ही अध्यवसाय द्वारा अपना जीवन गढ़ा था। लोपुख़ोव कैसा व्यक्ति था? ऐसा, जिसने स्कूल में फ़्रांसीसी नहीं सीखी और जर्मन भाषा की रूप-रटन्त नहीं की और जिसने अकादमी में पहुंचकर शीघ्र ही यह समझ लिया था कि खाली रूसी भाषा के ज्ञान के बल पर कोई विज्ञान में अधिक नहीं चल सकता। उसने फ़्रांसीसी शब्दकोष ख़रीदा और जो भी फ़्रांसीसी किताबें पहले हाथ लगीं, उन्हें पढ़ा। इनमें 'तेलेमाक' (फ़्रांसीसी लेखक फ़्रांस्वा द फ़ेनेलों का उपन्यास),

पीटर्सबर्ग में प्रकाशित पत्रिका "रेवू अंत्रांगेर" के कई अंक थे। कुछ बहुत आकर्षक पाठ्य-सामग्री तो नहीं, तथापि उसने पढ़ा इन्हें। आप उसे उत्सुक पाठक मान सकते हैं। उसने क़सम खायी कि जब तक वह फ़्रांसीसी भाषा धारा-प्रवाह नहीं पढ़ सकेगा, तब तक रूसी भाषा की किताब के पन्ने भी नहीं पलटेगा और शीघ्र ही वह ऐसा करने भी लगा। जर्मन सीखने के लिए उसने दूसरा ही तरीक़ा अपनाया। जर्मनों से भरे फ़्लैट में अपने रहने के लिए जगह ढूंढ़ी और बिल्कुल ही भयंकर डेरा, उबा देनेवाले जर्मन, अकादमी पहुंचने के लिए लम्बा रास्ता तय करना पड़ता आदि आदि, लेकिन अन्त में उसने भाषा सीख ही ली। किरसानोव का क़िस्सा कुछ दूसरा ही रहा। उसने जर्मन सीखी, जैसे लोपुख़ोव ने फ़्रांसीसी, किसी भी संग्रह को पढ़कर, कोष की सहायता लेकर जबकि फ़्रांसीसी उसने एक ही किताब से सीखी, बिना कोष की मदद से। उस बहुत मशहूर किताब का नाम था 'द न्यू टेस्टामेंट'। उसे जेनेवा में प्रकाशित अनुवाद मिल गया। इस पुस्तक को उसने आठ बार पढ़ा और नवीं बार पढ़ने पर बिल्कुल समझ गया कि अब उसे फ़्रांसीसी भाषा आ गयी है। लोपुख़ोव किस तरह का व्यक्ति था? ऐसा कि एक बार वह कामेन्नी प्रोस्पेक्ट पर चल रहा था कि (50 कोपेक की ट्यूशन पढ़ाकर लौटते हुए कोई दो मील का रास्ता था) उसकी टहलते हुए स्थूलकाय एक सज्जन से टक्कर हो गयी, समझ लीजिये आप यह कि उसने यह नियम-सा बना लिया था कि वह महिला के सिवा और किसी के लिए भी अपनी लीक से पहले नहीं हटेगा। दोनों के कंधे भिड़ गये। स्थूलकाय सज्जन ने कुछ मुड़कर कहने के लिए मुंह खोला: "बदतमीज, जाहिल..." और वह अपने इस मूल्यांकन को उगल ही चुके होते अगर लोपुख़ोव ने मुड़कर उसे गरेबान से पकड़ न लिया होता और सावधानी से, अत्यन्त सावधानी से उसे नाली में लिटा न दिया होता और चौकस खड़े हुए यह बोला: "हिलना-जुलना नहीं पाजी, वर्ना घसीटकर वहां डाल दूंगा जहां कीचड़ और भी गहरी है।" उधर से गुज़रनेवाले दो कामगार तो बड़े प्रशंसा भाव से देख रहे थे, लेकिन कोई सरकारी नौकर कुछ नाख़ुश-सा दीखा, फिर भी फ़ीकी हंसी हंस दिया। गुज़रनेवाली गाड़ियों में से किसी ने भी नज़र तक न डाली क्योंकि उतने नीचे

तक कोई देख भी कैसे सकता था। अन्ततः, लोपुख़ोव ने अपने शिकार को हाथ पकड़ कर उठाया, गरेबान से नहीं, उसे पैरों पर खड़ा किया और फिर सड़क पर ठेल कर कहा: "अरे रे, श्रीमान, कैसे गिर पड़े आप? चोट तो नहीं लगी कहीं आप को? आपके कपड़े झाड़-पोंछ दूं?" तभी एक और कामगार आ धमका, दो धनाढ्य भी रंगस्थल पर पधारे, झाड़-पोंछ के बाद दोनों ही अपनी-अपनी राह लगे। किरसानोव की बात कुछ अलग ही है। पर्याप्त महत्त्वपूर्ण और जन-परिजनवाली संभ्रान्त महिला ने अपने बीस वर्ष पूर्व मृत स्वतंत्र विचारवाले पति द्वारा विरासत में छोड़े गये पुस्तकालय की पुस्तक-सूची तैयार करने की बात सोची। इतने अन्तराल के बाद आख़िर क्यों, यह कोई भी नहीं सोच पाया। किरसानोव 80 रूबल में यह काम करने के लिए उपलब्ध था और वह छह हफ़्ते इस काम में लगा चुका था कि उस संभ्रान्त महिला ने सहसा यह उचित समझा कि इस परियोजना का परित्याग कर दिया जाय। वह पुस्तकालय में पहुंची और कह डाला: "आप काम बन्द कर दें अब। मैंने अपना मन बदल दिया है। और यह है आपको यहां आकर कष्ट करने के लिए।" "यह" 10 रूबल की राशि थी। "योर... (उसने उन देवी जी को नाम-सम्मान के साथ सम्बोधित करते हुए कहा) मैंने 17 में से 10 अल्मारियों की पुस्तकों की सूची बनाने का काम तो समाप्त भी कर लिया है।"—"तो आपका मतलब यह है कि मैं आपको कम रक़म दे रही हूं काम की? निकोलस, इन महाशय का इसी समय से हिसाब साफ़ कर दो।" तत्काल ही निकोलस नमूदार हो गया। "तुमने हिम्मत कैसे की मदाम से ज़बान लड़ाने की?"—"पहले पूरी बात सुनो और तब कुछ मुंह खोलो, शोहदे।"—शब्दों का चयन कितना अशिष्ट था। निकोलस कम से कम पांच बरस बड़ा था। वह चिल्लाया: "कोई है?"—"अभी बताता हूं तुझे कि तेरे आदमियों का और तेरा क्या होगा!" पलक झपकने की ही देर में महिला तो चीख़कर बेहोश हो गयी और किरसानोव के सीधे हाथ ने बुरी तरह से निकोलस के दोनों हाथों को पीछे की ओर जकड़ लिया। और बायें हाथ से आगे से उसकी गर्दन दबा ली; फिर बोला: "देख, मैं कितनी आसानी से तेरी गर्दन मरोड़के रख सकता हूं, शोहदे?" और यह कहकर गर्दन को दबाया

था। निकोलस समझ गया कि यह आसान काम है, फिर उसे लगा कि जकड़ कुछ कम हुई है, लेकिन बस इतनी ही कि वह दोबारा सांस ले सकता था। अब किरसानोव उन पहलवान लोगों की ओर मुड़ा, जो दरवाज़े पर आकर जमा हो गये थे: "वहीं रुक जाओ, वर्ना में इसे ख़त्म कर दूंगा। हटो, मुझे निकलने दो।" तत्क्षण ही इसका प्रभाव उन सभी पर दृष्टिगोचर हो गया क्योंकि निकोलस भी अपने सिर और ज़बान से यही कुछ संकेत कर सका: "सच कहते हैं ये महाशय", और महाशय ने कहा: "भाईजान", तात्पर्य निकोलस से ही था, "अब आप मुझे दरवाज़े तक छोड़ दें," और दोनों आगे बढ़े, उसी प्रकार गिरफ़्तार, गलियारे में होकर सीढ़ियों द्वारा नीचे, पहलवान दूर-दूर से कनखियों में ही प्रशंसा व्यक्त कर रहे थे। सबसे निचली सीढ़ी पर पहुंचकर उसने निकोलस की गर्दन छोड़ दी। निकोलस ऊपर की ओर तथा वह स्वयं निकट की दुकान की ओर चल पड़ा, ताकि वह नयी टोपी ख़रीद ले, क्योंकि पुरानी तो धौल-धक्के में, दांव लगाने के फेर में निकोलस के पास ही छूट गयी थी।

अब मैं आप से कहता हूं कि इनमें से लाक्षणिक विशिष्टतायें चुनें। सभी असाधारण लक्षण किसी विशेष व्यक्ति के नहीं बल्कि टाइप के हैं और ऐसे टाइप के, जो उस किसी व्यक्ति से भिन्न है, जो आपको कभी कहीं भी मिला हो। अरे मृदु एवं अनुभूतिक्षम पाठक, जो भी कुछ वर्तमान समरूपता है वह उसमें सन्निविष्ट प्रत्येक स्वभावगत विलक्षणता को अवगुंठित कर देती है। ऐसा है यह मानो चीनी लोगों की भीड़ में हम मुट्ठी भर यूरोपियनों को उनमें मौजूद भिन्नता को सराहने में असफल रहकर ढूंढ़ नहीं पायेंगे। सभी को "लालबालोंवाला धृष्ट और शिष्टाचार से बेख़बर" ही समझा जाता है। उनकी दृष्टि में फ़्रांसीसी उतना ही तीखा है, जितना कि उनका अंग्रेज़ भाई। और वे सही हैं: जहां तक उनका सम्बन्ध है, सभी यूरोपियन उनके लिए एक जैसे हैं, व्यक्ति विशेष नहीं बल्कि अखण्ड टाइप के प्रतिनिधि मात्र, जो सभी तिलचट्टा अथवा जूं नहीं खाते, जो प्याज़ की तरह इंसानों को सामूहिक रूप से काटते नहीं, जो व्यक्तिगत रूप से चावल की शराब के स्थान पर वोद्का अथवा अंगूरों की शराब पीते हैं और प्राच्य देशों में प्रचलित एक बात करते

तो हैं, लेकिन वह भी आधे रूप में ही, चाय पीते हैं और उसमें चीनी घोलते हैं, जबकि चीनी की कोई ज़रूरत नहीं होती। किरसानोव-लोपुख़ोव टाइप के लोग भी बाहर से उतने ही अखण्डित लगते हैं। दोनों मित्र साहस, दृढ़ता और सच्चाईवाले पुरुष हैं। दोनों ही किसी चीज़ को पकड़कर उसे दृढ़तापूर्वक थामे रह सकते हैं, इतनी दृढ़ता से कि उसके लिए कुछ भी कर सकते हैं और अपरिवर्तनीय रूप से यह इस टाइप का एक पक्ष है और दूसरा पक्ष है इतनी स्पष्ट न्यायनिष्ठता कि आपको यह पूछने की बात सूझेगी ही नहीं कि "क्या मैं इस व्यक्ति पर हर परिस्थिति में भरोसा कर सकता हूं?" यह तो सत्य की तरह स्पष्ट है कि जब वह सांस लेता है तो उसका सीना भी फूलता और सिकुड़ता है और जब तक उसके उदात्त सीने में यह धड़कन है तब उसमें ऐसा सुरक्षित एवं स्थिर स्नेहिल हृदय होगा जिस पर आप अपना थका हुआ सिर टिका सकें। ये विशिष्ट लक्षण इतने मुखर हैं कि इनसे सभी व्यक्तिश: भिन्नताओं का अस्तित्व ही नहीं रहता।

इस टाइप के लोग हमारे साथ बहुत अधिक देर से नहीं हैं। अभी हाल तक केवल अग्रदूत तो थे, विरल अपवाद जो अपने को अलग-थलग-से, अशक्त-अशक्त महसूस करते थे और इस कारण निष्क्रिय निराश अथवा उत्तेजित होते अथवा रोमानी और काल्पनिकता के रंग में डूब जाते अर्थात् दूसरे शब्दों में इस टाइप की मुख्य विशिष्टता उनमें नहीं हो सकती थी—इसकी सुशान्त व्यावहारिकता, इसकी निश्छल और सुविचारित कार्यकुशलता और सक्रिय विवेक उनमें नहीं होते। यद्यपि प्रकृति तो उनकी ऐसी ही थी, लेकिन वे इस टाइप के लिए अविकसित ही थे, जिसकी नवीनता को नये सिरे से प्रतिष्ठित करना आवश्यक है। मेरे ज़माने में ऐसा नहीं था और मैं इतना बूढ़ा नहीं, बल्कि कहूं कि बिल्कुल बूढ़ा नहीं। मैं इस तरह का बिल्कुल नहीं निकल सकता था—मैं तो बिल्कुल ही दूसरे युग का बच्चा हूं और इसी कारण, क्योंकि मैं उनमें से एक नहीं हूं, इसलिए मैं उनके गुण खुल्लमखुल्ला गा सकता हूं। दुर्भाग्यवश, यह कहना आत्मश्लाघा नहीं कि ये प्रशंसनीय, अत्युत्तम लोग हैं।

बहुत समय से यह टाइप हमारे बीच नहीं रही है, फिर भी यह तेज़ी से बढ़ रही है। यह टाइप—इसका वर्तमान प्रतीक चिन्ह—मैं

अत्यन्त साहस के साथ यह बात कह सकता हूं—तभी हम लोगों से विदा होगा, जब कि इसका दौर समाप्त हो जायेगा। अभी तरुण है और इसका भाग्य तरुणाई में ही काल-कवलित हो जाना है। छह वर्ष पहले किसी ने भी इसके बारे में कुछ नहीं सुना था, तीन वर्ष पहले इसका तिरस्कार किया जाता था और आज... लेकिन आज इसे क्या समझा जाता है, इसे बताने की ज़रूरत नहीं, क्योंकि आनेवाले कुछ, जी हां कुछ ही वर्षों में इससे "हमें बचाओ!" का आह्वान किया जायेगा और हम सब पर शासन करने के लिए कहा जायेगा। इस दौर के कुछ वर्ष अथवा शायद कुछ महीनों में इसको कोसा जायेगा, फटकारा जायेगा, गालियां दी जायेंगी और अपमान किया जायेगा। इसलिए, मेरे मित्रो, फुंकारो, गालियां बरसाओ, उन्हें मुंह काला करके, दरवाज़े से बाहर धकेल दो। बस उनसे उपयोगी सिद्ध होने की ही तो मांग की गयी थी और वे अभिशंसित और अपमानित, गर्वित किन्तु निरहंकार और जैसे वे थे वैसे ही कठोर और भले, चले जायेंगे। अपने पीछे किसी को छोड़ेंगे नहीं क्या वे? नहीं। तो फिर उनके बिना हम कैसे रहेंगे-जियेंगे? ख़राब ढंग से। लेकिन पहले की अपेक्षा बेहतर ढंग से। वर्ष बीतने के साथ लोग यह कहने लगेंगे कि "उन्होंने अपने पीछे बेहतर दुनिया छोड़ी, लेकिन फिर भी थी यह ख़राब दुनिया ही"। और यह इसका चिन्ह होगा कि समय आ गया है कि वही टाइप फिर उभरे और उभरेगा भी, इसकी संख्या अत्यधिक बढ़ जायेगी, इसका परिप्रेक्ष्य सुधरा हुआ होगा, क्योंकि अच्छे लोग ज़्यादा होंगे और बेहतर अच्छे लोग भी। इतिहास अपने को नये तरीक़े से दोहरायेगा। और यह तब तक जारी रहेगा, जब तक कि फिर यह न कहा जाय, "अब कम से कम ज़िन्दगी अच्छी है", इस समय तक कोई अलग टाइप नहीं होगा, बल्कि सभी इसमें शामिल होंगे। और यह सोच-सोचकर विस्मय हुआ करेगा कि कभी वे अपवाद थे, सार्वत्रिक नियम नहीं।

9

जैसे कि चीनियों की दृष्टि से यूरोपियन केवल एक जैसे और एक ही प्रकार से कार्य करनेवाले दीखते हैं, लेकिन वास्तव में उनमें चीनियों की तुलना में कहीं अधिक भिन्नता होती है, इसी प्रकार इस ऊपर से समान दिखनेवाले समूह में भी कहीं अधिक भिन्न व्यक्तित्व है, संख्या और विशेषता की दृष्टि से अथवा किसी भी और सभी अन्य प्रकार के व्यक्तियों में उपलब्ध भिन्नताओं की अतिरंजना की दृष्टि से।

यहां हमें सभी संभव प्रकार की विविधता दृष्टिगोचर होती है: विलासी और संन्यासी पुरुष और मृदु, सभी संभव प्रकार की मानवीय दुर्बलता और सबलता से सम्पन्न। तथापि, जिस प्रकार चीनी व्यक्ति के समक्ष निर्दयतम यूरोपियन दयालु होता है, अत्यन्त कायर वीर और अत्यन्त लम्पट मूर्तिमान आदर्श होता है, उनमें से अत्यन्त तपस्वी सोचता है कि इंसान को उससे कहीं अधिक सुख-सुविधा चाहिये, जितने का उपभोग समूह के बाहर के लोग करते हैं, जबकि उनमें से सर्वाधिक विलासी सदस्य समूह के बाहर किसी नैतिकतावादी द्वारा स्थापित नियमों से कहीं अधिक कठोर नियम अपने लिए निर्धारित करता है। वे अपने ही दृष्टिकोण से विषयों की नैतिकता, विलासिता समेत सांसारिक सुख-सुविधा का लेखा-जोखा लेते हैं, उनका अपना विशिष्ट दृष्टिकोण सभी मानते और व्यवहार में लाते हैं नैतिकता की, सुख-सुविधा की तथा अन्य पहचान के लिए—वे इसे अभिन्न मानते हैं। लेकिन वहां तक, जहां तक कि चीनी संकल्पनाओं का सम्बन्ध है। अपनी पांत में तो वे उतना मत वैभिन्य प्रदर्शित करते हैं, जितना कि उनका मिज़ाज होता है। पर इन भिन्नताओं और भेदों को कैसे पहचानें?

कभी भी चीनियों के साथ नहीं बल्कि आपस में भेद प्रकट होते हैं। इसी प्रकार, ये नये क़िस्म के लोग भी, जब आपस में, एक-दूसरे से व्यवहार करते हैं, तो प्रचुर आन्तरिक मतभेद प्रदर्शित करते हैं। हम इनमें से दो से तो परिचित हो ही चुके हैं, वेरा और लोपुखोव से और उनके आपसी व्यवहार को भी देख-परख चुके हैं। अब तीसरा प्रविष्ट हो चुका है। आइये देखें कि अन्य दो की तुलना

19—1127

में इसमें क्या भिन्नता दिखायी पड़ती है। वेरा के सामने अब लोपुख़ोव और किरसानोव हैं। पहले कभी उसके सामने विकल्प उठा हीं कब था।

10

हमें किरसानोव की शक्ल-सूरत का कुछ वर्णन अवश्य करना चाहिये।

वैसा ही जैसा कि लोपुख़ोव है, सुपुष्ट और सुन्दर। दोनों में कौन अधिक सुन्दर है, इस बारे में मत अलग-अलग हैं। लोपुख़ोव का रंग दूसरे से अच्छा था, कत्थई बाल, दमकती-चमकती गहरी भूरी आंखें, जो श्याम भी कहीं जा सकती हैं, बाज़ जैसी नासिका, मोटे अधर और कुछ-कुछ अण्डाकार चेहरा। इसके विपरीत किरसानोव का रंग गेहुआं, नैन गहरे नीले, सीधी-सपाट नासिका, मुख छोटा, चेहरा लम्बोतरा और अत्यधिक सफ़ेद। दोनों ही काफ़ी लम्बे और छरहरे। लोपुख़ोव के कंधे अपेक्षाकृत चौड़े और किरसानोव का क़द कुछ ऊंचा था।

ज़ाहिरा तो किरसानोव ठाठ से रहता था। उसे प्रोफ़ेसरी मिल चुकी थी। संकाय के अधिकांश लोग उसके निर्वाचन के विरुद्ध थे और अगर किसी प्रकार संभव हो सकता तो उसको डाक्टरी भी नहीं प्रदान करते। उसके पूर्व प्रोफ़ेसरों और सदा संग रहनेवाले मित्रों में अनेक युवक और अधेड़ सज्जन भी अनेक प्रकरण-प्रचारित करके धारा-प्रवाह विरोध का डंका पीट रहे थे: बर्लिन के किसी फ़िर्ख़ोव* के नाम को लेकर, पेरिस निवासी क्लॉद बर्नार** तथा न जाने और कितने विद्वान लोगों के नामों को लेकर, जिनका उल्लेख कर पाना असंभव है, इन सबको ही वे चिकित्सा के क्षेत्र में स्वनामधन्य बताते थे। अतिरंजना और अतिशयोक्ति की सीमा लांघनेवाले नाम, जबकि हम

* रूडोल्फ़ फ़िर्ख़ोव (विख़रोव)—(1821—1902)—जर्मन भौतिक शास्त्री, सेल सिद्धांत का रचयिता, चेर्नीशेव्स्की द्वारा अत्यधिक सम्मानित।—सं०

** क्लॉद बर्नार (1813—1878)—फ़्रांसीसी शरीरविज्ञानी, प्रायोगिक मनोविज्ञान का संस्थापक।—सं०

सभी जानते हैं कि असली अग्रगण्य नाम तो बुरहाव और हुफ़ेलांड थे, और हार्वे भी कुछ कम विद्वान नहीं था, जिसने रक्तवहतंत्र की खोज की थी और जेनर*, जो हमें टीका लगाना सिखाता था; इन विद्वानों को, जैसा कि मैंने कहा, हम जानते हैं, और जहां तक फ़िर्खोव और बर्नार तथा अन्य का प्रश्न है—उन्होंने कौन-सी ज्ञान-ज्योति जलायी है? लेकिन तर्क-वितर्क से लाभ ही क्या? ठीक है कि बर्नार ने किरसानोव के बारे में प्रशंसात्मक टिप्पणियां की थीं, जब किरसानोव अवर स्नातक कक्षा में था और प्रशंसा तो आखिर प्रशंसा ही है—उपाधि मिल गयी और डेढ़ वर्ष बाद विभाग। विद्यार्थियों के अनुसार, उसकी पदोन्नति से अच्छे प्रोफ़ेसरों की टोली को पर्याप्त मात्रा में बढ़त मिली। वह व्यक्तिगत रोगियों का उपचार नहीं करता था। प्रैक्टिस बिल्कुल छोड़ दी है, वह यही कहता था। वह वार्ड में काफ़ी समय रहता था। वहीं पर खाना भी कर लेता था और कई बार तो रात भी बिताता था। क्या करता था वहां पर? उसका कहना था कि विज्ञान-कार्य करता हूं, निश्चय ही रोगियों के लिए नहीं काम करता: "मैं किसी का उपचार नहीं कर रहा हूं। मैं तो निगरानी रख रहा हूं, अपने प्रयोग सम्पन्न कर रहा हूं।" उसकी इस बात की पुष्टि विद्यार्थी भी करते थे। अलबत्ता यह भी जोड़ देते थे कि कोई मूर्ख ही चिकित्सा की ऐसी प्रैक्टिस करेगा इन दिनों जो कि असंभव प्रयास जैसी ही बात होगी। वार्ड के अर्दलियों का सोचना कुछ और ही था: "अगर किरसानोव ने कोई केस हाथ में लिया है, तो वह अवश्य ही पेचीदा केस होगा।" वे आपस में यह बोलते थे और फिर रोगी को यही आश्वासन देते थे: "चिन्ता मत करो, कोई ऐसा रोग नहीं, जिसे यह डॉक्टर अच्छा नहीं कर सकता। यह तो प्रवीण जादूगर है, बस समझ लो कि जीवन-दाता।"

---

* हेरमन बुरहाव (1668—1738)—मशहूर डच चिकित्सक।
ख़्रीस्टोफ़र हुफ़ेलांड (1762—1836)—मशहूर जर्मन चिकित्सक।
विलियम हार्वे (1578—1657)—मशहूर अंग्रेज़ चिकित्सक।
एडवार्ड जेनर (1729—1823)—अंग्रेज़ चिकित्सक।—सं०

11

वेरा के विवाह के बाद के कुछ आरम्भिक महीनों में किरसानोव नियमित रूप से, प्रति दिन नहीं, तो कम से कम हर तीसरे दिन तो आया ही करता था। और शीघ्र ही, सच पूछिये तो बिल्कुल आरम्भ में ही वह पत्नी का भी उतना ही घनिष्ठ मित्र बन गया, जितना कि पति का था। यह दौर छह महीने अथवा इतने ही समय तक चला। एक दिन तीनों मामूल बेतकल्लुफ़ी से बतिया रहे थे कि उनमें सबसे अधिक प्रफुल्ल रहनेवाला किरसानोव सहसा चुप हो गया।

"अलेक्सान्दर, क्या हो गया अचानक, कोई परेशानी?"

"बतियाते-बतियाते रुक क्यों गये, अलेक्सान्दर मतवेइच?"

"मेरा ख़्याल है कुछ दौरा-सा पड़ गया, कुछ विषाद भाव।"

"तुम्हारे लिए तो यह अस्वाभाविक ही है, अलेक्सान्दर मतवेइच।" वेरा पावलोव्ना बोली।

किरसानोव ने कुछ परेशानी से और तनाव से कहा: "पहले तो ऐसा कभी नहीं हुआ, अकारण क्यों हुआ ऐसा।"

कुछ समय बाद, अलबत्ता नियमित समय से काफ़ी पहले ही, वह उठ खड़ा हुआ और उन्हें सदा की तरह, सामान्य रूप से अलविदा कहकर चला गया।

दो दिन बाद लोपुख़ोव ने अपनी पत्नी को बताया कि वह किरसानोव से मिलने गया था और वहां जिस प्रकार उसकी आवभगत हुई वह कुछ विचित्र-सी थी मानो किरसानोव ने पूरी सौजन्यता से व्यवहार करने की कोशिश की, कुछ अधिक ही, जो उनमें स्वाभाविक रूप से नहीं होता था। उसने तीखी नज़रों से अपने मित्र की ओर देखा और साफ़-साफ़ पूछ ही तो लिया:

"क्या किसी ने तुम्हारा अपमान कर दिया, मैंने तो नहीं?"

"नहीं।"

"वेरा ने?"

"नहीं।"

"तो फिर क्या मुसीबत है?"

"कुछ भी नहीं। यह सब क्यों पूछ रहे हो तुम, क्यों?"

"इतना अस्वाभाविक और औपचारिक व्यवहार क्यों कर रहे हो तुम मुझसे, समझ में नहीं आता। लगता है कहीं कुछ गड़बड़ है ज़रूर।"

इतना बुरा-भला कहने का भी किरसानोव पर कोई असर नहीं पड़ा। वह बस कुछ नहीं हुआ की रट लगाता रहा। लेकिन फिर मानो उसे अपने अन्यमनस्क व्यवहार पर ग्लानि हुई और उसने वही मनमौजी पुराने रूप को धारण कर लिया। लोपुख़ोव ने अपने मित्र के इस विवेकीस्वरूप का लाभ उठाते हुए, पूछ लिया:

"अच्छा अलेक्सान्दर, निकाल दो अपने मन की बात—कौन-सा बोझ तुम्हारे मन पर धरा हुआ है?"

"कुछ भी तो नहीं, सच कुछ भी नहीं।" और फिर वही मुस्कान और चापलूसी रंग-ढंग अपना लिया उसने।

क्या मुसीबत है आख़िर? लोपुख़ोव कोई भी तो ऐसी बात याद नहीं कर पाया, जिससे किरसानोव बुरा मान जाता। और फिर उनके बीच आपसी सम्मान और मित्रता की दृढ़ भावना इतनी थी कि यह होना भी असंभव था। वेरा ने भी अपने दिमाग़ पर ज़ोर डाला कि कहीं उसी से तो कोई अपराध नहीं हो गया। उसे भी कोई ऐसी बात याद नहीं आयी। भली-भांति जानती थी वह कि उससे ऐसा कुछ हो ही नहीं सकता, पति ने जो दलील दी थी, वही उसे भी जंची।

अगले दो दिन बाद किरसानोव की अनुपस्थिति अभूतपूर्व रूप से कुल चार दिन की हो गयी। वेरा को चिन्ता हुई, कहीं बीमार तो नहीं पड़ गया। लोपुख़ोव देखने गया, तो किरसानोव भला-चंगा लगा। अलबत्ता, कुछ परेशान ज़रूर था, मगर चिकना-चुपड़ा, चुस्त-दुरुस्त। काफ़ी देर तक इधर-उधर की टालमटोल के बाद किरसानोव घुमा-फिराकर कुछ अस्पष्ट-सी बातें कहने लगा, लोपुख़ोव और वेरा के प्रति अपने भावों के बारे में, मगर उस सबसे यही सिद्ध होता था कि वे उसकी अवहेलना कर रहे हैं और इसमें सबसे कटु कष्टदायक बात यही थी कि उसने आज तक अपनी इस ऊहापोह भरी खीझ का कोई भी तो संकेत पहले कभी नहीं दिया था। वह पूर्ण रूप से उत्तेजित था। और यह बड़ा अजीब लग रहा था लोपुख़ोव को, उसे अपने मेज़बान के इस स्वरूप का आभास रंच-मात्र नहीं था, इतना विचित्र रूप देखकर लोपुख़ोव को प्रतिवाद

करना ही पड़ा: "मेरी भी तो सुनो कुछ। मित्र से क्या इसी प्रकार व्यवहार करते हैं? तुम्हें अपने पर ग्लानि होनी चाहिये।" परिष्कृत सहिष्णुता के साथ किरसानोव ने स्वीकार किया कि शायद वह क्षुद्रता प्रकट कर रहा है, लेकिन अगर उसके मन में इतना कुछ विष भरा है उनके बारे में, तो फिर करे क्या? क्या मतलब इतना कुछ का? इसके बाद तो अपमान-नाराज़गी की चर्चा कुछ इस ढंग से चली: "तुमने कहा था व्यक्ति जितना ही स्वर्णकेशी होता है, उतना ही नीरस होता है और वेरा पावलोव्ना ने कहा था न कि चाय की क़ीमत बढ़ गयी है। पहली बात तो मेरे सुनहले बालों को लेकर कटाक्ष था और दूसरी का निहितार्थ यही था न कि मैं मुफ़्त की चाय पीता हूं।" लोपुख़ोव ने और बात करना व्यर्थ समझा। यह व्यक्ति तो बड़ा अहंकारी है अथवा निपट मूर्ख!

उस रात जब वह घर लौटा, तो दुखी भी था, दुखी इसलिए कि उसने उस आदमी का कुरूप पहलू देखा, जिसे वह बहुत स्नेह करता था। जब वेरा ने उससे पूछा कि क्या पता चला तो उसने दुखी मन से जवाब दिया कि उसे भूल जाना ही बेहतर होगा। किरसानोव की बातें तो बिल्कुल बकवास और हैरानगी भरी हैं, लगता है वह किसी मनोविकार से ग्रस्त हो गया है।

दो-एक दिनों बाद किरसानोव को कुछ होश आया होगा और उसने अनुभव कर लिया होगा कि उसने कितना अभद्र व्यवहार किया था, शायद इसीलिए वह लोपुख़ोव-दम्पत्ति के घर पहुंचा, शालीनतापूर्वक व्यवहार किया और फिर स्वीकारोक्ति करने लगा। वेरा ने जो कुछ कहा उससे वह यह समझ गया कि लोपुख़ोव ने उसके विवेकरहित व्यवहार के बारे में कुछ बताया नहीं है। उसे सचमुच ही कृतज्ञता की भावना का अनुभव हुआ और आत्मपीड़न के रूप में, पश्चाताप और अपार भावुकता से विह्वल होकर उसने ख़ुद ही सब कुछ बताने का उपक्रम किया। मगर जो बातें उसने कहीं वे अटपटी थीं। वेरा ने उससे कहा कि जाने भी दे उस सब बात को, क्योंकि कोई महत्त्वपूर्ण बात तो भी नहीं, लेकिन मुख्य बात नहीं कहकर वह सब बकवास बताने-कहने में लग गया, जो उसने लोपुख़ोव के साथ की थी। लेकिन उसने सब कुछ कहा इस चतुराई से, मिठास से कि वह सब सचमुच ही "बड़ी बात" न लगे।

निस्संदेह वह लोपुखोव-दम्पत्ति के लिए कोई "महत्त्वपूर्ण" तो था नहीं, उसकी औक़ात ही क्या है आदि, आदि। यह सब अत्यन्त संकेतपूर्ण, अस्पष्ट रूप से तथा अनुराग और सम्मान की गहन अभिव्यक्ति से ओत-प्रोत वाक्यों में कहा गया। इस सब आख्यान के बीच में ही वेरा भी उस से अवाक् रह गयी, जैसे कि उसका पति। जब वह चला गया तो दोनों लोपुखोव और वेरा ने स्मरण किया कि वह तो इस प्रकार की विघटन-स्थिति उत्पन्न होने से कई दिन पहले से ही कुछ विचित्र-सा व्यवहार करने लगा था। पहले इसकी ओर कभी ध्यान नहीं गया। लेकिन अब यह आभास तो हो ही चला था कि पहलेवाला व्यवहार आज की विचित्रता जैसा था मगर तब इतना स्पष्ट नहीं था।

किरसानोव का आना-जाना अब पुरानी रफ़्तार से चल पड़ा था, लेकिन मित्रता में जो बेझिझकता थी, उसका आभास स्पष्ट रूप से झलकने लगा था। कुछ दिन के लिए तो मर्यादा का मुखौटा खिसक गया था, लेकिन फिर संकोच ने घर कर लिया। लोपुखोव के मन में अपने पुराने साथी के प्रति वह सम्मान तो रहा नहीं था, भले ही वह उसे प्रकट नहीं करता था, लेकिन अपमानजनक फब्तियां बहुधा कसी जाती थीं घिसायी के लिए, लेकिन देर-देर तक नहीं और हर बार उन पर लीपापोती भी कर दी जाती थी, ताहम यह भावुकतापूर्ण मूर्खता ही दर्शाती थी।

और जब धीरे-धीरे वे किरसानोव के प्रति पूर्ण रूप से उपेक्षा भाव बरतने लगे, तो यह स्वाभाविक ही था कि वह उनकी सोहबत में लुत्फ़ नहीं ले पाता था, इसलिए उसने आना-जाना बिल्कुल ही छोड़ दिया। फिर भी लोपुखोव से उसकी मुलाक़ात अनेकानेक आपसी मुलाक़ातियों के घर हो जाती। शीघ्र ही लोपुखोव की जुगुप्सा की तीव्रता मद्धिम पड़ गयी, क्योंकि जिसके प्रति जुगुप्सा थी, उसने उकसाने की कोई हरकत नहीं की, शालीनता का व्यवहार ही किया। उसने, अर्थात् लोपुखोव ने, उसके यहां कभी-कभार आना-जाना शुरू कर दिया। और एक वर्ष बाद किरसानोव ने फिर अपने पुराने निश्छल निरभिमानी मित्र के यहां जाना आरंभ कर दिया। लेकिन यह आवाजाही अक्सर नहीं होती थी, क्योंकि उसे अपनी पुरानी बेवक़ूफ़ियों को याद करके अटपटा ही लगता था। लोपुखोव सब कुछ भूल-सा ही चुका था। वेरा भी। ताहम, जो बंधन टूट गया था, उसे फिर

से वैसा ही कर पाना मुश्किल था। ऊपर से तो किरसानोव और लोपुखोव के बीच दोस्ती फिर जुड़ गयी थी और निश्चय ही लोपुखोव उसके बारे में उतने ही प्रशंसात्मक भाव व्यक्त करता था, जितने कि पहले—बहरहाल वह नियमित रूप से लोपुखोव के यहां आता-जाता था। वेरा ने भी, इसी प्रकार उसे फिर से मान-सम्मान देना आरंभ कर दिया था, लेकिन यह बात भी तो थी कि वह किरसानोव से मिल बहुत कम पाती थी।

12

और अब लोपुखोव की बीमारी अथवा हम यों कहें कि वेरा की बेहद अनुरक्ति ने किरसानोव को सप्ताह भर प्रति दिन आत्मीय भेंट का अवसर प्रदान कर दिया। पत्नी को निगरानी से मुक्त करके दम्पत्ति के साथ शाम बिताने का निर्णय लेकर जो जोखिम उसने उठाया था वह उसका नतीजा अच्छी तरह से समझता था। वह बहुत खुश और गर्वपूर्ण था कि कोई तीन बरस पहले तो उसके मन में जो वासना की कली खिल रही थी, उसे मसलकर फेंक देने की दृढ़ता दिखा सकता था। कितनी सन्तुष्टि की भावना थी यह। जिन दो या तीन सप्ताहों में वह उनके संग-साथ के लिए तड़पता रहा, उसे अपनी शक्ति की परीक्षा करने में अधिक आनंद मिला। महीने के अंत में जुदाई की पीड़ा उसकी अपनी ईमानदारी की भावना सहज प्रसन्नता की छाप छोड़ गयी। और इस मानसिक शान्ति से उसे कितना आनंद मिला।

लेकिन अब खतरा पहले से कहीं अधिक था। गत तीन वर्षों में वेरा का नैतिक विकास असंदिग्ध था। तब तो वह शिशु की तरह ही थी और अब, अब जो भावना वह उत्पन्न करती थी उसे भोली-भाली बालिका द्वारा प्रकट परिहासपूर्ण वास्तविक अनुराग का नाम नहीं दिया जा सकता था। जो परिवर्तन हुआ था वह नैतिकता से कुछ अधिक ही था: हमारे यहां, उत्तर की ओर की स्त्रियों का वास्तविक सौन्दर्य प्रत्येक वर्ष के साथ बढ़ता ही रहता है। जी हां, जीवन के इस वय में तीन वर्ष मन, नयन, मुखड़ा और सम्पूर्ण व्यक्तित्व में आश्चर्यजनक सौन्दर्य भर सकते हैं, बस शर्त यही है वह व्यक्ति और जो जीवन वह जी रहा है, वह भला हो।

खतरा तो बड़ा था ही—और था भी केवल उसी के लिए—वेरा को यह खतरा प्रभावित भी क्यों कर सकता था? वह तो अपने पति को प्यार करती थी। किरसानोव इतना अज्ञानी अथवा मूढ़ तो था नहीं कि वह अपने को लोपुखोव के वास्तविक प्रतिद्वन्द्वी के रूप में सोचे। और न ही यह उसकी कोई असत्य शील-संकोच की भावना ही थी। कोई भी सम्माननीय व्यक्ति, जो उन दोनों को जानता हो, यही कहेगा कि दोनों ही एक जैसे हैं। और लोपुखोव को यह अपरिमित लाभ हासिल था कि उसने वेरा का प्यार पाया था और उसका दिल जीत लिया था। वरण कर लिया गया था और वह अपने चयन से प्रसन्न थी और उससे कुछ और बेहतर ढूंढ़ने की कल्पना भी नहीं कर सकती थी: सचमुच ही अभी तक तो उसे शिकायत करने का कोई कारण भी नहीं था। हास्यास्पद ही था वेरा के लिए और उसके पति के लिए किरसानोव का भय, और उसके लिए भी तो हास्यास्पद रूप से निरर्थक।

क्या इस प्रकार की अनाप-शनाप हरकत से महीने या अधिक से अधिक दो महीने का विछोह जो उसे झेलना पड़ेगा, क्या इस प्रकार की मामूली बात के लिए वह एक स्त्री को स्नायविक तनाव होने दे अथवा रोगी के पास बैठने से किसी गंभीर बीमारी का जोखिम उठाने दे, तो क्या वह सचमुच ही कुछ हल्का-सा और अस्थायी-सा विच्छेद झेले, क्या वह सचमुच अपने से किसी भी रूप में कम नहीं योग्य व्यक्ति को गंभीर हानि पहुंचने दे? यह तो असम्मानजनक होगा। और असम्मानजनक कार्य से उसे कहीं अधिक पीड़ा पहुंचेगी—जो अपने आप से संघर्ष की साधारण-सी संक्रिया थी—इसमें कोई संदेह नहीं कि इस संघर्ष का अंत क्या होगा और किरसानोव की अपनी इच्छा-शक्ति में विश्वास से गर्व था।

वेरा को उसकी अनावश्यक चौकसी से हटाने के बारे में निर्णय लेते समय किरसानोव की तर्कशैली यह थी।

और फिर अब निश्चित रूप से इसकी आवश्यकता भी न थी, बल्कि उसकी सहायता की भी नहीं। सब कुछ सहज-सामान्य बनाये रखने की ग़रज़ से, और सहसा व्यवधान का सन्देह उत्पन्न न होने देने के लिए, वह आरंभ के कुछ दिनों तक कई बार आता रहेगा और फिर यह आवागमन सप्ताह में एक बार, महीने में एक बार और अन्ततः छह महीने में एक बार हो जायेगा। इसके बाद तो वह आसानी से दूसरे कामों में व्यस्त रहने का बहाना कर ही सकता था।

13

सब कुछ ठीक-ठीक रहा, जैसी कि उसे आशा थी। पुरानी भावनायें फिर पहले से भी अधिक दृढ़ता के साथ उभर आयीं, लेकिन यह सहज ही हुआ और किसी प्रकार की अनुचित पीड़ा को दबाना नहीं पड़ा। द्मीत्री के ठीक होने के एक हफ़्ते बाद यह उसका दूसरा चक्कर था। वह नौ बजे के आस-पास तक रहता—औपचारिकता के नाते ही—और फिर दो सप्ताह बाद फिर आता। न आने का क्रम लगभग पूरा हो चुका था। इस समय, अभी एक घंटा उसे और रुकना था। इस सप्ताह भर में मन का उद्वेग आधा तो मिट ही चुका था और महीने भर में तो सब कुछ शून्य हो जानेवाला था। वह बहुत प्रसन्न था, बातचीत में इतनी उन्मुक्तता और सहजता से भाग लेता, मानो आनन्द कर सफलता पर स्वयं बधाई दे रहा हो और सन्तोष ने उसे और अधिक उन्मुक्त व सहज बना दिया था।

अगला दिन लोपुख़ोव का बाहर निकलने का निर्धारित दिन था। फलस्वरूप, वेरा विशेष रूप से प्रमुदित थी, निस्सन्देह बेहतर, बल्कि कहें असंदिग्ध रूप से स्वयं रोगमुक्त लोपुख़ोव से भी अधिक प्रमुदित। उसकी बीमारी के दौरान वेरा के पत्नी सुलभ आत्मत्याग की विनोदपूर्ण प्रशंसा और हंसी-मज़ाक़ समां बांध रहा था। अलबत्ता, वेरा ने पूर्ण रूप से अनुचित चिन्ता के कारण अपना स्वास्थ्य लगभग चौपट कर लिया था।

बात टालने जैसे रूप में बोला: "बहुत मनोरंजक, बहुत मनोरंजक। लेकिन क्या बता सकते हो मुझे कि तुम वर्तमान परिस्थिति में इसके सिवा कुछ और करते क्या?"

लोपुख़ोव ने कहा: "सोचो तो यदि किसी व्यक्ति के संबंध में इतनी परेशानी दिखायी तो वह ख़ुद ही सोचने लगता है कि उसे अत्यन्त सावधान होना चाहिये। यह देखकर कि सब उसके लिए भयभीत हैं, मैं तीन दिन पहले ही बाहर निकल सकता था, लेकिन अभी निकला कहां हूं। मैं आज सुबह निकलना चाहता था, लेकिन मैंने और अधिक आश्वस्त होने के लिए एक दिन बढ़ा दिया।"

किरसानोव ने हां में हां मिलायी: "सच है, तुम तो बहुत पहले ही घूमने-फिरने लग सकते थे।"

"इसी को तो मैं दिलेरी कहता हूं और सच बात तो यह है कि मैं इससे बुरी तरह ऊब चुका हूं—अन्यथा तो मैं तीर की तरह यहां से निकल गया होता।"

"प्राण-प्यारे, याद रखो दिलेरी की बातें तो मेरे मन की शान्ति के लिए थीं। और अगर तुम अपने पर्यंकशायी रोगी-जीवन को समाप्त करने के इतने उतावले हो तो हम यह सब व्यर्थ को बातें छोड़ सकते हैं और तत्काल निकल पड़ते हैं बाहर। बस, मुझे आधे घंटे के लिए कार्यशाला जाना है। चलो मेरे साथ। अच्छा ही होगा बहुत कि तुम रोगमुक्त होने के बाद पहली बार उन युवतियों से मिलो। वे इस से अत्यन्त प्रसन्न होंगी।"

"बिल्कुल ठीक, तो चलें।" लोपुख़ोव सचमुच ही ख़ुश हुआ—उसी मध्यान्तर में वह ताज़ी हवा में, बाहर निकलकर सांस लेगा।

वेरा सहसा बोली: "अरे रे, किरसानोव, मैं भी कितनी मूर्ख मेज़बान हूं! सोचा भी नहीं कि शायद तुम हमारे साथ बाहर न जाना चाहो।"

"बिल्कुल नहीं। यह तो अत्यन्त विचित्र बात होगी। और मुझे तो न जाने कब से वहां जाने की आशा थी। बिल्कुल बजा फ़रमाया, वेरा पावलोव्ना आपने।"

निश्चय ही वेरा को अच्छी बात सूझी। युवतियां असंदिग्ध रूप से बहुत ही प्रसन्न हुईं कि लोपुख़ोव बीमारी से उठने के बाद पहले-पहल उनसे मिलने आया। किरसानोव की भी निश्चय ही उनके कामकाज में वैसी ही दिलचस्पी थी कि उसी जैसी आस्थावाले किसी व्यक्ति की हो सकती थी। अगर उसकी अपनी कुछ व्यक्तिगत शंकायें न होतीं तो वह इस कार्यशाला के पहले और अत्यन्त उत्साहपूर्ण "प्रोफ़ेसरों" में होता।

आधा अथवा पूरा ही घंटा तो बीत गया। वेरा ने पूरी कार्यशाला के कमरों का एक-एक करके मुआयना किया। वे लोग भोजनालय से वापस कार्यशाला में आये तभी एक युवती, जिससे अभी तक उनकी भेंट नहीं हुई थी वेरा के पास आयी। किरसानोव तथा नवागता की आंखें टकरायीं। "नास्त्या!"—"अलेक्सान्दर!" वे लोग गले मिले।

नास्त्या चहकी: "अलेक्सान्दर, मेरे प्यारे दोस्त, यहां तुम्हें देखकर पुलकित हो उठी हूं!" चुम्बन लेते-लेते, उसके नैन मुस्करा रहे थे, आंसू

रहे थे। और फिर वह सुचित्त हुई। वेरा की ओर मुड़ी और बोली: "वेरा, इस वक़्त हम कारोबार की बात नहीं करेंगी। मैं इसे छोड़ूंगी नहीं। चलो, अलेक्सान्दर, मेरे कमरे में चलो।"

किरसानोव भी उसे देखकर उतना ही खुश हुआ। वेरा ने किरसानोव की दृष्टि में झलकी हल्की पहचान के पीछे कुछ पीड़ा-सी अंकित महसूस की। यद्यपि, इसमें आश्चर्य की कोई बात ही नहीं थी क्योंकि युवती तो क्षय के अन्तिम चरण में प्रविष्ट हो चुकी थी।

नास्त्या कार्यशाला में पिछले साल शामिल हुई थी। तब भी उसका स्वास्थ्य बहुत ही खराब था। अगर वह अपनी पुरानी दुकान में ही बनी रहती तो काम करते-करते कई महीने पहले ही मौत की गोद में सो चुकी होती। कार्यशाला ने बस उसे कुछ और देर तक जीने का मौक़ा दे दिया। युवतियों ने उससे सिलाई का काम बिल्कुल ही ले लिया और भी तो बहुतेरा काम करने को वहां था, जिससे कि उसके स्वास्थ्य पर कोई खराब असर पड़ने की अशंका नहीं थी। इसलिए वह इधर-उधर के काम का अधिकांश करती, कई भण्डार-कमरों की देखभाल अथवा मिलनेवाले आर्डरों की सप्लाई की देखभाल—सच तो यह है कि नास्त्या यहां पर किसी क़िस्म का रौब-दाब नहीं दिखाती थी।

नास्त्या और किरसानोव की गपशप खत्म होने से पहले ही लोपुखोव-दम्पत्ति वहां से निकल गये।

14

नास्त्या की कथा

अगली सुबह उजले और तड़के ही नास्त्या वेरा के यहां पहुंची।

उसने कहानी शुरू की: "कल आपने जो कुछ देखा, मैं उसकी बाबत कुछ बताने आयी हूं," क्षण भर को वह ठिठकी, सोच न पायी कि आगे कैसे क्या कहें, फिर बोली: "आप उसके बारे में कुछ अन्यथा न सोचें।"

"अरे, रे, नास्त्या, मेरे बारे में तुम कुछ अन्यथा न सोचो।"

"कैसी बातें करती हैं आप। अगर बात मेरी न होती, तो मैं हरगिज़ आपसे यह कहने न आती। आप तो जानती हैं कि मैं दूसरों जैसी नहीं।"

"क्या अनाप-शनाप कह रही हो अपने बारे में। हम तो तुम्हें एक बरस से अच्छी तरह जान-समझ गये हैं और दूसरी कई युवतियां तुम्हें इससे भी अधिक समय से जानती हैं।"

"ठीक है, लेकिन मेरे बारे में आप पिछली बातें तो कुछ भी नहीं जानतीं।"

"क्या मतलब, मैं तो बहुत कुछ जानती हूं। तुम पहले अभिनेत्री एन० के यहां काम करती थीं। जब उसने शादी कर ली तो तुम उसके पति के पिता से बचने के लिए एक दुकान में काम करने चली गयीं; और उनका काम छोड़कर तुम हमारे यहां आयीं। मुझे सब प्रकार की सूचना है।"

"बेशक, मुझे यक़ीन था कि वे युवतियां जो मुझे पहले से जानती थीं—मेरे बारे में इस प्रकार कुछ बतायेंगी नहीं। तो भी, मुझे पता था कि आप अथवा कोई भी मेरे बारे में किसी न किसी तरह सब कुछ पता कर ही लेगी। मुझे बहुत ख़ुशी है कि किसी को भी मेरे बारे में कुछ नहीं मालूम है। तो भी, मैं आपको बताके ही रहूंगी, आपको यह बताने के लिए कि किरसानोव कितने, कितने अच्छे इंसान हैं। क्या बताऊं वेरा पावलोव्ना, मैं ही बुरी थी।"

"तुम?"

"जी हां, मैं। मैं बहुत ही भयानक राह पर चल चुकी थी, बिल्कुल ही बेशर्म और हर समय, दिन भर नशे में धुत्त—बस इसी से तो मैं रोगिनी बन गयी, कलेजा छलनी था, फिर भी पीती रही।"

यह इस तरह का तीसरा मामला था, जिससे कि वेरा पावलोव्ना का साबिक़ा पड़ा। ऐसी युवतियां जिनका पहचान के समय से तो व्यवहार निर्दोष था, सहसा ही अपने मनमौजी अतीत के बारे में आत्मस्वीकृति कर बैठीं। पहली ने जब अपनी राम-कहानी बतायी तो उसे धक्का लगा। लेकिन कई दिनों तक मनोमंथन करने के बाद वह इसी नतीजे पर पहुंची कि "मेरा अतीत ही क्या है? मैं भी तो कितने नारकीय जीवन से गुज़री हूं, पली-बढ़ी हूं! वह भी तो इतना ही बुरा था। लेकिन वह सब कुछ मुझसे चिपका तो नहीं रह गया और न ही उन हज़ारों महिलाओं के ही दामन से, जिनकी पृष्ठभूमि मुझसे कुछ बेहतर नहीं रही और फिर भी बेदाग़ प्रतीत होती हैं।

अन्य प्रकार के अपमान से उबरकर सही-सलामत जीने में इतना आश्चर्यजनक क्या है? बस भाग्य की मेहरबानी से ही तो मुक्ति मिली न?" यह सोचकर उसे अधिक धक्का नहीं लगा दूसरी आत्मस्वीकृति के समय। यह युवती कितने गहरे गर्त्त में गिर गयी थी, फिर भी उसने अपने खरे चरित्र की हर विशिष्टता क़ायम रखी थी—निस्स्वार्थ भावना, दोस्ती में वफ़ादारी, नरम-नाज़ुक दिल और भोलेपन की ख़ूबी भी पर्याप्त मात्रा में बचाये रखी थी।

"नास्त्या, तुम जो कुछ बताना चाहती हो मुझे, वह सुनने का मौक़ा पहले भी मिल चुका है। और सुननेवाले को उतनी ही तकलीफ़ होती है, जितनी कि कहनेवाली को महसूस होती है। सुनकर मेरे मन में तुम्हारे लिए सम्मान कम नहीं हो गया, बल्कि उल्टे बढ़ेगा, चूंकि अब मैं यह जान गयी हूं कि तुम पर क्या-कुछ बीती है—मैं तो तुम्हारे बिना कुछ कहे ही जानती हूं। हम अब इसकी बाबत चर्चा नहीं करेंगी। तुम मुझे कुछ सफ़ाई मत दो। मैंने भी बहुतेरे वर्ष अत्यन्त दीनता में, तंगहाली में बिताये हैं। मैं अब इस बारे में कुछ भी सोचने से कतराती हूं और मैं उस सब के बारे में चर्चा करने में किसी सुख का अनुभव नहीं करती—अत्यन्त पीड़ादायक है न वैसा करना।"

"वेरा पावलोव्ना, लेकिन मैं तो ऐसा महसूस नहीं करती। मैं चाहती हूं कि आप जानें कि वह कितना भला आदमी है—किसी न किसी को तो यह पता होना ही चाहिये कि मैं उसकी कितनी कृतज्ञ हूं और भला आपके सिवा और किससे यह कह सकती हूं। इससे मेरे मन को शान्ति मिल गयी। और जहां तक मेरी पिछली ज़िन्दगी का सवाल है, नहीं करूंगी चर्चा उसकी बिल्कुल ही—क्योंकि वह कुछ उस सबसे भिन्न नहीं, जो कोई भी अभागी युवती की हो सकती है। मैं आपको केवल यही बताना चाहती हूं कि हम मिले कैसे। मुझे बहुत भला लगता है उसके बारे में बात करना और अगर मैं अब उस व्यक्ति के साथ जाकर रहना चाहती हूं तो आपको यह पता होना ही चाहिये कि मैं कार्यशाला छोड़ क्यों रही हूं।"

"अगर तुम्हें यही अच्छा लगेगा तो मैं ख़ुशी-ख़ुशी सुनूंगी। बस मैं अपना कढ़ाई का काम ज़रा हाथ में ले लूं।"

"मेरे लिए तो अब यह सब पराया है। वे युवतियां बहुत ही

अच्छी हैं, मुझे वैसा काम ढूंढ़ देंगी, जो मैं अपनी वर्तमान अवस्था में कर सकती हूं। मैं उनमें से हरेक का शुक्रिया अदा करना चाहती हूं—मेहरबानी कर आप भी उन्हें बता दें कि मैंने आपसे ऐसा कहा है।

"उस दिन मैं नेव्स्की प्रोस्पेक्ट पर घूम रही थी। बस बाहर निकली ही थी और रात आरम्भ ही हुई थी कि यह विद्यार्थी मुझे दिख गया और मैं मौज में आ गयी। बिना कोई शब्द बोले वह सड़क की दूसरी तरफ़ निकल गया, फिर उसने पीछे मुड़कर देखा तो मैं नमूदार थी, बिल्कुल उसके पीछे उसकी बांह को झटका देती। 'इतने हसीन मुखड़े को यूं ही तो नहीं छोड़ दूंगी।' वह बोला: 'मिस, मुझे अकेला छोड़ दीजिये, सुना।'—'जी नहीं, आप मेरे साथ चलेंगे।'—'भला क्यों?'—'तो फिर मैं आपके साथ चलूंगी। किधर जा रहे हैं आप? समझ लें, मैं आपको छोड़नेवाली नहीं, किसी भी क़ीमत पर।' वेरा पावलोव्ना, मैं बिल्कुल निर्लज्ज बन गयी थी, दूसरों की तुलना में कहीं अधिक निर्लज्ज।"

"नास्त्या, हो सकता है तुम असल में शर्मीली थीं।"

"हो सकता है। कम से कम ऐसा मुझे उस समय तो नहीं लगा अलबत्ता कुछ दूसरी युवतियों के बर्ताव से यह काफ़ी स्पष्ट था। यह मैं बाद में समझ गयी। बहरहाल, जब मैंने उससे कहा कि मैं उसके साथ चल रही हूं, तो वह हंसा और बोला: 'चलिये, अगर चाहती हैं, लेकिन इससे कुछ भला होनेवाला नहीं।' बाद में कभी उसने मुझे बताया कि वह मुझे सबक़ पढ़ाना चाहता था। मैं कितनी नागवार बन चुकी थी कि उसके पीछे-पीछे चलती रही और तरह-तरह की बकवास बकती रही, अलबत्ता उसने पलटकर किसी भी बात का जवाब नहीं दिया। फिर हम उसके यहां पहुंच गये। विद्यार्थी था वह, लेकिन रख-रखाव अच्छा-ख़ासा था। 20 रूबल की कमाई ट्यूशन से करता था और अकेला रहता था। मैं जाकर सोफ़े पर पसर गयी और बोली: 'शराब लाओ।' उत्तर मिला: 'हरगिज़ नहीं, शराब नहीं पिला सकता, हां चाय पीने के वास्ते मेरी मेहमान बनिये।' मैं बोली: 'रम के साथ'। उसने कहा: 'बिना रम के।' मैं तो बिल्कुल ही बेशर्म बन गयी। वह बैठा सब कुछ सुनता रहा, मानो उसका दिमाग़ कहीं और हो। वेरा पावलोव्ना, आजकल जो

ऐसे नौजवान मिलते हैं, वे पहलों के मुक़ाबले कहीं बेहतर हैं, लेकिन उस ज़माने में तो हज़ार में से कोई एक ही वैसा होता था। मेरा अपमान भी हुआ और मैंने उसे यह बता भी दिया: 'अगर तुम्हारा बर्ताव ऐसा ही रूखा-सूखा रहेगा तो,' मैंने उसको आतंकित करने की गरज़ से कहा, 'तो फिर मैं चली जाऊंगी।' वह बोला: 'अब इसकी क्या ज़रूरत, गरमागरम बढ़िया चाय का प्याला पी लीजिये, बस मकान-मालकिन समोवार लेकर आती ही होगी। लेकिन मिस साहिबा, बराये मेहरबानी अपनी भाषा पर नियंत्रण रखें।' वह हमेशा ही 'बराये मेहरबानी' और 'मिस साहिबा' ही कहता रहा। 'आप क्यों नहीं बतातीं मुझे कि आप कौन हैं और आपकी यह दशा कैसे हुई।' मैंने उसे अपनी रटी-रटाई बात कह दी—आप तो जानते ही हैं, समाज में ऐसा होता आया है। कोई भी कभी हमारा विश्वास ही नहीं करता, भले ही हम हाड़मांस से बनी हों, पढ़ी लिखी हों, सच कहती हूं, भले ही हम अच्छे परिवार की भी हों—मालूम है, ऐसी युवतियां हैं। वह मेरी बातचीत सुनकर बोला: 'मिस साहिबा, आपकी बात में कोई दम नहीं दीखता, हालांकि आपने कोशिश बहुत की, चाहता हूं कि आपका विश्वास करूं, लेकिन बस कर नहीं सकता। मैं आपकी क़द-काठी देखकर यह कह सकता हूं कि आपको पीना नहीं चाहिये, मैं दावे से कह सकता हूं कि आपके फेफड़ों में घुन लग चुका है। क्या चाहती है, डाक्टरी जांच-पड़ताल करूं?' वेरा पावलोव्ना, आप यक़ीन करें या न करें, संकोच से भर उठी मैं, मैं, जिसने निर्लज्जता का जीवन बिताया था और उस पूरी सांझ कैसी-कैसी ढिठाई से बातें करती रही थी। उसने आला उठाया और बोला: 'बस केवल सीने की ही पड़ताल करनी है।' उस समय वह डाक्टरी के दूसरे वर्ष में ही रहा होगा, लेकिन वह मुआयना अच्छी तरह करना जानता था। गुण में वह काफ़ी प्रौढ़ था। उसने मुझे सांस खींचने के लिए कहा, फिर बोला: 'ठीक है, तुम्हें कभी शराब नहीं पीनी चाहिये, ख़ास तौर से तुम्हारा छाती की जो दशा है उसमें।'—'पियूं कैसे नहीं? मैं? मेरे जैसी बिना पिये ज़िन्दा ही कैसे रह सकती हैं?' वेरा पावलोव्ना, यही सचाई है, सौ फ़ी सदी सचाई! 'तो फिर अपनी जीवन-शैली बदल दो।'—'कभी नहीं बदलूंगी। मैं तो मौज उड़ाती हूं।' उसने कहा: 'इस सब में कोई

मौज नहीं। बहरहाल, अब मुझे काम में जुट जाना है, इसलिए मिस साहिबा, अब आप तशरीफ़ ले जाइये।' और मैं वहां से चली आयी, अपने आप पर इतना ग़ुस्सा आ रहा था कि बस पूछो मत। एक तो मेरी पूरी सांझ बेकार चली गयी और दूसरे कुछ भी हाथ नहीं आया, कितना भावनाहीन था वह—और फिर हमारी अपनी ख़ुद्दारी भी तो होती है, ज़रूर होती है! एक महीने बाद, मैं उसी के पास-पड़ोस में संयोगवश थी, मैंने सोचा क्यों न उस पत्थर दिल के यहां जा धमकूं और कुछ बमचख करूं। दोपहर के खाने का समय होनेवाला था। मुझे रात बड़ी अच्छी नींद आयी थी और मैं पिये हुए भी नहीं थी। वह पढ़ रहा था। 'कहिये, श्रीमान पत्थर दिल।'—'नमस्कार, मिस साहिबा, आज आपके क्या हालचाल हैं?' और मैंने फिर अभिनय चालू कर दिया। वह बोला: 'बन्द करो यह सब, नहीं तो दफ़ा हो जाओ यहां से। मैं पहले भी कह चुका हूं, मुझे यह सब पसन्द नहीं। इस समय आप काफ़ी पिये हुए नहीं हैं और मेरी बात भली-भांति समझ सकती हैं। बेहतर है कि आप इस समय इस पर ध्यान दें कि आप पहले से कहीं अधिक अस्वस्थ लग रही हैं, आपको पीना बिल्कुल बन्द कर देना चाहिये। ज़रा होश में आइये और मेरी बात ग़ौर से सुनिये।' उसने ठीक ही कहा था। मेरे सीने में दर्द उठना शुरू ही हो रहा था। उसने मुझे फिर सांस भरने-छोड़ने के लिए कहा और बोला कि मेरे फेफड़े काफ़ी ख़राब हो चुके हैं, पहले से कहीं अधिक। उसने बहुत कुछ और भी कहा, मगर मैं तो उद्विग्न हो चुकी थी, मेरी रुलाई ही फूट पड़ी: मैं मरना तो नहीं चाहती थी और वह मुझे क्षय रोग होने की आशंका से भयभीत कर रहा था। 'कैसे छोड़ दूं मैं यह ज़िन्दगी। मैडम मुझे ऐसा करने नहीं देगी—मैं उसकी 17 रूबल की कर्ज़दार हूं।' आप यह जान लें कि हमें हमेशा क़र्ज़ के तले दबाये रखा जाता है ताकि हम हुक्म-उदूली कर पाने की स्थिति में न रहें। 'इतनी रक़म तो अभी मेरे पास नहीं है, परसों आ जाना।' मुझे यह सब कुछ बड़ा अनोखा, बेतुका-सा लगा। मैंने तो इस प्रकार की कल्पना भी नहीं की थी। मुझे अपने कानों पर विश्वास नहीं हुआ। मेरी रुलाई यह सोच-सोचकर और भी अधिक तेज़ हो गयी कि वह मेरा उपहास कर रहा था। 'किसी मुसीबतज़दा युवती के साथ इस प्रकार की ठिठोली

20—1127

[illegible] से बढ़कर और कोई भयंकर पाप नहीं। देख नहीं रहे मुझे रोना आ रहा है।' उसने क़सम खाकर कहा कि वह तो बिल्कुल गंभीरता से यह बात कह रहा था, लेकिन मैं फिर भी उसका विश्वास नहीं कर सकी और काफ़ी देर तक नहीं कर सकी। और आप मानेंगी कि उसने ठीक दो दिन बाद उतनी रक़म मेरे हाथ में थमा दी। तो भी मैं विश्वास नहीं कर सकी कि यह सब सच है। मैं यही कह पायी: 'लेकिन, लेकिन क्यों, किसलिए आप यह सब कर रहे हैं, जबकि आपने मुझे कोई कारोबारी ताल्लुक़ ही नहीं बताया?'

"मैंने मैडम की रक़म चुका दी और अलग कमरा लेकर रहने लगी, लेकिन काम तो कुछ भी नहीं था करने को। आपने उन स्पेशल परिचय पत्रों के बारे में तो सुना ही होगा, जो हम अपने साथ रखती हैं—उससे मैं किसी नौकरी के लिए अर्ज़ी दे सकती थी क्या? मेरे पास फूटी कौड़ी भी नहीं थी। सो, मैं फिर अपने पुराने पेशे में लग गयी, तो भी मैं कहती हूं, वेरा पावलोव्ना, लेकिन अब और तब के जीवन में, तुलना का तो कोई प्रश्न ही नहीं उठता। मैं पुराने मित्रों से ही मिलती—केवल भले लोग, जो किसी भी युवती से बदसलूकी नहीं करते। और इसके अलावा, मैं पीने से परहेज़ करती रही। तुलना की बात तो इसी लिए मैंने कही। और आप मानें, ज़िन्दगी पहले से कहीं बेहतर चली। पर सोचने पर लगता है, सब कुछ होने पर भी ढर्रा तो वही पुराना था, दु:खदायी और नारकीय। आप सोच सकती हैं कि यारों की संख्या के कारण, पांच तो थे ही, मगर मैं उन सबको अच्छा समझती थी और उनके कारण दु:ख नहीं झेलती थी। मेरी बेबाकी को क्षमा करें, मैं आपके साथ बिल्कुल निष्कपट रूप से ही बात करना चाहती हूं: आज भी मैं वैसे ही सोचती हूं। क्या आप मुझे शालीन युवती के रूप में नहीं जानती-समझतीं, ऐसी जिससे कोई अत्यन्त शालीन व्यवहार के सिवा अन्य किसी प्रकार की अपेक्षा नहीं करेंगी? मैं यहां पर बच्चों के साथ इतना समय व्यतीत करती हूं, वे मुझे बहुत चाहते हैं और वृद्ध महिलायें भी यह नहीं कह सकतीं कि मैं अत्यन्त शालीन चीज़ें नहीं सिखाती। मैं आपसे बिल्कुल सीधी-सच्ची बात कह रही हूं, वेरा पावलोव्ना, मेरा अभी भी यही सोचना है कि अगर आप किसी

व्यक्ति को पसन्द करती हैं तो इसमें नुक्सान ही क्या होगा, अलबत्ता, इसमें कोई बनावटीपन नहीं होना चाहिये, क्योंकि बनावटीपन, पाखण्ड की तो बात ही कुछ और होती है।

"बहरहाल, तब मेरी ज़िन्दगी का ढर्रा यही था। तीन महीने के सहज और शान्त जीवन के कारण मेरा स्वास्थ्य अच्छा हो चला था। धन के बारे में मेरे मन में जो कुछ भी अपराध-भावना उठती हो, लेकिन अब मैं अपने आपको पुंश्चली हरगिज़ नहीं समझती थी।

"वेरा पावलोव्ना, यह बात भी थी कि अलेक्सान्दर बहुधा मुझसे मिलने आता था और मैं उससे मिलने जाती थी। और अब जो मैं बात आपको बताना चाहती थी, वह सुन लीजिये। हां, यह ध्यान रखिये, वह मुझसे मिलने वैसे नहीं आता था, जैसे और लोग आते थे। वह इस बात का पूरा ध्यान रखता था कि कहीं मैं फिर पीने-पिलाने का चक्कर शुरू न कर दूं, अपनी पुरानी कमज़ोरी का शिकार न बन जाऊं। वही तो था जिसने मुझे तब सम्हाला, जब कभी मैं शराब के लिए बेचैन हो उठती थी, कहीं वह न आ जाय और मैं शर्मसार हो उठूं, इस भय से अपने पर क़ाबू रख पाती थी। मौक़े तो थे ही, लेकिन उसके बिना मैं संतुलित न रह पाती। अनेक भद्र पुरुष और मित्र थे मेरे तब, जो हमेशा ही बोतल मंगा लेने की पेशकश करते रहते थे। फिर भी वह मुझे कितने उलाहने देगा, लज्जित करेगा मुझे, बस इस भय से ही मैं अपने पर क़ाबू रख पाती थी। वर्ना तो मैं डिग जाती, सिर्फ़ यह बात कि पीना मेरे स्वास्थ्य के लिए हानिकर है, मुझे पीने से रोक थोड़े ही पाती। लगातार तीन हफ़्ते न पीने के बाद मैं खुद पक्की हो चुकी थी। पीने की तलब जाती रही और आदत भी घुट गयी। इस बीच मैं बचत भी कर रही थी ताकि उसका क़र्ज़ अदा कर सकूं और दो महीने बाद मैंने ऐसा किया भी। वह तो बहुत ही खुश हुआ। अगले ही दिन वह मेरी पोशाक के लिए मलमल और न जाने क्या कुछ ले आया, सब कुछ उसी पैसे से। वह आता-जाता रहा, डाक्टर और रोगी के ही नाते। कोई एक महीने बाद जब सब ठीक-ठाक हो गया था, तो वह मिलने आया। उसने कहा, 'हां अब सब बिल्कुल ठीक-ठाक है। नास्त्या का यही रूप तो मुझे अच्छा लगता है।' बिल्कुल सही बात है, शराब से युवती का

[illegible] जितना बिगड़ जाता है, वह सब पलक मारते ही तो ठीक नहीं हो जाता। लेकिन अब तक मेरा चेहरा ठीक हो चुका था और मेरे गाल मुलायम हो चुके थे, आंखों में चमक लौट आयी थी। व्यसन छूट जाने से मेरे बातचीत के लहजे में फ़र्क़ आ चुका था, ढंग से बतियाने लगी थी। पीने की आदत छोड़ते ही मैं सोचने भी ढंग से लगी थी। अलबत्ता, कभी-कभी ज़बान लड़खड़ा ज़रूर जाती थी और वही पुराना लहजा उभर आता था, ताहम अब मैं बिल्कुल सही ढंग से व्यवहार और बातचीत करने लगी थी। बहरहाल, जब उसने कहा कि अब मैं उसे पसन्द करने लगा हूं, तो मैं, अगर मुझमें साहस होता, तो मारे ख़ुशी के, उसके सीने से लिपट जाती; बस मैंने अपनी इस भावना पर क़ाबू पा लिया। 'समझी नास्त्या, मैं भी आख़िर भावनाशून्य नहीं हूं।' उसने मुझसे कहा, अब मैं सुन्दर लगती हूं और शालीन भी और वह मुझे सहलाने लगा,—प्राय: धीरज धरके सुनें यह सब। उसने मेरा हाथ अपने हाथ में लिया और दूसरे हाथ से उसे सहलाने लगा। तमाम समय बस ताकता रहा, सचमुच ही मेरे हाथ मुलायम और गोरे हो चुके थे तब तक... बहरहाल, जब उसने मेरा हाथ पकड़ा—आप विश्वास नहीं करेंगी—मैं आत्मविभोर हो शर्म से लाल हो गयी। मैं, वेरा पावलोव्ना, मैं जो ऐसा शर्मनाक जीवन बिताती थी, अविश्वसनीय है न; मुझे पता है यह, लेकिन फिर भी सच है। अपनी सम्पूर्ण संकोचशीलता के साथ भी—मेरे मुंह से यह शब्द सुनकर आपको अजब लग रहा होगा, परन्तु यह अटल सचाई है—मैंने किसी न किसी तरह उससे पूछ ही लिया: 'क्यों जनाब, आप मुझे सहला क्यों रहे हैं?' उसने उत्तर दिया: 'क्योंकि अब आप निष्कपट युवती हो गयी हैं।' अपने लिए निष्कपट विशेषण सुनकर मैं ख़ुशी से पागल हो उठी, आंखों से आंसू निकल पड़े। उसने पूछा: 'मेरी प्रिय नास्त्या, क्या बात है?' और फिर उसने चुम्बन अंकित कर दिया। ऐसे में आप और सोच भी क्या सकती हैं, मेरा मन चकरा गया और मैं निर्जीव-सी हो गयी—क्या आप विश्वास कर सकती हैं इस पर मेरे अतीत जीवन को ध्यान में रखते हुए?

"दूसरी सुबह, मैं क्या करूं और कहां जाऊं सोच-सोचकर व्यथित हो रोती रही। नदी में कूद पड़ूं और डूब जाऊं, बस इसके सिवा और कोई चारा नहीं रह गया था। अब मैं अपनी पुरानी ज़िन्दगी तो

बिता नहीं सकती थी किसी भी क़ीमत पर, और भूखों मरना भी क्या उचित था। आप जानें मैं इतने लम्बे अरसे से उसे प्यार कर रही थी, बिना उसकी ओर से कोई संकेत पाये अथवा न ही मुझे यह आशा थी कि मेरी इस भावना का प्रतिदान उसकी ओर से मिलेगा। मेरे मन में उसके प्रति प्रेम की भावना इतनी जड़ हो चुकी थी कि मैं स्वयं उसकी ओर से बेख़बर थी। और अब वह सब का सब उमड़ आया था बाहर। यह कहने की बात नहीं कि यह ऐसा प्रेम था, जो फिर किसी दूसरे की ओर देखने की इच्छा भी उत्पन्न नहीं करता। आपको भी अपने अन्तरतम में ही यह पता होता है कि अब ऐसा किया ही नहीं जा सकता। हर दूसरी चीज़ तिरोहित हो जाती है। यही थी मेरी स्थिति उस समय, दिल का दर्द छिपाये और रोटी-रोज़ी कमाने के किसी अन्य साधन के बिना। मैंने वास्तव में यह सोचा कि चलकर उससे आखिरी बार मिल आऊं और फिर सीधे नदी की राह पकड़ लूं। मैं सुबह भर रोती रही। और तब सहसा मैंने देखा कि वह तपाक से आ धमका है, उसने मेरा चुम्बन लिया और बोला: 'नास्त्या, क्या तुम मेरे साथ रहने के लिए चलोगी?' मैंने उसे वह सब बताया, जो मैं सोच रही थी। और फिर मैं उसके साथ रहने चल पड़ी।

"वे कितने सुखद दिन थे, वेरा पावलोव्ना, मैं तो सोचती हूं बहुत सुख के दिन, ऐसे जो ज़्यादातर लोगों को नसीब नहीं होते। वह मेरे चेहरे से अपने नयन हटा ही न पाता! अनेक बार जब मेरी नींद उचटती तो वह अपनी खुली किताब को पढ़ना छोड़कर मेरे पास आ जाता और अपलक मुझे देखते ही रहता और इसी देखने में कहीं खो-सा जाता। वह कितना संकोची था यह बात मैं बाद में जान पायी जब मैं पढ़ने लगी और यह जान पायी उपन्यासों से कि प्रेम कैसा होता है, क्या होता है। आह, संकोची होने के बावजूद वह अपने नयनों से कैसे रूप का रसपान करता। और अपने प्रेमी की दृष्टि से कैसी भावना मन में उत्पन्न होती है, उस आनन्द की तो कल्पना कर पाना भी कठिन है! जैसे उसने जब पहली बार मेरा चुम्बन लिया था और मैं सुन्न-सी होकर उसकी बांहों में समा गयी थी। आप सोचेंगी कि भावनायें मृदु रही होंगी, लेकिन नहीं, अब तक तो नहीं, क्योंकि रुधिर में उत्पन्न ताप मन में आशंका जगाता

है मिठास में इतनी पीड़ा होती है कि वह दरकाती है, ब्रह्मानंद और सर्वस्व, निश्चय ही यह स्वर्गिक है, ऐसा क्षण, जिसके लिए कोई भी अपनी ज़िन्दगी न्योछावर कर सकता है और अनेक कर भी देते हैं। वेरा पावलोव्ना, आप तो जानती होंगी यह स्वर्गिक है, लेकिन नहीं यह तो स्वर्ग से भी कुछ अधिक ही है। यह तो ऐसी भावना है, मानो अकेले बैठे कुछ सपना देखें कि कितना प्रेम करती हूं उसे तब कोई दर्द नहीं होता, कोई आशंका भी नहीं उस प्रशान्त आत्मसन्तोष में। सचमुच वह ऐसी ही भावना है, लेकिन सहस्रों गुना शक्तिशाली। जिस व्यक्ति को आप प्रेम करती हैं, उसे देखकर कितनी शान्ति का अनुभव होता है। दिल तनिक भी तो नहीं धड़कता, क्योंकि धड़कन तो आशंका का प्रतीक है, जिसको ऐसे में कोई गुंजाइश नहीं। बल्कि हौले-हौले स्पन्दन, कोमल, मृदु और उत्तरोत्तर मन्थर, वक्ष चौड़ा जाता है, सांस समरस आती-जाती है—जी हां, ऐसा ही होता है, बिल्कुल सटे-सटे, लेकिन फिर भी गहरी सांसें और कितनी सहज! ऐसी स्थिति होती है कि घंटा-दो घंटे क्षण भर में बीत जाते हैं अथवा क्षण से भी कम समय में, पल भर में अथवा बस। यह सोने और जागने के बीच अन्तराल जैसा होता है, जो लगता तो लम्बा है, मगर पलक झपकने से भी कम समय का ही होता है और जागने के बाद का क्षण भी जिसमें कोई थकान नहीं होती, सब कुछ उस ऊर्जा की तरह, जो मीठे विश्राम के बाद उत्पन्न होती है—जी हां मीठा विश्राम—मैंने यही कहा न कि सांसें समरस सहज आती-जाती हैं, यही उस स्थिति का सर्वोत्तम वर्णन है। वेरा पावलोव्ना, उस एक नज़र में ही कितनी शक्ति होती है, और कोई प्रेम स्पर्श इतना जीवन्त अथवा इतना आनंददायक भला हो सकता है क्या! प्रेम में इससे अधिक कमनीय और कुछ नहीं हो सकता।

"जी, वह अपने नयन मेरी ओर से हटा ही नहीं पाता था। कितना हर्षोन्माद! इसका अनुमान वही कर सकता है, जिसने इसका अनुभव स्वयं ही किया हो। और वेरा पावलोव्ना, इसका अनुभव आपको तो है ही।

"विचित्र स्थिति थी न वह मेरे नयनों, मेरे हाथों और फिर मेरे वक्षस्थल, मेरे पैरों और मेरे सर्वांगों का चुम्बन लेते कभी थकता

ही न था। विचित्र स्थिति ही थी न कि मुझे कोई लज्जा नहीं आती, मैं वही तो युवती थी, जो आज हूं। आपको पता ही होगा कि मैं कैसे किसी दूसरी स्त्री की नज़र से ही सकुचा जाती थी, अन्य युवतियां आपको बता सकती हैं कि मैं कितनी संकोची हूं; अन्यथा मैंने अलग कमरा क्यों लिया होता? कितना विचित्र है यह, एकदम अविश्वसनीय! जब वह मेरी ओर देखता और मेरा चुम्बन लेता तो मुझे हल्की-सी भी लज्जा का अनुभव नहीं होता। बस आनंद और सांसों में हल्कापन! वेरा पावलोव्ना, ऐसा क्यों है कि मैं युवतियों को देखकर तो लजा जाती हूं किन्तु उसे देखकर नहीं? अचरज करती हूं कि कहीं ऐसा तो नहीं, यह भावना तो नहीं कि वह मुझसे अब बिल्कुल भिन्न नहीं था, कि हम एक थे और अविभाज्य। कहीं ऐसा तो नहीं था कि वह नहीं बल्कि मैं उसकी ओर देख रही होती थी, वह नहीं बल्कि मैं ही स्वयं अपना चुम्बन लेती होती थी—सचमुच ही मेरी भावनायें कुछ ऐसी ही होती थीं, इसीलिए किसी भी प्रकार की लज्जा-संकोच नहीं थे। लेकिन यह बात तो आप मेरे बिना बताये भी जानती हैं। बस एक बार श्रीगणेश हो जाय, फिर तो अचरज की सीमा ही नहीं रहती। अच्छा, अब मैं चलूं वेरा पावलोव्ना, और कुछ नहीं कहूंगी अब। मैं तो यही चाहती थी कि आप यह जान लें कि मेरा अलेक्सान्दर कितना अच्छा व्यक्ति है।"

15

नास्त्या ने अपनी राम कहानी आगे आनेवाले दिनों में पूरी की। वह लगभग दो वर्ष किरसानोव के साथ रही। उसकी बीमारी के सभी प्रारम्भिक चिन्ह मानो मिट चुके थे। फिर, उनके सहवास के दूसरे वर्ष की समाप्ति और वसन्त ऋतु के आरंभ के साथ उसकी बीमारी पूरी तीक्ष्णता से फिर आ धमकी। साथ-साथ रहते जाने का मतलब था नास्त्या को असामयिक अन्त का शाप देना। और अलग हो जाने का अर्थ होता, एक बार फिर देर तक की छूट। उन्होंने अलग हो जाने का निर्णय लिया। घर में बैठे-बैठे रहने का काम और

||, समान रूप से घातक था। उसे कहीं पर भठियारिन, परिचारिका अथवा आया का या इसी तरह का कोई काम ढूंढ़ना पड़ेगा और वह भी किसी ऐसी स्वामिनी के यहां, जो अधिक थका देनेवाले काम-काज की फ़रमाइश न करे अथवा, ज़्यादा महत्त्वपूर्ण बात यह कि अपने नौकरों को पीड़ित न देख सके—दोनों ही गुण विरलों में उपलब्ध होते हैं, लेकिन फिर भी धरती पर ऐसे व्यक्ति होते तो हैं ही। किरसानोव के कुछ नौसिखुआ अभिनेता मित्र थे। उनकी कृपा से नास्त्या रूसी थियेटर से जुड़ी एक अभिनेत्री की परिचारिका बन गयी। यह अभिनेत्री स्वभाव की दृष्टि से बहुत अच्छी महिला थी। काफ़ी लम्बे अरसे तक वे दोनों एक-दूसरे से जुदा होने की बात को अमली जामा नहीं पहिना सके। वह क़सम खाती, "कल मैं अपनी नयी नौकरी पर चली जाऊंगी।" और न जाने कितने कल-परसों निकल गये। दोनों रोते, सुबकते रहे और तब तक आलिंगनाबद्ध रहे जब तक कि वह अभिनेत्री उसे लेने नहीं आ गयी। अभिनेत्री को पता था कि उसकी नयी परिचारिका क्यों और कैसे उसके पास आयी है। वह यह अनुमान भी कर सकती थी कि इतने दिनों तक वह क्यों रुकी रही और वह उसे जुदा करके ले ही गयी, जो पहले ही ख़तरनाक रूप से लम्बी जुदाई बन चुकी थी।

जब तक वह अभिनेत्री अभिनय करती रही तब तक ज़िन्दगी बड़ी शानदार रही, क्योंकि वह अभिनेत्री अत्यन्त व्यवहारकुशल थी। नास्त्या भी इस काम को प्राणों से प्यारा मानती क्योंकि ऐसा दूसरा काम मिलना असंभव था। अपनी मालिक के अच्छे स्वभाव के बदले उसने स्नेह प्रदान किया। उसका प्रत्युत्तर अभिनेत्री ने और भी अधिक शालीनता से दिया। प्रशान्ति ने उसके रोग को बांधे रखा, अथवा कहें कि लगभग बांधे रखा। लेकिन उसकी मालकिन ने विवाह कर लिया, मंच पर काम करना छोड़ दिया और अपने पति के परिवार के साथ रहने चली गयी। और तभी, वेरा ने यह बात पहले भी सुनी थी, तभी यह हुआ कि पति के पिता की नज़र में बेटे की बीवी की परिचारिका चढ़ गयी। और हम शायद यही कहें कि युवती तो सदाचरण से डिगी नहीं, मगर घर में कोहराम मच गया। भूतपूर्व अभिनेत्री ससुर को शर्मिंदा करने लगी और बूढ़ा रोष से उत्तप्त हो गया। परिवार में आपसी कलह उत्पन्न न करने की ग़रज़ से,

और उसने जो प्रशान्ति अर्जित कर ली थी, और जो उसके मन को भिगो चुकी थी, उससे वंचित न हो जाने की ख़ातिर नास्त्या ने इस्तीफ़ा दे दिया।

यह घटना किरसानोव को छोड़ देने के ढाई वर्ष बाद उसके जीवन में घटी। इस समय तक वह किरसानोव से मिलना-जुलना पूरी तरह से बन्द कर चुकी थी। शुरू-शुरू में जब वह उससे मिलने आता तो आगमन-उत्तेजना उसके स्वास्थ्य के इतने प्रतिकूल सिद्ध हुई कि किरसानोव ने उससे अनुमति चाही और प्राप्त भी कर ली कि वह नास्त्या की भलाई के लिए ही उससे मिलने न आया करे। नास्त्या ने दो या तीन अन्य परिवारों में नौकरी की चेष्टा की। ये सभी अत्यन्त नाख़ुशगवार थीं, इतनी घबड़ाहट उत्पन्न करनेवाली थीं कि उनकी तुलना में सूईकारी बेहतर थी; भले ही इससे उसके स्वास्थ्य में तेज़ी से गिरावट क्यों न आये, नसों पर अधिक तनाव से भी तो उसका भविष्य यही होनेवाला था, उसने यह काम ईमानदारी से मेहनत करनेवाले काम के रूप में ही तो हाथ में लिया। एक वर्ष तक दर्ज़िन का काम करने के बाद उसकी दशा, बस लबेदम हो गयी। जब वह कार्यशाला आयी थी तो लोपुख़ोव ने, जो इस शाला का अपना चिकित्सक था, रोग को रोकने की भरसक कोशिश की और बावजूद अनेकानेक कठिनाइयों के इस प्रयास में पर्याप्त सफल भी हुआ। तथापि, अन्त निकट था।

अभी हाल तक नास्त्या भी, सभी क्षय रोगियों की तरह, यही भ्रम पाले हुए थी कि काल पर्याप्त दूर है और इसी कारण उसने किरसानोव अथवा उसके हानिकारक प्रभाव के बारे में सोचने की तकलीफ़ गवारा नहीं की थी। लेकिन पिछले दो महीनों से वह लोपुख़ोव से इसरार कर रही थी कि वह उसे यह तो बता दे कि वह कितने दिन की मेहमान और है। उसने यह तो कभी नहीं बताया कि यह सवाल इतना ज़रूरी क्यों है और लोपुख़ोव, जो यह समझता था कि उसे यह साफ़-साफ़ बता देने का कोई अधिकार नहीं है कि अन्त सन्निकट था, नास्त्या के इसरार को आम आदमी की ज़िन्दगी से चिपके रहने की चाह समझकर, नज़रन्दाज़ कर देता था। लोपुख़ोव उसे जितनी तसल्ली देता वह उतनी ही अशांत रहती, अधिकांश लोग भी ऐसा ही करते। बल्कि वह उस एक क़दम

[illegible] ता जो उसके अन्त को सुखद बना सकता था, वह जानती थी कि अन्त निकट है, दिल ही दिल में वह यह जानती थी, लेकिन वह यह भी तो जानती थी कि डाक्टर पर अपने से अधिक विश्वास करना ही पड़ेगा और डाक्टर तो यही आग्रह करता था कि उसे अभी भी सावधानी बरतनी चाहिये। इसीलिए डाक्टर के आदेशानुसार वह पुराने और प्रिय मित्र को बुलाने से परहेज़ करती रही।

निस्सन्देह, ग़लतफ़हमी का समाधान तो शीघ्र हो ही जाना था। उसके सवाल अन्त के निकटतर आने के साथ-साथ अधिकाधिक तीखे और तेज़ होते जा रहे थे, या तो उसी ने सब कुछ प्रकट कर दिया होता अथवा वेरा या लोपुख़ोव ने विशेष देखभाल की आवश्यकता में कुछ ढील बरती होती। अगले दो या तीन हफ़्तों अथवा शायद दिनों में ही, वह सब कुछ घटित हो ही जानेवाला था, जो किरसानोव के कार्यशाला में अचानक आगमन से सम्पन्न हो गया। यद्यपि यह घटना संयोग ही सिद्ध हुई तथापि और सवालात नहीं उठे उस दिन।

अपने कमरे में किरसानोव को लाकर नास्त्या ख़ुशी से झूम उठी: "कितनी अच्छी बात हुई आज, बिल्कुल ही अप्रत्याशित! मैं बराबर तुम्हारे पास आने की बात सोचती रही हूं।"

"मैं भी तुमसे मिलकर बहुत प्रसन्न हूं, नास्त्या; हम अब कभी जुदा नहीं होंगे। तुम फिर मेरे साथ रहने लगोगी।" किरसानोव भावना के आवेग में यह कह तो गया, परन्तु अगले ही क्षण यह सोचकर संयत हो गया कि "कैसे कह गया मैं यह? इसे शायद यह अनुमान भी नहीं है कि अन्त कितना निकट है।"

लेकिन, नास्त्या या तो निहितार्थ समझी नहीं अथवा उसने जान-बूझकर उसकी अवहेलना कर दी क्योंकि प्रेम के पुनर्जन्म के आह्लाद ने अन्त की पीड़ा को निष्पंद कर दिया—जो भी हो, वह आनंदमग्न हो उठी।

वह बोली: "अभी भी मुझे प्रेम करते हो, कितने भले हो तुम।"

और जब वह चला गया तो ख़ूब रोयी। वह तभी समझ गयी अथवा तभी उसने यह महसूस कर लिया कि अब प्रेम की वापसी क्यों हुई है, क्योंकि अब "जिसे बचाया नहीं जा सकता उसकी

हिफ़ाज़त करते रहने में क्या तुक है," अब जबकि "मैं तुम्हें कम से कम ख़ुश तो कर सकता हूं।"

और वह ख़ुश थी भी क्योंकि वह उसके पास से टला नहीं, बस अस्पताल में और अकादमी में अपने काम से अवश्य गया। यह कारोबार कोई एक महीने तक चलता रहा, अटूट सहवास का एक महीना, एक दूसरे से सभी कुछ कहने-सुनने का, दीर्घकालिक वियोग के दौरान हुई छोटी-से छोटी बात और उस अतीत का पुनर्स्मरण करने का महीना, जो उन्होंने मिलकर जिया था; साथ-साथ हवाख़ोरी के लिए जाने का, हर सांझ गाड़ी से सैर का, किरसानोव द्वारा किराये पर ली गयी गाड़ी से पीटर्सबर्ग के बाहरी इलाक़ों की साथ-साथ सैर का महीना, जिसे वे ख़ूब-ख़ूब पसन्द करते थे—प्रकृति के सौन्दर्य का यही तो अनन्त आकर्षण है कि यह दयनीय आंचल, लाखों-करोड़ों के निवेश के बाद भी तिरस्कृत है, पर इस प्रकृति में भी तो हृदय आनंदानुभूति अनुभव कर सकता है, साथ-साथ पढ़ने, लूडो और ताश खेलने, नास्त्या द्वारा शतरंज का खेल सीखने का महीना मानो उसके पास किसी खेल में दक्षता हासिल करने का समय हो।

वेरा ने कई सांझें और देर गये रातें तक भी इस जोड़े के साथ बितायीं अर्थात् जब वे हवाख़ोरी से लौट आते थे। और कई सवेरे भी, जब वह उस अशक्त का मनोरंजन करने और अनिवार्यत: वह सब अनवरत सुनने के लिए बिताये, जब वे दोनों अकेली होतीं बड़ी देर तक और बहुत आवेग के साथ: अलेक्सान्दर कितना अच्छा है, कितना कोमल और वह अपनी नास्त्या की कैसे पूजा करता है!

16

चार महीने बीत गये। नास्त्या की सेवा तथा बाद में उसकी याद ने किरसानोव को वेरा पावलोव्ना की ओर से अप्रभावित बने रहने पर सोचने के लिए उकसा दिया। वेरा जब नास्त्या को देखने आती और बाद में भी जब वह किरसानोव का ध्यान बंटाने की कोशिश

करती थी तो वह उससे कतराता नहीं था। शोक काल के दौरान, सचमुच ही वह वेरा की सहायता के प्रति हार्दिक कृतज्ञता के अतिरिक्त और किसी भी भावना के प्रति सजग नहीं था।

तथापि—पाठक तो समझ ही चुका है कि इस "तथापि" का पूर्वाभास क्या है ठीक वैसे ही जैसे वह "पहले से ही" एक बार पढ़ा सभी कुछ जानता है—तथापि, नास्त्या और किरसानोव के पुनर्मिलन के सम्बन्ध में उसके मन में जो भाव उठे वे उसकी तुलना में नगण्य थे, जो नास्त्या के मन में किरसानोव के लिए उठे थे: किरसानोव का प्रेम काफ़ी पहले काफ़ूर हो चुका था, बस केवल अतीत के रोमांस का स्नेह बाक़ी रह गया था। ऐसी बात भी नहीं थी कि किसी को भी प्यार करने की किशोर चाह से कभी भी कुछ अधिक रहा हो। हमें यह बताने की तनिक भी आवश्यकता शायद नहीं कि नास्त्या और किरसानोव में कोई तुलना नहीं हो सकती, वह जितना विकसित था, नास्त्या उसके पासंग बराबर भी नहीं थी। पूर्ण रूप से वयस्क किरसानोव उस पर दया दिखा सकता था, मोहक स्मृति और तात्कालिक सहानुभूति की कोमलता उसके प्रति व्यक्त कर सकता था, लेकिन उससे अधिक कुछ भी नहीं। सच यही है कि उसे खो देने की पीड़ा शीघ्र ही शान्त हो गयी, तथापि वह मरकर भी स्मृति के रूप में किरसानोव को सताती रही। जब तक उसे यह पता चला कि उसके मन में केवल स्मृति ही है, वेरा से उसका सम्बन्ध ऐसा हो गया है, जो उसे हर दम कोंचता रहता है।

वेरा उसको खुश करने के लिए अनेकानेक चेष्टायें करती और वह आत्मसमर्पण-सा कर देता, यही सोचकर कि अब और क्या हो सकता है उसे अथवा यह भूल जाता कि वेरा के लिए उसके मन में प्रेम है। यह भूल जाता कि वेरा की देखभाल में अपने को बिल्कुल सौंपकर वह किस विपत्ति को निमंत्रण दे रहा है। वेरा ने तीन महीने पहले ही तो उसे खुश रखने का बीड़ा उठाया था और इन तीन महीनों में वे अब कहां और किस मंज़िल पर आ पहुंचे हैं? बस यही तो कि उसकी हर शाम प्राय: लोपुखोव के यहां व्यतीत होती अथवा वह वेरा को उसके पति के साथ मगर अक्सर बिना पति के ही, उसके काम से इधर-उधर ले जाता। इससे अधिक

कुछ भी और नहीं। ताहम, यह भी तो पर्याप्त से कुछ अधिक ही था और केवल उसी के लिए नहीं।

अब वेरा की दिनचर्या क्या थी? पूर्वार्द्ध में तो बिल्कुल पहले की तरह। लेकिन सांझ के छह बजे कि न बजे, पहले वह अकेली कार्यशाला के मार्ग पर होती अथवा अपने कमरे में काम कर रही होती थी, लेकिन अब अगर उसे वहां काम होता तो वह किरसानोव को पहले ही बता देती कि वह काम पर होगी और वह उसे लिवाने के लिए आ जाय। आते और जाते—यद्यपि स्थान बिल्कुल ही पास था—वे दोनों बहुधा किसी न किसी विषय पर चर्चा करते और अक्सर यह चर्चा कार्यशाला के बारे में होती, किरसानोव अब इसका अत्यन्त सक्रिय सहयोगी बन गया था। कार्यशाला पहुंचते ही वेरा अपने प्रशासनिक कार्यों में उलझ जाती और किरसानोव अपने काम में, उसका काम भी कुछ कम दिलचस्प नहीं था—आखिर तीस युवतियां थीं वहां, सबके अपने सवाल होते अथवा कुछ विशेष मांगें, जिनके बारे में उसी से कहा-सुना जा सकता था। समय मिलने पर वह बच्चों से बतियाता और दो-एक युवतियों से भी जो उनकी बातचीत में तत्काल ही शामिल हो जातीं—बातचीत चाहे जिस विषय पर होने लगती और कि 'अलिफ़लैला' जैसी कहानियां भी होतीं, जिनके प्रसंग वह सुना चुका था, कि भारत में सफ़ेद हाथियों का उसी तरह आदर किया जाता है जैसे रूस में सफ़ेद बिल्लियों का (आधी मण्डली की राय में सफ़ेद हाथी, बिल्ली और उसी तरह के जीव-जन्तु सूरजमुखी होते हैं, अस्वस्थ प्रजातियां, उनकी आंखें देखकर यह बताया जा सकता है कि रंगीन प्रजातियों की तुलना में वे इतने स्वस्थ नहीं। और दूसरों की राय में सफ़ेद बिल्लियां अत्यंत सुन्दर हैं)। उपस्थित समुदाय में से एक अपेक्षाकृत प्रौढ़ ने प्रश्न कर दिया: "क्या आप हमें मिसिज़ बीचर-स्टोव* के जीवन के बारे में कुछ बता सकते हैं, जिनके उपन्यास का ज़िक्र आपने किया है?" नहीं, एकदम तो नहीं, अलबत्ता वह कुछ अनुसंधान करेगा क्योंकि वह खुद अधिक जानने का इच्छुक है। इस समय तो बस इतने से ही सन्तोष करना पड़ेगा, जितना कुछ वह मिस्टर

* बीचर-स्टोव (1811—1896)—अमरीकी लेखिका।—सं०

हावर्ड * के बारे में जानता है, जो उस शानदार महिला के बराबर की ही हस्ती है। किरसानोव के सर्किल में इसी प्रकार की कहानियां और तर्क-वितर्क होते। इस सर्किल में बच्चों की उपस्थिति में कोई परिवर्तन नहीं होता, और वयस्क समुदाय हमेशा बदलता रहता है। वेरा का काम समाप्त होते ही वह उसे घर चाय के लिए लाता और फिर तीनों जने लम्बी सांझ एकसाथ बिताते, उससे कहीं अधिक लम्बी सांझ, जो लोपुख़ोव-दम्पत्ति किरसानोव की अनुपस्थिति में शायद ही कभी बिताते हों। जो सांझें पूरे तौर पर घर में ही बितायी जाती थीं, उनमें लगभग प्रत्येक में दो नहीं तो एक घण्टे तक अवश्य ही संगीत का समां बंधता। ऐसे में लोपुख़ोव प्यानो बजाता, वेरा गाती और किरसानोव बैठकर सुनता। और जब कभी किरसानोव प्यानो बजाता, तो लोपुख़ोव-दम्पत्ति मिलकर गाते। लेकिन, पिछले कुछ समय से वेरा कार्यशाला से लौटकर, जितनी जल्दी हो सके उतनी जल्दी ओपेरा के लिए तैयार हो जाती। इन दिनों वे अक्सर ओपेरा देखने जाते हैं, पूर्वार्द्ध में तीनों होते हैं और उत्तरार्ध में वेरा और किरसानोव। और तो और, अब लोपुख़ोव-दम्पत्ति पहले से कहीं अधिक आतिथ्य-सेवा करने लगे हैं। पहले तो तरुण दल (जिनमें केवल भांजे-भतीजे ही होते थे, जो किसी भी रूप में साथी-संगी नहीं बन सकते थे) को छोड़कर मेर्त्सालोव-परिवार ही उनके यहां आनेवाले एकमात्र अतिथिगण होते थे। अब उन्होंने दो या तीन और उसी तरह के समरस दम्पत्ति ढूढ़ लिये हैं। दो और परिवारों के साथ मेर्त्सालोव-दम्पत्ति अब बारी-बारी से छह तक अथवा आठ जोड़ों के लिए अपनी नृत्य-पार्टियां आयोजित करते हैं। लोपुख़ोव शायद ही कभी ओपेरा या किसी और पार्टी में किरसानोव के बिना जाता हो, लेकिन किरसानोव बहुधा वेरा को अपने साथ ले जाता है। क्योंकि लोपुख़ोव तो अपने ही कोच पर घर की पोशाक पहने समय बिताना पसंद करता है, इसलिए वे तीनों एकसाथ तो आधा ही समय बिताते हैं, अलबत्ता इस आधे समय में वे एक दूसरे से बिल्कुल भी अलग नहीं होते और यदि किरसानोव

* जॉन हावर्ड (1725—1790)—एक अंग्रेज़, जो जेल सुधारों में सक्रिय रहा, जिसने रूस के जेल के बैरकों की ज़िन्दगी के बारे में अध्ययन किया, जहां कि उसकी टाइफ़स की महामारी के दौरान मृत्यु हुई।—सं०

ही उनका एकमात्र अतिथि होता है तो लोपुखोव हॉल से अक्सर बाहर निकलकर अपने सोफ़े की शरण ले लेता है, जहां पर कि अब प्यानो वेरा के कमरे से बाहर लाकर रख दिया गया है। और उसे तब भी अच्छा लगता जब कोई चौथाई अथवा अधिक से अधिक आधे घंटे बाद वेरा और किरसानोव भी उसके प्यारे सिंहासन के पास आ जमते हैं अथवा वेरा कुछ समय बाद उसी सोफ़े पर लेट जाती है। और वह अपने पति के गिर्द अपना हाथ लपेट सकती है ताकि वह आराम के साथ सोफ़े पर टिका रहे।

इस प्रकार तीन महीने से कुछ अधिक दिन निकल गये।

इन दिनों रमणीयता तो बिल्कुल ही बासी चीज़ हो गयी है। और मैं ख़ुद भी तो उसके बारे में कुछ ज़्यादा नहीं परवाह करता, लेकिन यह तो व्यक्तिगत अरुचि है, जैसे कि मुझे सैर करना पसन्द नहीं अथवा अस्परागस अथवा दूसरी दर्जनों चीजें पसन्द नहीं और फिर यह बात भी तो है कि कौन ऐसा आदमी है जो हर चीज़ पसन्द करता हो अथवा मनोविनोद के हर स्वरूप को पसन्द करता हो? ताहम, मैं यह समझता हूं कि जिन चीज़ों को मैं पसन्द नहीं करता उनकी अपनी कुछ न कुछ ख़ूबियां होती हैं और वे उन अनेकों को अच्छी लगेंगी जो मेरी पसन्द जैसे लोगों को नहीं लगतीं, जो बाहर के खेलकूदों की तुलना में शतरंज खेलना और अस्परगस के स्थान पर सन के तेल के साथ बंदगोभी का अचार पसन्द करेंगे। इसके अलावा मैं यह भी जानता हूं कि अधिसंख्य लोग शाही खेलों के लिए मेरी तरजीह को नहीं मानेंगे और सन के तेल के साथ बंदगोभी के अचार के लिए मेरी अभिरुचि से सहर्ष मतभेद प्रकट करेंगे, आदि, आदि। मैं मानता हूं कि उनकी रुचियां मुझसे कुछ बदतर नहीं हैं और इसलिए, जो चाहे सो कीजिये, आप सभी लोग और वह दिन ज़िन्दाबाद जब सन के तेल में बंदगोभी के अचार की पसन्दगी मुझ जैसे हठधर्मियों की सनक भरी याद से अधिक और कुछ नहीं रहे।

इसी तरह, मैं यह भी समझता हूं कि विराट जन समुदाय, जो मुझसे किसी भी हाल में बेहतर नहीं, यह चाहते हैं कि उनका सुख रमणीय हो और चाहते हैं कि यह रमणीयता सभी के लिए चिरकाल तक बनी रहे। जिन एक या दो हठधर्मियों को सन्तोष का यह स्वरूप

नापसन्द हो, उन्हें अपना सन्तोष मिलेगा। आम जन को अपना रमणीय सन्तोष चाहिये। और यदि आप वर्तमान फ़ैशन के तक़ाज़े के अनुसार इस पर आपत्ति करेंगे कि इस रमणीयता को ख़त्म कर दिया जाय तो यह तर्क टिक नहीं सकेगा, क्योंकि इसे मिटाना तो हाथ न लगे तो खट्टे अंगूरवाली कहावत ही चरितार्थ करेगा। इसे पहुंच के बाहर समझते हैं न, इसलिए इस अप्रचलित कारोबार में जुट जाओ।

लेकिन यह कहना कि रमणीयता को हासिल नहीं किया जा सकता बिल्कुल ही वाहियात बात है: यह न केवल सभी के लिए अच्छी है, बल्कि हासिल कर लिये जाने योग्य और बिल्कुल उचित ही है और जिसे केवल एक व्यक्ति अथवा दर्जन भर व्यक्तियों के लिए ही नहीं, बल्कि हम सभी के लिए आसानी से उपलब्ध कराया जा सकता है। पांच जनों के लिए इटालवी ओपेरा उपलब्ध नहीं, लेकिन पीटर्सबर्ग के लोगों, हमारे नेत्रों और कानों के लिए उपलब्ध है, और इसके लिए शुक्रिया अदा भी कर सकते हैं। नि० गोगोल की सम्पूर्ण रचनायें (मास्को, 1861) इतनी विशाल ज़िम्मेदारी है कि दर्जन लोगों के बूते के बाहर की बात है, लेकिन जैसा कि हम जानते हैं कि सब पाठकों के और उनके बजट के सहारे उनका प्रकाशन संभव है। मगर जब तक किसी ओपेरागृह का निर्माण न हो और वह सम्पूर्ण नगरवासियों के लिए न खुला हुआ हो तब तक नगर के कुछ लोगों और विशेष रूप से संगीत रसिकों के लिए इक्का-दुक्का कंसर्ट ही तो आयोजित हो सकते हैं। 'मृत आत्मायें' के दूसरे खण्ड के मुद्रण और आम लोगों के लिए बाज़ार में बिकने से पहले चंद लोग ही और विशेष रूप इस व्यंग्य साहित्यकार के प्रेमी ही बड़े जतन और कष्ट से अपने-अपने लिए हस्तलिखित प्रति तैयार करते थे। हस्तलिखित प्रति भला मुद्रित संस्करण से होड़ कर सकती है तथा इक्का-दुक्का कंसर्ट इटालवी ओपेरा के मुक़ाबले कहीं बुरा है, लेकिन फिर भी उनमें कुछ न कुछ भलाई तो होती ही है।

17

यदि कोई तीसरा व्यक्ति किरसानोव से यह पूछता कि होश में आने पर उसने अपने को जिस झंझट में फंसा पाया, उससे कैसे छुटकारा हासिल किया जा सकता है, और यदि इसमें बिल्कुल ही अजनबी लोगों से साबका होता तो किरसानोव ने यही सलाह दी होती: "किसी भी समस्या का हल पलायन द्वारा करना अब असंभव है और फिर यह भी तो पता नहीं कि कल क्या होनेवाला है, और खुद के लिए पलायन उतना ही खतरनाक है, जितना कि वहीं बने रहना। मैं तो यह भी कहने का साहस करता हूं कि यह उन लोगों के लिए और भी अधिक खतरनाक है, जिनकी शान्ति के लिए तुम चिन्तित हो।"

निस्सन्देह, इस प्रकार का परामर्श लोपुखोव जैसे दृढ़ निश्चयी, अचूक ईमानदार अथवा स्वयं किरसानोव को ही दिया जा सकता है। किसी और के साथ तो इस पर विचार-विमर्श ही नहीं किया जा सकता, क्योंकि कोई भी दूसरा ऐसी परिस्थितियों में अनिवार्य रूप से कुछ घटिया काम ही करेगा: स्त्री का सतीत्व भंग करेगा, अपने मुंह पर कालिख पोतेगा और फिर इधर-उधर जाकर बकवाद करेगा या शेखी बघारेगा, अपनी सचरित्रता का डंका बजायेगा और फिर मोहक आकर्षण की चर्चा करेगा। इस दृष्टि से किरसानोव और लोपुखोव सम्मानजनक व्यवहार के प्रश्न को न उठाना ही बेहतर समझते थे। लेकिन अपनी ही तरह के किसी व्यक्ति को किरसानोव यह सलाह देना बिल्कुल उचित मानेगा कि अब पलायन करना सबसे बड़ी ग़लती होगी। और दूसरे से यही अपेक्षा होगी कि वह यह बात समझ जाय कि: "मैं जानता हूं कि बने रहने पर तुम क्या रवैया अपनाओगे—किसी भी रूप में कभी भी अपनी भावनाओं को प्रकट मत होने दो—क्योंकि कुछ भी और रवैया अपनाना कमीनापन होगा। यही तो होगा उसका मतलब कि उस महिला के सुव्यवस्थित जीवन में यथासंभव कम से कम व्याघात उत्पन्न किया जाय—किसी न किसी प्रकार की दरार इस समय अपरिहार्य है। वह शायद—क्या हम यह कहें कि "निश्चयपूर्वक" और यह कहकर बात ही खत्म कर दें?—अपनी व्यक्तिगत परिस्थितियों में कुछ बेतुका उत्पन्न हो गया है, यह बात समझ चुकी है। बस उसे इस तथ्य को स्वीकार लेना भर शेष है। वह कितनी

शीघ्रता से आप की ओर से और बिना उकसावे के एक भी शब्द के यह स्वीकार कर लेती है, हम नहीं कह सकते। लेकिन न हम यह जानते हैं कि आपका छोड़कर चला जाना ही वह उकसावा सिद्ध होगा। दूसरे शब्दों में, अब तुम्हारे पीछे हटने से ठीक वही बात जल्द से जल्द घटित हो जायेगी, जिससे तुम बचना चाहते हो।"

तथापि, किरसानोव इसमें तीसरा पक्ष तो नहीं था। वह तो अत्यधिक अन्तर्ग्रस्त था उसमें, उसके लिए निकल भागना वहां बने रहने से अधिक दुष्कर प्रतीत हो रहा था। यदि भावावेग के तहत उसका झुकाव बने रहने की ओर था, तो इसका अर्थ क्या यह नहीं था कि वह आवेग के आह्वान के आगे समर्पण कर रहा था? किस बल-बूते पर उसे यह पक्का विश्वास था कि उसके मन की बात उसके मुंह से कभी निकल नहीं जायेगी। एक भी शब्द, एक भी नज़र क्या अभिप्रेरणा सिद्ध नहीं हो सकती? ऐसी स्थिति में तो बाहर निकल जाना ही बुद्धिमत्तापूर्ण क़दम होगा। जहां तक अपना सम्बन्ध हो यह निश्चय कर लेना हमेशा ही बुद्धिमत्ता है कि विवेक कामना के कुतर्क के आगे कितना झुक चुका है, मर्यादा का तकाज़ा है कि यदि हम उदात्त कार्य सम्पन्न करने के अपने अवसर बढ़ाना चाहते हैं तो अपनी कामना का प्रतिरोध करें। लेकिन यह सिद्धान्त को व्यवहार में उतारने जैसा है। किरसानोव जिस सिद्धान्त के बारे में सोच रहा था उसमें "उदात्त" जैसे गुंजायमान शब्द बेहद संदिग्ध थे। किरसानोव ने यह बात इस प्रकार कही होती: "हम सब, मेरे समेत, स्वार्थी हैं, इसलिए सवाल यह है: 'मेरे लिए क्या सर्वोत्तम है, चले जाना या बने रहना?' जाता हूं तो बस मैं एक विशिष्ट संवेग का दमन करता हूं और ठहरता हूं तो भूलचूक से निकल गये किसी शब्द या निगाह के ज़रिये अपनी गरिमा पर चोट का खतरा मोल लेता हूं। अभी संवेग दबाया जा सकता है जिससे कि कुछ समय बाद मेरा चित्त शान्त हो जायेगा और मुझे आत्मसन्तोष रहेगा। लेकिन यदि मैंने अपने स्वभाव के विपरीत एक भी क़दम उठाया, तो फिर शान्त चित्तता अथवा आत्मसम्मान का कभी भी उपभोग कर पाने की सम्भावना ही लुप्त हो जायेगी और यह बात मुझे जीवन भर सालती रहेगी। लगता है मानो शराब की चाह मुझे है, और मेरे सामने सर्वोत्तम स्वादवाली शराब है भी, मगर सन्देह है कि कहीं

इसमें ज़हर तो नहीं मिला। मैं अपने सन्देह की पुष्टि भी नहीं कर सकता। तो क्या मैं शराब पी लूं या प्याले को फेंक दूं ताकि प्रलोभन से बच सकूं? मैं अपने निर्णय को उदात्त अथवा ईमानदार भी नहीं कह सकता—यह तो पूरे प्रसंग का अतिरेकपूर्ण वर्णन होगा—मैं इसे केवल व्यवहारिक अथवा दैवी ही कह सकता हूं। मैं शराब को ढुलका दूं। ऐसा करके मैं अपने को विशिष्ट आनंद से वंचित करूंगा और बदले में अपने लिए कुछ आशान्ति उत्पन्न करूंगा, मगर मेरा स्वास्थ्य अच्छा रहता है, दूसरे शब्दों में पर्याप्त मात्रा में शराब पीते रहना और आगामी अनेक वर्षों तक पीते रहना, मेरे लिए अहितकर न होगा, यह मैं जानता हूं। अगर मैं शाबाशी का हक़दार हूं तो केवल इसीलिए कि मैं गधा नहीं हूं।"

18

वह बाहर निकले तो कैसे? कोई गन्दी हरकत करने का नाटक करे, अपने व्यवहार में कुछ बेहूदगी प्रदर्शन करे। इससे काम नहीं चलेगा, एक ही चाल से दुबारा वही नतीजा हासिल नहीं होता। दूसरी बार पुरानी चाल से पहली की पोल खुल जायेगी और उससे न केवल वर्तमान बल्कि अतीत की पैंतरेबाज़ियां भी उजागर हो जायेंगी। उसे एकदम दामन छुड़ा लेने के हर विचार को भूल जाना पड़ेगा। आसानी से हासिल चीज़, दिखावे से हाथ से निकल जाती है, उसकी ओर ध्यान चले जाने से, असभ्य और निंदनीय (अथवा किरसानोव की शब्दावली में अहंकार के दर्शन—मूर्ख, अविचारित) बनने से हाथ से निकल जाती है। ऐसी स्थिति में बस एक ही समाधान शेष रह गया, बुद्धिमत्तापूर्ण और सर्वाधिक पीड़ादायक: धीरे-धीरे, चुपके-चुपके, बिना महसूस कराये हट जाना। यह कठिन था। यह कुटिल था, सब लोगों के देखते-देखते पीछे हट पाना और इस प्रक्रिया में पकड़ायी में न आना। फिर भी, ऐसा करना तो था ही। और फिर किरसानोव के सिद्धान्त में यह पीड़ाजनक बात नहीं थी, इसमें आनन्द भी तो था: जितनी बड़ी चुनौती हो (अहंकारी के रूप में) उतनी ही अधिक

प्रसन्नता अपनी शक्ति में और उसका सामना करने की कुटिलता में होती है।

उसने इस चुनौती का सामना कर भी लिया, एक शब्द के द्वारा भी, बोले गये अथवा निहितार्थ से अथवा कोई निगाह डाले बिना और अपने इरादे का कोई भी आभास दिये बिना ही सामना कर लिया। वेरा के साथ उसका व्यवहार पूर्ववत् सौजन्यतापूर्ण, हंसमुख रहा और स्पष्ट ही वह पहले की ही तरह वेरा के संग-साथ को उसी तरह पसन्द करता रहा। बस कुछ न कुछ बातें ऐसी बढ़ती रहीं, जिससे उसकी आवाजाही कम होती गयी अथवा ठहरने का समय घटता गया, इतना कि लोपुखोव ने कभी उसकी बांह पकड़कर और कभी कोट का कालर पकड़कर अक्सर यह उलाहना दिया और पिछले कुछ समय से तो वह झिड़कने भी लगा: "क्या, पुराने दोस्त, इस तरह का तर्क देकर तुम इतनी जल्दी खिसक नहीं सकते यहां से। लोपुखोव-दम्पत्ति के साथ बिताये जानेवाले अधिकाधिक समय में अब वह लोपुखोव के पास ही रहता। यह सब कुछ इतने ढंग से धीरे-धीरे किया गया कि इस ओर किसी का ध्यान भी नहीं गया। कहीं और काम पड़ जाने की बात को लगातार कहते रहने के साथ-साथ (बहुधा नहीं तो कभी-कभी) किरसानोव असुविधा का भी ज़िक्र करता, हालांकि प्रत्येक मौक़ा स्वाभाविक और आसानी से टल जाने लायक़ होता था। बात यहां तक बढ़ गयी कि लोपुखोव-दम्पत्ति ही उसे कई मौक़ों पर दरवाज़े तक छोड़ने के लिए, अपने मित्र को यह याद दिलाते हुए, खड़े हो जाते कि उसने फ़लां के लिए इस समय तक घर वायस पहुंचने का ज़िक्र किया था, क्योंकि वह उसे किसी भी प्रकार से टाल नहीं पाया था अथवा यह कि उसका फ़लां पहचानवाला यदि वह नियत समय पर घर नहीं पहुंचा तो बहुत नाराज़ होगा; क्या वह कल सुबह के लिए जो आज कम से कम चार घंटे काम करना है उस बात को भूल तो नहीं रहा अथवा क्या उस रात वह सोना नहीं चाहता, दस बज चुके हैं, अब इधर-उधर भटकने की ज़रूरत नहीं, बहुत समय हो गया है, अब उसे घर पहुंच ही जाना चाहिये और काम करना चाहिये। इनमें से कुछ अनुकूल संकेतों को किरसानोव अनसुना भी कर देता था: वह फ़लां के लिए यहां से टलनेवाला नहीं, अमुक को जी भरकर नाराज़

हो लेने दो, काम तो फिर भी हो जायेगा, बहुत समय है अभी, तब तक वह उनके साथ ही शाम गुज़ारेगा। हस्तक्षेप बढ़ता ही रहा और एक के बाद एक सांभ अनुसंधान की अधिकाधिक अनम्य अपेक्षाओं के बावजूद, जो उसके सुविचारित और कभी-कभी बीच में टोककर प्रकट किये मत के अनुसार भाड़ में जा सकती थीं; क्योंकि उसके परिचिति पहले से कहीं अधिक आग्रही हो गये—आश्चर्यजनक रूप से। वह भले ही विस्मित हो गया है, परन्तु लोपुखोव-दम्पत्ति बिल्कुल नहीं थे। वे तो इसे स्वत: स्पष्ट मानते थे: वह उन्नति कर रहा था और इसलिए उसके पास आनेवालों की संख्या में बढ़ोतरी होनी ही चाहिये। उसे अपने काम की ओर से लापरवाह नहीं होना चाहिये और ढील देने की ओर उसका रवैया ठीक नहीं है, पिछले कुछ महीनों में वह बेहद लापरवाह हो गया है, इसीलिए जब इससे कहा जाता है कि "तुम्हें ऐसा करना ही चाहिये, प्यारे दोस्त" और "समय हो गया है कि अब ऐसा करो, अलेक्सान्दर" तो वह सुनने को तैयार नहीं होता।

जी हां, काफ़ी दांव-पेंच का सिलसिला था, हफ़्तों तक इसी प्रकार का क्रम चलता रहा। बिल्कुल वैसे ही मन्थर और निर्बाध, जैसे घड़ी की सुई चलती है: चाहे जितनी तीक्ष्णता से देखो पर कितने चुपके से यह घूम जाती है, इसे देख पाना मुमकिन नहीं और वह निर्बाध बस अपनी चाल से चले जाती है। लेकिन ज़रा सोचिये तो कि सिद्धान्तशाली किरसानोव अपनी इस व्यवहार-दक्षता से कितना सन्तुष्ट होगा। बहरहाल, अहंकारी (स्वार्थी) और भौतिकवादी अपने को प्रसन्न रखनेवाले काम के सिवा दूसरा और कोई काम नहीं करते। और किरसानोव अपने दिल पर हाथ रखकर ऐसे लोगों में से सर्वोत्कृष्ट के साथ यह क़सम खा सकता था कि वह केवल अपने को खुश कर रहा है, अपनी ही चतुराई और प्रवीणता में मौज मना रहा है।

ये हरकतें कोई एक महीने तक अथवा कुछ अधिक समय तक जारी रहीं। इनके दौरान, यदि किसी ने नाप-जोख का ध्यान रखा होता तो प्रकट होता कि लोपुखोव-दम्पत्ति के साथ उसकी घनिष्ठता से रत्ती भर भी दरार नहीं पड़ी थी, जबकि उनकी सोहबत में बिताये जानेवाला समय पहले के मुक़ाबले चौथाई हो गया था

और वेरा के साथ बिताया जानेवाला समय आधा हो गया था। एकाध महीने में ये पक्के मित्र फिर शायद ही कभी एक-दूसरे से मिलेंगे-जुलेंगे और बाज़ी जीत ली गयी थी।

लोपुखोव की दृष्टि असाधारण रूप से तीक्ष्ण थी। निश्चय ही वह समझ लेगा कि कुछ घटित होनेवाला है।

लेकिन, वह नहीं समझ पाया।

और वेरा? वह भी नहीं समझ पायी। क्या उसके भीतर के अन्तरमंथन को भी थाह नहीं लगी इस सबकी? बिल्कुल नहीं। अलबत्ता, उसका अपना सपना था कोई।

19

वेरा पावलोव्ना का तीसरा सपना

और अब वेरा अपना तीसरा सपना देख रही है। "प्रियतम" के साथ चाय पीकर और कुछ बतियाकर वह शैय्य की शरण में पहुंचती है लेकिन सोने के लिए नहीं; अभी साढ़े आठ ही तो बजे हैं, बहुत जल्दी है सोने के लिए और इसके अलावा उसने अभी कपड़े भी तो नहीं उतारे हैं, बस किताब लेकर पड़ गयी है। हम उसे अपने बिस्तर पर पड़े पढ़ते पाते हैं, लेकिन किताब खिसककर कहीं गिर पड़ती है और यह सोचकर अचरज-सा होता है: "मैं क्यों कुछ ऊब महसूस कर रही हूं कभी-कभी पिछले कुछ दिनों से? क्या ऊब उचित शब्द है इस भावना के लिए? नहीं तो, शायद मेरा मन आज रात ओपेरा जाने को हो रहा है और किरसानोव—क्या वह इतना लापरवाह भी हो सकता है—किरसानोव को टिकट ही नहीं मिला, जैसे उसे यह मालूम ही न कि बोसियो* के कार्यक्रम का 2 रूबलवाला टिकट ग्यारह बजे बाद मिल ही नहीं सकता। मैं कोई उसे दोष थोड़े ही दे रही हूं, ख़ास तौर से इसलिए, क्योंकि उसने 5 बजे तक तो काम ही किया होगा, मुझे इसका पक्का विश्वास है, भले ही वह यह माने

* एंजोलीना बोसियो (1830—1859)—प्रसिद्ध इटालवी ओपेरा गायिका।—सं०

नहीं... फिर भी, क़सूर तो उसका ही है। आयन्दा मैं प्रियतम को ही टिकट लेने के लिए भेजूंगी और उन्हीं को कार्यक्रम देखने के लिए साथ चलने को कहूंगी। वह मुझे कभी इस प्रकार अधर में लटकाके नहीं रखेंगे और वह मुझे कहीं भी ले जाने के लिए हमेशा ही खुश होते हैं। वह इतने अच्छे हैं, प्रियतम मेरे। उसके, किरसानोव के कारण ही मैं 'त्रावियत्ता' नहीं देख सकी—कितनी बुरी बात है! मैं तो हर रात ओपेरा देखने जाऊं, चाहे कोई भी हो, चाहे जैसा हो, बुरे से भी बुरा चाहे क्यों न हो, बस इटालवी गायिका बोसियो मण्डली में प्रमुख हो। काश, मेरी आवाज़ उसके जैसी होती, तो मैं शायद दिन भर गाती रहती। कभी मेरी मुलाक़ात उससे हो जाय तो? किस तरह बात करूंगी मैं उससे? वह तोपख़ाने की कोरवाला इटालवी गायक ताम्बरलिक का अच्छा दोस्त है, क्या वह मुलाक़ात का बन्दोबस्त कर सकता है? नहीं, नहीं कर सकता। अरे बोसियो से मुलाक़ात करने का विचार कितनी बेवक़ूफ़ बात है। भला किसलिए? इसलिए कि वह मुझ अकेली के लिए गीत गाये? सच बात तो यह है कि उसे अपनी आवाज़ का भी तो ध्यान रखना है।

"उसने रूसी भाषा कब सीखी? और उच्चारण भी इतना अच्छा। लेकिन उसका शब्द-भण्डार कितना अनूठा है और इस प्रकार की सस्ती कविता कहां से ढूंढ़ निकाली? उसी व्याकरण की पुस्तक से जो मैंने भी पढ़ी है, मैं शर्त बदकर कह सकती हूं कि विराम चिन्हवाले पाठ से ढूंढ़ी होगी, व्याकरण में इस प्रकार की पंक्तियों का उदाहरण देना कैसी बेमानी बात है, यद्यपि वे कुछ बहुत संकोची नहीं होतीं, मगर भूल जाओ न शब्दों को, बस उसे गीत गाते सुनो:

> सुख की क्षण भंगुर घड़ी को पकड़ लो कसकर*,
> क्षण की पूर्ण मिठास का आस्वादन सहज लो,
> प्रेम उत्पन्न करने के लिए, अपना आह्लाद करो उत्सर्ग
> आग्रही प्रेम में, तुम्हारा विकासमान यौवन लिप्त रहे...

"कितने अनूठे शब्द 'विकासमान यौवन' और शब्दों में ग़लत बलाघात! ताहम, क्या आवाज़, भावना की कैसी शक्ति! उसकी

* पुश्किन के 'अदेली' (1822) से ग़लत ढंग से उद्धृत।—सं०

आवाज़ में बहुत अधिक, अत्यन्त सुघर रूप में परिवर्द्धन हुआ है। कैसे? और एक मैं हूं कि यह भी नहीं जानती कि किस तरकीब से परिचय करने की जुगत करूं, जबकि वह स्वयं सामने ही हो। उसे क्या मालूम कि मेरी उम्मीद यहीं थी कि वह आ जायेगी?"

"आपने मुझे न जाने कितने बार आमंत्रित किया है," बोसियो ने कहा और उसने यह रूसी भाषा में कहा।

"मैंने आपको निमंत्रित किया? भला कैसे कर सकती थी मैं, हम तो पहले कभी मिले भी नहीं। पर मैं आपको देखकर आनंद से उल्लसित हूं, बिल्कुल रोमांचित।"

वेरा उससे हाथ मिलाने के लिए बिस्तर के पर्दों को हटाती है, लेकिन गायिका की हंसी गूंज उठती है—अलबत्ता बोसियो की नहीं, ज़्यादा तो यह द'मेरिक* जैसी लगती है, 'रिगोलेटो' में जिप्सी की भूमिका में, द'मेरिक की हंसी खिलखिलाती हुई, जबकि आवाज़, आवाज़ बोसियो की है—और वह तीर की तरह पर्दों के पीछे खो जाती है। कितनी उत्तेजना प्रदान करनेवाली बात है कि यहां पर्दे हैं, अभी क्षण भर पहले तो वे यहां थे भी नहीं—वे आ कहां से गये यहां पर?

"जानती हो, मैं यहां क्यों आयी हूं?" हंसी द'मेरिक की है, लेकिन हंसनेवाली है—बोसियो।

"कौन हो तुम? तुम द'मेरिक तो नहीं हो?"

"नहीं, बिल्कुल नहीं।"

"बोसियो हो?"

गायिका हंसती है। "जल्दी क्या है मेरी दोस्त, समय पर सब पता लग जायेगा। इस समय तो यही जान लेना पर्याप्त है कि मेरे आने का प्रयोजन क्या है। मैं तुम्हारे साथ मिलकर तुम्हारी डायरी पढ़ने आयी हूं।"

"मेरी कोई डायरी नहीं। मैंने कभी कोई डायरी नहीं लिखी।"

"फिर पलंग के पास की उस मेज़ पर क्या रखा है?"

वेरा मुड़कर पास रखी मेज़ की ओर देखती है, उस पर नोटबुक रखी है, जिस पर अंकित है: 'वे० लो० की डायरी'। कहां से आ

* हेनरियेता द'मेरिक—फ़्रांसीसी ओपेरा गायिका।—सं०

गयी यह? वह उसे उठा लेती है, खोलती है, सब कुछ उसी के हाथ का लिखा है, लेकिन कब लिखा उसने?

बोसियो कहती है: "अन्तिम पृष्ठ पढ़ो तो।"

वह पढ़ती है: "फिर एक बार मैं सभी शामें अकेली घर पर ही बिता रही हूं। अरे, अब तो मैं इसकी आदी हो चुकी हूं।"

बोसियो जानना चाहती है: "बस इतना ही लिखा है क्या?"

"हां, इतना ही।"

"नहीं, ऐसा नहीं है।"

"क़सम से कहती हूं, इस पृष्ठ पर और कुछ भी नहीं लिखा है।"

आगा कहती है: "मुझे बेवक़ूफ़ नहीं बना सकतीं तुम। यह क्या है?" एक हाथ पर्दों के भीतर से निकलता है, सूक्ष्म-सा, लेकिन यह बोसियो का नहीं है, बिल्कुल नहीं, पर यह पर्दों से इस प्रकार बाहर निकला कैसे और फिर बिना उन्हें हटाये।

आगा का हाथ पृष्ठ पर जहां स्पर्श करता है, वहीं नयी पंक्तियां उभर आती हैं। वह आदेश देती है: "पढ़ो।" वेरा का दिल डूब जाता है, बिना उस पृष्ठ की ओर देखे ही, बिना यह जाने कि वहां पर क्या लिखा होगा उसका दिल डूब जाता है। वह कुछ हिचकिचाती है।

आगता आग्रह करती है: "पढ़ो।"

वह पढ़ती है: "नहीं, अब तो यह मुझे उबा देनेवाला लगने लगा है। पहले ऐसा क्यों नहीं था। पहले मैं इतनी उचाट क्यों नहीं होती थी, और अब क्यों होती हूं?"

आगता कहती है: "पीछे की ओर पृष्ठ पलटो।"

वह हुक्म की तामील करती है। "इस ग्रीष्म-काल में।" यह क्या लिखा है, उसे अचरज होता है। "यह तो जून अथवा जुलाई 1855 होना चाहिये, साथ ही तारीख़ भी अंकित होनी चाहिये 'इस ग्रीष्म-काल में' तो हरगिज़ नहीं। इस प्रकार से कौन लिखता है डायरी। 'इस ग्रीष्म-काल में आज हमेशा की नाईं अपने प्रियतम के साथ द्वीप पर सैर करने जा रहे हैं। मैं बहुत ख़ुश हूं।' यह तो अगस्त होना चाहिये, अगस्त... 15 या 12 अगस्त? बहरहाल 15 तारीख़ के ही आसपास, पिकनिक के बाद प्रियतम बीमार पड़ गया।"

"बस इतना ही?"

"इतना ही।"

"नहीं, तुमने सब कुछ पढ़कर मुझे नहीं सुनाया है। यह क्या है?" आगता ने उसे कोंचा। वही सूक्ष्म हाथ फिर जुड़े हुए पर्दों को भेदकर बाहर आया और फिर पृष्ठ को छुआ और वेरा को फिर नवांकित वाक्यों को पढ़ने पर विवश होना पड़ा। "प्रियतम, बहुधा क्यों नहीं आता साथ?"

"एक पृष्ठ और पीछे पलटो।" आगता बोलती है।

"प्रियतम इतना व्यस्त है, हमेशा मेरे लिए काम करता है, सभी कुछ तो करता है वह मेरे लिए।" उसने आप से खुशी-खुशी कहा, यही है उत्तर।

"एक और पृष्ठ पढ़ो।"

"वे इतने ईमानदार हैं, इतने उच्च सिद्धान्तनिष्ठ व्यक्ति, वे विद्यार्थीगण; और वे प्रियतम का आदर करते हैं। मुझे भी उनका साथ कितना अच्छा लगता है। मैं सादगी से उनको अपने भाइयों के मानिंद मान सकती हूं।"

"बस इतना ही?"

"इतना ही।"

"नहीं, और आगे पढ़ो।" फिर वही हाथ निकल आता है, पृष्ठ को स्पर्श करता है और अधिक नयी पंक्तियां उभर आती हैं, वेरा को उन्हें पढ़ना ही पड़ेगा चाहे जो भी हो।

"'16 अगस्त।' द्वीप पर पिकनिक के बाद का ही दिन होगा न। पिकनिक तो निश्चय ही 15 को मनायी थी," वह मन ही मन याद करती है। "'प्रियतम ने पूरा दिन रहमेतोव नामक व्यक्ति से बात करते बिताया, वही तो जिसे सबने संकीर्णतावादी का नाम दे दिया था, उसके दल के शेष सभी लोगों ने। मेरे पास तो पन्द्रह मिनट से अधिक नहीं टिका'—न हो तो तीस मिनट से अधिक, हां, मुझे पक्का विश्वास है," यही सोचा वेरा ने, "'बस नौका में जितना समय बिताया उसे न गिनें तो। 17 अगस्त। कल पूरी शाम वे विद्यार्थी हमारे पास ही बने रहे।'—और अगले दिन वह बीमार पड़ गया। 'प्रियतम ने उनसे बातचीत की पूरे समय। क्यों देता है वह अपना इतना समय उनको और मुझे कितना कम? वह

दिन में हर पल तो काम करता नहीं, हरगिज़ नहीं, वह खुद ही तो कहता कि बीच में बिना व्यवधान के कोई काम कर ही कैसे सकता है और वह तो बहुत काम ओढ़ लेता है, तरह-तरह की बातों में अपना दिमाग़ लड़ाता है, बीच में कुछ व्यवधान करने के लिए, लेकिन वह यह सब अकेले क्यों करता है, जबकि वह मेरे साथ बांट सकता है?' "

"पृष्ठ पलटो।"

"यह जुलाई भी, प्रियतम के बीमार पड़ने से पहले इस वर्ष के हर महीने तथा पिछले वर्ष भी और उससे पिछले वर्ष भी जैसी ही है। पांच दिन पहले हमारे यहां विद्यार्थी आये थे और फिर पिछली रात भी। खूब मज़ा रहा, धमाचौकड़ी मची। वे कल या परसों फिर आयेंगे और हम फिर बमचख करेंगे।"

"बस इतना ही लिखा है क्या?"

"जी हां।"

"नहीं, इतना ही नहीं है। आगे पढ़ो।" और एक बार फिर वही हाथ आकर पृष्ठ को छूता है, एक बार फिर पंक्तियां उभर आती हैं और एक बार फिर वेरा को मजबूरन पढ़ना पड़ता है:

"इस साल की शुरूआत से और वसन्त के अन्त के बाद विशेष रूप से। हां, क्या समय था कि विद्यार्थियों के साथ मौज-मज़ा होता, बस मौज-मज़ा। अब मैं यही सोचती रहती हूं कि यह सब कितना बचकानापन है, आगामी कुछ दिनों तक यह सब मुझे मनोरंजक लगता रहेगा। तब जब मैं इतनी बूढ़ी हो जाऊंगी कि इस धमाचौकड़ी में भाग नहीं ले पाऊंगी। मैं इन नौजवानों को खेलते-कूदते देखूंगी और अपना बचपन याद कर लूंगी। अलबत्ता, अभी भी तो मैं उन्हें अपने छोटे भाई मानती हूं, मैं तो हमेशा नन्ही वेरा बनी रहना नहीं चाहती हूं, उछलती-कूदती नन्ही-सी वेरा, उस समय जब गंभीर विचारों और कामकाज से कुछ आराम करने का मौक़ा है। मैं तो आखिरकार वेरा पावलोव्ना हूं न। नन्ही वेरा की तरह उछल-कूद करना, हमेशा तो शोभा नहीं देता मुझे। कभी-कभार वेरा पावलोव्ना अपने जैसे बड़ों के सामने वेरा पावलोव्ना के रूप में भी तो कुछ कहना चाहेगी।"

"कुछ पृष्ठ और पलटो।"

"एकाध दिन में मैं कार्यशाला खोलने जा रही हूं न, इसलिए मैं जूली से मिलने गयी कुछ आर्डरों के लिए। प्रियतम भी वहां आया। उसने हमें खाने के लिए रोका, शैम्पेन का दौर भी चला—मुझे उसने पूरे दो गिलास पिला दिये। जूली और मैंने गीत गाये, उछले-कूदे, चीखे-चिल्लाये और कुछ धौल-धमाल भी किया। कैसा मज़ा आया। प्रियतम देखता रहा और हंसता रहा।"

"शायद इतना ही है अब, है न?"

तब वेरा के अतिथि ने आगे पढ़ने का आदेश दिया, फिर हाथ नमूदार हुआ, उसके स्पर्श से फिर पंक्तियां उभरीं और वेरा को फिर मजबूरन पढ़ना पड़ा:

"वह बस देखता रहा और हंसता रहा। वह हम लोगों के साथ शामिल नहीं हो सकता क्या? तब तो और भी अधिक मज़ा आता। निश्चय ही, उसे कुछ अजनबीपन नहीं लगता। ऐसा नहीं कि उसने यह मन में सोचा हो कि यह सब उसके उपयुक्त नहीं है? निश्चय ही, ऐसा नहीं हो सकता। यह तो उसकी अदा है: कभी दखल मत दो, मगर खुशी-खुशी उत्साह बढ़ाते रहो दूसरों का—बस इससे अधिक और कुछ नहीं।"

"अच्छा अब एक पृष्ठ आगे जाओ।"

"आज, हमारी शादी के बाद पहली बार, हम मेरे माता-पिता के यहां गये। उस ज़िंदगी को देखकर जिसने मुझे उत्पीड़ित किया था शादी से पहले, मेरा दम-सा घोंट रखा था, उसे देखकर बहुत धक्का लगा। मेरे प्रियतम पति! उसी ने तो मुझे इस कुंभीपाक से बचाया। बाद में, मुझे अत्यन्त भयानक दु:स्वप्न का सामना करना पड़ा। मेरी मां ने कृतघ्न होने का आरोप लगाया मुझ पर, और कभी तो वह सच बोली, भाले ही एक बार ही, लेकिन इस प्रकार की भीषण सचाई से मैं केवल आतंक से कराह ही तो सकती थी। प्रियतम ने मुझे कराहते सुना और मेरे कमरे में आकर मुझे गाते देखा (गहरी नींद में निमग्न) इसलिए कि मेरी सुन्दर और सबसे प्यारी बहन वहां मुझे ढाढ़स बंधाने के लिए मौजूद थी। प्रियतम ने उस दिन मेरी दासी की भूमिका अदा की। कैसा असमंजस में डालनेवाला समां था। लेकिन वह तो इतना निर्दोष है, उसने बस मेरे कंधे को ही चूमा।"

"मतलब यह कि तुमने बस इतना ही कुछ लिखा? तुम मुझे धोखा नहीं दे सकतीं..." आगता का हाथ फिर नयी पंक्तियां उभार देता है और वेरा विवश होकर पढ़ने लगती है:

"और यह हरकत कुछ निराशा उत्पन्न करनेवाली ही थी।"

"अब फिर पीछे पलटो।"

"आज मैं अपने मित्र द्मीत्री से नये पुल के पासवाली उस सड़क पर मिली, जहां पर मैंने सोचा कि वह महिला रहती है, जो मुझे गवर्नेस की नौकरी दे देगी। लेकिन वह मुझे रखने के लिए तैयार नहीं हुई। द्मीत्री और मैं घर पर अत्यन्त ही दारुण स्थिति में पहुंचे। डिनर से ठीक पहले, मैं अपने कमरे में अकेली बैठी थी, तो मैंने अपने मन में कहा, जिस ढंग से मैं जीवित हूं, उसी तरह रहने से तो मर जाना बेहतर है। लेकिन डिनर के समय अचानक ही लोपुखोव ने कहा: 'वेरा पावलोव्ना, आओ जाम पियें मेरी पत्नी और तुम्हारे पति के नाम पर,'—मैं बड़ी मुश्किल से अपने आंसू रोक सकी—आनंदातिरेक के आंसू इस प्रकार मिली आश्चर्यजनक मुक्ति के लिए। डिनर के बाद द्मीत्री और मैं घंटों बातें करते रहे, साथ-साथ बिताये जानेवाले अपने भावी जीवन के बारे में। मैं उसे बहुत प्यार करती हूं, वह मुझे मेरी कालकोठरी से मुक्ति दिला रहा है।"

"पूरा पृष्ठ पढ़ो।"

"यहां तो अब और कुछ भी नहीं लिखा।"

"दुबारा देखो।" आगता का हाथ और अधिक पंक्तियां उभार देता है।

"मैं नहीं पढ़ना चाहती।" वेरा आशंकित हो उठी है, अनदेखी पंक्तियां उसे भयभीत किये दे रही हैं।

"जब मैं यह कहती हूं कि 'पढ़ो', तो तुम पढ़ने के सिवा और कुछ नहीं कर सकतीं, समझीं!"

वह पढ़ने लगती है: "क्या मैं उसे प्रेम केवल इसलिए करती हूं कि उसने मुझे क़ैद-मुक्त किया है? उसे नहीं, बल्कि अपनी मुक्ति को करती हूं प्रेम?"

"और अब फिर पलटो और पहले पृष्ठ को देखो-पढ़ो।"

"आज, मेरी वर्षगांठ पर, मैं पहली बार द्मीत्री के साथ

बातचीत करती थी और उसके प्रेम में पड़ गयी। इससे पहले कभी भी मैंने सांत्वना के इतने उदात्त शब्द नहीं सुने थे। सहानुभूति की दरकार पर वह कैसे सहानुभूति प्रकट करता है, मदद की जरूरत हो तो कैसे वह मदद के लिए लपकता है, उसे कितना विश्वास है कि लोग सुखी रह सकते हैं और उन्हें रहना भी चाहिये, ऐसा नहीं कि दुर्भावना और शोक का कोई अन्त नहीं, नयी और बेहतर सुखी ज़िन्दगी हमारा इन्तज़ार कर रही है। पढ़े-लिखे गंभीर विद्वान व्यक्ति के मुंह से आश्वासन के ऐसे शब्द सुनकर मैं ख़ुशी में कितनी फूल उठी थी... यह सुनकर कि मेरे अपने विचारों की पुष्टि हो रही है। उसने हम निरीह महिलाओं के सम्बन्ध में कितनी सहानुभूति के साथ विचार व्यक्त किये। वह तो किसी भी स्त्री का हृदय जीत सकता था। कितना बुद्धिमान, कितना उदात्त, कितना अच्छा इंसान है वह!"

"बढ़िया। अब अन्तिम पृष्ठ खोल लो।"

"लेकिन वह तो मैं पहले पढ़ चुकी हूं।"

"बिल्कुल अन्तिम तो नहीं पढ़ा अभी। आवरण पलटो।"

"यह तो खाली है।"

"मैं कहती हूं, पढ़ो। दिखायी नहीं देता वहां कितना कुछ लिखा है?" एक बार उसके हाथ के स्पर्शमात्र से अनेकानेक नयी पंक्तियां उभर आती हैं।

वेरा का दिल डूब जाता है।

"नहीं पढ़ूंगी मैं; नहीं पढ़ सकती।"

"मैं आदेश दूंगी तो तुम्हें पढ़ना ही पड़ेगा।"

"न मैं पढ़ सकती हूं और न पढ़ूंगी।"

"तो फिर मैं ही पढ़कर सुनाऊंगी कि तुमने क्या लिखा है वहां। सुनो: 'वह कुलीन पुरुष है और उसने मेरी रक्षा अवश्य की है। परन्तु कुलीनता तो सम्मान की भावना, विश्वास, मैत्री और समान ध्येय की भावना उत्प्रेरित करती है, रक्षक का पुरस्कार तो कृतज्ञता और भक्ति का भाव होता है। और कुछ नहीं। वह तो अधिक उत्साही व्यक्ति है, शायद मुझसे भी अधिक। जब वह उत्तेजित होता है, तो उसका स्पर्श अग्नि के समान होता है। अन्य प्रकार की आवश्यकता भी तो है, कोमल और निरन्तर स्पर्श की आवश्यकता, कोमलता की

मधुर प्रशान्ति के लिए। क्या उसे पता है यह? क्या हमारे स्वभाव मिलते हैं, आवश्यकताओं के अनुरूप हैं? वह मेरे लिए अपने जीवन की आहुति दे देगा, वैसे ही जैसे मैं उसके लिए। लेकिन क्या इतना ही पर्याप्त है? क्या वह मेरे बारे में ही सोचता रहता है हर दम? या मैं ही वैसा करती हूं? क्या मैं उसे उतना ही प्यार करती हूं, जितना प्यार खुद के लिए चाहती हूं? पहले मैं उस कोमल कमनीय भावना की ज़रूरत नहीं महसूस करती थी—नहीं, मेरे मन में उसके लिए जो भावना है वैसी नहीं है जैसी..."

"एक शब्द भी आगे मत पढ़ना!" क्रोध में भरी वेरा डायरी को एक तरफ़ फेंक देती है। "शैतान, चुड़ैल, भूतनी! क्या कर रही हो तुम यहां पर! किसने बुलाया था तुम्हें यहां? भागो, दफ़ा हो जाओ!"

आगता हंस पड़ती है, मन्द मुस्कान, दुर्भावना से शून्य।

"यह सच है, तुम उसे प्रेम नहीं करती—ये शब्द तुम्हारी ही लिखावट में हैं।"

"नाश हो तेरा!"

और इसी कोसने के साथ वेरा जाग पड़ती है, लेकिन इससे पहले कि वह यह तथ्य समझ पायी कि यह सपना था और ऐसा सपना जो खत्म हो गया है, वह उठकर दौड़ने लगती है।

"प्रियतम! मुझे अपनी बांहों में भर लो और छिपा लो! मैंने अभी-अभी अत्यन्त अवर्णनीय दुःस्वप्न देखा है!" वह और सट जाती है। "प्रियतम, कुछ स्नेह, कुछ कोमलता तो प्रकट करो, मेरी ढाल बनो और रक्षक!"

"वेरा, क्या हो गया है तुम्हें?" उसने वेरा को अपनी बांहों में भर लिया। "तुम तो पत्ती की तरह थरथरा रही हो।" उसने वेरा का चुम्बन लिया। "तुम्हारे कपोलों पर आंसू बह रहे हैं, माथे पर ठंडे पसीने की बूंदें छलछला रही हैं, तुम नंगे पांव ठंडे पत्थर के फ़र्श पर दौड़कर आयी, मेरी प्यारी—लाओ, चुम्बन से तुम्हारे पैरों को गरम कर दूं मैं।"

"हां, हां कर दो! अपना प्यार उंडेल दो मुझ पर, बचा लो मुझे! मैंने बहुत ही भयानक सपना देखा है—मैंने सपना देखा कि मैं तुम्हें प्रेम नहीं करती।"

"मेरी दुलारी, मुझे प्यार नहीं करतीं तो फिर किसे करती हो? निरर्थक, बेहूदा सपनों से भी वाहियात सपना!"

"मैं तुम्हें ही प्रेम करती हूं, बस मुझे और भी सटा लो छाती से और चुम्बन लो मेरा—मैं तुमको ही प्रेम करती हूं, बस, मैं तुम्हीं से प्रेम करना चाहती हूं।"

वह और भी सट गयी, जितनी सट सकती थी अपने पति की छाती से, उसके आलिंगन में सांत्वना मिली, उसने पति का चुम्बन लिया और फिर शान्ति से सो गयी।

20

अगली सुबह जागने पर द्मीत्री लोपुख़ोव ने अपनी पत्नी को चाय पीने के लिए आवाज़ नहीं दी। वह उसी के पास थी, सटकर लेटी हुई और निद्रा में पूर्ण रूप से निमग्न। उसने अपनी पत्नी की ओर देखा और अचरज से सोचा: "क्या हुआ उसे? किस बात ने वेरा को डरा दिया? उसे इस प्रकार का सपना क्यों आया?"

"मत उठो वेरा, मैं तुम्हारे लिए चाय ले आता हूं। मत उठो, मेरी प्यारी नन्ही दोस्त, मैं तुम्हारे लिए चिलमची ले आता हूं, यहीं पर हाथ-मुंह धो लेना।"

"ठीक है, नहीं उठती मैं। बस यहीं जमी रहूंगी—कितना अच्छा और आरामदेह लग रहा है—कितने अच्छे हो तुम प्रियतम, तुमने ऐसा सोचा, क्या इसीलिए नहीं मैं तुम्हारी पूजा करती हूं। लो, अब मैं स्वच्छ और ताज़ादम हो गयी, अब ला सकते हो मेरे लिए चाय, लेकिन रुको! पहले मुझे आलिंगन-सुख प्रदान करो!" कई मिनट तक वेरा पावलोव्ना ने अपने पति को आलिंगन-मुक्त करने में टालमटोल की। "मेरे प्रियतम, मैं सचमुच ही नादान हूं, इस प्रकार दौड़कर तुम्हारे कमरे में चली आयी—माशा क्या सोचेगी? लेकिन हम उसे यह पता ही नहीं चलने देंगे कि मैं इस कमरे में सोकर जागी हूं। मेरे कपड़े ला दोगे क्या तुम? प्रियतम, मुझे लिपटा-चिपटा लो,

मैं प्यार करना चाहती हूं, मुझे प्यार की दरकार है और मैं तुम्हें इतना प्यार करूंगी, जितना पहले भी कभी नहीं किया!"

वेरा का कमरा खाली है। वेरा माशा के बारे में एक पल भी सोचे बिना अपने पति के कमरे में पहुंच गयी है। "वह कितना कोमल, कितना स्नेही है—प्रियतम, मेरे मन में यह विचार आया कैसे, कहां से कि मैं तुम्हें प्यार नहीं करती? नादान छोकरी!"

"अच्छा, अब तो तुम शान्त हो चुकी हो वेरा, मेरी प्यारी, क्या अब बता सकती हो अपने उस सपने के बारे में, जो तुमने परसों देखा था?"

"अरे वह तो यूं ही? मैं तो बता चुकी हूं तुम्हें सब कुछ: मैंने सपना देखा कि तुम मेरे प्रति पर्याप्त स्नेह प्रकट नहीं कर रहे हो। लेकिन अब मैं बिल्कुल ही खुशो-खुर्रम हूं। ऐसा हमेशा क्यों नहीं बना रहता? ऐसा हो तो मैंने वह भयंकर सपना हरगिज़ न देखा होता। सच तो यह है कि अब मैं उसको याद भी नहीं करना चाहती!"

"अगर वह सपना न देखा होता, तो आज हम जैसे हैं, वैसे न होते।"

"यह तो सच है। मैं उस चुड़ैल औरत की अत्यन्त आभारी हूं—अब तो लगता है कि चुड़ैल हरगिज़ नहीं थी।"

"कौन-सी औरत? तुमने और कोई नयी मित्र तो नहीं ढूंढ़ ली है अपनी मंडली में शामिल होने के लिए?"

लगता तो यही है, कि मैंने ढूंढ़ ली है। बहुत मनोमुग्धकारी आवाज़वाली स्त्री, बोसियो से कहीं अधिक मुग्धकारी और उसके हाथ तो कितने शानदार हैं! आह, कैसा आश्चर्यजनक और आकर्षक व्यक्तित्व था उसका। मैं केवल उसकी बाजू ही देख सकी, क्योंकि वह खुद तो पर्दों के पीछे छिपी थी—मैंने सपना देखा कि मेरे पलंग में पर्दे लगे हैं, तभी तो मुझे वहां से भागना पड़ा, ऐसा पलंग जिसके पर्दों के पीछे वह छिपी थी—लेकिन उसके हाथ कितने विलक्षण थे! उसने प्यार का तराना गाया और मुझे महसूस कराया कि प्रेम वास्तव में क्या होता है। और अब मैं जानती हूं यह, मेरे

प्रिय। क्या मैं मूर्ख नहीं थी पहले, यह भी नहीं जानती थी, क्या मैं केवल नन्ही मूर्ख बालिका ही नहीं थी?"

"मेरी प्यारी, मेरे फ़रिश्ते, सब बातों का उचित समय होता है। पहले हमारे बीच प्रेम था और अब जो है, वह भी प्रेम ही है। कुछ को एक तरह का चाहिये और कुछ को दूसरी तरह का। कभी तुम एक प्रकार के प्रेम से खुश थी, और अब तुम दूसरे प्रकार का प्रेम चाहती हो। मेरी दोस्त, अब तुम औरत हो और अब तुम वह कुछ चाहने लगी हो, जो पहले कभी नहीं चाहा था।"

एक सप्ताह और फिर दूसरा सप्ताह बीत गया। वेरा पावलोव्ना आनंद में है; अपने पुराने कमरे में वह तभी जाती है जब उसका पति घर से बाहर गया हुआ होता है अथवा अपने काम में लगा होता है। लेकिन तब भी, जब कि पति काम में लगा होता है, वह बहुधा उसी के पास अध्ययन-कक्ष में होती है। और यदि वह यह समझती है कि उसकी मौजूदगी से उसके काम में बाधा पड़ रही है, काम करने के लिए पति को एकचित्तता दरकार है, तो फिर वह क्यों बने रुकावट? ताहम, हर काम के लिए तो इतनी एकचित्तता की आवश्यकता नहीं होती, अधिकांश अनुसंधान तो यांत्रिक होता है, ऐसे में वह नज़र उठाकर देख सकता है कि उसकी पत्नी उसके पास काफ़ी समय से है और उस समय के दौरान लाड़-प्यार व दुलार की फुहारें बरसती रही हैं। सुखानुभूति के लिए वहां दूसरे सोफ़ की ही तो ज़रूरत थी, जो कि द्मीत्री सेर्गेइच के सोफ़े से छोटा था। और उसी पर तो लेटा देख रहे हैं हम वेरा को और उसका पति प्रशंसा करने के लिए निकट ही तो है।

"प्रियतम, तुम मेरे हाथों का चुम्बन क्यों ले रहे हो? पता है तुम्हें, मुझे यह पसन्द नहीं।"

"सच? मैं तो भूल ही गया था कि इससे तुम नाराज़ हो जाती हो। लेकिन क्या करूं, मैं चाहता हूं, तो मैं करूंगा ही!"

"प्रियतम, दो बार बचा चुके हो तुम मुझे। एक बार तो उन कुटिल लोगों से और दूसरी बार खुद मुझी से। बस ऐसे ही स्निग्ध बने रहो, चाहे जैसे भी चाहो!"

एक और महीना बीत गया। वेरा खाने के बाद सुस्ताने के इरादे से दोनों के शयनागार अथवा पति के अध्ययन-कक्ष में पड़े मुलायम और बड़े-से सोफ़े पर लेटी है। द्मीत्री उसके पास ही बैठा है। वेरा ने अपने हाथ पति के गिर्द लपेट रखे हैं, अपना सिर उसकी छाती पर टिकाया हुआ है और दिवास्वप्न में डूब गयी है, ऐसे कि जिससे उसके पति के चुम्बन भी नहीं जगा पाते—क्या उसकी आंखों में आंसू छलकनेवाले हैं?

"वेरा, मेरी प्यारी, बताओ तो क्या सोच रही हो?"

वह निशब्द फूट पड़ती है—लेकिन, लो, उसने अपने आंसू पोंछ डाले हैं।

"नहीं, प्यारे, इतने मृदु-मधुर मत बनो, बहुत है इतना ही, शुक्रिया,"—उसकी चितवन इतनी विनम्र, इतनी निष्कपट है,—"मेरे प्रति इतने अच्छे होने के लिए शुक्रिया।"

"क्या तात्पर्य है तुम्हारा, वेरा?"

"भले हो प्रियतम तुम, बहुत ही भले।"

दो दिन बाद और फिर खाने के ही बाद वेरा फिर सुस्ता रही है, या समझिये लेटी ही हुई है, अपने ही बिस्तर पर, और हां अपने ही कमरे में। उसका पति, जो उसके पास ही बैठा हुआ है और उसे अपनी बांहों में बांध रखा है, वेरा की ही तरह विचारों में खो गया है।

लोपुख़ोव सोचता है: "कहीं कुछ गड़बड़ है ज़रूर, मुझमें कुछ कमी है।"

वेरा सोचती है: "कितना अच्छा है वह, मैं कितनी कृतघ्न हूं।"

वे इसी सोच में डूबे थे। वह प्रकटतः कहती है: "तुम को सच में अपने ही कमरे में जाना चाहिये, प्रियतम, तुम्हें कुछ काम-वाम, आराम-वाराम की ज़रूरत होगी।" और ये शब्द उसके मुंह से बिल्कुल सहज और सादगी से निकलते हैं, उदासीनता से नहीं।

"क्यों अपने पास से भगा देना चाहती हो मुझे तुम, वेरा? मैं

यहां पर बिल्कुल सुख में हूं।" ये शब्द भी उतनी ही सहजता से, उत्फुल्लता से कहे गये।

"नहीं प्यारे, अब तुम जाओ यहां से। मेरे लिए पहले ही बहुत कुछ कर चुके हो तुम। जाओ और थोड़ी देर आराम कर लो।"

वह उसका चुम्बन लेता है और वेरा अपनी चिन्ताओं को भूल जाती है, और फिर से सहजता और ख़ुशी से सांस लेती है।

कहती है: "शुक्रिया तुम्हारा, प्रियतम।"

उधर किरसानोव भी बिलकुल खुश है। कुछ कठिनाईपूर्ण समय तो था तब, लेकिन कठिन होते हुए भी संघर्ष से प्राप्त प्रतिफल अत्यन्त सन्तोषजनक था और जिसे न जाने कितना समय लग जाता वैसे, जीवनपर्यन्त उसके हृदय में बसी रहनेवाली हार्दिकता के लिए। उसका आत्मसम्मान बरक़रार था, सचमुच ही। वह उन दोनों को निकटतर ले आया। सचमुच ही ले आया था। और किरसानोव अपने सोफ़े पर पसरा पड़ा था, हाथ में सिगरेट था और मन ही मन सोच रहा था: "सम्माननीय बनो, दूसरे शब्दों में अपना हिसाब पुख़्ता ढंग से करो, कहीं भी कोई ग़लती न रह जाय, याद रखो, कि जोड़ अपने हिस्सों से कहीं ज़्यादा होता है। दूसरे शब्दों में तुम्हारा इंसानी स्वभाव अपने आप में बड़ा है और तुम्हारी ज़िन्दगी भी तुम्हारी प्रत्येक अलग-अलग आकांक्षा से, और इसलिए उनमें मतभेद होने की दशा में एकल आकांक्षा के स्वार्थ की अपेक्षा उन पर तरजीह दी जानी चाहिये—यह सब सिवाये इसके कुछ और नहीं कहता कि ईमानदार बनो और सब ठीक-ठाक रहेगा। विज्ञान और उसकी सम्पूर्ण उपलब्धियों को मापने के लिए एक यही सामान्य नियम है, सुख की जीवनावधि के बारे में सम्पूर्ण नियम-संहिता। बेशक, भाग्यशाली व्यक्ति वही है, जिसके पास इतना कुछ समझने के लिए साधन हैं। इस सिलसिले में मैं ख़ुद भी तो कोई अभागा नहीं। सच है कि मैं स्वभाव की तुलना में प्रशिक्षण का बहुत ऋणी हूं, शायद बहुत ही अधिक। लेकिन धीरे-धीरे यह हमारे जीवन की प्रत्येक परिस्थिति द्वारा हमारे पालन-पोषण के प्रत्येक चरण में मन में बैठा देने के सामान्य नियम के रूप में जम जायेगा, और तब प्रत्येक व्यक्ति

उसका उतना ही अच्छा उपयोग कर पायेगा, जैसा कि मैं कर पा रहा हूं। सच मानिये, मैं सुखी हूं। लेकिन मुझे लोपुख़ोव-दम्पत्ति के यहां जाना चाहिये। पिछले तीन हफ़्तों से मैं वहां नहीं गया हूं। जाना चाहिये मुझे अब तो, भले ही मुझे वहां आनंद न मिले। ऐसी बात नहीं कि मैं उनके संग-साथ के लिए तरस रहा हूं। एकाध दिन में जाऊंगा मैं वहां पर, आधे घंटे के लिए। या अभी एक महीने तक और न जाऊं? यह भी तो कर सकता हूं मैं। अब तो वहां से खिंचाव आख़िरी चाल तक पूरा हो चुका है। मैं उनकी नज़रों से इतना दूर हो चुका हूं कि उन्हें पता भी न चलता होगा कि मैं तीन हफ़्ते से या तीन महीने से उनसे मिलने के लिए नहीं पहुंचा हूं। कितना भला लगता है, यह सोचकर कि उनके साथ मैंने सम्मानजनक व्यवहार ही किया। मेरा मतलब है कि अब उस पर सन्तोष का गर्व किया जा सकता है।"

दो या तीन दिन बाद और दोपहर के खाने के बाद ही, लोपुख़ोव अपनी पत्नी के कमरे में पहुंचा और कमरे की वासी को बांहों में उठाकर अपने अध्ययन-कक्ष में ले गया। "यहां पर झपकी ले सकती हो, मेरी यार," उस यार को देख-देखकर नैन-सुख प्राप्त करेगा वह। होंठों पर मुस्कराहट लिए ऊंघ गयी वेरा और लोपुख़ोव ख़ुद पुस्तक लेकर बैठ गया। वेरा ने अपनी आंखें खोलीं और सोचने लगी:

"कैसा साज़-सामान सजा रखा है उसने यहां, बस ज़रूरत भर की चीज़ें। और फिर यह बात भी तो है कि द्मीत्री की पसन्द भी तो कुछ बहुत नहीं, वह देखो पिछले साल मैंने सिगार का जो डिब्बा उसे दिया था, वह रखा है, आज तक उसने उसे छुआ नहीं है। बेशक, इन्तज़ार कर रहा है किसी अतिरिक्त विशेष अवसर का। बस उसकी एकमात्र ऐय्याशी है सिगार पीना। बिल्कुल ग़लत—उस बूढ़े के फ़ोटोग्राफ़ को क्या कहेंगे—कितना कुलीन चेहरा है, नेत्र, जिनमें सहिष्णुता और ज्ञान के संगम की विराट अभिव्यक्ति

है—द्मीत्री ने इसे हासिल करने के लिए ज़मीन-आसमान एक कर दिया था। रोबर्ट ओवेन* का चित्र किसी के पास नहीं। उसने तीन पत्र लिखे, दो लोगों के ज़रिये भेजे, जिन्हें वह बूढ़ा व्यक्ति मिला ही नहीं, और तीसरा पहुंच गया, तब प्राप्तकर्त्ता ने असाधारण कष्ट उठाकर अन्ततः अपनी सूरत से बहुत ही मिलता-जुलता चित्र बनवाकर उसे भेजा। मुझे याद है, द्मीत्री की ख़ुशी का ठिकाना नहीं था, जिस दिन उसे यह चित्र मिला। और उस व्यक्ति से जो पत्र मिला वह तो और भी हर्षोत्पादक था। लोपुख़ोव उन्हें "वृद्ध तपस्वी" कहता है। पत्र में ओवेन ने मेरे उन प्रयासों की उच्च सराहना की थी, जो द्मीत्री ने उन्हें लिख भेजे थे। और उस कमरे में विलास की एक और वस्तु है: मेरा चित्र। उसने छह महीने तक पैसे बचाये ताकि वह किसी अच्छे चित्रकार से मेरा यह चित्र बनवा सके। हे भगवान, उन दोनों ने मुझे कितने दुख दिये। तो सिर्फ़ दो चित्र हैं यहां। लगता है, मेरे कमरे में जो प्रिन्ट और फ़ोटोग्राफ़ हैं उनको लगाने में कुबेर का कोष ख़र्च करने की ज़रूरत नहीं। उसके कमरे में फूल भी नहीं हैं, जबकि मेरे कमरे में फूलों का बगीचा ही खड़ा है। क्यों नहीं चाहता वह फूल और मैं, मैं तो उनकी हरदम कामना करती रहती हूं? क्या यह इसीलिए है कि मैं स्त्री हूं? क्या यह इतनी तुच्छ बात है? शायद इसीलिए कि वह गंभीर अध्येता है? लेकिन किरसानोव के यहां चित्र लगे हैं और फूल हैं और वह भी इतना ही गंभीर अध्येता भी है।

"उसे मेरे साथ अपना अधिक समय बिताने में कठिनाई क्यों होती है? मुझे पता है कि उससे कितना प्रयास करना पड़ता है इसके लिए। तो क्या यह सब अध्ययन के ही कारण हो सकता है? किरसानोव भी तो है अध्येता... नहीं! नहीं, वह अच्छा व्यक्ति है, उसने मेरे लिए सब कुछ तो किया है और सभी कुछ प्रसन्नतापूर्वक करने के लिए आज भी तैयार होगा। और कौन है जो उसकी तरह मुझे प्रेम कर सकता

* रोबर्ट ओवेन (1771—1858)—अंग्रेज़ यूटोपियन समाजवादी, जो कि रूस के प्रगतिशील क्षेत्रों में 1860 के दशक में काफ़ी लोकप्रिय था।—सं०

है? और मैं भी उसे प्रेम करती हूं। मैं भी उसके लिए सभी कुछ कर सकती हूं..."

"वेरा? जाग रही हो क्या तुम?"

"प्रियतम, तुम यहां कुछ फूल क्यों नहीं सजाते?"

"यदि मेरी प्रिया की यही मर्ज़ी है, तो कल सुबह मैं सबसे पहले फूल ही ले आऊंगा यहां के लिए। पहले मुझे कभी सूझा ही नहीं यह, सच। हां बड़े अच्छे लगेंगे फूल।"

"मैं तुमसे कुछ और भी अनुरोध करना चाहती हूं: कुछ चित्र भी ख़रीद सकते हो अपने कमरे के लिए। चलो, ऐसा करते हैं कि फूलों और चित्रों को ख़रीदने का ज़िम्मा मैं ले लेती हूं।"

"तब तो मुझे बहुत ही अच्छा लगेगा—ऐसी बात नहीं कि मैं ला नहीं सकता, मगर तुम लाओगी तो और भी अच्छा लगेगा। मगर वेरा, तुम्हें कोई चीज़ खाये जा रही है, बेशक तुमने जो भयंकर सपना देखा था वही। भला बताओगी कुछ और अधिक जिससे कि तुम इतनी बुरी तरह डर गयीं?"

"इस समय तो मेरे मन में वह बात नहीं थी, प्यारे। और फिर उसकी याद ही बड़ी पीड़ादायक है।"

"लेकिन, वेरा, शायद इससे मेरे मन को कुछ तसल्ली मिले, आख़िर था क्या वह, किस बाबत?"

"जैसी मेरे सरताज की आज्ञा। मैंने सपना देखा कि मैं ओपेरा न जा पाने के कारण झुंझला-सी रही थी और बोसियो के बारे सें सोच रही थी कि तभी एक स्त्री मेरे सम्मुख प्रकट हुई, पहली नज़र में तो मैंने उसे गायिका ही समझा, लेकिन वह मुझसे बराबर छिपी रही। उसने मुझे मेरी डायरी पढ़ने पर विवश किया, जिसमें मैंने केवल अपने एक-दूसरे के प्रति प्रेम के सिवा और कुछ भी तो नहीं लिखा था। लेकिन ज्योंही वह कोई पृष्ठ छूती कि वहां पर नये शब्द उभर आते, जिनका निहितार्थ यही होता कि मैं तुम्हें प्यार नहीं करती।"

"मेरी जान, माफ़ कर देना मेरे इसरार को: क्या यह केवल सपना ही था?"

"प्यारे द्मीत्री, अगर सपना न होता तो क्या मैं इसका ज़िक्र भी करती? याद है, मैंने तो तुम्हें तत्काल ही बता दिया था।"

वह इतनी कमनीयता से, सहजता और सचाई से बोली कि द्मीत्री का हृदय ऐसी हार्दिक, मधुर विह्वलता से मंत्रमुग्ध हो गया, जिसका अनुभव एक बार करके कोई भी भाग्यशाली मनुष्य कभी भूल नहीं सकता। कैसी विडम्बना है, कितने कम, कितने कम पति इस भावना को जान पाते हैं! इसके सामने प्रेम की सम्पूर्ण प्रसन्नता का प्रतिदान फीका पड़ जाता है। यह हृदय को हमेशा के लिए निर्मल आनन्द से, अत्यन्त पुनीत गौरव से भर देता है। वेरा की अनुक्रिया, जिनमें कुछ दुःख का पुट था, एक प्रकार के उपालम्भ से ओतप्रोत थी, परन्तु यह उपालम्भ सही अर्थों में इस प्रकार व्यक्त हो सकता था: "तुम्हें तो पता होना चाहिये मेरे मित्र, तुम पर मेरा अटल विश्वास है। पत्नी का कर्त्तव्य है कि अपने हृदय के गुप्त आवेगों को पति से छिपाये रहे, क्योंकि विवाह की संहिता ही यही है। लेकिन, मेरे दोस्त, जिस तरह का व्यवहार तुमने किया है, मुझे कुछ भी छिपाने की ज़रूरत नहीं, मेरा हृदय तुम्हारे लिए वैसे ही खुली किताब है जैसे कि मेरे अपने लिए।" पति की यही तो उच्चतम योग्यता है, अत्यन्त अद्वितीय गुण के प्रति उच्चतम प्रशस्ति; और इसे अर्जित कर लेने का अर्थ है किसी भी प्रकार की भर्त्सना से परे होना, इस समय विवेक में हर प्रकार विश्वास और सर्वदा के लिए स्पष्ट, यह जान लेना कि साहस कभी डगमगायेगा नहीं तुम्हारा, इंसान पर आ पड़ी किसी भी प्रकार की और प्रत्येक परीक्षा की घड़ी को झेल लोगे अपने अटल संकल्प के कारण, तुम्हारी आत्मा के जगत में भाग्य शक्तिहीन होने के सिवा और कुछ नहीं, इस प्रकार का उच्च सम्मान तुम्हारे जीवन के अन्तिम समय तक उपलब्ध रहेगा तुम्हें, चाहे कितने भी प्रहार होते रहे, तुम्हारा भाग्य है अपनी मानव-गरिमा का सुखी संज्ञान। हम लोपुखोव के बारे में काफ़ी कुछ जान चुके हैं कि यह समझ सकें कि वह किसी भावुकता का शिकार नहीं है, तथापि उसकी पत्नी के शब्दों से उसके चेहरे पर तमतमाहट उभर आयी।

"वेरा, प्यारी दोस्त, तुमने मेरी भर्त्सना की।" जीवन में दूसरी और अन्तिम बार उसकी वाणी कंपकंपा गयी। पहली बार तब जब उसके मन में संदेह जागा कि उसने वेरा को ठीक समझा या नहीं और अब इस खुशी से कि उसने ठीक ही समझा। "लेकिन मैं इस

भर्त्सना को प्रेमालिंगन से भी अधिक मानता हूं। मेरा सवाल बेहूदा ज़रूर था, लेकिन मुझे उसके बदले जो फटकार मिली उससे मैं खुश हूं। देखो न, मेरी आंखों में आंसू हैं, अपने बचपन के बाद आज मैं पहली बार रोया हूं।"

उस शेष सांझ भर वह वेरा की ओर से अपनी आंखें हटा नहीं सका, और इस तमाम समय उसकी कोमलता वेरा को एक बार भी बनावटी नहीं रही, यह वेरा के जीवन की सबसे सुखी सांझों में से थी अथवा कम से कम आज तक की सांझों में से तो थी ही। यह लिखे जाने के कुछ वर्षों बाद वह ऐसे सुख के अनेक दिनों, महीनों और वर्षों का उपभोग करती रहेगी, जब उसके बच्चे, उसके सामने पूरे जवान हुए खड़े होंगे, योग्य और अपनी ही सुखी-समृद्ध। यह सभी अन्य सुखों से बढ़कर सुख होगा, आत्मसंतोष की परितृप्ति के क्षणिक पल को सामान्य दिन के सामान्य स्तर में बदल देगा। और वेरा के लिए यह ऐसा आनंद है, जो आगे मिलनेवाला है।

21

जब उसकी पत्नी उसकी गोद में सो गयी और उसने उसे अपने सोफ़े पर लिटा दिया तो उसने सपने की ओर अपना पूरा ध्यान केन्द्रित किया। उसे इस बात की चिन्ता बिल्कुल नहीं थी कि वेरा उसे प्रेम करती है अथवा नहीं—यह तो वेरा का बिल्कुल अपना निजी मामला था और फिर जैसा कि वह समझ रहा था, उन दोनों में से किसी का भी बस नहीं चल सकता, जो अपने आप ही मिट जायेगा, जिसके बारे में सुविधा से ही सोचा जा सकता है और निश्चय ही अभी नहीं, कि वह यह गुत्थी हल करने की कोशिश करे कि यह आशंका किस बात से उत्पन्न हुई है कि वेरा अब उसे प्यार नहीं करती है।

यह पहला अवसर नहीं था कि उसने इस प्रश्न को हल करने में घंटों लगाये हों: बहुत दिनों पहले यह समझ चुका था कि वह वेरा के प्रेम को भोगने की आशा अब नहीं कर सकता। यह अप्राप्ति उसे छिन्न-भिन्न कर देगी। लेकिन वह करे भी तो क्या? क्या वह

अपने स्वभाव ही को बदल सकता है, उस कमनीय प्रशान्ति को विकसित कर सकता है, जिसकी चाह वेरा को है, तब तो परिणाम बिल्कुल ही भिन्न होगा। फिर भी उसे पता था कि अब पानी सिर से ऊपर निकल चुका है। जब तक कोई प्रवृति सहज नहीं होती अथवा इरादे से स्वतंत्र रूप में अनुभव द्वारा घनीभूत नहीं होती, तब तक उसे इच्छा की किसी संक्रिया द्वारा विवश नहीं किया जा सकता और न ही कुछ बिना सच्ची उत्फुल्लता के ही उचित ढंग से सम्पन्न किया जा सकता है। बस इससे तो समस्या का समाधान हो गया। अब तक इतने घंटों विचार करने का यही तो उद्देश्य रहा। और अब अपने ही दृष्टिकोण से विचार करके (स्वार्थी के रूप में वह सर्वोपरि और सदैव अपने ही बारे में तो सोचेगा, दूसरों के बारे में सबसे बाद में और वह भी तब जब कि सोचने के लिए दूसरी कोई बात न हो) वह दूसरी समस्या के बारे में अर्थात् वेरा की समस्या के बारे में अब सोच सकता था। वह क्या कर सकता था उसके लिए? वेरा को तो अभी यह भली-भांति जान पाना था कि उसके मन में क्या-कुछ हलचल मची हुई है। उसे भी तो अभी उतना ही सहना है, जितना कि द्मीत्री सह चुका है, यह स्वाभाविक ही था, इस दृष्टि से कि उनमें चार वर्ष का अन्तर था और यौवन की दहलीज़ के चार वर्षों का तो प्रचुर महत्व होता है। क्या वह अपने अपेक्षाकृत अधिक अनुभव से वेरा की समस्या का समाधान उसके लिए नहीं कर सकता? क्या वह उसके सपने की व्याख्या नहीं कर सकता है?

इस समय उसकी अपनी प्रस्थापना यह थी: पूर्वाभास भी उसी स्रोत से उत्पन्न होना चाहिये, जिससे वेरा का सपना उगा था और सपने का परिणाम उसके विषय-तत्व में प्रतिबिम्बित किसी बात से निकलना चाहिये। वेरा ने कहा था कि वह ओपेरा न जाने के कारण कुछ दुखी थी। अपनी और वेरा की जीवन-शैली की पड़ताल से वह एक-एक करके समझने की कोशिश करने लगा। वेरा अपने अवकाश का अधिकांश समय अकेले ही बिताती थी, जैसे कि वह स्वयं करता था। फिर इसमें बदलाव आया: वेरा का मन नियमित रूप से बहलाया जाने लगा। और अब फिर वही पुराना पैटर्न लौट रहा है, पैटर्न जिसे अब वह सहन नहीं कर सकती,

क्योंकि यह उसके स्वभाव के विपरीत था, और बेशक अधिसंख्य लोगों के साथ ऐसी स्थिति में इसी प्रकार होता है। यह तो बिल्कुल साफ़ समझने में आनेवाली बात थी। इस निष्कर्ष को नाना प्रकार के तर्क-वितर्क की कसौटी पर कसने के बाद यही समझ में आया कि इस पहेली की कुंजी किरसानोव है, उनमें बढ़ती हुई आत्मीयता और बाद में किरसानोव द्वारा खिंचाव। किरसानोव क्यों खिंच गया इस प्रकार? यह तो बिल्कुल स्पष्ट ही था: उसके पास समय का अभाव था, वह बहुत अधिक व्यस्त था। लेकिन कोई भी ईमानदार व्यक्ति, जो लोपुख़ोव जैसा अनुभवी, शिष्ट और विशेष रूप से उसके जैसा सैद्धान्तिक हो वह किसी भी छल अथवा प्रपंच का शिकार कैसे हो सकता है। बल्कि वह अपने को किसी असावधानी से धोखा दे सकता है, जैसे किरसानोव जब पहली बार पीछे हटा था और लोपुख़ोव ने उसकी ग़लत व्याख्या कर ली थी, क्योंकि अगर सचाई पता होती तो न तो यह उसके सर्वोत्तम हित में था और प्रसंगवश किसी उद्देश्य को ढूंढ़ने के लिए दिल की अतल गहराइयों में उसे ढूंढ़ना ही था, क्योंकि वह तो केवल इस बारे में चिन्तित था कि वह स्वयं अपनी ज़िम्मेदारी में कितना चूका है—स्पष्टतया बिल्कुल नहीं—और बस इतना ही सोचकर घटना को भुला दिया। क्या उसका जो अपने मित्र का परामर्शदाता था, उसका यह कर्त्तव्य था कि उस व्यक्ति को नेकी की राह के बारे में बताये, जो खुद उससे कुछ कम ज्ञानी नहीं था। क्यों परवाह करे वह? क्या किरसानोव के साथ उसकी दोस्ती इतनी मूल्यवान थी? जब तक तुम भलेमानस बने रहते हो और चाहते हो कि मैं तुम्हें चाहूं, तब तक मेरे भाई, मैं खुशी से ऐसा करूंगा, अन्यथा, माफ़ करना तुम्हारा रास्ता अलग, मेरा अलग। मुझे क्या परवाह कि तुम किस रास्ते पर चलते हो, और हो भी क्यों भला। ठीक है, मेरे जीवन में कुछ तो अन्तर पड़ेगा, किसी भी छोटी बात से बस अफ़सोस यही रहेगा कि मैंने किसी मूर्ख को अच्छा इंसान समझ लिया था। जब तक किसी मनुष्य का व्यवहार हमारे अपने हितों से संबंधित नहीं तो यह हम गंभीर लोगों के लिए साधारण-सी बात है। बस दो अपवाद हैं और दोनों ही ऊपर से आकर्षक लगते हैं, दोनों ही उनके साथ घटते हैं जो संकीर्णतम, अत्यन्त स्वार्थी अर्थ में "हित" के आदी होते हैं। पहला: यदि सामान्य रूप से मानव

स्वभाव पर प्रकाश डालनेवाले मनोवैज्ञानिक परिघटना के रूप में ये कृत्य सैद्धान्तिक दृष्टि से हमारे लिए रुचिकर हैं अर्थात् उनमें हमें बौद्धिक रुचि है। दूसरा: अगर अन्य व्यक्ति का भाग्य हम पर निर्भर होता है, तब हमें इस पर खूब-खूब दुख होता कि उसके कार्य की ओर बिल्कुल ध्यान नहीं दिया अर्थात् इसका सम्बन्ध हमारे अन्त:करण से है। फिर भी किरसानोव ने पहली बार जो अनर्गल कलाबाज़ी खायी थी उसमें ऐसा कुछ नहीं था कि लोपुख़ोव उसे तब प्रचलित लोकाचार के अत्यन्त पारम्परिक रूप में ग्रहण न करता। और न ही यह किसी सम्मानजनक आस्थावाले मनुष्य के लिए ही कोई विरल बात थी कि वह मर्यादा के अशिष्ट प्रभाव के आगे घुटने न टेक देता। वह अपने मित्र के जीवन में कोई महत्त्वपूर्ण भूमिका अदा कर सकता है यह बात लोपुख़ोव के लिए कल्पनातीत थी। किरसानोव को उसकी सीख की कोई दरकार थी क्या? इसलिए यही निष्कर्ष: दफ़ा हो जाओ मेरे मित्र, चाहे जहां जाओ, मैं क्यों तुम्हारे बारे में अपना सिर खपाऊं? लेकिन अब बात बिल्कुल ही दूसरी थी। किरसानोव की चाल उसे उसी स्त्री के प्रति प्रासंगिक से कुछ अधिक ही लगी, जिसे वह प्यार करता था। वह उनका अध्ययन अत्यन्त सावधानी के साथ करने के सिवा और कर भी क्या सकता था। और लोपुख़ोव की मनोदशावाले व्यक्ति के लिए किसी बात का सावधानीपूर्वक अध्ययन करने का मतलब है क्यों, कैसे और किसलिए जानना-समझना—अथवा कुछ ऐसा ही। मानव-हृदय के विश्लेषण में उसे अपना सिद्धान्त भूलातीत लगा और सच कहूं तो मुझे भी यही लगता है। इन तमाम वर्षों के दौरान, जिनमें मैंने स्वयं उसका अनुपालन किया है, इसने मुझे एक बार भी गुमराह नहीं किया अथवा सचाई को ढूंढ़ लेने में असफल सिद्ध नहीं किया, वह चाहे जितने गहरे छिपी हुई हो और इंसान के चाहे जिस सरोकार से सम्बद्ध हो। लेकिन फिर भी यह बात तो है ही, यह सिद्धान्त आसानी से तो नहीं पकड़ में आता, इस पर दक्षता हासिल करने के लिए यथेष्ट समय और विचार की अपेक्षा होती है।

यद्यपि अपनी पत्नी के प्रति किरसानोव की भावना की तह तक पहुंचने के लिए लोपुख़ोव के वास्ते लगभग आधा घंटा पर्याप्त रहा। वह देर रात तक बैठा-बैठा मनोमंथन करता रहा। समस्या का

समाधान हो गया, लेकिन कुछ विशेष चित्ताकर्षक नहीं। प्रत्येक विवरण की पूर्ण खोज, फिर भी इतनी विचित्र कि वह जागता रहा और घंटों उसी की बाबत सोचता रहा।

अन्ततः क्या अपना मानसिक तनाव बढ़ाने के लिए वास्तव में क्या सचमुच उचित थी? रात के तीन बजे गये। अगर वह सो नहीं पा रहा था तो नींद की गोली मौजूद थी न। उसने दो गोलियां गटकीं और यह देखने की सोची कि "वेरा किस हालत में है," लेकिन उसने कुर्सी वेरा के पलंग के पास सरकायी और उस पर बैठ गया, फिर उसका हाथ लेकर चुम्बन ले लिया। "मेरे प्यारे, क्यों तुम रतजगा कर रहे हो, और वह भी मेरे लिए; तुम कितने अच्छे हो, मैं तुम्हें बहुत प्यार करती हूं", वह बुदबुदायी, किन्तु जागी नहीं। नींद की गोली की तगड़ी ख़ुराक किसी भी टूटे दिल को सुला देगी, तगड़ी ख़ुराक और ये दो गोलियां—वह तो महसूस भी करने लगा कि उसे झपकी आने लगी है। इसलिए अपने भौतिकवादी दृष्टिकोण के अनुसार एक बार दिल टूटना काफ़ी के चार कड़क प्यालों के बराबर था, इनकी तुलना में एक गोली बहुत कम थी और तीन बहुत ज़्यादा। और अपने इस समीकरण पर मन ही मन हंसते हुए, वह सो गया।

22

काल्पनिक कथन

अगले दिन किरसानोव अस्पताल से घर देर से लौटा और भोजनोपरान्त सिगार पीने, पढ़ने और आराम करने के लिए आराम से पसरने ही वाला था कि लोपुख़ोव आ धमका।

"ग़लत समय पधारनेवाला सुस्वागतम की आशा नहीं कर सकता," उसने परिहास में कहा तो, मगर कुछ खिसियाकर। "समझता हूं, अलेक्सान्दर, मैं ख़लल डाल रहा हूं, लेकिन कोई चारा भी तो नहीं है। मुझे कुछ गंभीर बातचीत करनी है तुमसे। मैं तो जल्दी ही तुम्हारे पास पहुंचना चाहता था, मगर मैं सबेरे देर तक सोता रहा। मुझे पता था तब तक तुम निकल चुके

होओगे।" वह परिहास नहीं कर रहा था, अब तो। किरसानोव को मन ही मन ताज्जुब हुआ। "क्या बात हो गयी? कहीं अनुमान तो नहीं लगा लिया इसने?" लोपुखोव बोलता गया, और साथ ही उसने बैठने के लिए कुर्सी भी खींच ली। "अच्छा अब बात हो जाय, मुझसे नज़र मिलाओ, मिलाओ तो?"

"हां, वह इसी के बारे में बोलेगा, कोई संदेह नहीं।"

किरसानोव ने गुरु गंभीर स्वर में बोलना शुरू किया: "सुनो द्मीत्री, हम लोग मित्र हैं, तुम और मैं। लेकिन एक सीमा ऐसी भी होती है, जिसे मित्र भी नहीं लांघते। बस, कृपा करके और आगे कुछ मत कहो। मैं इस समय 'गंभीर बातचीत' के मूड में नहीं हूं। न अभी और न कभी।" उसने इस प्रकार घूरा मानो अपने सामने खड़े व्यक्ति के किसी घातक इरादे की थाह ले रहा हो।

"इसके सिवा और कोई चारा भी तो नहीं है, अलेक्सान्दर," लोपुखोव ने कुछ दृढ़ स्वर में आग्रह किया, बस कुछ ही दृढ़ स्वर में, वैसे उसका स्वर खोखला-सा था: "मैं तुम्हारी कारसाज़ी बहुत अच्छी तरह समझ चुका हूं।"

"कहे देता हूं, एक भी शब्द आगे मत कहना, वर्ना हमेशा-हमेशा के लिए शत्रुता हो जायेगी। हां, यह बात स्पष्ट है कि तुम मेरी नज़र में अपनी इज़्ज़त खोने पर ही तुले हो।"

"था कभी ऐसा भी समय जब तुम्हें यह नुकसान बिल्कुल ही चिन्तित न करता, याद है? अब तो सब कुछ शीशे की तरह साफ़ है। तब मैं बिल्कुल ही चौकन्ना नहीं था।"

"द्मीत्री, चले जाओ यहां से वर्ना मैं ही खुद निकल जाऊंगा।"

"नहीं जा सकते तुम, क्या तुम यह समझते हो कि यह सब मैं तुम्हारे लिए कर रहा हूं?"

किरसानोव कुछ न बोला, शान्त रहा।

"मेरा पलड़ा भारी है, इस समय, तुम्हारा नहीं। मैं ही महान शहीद सिद्ध हो रहा हूं। अलबत्ता, यह निरी मूर्खता है। लेकिन विवेक ने मेरे लिए कोई विकल्प भी तो नहीं छोड़ा है। अलेक्सान्दर, मैं तुमसे यही कह रहा हूं कि अपना खेल-तमाशा बन्द कर दो। इससे तुम्हें कोई भी लाभ होनेवाला नहीं।"

"क्या? तुम्हारे कहने का तात्पर्य यह है कि अब पानी सर

से ऊपर निकल गया? मुझे सचमुच खेद है," किरसानोव फूट पड़ा। वह समझ ही नहीं पाया कि यह खुशी थी या उदासी जो उसके मुंह से सहसा लोपुखोव के वाक्य के समाप्त होते ही निकल पड़ी।

"नहीं, तुमने मेरी बात ठीक से नहीं समझी। बात अभी बाहर नहीं हुई है। अभी भी वह हम तक ही सीमित है। आगे क्या होता है, इसके बारे में हमें सोचना है। अब तक तो कुछ भी उजागर नहीं है। लेकिन ऐसा है अलेक्सान्दर, कि न मैं तुम्हें समझ पा रहा हूं और न ही तुम मुझे समझ पा रहे हो। हममें से किसी के पास वह सूत्र-संकेत नहीं है कि यह समझें कि तुम क्या कह रहे हो और मैं क्या, ठीक है न? इसकी शायद कोई ज़रूरत भी नहीं, ठीक? तुम तो इन पहेलियों की कोई परवाह नहीं करते न? उनका अस्तित्व ही कहां है। मैंने तो एक भी शब्द नहीं कहा और न ही अब कहना चाहता हूं। सिगार मिलेगा मुझे, लगता है मेरा चित्त ठिकाने पर नहीं था कि घर से चलते वक़्त सिगार तो ले लेता, भूल आया वहीं। सिगार सुलगाने के बाद हम दोनों अपना शास्त्रीय विचार-विवाद करेंगे, मैं आज इसी प्रकार की चख-चख के लिए तो आया था तुम्हारे पास, पण्डिताऊ वार्तालाप करने, और कुछ करने को तो नहीं था। कृत्रिम ऐल्बूमेन बनाने के उन विचित्र प्रयोगों के बारे में तुम्हारे क्या विचार हैं?" उसने अपने पैर रखने के लिए दूसरी कुर्सी खींच ली और आराम से पसर गया। सिगार से कश खींचा और बात जारी की: "मैं इसे प्रमुख प्रगति मानता हूं, हां, परिपुष्टि होना अभी शेष है। क्या तुम अतिरिक्त परिणामों को हासिल कर सके हो?"

"नहीं, मगर कोशिश ज़रूर करनी चाहिये मुझे।"

"तुम कितने भाग्यशाली हो कि तुम्हें इतनी अच्छी प्रयोगशाला काम करने के लिए मिली हुई है। ज़रूर करना पूरी तरह से जांच-पड़ताल। भला, यह तो सम्पूर्ण मानवजाति को प्रभावित करनेवाले आहार में क्रान्ति ही होगी, अकर्बानिक पदार्थ से प्रधान पुष्टिकर तत्व का औद्योगिक उत्पादन। यह तो न्यूटन की खोज की ही कोटि की है—क्या नहीं है ऐसी बात?"

"निस्सन्देह, बस मैं केवल प्रायोगिक परिशुद्धता के बारे में शंकालु हूं। देर-सबेर हम वहीं पहुंच जायेंगे, जो उनका लक्ष्य है।

यह विज्ञान की सम्पूर्ण प्रगति के मार्ग में बड़े-बड़े अक्षरों में लिखा है। लेकिन हम तो अभी रास्ते पर भी नहीं पहुंचे हैं।"

"ऐसा सोचते हो तुम? मेरा भी यही विचार है। तो फिर हमारी बातचीत का भी अंत हो गया। शुभ रात्रि, अलेक्सान्दर। जाने से पहले बस तुमसे यह कहना चाहता हूं कि तुम हमारे यहां उसी तरह अक्सर आते-जाते रहो, जैसा कि पहले आया करते थे। शुभरात्रि।"

किरसानोव की निगाह में रोष की चिनगारियां फूट पड़ीं।

"द्मीत्री, मुझे लगता है कि तुम यही चाहते हो कि मैं मन ही मन समझूं कि तुम्हारे विचार नीच हैं।"

"बिल्कुल नहीं। लेकिन ज़रूर आना हमारी तरफ़। मेरे इस निवेदन में कोई अजीब बात तो है नहीं। आख़िरकार, हम लोग दोस्त हैं।"

"यह असंभव है। तुम आग से खेल रहे हो और मैं इसे तिरस्करणीय मानता हूं।"

"मेरी समझ में तो तुम्हारी बात का सिर-पैर कुछ नहीं आ रहा है। सच कहूं तो अब इस तरह के वार्तालाप में मेरी कोई रुचि नहीं, जैसी कि अभी दो मिनट पहले तुम्हारी नहीं थी।"

"द्मीत्री, मुझे बात का खुलासा चाहिये।"

"बेकार है। कुछ भी तो नहीं है, किस बात का खुलासा और समझने को है क्या? तुम तो यूं ही झनझना उठे हो।"

"मैं तुम्हें ऐसे ही चले जाने देनेवाला नहीं!" किरसानोव ने अपने विदा हो रहे अतिथि का हाथ पकड़ लिया। "बैठो, तुमने ही यह चर्चा छेड़ी थी, बिल्कुल अकारण। ईश्वर जाने क्या अपेक्षा कर रहे हो तुम मुझसे। अब मेरी बात सुननी ही पड़ेगी।"

लोपुख़ोव बैठ गया।

उसके मित्र ने पहले से अधिक रोष के साथ कहना शुरू किया: "क्या अधिकार है तुम्हें, क्या अधिकार है तुम्हें कि तुम मुझसे ऐसी भीषण कठिन मांग कर रहे हो? मुझ पर तुम्हारा कोई ऋण है क्या? है क्या यह सब? बस बेहूदा, और क्या। अपने भेजे से यह रोमांटिक पागलपन निकाल फेंकने की कोशिश करो। हम-तुम जिन अर्थों में सामान्य जीवन को समझते हैं, ज़िंदगी वैसी ही हो जायेगी, तभी जब समाज

अपनी संकल्पनाओं और परिपाटियों का तदनुरूप समंजन कर लेगा। समाज को अपने को पुनर्शिक्षित करना पड़ेगा और यही तथ्य है। प्रत्येक सदस्य जो दूसरों की सहायता करता है इस मार्ग पर—यह भी तथ्य है। लेकिन जिस समय तक यह प्रक्रिया पूरी न हो तब तक तुम्हें किसी दूसरे व्यक्ति के भाग्य को दांव पर रखने का कोई अधिकार नहीं। समझ में नहीं आ रहा क्या कुछ भी, यह अत्यन्त भयंकर बात है अथवा तुम्हारा दिमाग़ चल गया है?"

"नहीं, अलेक्सान्दर, मेरे पल्ले कुछ नहीं पड़ रहा। मेरे इस साधारण-से निवेदन में तुम्हें कोई भयंकर साज़िश दिख रही है कि अपने मित्र को मत भूलो, जिसे तुम्हारा संग-साथ अच्छा लगता है। मैं कुछ भी समझ नहीं पा रहा; यह सब घबराहट किस बारे में है।"

"द्मीत्री, तुम इससे बचकर नहीं निकल सकते। तुम्हें बताना ही पड़ेगा कि तुम कैसा दूषित और उन्मादी जाल बुन रहे हो। अगर हम मुंह पर तमाचे में किसी तरह का कोई लांछन न मानें तो फिर उसका महत्व ही क्या। यह तो पूर्वाग्रह है, अन्धा, बड़ा हानिकर, बस इससे अधिक और कुछ भी नहीं। तो क्या इससे ही तुम्हें यह अधिकार मिल जाता है कि किसी व्यक्ति को अपना शिकार बनाओ? क्या यह तुम्हारे लिए अनैतिक शैतानी न होगी कि तुम उस व्यक्ति के मन की शान्ति छीन लो? क्या तुम्हें कुछ भी समझ नहीं आता, बुद्धू भाई? नहीं पल्ले पड़ता तुम्हारे कि अगर मैं किसी व्यक्ति को पसन्द करता हूं और तुम चाहते हो कि मैं उसे तमाचा जड़ दूं, जिसे हम दोनों ही बेवक़ूफ़ी समझते हैं—नहीं समझ रहे तुम क्या, अगर मुझे और ज़्यादा दबाओगे तो मैं तुम्हें मूर्ख के अलावा और कुछ नहीं मानूंगा, और वह भी बदनाम मूर्ख। अगर तुम मुझे यह करने को बाध्य करते ही जाओगे तो मैं हम दोनों में से एक को मार डालूंगा, उसको जिसके मारने से कोई नुक्सान नहीं होगा, सुन लिया क्या कहा मैंने? मैं वह सब करने पर विवश होने से पहले खुद मरूंगा या तुम्हें से मार डालूंगा। नहीं समझ रहे हो, बजरबट्टू? मैं पुरुष के बारे में बात कर रहा हूं और उस अपमान के बारे में, जो चाहे जितना अल्प हो, परन्तु अस्थायी तौर पर असुविधा उत्पन्न करता है। पुरुषों के अलावा, संसार में स्त्रियां भी हैं, वे भी इंसान

हैं, और अपमान के सिवा और भी अनेक प्रकार की बेवकूफ़ियां होती हैं, वही बेवकूफ़ियां, जिन्हें हम और तुम समझते-जानते हैं और तथ्य के रूप में प्रमाणित बेवकूफ़ियां, जो न जाने कितनी अनकही असुविधा उत्पन्न करती हैं। नहीं समझ रहे हो क्या किसी व्यक्ति को—स्त्री को मानें हम कि उसे जिस बात को हम और तुम दोनों ही वाहियात समझते हैं, उसके तहत दबायें—यह चाहे जिस रूप में है, इसका कोई महत्व नहीं—नहीं देख पाते यह कितना भयावह, जघन्य और एकदम लज्जाजनक, अशोभनीय है? सुन लिया मैंने क्या कहा, लज्जाजनक।"

"मेरे दोस्त, सम्मान और असम्मान के बारे में तुम बिल्कुल ठीक कहते हो। मेरी समझ में नहीं आ रहा कि यह बात तुम अब क्यों उठा रहे हो अथवा इसका मुझसे क्या लेना-देना है। मैंने तो अपनी ओर से, किसी भी व्यक्ति की—पुरुष अथवा स्त्री के जीवन की शांति अस्त-व्यस्त करने के किसी भी इरादे का कोई संकेत भी नहीं दिया। दिल से ऐसा ख़्याल निकाल दो। यह सब तो तुम्हारी कल्पना में बसा हुआ है, सब कुछ। मैं तो अपने मित्र के नाते तुमसे बस इतना भर कह रहा हूं कि मेरी ओर से लापरवाह मत हो जाओ क्योंकि मैं मित्र के रूप में तुम्हारा संग-साथ पसन्द करता हूं। बस इतनी-सी ही बात है। क्या मैं मित्र के नाते कुछ कहूं वह करोगे?"

"मैं कह चुका हूं कि मैं कोई भी असम्मानजनक बात नहीं करूंगा।"

"बहुत साधुवाद इसके लिए तुम्हें। लेकिन तुम अकारण ही उत्तेजित हो उठे हो, तुमने मन ही मन कुछ कल्पना कर ली है। स्पष्टतः तुम शून्य में सिद्धान्त बना रहे हो और उसे फिर वास्तविकता का जामा पहनाना चाहते हो। ठीक है फिर, सिद्धान्त मैं भी बघार सकता हूं, इसी अनोखे ढंग से। ज़रा इस सवाल पर ग़ौर करो; इसका सत्य की अमूर्त्त पड़ताल के अलावा किसी भी चीज़ से बिल्कुल भी किसी तरह का कोई सम्बध नहीं, यह किसी भी रूप में व्यावहारिक प्रासंगिकता से जुड़ा हुआ नहीं। अगर कोई व्यक्ति, अपने को कोई असुविधा पहुंचाये बिना कोई स्वहित को तुष्ट कर सकता है, जैसा कि मैं समझता हूं, यदि यह मांग करता है कि वह

कोई ऐसा उस आत्म-संतुष्टि के लिए करे, जो वह उससे ग्रहण करेगा। ठीक है?"

"बकवास, किस खेत-खलिहान की बात कर रहे हो मुझसे।"

"मैं किसी खेत-खलिहान की चर्चा नहीं कर रहा अलेक्सान्दर, बस कुछ कल्पित प्रस्ताव सामने रख रहा हूं। जैसे कि यह। क्या कोई व्यक्ति विशेष प्रकार की आवश्यकता का अनुभव करे, तो अगर हम उस आवश्यकता को मिटाने का प्रयत्न करें तो यह वाजिब होगा? क्या विचार है तुम्हारा? क्या तुम 'हरगिज़ नहीं' न कहोगे? इससे तो वह आवश्यकता और बढ़ जायेगी, जो सदमा पहुंचायेगी, उसे पथभ्रष्ट कर देगी, यह सदमा पहुंचानेवाली और नृशंस दोनों ही होगी अथवा उसे बिल्कुल ही समाप्त कर देगी और उसी के साथ जीवन को भी, और यह तो अत्यन्त लज्जाजनक बात होगी।"

"लेकिन द्मीत्री, बात यह नहीं। मैं तुम्हारे कल्पित प्रश्न को दूसरे ढंग से रखता हूं: क्या किसी को दूसरे के जीवन को दांव पर लगाने का अधिकार है यदि वह जीवन जैसा है वैसे ही बिल्कुल अच्छा है, सुन्दर है? आयेगा ऐसा दिन जब इंसान की सभी ज़रूरतों की तुष्टि हो जायेगी—तुम जानते हो यह और मैं भी जानता हूं, लेकिन हम दोनों जानते हैं कि वह समय अभी आया नहीं है। फ़िलहाल, समझदार व्यक्ति, जिस प्रकार की स्वतंत्रता का उपयोग वह कर सकता या कर सकती है, उसी से संतुष्ट है, भले ही इससे उसके स्वभाव के किसी पक्ष का परिसीमन होता हो। मैं निस्सन्देह, कल्पित रूप में ही यह माने ले रहा हूं कि इस प्रकार के व्यक्ति का अस्तित्व है। अब मान लो अपनी परिकल्पना के लिए ही कि वह व्यक्ति स्त्री है, उसकी स्वतंत्रता का स्वरूप है विवाह में, और वह अपने इस रूप में सन्तुष्ट है। इन परिकल्पित कारकों की उपस्थिति में, मैं तुम्हीं से पूछता हूं: किसे यह अधिकार है कि उस व्यक्ति की उस भलाई को जिससे कि वह ख़ुश है उसको ख़तरे में डाले उस 'बेहतरी' के लिए जिसके बिना वह भली-भांति रह सकती है? आयेगा स्वर्ण युग द्मीत्री, हम जानते हैं, लेकिन अभी उसके आने में समय है। लौह युग बीत रहा है, लगभग बीत ही चुका है, लेकिन पूरी तरह नहीं। यदि हमारा यह कल्पित व्यक्ति किसी तात्कालिक आवश्यकता का विकास कर ले—मान लें, केवल उदाहरण के लिए ही—प्रेम की आवश्यकता को

और वह स्त्री इससे पूर्ण रूप से अथवा किसी न किसी रूप में असन्तुष्ट अनुभव करे, तो मैं किसी भी प्रकार का खतरा उठा लिये जाने पर आपत्ति नहीं करूंगा, बशर्ते कि वह स्वयं इसे उठाये, कोई इसे उस पर थोपे नहीं। और इसके विपरीत, यदि वही व्यक्ति उसी आवश्यकता की भली-भांति पूर्ति कर ले, तो फिर उसे (स्त्री को) किसी भी प्रकार का खतरा उठाने की कोई दरकार ही नहीं। मैं अपने ही कल्पित तरीक़े से यह मान लेता हूं कि वह ऐसा नहीं करना चाहेगी और मैं इसे उसकी उचित बुद्धिमत्ता ही कहूंगा, ठीक उसी तरह, जिस तरह कि मैं उसे किसी ऐसे खतरे में झोंक दिये जाने को कुटिल निर्लज्जता कहूंगा, जो उसने अपनी मर्ज़ी से न उठाया हो। तो तुम्हें अब मेरे इस कल्पनात्मक निष्कर्ष के बारे में क्या कहना है? कुछ भी नहीं न। याद रखो, तुम्हें कोई भी अधिकार नहीं है।"

"अलेक्सान्दर, अगर तुम्हारी जगह मैं होता, तो मैंने भी किसी और तर्क को न अपनाया होता; तुम्हारी तरह मैं भी केवल अटकल ही लगा रहा हूं यह कहकर कि तुम्हारा स्थान इसमें कहीं है, ज़रूर। मुझे मालूम है कि हम दोनों का इससे कोई वास्ता नहीं और दोनों ही, शुद्ध रूप से अकादमिक दृष्टि से विचार कर रहे हैं, ध्यान रहे, वैज्ञानिक दृष्टिकोण से अधिक दुर्बोध पक्षों पर, जिन्हें हमने अभी तर्क संगत माना है और जिनका उस व्यक्ति के सरोकार द्वारा परिभाषित प्रत्येक विषय के बारे में व्यक्तिगत दृष्टिकोण है—इसी भावना से, हां, बिल्कुल इसी भावना से ही मैं कहता हूं कि अगर मैं तुम्हारी जगह होता, तो मैंने भी कुछ भिन्न रूप में तर्क नहीं किया होता। और नहीं, इसी रूप में यदि तुम मेरे स्थान पर होते तो तुम भी मेरे ही तरह बात करते। जिस वैज्ञानिक दृष्टिकोण का हम दोनों अनुसरण कर रहे हैं वह इसे अकाट्य तथ्य बना देता है। 'ब' की स्थिति में 'अ' 'ब' ही होगा; यदि उसी स्थिति में विद्यमान 'ब' न हो तो वह किसी पूर्वापेक्षा के अभाव के कारण वहां नहीं होगा,—ठीक? परिणामस्वरूप, तुम मेरे मामले की बाबत विवाद नहीं कर सकते ठीक उसी तरह जिस तरह मैं तुम्हारे मामले में शक्तिहीन हूं। ताहम, शुद्ध रूप से अमूर्त्त परिकल्पना के निर्माण में मैं तुम्हारे उदाहरण का अनुसरण करूंगा। चलो, हम तीन व्यक्तियों के अस्तित्व

की परिकल्पना से बात आरंभ करें—अपने आपमें यह अत्यन्त उचित परिकल्पना है—इनमें से पहला दूसरे और ख़ास तौर पर तीसरे से कोई बात गुप्त रखना चाहेगा, जब दूसरा जान ले और पहले के पास जाकर यह कहे कि 'जैसा मैं कहता हूं वैसा करो, वर्ना मैं तीसरे से कह दूंगा'। अब यह बताओ अलेक्सान्दर, तुम क्या नतीजा निकालोगे?"

किरसानोव विवर्ण हो गया और बड़ी देर तक अपनी मूंछें मरोड़ता रहा।

अन्तत: उसने कह डाला: "तुम मुझसे गन्दा व्यवहार कर रहे हो, द्मीत्री।"

"तो क्या मैं इसे अच्छा बनाने के अवसर पर झपटूं, मानो मुझे तुममें कोई रुचि हो। इसके अलावा, मुझे यह भी तो नहीं मालूम कि तुम किसकी चर्चा कर रहे हो। यह तो शुद्ध रूप से अकादमिक (शास्त्रीय) वाद-विवाद था, जिसमें पूर्ण रूप से अकादमिक अमूर्त मुद्दों को उठाया गया था। अन्तत: मुझे ऐसा मुद्दा सूझ गया है, जिसने तुम्हें कुछ सोचने पर विवश किया और मेरा अकादमिक आत्मगौरव पूर्ण रूप से सन्तुष्ट है। इसलिए मैं इसकी आवश्यकता नहीं समझता कि हम अपने इस अकादमिक विचार-विमर्श को जारी रखें। मुझे अभी बहुत कुछ करना है, तुमसे कुछ कम नहीं, इसलिए मैं तुमसे अलविदा कहता हूं। हां, इससे पहले कि मैं भूल जाऊं—तुम वैसा ही करोगे जैसा मैं कहता हूं और अपने पुराने नियमित रूप से आते-जाते रहो, अपने अच्छे मित्रों के यहां, जो तुम्हें देखकर हमेशा ही ख़ुश होते हैं।"

लोपुख़ोव उठ खड़ा हुआ।

किरसानोव बैठ गया और अपनी अंगुलियों के नाख़ूनों को देखने लगा, मानो हरेक में कोई शुद्ध अमूर्त्त परिकल्पना अंकित हो।

"तुम मेरे साथ बहुत ख़राब व्यवहार कर रहे हो, द्मीत्री। मैं तुम्हारा अनुरोध ठुकरा नहीं सकता। लेकिन मैं अपनी एक शर्त तो लगा सकता हूं और लगाऊंगा भी। हां, मैं आऊंगा ज़रूर, मगर अगर कभी मैं तुम्हारे घर से, मान लो, अकेला न निकलूं तो तुम्हें मेरे साथ हर जगह जाना होगा, अगर यह भी मेरे बुलावे के बिना, अपने ही निर्णय पर। समझ रहे हो मेरी बात? अपने ही निर्णय पर।

मैं तुम्हारे बिना एक भी क़दम नहीं उठाऊंगा, चाहे ओपेरा जाना हो, चाहे किसी मित्र के घर अथवा कहीं और।"

"अलेक्सान्दर, क्या तुम्हारी यह शर्त मेरे लिए अपमानजनक नहीं है? क्या तुम यह समझते हो कि मैं तुम्हें चोर मानता हूं, सच बताओ?"

"मेरा यह मतलब नहीं था। मैं तुम्हारा ऐसा अपमान नहीं करूंगा कि तुम मुझ पर कभी चोरी का इल्ज़ाम लगा सको। मैं तो अपनी ज़िंदगी भी तुम्हारे भरोसे छोड़ सकता हूं और पल भर भी झिझके बिना। यही आशा मैं तुमसे भी करता हूं। मगर मेरे विचार मेरे ही जानने के लिए हैं। और तुम्हें अमल करना है। बस, तर्क समाप्त।"

"मगर अब तो मैं भी जान गया हूं। माना कि तुमने इस दिशा में बहुत कुछ किया है। और अब तुम कुछ और अधिक करना चाहते हो। क्या कह सकता हूं मैं, तुम्हीं ठीक हो, मुझे ही विवश होना चाहिये। प्यारे पुराने दोस्त, सच मैं असीम कृतज्ञ हूं, परन्तु फिर भी बात बनेगी नहीं। मैंने अपने को विवश करने की चेष्टा की है। मुझमें भी तो उतनी ही इच्छा-शक्ति है, जितनी तुममें, और मैंने उसका उपयोग भली-भांति किया है। लेकिन, कर्त्तव्य की भावना से अथवा इच्छा के बल द्वारा, जानबूझकर उठाया गया क़दम निश्चेष्ट ही होता है। यह केवल जीवन को नष्ट कर सकता है, जैसा कि तुमने अपने साथ किया है, लेकिन कभी इसे जीवित नहीं।" लोपुख़ोव उसके इस कथन से अत्यन्त भावविभोर हो उठा था कि "मेरे विचार मेरे ही जानने के लिए हैं"... "शुक्रिया, मेरे दोस्त। और अब, क्या कहते हो, हम लोग दोस्तों के रूप में एक दूसरे के गले लग जायें, ऐसे जैसे पहले कभी नहीं लगे हैं?"

यदि लोपुख़ोव ने सिद्धान्तशास्त्री के रूप में उस सांझ के अपने व्यवहार का अवलोकन किया होता तो वह प्रसन्नता के साथ सोचता होता: "इससे यही प्रकट होता है कि यह सिद्धान्त कितना सही है—मनुष्य अपने अहम का खिलौना है। सबसे मुख्य बात तो मैंने तुम्हें नहीं बतायी—'मान लो वह व्यक्ति (स्त्री या पुरुष) अपने ही भाग्य से सन्तुष्ट हो तो?'—उसी समय मुझे कहना था: 'अलेक्सान्दर, तुम ग़लत परिकल्पना कर रहे हो।' मैंने अपनी बात मुंह में ही रोक

ली, वैसा कहना मेरे लिए उचित नहीं था। सही है, सिद्धान्तशास्त्री के मन को यह अच्छा लगता है कि उसका अहम व्यवहार में अपनी चालें चले। जो बात बननेवाली न हो, उसकी लकीर पीटते रहने से तो दर-किनार हो जाना बेहतर और इससे तुम्हारा अहम् तुम्हें उदात्त हुतात्मा का चोला पहनाकर इठलाते बढ़ सकता है।"

यदि किरसानोव ने भी इसी तरह अपने व्यवहार पर सिद्धान्तशास्त्री के रूप में विचार किया होता, तो उसकी टिप्पणी भी कुछ कम रुचिकर नहीं होती: "इससे यही पता चलता है कि सिद्धान्त कितना सही है—वास्तव में तो मैं चाहता हूं मन की शान्ति और प्रशंसा का सिरहाना, लेकिन इसरार करता हूं उस पर कि तुम्हें उस स्त्री के जीवन को दांव पर रखने का कोई अधिकार नहीं, जो कि अगर तुम तनिक-सा भी विचार करो तो पता लगेगा कि यह सिर्फ़ तुम्हारे लिए और किसी अन्य व्यक्ति के लिए भी विशाल हृदयता और आत्मत्याग के कारनामों का दावा करने का ही पर्याय है, प्यारे दोस्त। अब तो समय है कि तुम मुझ विशाल हृदय के सामने कुछ घुटने टेको। सिद्धान्तशास्त्री व्यवहार में अपनी चालबाज़ियों से भरे अहम् का अवलोकन करके कितना आनन्दित होता है। मैं तो पीछे इसलिए हट गया, ताकि बेवक़ूफ़ साबित न होऊं अथवा नीच से भी नीच, आत्मत्याग करनेवाले प्रामाणिक हुतात्मा की तरह परमानन्दित, उसकी बात को, परेशानी और हानि को न सोचकर उसके निमंत्रण को, अपनी कुलीन आत्मप्रशंसा के सम्पृक्त भाव से तत्काल नहीं माना, जबकि मेरा अहम् तमाम समय अड़ियल ढंग से अभूतपूर्व उदात्त हुतात्मा की तरह इठलाता रहा।"

लेकिन दोनों में से किसी को चिन्तन करने का अथवा इस प्रकार की सुखद टिप्पणी करने का समय नहीं था। आप जानिये, व्यवहार ने उन दोनों का ही पर्याप्त से अधिक समय ले लिया।

23

किरसानोव ने अपनी नियमित आवाजाही फिर शुरू कर दी, इसे मात्र स्वाभाविक ही समझा गया। अनेक मनबहलावों के लिए अपने

काम की पांच महीनों तक उपेक्षा के फलस्वरूप यह आवश्यक था कि वह डेढ़ महीने तक अबाध रूप से काम करके कमी पूरा करे। इस प्रकार पिछड़ गये काम की पूरी तरह से सम्पूर्त्ति करके, वह अब अपने अधिक समय को अपना कह सकता था। यह सब इतना सीधा-सच्चा था कि इस पर किसी भी टिप्पणी की बिल्कुल ही जरूरत नहीं थी।

सीधा-सादा यह सचमुच ही था और इसका कारण भी बढ़िया था: वेरा पावलोव्ना को बिल्कुल भी किसी प्रकार का कोई सन्देह ही नहीं हुआ। इस बीच, किरसानोव ने अपनी भूमिका अपने पुराने और निर्दोष ढंग से अदा की। उसे भय था कि कहीं कुछ गड़बड़ न हो जाये उससे। अपने मित्र के साथ शास्त्रीय विवाद के बाद उसका पहली बार आगमन, वेरा की ओर उसका पहला दृष्टि निक्षेप, रोमांचक लज्जा अथवा जानबूझकर उससे बचाव अथवा इसी प्रकार की कोई और बात, लेकिन नहीं, उसे जिस पल वे दोबारा मिले पूर्ण संतोष की अनुभूति हुई और ऐसा करने का पूरा अधिकार भी था, अपनी सौम्य मुस्कान पर—ऐसे व्यक्ति की मुस्कान पर जो अपने उन पुराने मित्रों के यहां फिर लौटकर प्रसन्न था, जिनसे वह अस्थायी तौर पर विलग होने के लिए विवश हो गया था—उसकी प्रशांत दृष्टि, उसका हल्का-फुल्का मनोरंजक वार्तालाप—उत्फुल्ल भावना, मन और कोई बात नहीं कुछ भी अशोभन ढूंढने के लिए अत्यन्त दूषित गपिया भी, किरसानोव को प्रसन्न के अलावा और कुछ भी तो नहीं देखती कि वह अपने पुराने और अच्छे दोस्तों के साथ अपना खाली समय बिताने पहुंच गया।

और अब जब पहला पल इतने अच्छे ढंग से बीता, तो वह शाम कैसे नहीं गुजरती अच्छी तरह? अगर वह अपना पहला मुक़ाबला ठीक से उत्तीर्ण कर चुका था, तो फिर आगे आनेवालों में तो कुछ ऐसी कठिनाई दरपेश नहीं आयेगी? मुक्त और सहज के सिवा एक भी अन्य शब्द नहीं, केवल शुद्ध और साधारण, निष्कपट, मैत्रीपूर्ण के अलावा और कोई भी अन्य चितवन नहीं।

फिर भी हालांकि उसका व्यवहार हमेशा की तरह सुशील था, उसकी ओर निहारनेवाली आंखें बहुत कुछ वह ढूंढ़ना चाहती थीं जो सबसे छिपा पड़ा था; और मेरा मतलब सभी दूसरों से है: लोपुखोव,

सहज-स्वाभाविक सौदागर, यही तो उसकी सास उसे समझती थी, उस निर्बाध सहजता पर आश्चर्यचकित होता रहता था, जिसने उसके मित्र का साथ कभी नहीं छोड़ा और इसीलिए वह सिद्धान्तशास्त्री के उस तथ्य के बारे में टिप्पणी में कुछ कम आनंद नहीं लेता था, जिसके वैज्ञानिक, मनोवैज्ञानिक सम्मोहन ने उसे अभिभूत कर लिया था। यद्यपि सपनों में आनेवाली ने व्यर्थ ही राग नहीं अलापा है, अथवा सपना देखनेवाली को अपनी डायरी में नहीं उलझा दिया है। और आंखें बड़ी पैनी हो जाती हैं जब सपनो में आयी अतिथि कानाफूसी करती है।

ये आंखें भी कुछ नहीं देख सकती थीं पर आगता फुसफुसायी: सुनते हो? शायद हम वह देखेंगे, जिसका कोई भी चिह्न नहीं, मैं खुद ही देख सकती हूं, फिर भी कोशिश करें; दो नेत्रों ने पूरी शक्ति लगाकर देखा, कुछ देखा नहीं और फिर भी पर्याप्त थी उनकी यह भरसक चेष्टा यह प्रकट करने के लिए कि कुछ गड़बड़ है।

उदाहरण के लिए, जैसा कि आज रात था, जब कि वेरा, उसका पति और किरसानोव मेर्त्सालोव-दम्पत्ति के यहां एक जमघट में पहुंचे हुए थे। इस प्रकार की अनौपचारिक महफ़िल में किरसानोव वाल्ज़ क्यों न नाचे जबकि वेरा का पति भी वाल्ज़ नाचता है, उस परिवार के सर्वव्यापी नियम के अनुसार: भले ही आप सत्तर बरस के हों फिर भी आपको शेष हम सब लोगों के साथ कूद-फांद करनी ही पड़ेगी। हममें से कोई भी दूसरे की ओर ध्यान नहीं देता, लेकिन सब लोग बस एक ही उत्फुल्ल, उत्तेजनापूर्ण, नीममस्त विचार में डूबे हैं—मगर वह क्यों नहीं नाच रहा? अरे रे, शुरू हो गया है वह, ताहम इतनी देर क्यों की उसने? ऐसा तो नहीं कि उसे यह तय करने में देर लगी कि वह इस प्रकार के गंभीर कर्त्तव्यभार को अपने कंधों पर उठाये कि न उठाये? अगर, अन्तत:, उसने यह शुरू न कर दिया होता तो आधी पोल तो खुल ही चुकी होती। अगर उसने नृत्य किया होता और वेरा से अपने साथ नाचने का अनुरोध न किया होता तो वह तत्क्षण पूरी खुल जाती। मगर किरसानोव ने अपनी भूमिका को अच्छी तरह साध लिया था। उसने वेरा से अनुरोध करने की चेष्टा नहीं की, तत्काल ही यह समझ लिया कि इससे लोगों का ध्यान इस ओर आकृष्ट हो जायेगा और इस प्रकार किंचित

हिचकिचाहट ने, जो वेरा को अथवा वहां मौजूद किसी जीवधारी को असंबद्ध प्रतीत हुई, चकरा देनेवाली स्मृति का अति सूक्ष्म प्रमाद ही छोड़ा, जिसका उसने कभी पुनःस्मरण नहीं किया होता कानाफूसी करनेवाली महिला और अन्य सब के बावजूद, यदि उसी अनथक फुसफुसाहट में उसी प्रकार के मामूली सवालातों की अन्तहीन भरमार न होती।

एक और उदाहरण दें: जब वे 'प्युरिटन्ज़' देखने जाने की तैयारी में लिप्त थे तो वेरा ने कहा: "प्रियतम, तुम्हें तो यह ओपेरा पसन्द नहीं, तुम बहुत ही बोर हो जाओगे; मैं अलेक्सान्दर के साथ चली जाऊंगी, ये ओपेरा के इतने अधिक शौक़ीन हैं कि अगर मैंने या तुमने भी कोई ओपेरा लिखा होता, तो ये बड़े ही शौक़ से उसे सुनते," तब वह शान्त क्यों रह गया था, क्यों नहीं उसने यह कहा था, "ठीक कहती हैं ये द्मीत्री, छोड़ो, तुम्हारा टिकट नहीं ख़रीदते।" क्यों? प्रियतम भी देखने चल रहा था, इसमें हैरानी की क्या बात थी, वह तो जब से उसकी पत्नी ने उससे अधिक समय की मांग की थी, तभी से उसका हरदम संगी बना चला आ रहा था—उसकी अच्छाई का और पत्नी के प्रेम पर हर प्रकार के दावे का ही प्रमाण तो, लेकिन प्रयोजन इसके पीछे क्या था, यह दूसरे को बिल्कुल नहीं मालूम था—क्यों नहीं, उसने वेरा का समर्थन क्यों नहीं किया? निस्सन्देह, यह सब बकवास था वेरा की चेतना की तुला के पलड़े में अनवरत गिरनेवाली बालू के कण, कठिनाई से दृष्टिगोचर और लगभग विस्मृत कण। और उदाहरण के लिए यह वार्तालाप ऐसा कण नहीं, बल्कि भारी-भरकम दाना ही था।

अगले दिन जब वे (दो अलग-अलग बग्घियां लेने की तुलना में सस्ती पड़नेवाली) किराये की घोड़ा-गाड़ी में बैठे ओपेरा देखने जा रहे थे तो रास्ते में मेर्त्सालोव-दम्पत्ति का ज़िक्र आ गया, जिनके यहां वे गत रात गये थे, ख़ूब घुले-मिले विरले दम्पत्ति के रूप में उनकी प्रशंसा की गयी। किरसानोव समेत, सभी इस पर सहमत हुए। उसने कहना जारी रखा: "उन दोनों के बारे में एक और अच्छी बात यह है कि पत्नी को पति से अपनी सब बात विश्वासपूर्वक कह देने की स्वतंत्रता है।" इसके आगे उसने कुछ नहीं कहा। उनमें से किसी ने कुछ और कहने का सोचा भी नहीं था। लेकिन वेरा अपने मन

में ही सोचा—क्यों? इसका मतलब क्या हुआ? अगर इस ढंग से सोचा जाय तो आखिर क्या मतलब हुआ? उसके पति की प्रशंसा अथवा पत्नी के सुख की सराहना। निस्सन्देह, उसके मन में केवल मेर्त्सालोव-दम्पत्ति ही रहे होंगे। लेकिन अगर यह मान लें कि उसके मन में उनकी और लोपुखोव-दम्पत्ति दोनों की ही बात थी, तो फिर इसका निशाना सीधे वेरा की ओर होगा—लेकिन किसलिए?

क्या सदैव ऐसा ही नहीं होता: कोई भी व्यक्ति विशेष मनोदशा में हर चीज़ में वही तो देखने की चेष्टा करेगा, जो वह देखना चाहता है, कोई उजागर-सा सुराग़ जो अन्यथा मौजद नहीं है, बल्कि उसकी झलक, उसकी छाया भी मौजद नहीं है, बल्कि और भी अधिक वह अत्यन्त स्पष्टता के साथ अपने आभासी लक्ष्य के पूर्ण रूप और तत्व को देख लेगा, जो उसकी प्रत्येक नयी दृष्टि और नये विचार में और भी अधिक स्पष्ट हो उठेगी।

इसके अलावा, इस व्यक्ति के पास एक विशेष ठोस तथ्य था, जो वेरा के समक्ष उपस्थित पहेली की कुंजी था: यदि, जैसा कि बिल्कुल ही स्पष्ट था, किरसानोव अपने मित्र का सम्मान करता था, तो दो से अधिक वर्ष तक जो वह अनुपस्थित रहा उसके पीछे क्या था? यदि वह इतना ही सरल और श्रेष्ठ व्यक्ति था तो फिर उसने उस समय क्यों तुच्छ व्यवहार किया? जब तक कोई आवश्यकता न पड़ी वेरा ने भी, लोपुखोव की ही तरह इस पर क्षण भर भी विचार नहीं किया—लेकिन अब उसने महसूस किया कि वह उस ओर खिंच रही है।

24

धीरे-धीरे, अनजाने ही वेरा के मन में यह विचार परिपक्व होता गया। किरसानोव के शब्द, अस्पष्ट, शीघ्र विस्मृत हो जानेवाले प्रभाव पर अवलम्बित उसकी भावभंगिमायें जिनकी ओर किसी अन्य की दृष्टि भी नहीं जा सकती थी और स्वयं उसे भी जो मात्र संदेह और अनुमान से अधिक कुछ नहीं लगे। धीरे-धीरे यह प्रश्न उसके मन पर अधिकाधिक रूप से हावी होता गया: वह (किरसानोव) आखिर लगभग

तीन वर्षों तक उससे (वेरा से) कतराता क्यों रहा? धीरे-धीरे यह विश्वास बढ़ गया: तुच्छ मिथ्याभिमान के कारण नहीं, उसके जैसे स्वभाववाले के लिए इस दुर्गुण का होना बिल्कुल ही संभव नहीं था। इन अस्पष्ट विचारों के पीछे, जो जीवन के मूक अन्तस्तल से चेतना में प्रवाहित हो रहे थे, अत्यन्त मन्थर, अत्यन्त धुंधला-सा विचार उभरा: मैं उसके बारे में सोच ही क्यों रही हूं? वह मेरा लगता कौन है?

और एक दिन जब वेरा पावलोव्ना भोजनोपरान्त अपने कमरे में सिलाई कर रही थी, उसके विचार प्रशान्त रूप से इधर-उधर, हर ओर विचरण कर रहे थे, बस उसकी ओर नहीं, गृहकार्य के बारे में, कार्यशाला और अपनी पढ़ाई-लिखाई के बारे में, तभी वह धीमे-धीमे उस विचार से दो-चार हो गयी, जो पिछले कुछ समय से अत्यन्त विचित्र ढंग से बहुधा ही घेरे रहता था। स्मृतियां उभर आयीं अनिश्चततायें अल्प से बहुल में बढ़ीं, फिर हज़ारों उफान आ गये उनमें और फिर वे इस प्रकार गडमड होकर बिफरने लगीं सुस्पष्ट रूप में: "क्या हो गया है मुझे? मैं क्या-कुछ सोच रही हूं यह? ये भावनायें आखिर हैं क्या?" उसने सुई रोक दी, फिर हाथ भी निश्चल हो गये, सिलाई का काम फ़र्श पर गिर पड़ा। चेहरा पाण्डुर हो गया, कुछ ज्वाला-सी जगी मन में, फिर विवर्ण। ज्वाला कपोलों के आर-पार दौड़ गयी, जो अभी अरुण-उष्ण और अभी हिमश्वेत। वह विस्फारित नेत्रों से अपने पति के कमरे की ओर लपकी, उसके सामने घुटनों के बल धसक-सी पड़ी और अपने हाथों से पति की गर्दन लपेट ली, जकड़ ली। अपना सिर पति के कंधे पर टिका दिया, शायद अपना चेहरा छिपाने के लिए और हांफते-हांफते बोली: "प्रियतम, मैं उसे प्रेम करती हूं!" और फिर फूट-फूटकर रोने लगी।

"प्यारी वेरा, क्या बात है? किस बात को लेकर परेशान हो उठी हो तुम?"

"प्रिय, मैं तुम्हारा मन नहीं दुखाना चाहती, मैं तुमसे प्रेम करना चाहती हूं।"

"तो फिर करो न कोशिश इसकी। अगर सब ठीक-ठाक चले तो अच्छा। बस शान्त हो जाओ। कुछ समय बीतने दो। तभी तुम्हें पता

चल पायेगा कि तुम क्या कर सकती हो और क्या नहीं। आखिर, तुम मुझे भी तो बहुत ही चाहती हो, तुम मेरा मन कैसे दुखा सकती हो?"

उसने वेरा के बालों को अपनी अंगुलियों से सहलाया, उसके माथे को चूमा और उसका हाथ थाम लिया। आंसू-सिसकियां थमने में कुछ समय लगा। धीरे-धीरे वेरा स्थिरचित्त हुई, व्यवस्थित। लोपुखोव तो न जाने कब से इस आत्म-स्वीकृति के लिए अपने मन को पक्का बना चुका था। उसने सहज ही ग्रहण कर लिया इसे—लेकिन वेरा उसके मुख की ओर देख न सकी ताकि यह जान पाती।

उसने ऐलान-सा कर दिया: "मैं अब उसकी सूरत नहीं देखना चाहती। मैं उससे कह दूंगी कि यहां न आये।"

"जो तुम अच्छा समझो वही करो, प्यारी, जो तुम्हें सर्वोत्तम लगे। जब तुम अपने आप संयमित हो जाओगी, तभी हम इस विषय पर चर्चा करेंगे। चाहे जो भी हो, हम हमेशा दोस्त रहेंगे, इसके अलावा और रह भी क्या सकते हैं। अपना हाथ तो दो, और पकड़ो तो कसकर मेरा हाथ, देखें कैसे पकड़ती हो।" प्रत्येक शब्द रुक-रुककर बोला और हर विराम पर वह वेरा के सिर को थपथपाता जैसे कोई भाई सांत्वना के लिए करे। "भला याद है तुम्हें कि तुमने उस रात क्या कहा था, जिस दिन हमारा वाग्दान हुआ था? 'तुम मुझे मेरी स्वतंत्रता दे रहे हो!'" शान्ति में उस समय कमनीयता पुन: प्रविष्ट हो गयी थी। "याद है तुम्हें क्या, जब पहली बार हमने यह बातचीत की थी कि किसी को प्यार करने का अर्थ क्या होता है। उसी में उल्लास मानना जो उसके लिए सर्वोत्तम हो। और उसी दिशा में सब कुछ करते रहने में ही अपना आनन्द मानना, ठीक है न?" और एक बार फिर शान्ति स्निग्ध कोमलता से भर उठी। "जो तुम्हारे लिए सर्वोत्तम हो, मेरे लिए वही अन्यतम सुख है। लेकिन तुम्हें निर्णय लेना होगा। क्यों परेशान होती हो? अगर तुम ठीक-ठाक हो, तो फिर भला मैं क्यों नहीं होऊंगा?"

रुक-रुककर कहे गये इन शब्दों ने जिनमें अनेक बातें बार-बार कही गयी थीं और कभी-कभार इनमें थोड़े बहुत संशोधन-परिवर्तन भी परिलक्षित हुए थे, पर्याप्त समय ले लिया, और दोनों के ही मन

पर यह समय उतना ही बोझिल बना रहा। फिर, धीरे-धीरे समचित्तता पुनः प्रस्थापित हुई और वेरा फिर एक बार सहज सांस ले पायी। वह अपने पति से और भी प्रगाढ़ता से बार-बार लिपट-लिपटकर यही दुहराती रही: "मेरे हृदयेश्वर, मैं तुम्हें, तुम्हें और केवल तुम्हें ही प्यार करना चाहती हूं।"

लोपुखोव ने यह नहीं कहा कि यह वेरा के बस की बात नहीं: वेरा को शान्तचित्त होने में समय लगेगा, उसे किसी न किसी मनबहलाव का सहारा लेना पड़ेगा। लोपुखोव ने किरसानोव के लिए, अगर वह कहीं इधर आ निकले, उस परिस्थिति में, एक पत्र जैसे-तैसे लिखकर माशा के पास छोड़ दिया। "अलेक्सान्दर, बराये मेहरबानी अब इधर मत आना। कुछ समय के लिए दूर ही रहो, यही बेहतर होगा। कोई खास बात तो नहीं, कुछ होनेवाला तो नहीं, बस कुछ आराम की ज़रूरत है।" बस आराम की ज़रूरत है, कोई खास बात नहीं—कैसा बढ़िया शब्द-चयन! किरसानोव आया तो उसने पत्र पढ़ा, माशा से कहा कि वह उसे लेने के लिए ही आया था और उसके पास समय नहीं है रुकने का, क्योंकि उसे कहीं काम से जाना भी है, लेकिन लौटते समय पत्र में लिखी हिदायतों को पूरा करके आयेगा।

लग तो यही रहा था कि वह सांझ शान्ति से परिपूर्ण थी। आधे समय तो वेरा अकेले अपने कमरे में गुमसुम रही, पति को वह उसके कमरे में ठेल ही चुकी थी। शेष समय में वह वेरा के पास सान्त्वना के वही पुराने शब्द दुहराता रहा था जो इस समय तक उसकी वाणी के स्थिर और कोमल स्वरूप के कारण अधिक प्रभावकारक सिद्ध हो रहे थे। यह कहने की हमें शायद आवश्यकता नहीं कि उसकी वाणी कुछ अधिक उत्फुल्ल नहीं थी, लेकिन ऐसी भी नहीं थी कि जो कुछ दुःखपूर्ण ही हो। अलबत्ता कुछ विषादग्रस्त प्रतीत होती थी, जो सान्त्वना देनेवाले के मुख के भावों को परिलक्षित करती थी। उस कण्ठ की ध्वनि और उस मुखड़े पर अंकित भावों से वेरा को विश्वास हुआ, अलबत्ता पूर्ण रूप से नहीं बल्कि सम्यक रूप से, नहीं हम कहें कि पूर्ण विश्वासदायक रूप से जमा कि यह कोई संकट नहीं बल्कि सपने मात्र को प्रेमावेग की

ज्वाला समझ लेने की ग़लती है, जो चंद दिनों में ही हमेशा-हमेशा के लिए वातावरण में विलुप्त हो जायेगी। अथवा वह यह सोच रही है, नहीं उसे विश्वास था कि वह महसूस कर रही है कि ऐसा नहीं है। नहीं, नहीं है ऐसा। हां, ऐसा है और उसे अधिकाधिक विश्वास हो रहा है, वह इसके बारे में पूर्ण रूप से निश्चित है, इस बार तो बिल्कुल ही निश्चित रूप से, क्योंकि वह उस प्रशान्त, स्थिर वाणी की ओर ध्यान क्यों नहीं दे पा रही, जो बराबर आग्रह कर रही है कि कुछ भी चिन्ताजनक नहीं है। इस वाणी ने उसे पूर्ण शान्ति के साथ गहरी नींद की गोद में डाल दिया। उसने ओपेरा गायिका के बारे में कोई सपना नहीं देखा। और वह देर से सोकर उठी, उत्साह और ओज से परिपूर्ण।

25

वेरा पावलोव्ना ने सोचा और ठीक ही सोचा: "चिन्ता को दूर करने का सर्वोत्तम उपाय है काम करना। मैं जब तक निरोग नहीं हो जाती तब तक कार्यशाला में पूरे समय काम करूंगी। बस यही है रामबाण उपचार। इसी से सब ठीक हो जायेगा।"

और इसीलिए वह काम में जुट गयी। पहले पूरे दिन तो निश्चय ही उसका मन काम के सिवा और कहीं नहीं भटका, दूसरे दिन राहत की जगह अधिक थकान मिली और तीसरे दिन कुछ भी नहीं। सप्ताह निकल गया इस प्रकार।

काफ़ी संघर्षपूर्ण स्थिति थी। किंचित पाण्डुरता के सिवा वह ऊपर से देखने में बिल्कुल ही आत्म-संयम की प्रतिमूर्ति लगती थी। उसने मुस्कराने और सहने का सतत प्रयास किया और अधिकांशतया सफल रही। अगर किसी ने कुछ नहीं पूछा, और पाण्डुरता को किसी छोटी-मोटी अस्वस्थता के मत्थे मढ़ दिया मगर लोपुखोव इसमें शामिल नहीं था। उसे तो मालूम था कि मामला क्या है, उसे तो इसके लिए चेहरे की ओर देखने की भी ज़रूरत नहीं थी।

एक हफ़्ते के बाद, उसने चर्चा छेड़ी: "वेरा, हम लोग तो उस लोकोक्तिवाले मोची की तरह हैं, जो हर समय नंगे पांव रहता

है अथवा उस दर्ज़ी की तरह है, जिसके कपड़े फटे रहते हैं। दूसरों के मन में हम जो आर्थिक सिद्धान्त बिठाते हैं उनको हमें अभी अपनी ज़िन्दगी में अमल में लाना दरकार है। कोई बड़ा प्रतिष्ठान अथवा कई छोटे-छोटे यूनिट इनमें से कौन अधिक मितव्ययी सिद्ध होगा? मैं इस सिलसिले में बुनियादी नियम को अमल में लाना चाहूंगा। यदि हम किसी व्यक्ति अथवा किन्हीं व्यक्तियों को अपने साथ शामिल करना चाहते हैं तो सभी सम्बद्ध पक्षों के लिए व्यय व्यवहारतया आधा रह जायेगा। मैं उस घृणित, उस कुत्सित ट्यूशन पढ़ाने के काम को पूर्ण रूप से तिलांजलि दे सकता हूं, क्योंकि फिर हम घर का ख़र्च दफ़्तर से मिलनेवाले वेतन से चला लेंगे। इससे मुझे कुछ आराम भी मिल जायेगा, अनुसंधान करने के लिए समय और अपने वैज्ञानिक कार्य में प्रगति करने का अवसर भी मिल जायेगा। बस हमें ऐसे कुछ और लोगों को अपने साथ लेने की ज़रूरत है, जिनके साथ हमारी निभ जाय। क्या विचार है तुम्हारा?"

इस सुझाव की चर्चा होते ही वेरा ने अपने पति पर वही संशयालु, दहकती हुई दृष्टि गड़ा दी, जो कि किरसानोव ने लोपुख़ोव पर उस रात गड़ा दी थी, जब उन दोनों के बीच विशुद्ध शास्त्रीय विचार-विमर्श हुआ था। सुझाव ख़त्म होने तक तो वेरा का सम्पूर्ण मुख तमतमा उठा था।

"अच्छा हो कि इस विषय पर कोई चर्चा न करो। बिल्कुल बेहूदा-सा लगता है यह सब।"

"क्या बात है, वेरा? मैं तो केवल आर्थिक लाभ की दृष्टि से ही यह बात कर रहा हूं—यह तो ऐसी बात नहीं कि हम जैसे अल्पसाधन सम्पन्न लोग इसका तिरस्कार करें। मुझे बहुत पापड़ बेलने पड़ते हैं। और उनमें से कुछ से मुझे घृणा है।"

वह उठ ख़ड़ी हुई: "मैं इस प्रकार की बातें सुनने की आदी नहीं। मैं किसी भी प्रकार के कटाक्ष को बर्दाश्त नहीं करूंगी। हिम्मत करो, वही कहो जो सचमुच कहना चाहते हो।"

"मैं बस यही कहना चाहता था कि इस ढंग से जो लाभ होंगे उनसे हम लोग भी भली-भांति..."

"बस आगे कुछ मत बोलिये! अपनी ज़बान को लगाम दीजिये।

यह किसने कहा आपसे कि आप इस प्रकार मेरी सरपरस्ती करें? मैं घृणा करूंगी तुमसे!" वह तपाक से बाहर चली गयी और जाकर अपना कमरा भीतर से बन्द कर लिया।

यही उनका पहला और आखिरी झगड़ा था।

उस रात देर गये तक वेरा अपने कमरे से बाहर नहीं निकली। जब निकली तो वह सीधे अपने पति के कमरे में पहुंची।

"प्यारे द्मीत्री, मैंने क्रोध में न जाने क्या-क्या बक दिया था। नाराज़ मत होओ, प्रिय। तुम देख ही रहे हो, मैं कितना कठिन संघर्ष कर रही हूं अपने से। मेरी मदद करने की जगह तुम उसी बात को किसी न किसी रूप में हवा दे देते हो, जिसका प्रतिरोध करने की आशा मैं कर रही हूं—सचमुच प्रतिरोध।"

"मुझे क्षमा कर दो, मेरी प्रिय। मैंने बहुत बेढब बात कह डाली थी। अब तो सुलह हो गयी है दोनों में, है न? तो फिर आओ, इस बारे में पूरी बात कर ही डालें।"

"बिल्कुल ठीक है, प्रियतम। बस मेरे खिलाफ़ कुछ न करो। मुझे अपने आप से संघर्ष करने में क्या कुछ कम कठिनाई हो रही है।"

"लेकिन अब क्या फ़ायदा है, वेरा? तुमने सोच-विचार में इतना समय तो लगा दिया। देख रही हो न, तुमने जितना पहले समझा था, भावना उससे कहीं अधिक सुदृढ़ है। क्यों पहुंचा रही हो अपने की पीड़ा?"

"प्रिय, मैं तुम्हें प्यार करना चाहती हूं, चोट पहुंचाना नहीं।"

"मेरी दोस्त, दरअसल तुम मेरी भलाई चाहती हो। क्या तुम यह विश्वास करती हो कि मैं तुम्हारी इस लम्बी यातना को देख सकता हूं अथवा इससे खुश हो सकता हूं?"

"लेकिन, प्रिय, तुम मुझे कितना अधिक प्रेम करते हो!"

"निस्सन्देह, वेरा, बहुत अधिक प्रेम करता हूं—इतना तो सचमुच ही सही है। लेकिन तुम और मैं यह जानते हैं कि प्रेम करना क्या होता है: दूसरे की खुशी में खुश होना, उसके दुख के लिए रोना, क्या यह सही नहीं है? अपना दिल तोड़कर, तुम मेरा ही दिल तो तोड़ रही हो।"

"सच है प्रिय, लेकिन इसके विपरीत अगर मैं उस भावना

के सामने झुक जाऊं, तो क्या तुम्हें पीड़ा नहीं होगी—ओफ़, समझ में नहीं आता कि यह घृणित भावना उत्पन्न कैसे हो गयी!"

"अब कारण खोजना बेसूद बात है—कुछ बदला तो नहीं जा सकता। बस एक ही विकल्प बचा है तुम्हारे सामने: या तो घुटती रहो और मुझे भी पीड़ित रखो अथवा इसका अन्त कर दो, इसी में हम दोनों की भलाई है।"

"लेकिन प्रिय, लम्बे अरसे तक मैं हरगिज़ नहीं कष्ट झेलूंगी; सब ठीक हो जायेगा, देखना।"

"तुम्हारी इस चेष्टा की प्रशंसा करता हूं मैं। मैं इसे तुम्हारी इच्छा-शक्ति का प्रमाण मानता हूं कि जो कुछ करना तुम ज़रूरी समझती हो। बस, इतना याद रखो वेरा, आवश्यकता तुम्हारी दृष्टि में है, मेरी में नहीं। दर्शक के रूप में मैं तुम्हारी स्थिति को तुमसे कहीं बेहतर ढंग से देख सकता हूं। जानता हूं सब व्यर्थ है। लड़ती रहो अपने से जब तक ताक़त है, लेकिन यह कभी मत सोचना कि तुम मुझे कोई चोट पहुंचाओगी। तुम मेरा दृष्टिकोण जानती हो, तुम जानती हो कि यह हक़ीक़त में अपरिवर्तनीय और निश्चित है—या नहीं जानती हो? क्या तुम मुझे धोखा दोगी? क्या मैं तुम्हारी नज़रों में गिर जाऊंगा? मैं तो यहां तक पूछ लूंगा: क्या तुम्हारे मन में मेरे लिए भावना दुर्बल हो जायेगी? क्या बात बिल्कुल इसके विपरीत नहीं है, क्या तुम मेरे प्रति कुछ अधिक उदार नहीं हो गयी हो, क्योंकि मैं तुम्हारे लिए शत्रु सिद्ध नहीं हुआ है? मुझ पर दया मत करो—मुझे इसमें कोई त्रासदी नहीं दीखती कि तुम सुखी होने का अवसर हाथ से जाने नहीं दे रही। अभी, फ़िलहाल इतना ही पर्याप्त है। इस प्रकार की अधिक बातचीत पीड़ादायक होगी, विशेष रूप से ऐसी स्थिति में तुम्हारे लिए जब कि सब कुछ सुननेवाली तुम हो। बस, यह मत भूलना, जो अभी मैंने कहा है। वेरा, मैं बहुत ही दुःखी हूं। तुम अपने कमरे में जाओ और सोचो अथवा बेहतर होगा कि सो जाओ। और सोचो अपने बारे में, मेरे बारे में नहीं। बस यही एकमात्र मार्ग है, जिससे तुम मुझे अनुचित पीड़ा से बचा सकती हो।"

26

दो सप्ताह बाद, लोपुखोव ने सुबह फ़ैक्टरी के आफ़िस में बितायी और वेरा पूरे तौर पर बौराई रही। कभी वह बिस्तर पर पड़ जाती अपना चेहरा हाथों में छिपाये और फिर पन्द्रह मिनट बाद लपक के उठकर फ़र्श पर चहलक़दमी करने लगती, कुर्सी पर ढह जाती और फिर पागल की भांति उठती और लड़खड़ाये क़दमों से चलती, फिर बिस्तर पर लुढ़क जाती, फिर कुछ डग भरती, एक से अधिक बार लिखने की मेज़ के पास ठिठकी और हर बार वहां से हट गयी, लेकिन अंत में बैठ गयी और बैठकर पत्र लिखा, उसे बन्द किया और फिर आधे घंटे बाद उसे झपटकर उठाया और टुकड़े-टुकड़े कर दिया, टुकड़ों को जला डाला और फिर चहलक़दमी चालू कर दी पहले से कहीं अधिक तेज़, फिर पत्र लिखा, उसे फाड़ा, जलाया और फिर चहलक़दमी। तीसरा पत्र लिखने के बाद उसने पत्र को बन्द किया बस जैसा-तैसा, जल्दी में उस पर पता लिखना भूल गयी, अपनी चहलक़दमी के दौरान उसने पति के कमरे में प्रवेश किया और उसकी मेज़ पर झुक गयी, फिर तत्काल ही अपने कमरे में लौट आयी और आकर कुर्सी पर बुत-सी बनकर बैठ गयी, अपने सिर को अपने हाथों में दबाये कोई आधे घंटे अथवा कि पूरे घंटे तक, घंटी की आवाज़ सुनायी पड़ी, लगा कि वह घर वापस लौट आया है। वह लपककर उठी उसके कमरे में उस पत्र को वापस लाने के लिए लेकिन पत्र तो वहां था ही नहीं—कहां गया? उसकी मेज़ पर रखे सभी काग़ज़ वेरा ने छान मारे, कहां गया पत्र? अरे हां, माशा दरवाज़ा खोलने गयी है। सीढ़ी पर चढ़ते द्मीत्री ने देखी झलक वेरा की, चेहरा पीला था और वह हड़बड़ी में अपने कमरे की ओर जा रही थी।

वह वेरा के पीछे नहीं गया बल्कि सीधे अपने अध्ययन-कक्ष में घुसा। अपने मेज़ का सरसरी दृष्टि से जायज़ा लिया, फ़र्श देखा चारों तरफ़—वह उम्मीद ही कर रहा था कुछ इसी तरह की, ज़बानी अथवा लिखित, पिछले कई दिनों से—लो पत्र ही था न वह, पता लिखा नहीं था, पर लिखावट तो वेरा की ही थी। निस्सन्देह, या तो वह उसे नष्ट करने के लिए ढूंढ़ रही थी अथवा

अभी वहां रख कर गयी होगी—पहली बार वह सही साबित हुआ। उसके सभी काग़ज़ात उलटे-पुलटे हुए थे। लेकिन वह उस चीज़ को इतनी जल्दी कैसे ढूंढ़ सकती थी, जिसे उसने यूंही उन्माद में जैसे-तैसे फेंक दिया था मेज़ पर, मानो कोई जलता हुआ कोयला हो उसके हाथ में, जिसे उसने मेज़ पर झटक के फेंक दिया और वह मेज़ के पार जाकर खिड़की के दासे पर जा पड़ा। पढ़ना तो उसे बेसूद ही था लेकिन फिर उसे पढ़ तो लेना ही चाहिये।

"प्रियतम, मैं तुमसे अपार प्रेम करती हूं। काश कि मैं तुम्हारे लिए मर सकती! कितना स्वर्गिक आनन्द प्राप्त होता, यदि इससे तुम्हें कुछ अधिक सुख मिलता। लेकिन मैं उसके बिना नहीं रह सकती। प्रिय, मैं तुम्हें कष्ट पहुंचा रही हूं, घोर कष्ट, मेरे मित्र, पर मेरा इरादा यह नहीं है। मैं असहाय हूं। क्षमा कर देना, कृपया, क्षमा कर देना।"

पन्द्रह मिनट अथवा इतने ही समय तक लोपुख़ोव खड़ा रहा वहां, उसकी दृष्टि पास रखी कुर्सी के हत्थे पर टिकी रही। प्रत्याशा रही हो अथवा नहीं, किन्तु यह निर्मम प्रहार था। भले ही इस प्रकार के पत्र अथवा घोषणा मिलने की आशा पग-पग पर उसे अपेक्षित रही हो अथवा नहीं, किसी भी इंसान को अपनी मानसिक स्थिति को संतुलित करने में समय तो दरकार होता ही है। अन्ततः, ऐसा कर पाया। वह माशा को हिदायत देने रसोई घर में गया:

"जब तक कहूं न, तब तक खाना मत परोसना। कुछ तबीअत ठीक-सी नहीं लगती, खाने से पहले दवा लेनी पड़ेगी। लेकिन हां, तुम खा लो, मगर हड़बड़ी में नहीं, आराम से, मुझे अभी काफ़ी समय लगेगा खाना लेने में। मैं बता दूंगा तुम्हें जब खाना होगा।"

रसोई घर से वह अपनी पत्नी के कमरे में गया। वह तकियों में अपना मुंह छिपाये लेटी हुई थी। लोपुख़ोव के पैरों की आहट से कांप-सी उठी।

"तुम्हें वह मिल गया! तुमने पढ़ ही लिया होगा! हे भगवान, मैं शायद पागल ही हो गयी हूं! सच है न यह। यह किसी बीमार मन की उपज ही है न!"

"हां, मेरी दोस्त, तुम ठीक कहती हो। तुमने क्षणिक आवेग में क्या कुछ लिख डाला उसे गंभीरतापूर्वक नहीं लेना चाहिये। इस

प्रकार की किसी समस्या का समाधान ऐसे नहीं किया जा सकता। हमें अभी अनेक अवसर मिलेंगे कि हम इस पर ऐसे मामले के रूप में जिसका सम्बन्ध दोनों से है भली-भांति और संयमित मन से सोच-विचार कर सकें। अलबत्ता, इस समय मैं अपने बारे में बात करना चाहूंगा। मैंने अपने जीवन में कई परिवर्तन कर डाले हैं, जो भी मैं करना चाहता था और मैं उनसे बहुत खुश हूं। सुन रही हो न, तुम?" स्वाभाविक ही था कि वह किसी भी बारे में कैसे निश्चिन्त हो सकती थी, और ख़ास तौर से सुनने या न सुनने के बारे में भी, अलबत्ता उसने कुछ सुना ज़रूर। कुछ ऐसा, जो इस समय उसकी समझ से परे था, लेकिन कुछ तो और उसमें कुछ इतना बोधगम्य था कि उसका ताल्लुक़ उसके पत्र से बिल्कुल नहीं था। धीरे-धीरे वह सुनने की ओर दत्त-चित्त हुई। उसका मन पुकार-पुकारकर यही कह रहा था कि उसके अलावा कोई भी और बात की जाय और अगर बात का मूल पकड़ने में कुछ समय लगा भी, पति का शान्त और संतुलित स्वर उसे सांत्वनादायी लग रहा था। "सच ही, तुम्हें मेरी बात सुननी ही चाहिये, मेरे लिए उसका बहुत अधिक अर्थ है।" और सीधे-सीधे यह पूछकर कि "तुम तैयार हो न इसके लिए" वह "कुछ अच्छी बात शुरू करने पर" आमादा हो गया, पूर्ण विस्तार के साथ बताया उसने सब कुछ, जिसमें से तीन-चौथाई, नहीं पूरे के पूरे से वह सुपरिचित थी, लेकिन क्या हुआ, उसे कहने दिया जाय, वह कितना दयालु है! और वह कहता गया, ट्यूशनों के बारे में कि वह उनसे ऊब गया है, प्रत्येक शिष्य और शिष्य के परिवार के बारे में कि क्यों वह उनसे ऊब गया है और फिर यह कि दफ़्तर में काम से नहीं ऊबा क्योंकि वह महत्त्वपूर्ण है, वह पूरी की पूरी फ़ैक्टरी के कर्मचारियों को प्रभावित करने का मौक़ा देता है और उसके प्रतिफल सामने आने भी लगे थे, उसने साक्षरता के प्रेमियों को इकट्ठा किया था और उन्हें पढ़ना सिखाया था... साक्षरता, अध्यापकों के वेतन, जो उसने प्रबन्धकों से इस आधार पर वसूल किये थे कि शिक्षित कामगार मशीनरी और माल को कम नुक्सान पहुंचायेंगे क्योंकि उनकी ग़ैरहाज़िरी कम होगी, काम पर शराब पीकर नहीं आयेंगे निस्सन्देह, रक़म बिल्कुल ही नगण्य थी, वह उन सरायों में अक्सर जाया करता था, जहां

कामगार शराब पीते थे, ताकि वह उनकी लत छुड़ा सके और इसके अलावा अन्य दुर्गुणों से भी उन्हें दूर रख सके। सबसे महत्त्वपूर्ण बात तो यह थी, कि अब वह कम्पनी के लिए योग्य, चतुर व्यक्ति सिद्ध हो चुका था, जो एक के बाद दूसरा उत्तरदायित्व सफलतापूर्वक ग्रहण करता जा रहा था और इस सबका अत्यधिक आनंदकर ब्योरा यह था: वह कारखाने का सह-निदेशक नियुक्त होनेवाला था, उसके ऊपर नाममात्र को एक व्यक्ति होगा, जो फ़र्म के सहयोगियों में से था, जिसे बस वेतन मिलता रहेगा, और वह, लोपुखोव पूरे कारोबार की स्वतंत्र रूप से व्यवस्था करेगा, नाममात्र के निदेशक ने अपने पद को स्वीकार करते समय यही शर्त लगायी थी। उसने कहा था: "बात यह है कि मैं प्रबन्ध नहीं चला सकता।"—"कोई बात नहीं, तुम्हें यह पद इसीलिए स्वीकार करने के लिए कहा गया था ताकि उस पर ईमानदार व्यक्ति को रखा जा सके और जहां तक परिचालन-संचालन का प्रश्न है, तो मैं सब कुछ करूंगा।"—"यही शर्तें हैं मेरी जिन्हें मैं स्वीकार कर सकता हूं और करूंगा भी।" ताहम, अधिकार का कोई मूल्य नहीं था, जितना कि वेतन का, पूरे साढ़े तीन हज़ार रूबल। पढ़ाने, फ़र्माइश पर लिखने-लिखाने और दफ़्तर में वर्तमान कार्य, इन सबको मिलाकर मिलनेवाले पारिश्रमिक से तो यह राशि कोई 1000 रूबल अधिक थी। अथवा इतनी कि वह उन सभी कामों को इस एक सह-निदेशक के पद के लिए छोड़ दे। कितनी बढ़िया बात थी। इस सब को कह पाने में उसे केवल आधा घण्टा लगा और इसके अंत में वेरा भी यह कह सकी कि सचमुच बढ़िया बात हुई यह तो। फिर उसने अपने बाल संवारे और खाने के लिए तैयार हो गयी।

खाने के बाद माशा को चांदी के सिक्कों के रूप में 80 कोपेक गाड़ी-भाड़े के लिए दिये गये, उसे कम से कम चार जगहों पर जाना था और चारों जगह एक पत्र दिखाना था। वहां लिखा था कि लोपुखोव उस शाम खाली था और वह उन श्रीमानों का स्वागत करने के लिए सहर्ष प्रस्तुत है। उचित समय पर वह वीभत्स रहमेतोव आ पहुंचा। उसके बाद एक-एक करके, नाना प्रकार के नौजवान आ धमके और भीषण वाद-विवाद में जुट गये और इसकी, उसकी, सभी की बखिया उधेड़ने लगे हर प्रकार की

कहनी-अनकहनी से शालीनता और संयम की सीमायें लांघते रहे। वेरा की शाम विवाद की उदात्त कला के द्रोही कई लोगों की सहायता से गुज़र गयी। अन्त में वह समझ गयी कि माशा कहां गयी थी। लोपुख़ोव कितना दयालु था! आज सांझ पधारे नौजवानों से वह निश्चय ही प्रसन्न थी, भले ही वह उस सब हंसी-मज़ाक़ से जानबूझकर अलग-थलग रही थी। वह तो रहमेतोव का चुम्बन लेने को भी तैयार थी।

पार्टी रात के तीन बजे भंग हुई—बिल्कुल उचित समय पर ही। दिन भर के झंझट से बेहाल वेरा बिस्तर में लुढ़क गयी। और तभी आगमन हुआ उसके पतिदेव का।

"मैंने उस पद का ज़िक्र किया था न वेरा, उसके बारे में एक बात बताना तो मैं भूल ही गया तुम्हें। ऐसी बात नहीं कि वह बहुत महत्त्वपूर्ण हो, वास्तव में उसी समय बतलाना ऐसा कोई ज़रूरी भी नहीं था, लेकिन अब मैं बता देता हूं, अगर तुम चाहो तो। वैसे हम दोनों ही उनींदे हो रहे हैं, बुरी तरह इस समय। इसलिए मैं संक्षेप में बता दूंगा—ज़रूरत होगी तो कल हम इसको ख़त्म कर लेंगे। बात यह है कि मैंने उस पद को स्वीकार इसी शर्त पर किया है कि मैं जब चाहूं तभी काम शुरू करूं, महीना अथवा दो महीने भी लग सकते हैं आज से। मैं इस बीच र्‌याज़ान जाकर अपने सम्बन्धियों से मिल आऊंगा—पांच साल हो गये उन्हें देखे, तुम्हें तो मालूम ही है। अलविदा, वेरा। नहीं, नहीं, उठो मत। कल काफ़ी समय होगा बात करने के लिए। सो लो कुछ देर।"

27

अगली सुबह जब वेरा अपने कमरे से निकली तो उसने देखा कि लोपुख़ोव और माशा दो सूटकेसों में सामान लगा रहे हैं। माशा छाया की तरह वहीं जमी थी: तह करने, लपेटने और संवार-संवारकर रखने में व्यस्त थी। "अरे जाग गयी वेरा, ज़रा मदद तो करना हमारी?" चाय भी तीनों ने सामान पैक करते-करते ही पी। वेरा

अभी होश में आने लगी कि उसके पतिदेव ने कहा: "साढ़े दस। वक़्त हो गया है स्टेशन पहुंचने का।"

"मैं भी चल रही हूं, तुम्हारे साथ प्रिय।"

"दो सूटकेसों के साथ जगह कहां होगी गाड़ी में, मित्र। अलबत्ता, तुम माशा के साथ बैठ सकती हो।"

"तुम मेरी बात ही नहीं समझे। मैं र्याज़ान चलने को कह रही हूं।"

"ओह यह बात है, तब हम असबाब माशा के पास रख देंगे और तुम मेरे पास बैठ सकती हो।"

भला सड़क भी कोई जगह है कि जहां अपने मन का बोझ हल्का किया जाय। और कुछ नहीं तो गाड़ी की खड़खड़ाहट में जो कुछ कहा जायेगा, उसे सुन कौन पायेगा और यदि वह कुछ प्रतिक्रिया व्यक्त करना भी चाहेगा, तो उसका अधिकांश भाग वह सुन भी कैसे पायेगी।

उसने इसरार किया, "मैं तुम्हारे साथ र्याज़ान चलूंगी।"

"अरे छोड़ो भी, तुम्हारी तैयारी ही कहां हुई है। चाहती हो तो अपना असबाब बांधो, जो भी उचित समझो वही करो। लेकिन मैं तो यही कहूंगा कि तुम यहां रहकर पहले मेरे पत्र की प्रतीक्षा करो। तुम्हें कल मिल जायेगा। मैं रास्ते से ही लिखकर डाल दूंगा। बराये मेहरबानी, कल तक इन्तज़ार कर लो।"

उसने पति को वहीं जंगले के पास खड़े-खड़े आलिंगनबद्ध किया, विदाई-चुम्बन के साथ आंखों से आंसू बह निकले और इस बीच पति फ़ैक्टरी के मामलों के बारे में ही कुछ न कुछ कहता रहा, जो और अच्छी कैसे हो सकती थी, अपने माता-पिता के बारे में जो उसे देखकर खुशी से झूम उठेंगे और अच्छे स्वास्थ्य के बारे में जिसकी तुलना में और सभी कुछ नगण्य है—क्या वह अपने स्वास्थ्य का ध्यान भली-भांति रखेगी, उसकी ख़ातिर। अन्तिम क्षण में ही जंगले के सुदूर छोर से उसने कहा: "तुमने अपने पत्र में लिखा था कि तुम्हारा मेरे प्रति अब जितना अनुराग है, उतना पहले कभी नहीं था—और यह सच भी है मेरी प्रियतमा। मेरे मन में तुम्हारे प्रति इतना ही प्रगाढ़ अनुराग है। किसी व्यक्ति के प्रति स्नेह का अर्थ है उसके सुख की कामना करना, और हम दोनों में से किसी के

भी मन में इस बारे में कोई सन्देह नहीं। स्वतंत्रता के बिना सुख की कल्पना नहीं की जा सकती। तुम मुझे बांधकर तो हरगिज़ नहीं रखना चाहोगी, है न और न ही मैं ऐसा चाहूंगा। कभी तुम मुझे बोझ मान बैठी, तो इससे मेरा दिल टूट जायेगा। इसलिए, दया करके ऐसा कभी मत करना। तुम्हारे लिए जो भी सर्वोत्तम रहे, मैं उसी का हामी हूं। कुछ समय बीतने दो। लिखना मुझे कि मैं कब लौटूं। अलविदा, मेरी दोस्त, दूसरी घंटी भी बज चुकी है, अब तक तो मुझे डिब्बे में बैठ जाना चाहिये था। अलविदा।"

28

उपर्युक्त घटना अप्रैल के अन्त की है। मध्य जून में लोपुखोव पीटर्सबर्ग में वापस लौटा था। उसके कथनानुसार, मास्को अपने काम पर जाने से पहले वह तीन हफ़्ते यहां व्यतीत करना चाहता था। 9 जुलाई को वह रवाना हुआ और 11 को मोस्कोवस्की रेलवे स्टेशन के पास के उस होटल में वह घटना घटित हुई, जिसका अतिथि जाग ही नहीं रहा था। साथ ही दो घंटे बाद कामेन्नी द्वीप की उस कॉटेज में जो कुछ घटित हुआ। कौन था वह जिसने खुद को गोली मार ली थी, हमारा अनुभूतिक्षम पाठक, निश्चय ही इस बारे में अनुमान लगाने में कोई चूक नहीं करेगा। "मैं तो बहुत पहले ही समझ चुका था कि यह लोपुखोव ही होगा।" वह कह उठेगा, जो उसकी अनुभूति-क्षमता की कुशाग्रता के उपयुक्त होगा। कहां है वह अब और कैसे यह सब हुआ, गोली कहां लगी? "ब्योरा, ब्योरा, सभी कुछ तो जैसे छलावा था, वह तो मौजूद था वहां, नीच कायर, अपने ही शव से नदी को ढो रहा था," हमारा अनुभूतिक्षम पाठक अपने आप ही क़ुलाबे बांध लेगा। जो मर्ज़ी आये कहिये, सोचिये महानुभाव, आप जैसे लोगों को समझाने-बुझाने का लाभ भी क्या है।

29

असाधारण व्यक्ति *

किरसानोव को गये तीन घंटे बीत चुके थे और वेरा पूर्ण रूप से संयत और सुचित्त हो चुकी, तो उसने लगभग तत्काल ही अपनी कार्यशाला के बारे में सोचा: उसको योंही परित्यक्त नहीं कर देना चाहिये। हालांकि वह कार्यशाला की आत्म-निर्भरता के बारे में बहुत कुछ कहती रहती थी, तथापि उसे कहीं गहरे अपने मन में यह पता था कि ऐसा कहकर वह केवल आत्मश्लाघा का ही शिकार बनती है। अच्छे प्रबन्ध के बिना पूरा कारोबार चौपट होकर ही रहेगा। दूसरी बात यह भी थी कि अब वह इतनी अच्छी तरह स्थापित हो चुका था कि थोड़े से ही पुनरीक्षण से यह भली-भांति चल सकता था। नताशा मेर्त्सालोवा के दो बच्चे थे, लेकिन वह अगर ज़रूरत पड़े तो बड़ी आसानी से कार-व्यापार में एक या दो घंटे प्रतिदिन बखूबी लगा सकती थी। ऐसी बात भी नहीं थी कि वह मना कर दे ऐसा करने को, क्योंकि अभी भी तो वह युवतियों के साथ पर्याप्त समय व्यतीत करती थी। वेरा अपनी चीज़ों को बिक्री के लिए छांटने लगी और माशा को पहले मेर्त्सालोवा के पास भेज दिया कि वह इधर आ जाय और बाद

* असाधारण व्यक्ति—इस पात्र की कुछ विशिष्टतायें एक ज़मींदार और एक नामी घराने का अंतिम वंशज पावेल अलेक्सान्दरोविच बाख़मेतेव (जन्म 1828) के चरित्र से ली गयी है। सारातोव हाई स्कूल का (1845—1851) तक छात्र और जनवरी 1850 में चेर्नीशेव्स्की की वरिष्ठ रूसी साहित्य कक्षा का छात्र। 1857 में उसने अपनी ज़मींदारी बेच दी और उसी वर्ष 20 अप्रैल को उसे विदेश-यात्रा के लिए पासपोर्ट मिला। श्तेत्तेन के लिए 7 मई को वह पीटर्सबर्ग से रवाना हुआ। इसके पूर्व उसने चेर्नीशेव्स्की के साथ पूरी रात बितायी। 7 अगस्त को उसने अलेक्सान्दर हरज़ेन से मुलाक़ात की, जो कि एक विख्यात और उदार रूसी प्रकाशक था तथा इस समय लंदन में निर्वासित जीवन बिता रहा था। उसने क्रांतिकारी कार्यों में सहायतार्थ धनराशि छोड़ी। वह 20 अगस्त को एक नयी सामाजिक व्यवस्था की स्थापना के लिए मारक्यूएसास द्वीपसमूह की यात्रा पर रवाना हुआ। (अन्य रिपोर्टों के अनुसार वह आस्ट्रेलिया या न्यूजीलैंड, सैंडविच द्वीपसमूह पर गया।)—सं०

में रहेल के पास जाने को कहा, जो पुराने कपड़ों और न जाने किस-किस की बिक्री का बन्दोबस्त करती थी और इतनी घाघ यहूदिन थी कि कुछ मत पूछिये। वेरा की अच्छी दोस्त थी वह और बड़ी ईमानदार जैसे सभी भले लोगों के साथ व्यवहार में सभी पटरीवाली होती हैं। रहेल और माशा को शहर के फ़्लैट से बची चीज़ों को लेना था और लौटते हुए फ़र विक्रेता के यहां से ग्रीष्मकाल के लिए भण्डारित फ़र को ले आना था। ताकि सभी चीज़ों के साथ ग्रीष्म-कॉटेज आ जाने के बाद रहेल ठीक से दाम लगाकर उन्हें थोक में ख़रीद ले।

माशा अभी गेट से बाहर भी नहीं निकल पायी थी कि उसे रहमेतोव ने रोका, जो आधे घंटे या अधिक समय से वहीं पर मंडरा रहा था।

"माशा, क्या तुम देर में लौटोगी?"

"लगता तो यही है कि काफ़ी देर हो जायेगी। बहुत काम करने हैं।"

"तो क्या वेरा पावलोव्ना को अकेली छोड़ आयी हो तुम?"

"बिल्कुल।"

"तो फिर मैं वहां तुम्हारी एवज़ी कर लूंगा, शायद कोई काम पड़ जाय उन्हें।"

"अच्छी बात होगी। मैं उनके कारण बहुत परेशान थी। अरे बाप रे, मैं तो बिल्कुल ही भूल गयी, श्रीमान रहमेतोव, क्या आप पड़ोसियों से—मैं उनके रसोइये और आया दोनों को ही ख़ूब अच्छी तरह जानती-पहचानती हूं—क्या आप उनमें से किसी से भी कह देंगे कि वे उन्हें (वेरा को) खाना खिला दें, उन्होंने अभी एक भी कौर मुंह में नहीं डाला है।"

"बिल्कुल चिन्ता मत करो, और फिर मैंने भी तो कुछ नहीं खाया है। मैं खुद ही सब बन्दोबस्त कर लूंगा। मगर तुमने कुछ खाया-पिया है कि नहीं?"

"वेरा पावलोव्ना मुझे खाना खिलाये बिना, इस तरह भला कहीं भेज सकती हैं क्या?"

"हां यह तो बात है, फिर भी मुझे डर था कि कहीं, उनकी जो मानसिक स्थिति है उसमें, वे भूल न गयी हों।"

माशा और उसी की तरह के अथवा उससे कुछ अधिक सादा-स्वभावं लोगों के अलावा, अधिकांश लोग रहमेतोव के बारे में कुछ सशंकित ही रहते थे और इन लोगों में बहुधा लोपुख़ोव, किरसानोव तथा उनके सभी निडर साथी होते थे। उसके और वेरा के बीच कुछ रुखाई का भाव था। वेरा को वह ऊबाऊ लगता था और वह वेरा से कुछ कतराता ही रहता था। वह माशा का पसन्दीदा था, यद्यपि वह अन्य अतिथियों की तुलना में उसकी ओर कम ही ध्यान देता था।

उसने कहना शुरू किया: "मदाम, मैं बिन-बुलाये मेहमान की तरह आ पहुंचा हूं, लेकिन मुझे रास्ते में अलेक्सान्दर मिल गये थे और उन्होंने मुझे सब कुछ बता दिया। मैंने सोचा शायद मैं आपके किसी काम आ सकूं, इसलिए शाम बिताने आ गया।"

वह चाहता तो तत्काल ही सामने पड़ी ढेरी में से छांट-छूंट के काम में वेरा का हाथ बंटाना शुरू कर सकता था। रहमेतोव की जगह कोई और होता तो उसने पेशकश कर दी होती और तत्काल उसके अनुरोध को स्वीकार कर लिया गया होता। लेकिन रहमेतोव वैसा नहीं था। वेरा ने उससे सिर्फ़ हाथ मिलाया और इधर आ जाने के लिए अपने अन्तरतम से उसका धन्यवाद किया।

उसने उत्तर दिया: "मैं अध्ययन-कक्ष में बैठता हूं, आपको किसी चीज़ की ज़रूरत हो तो बस आवाज़ भर दे दें। और अगर कोई दरवाज़ा खटखटायेगा तो आप फ़िक्र न करें, मैं देख लूंगा।"

यह कहकर और अत्यन्त निर्लिप्तता के साथ वह अध्ययन-कक्ष की ओर मुड़ गया, अपनी जेब में हैम और ब्लैक ब्रैड के स्लाइस के लिए हाथ डाला—कुल वज़न जिसका लगभग चार पौंड होगा—और बैठकर पूरी की पूरी खाद्य-सामग्री चबा डाली, हर स्लाइस को खूब सावधानी से चबाया, फिर उसके बाद पानी का जग आधा खाली किया। इतना कर लेने के बाद किताबों की अलमारी पर दृष्टि गड़ाई पाठ्य सामग्री चुनने के लिए। "प्राचीन साहित्य... बेकार... बेकार... बेकार... बेकार..." और यह विशेषण इस प्रकार के लेखकों के लिए प्रयुक्त किया गया था, जैसे मैकाले, ग्वीज़ो, तेर, रेंक और गर्विनस।* "हां, यह ग्रंथ खूब मिल गया," वह बोला।

* प्रसिद्ध इतिहासकार।—सं०

उसका तात्पर्य 'न्यूटन की संपूर्ण रचनायें' से था। उसने इन पर जल्दी-जल्दी अंगुलियां चलायीं और शीघ्र ही उसे वह खण्ड मिल गया, जिसकी उसे तलाश थी। वह बड़े प्यार से मुस्कराया: "यही तो है!" वह लगभग चीख पड़ा: 'Observations on the Prophecies of Daniel and the Apocalypse of St. John'. "बिल्कुल ठीक, ज्ञान के इसी वर्ग में मैं कुछ पर्याप्त आधार जानकारी के लिए उपयुक्त कर सकता हूं। न्यूटन ने बुढ़ापे में जब यह ग्रन्थ लिखा तो वह नीमपागल था। इसीलिए यह ग्रंथ स्वस्थ चित्तता और उन्माद की युति के बारे में कालजयी ग्रंथ है। और यह प्रश्न शाश्वत है, सभी जनों पर, इतिहास की प्रत्येक घटना पर और लगभग प्रत्येक पुस्तक और मनोदशा पर समान रूप से लागू होता है। और यही तथ्य प्रतीक है जहां तक कि इसका सम्बन्ध अत्यन्त विदग्ध और अत्यन्त सुस्थिर चित्त से हो और दूसरे स्पष्ट रूप से सर्वप्रथम दृष्टिगोचर उन्माद के घालमेल से और निर्विवाद रूप से स्थापित उन्माद से हो। सचमुच ही, यह अपने क्षेत्र का प्रमुख ग्रन्थ है। यह कहीं भी दृष्टव्य, सभी संदर्भों में समान अत्यन्त सूक्ष्म लाक्षणिकताओं को अत्यन्त स्पष्टता के साथ उजागर करेगा। और इस प्रकार अभिन्न, कठोर और निर्विवाद का तादात्मय स्थापित करेगा। संक्षेप में यह पुस्तक पठनीय है।" और उसने उत्साहपूर्ण अध्यवसाय से उस ग्रंथ का अवलोकन आरंभ किया, जिसे पिछले सौ बरसों से भी अधिक समय से, इसके प्रूफ़ पढ़नेवालों के सिवा किसी और ने शायद ही धूल अथवा बुरादे को झाड़ने के सिवा छुआ हो, लेकिन उसके जैसे सोचवाले व्यक्ति के लिए तो यह अत्यन्त रुचिकर था।

रहमेतोव जैसे विरल लोगों से मैं मिला हूं, बस केवल आठ जन (और इनमें से दो महिलायें हैं) जिनका बस एक ही समान लाक्षणिकता को छोड़कर एक दूसरे से कोई सम्बन्ध नहीं। उनके स्वभाव कठोर से लेकर मृदु, खुशमिजाज से लेकर चिड़चिड़ा, रूखा, सक्रिय से लेकर निरुत्साही, टुक में ही आंसू बहानेवाले (एक तो निष्ठुर आकृति और उद्दण्डता की सीमा तक व्यंग्यप्रिय, दूसरा भावविहीन, चुप्पा और पूर्ण रूप से उदासीन, दोनों को ही मैं कई बार उन्मत्त स्त्रियों की नाईं सुबकते देख चुका हूं, और वह

भी व्यक्तिगत तकलीफ़ के लिए नहीं बल्कि अत्यन्त भिन्न प्रकार के वार्तालाप के लिए—और इस आदत का प्रदर्शन बहुधा अपने घर की चारदीवारी के भीतर ही किया जाता था) से लेकर किसी भी बात से अस्थिर न होनेवाले तक। जैसा कि मैंने कहा, इनमें समानता, एक ही पक्ष तक थी, लेकिन यह ऐसा पक्ष था, जो अन्य सभी से अत्यन्त भिन्न एवं विशिष्ट था। जिन्हें मैं बहुत अच्छी तरह जानता था, उन्हें मैं अकेले में चिढ़ाता था, कुछ बुरा मान जाते थे और कुछ नहीं। और चाहे जो भी हो अन्त में तो सभी परिहास समझ ही जाते थे। क्योंकि उसमें, उसके सार रूप में हंसने को बहुत कुछ होता था, हर बात के सम्पूर्ण स्वरूप के ही कारण तो वे विरल थे। और इसी प्रकार के हास्य में तो मेरी रुचि है।

एक वह जो मुझे लोपुख़ोव और किरसानोव की मित्र-मण्डली में मिला, जिसका वर्णन इन पृष्ठों में हुआ है, इस बात का जीता-जागता प्रमाण है कि वेरा के दूसरे सपने में लोपुख़ोव और मेर्त्सालोव के बीच हुए विचार-विवाद की विशिष्ट व्याख्या की जा सकती है: भूमि के किसी भी टुकड़े में, अच्छा, बुरा या चाहे जैसा हो, कोई न कोई कण ऐसा होता है, फिर भला वह चाहे जितना सूक्ष्म क्यों न हो, जिसमें गेहूं के स्वस्थ डण्ठल को उत्पन्न करने की क्षमता होती है। वेरा, किरसानोव और लोपुख़ोव, जो मेरी कथा के केन्द्रीय पात्र हैं, अपने पूर्वजों की तीसरी पीढ़ी से पहले के किसी भी पूर्वज को ईमानदारी के साथ ढूंढ़ नहीं सकते। शायद, किसी न किसी तरह पड़दादी तक पहुंच भी जायें (पड़दादा तो अतीत में विलीन हो चुके हैं, जहां से उनकी कोई ख़बर भी नहीं ली जा सकती, पूर्ण रूप से अज्ञात, बस यह तथ्य अवश्य सुज्ञात है कि उन्होंने पड़दादी से विवाह किया था और उनका ज्ञात कुल नाम किरील था और वह भी दादा गेरासिम किरीलिच के गोत्र की कृपा से)। इसके विपरीत, रहमेतोव वंश ने तेरहवीं शताब्दी में कीर्त्ति अर्जित की थी, जो हमारे अपने रूसी मानकों की तुलना में ही नहीं, यूरोपीय मानकों द्वारा भी श्रद्धेय है। उन तातारी योद्धाओं में से जो त्वेर में अपने सैनिकों के साथ मौत के घाट उतारे गये थे, जिन्होंने सच्चे धर्मावलम्बियों को इस्लाम में धर्मपरिवर्तित करने की आकांक्षा की

थी, (यह कथा बिल्कुल ही अविश्वसनीय लगती है, क्योंकि वास्तविक अपराध तो साधारण उत्पीड़न ही था) इन्हीं में से एक हमें रहमेत नाम का भी मिलता है। रूसी पत्नी, जो त्वेर के शासक की जो प्रशासन और सेना दोनों का ही अध्यक्ष था उसकी अपहृत भतीजी थी, से उत्पन्न उसके शिशु लतीफ़ की जान को मां के कारण बख्श दिया गया था और मिखाईल नाम दे दिया गया था। इस लतीफ़-मिखाईल-रहमेतोव से रहमेतोव का कुलीन वंश आरंभ हुआ। त्वेर के दरबारी, मास्को में आकर कुलीन वंशों की दूसरी कोटि में आ गये और फिर अठारहवीं शताब्दी के पीटर्सबर्ग में मुख्य जनरलों में गिने-जाने लगे (सब नहीं, बस एक या दो ही, क्योंकि तब तक न जाने कितनी संख्या हो चुकी थी, सभी को तो पद दिया भी नहीं जा सकता था!)। हमारे रहमेतोव के पड़दादा से शुवालोव* ने मित्रता गांठी, जिसने मिनिख** के कभी साथ रहे व्यक्ति के माथे पर लगे कलंक को मिटाया। उसके पड़दादा रुम्यान्तसेव सेनापति*** के साथ सेना में रहे और नोवी के युद्ध**** की समाप्ति से पहले ही मुख्य जनरल का पद हासिल करके मारे गये। उसके पड़दादा, जो तिलज़ित***** में अलेक्सान्दर प्रथम की सेवा में थे, सबसे कहीं आगे निकल सकते थे, अगर उनकी स्पेरांस्की****** से घनिष्ठता न होती। उसके पिता की जीविका में कोई विशेष उतार-चढ़ाव नहीं हुआ। 40 वर्ष की आयु

---

* इ० इ० शुवालोव (1727—1797)—अठारहवीं शताब्दी का प्रमुख रूसी राजनीतिज्ञ और राजनेता।—सं०

** मिनिख (1683—1767)—रूस का प्रमुख सैनिक और राजनीतिक कार्यकर्त्ता।—सं०

*** प० अ० रुम्यान्तसेव (1725—1796)—रूसी सेनापति।—सं०

**** नोवी का युद्ध (1799)—फ़्रांसीसियों के साथ इस लड़ाई में रूसी-आस्ट्रियन की विजय हुई थी। इस लड़ाई के सेनापति अ० व० सुवोरोव था।—सं०

***** तिलज़ित में 26 जून 1807 को अलेक्सान्दर प्रथम तथा नेपोलियन ने रूस और फ़्रांस के बीच हुई शांति-संधि पर अपने हस्ताक्षर किये।—सं०

****** म० म० स्पेरांस्की (1772—1839)—रूस का राजनीतिज्ञ, 'राजकीय सुधारों का कार्यक्रम' उसने तैयार किया। राजद्रोह के अभियोग में पहले निज्नी नोवगोरोद और फिर पेर्म में निर्वासित किया गया।—सं०

में लेफ़्टनेंट-जनरल के पद से उन्होंने अवकाश ग्रहण किया और मेदवेदित्सा नदी के उद्गम के क्षेत्र में विस्तृत अपनी अनेक जागीरों में से एक को अपना निवास-स्थान बनाया। कोई भी भू-सम्पत्ति विशेष रूप से विस्तृत नहीं थी, कुल मिलाकर 2500 भू-दास थे, ग्रामीण परिवेश में उत्पन्न बच्चों की संख्या बस 8 थी। इनमें से रहमेतोव सातवां था, उसके बाद छोटी बहन थी, इस प्रकार उसे विरासत में केवल 400 भू-दास और 7000 हेक्टेयर भूमि मिली। कृषि दासों और 5500 हेक्टेयरों का क्या हुआ, यह किसी को भी नहीं मालूम और नहीं किसी को यही मालूम था कि उसने 1500 हेक्टेयर भूमि अपने लिए अलग कर ली है अथवा कि वह ज़मीनदार भी है और अपनी भूमि को पट्टे पर देने के लिए उसे 3000 रूबल की आय प्रतिवर्ष मिलती है। मेरा कहना यही है कि यह बात तक अज्ञात थी, जब तक वह हमें छोड़कर नहीं चला गया। उस समय हम यही मानते थे कि वह धनी रहमेतोव वंश का कोई सम्बन्धी है, जिनके पास कुल मिलाकर 75000 भू-दास हैं, जिनकी मेदवेदित्सा, खोपरा, सुरा और त्सना नदियों के तटों पर फैली जागीरें हैं और उनमें से कोई न कोई अपरिहार्य रूप से आस-पास के प्रान्तों में कुलीनों का प्रमुख होता है और प्रान्तीय प्रमुखों में से कम से कम कई रहमेतोव भी हैं। हमें यह मालूम था कि वह 400 रूबल प्रतिवर्ष व्यय करता था। यह धनराशि उन दिनों किसी विद्यार्थी के लिए तो पर्याप्त से अधिक थी, लेकिन रहमेतोव कुल के किसी वंशज के लिए बिल्कुल नगण्य थी। इस कारण और इस तथ्य के कारण कि हममें से किसी ने भी इस प्रकार की बात पूछने का कभी कष्ट ही नहीं किया, उसको सहज ही उसी पतित और निर्वर्गीकृत शाखाओं के साथ गूंथ दिया गया था—किसी प्रान्तीय राजस्व अधिकारी के पुत्र के रूप में और अच्छी-खासी सम्पत्ति के उत्तराधिकारी के रूप में। आप मानेंगे कि यह ऐसी कुछ बात नहीं थी, जिससे हमारी जिज्ञासा किसी भी रूप में उत्तेजित होती।

अब वह 22 वर्ष का था और 16 की आयु से विद्यार्थी। अलबत्ता, उसने अपनी शिक्षा को तीन वर्ष के लिए, द्वितीय वर्ष से, त्याग दिया था। तब वह विश्वविद्यालय छोड़कर अपनी जागीर संभालने चला गया था। वहीं उसने ट्रस्टी को चित किया, अपने

भाइयों की बददुआयें लीं, उसके बहनोइयों ने अपने घर में, उसके नाम तक लेने की मनाही कर दी और जब उसका काम खतम हो गया तो वह रूस की यात्रा पर निकल पड़ा, थल और जल से तथा दूसरे आम रास्तों से भी और ग़ैर आम तरीक़ों से भी। उदाहरण के लिए पैदल, और वोल्गा में चलनेवाली सपाट तलीवाली किश्ती से अथवा तीखी नाकवाले हल्के जहाज़ से। न जाने कितनी साहसिक यात्रायें उसने कीं और सब की सब खुद उसी की अपनी पसन्द की। हम यह भी उल्लेख कर दें कि वह कज़ान विश्वविद्यालय में दो और मास्को विश्वविद्यालय में पांच विद्यार्थियों का खर्च उठाता था। वह पीटर्सबर्ग गया, जहां वह स्वयं रहना चाहता था। यहां उसने किसी लाभभोगी को नहीं सहेजा, इसलिए हममें से कोई यह नहीं जानता था कि उसकी आमदनी 3000 रूबल थी, न कि 400 रूबल। उस समय तो बस हम यही कह सकते थे कि वह लम्बे अरसे तक हमारी आंखों से ओझल रहा था और किरसानोव के अध्ययन-कक्ष में न्यूटन की पुस्तक लेकर बैठने के समय से दो वर्ष पहले जब वह वापस लौटा था, तो उसने प्राकृतिक विज्ञान के विषय पढ़ने के स्थान पर भाषा-विज्ञान संकाय में पढ़ाये जानेवाले विषय ले लिये थे।

यद्यपि पीटर्सबर्ग में उसके मित्रों में से कोई भी इस युवक की पारिवारिक अथवा वित्तीय पृष्ठभूमि के बारे में कुछ भी नहीं जानता था, फिर भी सभी उसके दो उपनामों से भली-भांति परिचित थे: पहला "संकीर्णतावादी", हम पहले ही सुन चुके हैं, इसे आडम्बरपूर्ण समादर की लाक्षणिक मुस्कान के साथ उच्चरित किया जाता था। निकीतुश्का अथवा लोमोव अथवा सम्पूर्ण नाम निकीतुश्का लोमोव की ध्वनि पर वह मंद-मंद मीठी मुस्कान बिखेरता, ऐसे इंसान की तरह, जिसे यह नाम जन्म पर न दिया गया हो, बल्कि जिसने लाखों में मशहूर इस नाम को धारण करने का अधिकार अर्जित करने की इच्छा के कारण प्राप्त किया हो। सच तो यह है कि ये लाखों आठ प्रान्तों से गुज़रनेवाली 100 मील पट्टी तक ही सीमित थे। शेष रूस के पाठकों के लिए इस संदर्भ में कुछ व्याख्या करना श्रेयस्कर होगा। निकीतुश्का लोमोव, कोई 15-20 वर्ष पहले वोल्गा नदी का मांझी था, भीमकाय, हरकुलीज़ जैसा बलवान (क़द 2 मीटर 9 से० मी०), चकली-चौड़ी छाती और कंधे। उसका

वज़न 240 किलोग्राम था। मोटा नहीं, बिल्कुल ठोस मांसल। उसकी ताक़त के क्या कहने। एक ही उदाहरण पर्याप्त होगा: वह चार आदमियों का वेतन अकेले लेता था। जब भी कोई जहाज़ आता और वह मण्डी अथवा वोल्गा के तटवासियों के शब्दों में बाज़ार की ओर रवाना होता, तो बाज़ार की गलियां नटखट छोकरों की चिल्लाहट से गूंजने लगतीं: "निकीतुश्का! निकीतुश्का लोमोव आ रहा है!" और घाट से लेकर बाज़ार तक की सड़क पर इस भीमकाय व्यक्ति को देखने के लिए झुण्ड के झुण्ड उमड़ पड़ते।

16 वर्ष की आयु में पीटर्सबर्ग में आनेवाला रह्मेतोव सुन्दर औसत-सा युवक था, पर्याप्त लम्बा और पर्याप्त बलवान, किन्तु किसी भी दृष्टि से असाधारण नहीं। बस जैसे आम युवक होते हैं, समझिये दस समकक्षों में से जैसे दो कुछ बेहतर हों। अपने सत्तरहवें वर्ष के बीच उसने तय किया कि बाहुबल अर्जित करना आवश्यक है और वह इस दिशा में प्रवृत्त हो गया। वह नियमित रूप से व्यायाम करने लगा, अपनी उन्नति के लिए यह अच्छी बात थी, लेकिन तभी तो जब सुधार करने की कोई गुंजाइश भी हो। वह इस काम में प्रतिदिन कई घंटे लगाने लगा। व्यायाम से दुगुना अधिक समय वह कठोर श्रम में लगाने लगा: पानी खींचना, लकड़ी चीरना, लकड़ी काटना, पत्थर तोड़ना, धरती जोतना और लोहा पीटना—काम अनेक तरह के थे और हर काम में मांसपेशियों को परिपक्व करने के लिए उन्हें बहुधा बदलता भी रहता था। वह मुक्केबाज़ के "आहार"—पर निर्वाह करता जो बल-वृद्धि के लिए सुख्यात है और मुख्य रूप से गोमांस, अधिकांशतया अधपका हुआ खाना। उसने इस आहार में आज तक कोई परिवर्तन नहीं किया है। बाहुबल अर्जित करने के इस प्रयास के आरंभ के बाद एक वर्ष व्यतीत होने पर, वह कर्मक्षेत्र में कूद पड़ा। यह उसके शरीर-सौष्ठव के निर्माण में और भी उपयोगी सिद्ध हुआ। उसने हलवाहे, बढ़ई, मांझी और ऐसे ही कई कठिन पेशों में काम किया। एक बार मांझी के रूप में वह वोल्गा नदी में दुबोव्का से रीबिंस्क तक गया। यह कहना कि उसे नौकरी चाहिये थी, सुनकर तो जहाज़ के कप्तान और कर्मीदल दोनों को ही मूर्खता की पराकाष्ठा लगती और उसके हाथ से अवसर निकल जाता। इसलिए वह यात्रियों के साथ जहाज़ पर सवार हुआ,

वहीं कर्मीदल से दोस्ती गांठी, इस-उस काम में उनकी मदद की और सप्ताह के अन्त तक ही सर्वोत्तम कर्मियों के साथ कंधे से कंधा मिलाकर काम में जुट गया। उचित समय पर उसके बल की ओर ध्यान गया और शीघ्र ही उसकी परीक्षा ली गयी। इस परीक्षा में उसने अपने तीन, यहां तक कि चार अत्यन्त बलवान साथियों से भी अधिक काम करके दिखा दिया। और इस प्रकार बीस वर्ष की आयु में, उसके साथियों ने, अपने स्मृति-शेष नायक के सम्मान में उसका नाम निकीतुश्का लोमोव रख दिया। अगले ग्रीष्मकाल में स्टीमर के डेक पर आम लोगों की भीड़ में जब पुराने साथियों में किसी ने उसे देखा-पुकारा तो उसके साथ यात्रा करनेवाले विद्यार्थियों ने यह जाना कि उसे निकीतुश्का लोमोव के नाम से पुकारना होगा। क्योंकि उसने निस्सन्देह अपने रूप का विकास कर लिया था और उसे वास्तविक आश्चर्यजनक ढंग से बनाये रखने में कोई कोर-कसर उठा नहीं रखी थी। उसने कहा था: "आवश्यक है यह, यदि तुम आम आदमी का स्नेह और सम्मान चाहते हो तो। यह उपयोगी भी है।"

यह प्रेरणा साढ़े सोलह वर्ष की आयु में उत्पन्न हुई, तभी उसका सम्पूर्ण व्यक्तित्व निरूपित होने लगा। पीटर्सबर्ग में वह भले, साधारण उच्च विद्यालय स्नातक के रूप में, ईमानदार, साधारण सोलह वर्षीय तरुण के रूप में आया था। तीन या चार महीने उसने भले साधारण नवागन्तुक विद्यार्थी के रूप में बिताये थे, तभी उसने अपने साथी विद्यार्थियों में से असाधारण बुद्धिवालों तथा उनके सोचने के असाधारण रूप के प्रभाव के बार में सुना। आधे दर्जन नाम गूंज गये, इस प्रकार के लोग अभी तक उसने देखे नहीं थे। कुतूहलवश, उसने इनमें से किसी से भी परिचय प्राप्त करने की ठानी और संयोगवश वह किरसानोव से टकरा गया। बस, यहीं से, असाधारण व्यक्ति, निकीतुश्का लोमोव और भावी संकीर्णतावादी के रूप में उसका रूप परिवर्तन आरंभ हुआ। वह किरसानोव के हर शब्द को ध्यानपूर्वक सुनता, पहली रात तो वह रोया, वह सब जिसे नष्ट हो जाना चाहिये उसके प्रति रोष से उबला और जो कुछ शेष रहना चाहिये उसके महिमा मण्डन के लिए प्रवृत्त हुआ। "पहले पहल मैं किन किताबों को पढ़ूं?" किरसानोव ने उसे बता दीं। अगली सुबह आठ बजे वह एडमिरल्टी से पुलिस ब्रिज तक नेव्स्की

प्रोस्पेक्ट पर चहलक़दमी करने लगा कि कब फ़्रांसीसी या जर्मन में पुस्तकें बेचनेवाली दुकानें खुलें। जिन किताबों की दरकार उसे थी, वे मिल गयीं और फिर लगातार तीन दिनों अथवा अधिक समय तक वह उन्हें पढ़ता रहा — गुरुवार के 11 बजे प्रात: से लेकर रविवार के 9 बजे रात तक, कुल मिलाकर 82 घंटे। पहली दो रातों को तो वह बिल्कुल सोया ही नहीं, तीसरी रात उसने काफ़ी के आठ तगड़े प्यालों के सहारे काटी और चौथी रात तो बस वह फ़र्श पर औंधा लुढ़क जाने के सिवा और कछ भी नहीं कर सका, 15 घंटे तक फ़र्श पर सोता हो रहा। एक सप्ताह बाद वह फिर किरसानोव के पास जा धमका। पुस्तकों की दूसरी सूची और पहली पुस्तकों पर व्याख्या करनेवाली पुस्तकों की सूची मांगी। फिर तो किरसानोव के साथ मित्रता हो गयी, उसी के ज़रिये लोपुख़ोव से भी। छह महीने के समय में, जब उसकी उम्र 17 और दोनों मित्रों में से प्रत्येक की 21 की थी, उसे अब इनका कनिष्ठ नहीं समझा जाता था, बल्कि अपने ही बलबूते पर वह विशिष्ट इंसान समझा जाने लगा था।

उसके अतीत जीवन में क्या था जो उसे इस योग्य बनाता? कुछ विशेष तो नहीं। लेकिन फिर भी पर्याप्त था। उसके पिता निरंकुश थे, अत्यन्त मेधावी, भली-भांति पढ़े-लिखे और मार्या अलेक्सेयेव्ना की ही नाईं अतिरूढ़िवादी, परन्तु साथ ही ईमानदार भी। कहने की आवश्यकता नहीं कि ज़िन्दगी आसान नहीं थी। मगर यह कोई ख़ास बात न हुई। लेकिन उसकी मां बड़े नरम दिलवाली थीं और अपने निष्ठुर पति के प्रति पूर्ण समर्पित। और जहां तक उसके गांव का प्रश्न है, उसे तो वह ख़ुद ही जांच-परख सकता था। वहां भी कुछ अधिक नहीं था, और शायद कभी कुछ उसे लगता भी नहीं, अगर वह अपने पिता की रखैलों में से एक के प्रेम में उन्मादपूर्वक ग्रस्त न हो गया होता। निस्संदेह, इस अपकीर्त्ति का सर्वाधिक कठोर परिणाम उस स्त्री को भुगतना पड़ा। उसे जो पीड़ा सहन करनी पड़ी उससे रहमेतोव को असीम वेदना हुई। इस घटना के फलस्वरूप उत्पन्न विक्षोभ में किरसानोव उत्प्रेरक बन गया, वैसे ही जैसे वेरा के लिए लोपुख़ोव बना था। उपक्रम तब चल रहा था, यद्यपि निश्चित बात तो यह है कि इस प्रकार के विशिष्ट

व्यक्तित्व में स्वभाव का स्थान पहला होता है। अपनी जागीर में बस कर, और रूस का अन्वेषण करने के लिए अपने अध्ययन का परित्याग करने से कुछ ही समय पहले उसने नैतिक, भौतिक एवं बौद्धिक मामलों के बारे में अपने उच्च मौलिक सिद्धान्त स्वीकार किये थे और जब वह लौटकर वापस आया था तो प्रणाली सुनिश्चित हो चुकी थी और पूर्ण रूप से अविचल परिपालन हो रहा था उसका। उसने घोषणा की : "मैं कभी भी शराब को हाथ नहीं लगाऊंगा। स्त्रियों से कोई सरोकार नहीं रखूंगा।" क्रोधी युवक की ओर से यह प्रतिज्ञा। "भला कोई सिर-पैर है इस बात का? इस प्रकार की अतिवादी बातें करने की ज़रूरत भी क्या है?"—"है, क्यों नहीं। हम जनता के लिए जीवन की सर्वोत्तम वस्तुओं के तलबगार हैं, सम्पूर्ण मानवजाति के लिए न कि केवल अपनी स्वार्थपूर्ण क्षुधा की शान्ति के लिए। हमारे जीवन इस बात का प्रमाण बनें कि हम अभिरुचि से नहीं सिद्धान्त से, व्यक्तिगत लोभ से नहीं आस्था से उत्प्रेरित हैं।"

इसीलिए वह कठोर मिताहारी था। निकीतुश्का लोमोव की मर्यादा तक पहुंचने और उसका निर्वाह करने के लिए गोमांस की, प्रचुर परिमाण में आवश्यकता थी। अन्य प्रकार की खाद्य सामग्री लेते समय वह कोपेकों की गिनती रखता था, लेकिन गोमांस खरीदने के लिए वह अपनी मकान-मालकिन से उत्तम कोटि की ही और अपने लिए सर्वोत्तम बोटियां परोसे जाने की फ़रमाइश करता था। अन्यथा वह खाने पर बहुत कम खर्च करता था। निरन्तर ब्लैक ब्रैड खाता था, सफ़ेद डबलरोटी से अपने को वंचित रखता था, हफ़्तों तक चीनी के कण का भी, महीनों फल, बछड़े के मांस अथवा मांसल मुर्ग़े का सेवन नहीं करता था। इस प्रकार की चीज़ें तो वह खरीदता ही नहीं था। "मुझे पैसा बरबाद करने का कोई हक़ नहीं है, जब कि मैं इन सबके बिना रह सकता हूं"—यह ऐसे युवक के मुंह से सुनाई पड़ता जिसका पालन-पोषण अत्यन्त संवर्धित भोजन द्वारा हुआ हो, खाने का शौक़ीन हो, क्योंकि जब कभी बाहर भोजन करने का अवसर हुआ, तो उसकी टिप्पणियों से यही प्रकट होता था, तब वह उन निषेधों में बहुतेरों को, लेकिन सभी को नहीं, तोड़ देता था, जिनका परिपालन

वह घर पर करता था। उसका तर्क बिल्कुल पुष्ट था: "आम आदमी को विशेष अवसरों पर जो कुछ प्राप्त हो सकता है, मैं भी तो कभी-कभी उसका सेवन कर सकता हूं। और जिसे वह कभी भी न देख सके, उसे मुझे कभी छूना भी नहीं चाहिये। इसकी ज़रूरत मुझे इसलिए है ताकि उनके जीवन में जो कठिनाइयां हैं उनका कुछ तो भी अहसास मुझे अपनी ज़िन्दगी में हो सके।" और इसी बात को सोचकर वह बिना किसी हिचकिचाहट के सेब खाता और ख़ूबानी बेझिझक अस्वीकार कर देता, राजधानी में वह नारंगी खा लेता लेकिन भीतरी प्रदेश में मना कर देता, क्योंकि राजधानी में नारंगी साधारण व्यक्ति को मिल सकती थी, जबकि देहात में उसका कोई भाई इसे खाने की कल्पना भी नहीं कर सकता था। इसी प्रकार वह निर्धनों की तरह कपड़े पहनता, अच्छे लगें अथवा न लगें वह हर दृष्टि से सादा और कठोर जीवन व्यतीत करता था, बिछावन में गद्दे की अवहेलना करके नमदे का इस्तेमाल करता था और वह भी केवल एक पर्त।

धूम्रपान न छोड़ पाने के कारण उसे कई बार आन्तरिक क्लेश होता था। "बिना सिगार के मैं व्यवस्थित रूप से सोच ही नहीं सकता, अगर कारण यही है, तो मैं सही हूं। मगर शायद मेरी इच्छा-शक्ति कमज़ोर ही है।" सस्ते सिगार वह नहीं पीता था—था तो कुलीन घराने का। वर्ष में 400 रूबल के व्यय में 150 रूबल तक सिगारफ़रोश की नज़र हो जाता था। वह इसे "गंदी आदत" कहता था। बस यही थी उसकी एकमात्र सफ़ाई, जिसका सहारा वह अपने पर किये गये सतत आक्षेपों के समय लिया करता था: "लेकिन बिल्कुल ही पूर्णता जैसी कोई बात होती ही नहीं, और फिर आप भी तो धूम्रपान करते ही हैं।" रहमेतोव के उत्तर में जो ज़ोरदार उत्साह होता, उसमें आधे से अधिक तो अपने को ही कोसने में लग जाता, जिससे अगर लगातार आक्षेप होने का पूरा नहीं तो कम से कम कुछ दंश तो कम हो ही जाता था।

उसकी क्षमता इस सीधे-सादे कारण के फलस्वरूप भयंकर थी क्योंकि वह अपने समय का नियंत्रण इतनी नृशंसता से करता था, जितनी से कि वह अपने भौतिक मनोविकारों का। महीने भर में चौथाई घण्टा भी मनोरंजन के लिए व्यय नहीं करता था। वह

आराम करने की कोई ज़रूरत ही नहीं समझता था, जबकि "नाना प्रकार के व्यवसाय मुझे परिवर्तनों के दौरान पर्याप्त आराम प्रदान कर देते हैं।" उसकी मित्रमण्डली में प्रमुख लोपुख़ोव और किरसानोव के निवासस्थान पर उतनी ही बार जाता था, जितना कि उनसे सम्पर्क बनाये रखने के लिए आवश्यक होता। "जाना ही पड़ता है। एक भी दिन तो ऐसा नहीं बीतता, जिससे यह सिद्ध न हो कि घनिष्ठ मित्रमण्डली कितनी उपयोगी है। सूचना का स्रोत सुलभ होना ही चाहिये न।" इन सभाओं के सिवा वह किसी काम के बिना कहीं भी और नहीं जाता था और कहीं भी काम समाप्त होने के बाद पांच मिनट से अधिक नहीं रुकता था। इसी सिद्धान्त के आधार पर वह अपने यहां आनेवालों का स्वागत करता था और बिना किसी लाग-लपेट के हरेक से यह कह दिया करता था: "आप जिस काम से आये थे, अब ख़त्म हो चुका है, इसलिए बराय मेहरबानी अब मुझे अपना काम करने दें, क्योंकि मेरा समय बड़ा मूल्यवान है।"

उसके इस पुनर्जन्म के बाद के पहले कुछ महीने पूर्ण रूप से अध्ययन में ही व्यतीत हुए। छठे महीने के कुछ समय बाद, जब उसने यह महसूस कर लिया कि जिन सिद्धान्तों को वह न्यायसंगत समझता है उनको उसने सुव्यवस्थित कर लिया है, उसने अध्ययन प्रक्रिया में कटौती की और तत्काल यह निर्णय लिया कि "अब पुस्तकों को द्वितीय प्राथमिकता दी जायेगी—इस दृष्टि से अब मैं पूर्ण रूप से तत्पर हूं।" उसी क्षण से, वह तभी पढ़ता था, जब किसी अन्य कार्य में संलग्न न होता था, जिसका अर्थ यही हुआ कि यदा-कदा ही। तथापि वह अपने ज्ञान के क्षितिजों को आश्चर्यजनक गति से विस्तृत करता रहा, फलस्वरूप वह अपनी 22 वर्ष की वर्तमान आयु में, असाधारण रूप से पारंगत विद्वान बन गया। यह भी इसी कठोर नियम के कारण संभव हुआ कि "सभी प्रकार की विलासप्रियता और चंचलता को दूर भगाओ, मुख्य बातों पर अतिरिक्त रूप से ध्यान केन्द्रित करो।" लेकिन मुख्य, तात्त्विक बात है क्या? रहमेतोव के शब्दों में: "प्रत्येक क्षेत्र में मूल ग्रंथों का सीमित अध्ययन—अथवा प्रत्येक अन्य ग्रंथ में तो सब कुछ सम्पादित मंद अथवा विकृत है जब कि उन मूल ग्रंथों

में अत्यन्त स्पष्ट, अत्यन्त संक्षिप्त प्रस्तुतीकरण है—बस इतने की ही आवश्यकता है, शेष सब समय की बरबादी है। रूसी साहित्य को ही ले लो। मेरी पहली पसन्द है गोगोल। हजारों अन्य लेखकों की पुस्तकों के पांच भिन्न पृष्ठों से पांच पंक्तियां चुनकर ही मैं यह जान लेता हूं कि इनमें गोगोल के विकृत रूप के सिवा और कुछ भी तो नहीं है, इसलिए मैं क्यों सिर खपाऊं उनके बारे में? विज्ञान के बारे में तो यह दोगुना सत्य है। यदि मैं एडम स्मिथ, माल्थस, रिकार्डो और मिल* को पढ़ चुका हूं, तो मुझे राजनीतिक अर्थशास्त्र के इस क्षेत्र का सब कुछ तो पता चल गया और इसलिए मैं इस विषय के अन्य सैकड़ों लेखकों की अवहेलना कर सकता हूं, भले ही वे कितने प्रसिद्ध हों। हरेक की किताब के पांच पृष्ठों की पांच पंक्तियों से ही प्रकट हो जायेगा मुझे कि उनमें विकृत पुनरावृत्ति के सिवा और कुछ भी तो नहीं है। मैं केवल मौलिक ग्रंथ पढ़ता हूं और केवल उतना ही जितने से कि मैं उनकी मौलिकता को पूर्णरुपेण समझ लूं।" तदनुसार, वह मैकॉले को किसी क़ीमत पर पढ़ने के लिए तैयार नहीं होगा। इधर-उधर पन्द्रह मिनट तक पृष्ठों पर सरसरी नज़र डालकर उसे विश्वास हो गया कि उसे यह भली-भांति मालूम है कि "इसमें दी गयी कैंचीकट-गोंद-चिपकी सामग्री कहां-कहां से उड़ाई गयी है।" थेक्करेई की 'वेनिटी फ़ेयर' पढ़ने में उसे बहुत आनंद मिला। पेंडेनिस के 20वें पृष्ठ पर पहुंचने तक उसे यह स्पष्ट हो गया: "यह सब तो वह (लेखक) 'वेनिटी फ़ेयर' में ही कह चुका है, अब कुछ और कह भी क्या सकता है। इसे मैं पढ़ना छोड़ सकता हूं।" उसका दावा था कि उसकी पढ़ी प्रत्येक पुस्तक ने उसे अन्य सैकड़ों पढ़ने के कष्ट से बचाया है।

व्यायाम, कठोर श्रम और पुस्तकें—रहमेतोव की व्यक्तिगत जीवन-व्यवस्था यही थी—जो पीटर्सबर्ग लौटने पर उसके समय का नगण्य-सा चौथाई समय लेती थी और शेष तीन-चौथाई समय दूसरों की चिन्ता में, किसी विशेष व्यक्ति की नहीं, लग जाता

* एडम स्मिथ (1723—1790), थामस माल्थस (1768—1834), डेविड रिकार्डो (1772—1823) और जॉन स्टुअर्ट मिल (1806—1873)—ये सभी अपने समय के प्रमुख पूंजीवादी अर्थशास्त्री थे।—सं०

था।* यह सब कुछ उसी स्वर्णिम नियम के अनुसार, जो पढ़ने पर लागू होता था, अर्थात् गौण व्यक्तियों अथवा लक्ष्यों के पीछे अपना समय बरबाद मत करो, बल्कि मूलभूत की ओर, उसके निर्धारक तत्त्व की ओर ध्यान दो, इससे गौण कार्य और लोग भी बदलेंगे हस्तक्षेप करके अथवा न करके। उदाहरण के लिए, अपनी मण्डली से बाहर वह केवल प्रभावशाली व्यक्तियों से ही सम्ध रखता था, जिन्हें कोई प्रतिष्ठा प्राप्त नहीं होती थी, वे उसके समय की अपेक्षा कर ही नहीं सकते थे। उनसे पिण्ड छुड़ाते हुए वह यही कहा करता: "माफ़ कीजिये, मेरे पास क्षण भर का भी समय नहीं है।" और इसी प्रकार जिन व्यक्तियों से वह परिचय करना चाहता था, उनके बच पाने की कोई आशा नहीं होती थी। वह बात कुछ इस ढंग से शुरू करता: "मुझे कुछ बात करनी है, बहुत ज़रूरी है बात, यदि आपके पास अभी समय नहीं है, तो बता दीजिये कब हाज़िर हो जाऊं।" छोटी-मोटी मुसीबतों को वह अनदेखा कर देता। अगर उसके घनिष्ठतम मित्र भी कभी उससे सहायता की याचना करते, तो भी वह "समय नहीं है" कहकर झटपट अपनी राह पकड़ लेता। मगर बड़ी समस्याओं का समाधान करने में वह बिना किसी के कहे भी जिस ढंग से उचित समझता जुट जाता। उसका आग्रह यही रहता: "यह तो कर्त्तव्य है।" ऐसे मामलों में वह जो कहता और करता उससे दिमाग़ चकरा जाता। उस युवक से मेरे ही सम्बन्धों को ले लीजिये। मैं अब उतना जवान नहीं रह गया था, फिर भी मैं इतना समृद्ध तो था ही कि अपने नगर के पांच या छह युवकों की टोली को दावत दे सकूं। इस प्रकार रहमेतोव के लिए मैं अमूल्य था। मेरी सहानुभूतिपूर्ण अनुक्रिया का प्रत्युत्तर भी उसी रूप में मिला। इसी के फलस्वरूप मेरे नाम की ओर उसका ध्यान भी गया। मैंने उसका नाम पहले कभी नहीं सुना था, उस पहली रात हम किरसानोव के यहां मिले, जब वह कुछ ही समय पहले अपनी यायावरी समाप्त करके लौटा था। वह मेरे पहुंचने के कुछ समय बाद ही आया। उपस्थित व्यक्तियों में केवल मैं ही अपरिचित व्यक्ति था। उसने जब किरसानोव को कुछ बात करने के लिए झटके

* यह क्रांतिकारी गतिविधियों की ओर अप्रत्यक्ष संकेत है।—सं०

से अलग खींचा तो उसने आंखों से मेरी ओर इशारा किया। तपाक से उत्तर और किरसानोव गिरफ़्त से छूट गया। एक ही मिनट बाद वह पूछताछ करनेवाला ठीक मेरे सामने आकर बैठ गया और बीच में रखी साढ़े तीन फुट चौड़ी मेज़ के उस ओर से बड़ी निडरता से घूरने लगा। मुझे खीझ उत्पन्न हुई, इस अशिष्ट जांच-परख से, मानो मैं कोई तैलचित्र हूं, न कि हाड़-मांस का जीव। मैंने त्योरी चढ़ायी। उसने इस ओर तनिक भी ध्यान देने की आवश्यकता ही नहीं समझी। अलबत्ता, दो या तीन मिनट बाद ही उसने कहना शुरू किया: "श्रीमान् एन०, आप ही ऐसे व्यक्ति हैं, जिसकी मुझे आवश्यकता है। लेकिन मैं आपसे कोई बेजा लाभ नहीं उठाना चाहता। अपने मेज़बान और यहां मौजूद मण्डली में से किसी से भी, जिसे आप विशेष रूप से विश्वसनीय समझते हैं, मेरे बारे में पूछताछ कर लीजिये।" और यह कहकर वह उठा और कमरे से बाहर चला गया। "कौन है यह प्राणी?"—"रहमेतोव। वह चाहता है कि आप उसकी विश्वसनीयता के बारे में पूछताछ कर लें—सौ फ़ीसदी विश्वसनीय है यदि वह आपको उपयुक्त जंचे—हम सभी से, संयुक्त रूप से भी अधिक विश्वसनीय।" यह मुझसे किरसानोव ने कहा और दूसरों ने इसकी ताईद की। पांच मिनट बाद रहमेतोव लौट आया। मेरी ओर तो उसने ध्यान नहीं दिया, दूसरों से भी कम बतियाता रहा—बातचीत न तो पाण्डित्यपूर्ण थी और न ही महत्त्वपूर्ण। कुछ समय बाद उसने कहा: "अरे दस बज गये—इतनी जल्दी। मेरा तो किसी और के साथ भेंट का समय निश्चित है।" फिर मेरी तरफ़ मुड़कर कहा: "श्रीमान् एन०, कुछ बात है जो मैं आपसे कहना चाहता हूं। जब मैं अपने मेज़बान को एक तरफ़ ले गया था यह जानने के लिए कि आप कौन हैं तो मैंने आपकी ओर संकेत इसीलिए किया था कि आप अवसरोचित संकेत से अथवा बिना उसके ही निश्चय ही समझ लेंगे कि मैं आपके बारे में पूछ रहा हूं। आप कब घर होंगे ताकि मैं आपके दर्शन कर सकूं?" उस समय मैं अपने मित्रमण्डल में बढ़ोतरी करने का इच्छुक नहीं था और न ही इस प्रकार का दुराग्रह मुझे भला प्रतीत हुआ। मैंने कहा: "घर पर मैं केवल सोता हूं, दिन में आप कभी भी मुझे घर पर नहीं पा सकते।"—"मगर आप घर पर सोने तो जाते ही हैं न? किस

समय?"—"काफ़ी देर से।"—"कितनी देर से?"—"सुबह कोई दो, तीन बजे।"—"ठीक है, अब समय बता दीजिये, कब मिल सकता हूं।"—"अच्छा , अगर आग्रह ही करते हो, तो परसों साढ़े तीन बजे सुबह, कैसा रहेगा?"—"निस्सन्देह, मैं इसे आपके उपहास का भोंडा संकेत ही समझता हूं, तथापि हो सकता है कि आप किसी कारणवश ही ऐसा कह रहे हों, और वे कारण वास्तविक ही होंगे। बहरहाल, मैं साढ़े तीन बजे सुबह पहुंच जाऊंगा, परसों।"—"अच्छा तो आप इतने दृढ़ और संकल्पवान हैं, तो हम समय को और आगे खिसका लेते हैं। मैं उस दिन दोपहर तक घर पर ही रहूंगा।"—"बहुत बेहतर, मैं दस बजे पहुंच जाऊंगा। आप अकेले ही होंगे न तब?"—"जी हां।"—"बेहतर।" वह आया और आते ही अपनी आदत के मुताबिक़ बिना किसी झिझक के उस मसले की चर्चा करने लगा, जिसके बारे में वह मेरा मत जानना चाहता था। विचार-विमर्श मोटे तौर पर कोई आधे घण्टे चला। विषय को हम अनावश्यक नहीं कह सकते। वह कहता: "आपको ऐसा मानना चाहिये।" मैं कहता: "नहीं मान सकता।" वह कहता: "यह परमावश्यक है।" मैं बात काटकर कहता: "बिल्कुल नहीं।" अन्त में उसने कहा: "इस विषय की बाबत हम किसी भी निष्कर्ष पर नहीं पहुंच पा रहे हैं। आप को विश्वास हो रहा है अथवा नहीं कि मेरा विश्वास पूर्ण रूप से किया सकता है?"—"यह तो मैं प्रत्येक से सुन चुका हूं, और मैं स्वयं भी वैसा ही महसूस कर रहा हूं।"—"और फिर भी आप अपनी बात से रंचमात्र हटने के लिए तैयार नहीं?"—"मैं बिल्कुल तैयार नहीं।"—"क्या आपको पता है कि इसका मतलब क्या है? आप झूठे हैं अथवा नीच हैं!" कैसा लगा यह सब कुछ आपको? आम हालात में मेरी प्रतिक्रिया क्या होनी चाहिये थी? उस उद्धत युवक को द्वंद्व-युद्ध की चुनौती देना? लेकिन उसका स्वर इतना आवेगहीन था कि वह सत्य का शुष्क निष्कर्ष निकालनेवाला इतिहासकार हो सकता था, निन्दक नहीं और उसका व्यवहार इतना विचित्र था कि बुरा मान लेने का विचारमात्र भी हास्यास्पद होता। मैं केवल हंस सकता था। मैं बोला: "दोनों बातें एक समान ही हैं!"—"लेकिन इस प्रसंग में नहीं हैं।"—"यह दोनों ही बातों का समंजन हो ही सकता है।"—"इस प्रसंग में नहीं। या तो एक

सही है या दूसरी। या तो आप बात एक प्रकार से करते हैं और सोचते तथा क्रिया दूसरे रूप में करते हैं। इसका अर्थ यह हुआ कि आप झूठे हैं अथवा आप ईमानदारी से वही करते हैं, जो आप कहते हैं, तो ऐसी दशा में आप नीच हैं। यही दो बातें हो सकती हैं। मेरा यह अनुमान है कि पहली बात सही है।" — "जो चाहें समझ लें।" मैं मंद-मंद मुस्कराता रहा। "नमस्कार महोदय, मगर आप इतना जान लीजिये कि आप में मेरा पूरा विश्वास है। मुझे जब भी आप चाहें, हमारे इस विवाद को फिर जारी कर पाने पर खुशी होगी।"

अपनी तमाम अशिष्टता के बावजूद, उस युवक की बात ठीक थी, ठीक उसी अर्थ में जिस प्रकार उसने शुरू की थी। पहले से ही उसने मेरे बारे में सांगोपांग पड़ताल कर ली थी और उसके निष्कर्ष सही थे: वास्तव में मैं अपनी धारणाओं के विरुद्ध बोला था, उसे वास्तव में पूर्ण अधिकार था कि वह मुझे झूठा कहे, पर "वर्तमान प्रसंग" में कोई भी आपत्तिजनक विचार उठ सकता था अथवा मुझ पर अंगुली ही उठाई जा सकती थी, और वह मेरे प्रति पहलेवाला विश्वास और शायद सम्मान भी बनाये ही रख सकता था।

जी हां, उस युवक में शिष्टता की अपार कमी थी, फिर भी इसमें कोई सन्देह नहीं कि उसके प्रत्येक कार्य में चरम सामान्य विवेक और सादगी प्रतिबिम्बित होती थी। भयंकर कटूक्तियां और कटु भर्त्सना भी वह इस प्रकार करता था, कि कोई भी संतुलित व्यक्ति उसका कभी बुरा नहीं मान सकता था। उसकी स्वाभाविक अशिष्टता वास्तव में व्यवहार-कौशल का मूर्त्त रूप ही थी। प्रत्येक नाजुक उद्घोषण से पहले भूमिका के रूप में जो वह कहता था, उस पर तनिक ध्यान दीजिये: "आप जानते ही हैं, इसमें मेरा लेशमात्र भी व्यक्तिगत स्वार्थ नहीं है। यदि मेरी बात आपको आघात पहुंचाये, तो कृपया माफ़ कीजिये। यद्यपि, मुझे ऐसा नहीं लगता कि अगर कोई बात निष्कपटता एवं सदाशयता से कही जाय, बिना किसी अपमान भावना से और विशुद्ध रूप से आवश्यकतानुसार कही जाय तो उसका बुरा माना जा सके। बहरहाल, आपको मेरी बात जैसे ही बेकार या बेसूद लगे, मैं तत्काल बात खत्म कर दूंगा। क्योंकि मेरा यह नियम है कि अपना मत तो प्रकट अवश्य करूं, परन्तु उस पर

आग्रह कभी न करूं।" और वह कभी करता भी नहीं था। उसके दृष्टिकोण की अवहेलना करना असंभव था। तभी वह अपनी बात कहता था, जब उपयुक्त समझता था और उसी सीमा तक जब वह यह तय कर लेता था कि आप उसकी बात का और विषय का सटीक अर्थ समझ पा रहे हैं। फिर भी वह दो या तीन शब्दों में ही अपनी बात कहता और फिर पूछ बैठता: "समझ रहे हैं न आप कि मैं क्या कहना चाहता हूं। अपनी बात कहता रहूं, कुछ दम लग रहा है मेरी बात में?" अगर "नहीं" लग रहा होता, तो वह नमस्कार करके विदा ले लेता।

यही था उसका बोलचाल का और कामकाज करने का तरीका, काम पूरी तैयारी के साथ और उसमें व्यक्तिगत कुछ नहीं होता था—यह सभी को सुज्ञात था, कि उसका कोई व्यक्तिगत सरोकार नहीं होता था। उसका समय कहां बीतता था—यह पूर्ण रूप से रहस्य ही था। हम लोग तो बस यही देख पाते थे कि वह घनचक्कर की तरह बस किसी न किसी काम में ही लगा रहता था। वह घर पर नहीं के बराबर होता, बस फिरकनी बना रहता, यहां से वहां पैदल-पैदल। इसी प्रकार उसका दरवाज़ा शायद ही कभी बन्द रहता हो। कभी नित्य आनेवाले अतिथि तो कभी नवागन्तुकों का तांता लगा रहता। उनका स्वागत करने और अपना भोजन करने के लिए भी उसने नियम बना लिया था कि वह 2 से 3 के बीच घर पर ही रहता था। यह तो काम-काज और खाने का समय था। जिन दिनों वह दो या तीन दिन के लिए ग़ैरहाज़िर होता, और ऐसा बहुधा होता था, तो उसकी ज़िम्मेदारी उसका कोई ऐसा मित्र संभाल लेता, जो उत्कट सेवानिष्ठ और समाधि की नायीं मूक होता था।

किरसानोव के अध्ययन-कक्ष में न्यूटन के ग्रंथ का अवलोकन करनेवाली रात्रि से लगभग दो वर्ष बाद, रहमेतोव पीटर्सबर्ग से अपने घनिष्ठतम साथियों को, जिनमें किरसानोव भी था यह दलील देकर चला गया था, कि उसने राजधानी में सब कुछ कर लिया है, जो हो सकता था, अब अगले दो-तीन वर्षों में ही और कुछ करने को होगा, और अब वह अन्तराल का उपयोग भविष्य की तैयारी के लिए करेगा। जैसा कि बाद में पता चला, वह अपनी बची-खुची परिसम्पत्ति को 35 हज़ार में बेचने गया था। इस राशि में से 5

हज़ार कज़ान और मास्को में अपने वृत्तिभोगियों को बांट दिया ताकि वे स्नातक हो सकें। बस इसके बाद कोई विश्वसनीय साक्ष्य उपलब्ध नहीं। मास्को से वह कहां गया, कोई नहीं जानता। जब कई महीनों तक उसकी कोई सूचना नहीं मिली, तो उसके अधिक घनिष्ठ साथियों ने वह रहस्योद्घाटन किया, जो उसने इन मित्रों से आजीवन अपने तक ही रखने का अनुरोध किया था। तभी हम उन विद्यार्थियों के बारे में जान पाये, जिनकी वह मदद करता था, उन व्यक्तिगत परिस्थितियों के बारे में अधिकाधिक जान पाये, जिनका वर्णन पहले किया जा चुका है और इनके अलावा कई कहानियां और भी सुनने को मिलीं, जिनसे रहमेतोव नामक पहेली को सुलझाने में तो कम ही मदद मिली, उलटे वे उलझने बढ़ानेवाली ही अधिक सिद्ध हुईं। कुछ बातें तो अत्यन्त आश्चर्य में डालनेवाली थीं और कुछ उस व्यक्ति के बारे में हमारी जो धारणा थी, उसके बिल्कुल विपरीत, जो व्यक्तिकता से बिल्कुल अप्रभावित था, कहें कि व्यक्तिगत भावना से पूर्ण रूप से विहीन अथवा उसमें कोई भी व्यक्तिगत अनुक्रिया उत्पन्न ही नहीं होती थी। इन पृष्ठों पर उनका उद्धरण करें तो वे अप्रासंगिक लगेंगी। बस दो का उल्लेख करना पर्याप्त होगा, जिन दो कोटियों का उल्लेख किया गया है, उनमें से प्रत्येक में से एक-एक। तात्पर्य यही कि एक अत्यन्त प्रभावशाली और दूसरी हमारी पिछली धारणा के विपरीत। मैं किरसानोव के हवाले से उद्धृत करता हूं।

पीटर्सबुर्ग से दूसरी बार और संभवतया अन्तिम बार ग़ायब होने से एक वर्ष पहले, रहमेतोव ने किरसानोव से "पैने औज़ारों से हुए घावों के लिए उचित मात्रा में लेप" मांगा। किरसानोव ने यह सोचकर कि उसे काष्ठकला कर्मशाला अथवा किसी ऐसे स्थान के लिए मलहम चाहिये जहां कोई चोट लग सकती है, उसे विशाल मर्तबान दे दिया। अगली सुबह रहमेतोव की मकान-मालकिन तीर की तरह किरसानोव के यहां आ धमकी: "डाक्टर-साहब, समझ में ही नहीं आता कि मेरे यहां रहनेवाले युवक को क्या हो गया है, समझ में ही नहीं आता। इतनी देर तक तो वह अपने कमरे में बंद कभी नहीं रहा। दरवाज़ा भीतर से बन्द है, लेकिन मैंने झांककर देखा तो क्या, ख़ून ही ख़ून चारों ओर, इसलिए मैं चीख़ी तो उसने दरवाज़े

के भीतर से ही कहा: "मैं बिल्कुल ठीक हूं, अग्राफ़ेना अन्तोनोव्ना।' क्या खाक बिल्कुल ठीक है! डाक्टर साहब, आप ही मदद कीजिये, मैं तो बहुत डर गयी हूं, कहीं कोई ऐसी-वैसी खतरनाक बात न हो। आप तो जानते ही हैं कि वह खुद अपनी जान की कितनी कम परवाह करता है।" किरसानोव भी भागा-भागा वहां पहुंचा। रहमेतोव ने दरवाज़ा खोल दिया, मुस्करा तो वह रहा था, मगर हंसी फीकी थी। किरसानोव ने जो दृश्य देखा, उसे देखकर वह भी स्तब्ध रह गया, अग्राफ़ेना की तो बात ही क्या: रहमेतोव की रात को पहननेवाली क़मीज़ (वह सिर्फ़ क़मीज़ ही पहने था) की पीठ और अग़ल-बग़ल खून से लथ-पथ थी, बिस्तर के नीचे खून था, नमदे के गद्दे पर खून था, सैकड़ों कीलें घुसी हुई थीं, दो-दो इंच तक की—उस रात रहमेतोव का बिछावन यही थी। किरसानोव घबरा के चीखा: "क्या है यह सब, खुदा के वास्ते, कुछ बोलो तो?"—"प्रयोग। यह अत्यन्त महत्त्वपूर्ण है; मानता हूं असंभावित है, लेकिन फिर भी अल्प संभावना तो है ही, अब मुझे पता चल गया है, मैं कर सकता हूं।" यह स्पष्ट था कि मकान-मालकिन उस घटना के अलावा, जो कुछ किरसानोव अब अपनी आंखों से देख रहा था, और भी काफ़ी कुछ बता सकती थी। उसका सीधा-सादा दिल और सद्चरित्र तथा अपने युवक किरायेदार के प्रति प्रेम ने उसे अपना मुंह नहीं खोलने दिया। निश्चय ही वह इस बार रोगी की अनुमति से चिकित्सा-सहायता के लिए भागी, जो आत्महत्या के प्रयास के विचार से मकान-मालकिन की आंखों से फूटती जलधार को रोकने के लिए दी गयी थी।

दो महीने बाद, मई के अन्त में, रहमेतोव एक सप्ताह से कुछ अधिक समय के लिए आंखों से ओझल हो गया—उस समय किसी ने भी इस बारे में कुछ नहीं सोचा, दो या तीन दिन तक की उसकी ग़ैरहाज़िरी तो आम बात थी उसके लिए। उस विशेष घटना के सिलसिले में किरसानोव ने अब निम्न विवरण दिया। रहमेतोव की ज़िन्दगी में यह एक प्रेम-प्रसंग था, जो निकीतुश्का लोमोव के उपयुक्त घटना से उत्प्रेरित था। वह वनविद्या संस्थान से कुछ अधिक दूर नहीं पार्गोलोवो गांव से नगर की ओर आ रहा था और अपनी आदत के मुताबिक़ धरती को खोये-खोये नयनों से ताकता चल

26—1127

रहा था कि किसी के आर्तनाद ने उसे चौंकाकर वापस इसी दुनिया में लौटा दिया। टमटम में जुता घोड़ा बिदककर भाग खड़ा हुआ था और टमटम हांकनेवाली महिला असहाय हो गयी थी, रास धरती पर घिसट रही थी। अभी वह घोड़ा कोई दो क़दम दूर था कि वह सड़क के बीच में लपककर पहुंचा, न घोड़ा पकड़ सका और न रास ही, पिछली धुरी से लटक गया और भगोड़े को रोकने में सफल रहा, किन्तु गिर पड़ा। तत्काल भीड़ जमा हो गयी, महिला को अपनी सीट से उतरने में मदद की और रहमेतोव को अपने पैरों खड़े होने में। छाती पर थोड़ी चोट लगी थी, लेकिन पहिये से उसके पांव काफ़ी कट गया था, उसकी तुलना में तो यह कुछ भी नहीं थी। वह महिला अब तक होशोहवास से दुरुस्त हो चुकी थी, उसे अपनी कॉटेज में लिवा ले गयी, जो उस स्थान से दो फ़र्लांग से भी कम दूरी पर थी। उसे बहुत कमज़ोरी लग रही थी, इसलिए वह डाक्टर बुलाये जाने के लिए इस शर्त पर राज़ी हो गया कि किसी और डाक्टर को नहीं बल्कि किरसानोव को ही बुलाया जाय। किरसानोव ने कहा कि चोट बहुत गहरी नहीं है और रोगी ख़ून बह जाने के कारण ही दुर्बल हो गया है। दस दिन तक वह आराम करता रहा, और आशानुकूल उसकी सेवा-शुश्रूषा वही महिला करती रही, जिसको उसने मुसीबत से बचाया था। क्योंकि कमज़ोरी के कारण वह और कुछ कर नहीं सकता था, और समय तो बरबाद हो ही रहा था उसका, इसलिए उसने महिला को ही वार्तालाप में लगा लिया। शीघ्र ही वह उसी के साथ रम गयी। वह उन्नीस वर्ष की विधवा थी, पर्याप्त समृद्ध, पूर्ण रूप से स्वाधीन, बुद्धिशीला और शालीनता का अवतार। रहमेतोव के उत्साह ने, कहने की आवश्यकता नहीं कि उसका दैहिक सुख से कोई सम्बन्ध नहीं था, उस महिला को अभिभूत कर दिया। उसने किरसानोव को विश्वास में लेकर कहा: "मैं प्रकाश में नहाये पुरुष के रूप में उसको स्वप्न में देखती हूं।" उसकी भावनाओं का प्रत्युत्तर भी वैसा ही मिला। उसकी पोशाक और दूसरी सभी चीज़ों के आधार पर उसे निर्धन समझकर उस महिला ने ग्यारहवें दिन उससे अपना प्रेम निवेदित किया और विवाह का प्रस्ताव रख दिया, जब उसने बिस्तर छोड़ा और यह घोषणा की कि "अब मैं यात्रा

करने के क़ाबिल हूं।" रहमेतोव ने उत्तर दिया: "मैं औरों की तुलना में आपसे अधिक खुल गया था। आपको समझ लेना चाहिये कि मेरे जैसा व्यक्ति अपने भाग्य को किसी दूसरे के साथ जोड़ लेने की कल्पना भी नहीं कर सकता।"—"सच है कि आप विवाह नहीं कर सकते। मगर जब तक आप मुझे छोड़कर जायें, तब तक तो कम से कम मुझे प्रेम करें, कृपया।" वह बोला: "नहीं, मैं ऐसा भी नहीं कर सकता। मैं इस प्रेम का गला अपने ही अन्दर घोंट देना चाहूंगा, क्योंकि यह मुझ पर बोझ ही बन जायेगा—इस उलझन से अपने को मुक्त कर पाने में मुझे वैसे ही काफ़ी समय लग जायेगा। पर जैसे-तैसे कर ही लूंगा। प्रेम मेरे लिए नहीं बना।" फिर उस महिला का क्या हुआ? निश्चय ही संकट ने उसे भी, अपने ढंग से ही सही, महत्त्वपूर्ण व्यक्तित्व सिद्ध किया। मैं उसके बारे में जानने का बहुत उत्सुक था, लेकिन रुकावट तो बीच में खड़ी थी—किरसानोव उसका नाम नहीं बताना चाहता था, और फिर वह भी तो कुछ बहुत अधिक नहीं जानता था उसके बारे में। रहमेतोव ने उससे कहा था कि वह न तो उस महिला से मिले और नहीं उसकी बाबत कुछ जानने का कष्ट उठाये। "अगर मुझे कभी पता चला कि आप उसके बारे में कुछ भी जानते हैं तो मैं ऐसे सवालों को पूछने से अपने को रोक नहीं पाऊंगा, जो वैसे मुझे नहीं पूछने चाहिये।" जब बाद में सचाई उजागर हुई तो हमने याद किया कि वह एक या दो महीने तक अथवा शायद इससे भी अधिक समय तक असामान्य रूप से उदास रहा, अपनी गंदी आदत के प्रत्येक प्रकार के उपहास की ओर से अथवा सिगार के लिए अपनी पसन्दगी की ओर से असमान्य रूप से उदासीन रहा। निकीतुश्का लोमोव नाम सुनकर उसके मुख पर जो हंसी खिल उठती थी, वह भी तिरोहित हो चुकी थी। मेरी स्मृति में और पुराने दिन घूम गये, वे तीन या चार बार की बातचीतें, जो हम ने अपनी जान-पहचान के पहले ग्रीष्मकाल में की थीं जब मैंने उसका स्नेह (आपस में) चिढ़ाने के दौरान अर्जित किया था और उसने कुछ तैश में आकर यह उत्तर मुझे दिया था: "आप मुझ पर दया दिखा रहे हैं, यह बिल्कुल ठीक है। मैं कोई वायवी नहीं, इंसान हूं, जो जीना चाहता है। यद्यपि यह भावना

भी तिरोहित हो जायेगी, डरिये मत।" और ऐसा ही हुआ। फिर भी एक समय था ऐसा, शरद् के अन्त में, जब मेरा चिढ़ाना सीमा लांघ गया, पर उसका उत्तर वही पुराना मिला।

अनुभूतिक्षम पाठक निस्सन्देह निष्कर्ष निकालेंगे कि मैं रहमेतोव के बारे में उससे कहीं अधिक जानता हूं, जितना जानने का दावा करता हूं। शायद। भला मैं अनुभूति-क्षमता का खण्डन करने का साहस कर भी कैसे सकता हूं। और यदि मैं ऐसा करूं तो यह जानता हूं कि इस संसार में मेरे जानने के लिए बहुत कुछ और है और आप कभी भी, अनन्तकाल तक प्रयास के बाद भी, उस सब के बारे में नहीं जान पायेंगे। लेकिन बात यही है कि जो कुछ मैं सचमुच नहीं जानता उसके बारे में ईमानदारी से कुछ नहीं कह सकता। आप पूछते हैं श्रीमान् रहमेतोव के वर्तमान पते-ठिकाने के बारे में और इस बाबत कि क्या कभी मेरे उससे फिर मिल पाने का अवसर है क्या? इस सिलसिले में भी मैं अपने परस्पर मित्रों से अधिक न तो कुछ कह सकता हूं और न कोई अटकल ही लगा सकता हूं। मास्को से बिना कुछ बताये उसके ग़ायब होने के तीन और चार महीने बाद हमने यही तय किया कि वह यूरोप का भ्रमण कर रहा होगा। शायद, हम लोगों ने ठीक ही तय किया। कम से कम एक बात तो हमारे अनुकूल है ही। ग़ायब होने की तिथि से एक वर्ष बाद किरसानोव का कोई साथी वियना-म्यूनिख रेल-गाड़ी में एक रूसी युवक से मिला, जो स्लाव प्रदेश के अन्वेषण का, उसके निवासियों के बारे में जानने, उनकी चाल-ढाल, उनकी जीवन-शैली, उनकी भावनाओं, रीतिरिवाजों, संस्थाओं और जन संख्या के प्रत्येक प्रमुख वर्ग द्वारा उपभोग किये जानेवाले भौतिक स्तरों का अनुमान लगा पाने के लिए आवश्यक समय तक वहां रुका। इस कारण वह नगरों और देहातों में रुका, गांव-गांव तक भटका और इस प्रकार हंगरी, रोमानिया, जर्मनी के उत्तरी भाग और आस्ट्रिया के जर्मन प्रान्तों के दक्षिण में घूमा-फिरा। जब उससे मुलाक़ात हुई थी तो वह बवेरिया, स्विटज़रलैंड और फिर वुर्टेमबर्ग और बाडन होकर फ़्रांस की ओर जा रहा था। वह उसे एक छोर से दूसरे छोर तक पंजियाना चाहता था। और उसके बाद एक साल के लिए इंगलैंड की छान-बीन करना चाहता था। इसके बाद अगर

समय रहा तो स्पेन और इटली की भी सैर करना चाहता था, लेकिन अगर समय न रहा तो भी कोई बुरी बात नहीं, क्योंकि ये देश अन्य देशों की तरह "परमावश्यक" नहीं थे—क्यों? उसके अपने "कारण" थे। बहरहाल, वह उत्तरी अमेरिकी राज्यों की उस समय से एक वर्ष तक की यात्रा को किसी और सभी अन्य देशों के अध्ययन के उद्देश्य से अधिक "परमावश्यक" मानता था। वहां पर वह अगर हमेशा के लिए नहीं तो कम से कम एक वर्ष रहेगा ही। अलबत्ता यह इस पर निर्भर था कि उसे वहां क्या काम मिल सकता था। वह अब से कोई तीन वर्ष बाद रूस लौटना चाहता था, तब तक, चर्चा किये जाने के समय से उसकी सेवायें "परमावश्यक" हो जायेंगी।

यह सब कुछ बिल्कुल रहमेतोव की शैली थी, विशेष रूप से वर्णनकर्त्ता द्वारा अनेक "परमावश्यकों" का इतनी स्पष्टता से पुनर्स्मरण। आयु, आवाज़ और मुखाकृति, जिनका स्मरण वर्णनकर्त्ता को रहा, वे भी बिल्कुल रहमेतोव पर चस्पां होते थे। फिर भी हमारे सूत्र ने संक्षिप्त अन्तराल में मिले अपने साथी की ओर उतनी कठोरता से ध्यान नहीं दिया था जितना कि किसी क़स्बे के बाज़ार में चलते-फिरते और वहां बिकनेवाली चीज़ों की ओर दिया जाता है, इसलिए वह केवल सरसरा वर्णन ही कर सकता था, जिसके बारे में सन्देह करने की पूरी गुंजाइश थी। सब कुछ से रहमेतोव का ही भ्रम होता था, लेकिन फिर भी किसे मालूम?

दूसरी अफ़वाह के मुताबिक़ एक रूसी और भूतपूर्व ज़मींदार युवक यूरोप के अन्यतम दार्शनिक, आधुनिक चिन्तन के जनक तथा जर्मन सन्तान* का सान्निध्य प्राप्त कर रहा है। रूसी का कहना था, "मेरे पास 30000 टालर (जर्मनी का चांदी का सिक्का) हैं, और मुझे केवल 5000 की आवश्यकता है, कृपया शेष रक़म आप ग्रहण कर लें।" उस दार्शनिक ने, जिसके साधन निश्चय ही साधारण ही थे, प्रत्युत्तर में कहा: "भला किसलिए?"—"अपनी रचनाओं के प्रकाशन

* यहां पर फ़ायरबाख़ का उल्लेख है, गोकि चेर्नीशेव्स्की को भली-भांति पता था कि हरज़ेन ने विदेश में बाख़मेतेव का स्वागत किया था।—सं०

के लिए।" स्वाभाविक ही था कि दार्शनिक महोदय इनकार कर देते। कहते हैं कि इससे वह रूसी निरुत्साहित नहीं हुआ, उसने रक़म दार्शनिक के खाते में जमा कर दी। उसने लिखा: "यह रक़म आपकी है, चाहे जो करें इसका, चाहे तो फेंक दें कहीं भी—अलबत्ता मुझे वापस नहीं कर पायेंगे, क्योंकि आप मुझे ढूंढ़ ही नहीं सकेंगे। वह रक़म आज भी वहीं पड़ी है, हाथ भी नहीं लगाया किसी ने। यदि यह सूचना सच है, तो इसमें कोई शक नहीं कि रहमेतोव का ही कारनामा है यह।

किरसानोव के अध्ययन-कक्ष में हमने जिस व्यक्ति को बिठाया, वह इसी धातु का बना आदमी था।

वह निस्सन्देह असाधारण व्यक्ति था, अत्यन्त विरल जाति का नमूना। इतने ब्योरेवार वर्णन से मेरा इरादा यह क़तई नहीं था कि मैं अपने सभ्य एवं अनुभूतिक्षम पाठक को इस विरल कोटि के मानवप्राणी के प्रति धारणा बनाने की मृदु एवं अज्ञात कला की शिक्षा दूं, क्योंकि आप, महोदय, कभी उससे नहीं मिल पायेंगे, आपकी दृष्टि इतनी तीक्ष्ण नहीं है कि जो निष्कपट और निर्भीक के सिवा और सभी से छिपा हुआ है। बस, इस वर्णन से आपको उनके अस्तित्व के बारे में कुछ अनुमान देना ही लक्ष्य है, भले ही सब सुना-सुनाया हो। मेरी महिला और कम आडम्बरी धारणाओंवाली पाठिकाओं के लिए इसका क्या प्रयोजन, इसकी व्याख्या करने की मुझे शायद आवश्यकता नहीं है।

ये अनोखे लोग हैं, हैं न। रहमेतोव और उसकी मित्र-मण्डली। मुझे परवाह नहीं अगर वे मेरी यह बात सुन लें। मेरे मन में उनके लिए खेद की भावना है। जिन उदात्त आत्माओं को वे मुग्ध कर लेते हैं, उनसे मेरा कहना है: "मत करो अनुसरण इनका, मत करो: उनके मार्ग में व्यक्तिगत आनंद बहुत कम है," लेकिन मेरी बात का कोई असर ही नहीं होता उन पर, क्योंकि मेरी उदात्त आत्मायें उत्तर देती हैं: "नहीं!"। " एक नहीं बल्कि अनेक प्रचुर संख्या में और जहां पथ-प्रदर्शन का अभाव है, मार्ग छोटा है, हमारी शक्ति इतनी पर्याप्त है कि हम इस पर होकर समृद्धतम, अनन्त कोष तक पहुंच जायें। तो देखा आपने, अनुभूतिक्षम पाठक, निरालेपन की मेरी बात आपके लिए नहीं है, बल्कि बिल्कुल ही

किसी अन्य के प्रति सम्बोधित है। लेकिन महोदय, आपसे उनकी अच्छाई की चर्चा इसीलिए है कि आप उसको सराहना कर सकें। उनकी संख्या भले ही कम है, पर वे सभी को जीवन्तता प्रदान करते हैं उनके बिना सब कुछ मृत है, कटु है। संख्या में कम होते हुए भी वे सब को ही सांस प्रदान करते हैं, उनके बिना दुनिया का दम घुट कर रह जाय। जनसाधारण में निष्कपट और भले मानस हैं, और इनमें से मुट्ठी भर ये लोग हैं, उनकी चाय की कड़क, बढ़िया अंगूरी में सुगंध, उनकी शक्ति और सुवास, उनका सुन्दरतम पुष्प, सभी के प्रेरणा स्रोत और धरती की खुशबू की खुशबू।

30

यही है न, अनुभूतिक्षम पाठक सोच रहा है कि अब हम उस प्रसंग पर पहुंचनेवाले हैं जबकि रहमेतोव आगे बढ़कर, और सभी को बीच में से हटाकर वेरा के दिल में घर बना लेनेवाला है और किरसानोव उसी डगर से गुज़रनेवाला है, जिससे कि अभी-अभी लोपुखोव गुज़र चुका है। हरगिज़ नहीं, महानुभाव: रहमेतोव सिर्फ़ सांझ भर बैठेगा और वेरा से बातचीत करेगा। उनके बीच क्या बात हुई, इसका एक शब्द भी मैं नहीं छिपाऊंगा, यद्यपि मैं बिना अपने कथानक को कोई क्षति पहुंचाये ऐसा आसानी से कर सकता हूं, जैसा कि आप खुद ही शीघ्र देख लेंगे। समझ लीजिये, मैंने आपको पहले ही चेतावनी दे दी है। रहमेतोव अपनी बात कहकर, विदा ले लेगा, और फिर इस उपन्यास के केन्द्रीय, गौण अथवा निस्सन्देह किसी भी चरित्र के रूप में नहीं दिखायी पड़ेगा। तो फिर उसका वर्णन इतने विस्तृत रूप में क्यों किया गया? बस यही है पहेली आप लोगों में उनके लिए जो अनुभूतिक्षम हैं—क्या आप बूझ सकते हैं इसे? इसका उत्तर आपको उसी वार्तालाप के तत्काल बाद के पृष्ठों में, इस अध्याय के अन्त में और जैसे ही वह विदा ले लेगा, उसी के बाद मिल जायेगा। लेकिन क्या उसका कुछ अनुमान कर सकते हैं? यदि कलात्मक सिद्धान्त की आप में तनिक-सी भी पकड़ है, तो ऐसा कर पाना मुश्किल नहीं, जिसकी चर्चा आप लगातार करते रहते हैं। क्या समझे? अच्छा छोड़िये भी, सुराग़ दिये

देते हैं, आधे से अधिक उत्तर यूं ही सेंत-मेंत ले लीजिये: रहमेतोव को प्रस्तुत किया गया था उस मुख्य मांग की पूर्ति के लिए, जो आपकी प्रिय कला द्वारा आरोपित सर्वोच्च अपेक्षा है। क्यों? अब लीजिये—हमारा तात्पर्य किस अपेक्षा से है, इसकी पूर्ति के लिए क्या किया जाना चाहिये और इसे रहमेतोव के व्यक्तित्व के रूप में (कथानक के विकास की दृष्टि से) पूर्ण रूप से अकारण ही किस प्रकार निष्पादित किया जाता है? फिर! पाठिकायें और मेरे पाठकों में से वे जिनकी कला में रुचि नहीं है, वे जानते हैं, इसलिए ऐसा न हो कि कहीं वे साधारण जन आपको मात दे दें। आपको समय दिया जाता है, विशेष रूप से अन्तराल ताकि आप सोच-विचार कर सकें—आप मुझे असहिष्णु नहीं कह सकते। ठीक है, तो फिर अब आप अपनी बुद्धि के घोड़े दौड़ाने लगिये।

नताशा मेर्त्सालोवा सान्त्वना देने, सहानुभूति प्रकट करने और कार्यशाला का प्रबंध अपने हाथ में ले लेने पर अपनी प्रसन्नता उद्घोषित करने और साथ ही अपने अनिश्चय को व्यक्त करने तथा कुछ और व्यवस्था, सान्त्वना और सहानुभूति प्रकट करने तथा सामान की छंटाई में मदद देने के लिए पधारी। रहमेतोव ने पड़ोसी की नौकरानी को नानबाई के यहां भेजा, चाय बनायी और महिलाओं के साथ पी—पांच गिलास और आधा घण्टा तक—दो साधारण रोलों के अलावा ढेरों बिस्कुटों को गटका तथा क्रीम के बड़े मग को आधा खाली कर दिया। "पूरे बारह घंटों का बलिदान, मुझे कुछ अतिसेवन का अधिकार तो है ही है।" अतिसेवन उसने किया। इस बीच महिलायें अपने दिल टूटने पर शोक प्रकट करती रहीं और "पागलपन है यह" रहमेतोव ने तीन बार यह मत व्यक्त किया, और यह महिलाओं द्वारा शोक प्रकट करने के सिलसिले में नहीं, बल्कि किसी असाध्य रोग की पीड़ा अथवा कहें कि यंत्रणा के फलस्वरूप अपरिहार्य रूप से अन्त के सिवा किसी भी और आधार पर जीवन लीला समाप्त करने के लिए। हर बार दुहरायी गयी उनकी इस बात को उसने अपनी आदत के मुताबिक़ संक्षिप्त एवं ज़ोरदार तरीक़े से पेश किया। फिर उसने अपने लिए चाय का छठा गिलास भरा, उसमें बची-खुची क्रीम उंडेली, और बिस्कुटों में जो

कुछ बचा था वह भी समेट लिया—महिलाओं को जितना कुछ खाना-पीना था, पहले ही खा चुकी थीं—नमस्कार किया और अध्ययन-कक्ष में लौट आया, इस विलासी सांझ को शानदार ढंग से समाप्त करने के लिए पलंग जैसे सोफ़े पर पसर गया जो जनसाधारण की शैय्या और उसके जैसे लोगों के लिए विलासिता का प्रतीक था। "मैं छुट्टी मनाने का अधिकारी हूं, क्योंकि अपने समय में से 12 या 14 घंटे मैंने दूसरों को दिये हैं।" इन भौतिक खुशियों का पूर्ण रूप से आनन्द उठाकर, वह फिर बौद्धिक जगत में लौट आया और न्यूटन के ग्रंथ का अवलोकन करने लगा। 8 बजे के बाद पुलिस का कोई कर्मचारी मृतक की पत्नी को ऐसे मामले की सूचना देने आया जो स्पष्ट रूप से आत्महत्या का मामला था, तो रहमेतोव ने बताया कि वे यह समाचार पहले ही सुन चुकी हैं और इस समय उनसे किसी भी हालत में भेंट नहीं की जा सकती। पुलिसमैन वापस चला गया, खुश होकर कि उसे हृदय-विदारक दृश्य नहीं देखना पड़ा। माशा और रहेल ने प्रवेश किया फिर और छंटाई का काम ज़ोर-शोर से शुरू हो गया। रहेल ने सलाह दी कि तीन महीने बाद यदि फ़र कोट बनाना हो तो फिर इसे न बेचना ही ठीक रहेगा। वेरा ने इस सुझाव से सहमति प्रकट की। रहेल ने बाक़ी सब सामान का मूल्यांकन 450 रूबल किया, नताशा की राय में यह वाक़ई इष्टतम मूल्य था। 10 बजे तक लेन-देन समाप्त हो गया। रहेल ने सामान इकट्ठा किया और उस समय उसके पास जितनी रक़म थी अर्थात् 200 रूबल देकर चली गयी, बाक़ी की रक़म तीन दिन के भीतर नताशा के ज़रिये भिजवा देने का वादा कर गयी। नताशा एकाध घंटा और रुकी। तब तक उसके शिशु को दूध पिलाने का समय हो गया था और वह भी इस वादे के साथ विदा हो गयी कि अगले दिन वह अपने मित्र को छोड़ने स्टेशन पर पहुंच जायेगी।

अब रहमेतोव ने न्यूटन की पुस्तक पढ़ना बन्द कर दिया, उसे अलमारी में वापस रखा और फिर माशा को अपनी मालकिन से यह पूछने के लिए भेजा कि क्या वह उससे मिलने पहुंचे। क्यों नहीं। इस पर वह अपने निर्विकार, बिना उतावलेपन के भाव के पहुंच गया।

"वेरा पावलोव्ना, अब मैं आपको यथेष्ठ सान्त्वना प्रदान कर सकता हूं, जो कि पहले बहुत ही अनुचित होती। सबसे पहले

मैं आपको आश्वासन देना चाहता हूं कि अन्ततः आप सुचित्त हो जायेंगी—आप तो जानती ही हैं मैं व्यर्थ की लफ़्फ़ाज़ी नहीं करता, आप आरंभ से ही अपने को शान्त रखने की कृपा करेंगी और हम इसे यथोचित रूप में ग्रहण करेंगे। आज की सांझ मैं पहले ही आपसे कह चुका हूं कि मैं अलेक्सान्दर से मिल गया था और मुझे सब कुछ मालूम हो चुका है। सच बात यही है। लेकिन, मैं यह नहीं कहता कि उन्होंनें मुझे यह सब बताया, क्योंकि सच बात तो यह है कि मुझे उनसे पता नहीं लगा। यह मुझे द्मीत्री सेर्गेइच ने बताया, जिनके साथ मैंने लगभग दो घंटे बिताये, उनके आने की सूचना मुझे पहले से थी और मैंने इस बात का पक्का ध्यान रखा था कि मैं घर पर उनका स्वागत करने के लिए मौजूद रहूं। हमने दो घंटे या उससे अधिक समय साथ-साथ बिताया उस घटना के बाद जब उन्होंने वह पत्र लिखा था, जिसने आपको अशांत कर दिया। उन्हीं के अनुरोध पर ही..."

"तुम्हें उनके इरादे के बारे में पता था और फिर भी कुछ नहीं किया उनको रोकने के लिए?"

"आप शांत रहें, इसी से आपको दिलासा मिलेगा। जी नहीं, मैंने उन्हें रोकने के लिए कुछ नहीं किया यही सोचकर, और आप भी इससे सहमत होंगी, कि वह निर्णय सुपुष्ट आधार पर लिया गया था। छोड़िये अब इसको, मैं उन्हीं के अनुरोध के कारण आज रात यहां हूं, यह जानते हुए कि आप अशांत होंगी यह जानकर कि अगर कोई ज़िम्मेदारी मैं संभाल लेता हूं, तो उसको निभाता हूं भले ही कोई भावना या अनुनय-विनय करनी पड़े इसके लिए, इसीलिए उन्होंने अपना दूत मुझे चुना। उन्हें मालूम था कि आप मुझसे कहेंगी कि उनकी अवज्ञा क्यों नहीं की, लेकिन उन्हें मुझ पर विश्वास था कि मैं ऐसा नहीं करूंगा। क्योंकि मैं सीधे पथ से विचलित नहीं हो सकूंगा, इसलिए मैं पहले ही आपसे कहे देता हूं, किसी भी प्रकार की रियायत के लिए मुझ पर दबाव न डालें। मुझे आपसे यह कहने को अधिकार दिया गया है: 'जब मैं आपसे 'मंच से उतरने' को प्रस्तुत होऊं...'"

"हे भगवान, क्या कर डाला है उन्होंने?"

"'मंच से उतरने' शब्दों पर ध्यान दें और बराय मेहरबानी,

किसी ऐसे-वैसे निष्कर्ष पर न पहुंचें। आपको जो पत्र मिला होगा, आज दोपहर उसमें व्यक्त अभिव्यक्ति का स्मरण करें। हम उसे ही मान्य और असाधारण रूप से सुचयनित मानेंगे।"

वेरा के नेत्रों में घबराहट चमक उठी। विचार उठा कि आखिर वह सोचे तो क्या सोचे। रहमेतोव के तौर-तरीक़े उसे चाहे जितने नीरस और बेतुके लगे हों, लेकिन तो भी वह उच्च कोटि का मनोवैज्ञानिक, थोड़ा-थोड़ा करके अनुकूलन कला में उस्ताद लगता था।

"इस प्रकार, अपनी ही सटीक शब्दावली में, 'मंच से उतरने' की तैयारी करते हुए, उन्होंने आपके लिए एक पत्र छोड़ा..."

वह झटके के साथ खड़ी हो गयी।

"कहां है वह पत्र? दो मुझे! पूरे दिन तक तुमने मुझे न देने की हिम्मत कैसे की?"

"इसलिए, क्योंकि मैंने यही ज़रूरी समझा। आप शीघ्र ही मेरी बात समझ जायेंगी। उसमें दम भी है। लेकिन पहले मैं यह तो बता दूं कि मैंने आरंभ में आपको यह आश्वासन क्यों दिया कि अन्त में आप सुशांत हो जायेंगी। उस पत्र को प्राप्त करके नहीं, जिसके प्रमाण में मैं दो तर्क दे सकता हूं। पहला, इस पत्र को प्राप्त करने के तथ्य मात्र से आपको सुशांत होने में कुछ कम ही सहायता मिलेगी, ठीक कह रहा हूं न? कुछ कमी है, ऐसी कमी जो इस पत्र की विषयवस्तु में आप ढूंढ़ना चाहेंगी।"

वेरा फिर तमकी।

"मदाम, धीरज धरिये, शान्त रहिये। मेरा तात्पर्य आप पर किसी प्रकार की तोहमत लगाने का नहीं। पत्र की विषयवस्तु के प्रभाव के बारे में आपको बतलाने के बाद अब मैं चाहूंगा कि आप दूसरे तर्क पर विचार करें, जिसके कारण ही मुझे यह मान लेना पड़ा और न कि इसलिए कि आपके पति का पत्र, जिस सान्त्वना की आपको तलाश है, उसे प्रभावित करेगा। यह विषयवस्तु, जिसका स्वरूप हम संकेत द्वारा समझ चुके हैं, इतनी महत्त्वपूर्ण है कि मैं आपको पत्र देने के स्थान पर उसे केवल दिखा भर दूं। आप तब इसे पढ़ तो लेंगी, लेकिन अपने पास रख नहीं सकेंगी।"

"क्या? तुम मुझे वह पत्र दोगे नहीं?"

"बिल्कुल नहीं। ठीक इसी कारण क्योंकि किसी और ने भी,

जिसे चुना गया होता, उसने भी यही किया होता। आप इसे विषयवस्तु के कारण ही अपने पास नहीं रख सकतीं, जिसका स्वरूप अभी निश्चित किया जा चुका है, जिसका एकाकी महत्व इसका निषेध करता है कि इसे किसी भी अन्य के हाथों में छोड़ा जाय। लेकिन, चूंकि मैं इसे बलपूर्वक वापस नहीं लेना चाहता, इसलिए मैं इसे आपको दूंगा नहीं, अलबत्ता दिखा ज़रूर दूंगा। और यह भी मैं तब तक करने के लिए तैयार नहीं, जब तक कि आप बैठ नहीं जातीं। अपने हाथ अपने घुटनों पर नहीं रख लेतीं और उनको वैसे ही रखे रहने का वादा नहीं करतीं।"

कोई अत्यन्त भावुक दर्शक भी, जो उस समय वहां उपस्थित होता, वह भी इस प्रकार की गंभीर कार्यवाही और फिर उनके विशेष रूप से आडम्बरपूर्ण समापन पर हंसे बिना नहीं रह सकता था। और हंसने का अच्छा कारण तो था ही उसके लिए। लेकिन ज़रा सोचिये तो अगर रहमेतोव ने अपनी प्रस्तावना में जो संयम प्रकट किया था उसका दशमांश भी होता तो क्या उस आघात पहुंचानेवाले समाचार से हमारी इन्द्रियां कितना उपकार मानतीं।

इसके विपरीत, वेरा यहां दर्शक तो नहीं थी और इसीलिए सावधानी के अधिक नैराश्यमय पहलुओं के बारे में अधिक सतर्क और सहानुभूतिपूर्ण थी। हमारे काल्पनिक प्रत्यक्षदर्शी के लिए वेरा की तात्कालिक अनुक्रिया भी कुछ कम हास्यास्पद नहीं थी: वह बैठ गयी, जैसा कहा गया था उसी प्रकार अपने हाथ चुपचाप जोड़ लिये और अत्यन्त मनोरंजक स्वर में—अत्यन्त धीरज भरे स्वर में बोली: "मैं वादा करती हूं!"

उसके सामने रखी मेज़ पर रहमेतोव ने वह काग़ज़ रखा, जिस पर दस या बारह पंक्तियां लिखी हुई थीं। उस पर ज़रा-सी नज़र पड़ते ही वादे को भूलकर वेरा झपट पड़ी, उसका हाथ हवा में बिजली की तरह लपका ताकि वह पत्र को अपने क़ब्ज़े में कर ले, पर पत्र रहमेतोव के ऊंचे उठे हुए हाथ में पहुंच चुका था।

"मुझे इसी की उम्मीद थी और इसलिए, आपने ध्यान दिया होगा अगर आप इस स्थिति में थीं, कि मैंने पत्र को छोड़ा नहीं था। अब बात ऐसी है कि इस पत्र का एक कोना मेरी अंगुली और अंगूठे के बीच तब तक दबा रहेगा, जब तक कि यह मेज़ पर रखा

होगा, ताकि इस पर क़ब्ज़ा करने की आपकी हर कोशिश नाकाम रहे।"

वेरा पावलोव्ना फिर अपनी कुर्सी पर बैठ गयी और अपने हाथ घुटनों पर रख लिये। रहमेतोव ने काग़ज़ उसके सामने रख दिया। उसने बीस बार उसे जल्दी-जल्दी घबराहट में पढ़ा। रहमेतोव धीरज के साथ खड़ा रहा और उसने इस पाठन-प्रक्रिया में जो चौथाई घंटा लगा, उसमें एक बार भी कोने से अपना हाथ नहीं हटाया। अन्तत: जब वेरा ने अपना हाथ फिर उठाया, तो उसकी यह हरकत निर्जीव-सी थी, इसमें झपट लेने का कोई इरादा नहीं था—बस उसने अपनी आंखें ढांप लीं और अस्फुट स्वर में बोली: "कितने बढ़िया, कितने अच्छे आदमी!"

"आपकी बात से मैं पूरी तरह सहमत नहीं हूं। मैं आपको समझा दूं। ध्यान रखिये, यह उस सबसे बिल्कुल अलग है, जो काम मुझे सौंपा गया है। मैं आपको केवल अपना व्यक्तिगत मत बता रहा हूं, मैंने उनसे भी जब अन्तिम बार मिला था तो यही मत प्रकट किया था, तभी उन्होंने मुझसे आपको यह पत्र दिखा देने और उसके बाद तत्काल जला देने के लिए अनुरोध किया था। पढ़ लिया आपने अच्छी तरह इसे?"

"नहीं!"

एक बार फिर उसने अपने हाथ जोड़कर रख लिये। एक बार फिर रहमेतोव ने पत्र वेरा के सामने रख दिया और उतने ही धीरज के साथ खड़ा रहा और चौथाई घण्टे। एक बार फिर उसने अपना मुंह हाथों से ढांप लिया और बोल पड़ी: "कितने अच्छे हैं वे, कितने, कितने अच्छे!"

"अब तक तो आप इसमें जो कुछ लिखा है, उसे आत्मसात कर चुकी होंगी। शान्त चित्त होने पर आप न केवल इसके प्रत्येक शब्द बल्कि उसकी आकृति और विन्यास को भी स्मृति पटल पर अंकित कर सकतीं, आपने इसका इतनी देर और इतने ध्यान से अध्ययन किया है। लेकिन आपके मानस की इस समय की विक्षुब्ध दशा स्मृति सहायक प्रक्रिया का परिचालन करनेवाले नियमों की अवहेलना करने पर तुली है, इसलिए उचित प्रकार से इसे स्मरण रख पाना संभव नहीं। इस प्रकार की ही सम्भाव्यता को ध्यान में रखते हुए मैंने

इसकी प्रतिलिपि तैयार कर ली थी, जिसे आप जब चाहें पढ़ सकती हैं। और आयन्दा कभी किसी दिन, मैं आपको शायद उसे हमेशा-हमेशा रखने के लिए दे भी दूंगा। इस समय तो मेरा कहना यही है कि हम इस मूल पत्र को जला डालें और मैं अपने इस मिशन को पूरा हो गया समझ लूं।"

"मैं एक बार और देखना चाहती हूं इसे।"

उसने अनुरोध की पूर्ति कर दी। ऊपर की ओर बार-बार दृष्टि डालने से यह स्पष्ट था कि वेरा इस बार उसको अपनी स्मृति के हवाले करने का प्रयास कर रही थी और हर क़दम पर ठिठक रही थी। कुछ क्षणों बाद, उसने नि:श्वास ली और उसके नेत्र पत्र पर टिके थे।

"अब तो आपने बहुत पढ़ लिया, मेरे हिसाब से। बहुत समय हो गया है। रात आधी बीत चुकी है और अब मैं इस मसले पर अपनी राय आपको देना चाहता हूं क्योंकि मेरा विश्वास है, आपको वह उपयोगी लगेगी। इजाज़त है आपकी मुझे?"

"हां।"

मोमबत्ती की लौ में वह पत्र अभी धधका ही था कि वेरा ने आह-सी भरी: "मेरा तात्पर्य यह नहीं था..."

"पता है, आपका तात्पर्य यही था कि आप सुनने के लिए तैयार हैं। लेकिन जो कुछ करना है, वह तो करना ही होगा। इसे तो कभी न कभी जलाना ही था।" इसी बीच वह बैठ गया। "और फिर हमारे पास इसकी प्रतिलिपि तो है ही। और हां अब मेरा सुविचारित मत, वेरा पावलोव्ना। बात मैं आपसे ही शुरू करूंगा। आप यह शहर छोड़कर क्यों जा रही हैं?"

"यहां बने रहना यन्त्रणा के सिवा और कुछ नहीं होगा। मेरा अतीत हर समय ही मुझे सताता रहेगा।"

"मानता हूं, अत्यन्त अप्रीतिकर अनुभूति होगी। लेकिन क्या स्थान बदल जाने से क्या बहुत कुछ बदल जायेगा? मेरे मुताबिक़ तो ऐसा नहीं होने का। ज़रा सोचिये, आपने क्या किया है? आपने पचास प्राणियों को उजाड़ दिया है, जो सहायता के कुछ टुकड़ों के लिए आपकी मदद पर निर्भर थे। क्या यह उचित है?"

क्या हो गया है उसके थकाऊ पाण्डित्य प्रदर्शन शैली को? यह तो नया, प्रफुल्ल स्वर था, संक्षिप्त और सटीक।

"नहीं तो, लेकिन मैं नताशा से इसकी बाबत बात करने ही वाली थी..."

"नाकाफ़ी होता यह। आपको कैसे मालूम कि वह कार्यशाला में आपका स्थान ले सकती हैं? उन्हें तो कोई प्रबंधकीय अनुभव नहीं। फिर इसके लिए अपेक्षाकृत विरल प्रतिभा की भी तो आवश्यकता होती है। बेशक, आपका स्थान कोई नहीं ले सकता और पूरा कारोबार बन्द हो जायेगा। क्या यह उचित होगा? पचास प्राणियों को लगभग ग़रीबी और बरबादी के हवाले कर देना? और किसलिए? प्रशान्ति के तनिक-से लोभ के प्रति इतनी कमनीय चिन्ता, और अपने साथियों के प्रति इतनी विवेकशून्य अवहेलना? इस दृष्टि से इस पर विचार करके देखें और तब मुझे बतायें, कैसा लग रहा है आपको।"

"तुमने मुझे पहले क्यों नहीं रोका?"

"आपने ध्यान ही नहीं दिया होता तब मेरी बात पर। और फिर मुझे यह भी तो मालूम था कि आप शीघ्र ही लौट आयेंगी क्योंकि यह सब तो चाय के प्याले में तूफ़ान की ही तरह तो था। तो आप सफ़ाई में क्या कहती हैं? अपराध स्वीकार करती हैं?"

"अभियोग सच है!" उसने स्वीकार किया, कुछ हंसी-हंसी में, लेकिन गंभीरतापूर्वक।

"लेकिन अभी तो आपने केवल एक ही आरोप सुना है। कुल अभियोग पत्र तो पर्याप्त लम्बा-चौड़ा है। दूसरे, यह बात भी है कि पश्चाताप आपको अपनी दूसरी, और भी अधिक ठीक करने योग्य ग़लती को ठीक करने में मदद देगा। क्या आप बिल्कुल सुचित्त हो गयी हैं, वेरा पावलोव्ना?"

"लगभग।"

"तो ठीक है। क्या आप सोचती हैं कि माशा सो गयी है? अब आज रात तो उसकी आवश्यकता आपको पड़ेगी नहीं, या पड़ेगी?"

"बेशक, नहीं।"

"तो आप सुचित्त हो चुकी हैं, मदाम, अथवा इतनी तो हो चुकी हैं कि आप माशा से कह सकें कि वह कुछ नींद ले ले, क्योंकि अब रात के एक बजे से अधिक समय हो चुका है और उसे सबेरे

27—1127

जल्दी उठना भी होगा। सोचिये, इस बारे में विचार करना मेरा काम है या आपका? फिर भी मैं ही जाकर उससे कह देता हूं। अरे हां, पश्चाताप—खण्डन न करें मेरी बात का, आप अनुताप पीड़ित हैं—के फलस्वरूप आपने एक और पुरस्कार अर्जित कर लिया है। देखता हूं कुछ खाने-पीने की चीज़ मिल सकती है कि नहीं। आपने पूरे दिन कुछ खाया नहीं है। लेकिन मेरा ख़्याल है कि अब शायद आपको भूख लग आयी होगी?"

"बहुत ही ज़ोरों की लगी है, क्योंकि तुमने याद जो दिला दी है।" इस बार वेरा खिलखिलाकर हंस पड़ी।

रहमेतोव खाने के बचे-खुचे सामान को, जो ठंडा हो चुका था, लेकर लौटा, पनीर और खुमियों का जार भी माशा ने उसे खाने को दिये थे। साथ ही वह दोनों के लिए छुरी-कांटे आदि भी लेता आया। खाना बहुत उत्कृष्ट लग रहा था। सब कुछ उसी ने खुद परोसा।

"मैंने खाने की इस तश्तरी को जिस रुचि के साथ साफ़ किया है, रहमेतोव, उससे तो यही लगता है कि मैं न जाने कब की भूखी थी। देखो न, मैं अपने बारे में ही कुछ सोचना तो बिल्कुल ही भूल गयी थी, माशा की तो कौन कहे। निश्चय ही इससे मेरा अपराध कुछ सीमा तक तो कम हो ही जाता है।"

"और मैं भी आपके या आपकी भूख के बारे में सोचने के लिए कुछ बहुत अधिक दूसरे का ध्यान रखनेवाले का दावा नहीं करता। मैं खुद भी तो भूखा था। खाने में कुछ खास नहीं था, मैं अपनी बात कह रहा हूं—आम आदमी से डेढ़ गुना ज़्यादा चाहिये खाने को मुझे—सच मानिये, मैं इतना खा सकता हूं, जितना कि दो मज़बूत आदमी।"

"रहमेतोव, तुमने तो मेरी भूख तृप्त करने से कहीं अधिक बढ़िया काम किया है। पर, तुमने मुझे वह पत्र दिखाने के लिए पूरा दिन क्यों इन्तज़ार किया? मुझे तुमने असमंजस की ऐसी पीड़ा क्यों भोगने दी?"

"अत्यन्त उचित कारणों से। भावात्मक विक्षोभ का कुछ प्रदर्शन आवश्यक था, ताकि उसका प्रभाव व्यापक हो और इस प्रकार मूल घटना और भी अधिक विश्वसनीय लगे। आपने उसकी उपेक्षा

न करनी चाही होती, अब करेंगी आप क्या? जब विश्वास दिलाने की बात होती है तो प्रकृति का कोई भी स्थान नहीं ले सकता। अब हमारे पास तीन साक्षी हैं: माशा, नताशा और रहेल। नताशा का साक्ष्य विशेष रूप से मूल्यवान है, क्योंकि यह आपकी पूरी मित्रमण्डली को प्रभावित करेगा। मुझे यह देखकर बहुत खुशी हुई थी कि आपने उन्हें बुला भेजा।"

"तुम बहुत ही चतुर हो रहमेतोव!"

"विचार बुरा नहीं था, है न, रात पड़ने तक इन्तज़ार किया जाय। अलबत्ता, यह विचार मेरा नहीं बल्कि द्मीत्री सेर्गेइच का था।"

"कितने अच्छे इंसान हैं वे!" वेरा ने उसांस भरी, दुख से नहीं बल्कि सराहना भाव से।

"फ़िलहाल हम इस विचार-विमर्श को छोड़ सकते हैं। सही है कि उन्होंने अन्त में जो क़दम उठाये, उनमें से कुछ सुविचारित और भली-भांति क्रियान्वित थे। लेकिन उनमें कुछ कमियां भी थीं, जिनकी ओर ध्यान दिलाया जा सकता है। और ये कमियां कुछ छोटी-मोटी भी नहीं थीं।"

"ऐसी बातें कहने की जुर्रत मत करो। सुना तुमने, रहमेतोव? मुझे बहुत गुस्सा आ जायेगा, वर्ना!"

"अच्छा तो बग़ावत पर उतर आयी हैं आप, है न? इसका फल आपको भुगतना पड़ेगा। तो क्या मैं अपना दण्ड जारी रखूं? अभी तो आपके अपराधों की सूची आधी भी नहीं सुनायी गयी है।"

"कहते रहो, रहमेतोव, अवश्य कहते रहो।"

"समर्पण का सदैव ही उचित पुरस्कार मिलता है। शेरी तो थोड़ी-बहुत घर में ज़रूर ही होगी? आपको कुछ सेवन करने की तलब होगी। कहां ढूंढूं अलमारी में या साइड-बोर्ड में?"

"अलमारी में।"

सचमुच ही उसमें कुछ मात्रा में शेरी रखी थी। रहमेतोव ने वेरा को दो जाम पिलाये। इस बीच उसने सिगार सुलगा लिया।

"काश कि मैं भी दो-चार जाम पी सकता। चाहता हूं कभी ऐसा करूं।"

"सचमुच?"

हंसते हुए रहमेतोव ने कहा: "ईर्ष्या करता हूं, वेरा पावलोव्ना, ईर्ष्या। इन्सान तो कमज़ोर है।"

"तुम और कमज़ोर। सच, रहमेतोव, मुझे आश्चर्य होता है तुम्हें देखकर। तुम बिल्कुल वैसे आदमी नहीं हो, जैसा कि मैंने सोचा था। क्यों बने रहते हो भीषण चिड़चिड़े, रूखे-से हर समय और आज रात तुम कितने रुचिकर विनोदशील हो?"

"क्यों नहीं होऊं मैं रुचिकर ऐसे समय जबकि मैं कोई रुचिकर वचन को पूरा कर रहा हूं? ऐसे अवसर तो कभी-कभी आते हैं न। अधिकांश समय तो निश्चय ही अरुचिकर कर्त्तव्यों का सामना होता रहता है, ऐसे समय में चिड़चिड़ा न रह पाना कठिन होता है। अब जब आपने मुझे इस रूप में देख लिया है, जिसमें मैं प्रतिदिन होना चाहता हूं, और अब चूंकि हमारे बीच ऐसी बेतकल्लुफ़ी हो गयी, तो मैं कहूं कि हम इस बात को गुप्त ही रखें कि यह दानव जानबूझकर ही चिड़चिड़ा नहीं रहता। मेरे लिए अपना कर्त्तव्य पालन आसान रहता है यदि कोई यह न जाने कि मैं भी ज़िन्दगी का आनंद उठाना चाहता हूं—इससे सामाजिक निमंत्रण मुझे नहीं मिलते और उनको मना करने में मुझे समय नष्ट नहीं करना पड़ता। और आपके सम्मुख अब अधिक मधुर-भाषी क्रूर व्यक्ति को प्रस्तुत करने की दृष्टि से, आइये हम फिर आपके अपराधों की जांच के कार्य में जुट जायें।"

"क्यों चाहते हो तुम अब उन दो अपराधों से अधिक की पड़ताल, जिनको कि तुम पुष्ट कर ही चुके हो: माशा और कार्यशाला के प्रति बेरुखी का प्रयत्न। मुझे दोनों पर ही पश्चाताप है।"

"पहले मामले में, उसे अपराध नहीं बल्कि असावधानी ही कहा जा सकता है: आधा घंटा और अगर माशा अपनी उनींदी आंखों को मसलती रहती, तो उससे माशा कोई मर नहीं जाती। वास्तव में तो वह खुश थी कि वह आपके पास अपना कर्त्तव्य निभा रही थी। यद्यपि, मैं यह अवश्य चाहूंगा कि कार्यशाला के बारे में मनोमंथन किया जाय।"

"क्या कुछ और शेष रह गया है अभी कहने को, बस नहीं हुआ।"

"उतना तो नहीं, जितने की कल्पना मैंने की थी। कैसे परित्याग कर सकी आप उसका, कैसे?"

"मैं पहले ही पश्चाताप प्रकट कर चुकी हूं, और फिर मैं किसी चीज़ का भी परित्याग नहीं कर रही थी: नताशा ने उसे संभालने पर सहमति प्रकट कर दी थी।"

"इसके लिए तो आपको उचित से भी अधिक क्षमादान दिया जा चुका है। लेकिन यही दलील एक और अपराध को बेनक़ाब करती है।" उसका स्वर धीरे-धीरे गंभीर हो गया, मगर रूखा नहीं। "आपका कहना है कि वे आपका स्थान ग्रहण कर लेंगी? क्या यह बिल्कुल निश्चित है?"

"जी हां।" वेरा के परिहास में अब अपराध की भावना उत्पन्न हो चुकी थी।

"तो फिर मेरी बात भी सुन लीजिये। निर्णय तो लिया जा चुका है, लेकिन यह लिया किसने है? आप दोनों ने ही तो और बिना उन पचास अन्य व्यक्तियों से पूछे, जो इस कार्य से सम्बन्धित हैं। आपको क्या मालूम कि वे और कोई प्रबन्ध नहीं चाहते अथवा आपस में ही मिलकर कुछ बेहतर हल ढूंढ़ लें। और यह आपकी बात बिल्कुल निरंकुशता है, वेरा पावलोव्ना। अब आप पर दो प्रमुख अपराधों का आरोप है: निर्दयता और निरंकुशता। तीसरा आरोप तो और भी गंभीर है। आपने निर्दोष सामाजिक व्यवहार के सिद्धान्तों के कमोबेश संगत, उनकी व्यावहारिकता के कमोबेश प्रमाण (इसकी विरलता के लिए और भी अधिक मूल्यवान प्रमाण) के होते हुए भी एक संगठन को खतरे में डाला। आपने इसके अस्तित्व को ही दांव पर लगा दिया, आपने अपनी आस्थाओं को जीवन-क्षम नहीं बल्कि निरर्थक सिद्ध होने के लिए छोड़ दिया, इससे सम्पूर्ण मानव-जाति के लाभ के लिए सिद्धान्त अपना महत्व खो बैठता। आप अज्ञान के चाकरों और अशुभ तत्वों के हाथों वे साधन सौंपने जा रही हैं, जो उन संकल्पनाओं का ही नाश कर देंगे, जिन्हें आप पुनीत मानती हैं। मैं इसका ज़िक्र नहीं करना चाहता कि आप पचास व्यक्तियों की खुशहाली को खतरे में डाल रही थीं—सम्पूर्ण मानव-जाति के भवितव्य की तुलना में केवल पचास की क्या बिसात—आप तो प्रगति के ध्येय के साथ ही विश्वासघात कर रही हैं। वेरा पावलोव्ना, इसे ही चर्च के अनुयायी पवित्र आत्मा के खिलाफ़ पाप कहते हैं, अक्षम्य अतिचार कहते हैं। क्या सफ़ाई देती हैं आप?

आरोप तो आप पर लग ही चुके हैं! अच्छा हुआ कि आपको रोक दिया गया, अभी तक आपका अपराध केवल आपराधिक इरादा ही है न। वाह, वाह मदाम, आपको झेंपना-झिझकना भी आता है? ठीक है, मैं सान्त्वना दे सकता हूं आपको। अगर आपने इतना अधिक कष्ट न झेला होता, तो आपने कोई भी अपराध न किया होता, न विचार से और न करनी से। इसलिए वास्तविक अपराधी वह व्यक्ति है, जिसने सर्वप्रथम आपको दुखी किया। और आप यही राग अलाप रही हैं 'कितने अच्छे' हैं वे!"

"क्या? तुम मेरे कष्टों का दोष उन्हें दे रहे हो?"

"किसे दूं और? ये सब सनक—मैं माने लेता हूं अत्यन्त शानदार कार्य—निरर्थक थी। और फिर यह सब बात का बतंगड़? हरगिज़ घटित नहीं हुआ होता।"

"ठीक कहते हो तुम, नहीं होना चाहिये था। विशेष रूप से वह... वह भावना। मैंने अपने आप तो नहीं चुनी... समझे, मैंने उसे दबाने की बहुत अधिक कोशिश की।"

"तो आप मेरा अभिप्राय समझिये। आप अपने वास्तविक अपराध के प्रति तो आंखों पर पट्टी बांधे हुए हैं और जिसके प्रति कुछ भी करने की ज़रूरत नहीं, उसे लेकर अपने को लगातार कोस रही हैं। मानिये या न मानिये, आपके और द्मीत्री सेर्गेइच के स्वभाव को देखते हुए एक न एक दिन यह तो होना ही था। आप किसी और से प्रेम करती हैं यह तथ्य कारण नहीं बल्कि असन्तोषजनक सम्बन्ध का परिणाम है। यह असन्तोष किस दिशा में प्रवाहित होता? यदि आप दोनों में से कोई अथवा दोनों ही में सुरुचि, व्यवहार-कौशल अथवा औचित्य की कमी होती, तो यह पति और पत्नी के बीच आम तौर पर प्रचलित विरोध के रूप में कटु हो उठता, जिसमें यदि दोनों ही अधम हों तो दोनों एक दूसरे को अथवा एक ही दूसरे को कोंचते रहते हैं। स्थिति चाहे जैसी हो इनमें से जीवन तो नरक बन ही जाता है और अधिसंख्य पति-पत्नियों में इसी प्रकार की स्थिति दिखायी पड़ती है। इससे कोई नया प्रेम उत्पन्न होने में तो बाधा नहीं दीखती। अलबत्ता कोंचा-कांची ही प्रधान बनी रहती है। आपके मामले में, दोनों पक्षों में शालीनता विद्यमान होने के कारण, असन्तोष अपना केवल अत्यन्त नरम और कम से कम आक्रामक

स्वरूप ग्रहण कर सका—स्नेह का अन्यसंक्रमण। इसलिए नये प्रेम की बात अप्रासंगिक है। मूल बात है प्राथमिक सम्बन्ध के प्रति असन्तोष, वह भावना जिसका स्रोत है असंगतता। यद्यपि आप दोनों ही भले लोग हैं, लेकिन बाल्यावस्था की अव्यवस्थित मर्यादा से विशिष्ट, वयस्क व्यक्तित्व के रूप में आपका विकास हो जाने से एक प्रकार की असाम्यता प्रकट हुई। इस पर दोनों में से किसी को भी कैसे दोष दिया जा सकता है? देखिये न, मैं बुरा आदमी नहीं हूं, लेकिन क्या आप मेरे साथ रहना सहन कर सकेंगी? कब तक आप यही सहती रहेंगी कि इससे आप घोर निराशाग्रस्त होकर गले में फन्दा डालकर लटक जायेंगी?"

"अधिक देर तक नहीं।" वेरा ने हंसते हुए कहा।

"यद्यपि वे मेरी तुलना में आधे भी रूखे नहीं हैं, फिर भी आप दोनों की जोड़ी उपयुक्त नहीं थी। इसे सबसे पहले कौन देख पाता? आप दोनों में से कौन बड़ा था, अधिक व्यवस्थित, अधिक अनुभवी? उन्हें इस बात का अनुमान लगा लेना चाहिये था, और इसके लिए आपको प्रस्तुत भी कर देना चाहिये था ताकि आप भय और मनोव्यथा से बच जायें। इसके स्थान पर, वे तब तक इस बात को नहीं देख पाये जब तक कि भावना जड़ पकड़ चुकी थी और इससे भी बुरी बात यह कि इस भावना का प्रतिफल तब तक दूसरे में भी उग चुका था। देर क्यों की? मूर्खतावश? शायद नहीं। निरी विचारहीनता ने ही उन्हें आपके सम्बन्ध की ओर से लापरवाह बनाया। और अब भी यही आग्रह करती है कि वे स्नेही और भले थे?" धीरे-धीरे रहमेतोव ने अपने विषय के सूत्र मुस्तैदी से थाम लिये: वेरा ने वाक्पटुता के इस विदग्ध प्रवाह को बीच में ही काट दिया।

वह तेज़ी से बोली: "रहमेतोव, मुझे यह सब सुनने की ज़रूरत नहीं। तुम ऐसे व्यक्ति के लिए अपशब्दों का प्रयोग कर रहे हो, जिसके प्रति मैं अनन्त काल तक कृतज्ञ रहूंगी।"

"मदाम, मैंने अपनी ज़बान खोली ही न होती, अगर मैंने ऐसा करना ज़रूरी न समझा होता। क्या आप यह समझती हैं कि मैं भावावेश में आ गया? क्या मैंने अभी-अभी सोच-सोचकर यह सब कुछ कहा है? आप यह जान लीजिये कि मैं जिस बात को कहना ज़रूरी समझता हूं, उसे कहने से कतराता नहीं। आप को समझ

लेना चाहिये कि मैं अपने पर बहुत काबू रखे हुए हूं—मैं जब तक उचित समय नहीं आता तब तक कुछ भी नहीं कहता। आप अभी देख ही चुकी हैं कि कैसे मैं कागज़ के एक टुकड़े को पूरे नौ घंटे तक बावजूद इसके दबाये रहा कि मेरे मन में आपके प्रति करुणा का भाव था। शान्ति क्योंकि परमावश्यक थी, इसलिए मैंने उसका परिपालन किया। संक्षेप में यह कि मेरा आपसे यह कहना कि मैंने लोपुखोव के सम्बन्ध पर पर्याप्त रूप से विचार किया है, इस बात का संकेत है कि हमें इस ओर तत्काल ध्यान देना चाहिये।"

"मेरे ध्यान की तो इसे ज़रूरत हरगिज़ नहीं है।" वेरा कुछ चिढ़कर बोली, "कृपा करके अब आगे कुछ मत कहो, रहमेतोव। बस करो। और तत्काल यहां से चले जाओ। तुमने पूरी शाम मेरी ज़रूरत के सर्फ़ की, इसका शुक्रिया बहुत-बहुत, लेकिन अब तुम चले जाओ, यही ठीक होगा।"

"क्या मैं आपका यह अनुरोध बिना किसी शर्त के मान लूं?"

"बिना शर्त।"

वह मुस्कराया: "तो ठीक है। लेकिन जितना आसान आप समझती हैं, उतनी आसानी से मैं यहां से टलनेवाला नहीं। आपकी प्रतिक्रिया का पूर्वानुमान कर लेने के ही कारण, मैंने उचित सतर्कता बरत ली है। कुछ ही समय पहले जिस पत्र को जलाया गया है वह लिखा तो लोपुखोव ने ही था, परन्तु उसे आपके इस नाचीज़ खादिम ने ही बोलकर लिखाया था। यह कोई दस्तावेज़ नहीं, इसलिए मैं इसे आपको अपने पास रखने के लिए दे रहा हूं।" उसने वेरा के हाथों में काग़ज़ का एक टुकड़ा रख दिया।

"11 जुलाई, रात के 2 बजे। मेरी प्रिय वेरा, रहमेतोव को अपनी बात कह लेने देना। बात क्या होगी, मुझे बिल्कुल नहीं मालूम, मैंने खुद जानने की कोशिश नही की और न ही इसने मुझे कुछ बताया। लेकिन यह मुझे मालूम है कि यह कभी व्यर्थ की बात नहीं करेगा।

तुम्हारा द्मीत्री।"

भगवान जाने, कितनी बार उसने वह पत्र चूमा।

"तुमने मुझे यह पत्र इससे पहले क्यों नहीं दिया? और तो कुछ नहीं तुम्हारे पास? नहीं न!"

"कुछ भी नहीं, क्योंकि इससे अधिक की ज़रूरत भी नहीं थी। आपके पहले प्रश्न के उत्तर में कहूं कि मैंने उस समय तक का इन्तज़ार किया, जब इसकी ज़रूरत महसूस हुई।"

"हे भगवान, इन कुछ पंक्तियों से जो सान्त्वना मुझे मिलती वह क्या पर्याप्त नहीं थी ज़रूरत के नाम पर? जब मैंने अन्तिम बार देखा उन्हें, उसके बाद लिखी गयी पंक्तियां?"

"निश्चय ही सान्त्वना तो विवाद का विषय नहीं है?" वह मुस्कराते हुए, बीच में ही बोल पड़ा।

"तो क्या श्रीमान जी, फिर मुझे तैश दिलाने की कोशिश कर रहे हैं?"

"क्या इस काग़ज़ के टुकड़े को लेकर फिर हम दोनों के बीच कोई झगड़ा उकसाना चाहती हैं?" वह ज़ोर से हंसा। "अगर ऐसी बात है तो मैं इसे वापस ले लेता हूं और जला डालता हूं—हमारे जैसे लोग, आपने सुना ही होगा औरों का ऐसा कहना है, किसी भी चीज़ को परमपावन नहीं मानते। और उनमें आप भी शामिल हैं, श्रीमती जी। आखिर हम हिंसा अथवा पाशविकता पर उतारू हो सकते हैं। ताहम, क्या मैं अपनी बात जारी रखूं?"

दोनों ही अब पहले से अधिक प्रशान्त थे। वेरा इसलिए कि उसे पत्र मिल गया था और रहमेतोव शान्ति के उन क्षणों के कारण, जो उसने तब व्यतीत किये जब वेरा पत्र के चुम्बन ले रही थी।

"कृपा करके कहते रहिये। अब तो मुझे सुनना ही पड़ेगा।"

उसने शान्त भाव से कहना शुरू किया: "द्मीत्री को कुछ जान लेना चाहिये था, पर उन्होंने ऐसा नहीं किया। यही विनाशकारी सिद्ध हुआ। लेकिन, उस विशेष ग़लती को क्षमा करना पाप-मोचन से कहीं अधिक है। यद्यपि वे आप दोनों के बीच चारित्रिक असंगति के फलस्वरूप उत्पन्न होनेवाले अपरिहार्य परिणामों से बेखबर थे भी, तो भी उन्हें आपको क्षीण, अवांछनीय परन्तु कल्पनीय संभावना का सामना कर पाने के लिए उद्यत कर देना चाहिये था—भविष्य तो अननुमेय होता है न। इस सूत्र से तो उनका परिचय अवश्य होगा। उन्होंने आपको इस प्रकार अप्रस्तुत कैसे छोड़ दिया? लेकिन उनकी

अदूरदर्शिता चाहे जितनी भी शोचनीय हो पर इसका आपसे अच्छा, बुरा, अथवा तुच्छ कोई भी सरोकार नहीं। अलबत्ता, सही है कि यह निष्पादन अचेतन हुआ, परन्तु मनुष्य के सच्चे स्वभाव का इससे बेहतर प्रमाण और क्या हो सकता है? उस संयोग का प्रतिरोध करने की आपकी भावना को कमज़ोर करके आपको तैयार करना उनके अपने हितों के प्रतिकूल पड़ता। आप अपने ही दृढ़तम संकल्प—भाग्य के अकल्पित संयोग—के विरुद्ध जीवन्त प्रमाण का शिकार बन गयीं, असाधारण रूप से योग्य व्यक्ति द्वारा उत्प्रेरित भावना की असाधारण शक्ति के लिए। विशुद्ध रूप से आदरयोग्य कोटि के व्यक्ति द्वारा उत्प्रेरित कमज़ोर संवेग अधिक संभव होते हैं और उन पर नियंत्रण भी हो सकता है—बशर्ते कि प्रतिरोधक शक्ति में किसी प्रकार का हस्तक्षेप न हो। इसी संयोग के बल-बूते ही उन्होंने हस्तक्षेप न करने का तय किया। और इसी कारण उन्होंने आपको नातैयार छोड़ दिया, इस प्रकार के कष्टों को झेलने के लिए। जमी मेरी बात आपको?"

"तुम ग़लत कह रहे हो। उन्होंने अपने विश्वास को कभी छिपाया नहीं। यह मैं जानती हूं और तुम भी जानते हो।"

"मैं यह नहीं कह रहा कि उन्होंने छिपाया, वेरा पावलोव्ना। वह तो बहुत ही अनुपयुक्त बात होती। उसी प्रकार के विचारों को ग्रहण करने के लिए आपको निरुत्साहित करना, इसी उद्देश्य से किसी अन्य की ठकुरसुहाती करना तो एकदम विश्वासघात ही होता। ऐसी स्थिति में तो आपने उनसे कभी प्रेम करना आरंभ ही न किया होता। क्या मैंने इस प्रकार की कोई बात उनके विरुद्ध कही है? वह बहुत अच्छे आदमी हैं, इसमें कोई सन्देह नहीं। उनकी प्रशंसा चाहे जितनी देर तक कर सकता हूं, आप ही कहेंगी कि बस करो। लेकिन मेरा कहना इतना ही है कि उन्होंने आपके साथ इस प्रकरण के आरंभ होने से पहले—और मैं इस शब्द 'पहले' पर ज़ोर देता हूं—अच्छा व्यवहार नहीं किया। क्यों आपको स्वयं को यन्त्रणा देनी पड़ी? उनके कथनानुसार यही तो ताकि उन्हें कष्ट न पहुंचे। यद्यपि कोई मूर्ख भी सत्य को तत्काल समझ लेगा। लेकिन आप कैसे सोच सकती थीं कि इससे उन्हें कष्ट पहुंचेगा? कितनी यंत्रणा मिली इन सब बेहूदा विचारों से! अब आप शायद मुझसे यह कहेंगी कि ईर्ष्या भी हो सकती है।"

"तुम ईर्ष्या को पूर्णतया अस्वीकार करते हो?"

"विकसित व्यक्ति के लिए, हां, यही समझता हूं। यह विकार, झूठ, उस तर्क से उत्पन्न घृणित भावना है, जो मुझे अपना पाइप या अंडरवियर किसी दूसरे को देने से रोकता है, इसका कारण यह है कि मानव प्राणी को स्वत्व की वस्तु की तरह समझा जाता है।"

"लेकिन उन भयावह सीमाओं की तो सोचो, जिन तक तुम्हारा ईर्ष्या का अस्वीकरण ले जा सकता है।"

"भयावह केवल उन्हीं के लिए, जो शायद इस कमज़ोरी के शिकार हैं। लेकिन शेष हम लोगों के लिए बिल्कुल ही महत्त्वहीन।"

"तुम अपार अनैतिकता का समर्थन कर रहे हो, रहमेतोव!"

"आप उनके साये में चार वर्ष रहने के बाद ऐसा कह सकती हैं? यदि वे किसी भी बात के अपराधी हैं, तो वह यही है। आप कितने बार दोपहर का खाना खाती हैं? दिन में एक बार ही न। अगर आप दो बार करने लगें तो क्या कोई इस पर आपत्ति करेगा? शायद ही। तो फिर क्यों नहीं करतीं आप ऐसा, कौन रोकता है? किसी को कष्ट पहुंचाने का भय? क्या इसका यह कारण तो नहीं कि न तो आप ऐसा करना चाहती हैं और न ही आपको ज़रूरत है इसकी? लेकिन, यह कृत्य कितना ही रुचिकर हो, मगर विवेक और अधिक महत्त्वपूर्ण बात यह है कि भूख ने एक की सीमा बांध रखी है, दो की नहीं। लेकिन यदि कभी सनक अथवा पेटूपन आपको अन्यथा करने के लिए उकसा दे तो क्या वही डर कि किसी व्यक्ति को कष्ट हो सकता है आपके क़दम रोकेगा? हरगिज़ नहीं। और अगर कोई आपको रोके भी और अवहेलना करने पर उसे अप्रसन्नता के रूप में पीड़ा पहुंचाने की आशंका हो, तो भी आप चोरी-छिपे वैसा करेंगी ही। खाना छिपाकर रखेंगी, इस तरह अपने हाथ मैले करेंगी और जेबों को छिपाने की जगह के रूप में इस्तेमाल करके उन पर दाग़ डाल लेंगी। यह नैतिकता का प्रश्न नहीं है, बल्कि चोरी के तात्त्विक महत्व का है। इस विचार से कौन भयभीत होकर रुकता है कि ईर्ष्या के प्रति दया भाव प्रदर्शित करने की आवश्यकता होती है? या 'नहीं, नहीं, मुझे उन्हें कष्ट नहीं पहुंचाना चाहिये', इसके लिए सम्मान प्रकट किया जाय—कौन उन्हें इससे अनावश्यक पीड़ा

पहुंचाना चाहेगा? सिर्फ़ उनमें से कुछ सर्वोत्कृष्ट के सिवा और कोई भी तो नहीं, ऐसी उद्भट आत्मायें, जिनके सद्गुण कभी भी किसी प्रकार की आशंका का कारण नहीं बनते। शेष सभी के लिए यह सब बकवास है, कुछ भी छिपाने का कोई कारण नहीं और वास्तविक असमानता के लिए झूठ बोलने और धोखा देने का पर्याप्त कारण होता है। अब मैं अपना वक्तव्य समाप्त करता हूं। लेकिन निश्चय ही यह सब कुछ आप पहले भी सुन चुकी होंगी?"

"निस्सन्देह।"

"तो फिर ईर्ष्या के सन्दर्भ में आपकी नैतिकता का क्या मूल्य है?"

"तुम्हें यह पता होना चाहिये कि द्मीत्री और मैं इस प्रकार के विषयों पर हमेशा वाद-विवाद करते रहे हैं।"

"लगता तो नहीं। अथवा इस प्रकार से तो नहीं कि असम्बद्ध विषयों अथवा एक ही विषय पर पूर्ण रूप से साधारण सन्दर्भ में निरन्तर पुनर्कथन के लिए एक दूसरे का विश्वास करने के लिए। अन्यथा आपने भगवान जाने इतने लम्बे अरसे तक यंत्रणा क्यों भोगी होती? और किसलिए? बस ज़रा-सी बात के लिए? सोचिये तो ज़रा उस भावात्मक ऊहापोह, विक्षोभ के बारे में जो तीनों को भोगना पड़ा, आपको विशेष रूप से, जबकि आप पिछले वर्ष की तरह शान्तिपूर्ण जीवन-यापन करती रह सकती थीं, साथ-साथ घूमते अथवा कोई अन्य व्यवस्था कर ली होतीं—इस उथल-पुथल से बचने के लिए कुछ भी व्यवस्था। पुराने त्रिगुट के रूप में चलते रहते, साथ-साथ चाय पीते और ओपेरा देखने जाते रहते। आपने जो पीड़ा झेली, उसने क्या भला किया आपका? यह सब उनका ही दोष रहा कि आपका यह विचार ग़लत था: 'मैं उसे मारती हूं इससे'। सब मिलाकर उन्होंने आपको अनावश्यक अपार कष्ट दिया है।"

"तुम्हारी बातें सुनकर मुझे धक्का लगता है, रहमेतोव।"

"बस फिर शुरू हो गयीं आप! धक्का लगने का मेरा अर्थ है बिना बात के पीड़ा झेलना और तुच्छतम वस्तु के लिए हाथ मलना।"

"तो क्या मैं यह मानूं कि हमारी कथा निरर्थक भावुकता है?"

"मैं इसे निरर्थक, निरर्थकतापूर्ण कारुणिक कहूंगा। हृदय विदारक

कोलाहल जिसके स्थान पर साधारण, संयत ढंग से किये गये कतिपय वार्तालाप उचित सिद्ध होते—और इस सब के लिए मैं द्मीत्री सेर्गेइच को ही दोषी ठहराता हूं। उनका अपना सम्मानजनक आचरण ही एकमात्र प्रायश्चित है कि उन्होंने आरंभ में ही पाखण्ड का निवारण नहीं किया। मैं फिर कहता हूं कि यह साधारण मामला था आपको तैयार करने का और स्वयं भी तैयार होने-रहने का, इसे अविचलित रूप से इस प्रकार ग्रहण करने का कि जैसे नाक पर कोई मक्खी बैठी ही न हो तो फिर उसे उड़ाने की क्या ज़रूरत? अत्यन्त घृणित कार्य किया उन्होंने। ऐसी बात भी नहीं कि उन्होंने खुद पूरी तौर पर भुगता न हो। शेरी का एक और गिलास पी लीजिये और जाकर सो जाइये। आज रात, अब मैंने अपना अन्तिम लक्ष्य अर्जित कर लिया है: सुबह के तीन बजे हैं। अगर आपको कोई जगाये नहीं तो घण्टों सोती रहिये और माशा को तो हुक्म है ही साढ़े दस से पहले न जगाये। इससे आपको चाय पी लेने और फिर रेलवे स्टेशन भागने का समय कठिनाई से ही मिल पायेगा। और हां, आप हर चीज़ बांध-बंधकर मत रखवाइये, आप जब भी चाहें वापस आ सकती हैं अथवा किसी से अपनी चीज़ें मंगा सकती हैं... क्या किरसानोव आपके पीछे जायेंगे, आप अनुमान लगाने का कष्ट करेंगी मदाम, कि क्या? इससे माशा की समस्या का भी समाधान हो जायेगा: अब हम उसे आपको इतना शांत तो मानने नहीं दे सकते, है न? और हम ऐसा करेंगे भी नहीं, बस आधे घण्टे ही तो इधर-उधर की पैकिंग होती है। बस अब नताशा से ही निपटना शेष रह गया है। मैं कल सुबह-सवेरे उनके यहां पहुंच जाऊंगा और उनसे कह दूंगा कि आने की ज़रूरत नहीं क्योंकि आप रात भर जागती रही हैं और आप को नींद से जगाया नहीं जाना चाहिये। यहां न आकर वे सीधे स्टेशन पहुंच सकती हैं।"

वेरा के मुंह से बेसाख़्ता ही निकल पड़ा: "कितने सहृदय हैं!"

"एक बार तो मुझे श्रेय लेने का अवसर प्रदान कीजिये, यह तो मेरी सूझ है। मैं उनकी आरंभिक भूल की भले ही निंदा करता होऊं (और मैंने उनसे अपना यह विचार काफ़ी देर तक और ज़ोर-ज़ोर से प्रकट किया था, इस बात का आपको आश्वासन देता हूं), इस सब कुछ कार-बार के लिए मैं उन्हें कितना ही ज़िम्मेदार मानता

होऊं, तथापि इस वास्तविक प्रकरण में उनके आचरण की प्रशंसा किये बिना नहीं रह सकता।"

31

अनुभूतिक्षम पाठक का प्रस्थान

प्रत्यक्षज्ञान के विलक्षण प्रतिभा से सम्पन्न मेरे पाठक महोदय, अब मुझे बतलाइये कि रहमेतोव का परिचय क्यों कराया गया, क्या सदा-सर्वदा के लिए हमें छोड़ जाने के लिए ही? आपको बताया ही जा चुका है कि अब उसे हमारे इस आख्यान में कोई भूमिका अदा नहीं करनी है।...

बीच में ही बाधा डालकर कोई कह रहा है: "ऐसी बात नहीं है, श्रीमान, वह निश्चय ही आपके प्रमुख पात्रों की कोटि में से एक है, जो पत्र लाया और इतना कुछ..."

"ठीक है, मगर आप सौन्दर्यशास्त्र में कमज़ोर हैं, जिसे आप बेहद पसन्द करते हैं, श्रीमान।" मैं बीच में ही टोक सकता हूं। "क्या मैं यह मान लूं कि आप माशा को भी इसी कोटि में शामिल करेंगे? आपको याद होगा कि उसी ने वह पत्र दिया था, जिससे हमारी नायिका इतनी संत्रस्त हो उठी थी, इस कथानक के आरंभ में। और रहेल का क्या होगा? यदि वह माल नहीं ख़रीदती, तो वेरा के पास यहां से जाने के लिए धनराशि कहां से आती? अथवा प्रोफ़ेसर एन० ? वही तो जिसकी उन्होंने उसे मादाम बी० से सिफ़ारिश की थी, जिन्हें गवर्नेस की तलाश थी। इसी सेवा के फलस्वरूप तो वह दृश्य संभव हुआ था जिसमें कोन्नोग्वार्देइस्की मार्ग से लौटते समय का वर्णन था? अथवा क्या आप उस मार्ग को भी तपाक से याद करेंगे? चाहे जो भी हो, परिपार्श्व की भूमिका तो उसी ने निभाई थी। इसी कारण गरोख़ोवाया सड़क नायक बन जायेगी, जिसके दोनों तरफ़ मकानात बने हुए हैं, स्तोरेश्निकोव का आवास, उसका मैनेजर, उसकी बेटी, और निश्चय ही हमारी कथा का मूलाधार। यह मान लें कि आप सही हैं, कोन्नोग्वार्देइस्की मार्ग, माशा, रहेल और गरोख़ोवाया सड़क

को समान रूप से आख्यान के प्रमुख पात्रों का पद प्रदान कर दें, तो भी मैं आपका ध्यान उन अधिक से अधिक पांच शब्दों की ओर आकृष्ट करूंगा, जो इनकी कार्रवाई के संबंध में कहे गये हैं और फिर उन पृष्ठों की ओर (कृपया पड़ताल कर लें) जो कि, मेरे भले मित्र, रहमेतोव के प्रकरण लिखने में खर्च किये गये हैं।"

मेरा अनुभूतिक्षम पाठक कह उठता है: "चल गया, अब पता चल गया। रहमेतोव को कथानक में लोपुखोव की भर्त्सना करने और अपनी बात वेरा से कहने के लिए प्रविष्ट किया गया था।"

"ओ, मेरे पाठक, आपकी अनुभूतिक्षमता शिथिल से शिथिलतर हो रही है। आप सब कुछ उलट-पुलट समझ रहे हैं। क्या आप सचमुच यह समझते हैं कि मैं कोई पात्र कथानक में केवल इसलिए घुसेड़ दूंगा कि दूसरों के बारे में निर्णय देने का वक्तव्य उसके मुंह से दिलवाना है? इस प्रकार का विचार आपके महान लेखकों की रचनाओं में आगमन और निर्गमन के बारे में सही हो सकता है, लेकिन मेरी, भले ही मैं बड़ा लेखक न होऊं, सच्ची कला की मेरी पकड़ कुछ बेहतर ही है। नहीं, मेरे पाठक, रहमेतोव की भूमिका बिल्कुल भिन्न है। क्यों, क्या वेरा, लोपुखोव और किरसानोव को अनेकानेक ऐसे अवसर नहीं मिले, जब कि वे अपने-अपने और एक-दूसरे के कार्यकलापों पर स्पष्ट रूप से विचार-विमर्श कर सकते थे। उनमें से प्रत्येक बुद्धि और विवेक से सम्पन्न है। भले और बुरे के सवालों पर वे किसी अनुबोधक के बिना बातचीत कर सकते थे। क्या आप ईमानदारी से यह मानते हैं कि वेरा अनुदर्शन में और अपेक्षाकृत शान्तचित्तता की स्थिति में कार्यशाला के प्रति अपनी आपराधिक अवहेलना के बारे में, रहमेतोव से कुछ कम कटुता से निर्णय कर पाने में अक्षम थी? अथवा लोपुखोव अपने वैवाहिक जीवन के बारे में रहमेतोव के मत से किसी भी रूप में असहमत था? मैं आपको यह बता दूं कि भले लोग ही अपने सबसे अधिक कटु आलोचक होते हैं—यदि आप नहीं जानते तो जान लीजिये, भले मानस होने का अंग है यह। लेकिन, यह तो कभी आपकी विशिष्टता रही भी नहीं, है न? खैर, अपनी बात जारी रखूं: आप पूरी ईमानदारी से यह तो नहीं मानते कि रहमेतोव अभी-अभी लोपुखोव की ओर से नहीं बल्कि स्वतंत्र रूप से अपनी भूमिका निभा रहा था?

श्रीमान जी, वह तो लोपुखोव का ही प्रवक्ता था और उसे तथ्य का पूर्ण रूप से भान था, जैसे कि वेरा एक या दो दिन बाद समझ गयी और यदि उस क्षण जब रहमेतोव ने बोलना शुरू किया वह इतनी घबराहट में न होती तो तत्काल ही यह समझ जाती। यही खरी और सच्ची बात है श्रीमान लेकिन आपको तो मेरी हिदायत की दरकार नहीं शायद? निस्सन्देह, लोपुखोव ने अपने दूसरे पत्र में यह दावा नहीं किया कि रहमेतोव वेरा से क्या कहेगा, और उसने खुद रहमेतोव से कुछ नहीं कहा। मगर, लोपुखोव अच्छी तरह से जानता था कि रहमेतोव का इसके संबंध में रवैया क्या होगा क्योंकि सभी भलेमानस एक भी शब्द कहे बिना ही एक-दूसरे को अच्छी तरह समझाते हैं। इस युवक ने वेरा के समक्ष जो भाषण दिया, लोपुखोव उसकी शब्दश: सब नहीं तो अधिकांश की भविष्यवाणी कर सकता था। यही सटीक कारण था कि उसने इस युवक को अपनी बात कहने के लिए चुना। क्या मन के रहस्यों को कुरेदने की प्रक्रिया में और अधिक डूबने के लिए तैयार हैं? लोपुखोव यह तथ्य के रूप में जानता था कि अपने बारे में उसका जो मत था, रहमेतोव (मेर्त्सालोव, नताशा, वह अफ़सर, जो द्वीप पर मनायी गयी पिकनिक के दौरान मल्ल-युद्ध में भागीदार बना था) पूर्ण रूप से उससे सहमत हैं और अयाचित ही इसे वेरा की सहमति मिल जाती। और यदि उन्मत्त कृतज्ञता का उत्ताप कम हो गया होता तो यह तत्काल ही उपलब्ध होती: उसने रहमेतोव को भेजा और अपनी निंदा करायी, इससे आगे चलकर भी लोपुखोव का कुछ बिगड़नेवाला तो था नहीं, वास्तव में वेरा की दृष्टि में अधिक महत्त्वपूर्ण बनकर क्या होता, क्योंकि उसने शीघ्र ही तो यह समझ लिया कि उसने इस तमाम वार्तालाप की व्यवस्था स्वयं की थी और उसे पता था कि इसकी प्रतिक्रिया क्या होगी। वेरा उसके उद्देश्य को अन्तत: समझकर उसके इस शानदार विचार पर आश्चर्य से भर उठी, वह यही समझेगा कि पहले कुछ दिनों के लिए, शीघ्रतम संभव मुक्ति का प्रबन्ध करने के लिए वह कृतज्ञता से पोर-पोर तक डूब जायेगी: "रहमेतोव द्वारा उसकी आलोचना से मुझे उस समय भले ही रोष आया लेकिन मुझे पता था कि वह तब सच ही कह रहा था और एक सप्ताह बाद मैं भी यही समझ जाती, पर तब

मेरी पूर्ण रूप से व्यवस्थित दशा में इसने कोई अन्तर नहीं डाला होता, लेकिन जिस रात यह सब कुछ कहा गया उसने मुझे सात अत्यन्त कष्टदायक दिनों से बचा लिया, उस दिन ये विचार अत्यन्त निर्णायक थे और अत्यन्त लाभकारी... वह सचमुच बहुत अच्छे इन्सान हैं।" लोपुख़ोव की योजना ऐसी ही थी, जिसका क्रियान्वयन रहमेतोव ने किया। मेरे अनुभूतिक्षम पाठक, अब आप समझे कि ये उदात्त कोटि के लोग कितने धूर्त हो सकते हैं। उनकी सुविख्यात अहंवादिता का क्या मूल्य? आपकी अहंवादिता से बिल्कुल ही अलग-थलग। यह पूर्ण रूप से भिन्न स्रोत से अपना आनंद ग्रहण करती है, दूसरों की अच्छी राय से इसके उच्चतम सन्तोष होता है और आप अपने कुछ अन्य प्रकार के लक्ष्यों की पूर्ति के लिए जो साज़िश या योजना बनाते हैं, उससे कुछ कम प्रयास नहीं करते ये लोग—इसीलिए आपकी घटिया, घातक साज़िशों और उनके हितैषी उच्चाशय पूर्ण उपक्रमों में यह असंगति है।"

मेरा अनुभूतिक्षम पाठक चिंघाड़ेगा: "कैसे हिम्मत की तूने यह कहने की, गुस्ताख़ पिल्ले! मैं तेरे ख़िलाफ़ शिकायत दायर करूंगा, ज़रूर करूंगा... मैं तुझे अविश्वसनीय करार कराऊंगा!"

मैं निवेदन करूंगा: "महोदय, कृपा करें मुझ पर। मैं कैसे ऐसे व्यक्ति के प्रति धृष्टता प्रदर्शित कर सकता हूं, जिसकी दिलेरी का मैं उतना ही सम्मान करता हूं, जितना कि उसके दिमाग़ का। मैं केवल यही चाहता हूं, सो भी बेशक आपकी कृपापूर्ण अनुमति से, कि आपकी बहुविज्ञापित कला में जो एक या दो ग़लत धारणायें हैं उनको स्पष्ट कर दूं। महोदय, जो परिकल्पनायें पहले प्रस्तुत की जा चुकी हैं उनके प्रतिकूल रहमेतोव को वेरा और लोपुख़ोव के सम्बन्ध में कोई फ़तवा देने के लिए कथानक में प्रविष्ट नहीं किया गया था। इसकी कोई आवश्यकता नहीं थी: उसने जो कुछ भी दलीलें अपने वक्तव्य में प्रकट रूप में दीं उनको लोपुख़ोव के विचार मन्थन द्वारा उस समय व्यक्त किया जा सकता था अथवा वेरा द्वारा दोनों के बारे में कई दिनों के अपने सोच-विचार के दौरान ऐसा किया जा सकता था। और महाशय, अब मैं आप से यह पूछना चाहूंगा उस अर्धरात्रि के समय जो वार्तालाप हुआ, उसका विवरण प्रस्तुत ही क्यों किया गया? क्या आप नहीं मानते कि

अगर मैंने कुछ संकल्पनाओं को अपने अभागे दम्पत्ति के विचार मंथन में प्रस्तुत न करके संवाद के रूप में प्रस्तुत करने का चयन किया होता तो वह स्वरूप भी अपनी विषयवस्तु से अधिक नहीं तो कम महत्त्वपूर्ण हरगिज़ नहीं हुआ होता? क्यों हुआ होता वैसा? इसीलिए कि यह वेरा को रहमेतोव के विरुद्ध प्रस्तुत करता है—समझे जनाब आप? नहीं समझे? है न! कुशाग्र बुद्धि नहीं, हम हैं न? चलिये, छोड़िये, लेकिन अगर मुझसे ही जानना-समझना चाहते हैं तो जान लीजिये: संवाद अन्तर्ग्रस्त मनोविज्ञान के वर्णन के लिए प्राय: प्रभावक साधन होता है। समझ रहे हैं न आप? सम्बन्धित प्रसंग से पहले आप वेरा को पर्याप्त रूप से जानते थे अथवा नहीं? बताइये न, अगर आपको उसके उत्तेजनशील स्वभाव और चुटकियां लेनेवाले आचरण के बारे में उसकी अच्छी ख़ुराक और शेरी का गिलास पी लेने के प्रति कोई परहेज़ न होने के बारे में पहले बता दिया गया होता, यदि वार्तालाप से हमारी नायिका के चित्रण में कुछ इज़ाफ़ा न हुआ तो फिर विवाद का मुद्दा ही क्या रहता? सोचिये: दो जनों ने भाग लिया, वेरा और रहमेतोव ने, वेरा का चरित्र हम जानते हैं, इसलिए उस सब प्रसंग का सम्बन्ध है..."

"रहमेतोव से!" मेरा अनुभूतिक्षम पाठक तत्काल यही कह उठेगा।

"बहुत अच्छे! लेकिन अगर आप इतने... इतने अधिक अनुभूतिक्षम न होते तो मैं... हरगिज़ ही आपको उतना पसन्द न करता। आप समझ ही रहे होंगे अब, हमने आपके मूल अनुभव को उलट दिया है। समझ लीजिये, रहमेतोव संवाद का कारण नहीं था, बल्कि संवाद का संयोजन एकमात्र और विशेष रूप से इसलिए किया गया था, ताकि रहमेतोव के चरित्र पर प्रकाश डाला जा सके। यथा, पता चला कि मात्र चाय पीनेवाले के मन में भी शेरी की लालसा छिपी हुई थी, "चिड़चिड़ा राक्षस" भी यदि खुशनुमा सोहबत में हो तो, अपनी उदासी और निरन्तर सालते दुख को भूल सकता है, मज़ेदार और हाज़िरजवाबी से परिपूर्ण बातें कर सकता है, भले ही यह मौक़ा कभी-कभी मिले, क्योंकि राक्षस स्वयं ही इस खेद का साक्षी है, जिस पर परिस्थिति और अच्छे बने रहने की चाह ने चिड़चिड़ाहट थोप दी है, अन्यथा वह जिसे गीत और नृत्य,

खेलकूद और हंसी-मज़ाक़ के लिए पूरे के पूरे दिन के लिए उतार फेंक सकता है।"

महाशय, क्या आप यह अन्ततः समझ चुके हैं, कि रहमेतोव के बारे में पन्ने के पन्ने प्रत्यक्ष वर्णन में और उससे भी अधिक पन्ने अप्रत्यक्ष वर्णन करने में भरे जाने के बावजूद वह कथानक का पात्र नहीं है, निश्चित रूप से नहीं है? तो फिर क्यों इतना अधिक कष्ट उठाया गया? आपको स्मरण होगा कि मैं पहले यह कह चुका हूं कि इसका सम्बन्ध प्रथम सुरुचिसम्पन्न आदेश से था। क्या अब आप उसे मेरे लिए परिभाषित कर सकते हैं? और उसमें रहमेतोव का कार्य क्या था? नहीं, बेशक नहीं। तो फिर मेरी बात ज़रा ध्यान से सुनिये। अथवा, छोड़िये उस बात को, आप तो निरे मन्द-बुद्धि हैं, पीछा छुड़ा लिया जाय वही बेहतर होगा—मैंने आपके साथ खूब जी भर के खिलवाड़ कर लिया और अब मैं गंभीरतापूर्वक आपके साथ नहीं, मगर पब्लिक के साथ बातचीत करूंगा।

इसलिए पहले सुरुचि-सम्पन्न आदेश का तक़ाज़ा है पात्रों व विषयों को पाठकों के समक्ष उनके यथार्थस्वरूप में प्रस्तुत किया जाय। उदाहरण के लिए, किसी भवन का चित्रण करते समय मुझे यह ध्यान रखना चाहिये कि मेरा पाठक उसी वर्णित विशिष्ट भवन की परिकल्पना करे, किसी अन्य झोंपडी अथवा प्रासाद की नहीं। इसी प्रकार औसत मानव के चित्रण में यही आवश्यक है कि पाठक उसे न तो नाटा न भीमकाय देखे।

मेरा उद्देश्य नयी पीढ़ी के औसत, भले लोगों को, उस कोटि के लोगों को प्रस्तुत करना था, जिनका साबिक़ा सैकड़ों में मुझे पड़ा है। मैंने उनमें से तीन को चुना: वेरा, लोपुख़ोव और किरसानोव। मेरे विचार से ये लोग औसत हैं—अपने और अपने मित्रों के विचार से भी वे औसत ही हैं—किसी न किसी रूप में औसत। क्या मैंने कभी किसी अन्य रूप में उनको दर्शाया है? अथवा इसके प्रतिकूल कोई विवरण दिया है? उनका चित्रण स्नेहपूर्वक और सम्मानपूर्वक किया गया है। उसी तरह जो कि अच्छे लोगों की मर्यादा के उपयुक्त है। लेकिन मैंने कहीं भी उनकी बेजा तारीफ़ नहीं की है। मैं आपको चुनौती देता हूं कि आप बतायें कि उनमें कहीं भी सर्वशक्तिमान और सर्वोत्कृष्टता की ज़रा-सी भी झलक दिखायी पड़ती हो, तो मैं इन

आदर्शों को अलंघ्य मानता हूं। आप उन्हें वैसा ही देख पा रहे हैं, जैसे कि मैंने उन्हें जीवन में देखा है: न इससे कुछ अधिक और न कुछ कम, पिष्टपेषण के आरोप को स्वीकारते हुए यही कहूंगा कि वे नयी पीढ़ी के औसत भले लोगों से अधिक कुछ नहीं हैं। उनके शौर्यपूर्ण कारनामें क्या हैं? वे न तो किसी व्यक्ति की पीठ में छुरा घोपेंगे और न ही उसके सामने खीसें निपोरेंगे, बल्कि अपने औसत, सम्माननीय आस्थाओं के अनुसार आचरण करेंगे—मैं आपको विश्वास दिलाऊं कि यह अपने आपमें कोई कम कारनामा नहीं है। मैं आपके समक्ष औसत लोग प्रस्तुत करना चाहता था, जो अपने तरह की औसत ज़िन्दगी जी रहे हैं और मुझे आशा है कि मैं इसमें सफल हुआ हूं। मेरे ऐसे पाठक जो इन पात्रों के सजीव रूप से परिचित हैं, इस कथा के प्रारंभ में ही जान गये होंगे कि इसके नायक और नायिका आदर्श रूप की कोर भी नहीं छूते और न ही औसत की कोटि से ही कुछ अधिक हैं, जिसके प्रत्येक प्रतिनिधि को दो-तीन या इससे अधिक ऐसे अनुभव हुए हों और जो प्रत्येक प्रसंग में इनसे कुछ बेहतर सिद्ध हुए हों। मान लीजिये इन पृष्ठों में जिनका इतिवृत्त आया है, उनका प्रतिरूप कोई न भी हो, इनमें तो कोई भली बात नहीं कि सभी सभ्य विवाहों में व्याघात पड़े ही, प्रत्येक भली स्त्री अपने पति के सबसे अच्छे दोस्त के प्रेमपाश में उन्मादग्रस्त हो जाय, प्रत्येक भला व्यक्ति, किसी दूसरे व्यक्ति की पत्नी को भावातिरेक में चाहे, और याद रखें कि पूरे तीन साल तक संघर्ष करे और प्रत्येक भला पति किसी नदी के पुल पर अपने को गोली मार ले अथवा (अपने प्यारे अनुभूतिक्षम पाठक के शब्दों में) अपने होटल के कमरे से लापता हो जाय। और इसके विपरीत, न ही हर भला व्यक्ति यह समझेगा कि वह अपने को, इस प्रकार के असमंजस में उनका अनुसरण करके अनेकानेक अन्य और अनगिनत असमंजसपूर्ण स्थितियों में ऐसा ही करके अपने को उदात्त कहे। वह तो यही कहेगा कि मैं तो औसत ईमानदार व्यक्ति के समान हूं, उसके घनिष्ठ मित्र भी यही कहेंगे (उसी के जैसे लोग और बिलकुल वैसे ही जो उसके अन्तरंग हो सकते हैं), यद्यपि कोई भी उसकी प्रशंसा करने की इसलिए नहीं सोचेगा कि वह उनमें से किसी से बेहतर है। और मैं, आपका लेखक, आशा करता हूं कि नयी और

भली पीढ़ी मेरे तीन केन्द्रीय पात्रों में अपनी अंतरंग मण्डली का विशिष्टीकृत चित्रण देख पायेगी।

ऐसे लोग, जो आरंभिक पृष्ठों में ही वेरा, लोपुखोव व किरसानोव से सुपरिचित मित्रों के रूप में "हमारी ही तरह के सीधे-सादे और साधारण व्यक्तियों के रूप में" मिल चुके हैं अभी भी बहुत कम हैं। पाठक वर्ग में से अधिकांश यह पहचान पाने में अभी भी पिछड़े हुए हैं। झोंपड़ियों को ही देखते रहनेवाला व्यक्ति, सामान्य भवन का चित्र देखकर उसे प्रासाद ही समझ बैठेगा। कलाकार उसके मन में दूसरी भावना भर भी कैसे सकता है? कम से कम, कोने में वास्तविक प्रासाद का चित्र खींचकर वह आयाम में दोनों का भेद स्पष्ट कर सकता है और सिद्ध कर सकता है कि पहली संरचना साधारण-सा भवन है, उससे अधिक कुछ नहीं। और शायद कुछ बदतर ही, जिसे सभी अपना कहते हैं। रहमेतोव के बिना, मेरे अधिकांश पाठकों ने मेरे तीन केन्द्रीय पात्रों को ग़लत रूप में समझ लिया होता। इसीलिए मैं तो इस पर शर्त लगाने के लिए तैयार हूं कि अधिकांश पाठक इस भाग के अंतिम पृष्ठों तक मानते थे उन तीनों पात्रों को उच्चतर इंसानों के रूप में, अनुकरणीय और शायद इस रूप में भी कि वे तो हरगिज़ हाड़-मांस से बने नहीं हो सकते। नहीं, मेरे मित्रो, मेरे औसत और दयनीय मित्रो, आप भ्रान्ति के शिकार हो गये हैं: वे इतने ऊंचे नहीं, बल्कि आप उनसे कहीं नीचे हैं। अब आप उन्हें धरती पर भली-भांति टिके और अपनी रद्दी कल्पना के सहारे उत्पन्न ऊंचे आकाश में उड़ते न देखें, इस स्तर को सभी प्राप्त कर सकते हैं और करना ही चाहिये। कोई ऐसा शिखर नहीं कि जिस पर पहुंचा न जा सके; जिस पर केवल श्रेष्ठ ही आसीन हो सकता हो। आपने अभी केवल उसकी हलकी-सी झलक भर देखी है और उसके बारे में ग़लत धारणा बना ली है। जिन पात्रों को पूर्ण रूप से प्रकट कर दिया गया है, उनकी बराबरी कर सकते हैं आप, यदि आप उन जैसा बनने की कोशिश करें। उनसे नीचे रहेंगे, तो नीचे ही रहेंगे। अरे मेरे अभागे मित्रो, अपने पंक से उबरो, दिन के उजाले में आओ, प्राप्त स्वतंत्रता से खुश होओ, यह सहज है, अत्यन्त सम्मोहक है, बस कोशिश करके देखने की ज़रूरत है। देखो और सोचो और ऐसी पुस्तकें पढ़ो जो शुद्ध

आनंद, सदगुण और सुख की चर्चा करती हैं। हृदय को अह्लादित करने के लिए पुस्तकें, प्रेरणा के लिए दृश्यावलि और ओजस के लिए विचार—बस यही तो है सब कुछ! बलिदान नहीं, वंचन नहीं बस सुख की प्यास। किसके लिए काम करेंगे स्वयं अपनी इच्छा-शक्ति से। हे भगवान, पूर्ण रूप से विकसित मनुष्य के लिए कितने अकथनीय आनंद उपलब्ध हैं! जिसे कोई दूसरा बलिदान, हानि मानेगा, वह तो उसे भी ऐसे ही आनंद की तरह ग्रहण करेगा। उसका हृदय तो अपार उमड़ते आनंद को समेट लेने के लिए पूर्ण रूप से खुला है। बस, कोशिश करके तो देखो!

चौथा अध्याय

दूसरा विवाह

1

बर्लिन, 20 जुलाई 1856

"परम आदरणीय वेरा पावलोव्ना,

"स्वर्गीय द्मीत्री सेर्गेइच से अपनी घनिष्ठ पहचान के बलबूते पर ही मुझे यह आशा है कि आप मुझे अपने अज्ञात किन्तु आग्रही प्रशंसकों में स्थान देने का कष्ट करेंगी। बहरहाल मैं ऐसा सोचने की धृष्टता कर रहा हूं कि स्वर्गवासी के ही एकमात्र अनुरोध पर आपको मेरा यह पत्र लिखना ढिठाई नहीं लगेगा। इस पत्र में ऐसी सूचना के सिवा और कुछ नहीं, जिसे आप अकाट्य रूप से प्रामाणिक मानें, मानो ये उन्हीं के विचार हों, उन्हीं के शब्दों में व्यक्त, बस माध्यम केवल मेरे जैसा तुच्छ व्यक्ति है। इस पत्र का उद्देश्य, जिस विषय का सम्प्रेषण करना है, वह उन्हीं के शब्दों में उन्हीं का दृष्टिकोण है।

"'उस प्रकार से जिसने मेरे प्रियजनों को इतना किंकर्त्तव्य-विमूढ़ कर दिया (पूर्व वचनानुसार सटीक रूप से द्मीत्री सेर्गेइच के अपने विवरण से उद्धृत) पूर्ववर्त्ती इरादे के बारे में मंथन काफ़ी अरसे से चल रहा था, और अंतिम स्वरूप धारण करने से पहले उसमें कई संशोधन किये जा चुके थे। निर्णयात्मक स्थिति की ओर मेरा ध्यान अत्यन्त अप्रत्याशित रूप से गया, जब, केवल तभी जब उसने (तात्पर्य आपसे ही है, मदाम) उस भयंकर दुःस्वप्न से आतंकित

होकर मुझे वह बताया। मुझे यह अत्यन्त महत्त्वपूर्ण लगा। उसकी भावात्मक अवस्था के बारे में अनासक्त दृष्टिकोण के फलस्वरूप मैंने तत्काल ही यह निर्णय कर लिया कि वह हमारे सम्बन्धों पर कमोबेश स्थायी प्रभाव डालनेवाले किसी मोड़ पर आ पहुंची है। तथापि, हम लोगों की प्रवृत्ति होती है कि जब तक अपरिहार्य न हो जाय तब तक यथास्थिति बनाये रखी जाय; हमारे स्वभाव में संकीर्णता के तत्व इतने गहरे पैठे होते हैं न। हम में से कोई, तब तक अपनी जगह से नहीं हटता, जब तक कि उसे बलपूर्वक हटा न दिया जाय। मेरा विश्वास है, यही मेरी इस मूल प्रवृत्ति के लिए उत्तरदायी है कि मैंने यह मान लेना उचित समझा, और मान भी लिया कि यह दौर गुज़र जायेगा और हमारे सम्बन्ध ठीक-ठाक चलते रहेंगे। उसने भी यही प्रस्ताव रखा कि इस अन्तराल को झटकने के लिए वह और भी घनिष्ठ रूप से मुझसे ही जुड़ी रही। इस प्रयास में संलग्न, मैं कई दिनों तक उसकी आशा की पूर्ति की असंभवता की ओर से बेख़बर बना रहा। लेकिन, समय ने मुझे इसके विपरीत विश्वास दिलाया। क्योंकि कारण तो मेरे स्वभाव में ही निबद्ध था।

"'इसे किसी भी रूप में आत्म-प्रताड़ना न माना जाय। मैं तो बस अपने को ऐसा ही मानता हूं।

"'जो व्यक्ति अपने मन के मुताबिक़ जीवन-यापन करना चाहता है, उसका समय तीन भागों में विभाजित होता है: श्रम, विलास और अवकाश अथवा मनोरंजन। विलास से भी तो राहत चाहिये और वह भी श्रम से किसी भी रूप में कम अपेक्षा नहीं करता है। दोनों ही स्थितियों में सार्वभौमिक मानव तत्व उससे कहीं अधिक होता है, जो कि व्यक्ति से सम्बन्धित होता है: श्रम में हम बाह्य विवेकसंगत आवश्यकताओं के सुनिश्चित प्रभाव के अन्तर्गत सक्रिय होते हैं, विलास में मानव प्रकृति की अन्य आम आवश्यकताओं के अन्तर्गत अवकाश के समय व्यक्ति इस उत्तेजना और फलस्वरूप अशक्त करने देनेवाली अवस्थाओं में व्यय ऊर्जा को पुनरुज्जीवित करता है, अवकाश उसका अपना क्षण होता है, स्वअस्तित्व को और अपनी विरल आवश्यकताओं को अक्षुण्ण बनाये रखने का अवसर होता है। श्रम और विलास उसको ऐसी एकल विराट शक्ति की ओर आकर्षित करते हैं, जो व्यक्तिगत से परे, पहली स्थिति में स्वहित और दूसरी में सामान्य

शारीरिक आवश्यकता के रूप में सम्प्रेषित होती है। ऐसी स्थिति में अवकाश बिल्कुल पृथक होता है। व्यक्तिगत विशेषताओं को नि:स्पंद करनेवाली सार्विक शक्ति के मुक़ाबले में यह अपने आप में सर्वोच्च व्यक्तिगत सक्रिया है। व्यक्ति इतना अद्भुत और किसी भी स्थिति में नहीं होता जितना कि मनोरंजन के बारे में अपने चयन की दशा में। इसी में उसका स्वभाव और चरित्र सर्वाधिक प्रकट होते हैं।

"'दो प्रमुख श्रेणियों का आविर्भाव होता है: पहली श्रेणी में, दूसरों की संगति में मनोरंजन को प्राथमिकता दी जाती है। यद्यपि एकांत की सभी को आवश्यकता होती है, मगर पहली श्रेणी के लोगों में एकाकीपन सामाजिक संसर्ग के नियम का अपवाद होता है। इस श्रेणी की संख्या दूसरी की तुलना में कहीं अधिक है। दूसरों के लिए अधिक एकांत की आवश्यकता होती है, तभी वे अधिक मुक्त महसूस करते हैं। आम लोगों की भाषा में यह विभाजन मिलनसार व्यक्ति और एकान्तवासी के रूप में प्रतिष्ठापित है। मैं एकांतवासी हूं और वह मिलनसार। इसी से हमारे सम्बन्धों की पहेली की संक्षिप्त व्याख्या हो जाती है। मेरा मानना है दोनों में से किसी की भी ओर से कोई दोष नहीं और न ही इस तथ्य में कि दोनों में से किसी में भी इतनी शक्ति नहीं थी कि वे अन्तत: स्वाभाविक और फलस्वरूप अलंघ्य विभाजक रेखा को लांघ पाते।

"'प्रत्येक वर्ग दूसरे को समझ पाने में कठिनाई का अनुभव करता है। प्रत्येक यही मान लेता है कि सब लोगों का स्वभाव उसके अपने जैसा ही होता है: जिसकी मुझे आवश्यकता नहीं, उसकी किसी और को भी नहीं है—व्यक्तिकता का मधुर स्वर यही राग अलापता है और केवल अत्यन्त कटुतापूर्वक कही गयी चेतावनी ही उस पर क़ाबू पा सकती है। इसके विपरीत मुझे जिससे सहजता और मुक्ति प्राप्त होती है, वही मुझे शेष विश्व के लिए भी निश्चित रूप से करनी चाहिये। अहंकार इतना सहज होता है कि समय रहते अपने स्वभावगत अन्तर को न समझ पाने के लिए यह बहाना हो सकता है। प्रतिकूल प्रभाव के लिए वह अतिरंजित सम्मान की भावना भी उत्तरदायी थी, जो वह हमारे विवाह के बाद के आरंभिक दिनों में मेरे लिए महसूस करती थी। उस समय हम लोगों में समानता का अभाव था: मेरे रहन-सहन के ढंग को वह अनुकरणीय मानती थी,

का प्रतिमान और ऐसा प्रतिमान, जिसमें अपने को तल्लीन कर दे। तीसरा और अत्यन्त शक्तिशाली कारण भी है।

"'अविकसित व्यक्ति आंतरिक जीवन के महत्त्व को कम समझते हैं। इस पर नाते-रिश्तेदार निरन्तर धावा बोलते रहते हैं, विशेष रूप से अपने से बड़े। बात यह नहीं कि किसी गोपनीयता का अतिलंघन होता है—विशेष मूल्य से अधिक की सम्पदा साधारणतया भली-भांति छिपाके रखी जाती है, पर पहली बात तो यह कि ऐसी सम्पदा हरेक के पास नहीं, और बहुत लोगों को अपने नाते-रिश्तेदारों से छिपाने के लिए है भी कुछ नहीं। हम सभी अपने विचारों के ऐसे कक्ष की कामना करते ही रहते हैं, जो हमारा अपना कक्ष हो। अविकसित लोग इन दोनों का ही अतिलंघन करते हैं: आपका कक्ष, यह मान लें कि आपका ऐसा कोई कक्ष है, न जाने कितने दखलंदाजों का शिकार होता है, जिनकी मंशा परेशान करना अथवा भेद जानना नहीं होता, वे यह सपने में भी नहीं सोचते कि वे इस आचरण से आपकी शांति भंग भी कर सकते हैं। न जाने कहां से आ टपकते हैं। उनका विश्वास यही होता है कि अगर टपक पड़ने को बिल्कुल ही पसन्द नहीं किया, तभी वह खीझ का कारण हो सकता है, उन्हें तो इसका भान भी नहीं होता कि वे असुविधा उत्पन्न कर रहे हैं और अपने मित्र पर बोझ बन रहे हैं। दहलीज़ की पवित्रता का किसी अनिमंत्रित द्वारा उल्लंघन को बरजने का मान्य अधिकार केवल परिवार के मुखिया को ही है, वही और केवल वही किसी भी उल्लंघन कर्त्ता को जो उसकी शांति भंग कर रहा हो निकाल बाहर कर सकता है जबकि शेष सब जन को घुसपैठियों को झेलना ही पड़ता है। यही बात अभ्यान्तरिक कक्ष के लिए भी सही है। इसको भी कोई भी अपवित्र कर सकता है, जो अनावश्यक रूप से और बिना कोई ध्यान दिये और बहुधा केवल कुछ बकबक ही के लिए पधार जाय। किसी युवती के पास रोज़मर्रा पहनने के लिए दो पोशाकें हों, एक सफ़ेद और दूसरी गुलाबी, और वह गुलाबी पहन ले तो तत्काल ही डांट-फटकार का निशाना बन सकती है। 'तुमने आज गुलाबी पोशाक पहन ली है, क्यों भला?' युवती को तो ज़रा-सा भी भान नहीं इसका कोई-सी पहन ले दोनों में से, अगर वह दूसरी पहन ले, तो

परिणाम वही होगा। 'पता नहीं, मां (अथवा 'प्यारी बहन', जिसने भी यह सवाल किया हो)।'—'आज सफ़ेद पहनती तो अच्छा होता।' क्यों, मां और प्यारी बहन, दोनों में से किसी को भी इसका कारण खुद भी नहीं मालूम, लेकिन कुछ न कुछ तो कहना ही है। 'आज कुछ उदास हो क्या?' युवती न उदास है और न खुश, कुछ भी तो नहीं, बस रोज जैसी ही है, फिर भी कुछ न कुछ तो बोलना-बतियाना है ही। 'मुझे नहीं मालूम, लेकिन ठीक ही हूं शायद।'—'लेकिन दिखती तो नहीं हो।' और दो ही मिनट बाद: 'प्यानो पर कोई धुन ही बजाकर सुना दे न।' क्यों, यह किसी को नहीं मालूम। बस यही कुछ सुबह, दोपहर और शाम तक चलता रहता है। आपकी आत्मा सड़क जैसी है, जिसे खिड़की के पास बैठा कोई भी नज़रें डाल सकता है। किसी ज़रूरत या मात्र कौतूहल के लिए नहीं बल्कि किसी अन्य बेहतर काम के अभाव में: यदि इससे कोई नुकसान नहीं होता, तो फिर क्या हर्ज है करने में? सड़क को तो कोई फ़र्क़ नहीं पड़ता, लेकिन जहां तक आत्मा का सम्बन्ध है, यह निश्चय ही अत्यन्त क्षुब्ध करनेवाली बात है।

"'निरर्थक, निष्प्रयोजन आन्तरिक हस्तक्षेप का अपना स्वाभाविक प्रभाव होता है: किसी व्यक्ति को सहसा एकान्त मिल जाय तो वह कुछ समय तो प्रमुदित रहेगा, उसकी प्रकृति चाहे जितनी मिलनसारी की क्यों न हो।

"'विवाह से पहले उसकी स्थिति असाधारण रूप से विषम थी: उसे केवल निष्प्रयोजन, लापरवाही से अथवा अत्यन्त रूखे ढंग से ही तंग और परेशान ही नहीं किया जाता था बल्कि इससे भी बदतर, दिन के प्रति पल अनवरत और बाक़ायदे भोंडे तरीक़े से बेशर्मी, बेरहमी से गंदी-गंदी गालियों के साथ अंगुलियों से कोंचा जाता था। और उसकी प्रतिक्रिया समानुपातिक होती थी।

"'इसलिए, मेरे बारे में निर्णय लेते समय अधिक कठोरता नहीं बरती जानी चाहिये। कई महीनों तक और शायद एक साल तक मेरा यह मानना बिल्कुल ही सही था कि वह एकान्त चाहती थी और उसमें रस भी लेती थी। उसी दौरान उसके बारे में मेरी धारणा का निर्माण हुआ। उसकी तीव्र यद्यपि अस्थायी आवश्यकता मेरी अपनी स्थायी आवश्यकता के अनुकूल थी। इसलिए इसमें आश्चर्य

गया कि मैंने चरित्र की अस्थायी विशेषता को स्थायी मान लिया। हम सब लोगों का यही तो स्वभाव है कि हम दूसरों को भी अपने ही मानक से मापते हैं!

"'फिर भी, मैं ग़लत था, काफ़ी हद तक ग़लत। आत्म-दोषारोपण को जाने दें, मैं अपनी सफ़ाई में कुछ शब्द कहना चाहूंगा, क्योंकि मुझे सन्देह है, कि दूसरे निर्णायक मेरी तुलना में कुछ कम ही नरम होंगे। मैं अपनी दलील अपने चरित्र के उस पक्ष के बारे में विस्तृत विवरण के साथ आरंभ करूंगा जो उसके तथा अधिकांश के लिए अपरिचित है और इस प्रकार उसे सहज ही ग़लत समझा जा सकता है।

"'मेरे लिए अवकाश का अर्थ है एकान्त और मात्र एकान्त। दूसरों की उपस्थिति—काम का कोई स्वरूप कार्य हो अथवा विलास। मैं जब केवल अकेला होता हूं, तभी पूरे तौर पर सहज होता हूं। इस सहज वृत्ति को हम किस प्रकार परिभाषित कर सकते हैं और इसकी जड़ों का पता लगा सकते हैं? कुछ में यह रहस्यमयता हो सकती है और दूसरों में मौन, मंथन करने की प्रवृत्ति अथवा सपाट मानव-द्वेष। मेरे विचार से इनमें से कोई भी बात मुझ पर चस्पां नहीं होती। मैं निष्कपट और निर्मल हूं, पूरे दिन हंसी-मज़ाक़ मनोरंजन के लिए प्रस्तुत, निश्चय ही गुम-सुम रहने के लिए नहीं। दूसरों का संग-साथ मुझे अच्छा लगता है, लेकिन अगर काम और आराम दोनों की बात हो अथवा दूसरे शब्दों में अगर थकने के बाद आराम करना है तो फिर बाद में एकान्त में ही ऐसा किया जा सकता है। जहां तक मैं समझ पाया हूं यह सब स्वाधीनता के अति विकसित प्रेम से ही उत्पन्न होता है।

"'सारांश यह है कि अत्यन्त दुश्वार अतीत से हटकर उसने जो स्वीकार किया वह जीवन की अस्वाभाविक शैली थी और वह उसके साथ उचित से अधिक देर तक चिपकी रही, केवल मेरे प्रति सम्मान के कारण ही। और इस समय के दौरान मैंने अस्थायी स्थिति को स्थायी स्थिति मान लिया और मैं इसको इसी प्रकार चलते रहने देने के लिए पूरी तरह तैयार था। मेरा ही दोष है, गोकि जघन्य नहीं। उसका पक्ष तो बिल्कुल निर्मल है। लेकिन उसे इसके फलस्वरूप

कितनी यंत्रणा भोगनी पड़ी और मुझे कितनी तबाहकुन क़ीमत चुकानी पड़ी!

"'जब तक उस दुःस्वप्न के प्रति उसकी भयातुर प्रतिक्रिया ने मेरी आंखें खोलीं, बहुत देर हो चुकी थी। लेकिन यदि हमने मुसीबत को और भी जल्दी ताड़ लिया होता, तो भी क्या हम निरन्तर प्रयास के बलबूते, किसी प्रकार की टिकाऊ सहमति, सौहार्द भाव अर्जित कर सकते थे? मुझे इसमें सन्देह है कि इससे कुछ भी अच्छा हो सकता था। मान लें कि हम सभी प्रकार के मनमुटाव को दूर करके पर्याप्त सामंजस्य उत्पन्न कर भी लेते। सुधार तभी अच्छी बात होती है जबकि जिन प्रवृत्तियों का सुधार किया जा रहा हो वे अशुभ हों। हमारी प्रवृत्तियों के बारे में तो किसी भी रूप में ऐसा हरगिज़ नहीं कहा जा सकता। मिलनसारी को इसके विलोम रूप से बेहतर या बदतर बनानेवाली चीज़ क्या है? हर प्रकार के सुधार का तात्पर्य है अतीत से पूरी तरह सम्बन्ध तोड़ लेना और तोड़ने की इस प्रक्रिया में क्या कुछ नहीं बिखर जाता, क्या कुछ मर नहीं जाता? संभावित लाभ ('संभावित' शब्द पर ध्यान दें) हम दोनों के लिए ही हानि के उपयुक्त नहीं था। हम केवल भीतर से ही मुरझा गये होते और हमारी मनोदशा खिन्न हो गयी होती—क्यों किसके लिए भला? कुछ कमरों में कुछ स्थान बनाये रखने के लिए? तब बात बिल्कुल कुछ और ही होती अगर हमारे बच्चे होते और उनको पहुंचनेवाली हानि के बारे में हमें सोचना पड़ता, हर क़ीमत पर उससे बचना पड़ता और यह जानकर हमें कितनी प्रसन्नता होती कि हमने, जिन्हें हम प्यार करते हैं उनके प्रति यथा-शक्ति सब कुछ सर्वोत्तम किया है—सचमुच ही यह प्रयास सार्थक कहा जाता। लेकिन हम लोगों के सन्दर्भ में इसका प्रश्न ही कहां उठता था?

"'वैसी परिस्थितियों में मैंने अत्यन्त मंगलप्रद भूल की होती और उपर्युक्त भावना में व्यवहृत 'तबाही' से हम दोनों को बचा लिया होता। इससे जो कुछ भी यातना उत्पन्न होती, हमने और भी अधिक यंत्रणा झेली होती और इसके बिना कम ही उपलब्ध किया होता।'

"द्मीत्री सेर्गेइच का विवरण यही था। उनके उस विशिष्ट पहलू पर आग्रह से उस उलझन का संकेत मिल जाता है, जो उन्हें इसके

[illegible] इतना कुछ स्वयं स्वीकार किया भी है। वह यह भी कह सकते थे: 'मैं अभी भी यह महसूस करता हूं कि मैं अपने कम उदार न्यायकारों की दृष्टि में पर्याप्त रूप से दोषमुक्त सिद्ध नहीं हुआ हूं। यद्यपि मुझे उसकी सहानुभूति का विश्वास है। वह मेरे प्रति उससे कहीं अधिक उदार भाव प्रदर्शित करेगी, जितना कि स्वयं मैंने किया है अपने प्रति। और मैं अपने आपको उस समय तक निर्दोष मानता हूं, जब तक कि दु:स्वप्न का प्रसंग नहीं उत्पन्न होता।' अब आगे उनकी उन भावनाओं और इरादों का उल्लेख है, जो उस रहस्योद्घाटन के बाद जन्मे।

"(फिर प्रत्यक्ष उद्धरण से आरंभ करूं), 'जैसा कि मैं कह चुका हूं उस भयंकर सपने के बारे में उसके पहले उल्लेख से मुझे विश्वास हो गया कि हमारे सम्बन्धों में अब कोई न कोई परिवर्तन अवश्य आयेगा। मुझे पूर्ण आशा थी कि यह परिवर्तन प्रचण्ड होगा, क्योंकि उसका स्वभाव उग्र है और दीर्घकाल तक मन में बात दबाये रहने का असन्तोष भयंकर होगा। तथापि, मैं यह उम्मीद किये रहा कि मेरे लिए यह कम से कम कठोर स्वरूप धारण करेगा। यह मैं जानता था कि वह किसी अन्य व्यक्ति के प्रेमपाश में पड़ेगी और एक या दो वर्ष बाद फिर मेरे पास वापस लौट आयेगी, क्योंकि मैं पर्याप्त विरल कोटि का भला इंसान हूं (मैं मिथ्या संकोच नहीं करूंगा)। तुष्ट अनुराग में वेग नहीं रह जाता: उसे यह मालूम पड़ जायेगा कि मेरे साथ जीवन केवल एक ही दृष्टि से खाली है। मेरे साथ जीवन में अधिक स्वतंत्रता तथा अन्य सभी दृष्टियों से अधिक अवसर हैं, और फिर हम अपने उसी पुराने ढर्रे का जीवन जीने लगेंगे, मैं अधिक ध्यान देनेवाला और वह अधिक गुणग्राही और हमारी मित्रता इस अनुभव के फलस्वरूप और भी अधिक सुदृढ़ हो जायेगी।

"'काश कि ऐसा हो जाता, (अब मैं संवेदनशील किन्तु अनिवार्य विषय का उल्लेख करता हूं) इस संभावित पुनर्मिलन के बारे में मेरी भावनायें क्या थीं? हर्षातिरेक? यह कोई कहने की बात है भला। और कुछ नहीं, बस केवल हर्षातिरेक ही? निस्संदेह, मैं अत्यन्त अनुकूल उत्तरदायित्व के भार को सहने की भावना महसूस कर रहा था, निस्संदेह यही थी मनोभावना। मैं उसे अत्यन्त हार्दिक रूप

से प्रेम करता था, मैं उसके लिए खुशी-खुशी कुछ भी कर सकता था, लेकिन इससे प्रचुर पीड़ा तो होती ही। मैंने सम्यक् सोच-विचार के बाद यही कुछ कहा अपने से। और मुझे यह सिद्ध करने का अवसर भी मिला, जब उसने मुझसे अपना प्रेम बनाये रखने के लिए संघर्ष करने को कहा। शिष्ट-सौजन्यता का वह महीना मेरे जीवन का कठोरतम था। यह बात नहीं कि मैंने यातना झेली—यह शब्द इतने शुद्ध आह्लादपूर्ण प्रयास के संदर्भ में निरर्थक नहीं तो अनुपयुक्त तो है ही—लेकिन मैं उचाट हो गया था। और इसी में—उचाटपन में मुझे प्रेम करते रहने में उसकी असफलता का रहस्य छिपा है।

"'सुनने में यह कुछ अजीब ही लगेगा: पहले तो मैंने अपने विद्यार्थियों को इतनी पीड़ारहित शामें सुलभ कीं, जिनके लिए मैंने अन्यथा कुछ भी न किया होता। मैं ऐसा निर्जीव-सा हो गया था उन कुछ अभागी शामों के कारण, जिन्हें मैंने उस स्त्री के साथ बिताया था, जिसे मैं अपनी जान से भी ज़्यादा चाहता था—मैं क्यों खुशी-खुशी उसके लिए यातना झेलूं, यहां तक कि मौत भी। विचित्र लगता है न, बिल्कुल ठीक, लेकिन तब नहीं लगेगा, यदि पुराने सम्बन्ध की सच्ची प्रकृति को समझ लिया जाय। पहली बात तो यह कि इसमें व्यक्तिगत कुछ भी नहीं था: वे मुझे बौद्धिक विनिमय में अमूर्त्त कोटि के रूप में प्रभावित करते थे, जो कि मेरे अपने व्यक्तिगत विचारों से कुछ कम ही भिन्न थे। मेरा एक अंग ही तो लिप्त था इसमें और यह ऐसा अंग है, जो सबसे कम थकता है—दिमाग़। बाक़ी के अंग सुप्त रहे। और इससे भी अधिक महत्त्वपूर्ण बात यह है कि वाद-विवाद मेरे तरुण मित्रों के बौद्धिक, नैतिक एवं गत्यात्मक विकास का संवर्द्धन करने में उपयोगी सिद्ध होते थे। यह प्रयास था, किन्तु पर्याप्त सरल जो दूसरों पर व्यय ऊर्जा को पुनर्जीवित कर देता था। सरल और स्फूर्तिदायक श्रम जैसा, जो विश्राम के अधिक सामान्य स्वरूपों की आवश्यकता ही समाप्त कर देता था। उद्देश्य तो काम करना था, आराम करना नहीं। अपने अस्तित्व के सभी रूपों को मैं सोने देता, बस विचार करना इसका अपवाद होता, जो शुद्ध रूप से इस प्रकार के निरवैयक्तिक वार्तालाप में उसी प्रकार निर्द्वन्द्व होता, जैसा कि एकान्त में। कहने का तात्पर्य

... से बाहर नहीं निकलता था। इस प्रकार' के सम्बन्ध उन जैसे बिल्कुल नहीं होते; जो किसी अनन्य सहभागिता की अपेक्षा करते हैं।

"'मुझे पता है उचाटपन अस्पष्ट शब्द है। तो भी मैं सच्चे मन से इसकी अवहेलना नहीं कर सकता। मैं उसे जितना प्यार करता था, उसी के बलबूते मुझे यह जानकर राहत मिली कि हम अपने पिछले सुखकर समय को फिर नहीं लौटा सकते। इस समझ के साथ ही साथ यह बात मेरे पल्ले नहीं पड़ सकी कि वह कैसे इस दिशा में प्रयास करेगी। तभी भविष्य का प्रवाह नूतनतर और उज्ज्वलतर प्रकाश की दिशा में अग्रसर हुआ। यह समझकर हमारे सम्बन्ध बिखर चुके हैं, फिर संदिग्ध अभिव्यक्ति का सहारा लूं—मैं इस कष्टदायक स्थिति से जल्द से जल्द छुटकारा पाने की तलाश में जुट गया। अन्ध कृतज्ञता अथवा उस अज्ञान से उत्पन्न 'उदारता' का यही कारण है, जो अत्यन्त दूरस्थ संदर्भ के फलस्वरूप जन्म लेता है। मिथ्या शालीनता के कारण यद्यपि मैं इससे इनकार नहीं करूंगा कि मैं उसके प्रति दयालुता प्रदर्शित करना चाहता था। लेकिन यह तो क्षीण अभिप्राय था—पर्याप्त शक्तिशाली किन्तु निपट उबाऊपन से पिंड छुड़ाने के प्रधान उद्देश्य से कहीं अधिक निर्बल। और किसी कारण से नहीं, बल्कि इसी से मैं उसकी जीवन-शैली पर विचार करने लगा। कड़ी जांच-पड़ताल से पता चला कि इसमें हुए परिवर्तन और उसके फलस्वरूप उत्पन्न भावनात्मक ज्वार अलेक्सान्दर के आगमन और पलायन के इर्द-गिर्द घूमता है। इस प्रकार वह मेरी रुचि का दूसरा केन्द्र बन गया। जिस विचित्र व्यवहार की मैंने कभी उपेक्षा कर दी थी, अब मुझे अर्थपूर्ण लगा और जैसा कि मैं पहले कह चुका हूं, भविष्य तदनुरूप खुशनुमा हो उठा। अब मैंने यह जान लिया कि वह न केवल अनुराग के लिए तड़पती है, बल्कि अब तक अनजाने ही अपने प्रेम का उपादान भी ढूंढ़ चुकी है, जो पूर्ण रूप से मेरा स्थान ग्रहण करने में सक्षम है और इसके अलावा ऐसा है, जिसमें संभावना व्याप्त है—तो फिर क्या कहने, मैं परम आनंद से विह्वल हो गया। सच है कि पहले पीड़ा हुई, किसी भी ऐसे बलात् परिवर्तन की स्थिति का आवश्यक अंग है यह, अब मुझे यह स्वीकार करना पड़ा कि अब उसे मेरी ज़रूरत नहीं, क्योंकि मेरा

उपयोग समाप्त हो चुका था और, यदि मैं बिल्कुल दो-टूक शब्दों में कहूं तो, यह सोचकर बिल्कुल सन्तुष्ट था। पीड़ा रही तो लेकिन थोड़े ही समय और फिर मैं उसके सुखी भविष्य के प्रति आश्वस्त हो गया—इस सब में महान आनंद तो था, लेकिन महानतम हरगिज़ नहीं: इसमें भी हर कहीं की तरह स्वहित प्रधान था और मैं अपनी नव्य प्राप्त स्वतंत्रता से खुश होऊं—यह कहने का तात्पर्य बिल्कुल नहीं कि मैं अविवाहित को विवाहित व्यक्ति की तुलना में अधिक स्वतंत्र और सुखी मानता हूं, बिल्कुल नहीं: ऐसा दम्पत्ति, जो एक दूसरे का, बिना प्रयास किये ही अथवा तनिक-सा भी सोचे-विचारे बिना खुश रख सकता है, तो वह घनिष्ठतर संयोग के कारण मुक्त होता है। क्योंकि हम ऐसी भाग्यशाली कोटि में नहीं थे, इसलिए मुझे अलग होने में ही अपनी स्वतंत्रता ढूंढ़नी पड़ी।

"'अब यह स्पष्ट होगा कि उसकी प्रसन्नता के मार्ग से हट जाने तक मेरा निर्णय विशुद्ध रूप से स्वार्थपूर्ण था। किसी क्षुद्र पहलू से वह उदात्त हो सकता था, लेकिन मेरा आचरण सर्वोपरि सहज स्वहित पर आधारित था। निश्चय ही, इसी ने मुझे इतनी अच्छी तरह कार्य करने की शक्ति प्रदान की, यदि मैं कहूं कि बिना एक क्षण भी झिझके अथवा अनावश्यक बतंगड़ और दिक़्क़त के, अपना कर्त्तव्य पालन करने की शक्ति। कर्त्तव्य और प्रवृत्ति, दोनों अनुरूप हों, तब तो यह पर्याप्त आसान होता ही है।

"'मैं र्याज़ान के लिए रवाना हो गया। बाद में उसने मुझे बुलाया, यह कहा कि मेरी उपस्थिति अब क्षुब्ध करनेवाली नहीं। लेकिन मुझे विश्वास नहीं आया। दो कारण थे इसके: पहला, उसे उस अपार ऋण का स्मरण आता था, दारुण रूप से, जिसका भागी मेरे प्रति वह अपने को मानती थी और ग़लत रूप से ही, क्योंकि मैंने तो उसके हित के स्थान पर अपने हित का कहीं अधिक ध्यान रखते हुए ही क़दम उठाया था। कृतज्ञता उत्पीड़क भावना है, यदि संवेग सम्यक् नहीं है तो इसका आनंदप्रद पक्ष दब जाता है। दूसरा कारण, आस्थाओं के लिए एक बार फिर संदिग्ध अभिव्यक्ति का जोखिम उठाऊं, वह समाज द्वारा अपने पर आरोपित असामान्य स्थिति से अथवा उस स्थिति के बारे में उसके अधिकार को न माने-जाने से प्रपीड़ित थी। इस सबसे मैंने यही जाना-समझा कि मेरा सामीप्य

29—1127

उसका पीड़ा बनेगा। मैं यह दावा नहीं करूंगा कि यह प्रत्यक्ष-ज्ञान इस मामले में हुए पहले किसी आत्मबोध कहीं अधिक पीड़ादायक नहीं था। मैं अभी भी उसे बहुत पसन्द करता था और अपनी घनिष्ठ मित्रता को बनाये रखना चाहता था। जब मैंने आशा-निराशा में झूलते अन्ततः यह समझ लिया कि ऐसा होनेवाला नहीं तो मेरा हृदय विदीर्ण हो गया। स्वहित में भी कोई प्रतिदान मिलनेवाला नहीं था। मैंने यह अन्तिम निर्णय केवल स्नेह और उपकार, निस्स्वार्थता के शुद्धतम प्रयोजन से ही लिया था। एक बात और, अपने साथ बिताये समय में और मिलकर गुजारे सर्वोत्तम समय में भी अपने संकल्प में मिले सुख जैसा सुख कभी नहीं मिला था। मैंने उदारता के संवेग में ही क़दम उठाया था, जिसे अधिक उपयुक्त रूप से उदात्त भावना कह सकते हैं, जिसमें मानव प्रकृति का सामान्य नियम पूर्ण रूप से अबाध अथवा व्यक्तिगत स्वार्थ की सहायता के बिना ही कार्य करता है—मैंने यह जानकर सर्वोच्च आनन्द का भोग कर लिया था कि मैं उदात्त मानव प्राणी हूं, कोई इवान अथवा प्योत्र नहीं, कोई स्वनामधन्य नहीं बल्कि सहज, श्रेष्ठ, उदात्त मानव-प्राणी। इस प्रकार की चरम स्थिति पर औसत व्यक्ति—मैं भी शामिल हूं इसमें—केवल कल्पना में ही आसीन हो सकता है। अलबत्ता, सुखी वही है, जिसने एक बार ऐसी स्थिति प्राप्त कर ली हो।

"'मुझे यह बताने की आवश्यकता नहीं कि अगर उस व्यक्ति के स्थान पर कोई और होता, जिसके लिए मैंने अपना स्थान छोड़ा तो ऐसे क़दम उठाना निरी मूर्खता होती—ये क़दम तो इसी मामले में बिल्कुल उचित हैं। मेरे विदा होने के समय दोनों में कोई बातचीत नहीं हुई और न ही तब जब मैंने अन्तिम निर्णय लिया, उस समय भी अलेक्सान्दर अथवा मेरी पत्नी और मेरे बीच ही कोई बातचीत हुई। मैं उसे इतनी अच्छी तरह समझता था कि बिना पूछे ही मुझे मालूम था कि उसका सोच क्या था।'

"मैंने द्मीत्री सेर्गेइच का विवरण अक्षर-अक्षर शब्दशः उद्धृत कर दिया है, जैसा कि मैंने आरंभ में ही वादा किया था।

"स्वर्गीय द्मीत्री सेर्गेइच ने मुझे जो कहने-लिखने का काम सौंपा था उसका आत्मीय रूप ऐसा है कि आप इस पत्र-लेखक के बारे

में और अधिक जानना चाहेंगी, जिससे आप बिल्कुल अपरिचित हैं मगर जो स्वर्गीय के अन्तरतम विचारों से सुपरिचित है। खेद है कि मैं यह बताने के सिवा और कुछ नहीं बता सकता कि मैं पहले आयुर्विज्ञान का विद्यार्थी था। पहले मैं पीटर्सबर्ग में रहता था, लेकिन कई दिन पहले मैंने सहसा यह तय किया कि दुनिया देखने निकल पड़ूं और विदेश में कोई वृत्ति ढूंढ़ लूं। मैंने राजधानी उस दिन के अगले दिन छोड़ी, जब आपको द्मीत्री की मृत्यु की सूचना मिली। उस समय मुझसे मेरा पासपोर्ट कहीं गुम हो गया था, इसलिए मुझे दूसरा लेने पर विवश होना पड़ा, अपने जान-पहचान के एक सज्जन की कृपा से और इसके बदले में यात्रा के दौरान उनके कई काम करने का भार अपने ज़िम्मे लेना पड़ा। अगर अगली बार कहीं आपको श्रीमान रहमेतोव मिल जायें, तो उनसे कृपया कह दें कि सब कुछ उनके कहे मुताबिक़ पूरा कर दिया गया। मेरा विचार है, फ़िलहाल मैं जर्मनी और यहां के लोगों का अध्ययन-मनन करूंगा। मेरी जेब में सैकड़ों रूबल अभी हैं और मेरा मन यहां-वहां विचरण करने का है। जब इस आवारगी से मन भर जायेगा तो मैं कोई काम ढूंढ़ लूंगा। मैं पंछी के मानिन्द स्वतंत्र हूं, और पंछी जितनी ही चिन्तायें भी हैं मेरी। और यह सचमुच स्वर्ग है!

"हो सकता है कि आप इस पत्र का जवाब देना चाहेंगी। अलबत्ता मुझे यह नहीं मालूम कि एक हफ़्ते में मैं कहां होऊंगा—शायद इटली में अथवा इंगलैंड अथवा प्राग में—मैं यायावर हूं और मनमौजी और ये दोनों प्रवृत्तियां मुझे कहां ले जायेंगी किसे ख़बर। फ़िलहाल इस पते से काम चल जायेगा: बर्लिन, फ़्रीडरीख़स्त्रासे 20, फ़ौन एच० श्वाइग्लर एजेन्सी। अपना पत्र दोहरे लिफ़ाफ़े में रखें, भीतरी लिफ़ाफ़े पर '12345' अंकित कर दें, श्वाइग्लर की एजेन्सी इसे मेरे पास आगे भेज देगी।

"मदाम, कृपया इस निष्ठावान यद्यपि अज्ञात प्रशंसक की ओर से गहन सम्मान का आश्वासन स्वीकार करें, जो नाम के स्थान पर केवल यही लिखकर सन्तुष्ट है।

"आयुर्विज्ञान का भूतपूर्व विद्यार्थी।"

"अत्यन्त सम्मानित, अलेक्सान्दर मतवेइच महोदय,

स्वर्गीय द्मीत्री सेर्गेइच ने मुझे यह आदेश दिया था कि मैं आपको इस निश्चय के बारे में सूचित करूं कि आपके लिए स्थान मुक्त करना सर्वोत्तम संभाव्य समाधान है। विचाराधीन मेल-मिलाप के बढ़ने में तीन वर्ष लगे, जिनके दौरान आप अधिकांश समय उनकी संगति को त्यागे रहे, जिसका कारण आपका अपना कोई निजी प्रभाव नहीं था, बल्कि उन दो जन की असंगतता था, जिनको मिलाने की आपने बाद में कोशिश की पर असफल रहे। जो परिणाम निकला वह हर दृष्टि से अपरिहार्य था। मुझे यह बताने की शायद ज़रूरत नहीं कि द्मीत्री सेर्गेइच आपको किसी भी रूप में इस सबके लिए ज़िम्मेदार नहीं मानते थे। यह सफ़ाई उनके ही अनुरोध पर, केवल औपचारिकता के रूप में ही दी जा रही है। द्मीत्री सेर्गेइच, जिस स्थान के लिए अनुपयुक्त थे, उसे किसी को तो ग्रहण करना ही था। और वह कोई आप ही हों, ऐसा मृतक का अपना मत था, सभी दृष्टियों से उत्तम। मैं आपका अभिवादन करता हूं।

"आयुर्विज्ञान का भूतपूर्व विद्यार्थी।"

"अरे, मुझे पता है..."

कौन है यह? आवाज़ तो परिचित लगती है... मुड़के देखा तो निश्चय ही—यह तो अनुभूतिक्षम पाठक है, वही न जिसे कला के क्षेत्र में निपट अज्ञानी होने के कारण शर्मिन्दा कर दिया था। फिर नमूदार हो गया अपनी अविस्मरणीय अनुभूति क्षमता के साथ, अपने अनन्त "अरे, मुझे पता है" को लेकर...

"मुझे पता है किसने लिखा है यह..."

तभी मैं अपने प्रयोजन के लिए सुविधाजनक पहली वस्तु उठाकर पकड़ लेता हूं... नेपकिन को, क्योंकि उपरोक्त पहले पत्र को नक़ल कर लेने के तुरंत बाद ही मैं नाश्ता करने बैठ गया था, और, और उस बकवादी का मुंह बन्द कर देता हूं। "क्या हुआ जो तुम जानते हो? तो क्या तुम छत पर खड़े होकर चिल्लाकर बताओगे वह सब?"

2

पीटर्सबर्ग, 25 अगस्त 1856

"प्रिय महोदय,

"आप समझ सकते हैं कि आपका पत्र पाकर मुझे कितनी खुशी हुई। मैं तहेदिल से आपका शुक्रिया अदा करती हूं। अपने स्वर्गीय पति के इतने घनिष्ठ मित्र को अपना मित्र कहने का अधिकार मैं समझती हूं और आपसे अनुमति चाहूंगी कि आप मुझे ऐसा मानने दें। आपके प्रत्येक शब्द में द्मीत्री सेर्गेइच देदीप्यमान् हैं—वे सर्वदा अपनी आत्मा को उन अदृश्य उद्देश्यों के लिए टटोलते रहे, जो उनके योग्य होते, अपने अहंवाद के सिद्धान्त में वे असीम आनंद लेते थे। किन्तु, यह आचारण तो हमारी पूरी मण्डली की सामान्य विशेषता है और मेरे प्रिय अलेक्सान्दर इस मण्डली में शामिल हैं। काश कि आपको पता होता कि वे गत तीन वर्षों के दौरान द्मीत्री सेर्गेइच और मेरे बारे में भी अपने आचरण के बारे में किस प्रकार स्पष्टीकरण देते हैं! यह कहते सुनकर कि यह सब कुछ स्वहित था, निपट स्वार्थ था, मैं स्वयं भी कुछ समय पहले इस आदत का शिकार हो गयी थी। अलेक्सान्दर और मैं इस बारे में इतने उत्कट नहीं हैं, जितने कि द्मीत्री थे, यद्यपि हम सिद्धान्त रूप में बहुत सहमत हैं उनसे। कोई हमारी बातचीत सुने तो यही समझेगा कि दुनिया में तीन इतने बड़े अहंवादी पहले कभी नहीं हुए। शायद, सचमुच ही न हुए हों? शायद।

"हम सभी लोगों में अहंभाव सामान्य था, मगर द्मीत्री सेर्गेइच का स्पष्टीकरण अपने ही उद्देश्य से किया गया और वह भी स्पष्ट था—वे मुझे सान्त्वना देना चाहते थे। यह बात नहीं थी कि वे निष्कपट नहीं थे—वे कभी एक शब्द भी ऐसा नहीं कहते थे जो सच न हो—लेकिन वे सच के उस पहलू पर अतिरिक्त बल देते थे, जिससे अनुमान से सान्त्वना मिलती। मेरे मित्र, मैं उनके इस प्रयास के लिए अत्यन्त कृतज्ञ हूं लेकिन मैं स्वयं अहंवादी हूं इसलिए यह कहे बिना नहीं रहूंगी कि यह प्रयास व्यर्थ ही किया गया: हम सभी अपने-अपने बहाने ढूंढ़ते रहते हैं अपने मत की पुष्टि के लिए। सच

बात तो यह है कि मैं किसी भी रूप में अपने को दोषी नहीं मानती, उस व्यक्ति के प्रति अनुग्रहीत तो हरगिज़ नहीं। मैं उनकी उदारता की सराहना करती हूं—ईश्वर जानता है, बहुत सराहना करती हूं! लेकिन फिर भी मुझे यह पता है कि यह उदारता मेरे लिए नहीं की गयी बल्कि अपने लिए, वैसे ही जैसे मैंने उनसे कुछ भी नहीं छिपाया अपने लिए, न कि उनके लिए; इसीलिए कि उनके प्रति कहीं कोई अन्याय न हो जाय, मुझे अपने प्रति कुछ घृणा ही बरतनी पड़ी।

"मैं कह चुकी हूं कि मैं अपने को उनसे कुछ कम दोषी नहीं मानती। लेकिन, द्मीत्री की तरह मैं भी अपने को उचित ठहराना चाहती हूं, जो उन्हीं की सटीक अभिव्यक्ति में इस प्रकार पढ़ा जा सकता है: 'मैं समझती हूं कि दूसरे मेरे व्यवहार के कुछ पक्षों को इतनी आसानी से माफ़ नहीं कर पायेंगे'। मैं उन विषयों को अछूता छोड़ देती हूं, जिन्हें उन्होंने अपनी सफ़ाई में अपने पत्र में लिखा है, बल्कि उन विषयों को जिन्हें उन्होंने अपनी सफ़ाई देते समय अनावश्यक समझा। सपने से पहले मेरे आचरण को कोई ग़लत नहीं ठहरा सकता—इसका मुझे पूरा विश्वास है। लेकिन क्या उस भावुकतापूर्ण मोड़ के लिए और बाद की घटनाओं की परिणति के लिए मैं जिम्मेदार नहीं? क्या मुझे उपरोक्त सपने में हम दोनों के ही लिए प्रकट अपरिहार्य विच्छेद के बारे में इतना साधारण दृष्टिकोण अपनाना चाहिये था? जिस दिन द्मीत्री मरे, उसी शाम मैंने उस भयंकर पर उदार और सभ्य रहमेतोव से लम्बी बातचीत की थी। उसने मेरे पति के बारे में अनगिनत अरुचिकर बातें कही थीं। फिर भी उस उग्र और लगभग शत्रुतापूर्ण स्वर-शैली को फिर से सोचने पर लगता है कि उसके शब्द अर्थपूर्ण थे। मुझे ऐसा विश्वास है कि द्मीत्री उनका तात्पर्य भली-भांति जानते-समझते थे और निस्सन्देह उन पर भरोसा रखते थे। बहरहाल, मुझे ज़रूरत थी कि कोई वह सब कुछ मुझसे कहे और सुनने के बाद में बहुत शान्त भी हुई थी। मेरे मित्र, जिस किसी ने भी व्यवस्था की हो, मैं तुम्हें धन्यवाद देती हूं। रहमेतोव को भी, भले ही वह कितना ही भयंकर क्यों न हो, यह मानना पड़ा था कि इस प्रकरण के उत्तरार्द्ध में उनके आचरण पर अंगुली नहीं उठायी जा सकती। रहमेतोव

ने पूर्वार्द्ध पर प्रहार किया था और उस आधार पर, जिस पर द्मीत्री ने अपना बचाव प्रस्तुत किया था। मेरा निवेदन दूसरे भाग के सम्बन्ध में है, यद्यपि किसी ने भी मुझे उस प्रकरण में दोषी नहीं ठहराया है। हम सब में—अर्थात् हमारी पूरी मण्डली में—जितना कठोर रहमेतोव हो सकता था, उससे भी कहीं कठोर न्यायाधीश बैठा है और वह है अन्तरात्मा की आवाज़।

"मेरे मित्र, मैं समझती हूं कि अगर मैंने इस प्रकरण के सन्दर्भ में सहज और कम दुखपूर्ण रवैया अपनाया होता तो यह सहना हम सबके लिए कितना आसान होता। द्मीत्री का मत मुझे कुछ अधिक कहने को विवश करता है: उन्हें बिल्कुल ही इसकी आवश्यकता नहीं थी कि वे पीड़ापूर्ण, सांवेदिक और एकमात्र मेरे अत्यधिक संत्रास द्वारा थोपी गयी यातना को झेलते। मैं सोचती हूं कि उन्हें भी वैसी ही अनुभूति हुई होगी, यद्यपि यह भी निश्चित है कि वे किसी को भी ऐसा कहने नहीं दे सकते थे। लेकिन, मेरे मित्र, मैं यह कहना चाहती हूं कि वे बिल्कुल नहीं तो कुछ-कुछ ग़लती पर ज़रूर थे: मेरे दोष अथवा अत्यधिक संवेग के फलस्वरूप वह नहीं हुआ, जिसे वे स्वयं पीड़ापूर्ण अन्त कहते हैं। सच है कि, अगर मैं नये सम्बन्धों के निर्माण को अतिशय महत्व न देती तो उन्हें र्याज़ान की अपनी यह यात्रा न करना पड़ती, लेकिन वह उसे पीड़ादायी मानने से इंकार करते हैं, इसलिए अब तक का मेरा आचरण निर्दोष ही माना जायेगा। द्मीत्री के लिए पीड़ा सिर्फ़ इसी में थी कि उन्हें मरना पड़ा। उन्होंने अपने निर्णय के दो कारण बताये हैं, दोनों का ही सम्बन्ध मेरी व्यथा से है। पहला अतिरंजित कृतज्ञता के कारण और दूसरा अलेक्सान्दर के साथ समाज द्वारा मान्य सम्बन्ध का उपयोग न कर पाने की अवस्था के कारण। यह सही है कि मैं दोनों ही बातों को लेकर परेशान थी और उनकी मौत के बाद ही सम्यक् शान्ति मुझे मिली है। लेकिन मूल कारण जानने में वे चूक गये। उनकी उपस्थिति से ही मुझे यातना होगी अत्यधिक कृतज्ञता के कारण, इस बारे में कुछ हद तक उन्हें भ्रम रहा। हम सभी सुखकर विचारों को पकड़ लेने के लिए आतुर होते हैं किन्तु उस समय तक जब तक उन्होंने अपनी मृत्यु को अनिवार्य मानने का निर्णय लिया, वह अनिवार्यता तो कभी की अस्तित्वहीन हो चुकी थी,

मेरी कृतज्ञता मंद होकर सुखकर कोमलता बन चुकी थी। इसके अलावा, मेरे अभिनय-आचरण का और कोई आधार था भी नहीं। जबकि दूसरे तर्क में—सामाजिक रूप से स्वीकृत मुखौटे के अभाव का—जो कुछ उल्लेख किया गया है उससे, सामाजिक परिपाटी के साधारण-से मामले से, मेरे दृष्टिकोण पर तो रंचमात्र भी प्रभाव नहीं पड़ता। उससे मैं न तो बन्धन में जकड़ी और न ही बन्धनमुक्त। द्मीत्री का यह सोच ग़लत था कि उनकी उपस्थिति कोई उलझन में डालनेवाला कारक थी। उनके मरे बिना भी इसका हल ढूंढा जा सकता था, बशर्ते कि मैंने इसे उपयोगी अथवा पर्याप्त समझा होता। दम्पत्ति सभ्य रहे तो यह बस किसी भी बदनामी को रोकने के लिए पर्याप्त है, पत्नी के विवाहेतर कुछ भी सम्बन्ध क्यों न चल रहे हों। यह अपने आप में यथेष्ट प्रगति है। इसके समर्थन में अनेक उदाहरण हैं, जिनमें पति का उदात्त चरित्र पत्नी की समाज की तानाकशी से ढाल बनकर रक्षा करता है। अब मैं इसे साधारणतम और सर्वोत्तम समाधान मानती हूं। यह सच है, द्मीत्री सेर्गेइच ने कुछ इसी तरह का प्रस्ताव रखा भी था, परन्तु मैंने आवेश में आकर इसे ठुकरा दिया और अब मुझे यह सोचकर आश्चर्य होता है कि अगर मैंने वह प्रस्ताव मान लिया होता, तो क्या होता। अगर मैं इससे सन्तुष्ट रहती और समाज को अलेक्सान्दर और मेरे बीच चल रहे चक्कर को अनदेखा करने देती, तो द्मीत्री को वैसा घातक क़दम न उठाना पड़ता अथवा मुझे ही सम्बन्ध को औपचारिकता प्रदान करने के बारे में सोचना पड़ता। यद्यपि, अधिकांश मामलों में यह व्यवस्था सन्तोषजनक है, तथापि मुझे सन्देह है कि तीनों के असामान्य बराबरी को देखते हुए हमारे मामले में भी ऐसा ही होता। अगर द्मीत्री ने सोचा होता कि अलेक्सान्दर उससे मेधा, चरित्र और विकास की दृष्टि से बेहतर है, यदि वह दूसरे की नैतिक श्रेष्ठता के आगे आत्मसमर्पण कर देता अथवा बलवान के सम्मुख निर्बल के रूप में बलात् घुटने टेक देता—निश्चय ही ऐसी स्थिति में मैं तो उसका बोझ हरगिज न महसूस करती। अथवा अगर मैं ही नैतिक व बौद्धिक रूप से अपने पति से कहीं अधिक श्रेष्ठ होती, और उसने मेरे अनुराग के उत्पन्न होने से पहले वह पुराना मज़ाक़ चस्पां कर दिया होता जिस

पर हम लोग बहुधा हंसा करते थे—याद है तुझे मेरे दोस्त? प्रतीक्षा-कक्ष में अचानक मिल गये दो मुलाक़ाती, उनके बीच मनोरंजक वार्तालाप और फिर परस्पर मैत्रीपूर्ण परिचय, 'लेफ़्टिनेंट फ़लां' पहले ने बताया। 'और मैं मदाम तेदेस्को* का पति हूं',—अगर ऐसा हो, तो फिर उसे क्यों जीवन से हाथ धोना पड़ता, उसने अपना सिर झुकाया होता, इस प्रकार के समर्पण में उदारतापूर्वक कोई अपमान न माना होता और हम सभी को शुभ समाप्ति का आनंद प्रदान किया होता। लेकिन हम तीनों तो मित्र थे न। द्मीत्री भी हम दोनों में से किसी से कुछ कम न थे—उन्हें यह पता था और हम भी यह अच्छी तरह जानते थे। उन्होंने जो रियायत दी वह स्वेच्छा से, कमज़ोरी के सबब नहीं, ताक़त के सबब—इससे तो निश्चय ही तुम इनकार नहीं कर सकते, मेरे दोस्त? तो फिर मेरी स्थिति क्या होती? पूर्ण रूप से उनकी सदिच्छा पर निर्भर—मेरे दोस्त, यही मेरी बेचैनी का, उनके मरने के उदात्त संकल्प का मर्म है, स्रोत है। यह, उन्हें अपनी जान गंवाने के लिए उद्यत कर देनेवाला संवेग, उससे कहीं अधिक गहरा पैवस्त, जितना कि वह अपने पत्र में हमें विश्वास दिलाने के लिए कहता है। अब की बार मेरी कृतज्ञता अपना उत्पीड़क रूप खो चुकी है। द्मीत्री ने जिस व्यवस्था का प्रस्ताव रखा था उससे मर्यादा की तुष्टि तो निश्चय ही हो गयी होती—ऐसा नहीं कि मेरे अथवा मेरी छोटी-सी मण्डली के लिए मर्यादा का कोई अर्थ था। लेकिन मैं द्मीत्री और उसकी सदिच्छा पर निर्भर बनी रहती—बस यही तो बाधा थी। आज मैं पूछती हूं तुमसे, अपनी स्थिति के बारे में पुनर्विचार करने से क्या अच्छा होता मेरे लिए? समस्या का सम्बन्ध मुझसे अथवा मेरे विचारों से नहीं था बल्कि सिर्फ़ और पूर्ण रूप से द्मीत्री की अदम्य सदिच्छा से था। तुमने इस भावना की सराहना पहले ही की है: मैं किसी भी व्यक्ति की दया का पात्र नहीं बनना चाहूंगी, भले ही वह कितना ही निष्ठावान और सम्मानित मित्र ही क्यों न हो, यद्यपि

* फ़ोरतुनाता तेदेस्को (1826—1875)—प्रसिद्ध इटालवी ओपेरा गायिका।—सं०

मैं उसका विश्वास उतना ही करती हूं, जितना कि अपना अथवा यह जानती हूं कि वह यथाशक्ति मेरे लिए और मेरे सुख के लिए कुछ भी करने में हिचकिचायेगा नहीं। हां, मेरे दोस्त, दया का पात्र नहीं बनना चाहूंगी और मुझे मालूम है कि आप मुझसे राज़ी हैं।

"लेकिन क्यों यह सब बात, क्यों अपने दिलों की गुप्त गहराइयों के भीतर ताक-झांक? द्मीत्री की तरह, मैं भी स्वहित में ही अपने को बेनक़ाब कर रही हूं, अपनी निर्दोषिता और अपने नियंत्रण से परे परिस्थितियों का दोष सिद्ध करने के लिए। द्मीत्री इस प्रकार के वक्तव्य की सराहना करते थे। मेरे दोस्त, मैं जानबूझकर समर्थन पाने की कोशिश कर रही हूं।

"बास्ता। तुमने अपने लम्बे (परन्तु अत्यन्त मूल्यवान) पत्र लिखने में अपने समय के कई घंटे लगाने की कृपा करने का कष्ट उठाया और यही एकमात्र तथ्य—मैं भी द्मीत्री सेर्गेइच अथवा आपके द्वारा प्रयुक्त कूटनीतिक शैली अपना रही हूं—यही एकमात्र तथ्य मास्को और मृत्यु की ओर उनकी अन्तिम 'यात्रा' के बाद के मेरे इतिहास में कुछ रुचि का संकेत देता है। र्याज़ान से घर वापस लौटने पर उन्होंने मुझे अभूतपूर्व रूप से उद्विग्न पाया। सच यह है कि मैंने उनकी अनुपस्थिति में उनके बारे में कुछ भी नहीं सोचा था, जैसा कि आपने उपलक्षित किया है। यद्यपि, जब वह मास्को के लिए रवाना हुए, तो मुझे लग रहा था कि कुछ होनेवाला है: उन्होंने पीटर्सबर्ग में सब कुछ ठीक-ठाक नियंत्रित कर दिया था और पूरे एक हफ़्ते के लिए अपना जाना इसी प्रयोजन से स्थगित कर दिया था—यह सब कितने पीड़ादायक ढंग से सुस्पष्ट था। मन की भावनाओं को कुशलता से छिपा लेने में सिद्धहस्त मुखड़े पर मुझे दु:ख की कुछ झलक दिख ही जाती थी। मुझे लग रहा था कि कुछ कठोर संकल्प कर लिया है उन्होंने। और जब वह ट्रेन पर सवार हुए, तो मेरा दिल टूट गया। अगले दिन भी मैं बेहाल रही और उसके बाद के दिन सुबह को उस क्षण के बाद से तो और भी बुरा हाल रहा, जब माशा ने पत्र लाकर दिया, पूर्ण रूप से मनहूस घंटे भर, और तमाम मनहूस दिन—लेकिन यह तो तुम्हें मालूम ही है। तो फिर मेरे मित्र, यह भी जान लो कि मैंने उस आसक्ति की

गहराइयों की थाह ली है और उसे अपनी कल्पना से कहीं अधिक दृढ़तर पाया है। मेरे मित्र, अब मैं जानती हूं कि वह इतनी सशक्त, तुम्हें यह भी मालूम है क्योंकि तुमने सुना ही होगा कि मैंने अलेक्सान्दर से तत्काल ही नाता तोड़ लिया होता; मेरी जिन्दगी पूरे दिन मेरे ही चरणों पर असंशोधनीय रूप से छिन्न-भिन्न पड़ी रही, जबकि भले और बहुत भले मित्र की ओर से पत्र ने मेरी खुशी को बाल्य-सुलभ हर्षोन्माद बना दिया और मेरी सम्पूर्ण जीवन-दृष्टि को ही बदल दिया (मेरे मित्र, मैं इस आशा से अपने शब्दों का चयन सावधानीपूर्वक कर रही हूं, इससे खुशी होगी)। तुम रहमेतोव से सब कुछ सुन चुके हो, जिसने मुझे ट्रेन पर चढ़ाया और तुम्हें भी प्रत्यक्ष विदा किया—वे ठीक थे, वे दोनों ही अपने इस आग्रह में ठीक थे कि मैं वहां से निकल पड़ूं उस पीड़ा से छूटने के लिए जिसके बारे में द्मीत्री ने सोचा भी नहीं था कि मुझे उस दिन हो सकती है। (उस निर्दयता के लिए खुदा का शुक्रिया!) उन दोनों की यह चेतावनी भी ठीक थी कि अलेक्सान्दर को स्टेशन पर नहीं पहुंचना चाहिये। मुझे मास्को जाने की अब कोई जरूरत थी नहीं, इसलिए सिर्फ़ पीटर्सबर्ग छोड़ना था और मैं नोव्गोरोद में रुक गयी। वहां द्मीत्री की मौत का प्रमाणपत्र लेकर अलेक्सान्दर आया। वहीं पर हम लोगों का विवाह भी हुआ, घटनाक्रम की उस घातक परिणति के एक सप्ताह बाद। एक महीने तक हम पीटर्सबर्ग लाइन पर स्थित चुदोव नामक स्थान पर रहे। यहां से अलेक्सान्दर को हफ़्ते में तीन या चार बार अपने काम पर जाने में आसानी रही। हम अभी कल ही वापस लौटे हैं, इसीलिए तुम्हारे पत्र का उत्तर देने में देर हुई, यह माशा के ट्रंक में पड़ा था; वह उसके बारे में भूल ही गयी थी। तुम तो निस्सन्देह कुछ और ही सोच रहे होगे पत्रोत्तर न मिलने पर।

"आलिंगन करती हूं तुम्हारा, मेरे दोस्त, तुम्हारी

वेरा किरसानोवा।"

"पुराने दोस्त, सलाम। क्या हम लोग इस परस्पर अभिनंदन को छोड़ नहीं सकते? अन्यथा मैं प्रशंसा के आवेग में इतना कुछ कह दूंगा कि यह तुम्हारे गले में ही अटक जायेगा। नहीं जानते क्या कि

तुमने ये कुछ संकोची पंक्तियां जो बीच-बीच में लिखी हैं वे दोनों में ही बुद्धिहीनता की अच्छी-खासी मात्रा का संकेत नहीं देतीं? हो सकता है, मेरे पास ऐसा कुछ लिखने-कहने का कारण हो, पर तुम्हारे पास? अपने अगले पत्र-व्यवहार में हम इसको सुलझा लेंगे, ऐसी उम्मीद है। नवीनतम घटनाक्रम का पूरा ब्योरा भेजने का वादा करते हुए। तुम्हारा अलेक्सान्दर किरसानोव।"

3

पूर्ण निष्पक्षता के होते हुए भी, पत्राचार एकपक्षीय था, जैसा कि वेरा ने अपने पत्र में कहा ही है। दोनों ही लेखकों ने प्रघात की टीस को कम करके बतलाने में पूरी शक्ति लगा दी है, गोपनशील धूर्त्त जो ठहरे दोनों। उनसे यह सुनकर और उनके जैसों को ही यह क़सम खाते सुनकर कि "सचमुच, कुछ भी तो नहीं था" मैं कितनी बार हंसा नहीं होऊंगा—लेकिन केवल एकान्त में और तब कभी नहीं जब मैं स्वयं लिप्त था, इस प्रकार के आश्वासन की अपेक्षा रखनेवाले व्यक्ति की उपस्थिति में तो हां में हां मिलाकर यही कहा: "बिल्कुल नहीं, कुछ नहीं"। सम्मान की आत्मा कितनी विचित्र है—ऐसे किसी के बारे में जानकर मैं हंसे बिना नहीं रहता।

वास्तव में, हास्यास्पद कोटि तक विचित्र पत्रों को ही लें। इस कोटि से परिचित होने के कारण मैं उनके तौर-तरीक़ों का आदी हो चुका हूं। लेकिन उस पर ये क्या प्रभाव छोड़ेंगे जिनकी दृष्टि सहज है, उदाहरण के लिए हमारा पुराना मित्र अनुभूतिक्षम पाठक?

अन्तत: अपना नाश्ता समाप्त करके हमारा यह अनुभूतिक्षम पाठक सिर हिलाकर चीख उठेगा:

"चरित्रहीनता!"

"शाबाश! और कुछ भी कहिये!"

"लेखक भी पक्का लम्पट है। कैसे आचरण को क्षमा करता है वह!"

"क्षमा करें, मेरे पुराने दोस्त, आप पट्टी से भटक गये हैं। मैं इनमें सब नहीं तो अधिकांश बातों का अनुमोदन नहीं करता,

सभी गोलमोल बातें और अरण्य-रोदन और वैसी ही बातें—वास्तविक जीवन तो कहीं अधिक साधारण है।"

"क्या कहा? आप तो और भी अधिक चरित्रहीन हैं?" उसकी आंखें फटी की फटी रह जाती हैं यह देखकर कि मेरे व्यक्तित्व के रूप में मानवता कितने अकथ्य पतन के गर्त्त में डूब चुकी है।

"और भी अधिक," मैं कहता हूं और कोई भी यह नहीं जानता कि क्या यह सच है अथवा मैं उसकी अनुभूमि-क्षमता को लेकर उसका परिहास कर रहा हूं।

पत्रव्यवहार तीन या चार महीने तक और चलता रहता—किरसानोव की ओर से मुस्तैदी से और अनियमित रूप से दूसरी ओर से, फिर इसके बाद यह बिल्कुल बन्द कर दिया गया। स्पष्ट ही इसका मुख्य उद्देश्य लोपुख़ोव के दृष्टिकोण को प्रेषित करना था, जोकि पहले लम्बे पत्र में अंकित था और इस प्रकार कर्तव्य को उचित रूप से पूरा करने का संतोष कर लिया गया था। तीन या चार पत्रों का उत्तर न मिलने पर किरसानोव-दम्पत्ति ने भी फिर न लिखने का तय कर लिया।

4

हम देख रहे हैं, डिनर के लिए अपने पति के अस्पताल से लौटने का इन्तज़ार करते हुए वेरा अपने सोफ़े पर विश्राम कर रही है। आज खाने के साथ मिठाइयों की परवाह उसे कम ही थी, वह बहुत थक गयी थी पहले के अनेक सबेरों की तरह और आनेवाले कई सबेरों में इसी तरह सबेरे से शाम तक कड़ी मेहनत उसे करनी थी, वह नगर के दूसरे कोने में नयी कार्यशाला की स्थापना-व्यवस्था में थी। वेरा लोपुख़ोवा वसीलियेव्स्की द्वीप पर रहती थी, वेरा किरसानोवा सेर्गियेव्स्काया सड़क पर, जो वीबोर्ग इलाक़े पर उसके पति के काम के नज़दीक था। नताशा मेर्त्सालोवा वसीलियेव्स्की द्वीप स्थित पुरानी कार्यशाला की देखभाल अच्छी तरह कर रही थी। वह अच्छी तरह से उससे परिचित थी, इसलिए यह पर्याप्त स्वाभाविक ही था। राजधानी में लौटने पर वेरा को यह पता चल गया कि उसकी

सेवाओं की आवश्यकता कदाचित कभी ही पड़ती थी। उसका वहां पर प्रतिदिन जाना स्नेहवश अधिक था, किसी और कारण से नहीं। शायद, कुछ देर तक उसका वहां जाना नताशा को समय-समय पर दी जानेवाली सलाह के रूप में उपयोगी था, लेकिन शीघ्र ही यह भी बन्द हो जायेगा। नताशा शीघ्र ही इतनी अनुभवी हो जायेगी कि उसे वेरा के परामर्श की आवश्यकता ही नहीं रहेगी। और अगर सचाई पता चल जाय तो, पहले-पहल जब वह वहां गयी, तो अच्छे दोस्त के रूप में न कि ऐसे सहयोगी के रूप में, जिसका स्थान कोई ले न सके। तो अब वह क्या करे? नगर के दूसरे कोने में, अपने नये पड़ोस में दूसरी कार्यशाला खोले और क्या!

शीघ्र ही बास्सेइनाया और सेर्गियेव्स्काया सड़कों के बीच की पिछली गली पर यह कार्यशाला आनन-फ़ानन में स्थापित हो गयी। दूसरी बार कार्यशाला पहले से कहीं अधिक आसानी से स्थापित हो गयी। पहले पांच "संस्थापक" पुरानी दुकान से स्थानान्तरित होकर आ गये, वहां पर भी उनकी जगह जल्द ही भर ली गयी, और बाक़ी के कर्मचारी पुरानी युवतियों की मित्र-मण्डली से भर्ती किये गये। दूसरे शब्दों में कहें तो आधा काम तो आरंभ में ही पूरा हो गया। उनके उपक्रम का प्रयोजन और स्वरूप सभी को मालूम था, पहली दुकान द्वारा अत्यन्त कर्मठता से विकसित प्रबन्ध को ही इस दूसरी दुकान के प्रत्येक नये सदस्य ने शामिल होने के समय ही तत्काल स्वीकार कर लिया। इससे संगठनात्मक प्रक्रिया में दस गुना तेज़ी हुई और उनकी परेशानियां आधी घट गयीं। फिर भी काफ़ी कुछ करने को बाक़ी था, और आज वेरा पावलोव्ना को थकाने के लिए पर्याप्त था, ऐसा ही कल हुआ था, परसों भी और गत दो महीनों में पूरे समय हुआ था—ये दो महीने उसकी दूसरी शादी के दिन के बाद से व्यतीत छह महीनों में से थे, उसे अपने हनीमून के बारे में भी तो सोचना था और उसने काफ़ी लम्बे अरसे से उसका उपभोग भी किया था। और अब वह पूरी दृढ़ता के साथ काम में जुट गयी थी।

आज का दिन सचमुच व्यस्त दिन रहा था। उसके विचार न जाने किधर-किधर दौड़े। उनमें से अधिकांश समृद्ध एवं आनन्ददायक वर्तमान में लिप्त रहे, इतने समृद्ध कि उसमें स्मृति

के लिए बहुत कम समय शेष रह गया था। यादों की अभी प्रतीक्षा करनी होगी—दस या बीस वर्ष नहीं, बल्कि अधिक, कहीं अधिक। तथापि, यह कभी-कभी चुपके से आ ही जाती है, उदाहरण के लिए जैसे आज हुआ, उन विरल स्मृतियों को जागृत करने के लिए, जो प्राय: हलचल मचा देती हैं।

5

"प्रियतम, मैं भी आपके साथ चल रही हूं!"

"लेकिन तुम्हारी चीज़ें कहां हैं!"

"तो फिर अगर आज आप मुझे साथ नहीं ले चलते, तो मैं कल चल पड़ूंगी।"

"कुछ समय तो रुको फ़िलहाल। बिल्कुल। मेरे पत्र का इन्तज़ार करो। कल तुम्हें मिल जायेगा।"

घर की ओर लौटते, साथ में माशा, मास्को स्टेशन से मिडल प्रोस्पेक्ट पार करते हुए पूरे लम्बे रास्ते पर वह क्या सोचती रही, क्या थीं उसकी भावनायें? वह कुछ नहीं कह सकती। घटनाचक्र कितनी तेज़ी से चला: चौबीस घंटे भी नहीं, बस सिर्फ़ बाईस घंटे ही तो, जब से उन्हें वह पत्र मिला और वे चले भी गये—कैसी तूफ़ानी गति! दो बजे रात उसे इसका ज़रा-सा भी अनुमान नहीं था। उन्होंने तब तक इन्तज़ार किया था, जब तक कि उस दिन की चूर कर देनेवाली थकान से बेबस होकर वह नींद की गोद में समा गयी थी और फिर कुछ समझ में न ओनेवाली, फ़िज़ूल की बातें भूमिका के रूप में कही गयीं, फिर उन्होंने मुख्य बात कही: "न जाने कब से माता-पिता को नहीं देखा, सोचता हूं जाकर उनसे मिल आऊं, बहुत रोमांचित हो उठेंगे वे।" बस यही कुछ कहकर वे चले गये, वेरा भी उनके पीछे-पीछे दौड़ी, बावजूद इसके कि शुरू में ऐसा न कुछ करने का वादा किया था। लेकिन वह हैं कहां? "माशा? कहां?" माशा ने जो अभी अपने मेहमानों के बाद सफ़ाई करने में लगी थी, उत्तर दिया: "उन्होंने कहा था, सैर करने जा रहे हैं।" अब इसके सिवा और क्या किया जा सकता था कि फिर

बिस्तर पर लेट जाया जाय। आश्चर्य कर रहे होंगे आप कि वह सो कैसे सकेगी? उसे तो इसका अनुमान ही न था कि आ रही सुबह में क्या होगा: उन्होंने तो कहा था बात करने के लिए अभी बहुत अधिक समय पड़ा है। लेकिन यह क्या, अभी वह ठीक ढंग से जागी भी नहीं थी कि वे स्टेशन के लिए चल पड़े। स्मृति धुंधला गयी, लगा कि जैसे यह सब कुछ उसके साथ नहीं गुज़रा, बल्कि कोई अफ़वाह है, जो झटपट फैल गयी है। जब तक वे फिर घर नहीं पहुंचे तब तक उसे बिल्कुल होश नहीं आया कि अब उसे क्या करना है, क्या?

हां, र्याज़ान जायेगी वह। इसके सिवा उसके लिए और चारा ही क्या था। और हां, वह पत्र? पत्र में क्या लिखा होगा? लेकिन निश्चय ही पत्र आने तक निर्णय का इन्तज़ार नहीं करेगी? ख़ास तौर से जब उसे यह पता है पूरी तरह से कि उसमें वे क्या लिखेंगे। नहीं, इन्तज़ार करना ही अच्छा रहेगा। क्यों? वह जायेगी। वह निश्चय ही जायेगी। बस, एक घंटे, दो, तीन और चार तथा न जाने कितने घंटे तक वह अपने से यही कुछ कहती रही। माशा को भूख लग आयी होगी। तीसरी बार उसने डिनर खाने के लिए अनुरोध किया था अथवा आदेश दिया था। अब अन्यमनस्कता उचित नहीं होगी ("बेचारी माशा, उसे भूखों मार डाला मैंने।")—"माशा, क्या कह रही थीं तुम, मेरे खाये बिना नहीं खाओगी?"—"ऐसा कभी किया है, मेमसाहबा।" अगले दो घंटे तक फिर वही मनोमंथन। "मैं जाऊंगी। निश्चय ही कल जाऊंगी। अलबत्ता पत्र का इन्तज़ार करूंगी, क्योंकि उन्होंने ऐसा करने के लिए कहा था। चाहे जो भी लिखा हो उसमें, मुझे पहले ही मालूम है, लेकिन चाहे जो लिखा हो, मैं जाऊंगी ज़रूर।" पहले घंटे में बस यही शब्द बार-बार, घूम-फिरकर लौटते रहे। दूसरे घंटे में इतना और बढ़ गया: "वे नहीं चाहते कि मैं आऊं," तीसरे घंटे में यही शब्द प्रमुख रूप से उमड़ते-घुमड़ते रहे और सूरज डूबने लगा। तभी सहसा, अथक माशा के आकर यह अनुरोध करने के पहले कि वह चाय तो ज़रूर ही पी ले यह शब्द और उभर उठे: "मैं भी तो जाना नहीं चाहती।" ख़ुदा का शुक्र, माशा के प्रवेश से यह बुरा विचार तिरोहित हो गया।

लेकिन अधिक देर तक नहीं। प्रथम तो, यह दुबारा उभरने की हिम्मत नहीं कर सका; लेकिन चुपके-चुपके सिर उठाने लगा: "तुम्हें जाना चाहिये" के रूप में खण्डन, तत्काल ही यह बहाना उभर उठता जैसे शिकारी से पहले शिकारी-घोड़ा: "वे नहीं चाहते कि मैं आऊं", अगले ही पल यह भाव बदल जाता: "मैं भी तो जाना नहीं चाहती।" आधे घंटे बाद, इन दो वाक्यों ने ही और सभी भावों को अपनी इच्छा के आगे झुका लिया। यह अत्यन्त महत्त्वपूर्ण वाक्य: "मैं जा रही हूं" को तोड़-मरोड़कर बदल दिया: "क्या सचमुच ही जा रही हूं?" ओह, माशा फिर आ गयी। "मैंने उस आदमी को एक रूबल दे दिया मेमसाहबा, यहां लिखा है: लिफ़ाफ़े को पहुंचाने के लिए 9 बजे से पहले एक रूबल और बाद में पचास कोपेक। कंडक्टर उसे लाया, जो शाम की गाड़ी से आया, उसने अपना वादा पूरा निभाने के लिए घोड़ागाड़ी ली।" पत्र। आ गया पत्र! उसमें यही लिखा होगा, उसे पता है, "मत जाओ!" मगर वह नहीं करेगी ऐसा। वह जायेगी, ज़रूर जायेगी। मगर पत्र में दूसरी बात लिखी है, उसे तो मानना चाहिये। "मैं र्याज़ान जाऊंगा, मगर सीधा नहीं—फ़ैक्टरी के कामकाज के लिए बीच में कई जगह रुकने की ज़रूरत है: र्याज़ान जाने से पहले मास्को में एक हफ़्ते से कम नहीं, दो शहरों में इससे पहले और तीन में बाद में रुकना पड़ेगा। मेरे यात्राक्रम के बारे में पहले से इसलिए कुछ भी निश्चित नहीं हो सकता क्योंकि अपने व्यापारिक प्रतिनिधियों से कई स्थानों पर रक़में वसूल करनी हैं न और तुम तो जानती हो, प्रिय दोस्त"—यही तो हैं उनके शब्द, जो बारम्बार दुहराये जाते हैं मुझे यह जतलाने के लिए वे मेरे बारे में कुछ भी बुरा नहीं सोचते और तब मैंने कितनी बार उनका चुम्बन लिया—"तुम तो जानती ही हो यह धन का मामला निश्चित कार्यक्रम को भी घंटों की जगह दिनों में बदल सकता है। इसलिए मुझे इसका रत्ती भर भी अन्दाज़ा नहीं है कि मैं र्याज़ान कब पहुंचूंगा। बस इतना ही कह सकता हूं कि जल्दी पहुंच पाने की उम्मीद नहीं है।" यह पत्र उसे शब्दश: याद है। क्या था उस सबका मतलब? यही तो कि उससे बंधे रह पाने का अब कोई मौक़ा नहीं रह गया है। क्या करे अब ऐसे में वह? पुराना भाव "मुझे उनके पास पहुंचना चाहिये" बदल कर हो गया था:

नहीं, अब मुझे उनसे नहीं मिलना चाहिये," — "उनसे" बीच में ही कहीं बदल गया और यद्यपि पूरे घंटे—दो घंटे तक यही टेक बनी रही, कि सहसा भाव जागा: "क्या मैं उनसे मिलना चाहती हूं?" और जब नींद के झोंके धीरे-धीरे आने लगे तो: "क्या मैं उनसे मिलूंगी?" निरुत्तर ही रहा और प्रभात काल में अवचेतन के किनारे "क्या मैं उनसे नहीं मिलूंगी?" में घुलकर विलीन हो गया।

अगली सुबह देर बाद, जागने पर संघर्ष उन शब्दों में हो रहा है: "जाऊंगी" और "नहीं जाऊंगी" और दोपहर तक दोनों में घमासान द्वन्द्व मचा रहा। उसका सर्वांग इसी में डूब गया। नकारात्मक भाव उठता रहा, तिरोहित होता रहा। फिर तय कर लिया: "नहीं, नहीं जाऊंगी मैं!" पूर्ण दृढ़ता और निर्णयात्मकता से तय हो गया। उसने अपने सिर पर हैट लगाया—शीशे में देखकर बाल ठीक किये, हैट ठीक से पहना था—और इन नये शब्दों ने सब कुछ तय कर दिया, "बहुत देर हो गयी है अब तो!"

"माशा, डिनर पर मेरा इन्तज़ार न करना। मैं लौटूंगी नहीं।"

"मेमसाहबा, मालिक अभी अस्पताल से घर नहीं लौटे हैं।" स्तेपान को उसके आने पर कोई अचरज नहीं हुआ, क्यों होता, पिछले कुछ समय से यह आगमन बहुधा हो गया था न। "यही उम्मीद थी मुझे, कोई बात नहीं। मैं इन्तज़ार करूंगी। बताना नहीं उन्हें कि मैं यहां हूं मेहरबानी करके।" उसने कोई पत्रिका उठा ली और उसे यह जानकर कुछ अजूबा-सा लगा कि वह पढ़ सकती है: अब चूंकि निर्णय तो हो गया है और "बहुत देर" हो चुकी थी, इसलिए शान्तचित्तता का बोल-बाला था। निस्सन्देह, उसने बहुत कम पढ़ी, तक़रीबन कुछ नहीं, उसने और किसी बात में मन उलझाने के स्थान पर कमरे के हर ओर देखा और यहां-वहां रखी चीज़ों को ठीक-ठाक किया, मानो घर की मालकिन वही हो, राखदानी को देखकर, जिसे खाली हो जाने की तलब थी, उसने फिर आश्चर्यजनक संयत-भाव प्रदर्शित किया, मेज़ पर बिछे साधारण कपड़े की सिलवटों को ठीक करने की ज़रूरत थी और कुर्सी जहां रखी थी, उसे वहां नहीं होना चाहिये था। मन ही मन उसने विचारा: "बहुत देर हो गयी अब तो पांसा पड़ चुका है, नये जीवन का आरंभ होना है।" एक घंटे बाद: "वह कितना खुश होगा, सचमुच आश्चर्यचकित। नये जीवन की

शुरूआत! कितना सुखी होगा वह!" घंटी के बजने पर वह आरक्त हो गयी, विहंसी और द्वार खुल गया। "वेरा पावलोव्ना!" वह लड़खड़ा गया, उसने दरवाज़े को सहारे के लिए थामने की कोशिश की और थाम भी लिया कि उसने तेज़ी से लपककर उसके गले में अपनी बाहें डाल दीं और चहकी: "प्रिय, मेरे प्रिय! वे बहुत ही भले हैं लेकिन मैं प्रेम तो तुम्हीं से करती हूं! मैं तुम्हारे बिना रह नहीं सकती!" फिर इसके बाद क्या हुआ, उन दोनों ने कमरा कैसे पार किया, अब यह सब किसे याद रहा। उसे बस इतना याद है कि वह दौड़ी और दौड़कर उसका चुम्बन लिया। और किरसानोव की स्मृति भी वेरा से कुछ बेहतर नहीं। आरामकुर्सी और मेज़ के भी पास से गुज़रते हुए वह स्मरण तो करते हैं, लेकिन दरवाज़ा? कैसे वहां से हटकर यहां तक पहुंचे थे वे दोनों? चुम्बन... उसने तो उनको जैसे मंत्र-मुग्ध कर दिया और उनकी दृष्टि ही धुंधली कर दी... "वेरा, फ़रिश्ता!"—"मेरी जान, मैं तुम्हारे बिना ज़िन्दगी जी ही नहीं सकती थी। तुम कितने अरसे से मुझे प्रेम करते आ रहे थे और मौन रहे! कितने महान हो तुम! वह भी कितने महान हैं! अलेक्सान्दर!"—"बताओ न वेरा, यह सब हुआ कैसे?"—"मैंने बता दिया उसे कि मैं तुम्हारे बिना नहीं रह सकती और दूसरे ही दिन—कल ही न, वह घर छोड़कर चले गये। मैंने उनके पीछे जाने का निश्चय कर लिया था। कल पूरे दिन मुझे यक़ीन था कि मैं जाऊंगी और आज—देख लो, मैं यहां बैठी हूं।"—"इन पिछले दो हफ़्तों में कितनी दुबली हो गयी हो तुम, तुम्हारे हाथ तो बिल्कुल धागे जैसे हो गये हैं!" उसने हाथों को चूमा। "बड़ा कठिन संघर्ष करना पड़ा, प्यारे, इतना कठिन कि मैं यह समझ सकी कि मुझे शान्ति में छोड़कर तुमने कितनी यातना झेली होगी। कहां से पायी तुमने इतनी शक्ति कि तुम इतना कुछ मुझसे छिपा सके? कितनी पीड़ा झेली होगी तुमने!"—"था तो कठिन ही, मेरे दोस्त।" वह इस तमाम समय उसके हाथों को चूम रहा था, कि वेरा ने अपने को हंसते हुए छुड़ा लिया: "मैं भी कितनी लापरवाह हूं; तुम तो, अलेक्सान्दर, बहुत थके हुए होगे और भूख के मारे भी तो दम निकला जा रहा होगा।" वह तत्काल वहां से चली गयी। "वेरा?" कोई उत्तर न मिला। रसोई

से आनंद-मगन, आदेशात्मक बोल सुनायी पड़ रहे थे: "दो लोगों के लिए डिनर, स्तेपान, जल्दी से, मेहरबानी! प्लेटें और दूसरी चीज़ें कहां हैं? जल्दी करो, भलेमानस! मैं मेज़ सजाती हूं, बस कुछ खाने को ले आओ, जल्दी। अलेक्सान्दर अस्पताल में काम करके इतना थककर आये हैं, हमें उन्हें फ़ौरन ही कुछ न कुछ खाने के लिए देना चाहिये!" और प्लेटों पर छुरी-कांटों की खड़खड़ाहट के साथ वह लौट आयी। उसने विभोर होकर कहा: "प्यारे! अपनी पहली मुलाक़ात के मौक़े पर प्रेमियों पर खाने का भूत सवार है!" वह हंसा और मेज़ सजाने में वेरा की मदद की। यह मदद रुकावट अधिक साबित हुई क्योंकि वह लगातार वेरा के हाथों को ही चूमता रहा। "कितने पतले हैं!" हंसते-हंसते ही उनमें चुम्बन का दौर भी चला। "अलेक्सान्दर, खाना खाने के समय के रीति-रिवाज मत भूलो!" स्तेपान ने सूप परोसा। वेरा ने पूरी कहानी सुनायी। वह फिर चहकी: "प्यारे, हम प्रेमियों की भूख भी कितनी है। मैंने कल से एक कौर भी तो नहीं डाला है मुंह में।" स्तेपान अन्तिम व्यंजन लेकर नमूदार हुआ। "लगता है, स्तेपान, कि मैंने तुम्हारे हिस्से का भी पूरा डिनर ही चटकर लिया है।"—"सो तो ठीक है मेमसाहबा। मुझे खाने के लिए अब किसी दुकान पर झांकना पड़ेगा।"—"यही करो स्तेपान तुम, और आगे से यह पक्का ध्यान रखना कि डिनर बनाना दो के लिए, मगर उन दो में अपने को शामिल मत करना। अलेक्सान्दर, तुम्हारा सिगारकेस कहां है? लाना तो इधर।" उसने सिगार को पीने की तरफ़ से काटा और फिर उसे जलाकर किरसानोव को दे दिया। "कुछ देर तक तुम इसके पीने का आनंद लेते रहो, इस बीच मैं कुछ कॉफ़ी का बन्दोबस्त करूं या तुम चाय पीना ज़्यादा पसन्द करोगे? और रही डिनर की बात सो तुम्हें और स्तेपान को सचमुच इतना आलसी नहीं होना चाहिये।" पांच मिनट बाद ही वह स्तेपान को लिए वापस लौटी, हाथों में चाय की ट्रे लिये था वह। अलेक्सान्दर के बुझे हुए सिगार को देखकर वह चहकी: "तो यह बात रही, मेरी ग़ैरमौजूदगी में जनाब सपने में खो गये थे!" और वह हंसा। वेरा ने सिगार फिर जला दिया: "लो प्रिय, थामो इसे।"

यह सब याद करके वह अब भी हंस पड़ी। "हमारा रोमांस

कितना नीरस था! हमारा पहला मिलन सूप के कटोरे में समाप्त हुआ। हमारे सिर उस पहले ही चुम्बन से घूम गये थे, हमारी तीव्र भूख पर उसका रंच मात्र भी प्रभाव नहीं पड़ा—सच, शब्दों में वर्णन कर पाना असंभव है! उसकी आंखों में कितनी दमक थी! लेकिन यह तो उसकी सामान्य स्थिति है इन दिनों। मेरे पतले हाथों के लिए उसने कितने आंसू बहाये, सोचने की बात है—अब वे अच्छे हैं, सुन्दर हैं, यही तो कहता है वह इनको और आप मानें, मैं भी यही यक़ीन करती हूं कि वह ठीक कहता है।" उसने प्रशंसा के इन पात्रों को अपने घुटने पर टिका दिया, वह मुस्करायी: "ठीक कहता है वह, निश्चय ही ठीक," और दोनों हाथों को अपने वक्ष पर दबा लिया।

"क्या, किसके बारे में सोच रही हूं मैं?" वह अपने-आप ही मंद-मंद मुस्करायी। "मानो इसका कुछ लेना-देना है इस सबसे। अलबत्ता, पहली मुलाक़ात, डिनर, हमारी हंसी, चुम्बन और मेरे हाथों के बारे में आंसू—यह सचमुच ही मौलिक भाव था। मैं चाय उंडेलने के लिए बैठी, दोनों के लिए। मैंने पूछा: 'स्तेपान, क्रीम है क्या घर में? अथवा, कहीं आस-पास कोई अच्छी-सी दुकान है? अब तो समय नहीं, कहां से ले आ सकते हो? कोई बात नहीं, कल इसका इन्तज़ाम करेंगे। लकिन प्रिय, तुम अपने सिगार को फिर भूले जा रहे हो!"

चाय पीने के दौरान ही घंटी के तेज़-तेज़ बजाये जाने की ध्वनि गूंज उठी। दो विद्यार्थी आ धमके और अपनी अफ़रा-तफ़री में वेरा की ओर ध्यान ही नहीं दिया उन्होंने। हांफ़ते हुए बोले: "अलेक्सान्दर! अभी-अभी हमारे सामने एक अत्यन्त दिलचस्प केस आया है। ऐसा जटिल केस पहले कभी सुना तक नहीं हमने।" इसके बाद लैटिन में न जाने क्या गिट-पिट। "अजीबोग़रीब से भी अधिक अजीब, हमें आपकी मदद की तत्काल आवश्यकता है, एक-एक पल मूल्यवान है, हम तो घोड़ागाड़ी भी ले आये हैं!"—"जल्दी करो, प्रिय, जल्दी!" उन लोगों को वेरा की उपस्थिति का भान उसके इसी पहले वाक्य से हुआ, जो आदाब करने का संकेत बना। दूसरे ही पल आगन्तुक अपने प्रोफ़ेसर को लेकर रफ़ूचक्कर हो गये। प्रोफ़ेसर पलक झपकते ही तैयार हो गये थे, क्योंकि चोग़ा तो वह पहने ही हुए थे। "तुम मेरे यहां बाद में आ जाओगे न?" वेरा ने किरसानोव को

दरवाज़े तक छोड़ा। "हां।" लेकिन हामी भरने में पर्याप्त समय लगाया। घड़ी ने दस बजाये, ग्यारह बजे तक तो वहां बैठे रहना बेसूद था। विचित्र स्थिति थी। ऐसी बात नहीं कि वह क्षुब्ध हो, उसे अच्छी तरह पता था कि कुछ भी नहीं हुआ होगा—बस, उस अत्यन्त दिलचस्प मरीज़ के कारण ही उसे इतनी देर लग रही होगी। बेचारा, उसको आशा यही थी कि अलेक्सान्दर ने उसे बचा लिया होगा। बहरहाल, अलेक्सान्दर अगली सुबह नौ बजे से पहले प्रकट नहीं हुआ, वह सुबह चार बजे तक काम जो करता रहा। "बहुत ही दिलचस्प केस था वेरा, लेकिन बहुत ही ज़्यादा पेचीदा।"—"बचा लिया न तुमने?"—"बचा लिया मैंने।"—"फिर भी इतनी जल्दी उठके तैयार होकर यहां पहुंच गये?"—"बिस्तर पर लुढ़क ही कहां पाया?"—"क्या? तुम सोचे ही नहीं, यहां पर जल्दी से जल्दी पहुंचने के लिए? बड़े शर्म की बात है, श्रीमान्। बरायमेहरबानी आप घर तशरीफ़ ले जाइये और फ़ौरन दोपहर के खाने के समय तक बिस्तर की शरण में पड़े रहिये—मैं जब पहुंचूं तो आप मुझे सोते हुए मिलें अन्यथा...।" दो मिनट बाद वह रास्ता नाप चुका था।

तो यही हैं उनके इकट्ठा गुज़रे पहले-पहले क्षण। अधिक उपयुक्त रूप से संयत उनका दूसरा लंच उसी दोपहर को हुआ, दोनों ही अपने-अपने अनुभव की चर्चा पर्याप्त रूप से कर सके, जो पिछली रात की हंसी, अन्यमनस्कता, सहानुभूति का विचित्र संगम वार्तालाप से बिल्कुल ही भिन्न था, जब कि मुख्य मुद्रा यही थी कि किसने ज़्यादा यातना झेली थी... दस दिन बाद, उन्होंने कामेन्नी द्वीप पर एक छोटी-सी कॉटेज किराये पर ले ली।

6

वेरा अपने नये प्रेम के प्रभात के बारे में कभी ही सोचने बैठती है; क्योंकि वर्तमान उसे स्मरण करने का समय ही बहुत कम प्रदान करता है। लेकिन, इस कभी-कभी में ऐसे क्षण होते हैं (और पिछले कुछ समय से बहुधा अधिकाधिक होने लगे हैं) जिनमें स्मृति असंतोष का ऐसा स्वर होता है, जो सब प्रकार की परिभाषा से परे रह

जाता है जब तक कि वह स्वयं अपने को उसी को पात्र नहीं समझ लेती—भला किसलिए? ओह; अभिमान का दोष। क्या यह केवल अतीत पर लागू होता है? शुरू में तो शायद, लेकिन कुछ ही समय में यह वर्तमान तक विस्तृत हो जाता है और इस दरमियान अत्यन्त विचित्र आकृति धारण कर लेता है, व्यक्तित: वेरा पावलोव्ना किरसानोवा के प्रति व्यक्तिगत असंतोष की भावना नहीं बल्कि आत्म प्रक्षिप्त सहस्रों गुना लाखों-लाख मुंहों की गरजना बन जाती है। वे लाखों कौन हैं और किस दोष की शिकायत करते हैं? पहले की तरह अगर उसको अपनी मरज़ी पर अकेला छोड़ दिया जाय तो वह शायद ही इतनी जल्दी जवाब ढूंढ़ पाये, लेकिन अपने पति के साथ नित्य परामर्श के फलस्वरूप वह उसके (वेरा के) प्रत्येक विचार में बस गया था और उनकी भावनाओं को एकाग्र करने में बहुत मदद की थी। वह ख़ुद प्रत्यक्ष रूप से कार्य नहीं कर सकता था, वेरा के लिए रहस्यमय भाव उसके लिए तो और भी अधिक रहस्यमय होता था और जहां तक शुद्ध रूप से निरवैयक्ति असंतोष का प्रश्न है, तो इसकी संकल्पना ही घबरा देनेवाली थी। कुल मिलाकर, वह वेरा की तुलना में सैकड़ों गुना हक्का-बक्का होता था। अपने पति के निरन्तर ख़्याल, उसकी प्यारी उपस्थिति से उनके परस्पर सान्निध्य से ही रहस्य का समाधान हुआ। क्यों अब वह यह समझ पाने लगी थी कि असंतोष की प्रत्येक टीस अपने पति के बीच तुलना की भावना उत्पन्न करती। यह आत्मबोध उत्पन्न होता, जिसे एक शब्द "मतभेद" में व्यक्त किया जा सकता है, जो भर्त्सना योग्य है। अब वह सब कुछ समझ गयी।

7

"कितना रुचिकर व्यक्ति है, वही श्रीमान न० (अपने दु:स्वप्न में वर्णित अफ़सर का उल्लेख वह इसी नाम से करती थी, जिसकी सहायता से वह ताम्बरलिक से परिचय करना चाहती थी), वह मेरे लिए एक और नयी कविता लाया है जो अभी कुछ समय तक प्रकाशन का मुंह नहीं देख पायेगी। हम अपना डिनर अभी समाप्त

कर लेंगे और फिर तत्काल पढ़ना शुरू कर देंगे—ठीक है? मैं इसे पढ़ने के लिए बहुत उतावली हूं, लेकिन, अलेक्सान्दर, तुम्हारे बिना तो मैं किसी भी चीज़ को हाथ नहीं लगाऊंगी।"

"किस बारे में है?"

"यह तो देखना पड़ेगा। तभी पता चलेगा कि वह उत्तम कोटि की है या नहीं। लेकिन श्रीमान न० का कहना है कि उसे—तात्पर्य लेखक से है—उसे इस रचना पर पर्याप्त सन्तोष है।"

दोनों ही वेरा के कमरे में आराम से बैठ गये और वेरा ने पढ़ना शुरू किया:

हां, बाले, बकस भरा पड़ा है,
छींट, साटन और किमखाब से,
इसे ढोनेवाले के कंधे पर बाला रहम कर...

बारहवें अथवा ऐसे ही किसी पद्य पर किरसानोव ने कहा: "स्पष्ट ही कवि ने अपने लिए नयी शैली ढूंढ़ ली है। फिर भी यह बताया जा सकता है कि इसे नेक्रासोव ने लिखा है, ठीक है न? बहुत-बहुत शुक्रिया कि तुमने इसे मेरे साथ बैठकर पढ़ने तक का इन्तज़ार किया।"

"क्यों नहीं कर सकती थी क्या।" वह चहकी। दोनों ने मिलकर दो बार उस छोटी कविता को पढ़ा; लेखक के एक मित्र की कृपा से, जिसे वे जानते थे, उन्हें यह सौभाग्य मिला प्रकाशन से तीन वर्ष पहले।

"जानते हो तुम कि मुझे किन पंक्तियों ने सबसे अधिक प्रभावित किया?" अनेक पद्यों को जब वे तीसरी और चौथी बार पढ़ चुके दोनों, तो वेरा ने प्रश्न किया। "चरम परिणतिवाले प्रसंग नहीं, बल्कि वह दृश्य जिसमें कात्या अपने प्रेमी के लिए विकल-विह्वल है—बारम्बार याद आता रहता है:

शोक से मुरझा जाती, युवती, यदि समय होता
केवल एक बार ही तुम्हारा अपना शोक होता,
लेकिन यह तो व्यस्त और हलचल भरा है और याद रखो, युवती
तब तक रहेगा, जब तक दर्जनों काम नहीं हो जाते।
क्योंकि चाहे जितना क्लान्तिकर हो क्षण
और वह सुन्दर तरुण सिर झुका है नीचे
दरांती तेज़ी से सिसकारती खुले स्थान में चलती जाती है

हंसिया कतार के साथ मेहनत से बढ़ता है
प्रभात के उदय होने से लेकर गाहती रहती है
अपनी कन्योचित शक्ति से सदैव की नाईं, वह,
और बांगर में ओस की बूंदें गिरकर दमक रही हैं
रात की गहराई में उसके सन पर विस्तृत। *

"मेरा कहना है कि यह कोई प्रमुख प्रकरण नहीं है, लेकिन वान्या के साथ कात्या के अपने जीवन की परिकल्पना की पूर्वपीठिका जैसा कुछ है। कुछ भी कहो, निश्चय ही इसने मेरे मन को बांध लिया।"

"सहमत हूं बिल्कुल, यह उद्धरण सर्वोत्कृष्ट में से है, यद्यपि संरचना की दृष्टि से इतना तीक्ष्ण नहीं कि तुम्हें पर्याप्त रूप से प्रभावित करे। हां यह बात दीगर है कि यह तुम्हारे सोच के वर्तमान प्रवाह के लिए प्रासंगिक हो। बताओगी इस बारे में कुछ मुझे?"

"खुशी से। हम बहुधा यह समझते हैं कि स्त्री का शरीर-गठन पुरुष से उत्तम होता है और इसलिए शक्ति के स्वामी न रह पाने की स्थिति में तत्काल ही बौद्धिक श्रेष्ठता धारण कर लेने में समर्थ होती है। हमारा भविष्य कथन इस अवलोकन पर आधारित है कि पुरुषों की तुलना में अधिक महिलायें जन्मजात बुद्धिमति होती हैं। तुम लोगों ने इसकी पुष्टि में शरीर-विज्ञान के प्रमाण भी दिये हैं।"

"वेरा, तुम लोग हम बेचारे पुरुषों को कितना बुरा-भला कहती हो। उससे कहीं ज़्यादा जितना कि मैं अपनी मर्द जाति को कहूंगा। अच्छी बात है कि नारीवाद का युग अभी कोसों दूर है अथवा मुझे बौद्धिकता के उस द्वितीय स्थान से बाहर रहने के लिए अपने ही शब्द वापस लेने पड़ते। इसके अलावा, यह तो परिकल्पना है और इसे सिद्ध करने के लिए अभी हमारे पास अत्यन्त कम वैज्ञानिक साक्ष्य उपलब्ध हैं।"

"बिल्कुल सही कहा, प्रिय। हम इस पर विचार-विमर्श कर चुके हैं कि ऐतिहासिक साक्ष्य क्यों व्यक्तिगत व्यवहार में इतनी दृढ़ता से स्थापित अनुमिति का और शरीर की संरचना का ही खण्डन करे।

* नि० अ० नेक्रासोव (1821—1878) की कविता से उद्धृत।—सं०

यदि स्त्री ने आज तक बौद्धिक जीवन में महत्त्वहीन भूमिका अदा की हैं, तो यह केवल इसीलिए कि शक्ति के बलबूते गढ़े गये आधिकारिक सिद्धान्त ने उसे आत्म विकास के साधनों व प्रेरणा-स्रोत, दोनों से ही वंचित रखा है। मैं अपनी बात को यहीं समाप्त कर सकती हूं, लेकिन मैं चाहती हूं कि आप एक मुद्दे पर और ग़ौर करें। शारीरिक दृष्टि से निर्बलतर होते हुए भी स्त्री वास्तव से अधिक हृष्ट-पुष्ट है—ठीक है न?"

"अब कम से कम तुम जन्मजात बौद्धिक भिन्नता के सवाल की अपेक्षा अधिक ठोस आधार की दिशा में बढ़ गयी हो। स्त्री का शरीर निश्चय ही जलवायु और कुपोषण की कठोरता का प्रतिरोध अधिक कर सकता है। यद्यपि आयुर्विज्ञान और शरीर-रचना विज्ञान की शोध अभी अपूर्ण ही है, तथापि आंकड़ों से यह अकाट्य रूप से सिद्ध हो गया है कि स्त्री पुरुष की तुलना में अधिक आयु-भोग्या है। इससे यही संकेत मिलता है कि स्त्री दोनों में से अधिक हृष्ट-पुष्ट होती है।"

"इसके साथ मिला दीजिये स्त्री की अस्वस्थ दिनचर्या और हमारे तर्क को सम्पुष्ट आधार प्राप्त हो गया।"

"शरीर विज्ञान से हमें और अधिक परिपुष्टि उपलब्ध होती है। स्त्री पुरुष से अपेक्षाकृत पहले परिपक्व हो जाती है। पुरुष 25 वर्ष में तो स्त्री 20 वर्ष में ही। जलवायु और देश स्थिति से कुछ अन्तर हो सकता है। मान लें, लगभग ही नहीं, जितनी स्त्रियां 70 वर्ष की आयु को प्राप्त होती हैं, पुरुष उसी अनुपात से 65 की आयु प्राप्त करते हैं और इसके साथ ही साथ परिपक्व होने की भिन्न दरों को ध्यान में रखें तो स्त्री शरीर उससे कहीं अधिक पुष्ट होते हैं, जितने कि सांख्यिकीविद ने बताये हैं, जो कि हृष्ट-पुष्टता को अनदेखा कर देता है। देखो न, 70 20 का साढ़े तीन गुना होता है और 65 को यदि 25 से भाग दें तो ढाई गुने से कुछ अधिक होगा... 2 दशमलव 6। इस प्रकार स्त्री अपने परिपक्व होने तक के समय से साढ़े तीन गुना अधिक समय तक जीवत रहती है जब कि पुरुष अपने विकास के केवल 2 दशमलव 6 गुना समय तक ही। पुष्टता का सच्चा माप यही है।"

"मैंने जो कुछ पढ़ा है, उससे तो मेरा विश्वास यही है कि यह भिन्नता कहीं अधिक है।"

"ठीक है, लेकिन यह बात ध्यान में रखो, कि सिर्फ़ उदाहरण के लिए ही बात कर रहा था और केवल पूर्णांकों का ही उपयोग कर रहा था। यह बात नहीं कि मेरे सामान्य निष्कर्ष अप्रामाणिक हैं। एकमात्र जीवन-प्रत्याशा पर आधारित आंकडों की सूचनाओं के चार्टों ने स्त्री शरीर की अपेक्षाकृत अधिक बल-तेजस्विता प्रदर्शित की है। इसे शरीर विज्ञान विषयक विवरण में जोड़ दो और आपने जो भिन्नता बतायी है वह और अधिक हो जायेगी।"

"यह बात है। इससे तो एक और प्रश्न उठ खड़ा होता है, जो पिछले कुछ समय से मुझे परेशान किये हुए है। अर्थात, स्त्री शरीर की प्रघात के प्रति अधिक प्रतिरोध शक्ति नैतिक अथवा भावनात्मक विकलता के सन्दर्भ में भी लागू मानी जानी चाहिये। जबकि, वास्तविकता में हम देखते हैं कि बात इसके बिल्कुल उलट ही होती है।"

"ठीक बात है, दोनों पक्षों को सिद्धान्त रूप से सदृश होना चाहिये। यद्यपि इस 'सिद्धान्त रूप से' की अभी उपयुक्त जांच-पड़ताल की जानी शेष है, तुमने अकाट्य तथ्य से यह परिणाम निकाल लिया है: सुदृढ़ तंत्रिकाओं के शरीर की सम्पूर्ण शक्ति से घनिष्ठ सम्बन्ध होता है। उचित ही लगता है यह कि स्त्री की तंत्रिका प्रणाली अधिक लचीली होती है, अधिक स्वस्थ और इसलिए सिद्धान्त रूप से उसे अपेक्षाकृत अधिक सहजता और दृढ़ता से दबाव का सामना करने में समर्थ होना चाहिये। लेकिन इसके विपरीत, जीवन में ऐसे प्रति-लक्षणों की भरमार है; जिस बात पर अत्यधिक स्त्रियां यातना झेलती हैं, पुरुष उस बात को यूंही उड़ा देगा। हमारी वर्तमान ऐतिहासिक परिस्थितियों में दृष्टिगोचर तथ्य और शारीरिक संरचना के युक्तियुक्त परिणामों में अन्तर्विरोध की जड़ों की तहक़ीक़ात अभी तक विज्ञान ने नहीं की है। एक बात स्पष्ट दिखायी देती है, इसमें अतीत और वर्तमान की सभी परिस्थितियां शामिल हैं। यह पक्षपात का बल है, असत्य प्रत्याशा और उससे भी कहीं अधिक असत्य भय। अपने आप से यह कहना: 'मैं ऐसा नहीं कर सकता' का मतलब सचमुच ही असमर्थ होना है। स्त्रियों से बहुधा यह कहा गया है कि

के निर्बल हैं इसलिए वे ऐसा महसूस करती हैं और सचमुच ही पर्याप्त निर्बल हैं। देखा ही होगा कि बिल्कुल स्वस्थ लोग सम्मोहन की शक्ति के कारण दुर्बल हो जाते हैं और मर जाते हैं। ऐसे उदाहरण हैं, जो पूरे के पूरे समूहों, राष्ट्रों, सम्पूर्ण मानवता से सम्बन्धित हैं। सबसे ज्वलंत उदाहरण सैनिक इतिहास है। मध्य कालीन पैदल सेना ने यह बात मन में बिठा ली थी कि वह घुड़सवार सेना का कभी मुक़ाबला नहीं कर सकती और इसलिए हज़ारों की संख्या में मारी गयी, सैकड़ों अश्वारोहियों द्वारा मानो भेड़ों की तरह खदेड़ दी गयी हों, जब तक कि गर्वीले, स्वाधीन अंग्रेज़ जागीरदारों ने इसका ख़ात्मा नहीं कर दिया, जिन्हें यूरोप महाद्वीप में रहनेवाले अपने भाइयों के डर के बारे में कुछ भी नहीं मालूम था और जो पीछे लौटने के आदी नहीं थे अथवा कम से कम पहले लड़ाई लड़े बिना तो हरगिज़ नहीं। मैंने बताया न, इस बात से बेख़बर कि अश्वसेना को देखते ही भाग जाना है, बलिष्ठ अंग्रेज़ों ने प्रत्येक अश्वारोही सेना कोर के पांव उखाड़ दिये, जो उसके सामने पड़ी—उनकी संख्या चाहे जितनी अधिक रही हो—मुझे क्रेसी, पुअटिये और एज़िनकूर में उसके कारनामों को बताने की तुम्हें शायद ज़रूरत नहीं, जो अनुश्रुति बन चुके हैं। इसी प्रकार जब स्विस पैदल सैनिक ने अन्तत: यह समझ लिया कि वह सामन्ती अश्वसेना से किसी भी रूप में निर्बल नहीं है, तो वह आस्ट्रियाई अश्वारोहियों के ख़िलाफ़ जीता और फिर इससे भी अधिक बलशाली बर्गंडी की फ़ौज के ख़िलाफ़, और अपने सामने आये किसी भी अन्य अश्वारोही बल के ख़िलाफ़ जीता। उस समय तक संसार पैदल सेना की श्रेष्ठ शक्ति को स्वीकार करने के लिए तैयार हो चुका था, जो सदियों तक शुद्ध पूर्वग्रह के कारण स्तम्भित पड़ी थी।"

"तुम ठीक कहते हो, अलेक्सान्दर। हम इसलिए निर्बल हैं क्योंकि हम अपने आपको निर्बल सोचती हैं। एक और कारण भी है, अथवा मैं अपने दोनों के बारे में सोचकर ऐसा मानती हूं। मुझे यह बताओ प्रिय, जिन दो हफ़्तों में हम अलग-अलग रहे, तो क्या उनके दौरान मैं कुछ अधिक बदली? सच है कि हमारे पुनर्मिलन से उत्पन्न उत्तेजना के कारण तुम्हारी भावना अनुचित रूप से प्रबल हो गयी होगी—क्या कहते हो अब तुम?"

"यही कि तुम्हारे वज़न और आभा में सचमुच ही बहुत कमी आ गयी थी"

"बिल्कुल सही। और इसी को मैं अब सबसे अधिक अपमान मानती हूं। तुमने, जो मुझसे किसी भी मात्रा में कम प्रेम नहीं करते थे, कैसे यह संघर्ष इतने सहज ढंग से झेल लिया?"

"अच्छा, यह बात है, इसीलिए तुम कात्या द्वारा दिल के दर्द के इलाज से इतनी प्रभावित हुइ। तुम जानना चाहती हो कि क्या मैंने भी वह सब भोगा। क्यों नहीं। कवि ने सच ही कहा है। दोनों में से मेरा संघर्ष अपेक्षाकृत आसान था, क्योंकि मुझे सोचने का समय ही बहुत कम मिलता था। और जब भी मैं सोचता था, तो पीड़ा होती थी, लेकिन, अधिकांश समय तक, प्रतिदिन का जीवन-व्यापार मुझे बहुत ही अधिक व्यस्त रखता था। रोगी और व्याख्यान मुझे बलात् मुक्ति प्रदान कर देते थे, और जो मुक्त विरल क्षण मुझे मिलते भी थे, वे थककर बिल्कुल चकनाचूर हो गये क्षण होते थे। सच कहता हूं, अगर मुझे एक हफ़्ता भी बिल्कुल अपने लिए मिल जाता, तो मेरे विचारों ने मुझे पागल हो कर दिया होता।"

"और मैं अभी-अभी यह समझ सकी हूं कि इसी में हम दोनों के बीच का अन्तर छिपा है। आदमी के पास कोई ऐसा काम होना चाहिये जिसे क्षण भर के लिए भी टाला न जा सके। यही संकल्प का प्रबल स्रोत है।"

"तुम भी तो बिल्कुल बेकार नहीं थी, और न ही अब हो।"

"अलेक्सान्दर, क्या तुम सचमुच यह समझते हो कि मैं अपने काम में तल्लीन हूं? मैं तो बस जब चाहती हूं तभी समय लगाती हूं, जब मेरे मन में आ जाय तो किसी भी काम में कटौती कर देती हूं या फिर उसे बिल्कुल मुल्तवी कर देती हूं। यह ऐसा काम है, जिसे भावनात्मक दबाव में बिना विशेष इच्छा उत्पन्न किये नहीं किया जा सकता। बस, ज़रूरत के नाम पर नहीं। उदाहरण के लिए, गृह-व्यवस्था ही में मेरा बहुधा अधिक समय निकल जाता है, लेकिन इसमें दस में से नवां हिस्सा स्वेच्छा से व्यय करती हूं। कोई अच्छी नौकरानी शायद ही और कोई बदलाव इसमें कर सके। और फिर जो नगण्य बेहतर परिणाम मैं तथाकथित रूप से हासिल करती हूं, उनके

लिए भारी मात्रा में समय क्यों गंवाया जाय? सनक के सिवा इसे और क्या कह सकती हूं: शान्त अवस्था में मैं कुछ न कुछ करती हूं और भावनात्मक दबाव में काम छोड़ती हूं क्योंकि इसकी विशेष ज़रूरत नहीं। वास्तविक रूप में परमावश्यक सरोकार हमेशा ही वरीयता ग्रहण कर लेते हैं। भावनात्मक हलचल का पहला संकेत मिलते ही क्षुद्र सरोकारों का परित्याग कर दिया जाता है। मेरी ट्यूशनें मेरे घर के कामकाज से ज़्यादा महत्त्वपूर्ण हैं, क्योंकि किसी सनक के कारण उसकी अवहेलना नहीं की जा सकती। लेकिन जितना मैं चाहती हूं, उससे ज़्यादा उधर ध्यान नहीं देती। थोड़ी-सी कमी से कोई, पहाड़ नहीं टूट पड़ेगा और मेरी पूर्ण ध्यान मग्न नसों के लिए प्रयास बहुत कम करना होता है। इसे मेरी जीविका निर्वाह का साधन, मेरा एकमात्र जीवनाधार अथवा जो जीवन मैं जी रही हूं उसका असली तत्व तो हरगिज़ नहीं कहा जा सकता। वह भूमिका कभी द्मीत्री ने निबाही थी और आज तुम निभा रहे हो। ट्यूशनें स्वतंत्रता का भ्रम उत्पन्न करता है मेरे मन में और किसी के लिए उपयोगी होने की कुछ भावना। यही बस आदि और अन्त—सब कुछ नहीं है। जब मैं दोबारा अपने मन को सभी प्रकार की परेशानियों को हटाने के लिए कार्यशाला के काम की ओर झुकी, तो यह प्रयत्न फिर भी स्वेच्छाचारितापूर्ण ही था। वहां की युवतियों को घंटा भर के लिए अथवा अधिक से अधिक डेढ़ घंटे की मेरी आवश्यकता थी। इससे अधिक ठहरना, बस काम का बहाना था। उपयोगी भले ही था किन्तु किसी भी रूप में परमावश्यक नहीं। क्या इस प्रकार परोपकारिता के कारोबार से मुझ जैसी साधारण स्त्री का काम चल सकता है? रहमेतोव तो बिल्कुल ही दूसरी प्रजाति का है जो आम ध्येय के लिए जीते और सांस लेते हैं और वास्तव में इसे अपने ही हित से पूर्ण रूप से अभिन्न समझते हैं। इस प्रकार अपने को भुला देना तुम्हारे और मेरे बस की बात नहीं, अलेक्सान्दर, आम आदमियों के बस के परे, जिनकी आवश्यकतायें शुद्ध रूप से व्यक्तिगत होती हैं। अब मैं तुमसे पूछती हूं, क्या कार्यशाला मेरे व्यक्तिगत ध्येय है किसी भी रूप से? अथवा यह मेरे लिए आस्था का विषय है। मेरा कहना है, मैं उनमें से नहीं, जो मुसीबत के समय अपने को भूल जाऊं अथवा अपने विश्वासों के लिए

अपने व्यक्तिगत संकट की अवहेलना कर सकूं। यह स्थिति तो ऐसे व्यक्तिगत, ऐसे तात्कालिक, और प्रत्येक वित्तीय, सामाजिक और घोर अनुरक्ति भावना की दृष्टि से इतने विषम रूप से कार्य करने की अपेक्षा करती है कि मनोवेग की प्रत्येक गुहार को कुचल दे। मनोभाव के अतिक्रमण के विरुद्ध यही हमारी एकमात्र आशा है, हमारी शक्ति और नवजीवन का स्रोत है। और मैं इसे ही चाहती हूं।"

किरसानोव ने कहा: "अवश्य मेरी दोस्त, क्यों नहीं।" और यह कहकर उसने अपनी पत्नी का चुम्बन ले लिया, जिसकी आंखें दमक रही थीं। "देखो तो, पहले कभी मुझे यह ध्यान ही नहीं आया, कितनी अधिक साधारण-सी बात है! जानती हो वेरा, अपने दिमाग़ से बढ़कर और कोई दूसरा दिमाग़ नहीं होता। अगर तुम सुख-शान्ति चाहते हो तो अपने आप सोचो और अपने लिए ही सोचो—कोई दूसरा इसे आधी अच्छी तरह भी नहीं सोच सकता। मेरी प्यारी, इसी तरह प्यार करना जिस तरह मैं तुम्हें प्यार करता हूं, मगर तुम्हें इस बारे में आंखें खोलनी पड़ी, कैसी विडम्बना! किन्तु रुको!" अब उसके चुम्बनों और मुक्त हंसी में अदला-बदली चल रही थी। "अतीत की सहसा आवश्यकता क्यों? तुम किसी दूसरे को प्यार करने की तो नहीं सोच कर रही हो, नहीं न?"

वह इतने उन्मुक्त रूप से हंस पड़ी कि काफ़ी देर तक हंसी के मारे दोनों में से कोई भी कुछ नहीं बोल सका।

फिर जैसे-तैसे वही बोली: "अब हम दोनों इस मज़ाक़ का लुत्फ़ उठा सकते हैं; अब जबकि हम दोनों को ही इसका पक्का यक़ीन है कि कोई भी इस प्रकार का कुछ नहीं करेगा। हालांकि, मैं यह गंभीरतापूर्वक कह रही हूं, यदि मैंने द्मीत्री को पूर्ण विकसित स्त्री के रूप में प्रेम नहीं किया तो मेरे प्रति उसकी भावना भी वह नहीं थी जो तुम या मैं इस शब्द के अर्थ के रूप में समझते हैं, बल्कि वह पक्की दोस्ती और क्षणिक वासना का मिला-जुला रूप था। पक्की दोस्ती विशेष रूप से मेरे प्रति और वासना सामान्य रूप से स्त्री के लिए। उसके मन में जो भी उत्ताप था, उसका मुझसे कम या कुछ भी लेना-देना नहीं था। यदि वह मेरे बारे में इतना कम सोचता था, तो क्या वही प्रेम था? क्या दोनों में किसी की भी ओर से प्रेम था?"

31—1127

"वेरा, तुम उसके साथ अन्याय कर रही हो।"

"नहीं, मेरे दोस्त, मैं सच कह रही हूं। हमें उसकी प्रशंसा का राग अलापने की ज़रूरत नहीं हर घड़ी। खास तौर से ऐसे में जब हम दोनों ही यह जानते हैं कि कितना सम्मान करते हैं उसका हम। कितनी यातना झेली उसने, कितना ही इनकार क्यों न करे वह इससे, वैसे ही जैसे तुम अपने सन्तापी संघर्ष से करते थे। ये बड़ी उदार भावनायें हैं और सच भी, किन्तु इन्हें शब्दशः स्वीकार नहीं किया जा सकता। मुझे पता है, मेरे दोस्त, अच्छी तरह पता है कि तुम पर क्या गुज़री... बहुत अच्छी तरह..."

"ज़रा संभलके, तुम तो मेरा दम घोट रही हो। क्या तुम भावनाओं की शक्ति के सिवा शारीरिक शक्ति भी दिखाना चाहती हो? हां, तुम बहुत शक्तिशाली हो और क्यों नहीं ऐसी छाती जो है तुम्हारी?..."

"ओह, प्यारे अलेक्सान्दर..."

8

कोई दो घंटे बाद, चाय के समय, वेरा ने फिर बात छेड़ी: "तुमने जो बहस बीच में ही भंग कर दी थी, उसका सूत्र फिर पकड़ें।"

"मैंने बीच में भंग कर दी थी?"

"और किसने?"

"किसने शुरू किया?"

"शर्म तो नहीं आती?"

"किस बात की?"

"शालीन महिला को संकट में डालने और भावशून्य बने रहने की।"

"भला मेरी मजाल! क्या तुम समानतावादी नहीं हो? तो फिर पहल करने के बारे में समानता कहां गयी?"

"अब लगे बात बनाने। लेकिन निश्चय ही तुम मुझे असंगत तो नहीं कह रहे? क्या मैं समान पहल के लिए अपनी ओर से कुछ नहीं

करती? उदाहरण के लिए, अभी-अभी मैं उस गंभीर विचार-विमर्श को फिर आरंभ करना चाहूंगी, जिसे हम लगभग भूल ही चुके थे।"

"सब पहल तुम्हारी ही हैं। तुम्हें अकेले ही इसे जारी रखना होगा। फ़िलहाल मैं तो भूलने की पहल करना चाहता हूं। पकड़ाओ तो अपना हाथ मुझे।"

"अलेक्सान्दर, इस तरह हम बात अधूरी नहीं छोड़ सकते।"

"कल पर्याप्त समय होगा इसके लिए। अभी तो मैं इस हाथ की ओर ध्यान देना चाहूंगा—बड़ा दिलचस्प मामला है।"

9

अगली सुबह वेरा ने कहा: "अब हम उस बात से निबट लें क्या? अगर आज मैं तुम्हारे साथ चलना चाहती हूं, तो तुम्हें सचमुच यह पता होना चाहिये कि क्यों?"

"तुम मेरे साथ चल रही हो?"

"जी हां, बिल्कुल, निश्चित रूप से। तुम्हीं ने तो पूछा था कि मैं कार्य को इतना परमावश्यक, इतना अपेक्षित और इतना मूल्यवान अपने लिए क्यों मानती हूं, जितना कि तुम अपने कार्य को मानते हो। निस्सन्देह, आत्माभिमान बढ़ाने के लिए। अनुराग से लड़ने में इसे अत्यन्त अपमानित होना पड़ा—सभी को उसकी चोट स्पष्ट दिखायी पड़ती थी। मुझे पीड़ा का कोई पश्चाताप नहीं है: तुमने भी तो मुझसे कुछ कम यातना नहीं झेली। पीड़ा वहीं उत्पन्न होती है, जहां आवेग घना होता है और उसे त्यागना नहीं चाहिये। मुझे सहारे की कमी थी, जबकि तुम्हें यह उपलब्ध था। इसी पश्चाताप से वह आवश्यकता उत्पन्न हुई, जो अब वास्तविकता बन गयी है: मैं हर दृष्टि से तुम्हारे समान होना चाहती हूं। और मैंने मार्ग प्राप्त कर लिया है। यह मुझे कल सुबह तुम्हारे चले जाने के बाद सूझा। मैं पूरे दिन उस पर विचार करती रही बस अकेले-अकेले, क्योंकि तुमने दयालु विश्वसनीय परामर्शदाता के रूप में अपनी छवि छिन्न-भिन्न कर दी थी। अब सुधार करने में बहुत देर हो चुकी है, मेरा मन पक्का हो चुका है। अलेक्सान्दर, तुम्हें बहुत जूझना पड़ेगा

इस दौरान, लेकिन अगर मैं सफल हो गयी, तो हम मिलकर शांनदार जश्न मनायेंगे।"

वेरा को ऐसा व्यवसाय मिल गया था, जिसकी कभी वह कल्पना भी नहीं कर सकती थी और अब किरसानोव की स्थायी सहायता से विश्वासपूर्वक उसका प्रयास कर सकती थी। लोपुखोव कभी उसके आड़े नहीं आया था, न ही वही कभी उसके मार्ग में आयी थी, फिर भी उनका परस्पर प्रोत्साहन यहीं तक था। नहीं, ऐसी बात नहीं। हरगिज़ नहीं। क्योंकि वह तो हमेशा ही जब भी ज़रूरत हो तब लोपुखोव की दैहिक और मानसिक सहायता पर भरोसा कर सकती थी, लेकिन कभी भी दूसरे के बिना नहीं और तभी जब कि दोनों का मिलकर करना ही परमावश्यक हो। वह किरसानोव की ही तरह सुदृढ़ चट्टान हो सकता था मदद के लिए, यह उसने बहुत अच्छी तरह सिद्ध कर दिया था। उसने अपने मनचाहे पेशे को लात मारकर और भूखों मरने की दावत को स्वीकार करके भी उससे विवाह किया था। हां, वह हाथ किसी भी आपात स्थिति के लिए तत्पर था, भले ही वह ऐसी स्थिति से पहले दिखायी न पड़ता हो। कार्यशाला की स्थापना का समय आया, उसकी मदद सहर्ष मिली, जब भी आवश्यकता पड़ी, जो पता नहीं क्यों बहुत कम मौक़ों पर पड़ी और बस थोड़े से अतिरिक्त उत्साह प्रदान किये जाने से अधिक कभी नहीं पड़ी। उसको अपना काम-काज करना होता था और वेरा को बिल्कुल अपने ढंग से काम-काज के लिए उसने अकेला छोड़ रखा था। किरसानोव ऐसा नहीं है, उसे हर उपक्रम में शामिल होने के लिए, उसकी प्रत्येक रुचि में सहभागी बनने के लिए किसी निमंत्रण की आवश्यकता नहीं, जैसे कि वह भी उसके सिलसिले में करती है। उसका दूसरा विवाह पहले से बिल्कुल ही अलग-थलग है, उस सबको तात्कालिक रूप से प्राप्त करने के लिए नया स्रोत जो कभी असंभव, विलक्षण रूप से आदर्श उपलब्धि लगता था।

ये थे उसके विचार, जिन्होंने उसके दिल को छू लिया था और उसके संकल्प को प्रोत्साहित किया था।

10

"औपचारिक रूप से नागरिक जीवन की प्रत्येक राह हमारे लिए बन्द होती है, जो शेष रहती हैं, उनमें से अधिकांश को व्यावहारिक रुकावटें मिटा देती हैं। हम परिवार के संकीर्ण सीमा में सीमित रहती हैं। हम गवर्नेस अथवा ट्यूटर के पेशे के सिवा और कोई पेशा अपना नहीं सकतीं, और ट्यूशन पाने की स्थिति तो सीमित रहती है, बस पुरुष जो थोड़े-बहुत स्थान छोड़ देते हैं, वही तो मिलते हैं। अपने एक पथ पर चलनेवाली अनेक हैं, प्रतिस्पर्द्धा इतनी प्रबल होती है कि हम जो स्वाधीनता चाहते हैं वह आसानी से नहीं मिलती। हमारे लिए विकल्प अत्यन्त व्यापक होते हैं कि हमारे लिए चुनने को कुछ विशेष बचता ही नहीं। बस पता भर लगने दीजिये कि आपको गवर्नेस की ज़रूरत है तो अन्य निन्यानवे से आगे निकल जाने के लिए सैकड़ों आवेदन आ जायेंगे।

"जब तक कई व्यवसायों में महिलायें आगे बढ़कर घुसेंगी नहीं, तब तक स्वाधीनता का उपभोग नहीं कर पायेंगी। निस्सन्देह, पुरोगामी बनना कोई आसान काम नहीं। यद्यपि मुझे जो सुविधा प्राप्त है उसमें यदि मैं चेष्टा न करूं, तो लज्जा की बात होगी। मेरा स्त्री होना किसी गंभीर प्रयास के लिए अनुपयुक्त है, और मुझे यह भी तो नहीं मालूम कि अपनी कमी को पूरा करने के लिए मुझे कितने पथप्रदर्शन की दरकार होगी। अलबत्ता, मुझे यह मालूम है कि पथप्रदर्शक ऐसा हो, जो मेरे पास प्रतिदिन हो, प्रतिघंटे हो। और उसकी सहायता उतने ही प्रफुल्ल ढंग से दी जाय, जितने आनंद के साथ उसे ग्रहण किया जाय।

"क़ानून स्वाधीनता के लिए जिन मार्गों को खुला छोड़ता है, परम्परा उनको बन्द करती है। लेकिन, इनमें मैं जो चाहूं चुन सकती हूं, बशर्ते कि मैं परम्परा का मुक़ाबला कर सकूं। एक विकल्प मेरे लिए सबसे श्रेष्ठ है। मेरा पति डाक्टर है, जो अपने अवकाश का प्रति पल मेरे साथ बिताता है। इस प्रकार के मददगार के रहते मैं सहज ही चिकित्सा क्षेत्र में अपना हाथ आज़मा सकती हूं।

"महिला डाक्टर इस पेशे में तथा अपनी बहनों के लिए मूल्यवान योगदान कर सकती हैं। हम पुरुषों की अपेक्षा एक-दूसरे

से अधिक स्पष्ट होती हैं—ज़रा सोचो तो, अनावश्यक यातना और मृत्यु के बारे में, जो कि हम रोक सकती हैं! प्रयास अवश्य करना चाहिये।"

11

वेरा की ओर से वार्तालाप समाप्त हो गया, हैट पहन लेने और किरसानोव के साथ-साथ अस्पताल की ओर रवाना होने के साथ। वहां रक्त देखकर और चीर-फाड़ की कठिनाई देखकर अपनी शक्ति की परीक्षा करने के लिए। कहने की आवश्यकता नहीं कि किरसानोव की अस्पताल में जो हैसियत थी, उससे इस बात पर किसी के आपत्ति करने का तो कोई सवाल ही नहीं था।

मैंने अपनी नायिका के कम काव्यात्मक पक्ष के बारे में कोई अतिरंजना नहीं की है। यह ज्ञान हो कि वह नियमित रूप से भोजन करती है और उसको भूख ज़ोरदार लगती है, यद्यपि वह दिन में दो बार चाय पीती है। अब मैं ऐसी बात का उल्लेख करना चाहता हूं, जो मेरे जैसे भ्रष्ट विचारोंवाले के लिए भी अत्यन्त लज्जाजनक है, संकोच ही मुझे यह आश्चर्य करने के लिए बाध्य करता है कि कहीं बुद्धिमानी ही तो दिलेरी से बेहतर नहीं है आदि। मेरा पाठक ऐसी स्त्री के बारे में क्या सोचेगा जो चिकित्सा शास्त्र पढ़ना चाहती है? इतनी सब निष्ठुरता, हृदय हीनता... यह तो स्त्री नहीं यह तो कसाई हुआ! बिल्कुल। लेकिन फिर यह विचार सान्त्वना देने लगता है कि मैंने अपने पात्रों को कभी भी आदर्श कोटि का तो बताया नहीं। पाठक उनके बारे में कुछ भी निर्णय करने के लिए स्वतंत्र है—वेरा चाहे जितनी निर्ममता से निर्मम हो इसका मुझसे क्या वास्ता।

इसलिए, मैं शान्त चित्त से यह कहूं कि वेरा ने निष्क्रिय अवलोकन और सक्रिय श्रम के बीच अपने लाभ और दूसरों के लाभ के लिए विराट अन्तर पाया।

मुझे उस आतंक की याद है, जब बारह वर्ष की उम्र में, आग से अनजान, पीड़ादायक चीखोपुकार से जाग उठा था। पूरा आसमान धू-धू करके जल रहा था और झुलस रहा था, पूरा क़स्बा, विशाल

प्रान्तीय केन्द्र, जलती हुई लकड़ियों, प्रचण्ड आतंक और भगदड़ के हंगामे से बदल चुका था। मैं भय से थरथर कांप रहा था। भाग्य ही था कि इस सब गड़बड़ में मैं भागकर आग के पास तट बन्ध पर आ सका (अथवा अधिक सटीक और स्पष्ट कहूं तो नदी के तट पर आ सका)। तब, नदी का तट लकड़ी की टालों से पटा पड़ा था, मैंने और अन्य समवयस्कों ने खतरे के मार्ग से उन्हें हटाने का काम आरंभ कर दिया था। उस क्षण हम अपना भय बिल्कुल ही भूल गये थे और पूर्ण इच्छा-शक्ति के साथ जुटे रहे थे जब तक कि यह न सुनायी पड़ा: "अब सब ठीक-ठाक है।" और उस दिन से ही मैं यह जान गया कि भय का मुक़ाबला कैसे करो: दौड़ जाओ मुसीबत के पास और जुट जाओ काम में।

काम भय अथवा घृणा के लिए समय ही नहीं छोड़ता।

इस प्रकार वेरा ने चिकित्सा शास्त्र का अध्ययन आरंभ किया और मेरे पहचान की पहली महिलाओ में थी, जिन्होंने हमारे बीच कुछ नयापन उत्पन्न किया। वह इससे अपने को पूर्ण परिवर्तित महसूस करती थी कि "कुछ ही वर्षों में, मैं सचमुच और वास्तव में अपने बलबूते पर खड़ी हो सकूंगी।" उत्तम मनोभाव। बिना पूर्ण स्वाधीनता के सुख अपूर्ण होता है। मुझे महिलाओं से सहानुभूति है, कितनी कम हैं जो इसका उपभोग कर सकें!

12

एक वर्ष बीत चुका है किरसानोव से विवाह किये हुए उसे। और दो या तीन आगे भी आयेंगे और बीत जायेंगे, वेरा के उस नित्यकर्म में तनिक-सा भी परिवर्तन किये बिना, जो उस दिन सदा-सर्वदा के लिए अथवा आनेवाले अनेक वर्षों के लिए स्थापित हो चुका था। बस, अप्रत्याशित परिस्थितियों को छोड़कर—भविष्य तो न जाने कितनी आकस्मिकताओं से भरा होता है। ताहम, अभी तक तो ऐसी कोई बात नहीं हुई है और वेरा, यह लिखे जाने के समय, ठीक उसी तरह रह रही है, जैसे वह अपने विवाह के दूसरे और तीसरे सालों में रह रही थी।

अपनी नायिका की डाक्टरी सीखने की सनक और प्रवृत्तियों के बारे में इस प्रकार की हैरत में डाल देनेवाली आत्मस्वीकृति के बाद तो मैं इस बेचारी युवती की ख्याति को और कोई हानि पहुंचाने के किसी भी खतरे के बिना कुछ भी कह सकता हूं। इसलिए, मुझे यह अंकित करने की अनुमति दें कि वेरा के दिन में अभी भी तीन मुख्य बातें: नाश्ता, दोपहर का खाना और शाम की चाय, ऐसी ही हैं जैसे तब वसीलियेव्स्की द्वीप पर थीं। वह निश्चय रूप से खाने की काव्यहीन आदत और इससे भी बुरी बात यह कि उसमें लुत्फ़ लेने की आदत का दिन में तीन बार आग्रहपूर्वक पालन करती है—उसकी अनेक बेढंगी अशोभनीय अभिरुचियों में से यह एक है।

निश्चित ही, उस पहलेवाले शान्त जीवन में से बहुत कुछ इस नये में भी शेष रहा है। फ़्लैट अभी भी आम और निजी कमरों के रूप में विभक्त है। निजी कमरे अभी भी अनिमंत्रित के आगमन के लिए प्रतिबन्धित हैं। सताने पर पाबन्दी अभी भी लागू है। इसी तरह बिना इरादे की गयी पूछ-ताछ के अप्रत्यक्ष भाव पर, क्योंकि पति और पत्नी को इसका विश्वास है कि जो प्रश्न उत्तर योग्य न है, उसको पूछा ही नहीं जाना चाहिये और उत्तर न दिया जाय किसी प्रश्न का तो फिर उसके बारे में परेशान न होना चाहिये। अगर प्रश्न उत्तर देने योग्य होता तो उसका उत्तर कब मिल गया होता, प्रश्न पूछने की ज़रूरत ही नहीं पड़ती। वैसे तो बिल्कुल कुछ नहीं बदला है, लेकिन कोई ध्यान देने योग्य भावना इस नये शान्त वातावरण में है।

उदाहरण के लिए, तटस्थ और निजी कमरों में भेद का पालन कठोरतापूर्वक किया जाता है, फिर भी निजी कमरे में प्रवेश अब विशिष्ट समयों पर किया जा सकता है, जिनका निर्धारण पहले बतायी जा चुकी "दिन की मुख्य तीन बातों" में से दो का स्थानान्तरण हुआ है, सबेरे की चाय आम कमरे के बजाय वेरा के कमरे में पी जायेगी और फिर शाम को इसी कर्मकांड के लिए अलेक्सान्दर के कमरे में बैठा जायेगा। कार्यप्रणाली निम्न है: अभी पिछले पृष्ठों में जिसका उल्लेख हो चुका है, वही स्तेपान शाम के समय सीधे अलेक्सान्दर के कमरे में समोवार और चाय का

सामान लाता है और सुबह के समय आम कमरे में, जो वेरा के कमरे के बिल्कुल निकट है, लाता है और अगर गृह-स्वामी उसे अपने अध्ययन-कक्ष में मिल जाता है तो उन्हें बता देता है, यदि नहीं मिलता तो उसकी बला से। पति-पत्नी को इस बारे में जानकारी रखना, उनका अपना सिर दर्द है। इस व्यवहार से किरसानोव को अपनी पत्नी के कमरे में सुबह प्रवेश करने का स्वाभाविक अधिकार मिल गया है—क्यों, इसका निर्णय मैं निम्नलिखित सूचना के आधार पर पाठक पर ही छोड़ता हूं।

जागने और खुशनुमा गर्म बिस्तर को छोड़ने की नापसन्दगी से वह सोच में पड़ जाती है, जो आधा-सा सपना है, अतीत के बारे में सोच तात्कालिक वर्तमान की ओर मुड़ जाता है, घर गृहस्थी के मामले, कार्यशाला, अपने मित्र अथवा उस दिन के ही कार्यक्रम, जो कि सपने से कुछ अलग ही है। उनके विवाह के तीसरे वर्ष में, दो अन्य विषयों के बाद तीसरा विषय उभरता है, नन्हा मीत्या* अपने प्रिय मित्र द्मीत्री के सम्मान में उसे इसी तरह पुकारा जाता है, जबकि पहला, कुछ और पीछे सोचें तो अध्ययन के द्वारा स्वाधीनता अर्जित करने से सम्बन्धित है और दूसरा, यह भी कुछ कम मधुर नहीं, उसका प्राणप्रिय अलेक्सान्दर है, यदि उसे वेरा के प्रत्येक अन्य सोच-विचार से अलग माना जा सकता है, तो ऐसा पति जो उसके जीवन के पूर्ण और वास्तविक अर्थ का अभिन्न अंग है। निस्सन्देह वह लम्बे, लम्बे पलों तक उसके सोच का स्थायी और बहुधा, एकमात्र केन्द्र होता है—लेकिन यह विचार है अथवा स्वप्न, वह जाग रही है या सो रही है, यह लज्जा की लालिमा उसके गाल पर निद्रा के गुलाब की तरह है, उसकी आंखें मुंदी हुई हैं आधी... निश्चय ही नींद ही है।

उसे उठने और नहाने में जो समय लगता है, उसको अब भली-भांति समझ सकते हैं। (वैसे नहाने के लिए सब सुविधायें उपलब्ध हैं। रसोई घर के नल और बायलर से नली लगाने का कष्ट उठाया गया है। न जाने कितनी मात्रा में लकड़ी जल जाती है पानी गर्म करने के लिए; पर इसका क्या ज़िक्र अब तो वह इन छोटी-छोटी सुख सुविधाओं पर धन व्यय करने में समर्थ है न)।

* द्मीत्री का लघु रूप है मीत्या।—अनु०

यद्यपि; कभी-कभी वह नहाने के बाद, आराम से पड़े रहने का मौक़ा निकाल लेती है, तथापि बहुधा ऐसा होता है कि अलेक्सान्दर के प्रवेश पर वह बिना स्नान किये हुए, अर्धस्वप्न निमीलित अवस्था में पड़ी होती है।

प्रत्येक सुबह, बिला नाग़ा स्नान करना कितना सुखकर है। टब को खूब गर्म पानी से भरना और फिर धीरे-धीरे, अनजाने ही ठंडे जल की नन्हीं-नन्ही धार—कैसा स्वर्गिक आनंद! आधा घण्टा, और अधिक, पूरा घण्टा हो जाय तो भी मन ही नहीं करता टब से निकलने का।

वह सब कुछ स्वयं ही करती है, स्नान और कपड़े पहनना, किसी भी भद्र महिला की परिचारिका से कहीं बेहतर ढंग से—बस यह मान लेना होगा कि उसने अपना समय दिवा-स्वप्न में नहीं गंवाया वर्ना तो समय चाहे जितना बीत जाय—वही कहां चाहेगी कि समय कभी कहीं रुके। क्या? अलेक्सान्दर परिचारिका का काम कर रहा है! शब्द कहां हैं इस अजूबे दृश्य का वर्णन करने के लिए! नहीं, कोई कानों में ही गुनगुनानेवाली गायिका उसके सपनों की डायरी में से निराशा की एक भी गुनगुनाहट जगा सकती है। जो भी हो मगर उसके प्रिय अलेक्सान्दर ने दोनों की सुबह की चाय का पूरा और स्थायी कार्यभार संभाल लिया है।

जीने का यही एकमात्र तरीक़ा था। अलेक्सान्दर की यह इसरार सही थी कि चाय (अथवा उस खदबदाती तेज़ चाय के स्पर्श और केवल स्पर्श मात्र से गर्म हुई क्रीम) बिस्तर में लेटे मिल जाय तो इससे बढ़िया और कोई आनंद नहीं। वह चाय की ट्रे लाता था (कभी-कभी वह ट्रे लेकर सीधे चला आता है) और चाय बनाता है। इस बीच वह बिस्तर पर आराम से लोटती-पोटती और चाय पीती, इस समय अपने बिस्तर पर नहीं बल्कि अपने ही सोफ़े पर, यह सेमल की तरह मुलायम था—इस पर वह 10 या 11 बजे तक सुस्ताती रहती। उस समय तक अलेक्सान्दर के अस्पताल, क्लिनिक अथवा अकादमी जाने का समय हो जाता। अलबत्ता, चाय के आखिरी प्याले के बाद अलेक्सान्दर सिगार सुलगा लेता और उनमें कोई भी एक यह सुझाव रखता: "बस अब बहुत हो गया", "अब कुछ कामकाज करना चाहिये", लेकिन आप पूछेंगे क्या काम-काज? वेरा अपनी प्रवेशिका

परीक्षा की तैयारी करे, अलेक्सान्दर चिकित्सा शास्त्र में उसे शिक्षा दे और इससे भी अधिक महत्त्वपूर्ण उच्च विद्यालय के उन तीन विषयों में, जिन्हें वह अपने-आप पढ़-सीख पाने में कुछ दिक़्क़त महसूस करती थी: गणित और उससे भी बद लैटिन, उसे दण्ड तो भोगना ही पड़ेगा, अगर अकादमी की अपेक्षाओं को दण्ड कहा जा सकता है तो। मैं इस पर हरगिज़ अपमान-सम्मान दांव पर नहीं रखूंगा कि वह कोर्नेलियस नेपोत की दो पंक्तियों का भी अनुवाद कभी कर सकेगी, लेकिन यह मैं जानता हूं कि चिकित्सा शास्त्र की पाठ्य पुस्तकों में जो थोड़े बहुत लैटिन के शब्द भरे हुए हैं उनका मतलब वह समझ सकती है। बस इतने की ही तो उसको आवश्यकता है। ओह भगवान, मैंने यह क्या बक दिया, वेरा की प्रतिष्ठा किरकिरी कर दी। मुझे सुनायी देने लगा है कि अनुभूतिक्षम ...

13

विदुषियों के विषय में

"...विदुषी, अगर कभी मेरा सामना हो जाय उससे तो! फूटी आंख नहीं सुहाती मुझे! मूर्ख, उबाऊ महिलायें," यही तो अट्टहास करेगा मेरा अनुभूतिक्षम, यद्यपि नितान्त सुरुचिपूर्ण नहीं, पाठक।

सच मानो, हम बिल्कुल अभिन्न हैं, हम दोनों: उसने मुझे एक-दो बार फटकारा, मैंने... हां मैंने उसके कान उमेठ दिये, फिर भी हममें से कोई भी परस्पर निष्कपट वार्तालाप के बिना नहीं रह सकता।

मैं कहता हूं: "मेरे अत्यन्त अनुभूतिक्षम पाठक, आप बिल्कुल ठीक कहते हैं। विदुषी निश्चय ही मंद बुद्धि, धूल की तरह शुष्क और असहनीय रूप से दु:साध्य होती है। आपने सच बात भले ही कही हो परन्तु मुख्य बात भूल गये हैं। प्रबोधन के लिए अपने दर्पण में देखिये। दम्भी, आडम्बरी, और हास्यास्पद विदुषी साहित्य व अन्य पांडित्यपूर्ण विषयों पर भाषण करती है, जिनके बारे में पुरुष रत्ती

भर भी नहीं जानता और दो कौड़ी परवाह भी नहीं करता, मगर दिमाग़ का तो प्रदर्शन करेगा, जिसे प्रकृति दुर्भाग्यवश उसे प्रदान करना भूल गयी, अपने से नीचे के साथ वह जिन उदात्त आकांक्षाओं का सहभागी है और ऐसा पाण्डित्य, जिससे कोई तोता भी ईर्ष्या नहीं करेगा। क्या तुम पहचानते हो दर्पण में इस बदसूरत उल्लू के पट्ठे, बेढंगे-थूथन को गोबर-गणेश? तुम लम्बी दाढ़ी उगा सकते हो या सफ़ाचट बाल बना सकते हो लेकिन फिर भी तुम बिल्कुल साधारण, सुस्पष्टतया, निस्सन्देह तुम तो तुम ही रहोगे। इन पृष्ठों में मैंने दो बार तुम्हें धता बतायी है, क्योंकि मैं तुम जैसों को बर्दाश्त नहीं कर सकता, प्रसंगवश यह बता दूं कि तुम जैसों की संख्या हम पुरुषों में, हमारी अत्यन्त निंदित बहनों की तुलना में दस गुना अधिक है।

"वास्तविक कार्य और वास्तविक लक्ष्यों के अनुधावन में संलग्न कोई भी व्यक्ति—चाहे वह स्कर्ट पहने हो या पतलून, जो अपनी पसन्द के कार्य का निष्पादन कर रहा हो— वही सिर्फ़ व्यक्तित्व है, और कोई नहीं।"

14

इस टिप्पणी ने, जो अनुभूतिक्षम पाठक के आत्मबोध के लिए उपयोगी है, फिर भी उसने मैं वेरा की वर्तमान दिनचर्या का जो वर्णन कर रहा था उसमें व्यवधान उपस्थित कर दिया है। "वर्तमान" से मेरा तात्पर्य क्या है? उसके दूसरे विवाह के बाद का कोई भी समय। जहां तक दिनचर्या का प्रश्न है उसमें केवल शाम के कार्यक्रम के अलावा और कुछ अधिक कहने-बताने की ज़रूरत नहीं। यह तो वेरा के जीवन में जब अलेक्सान्दर का पुनरागमन हुआ था, तभी बदल गया था और तब से पूरे ज़ोर-शोर से चल रहा है। आप जानें किरसानोव-दम्पत्ति युवा विवाहित जोड़ों की बड़ी मण्डली के सिरमौर हैं, जो उन्हीं की तरह सुखी और प्रेम के साथ रहते हैं तथा उसी सिद्धान्त के आधार पर भी। उनकी ऐसी प्रत्येक शाम को, जब कोई व्यावसायिक कार्य नहीं होता, कविता, ओपेरा, गीत

एवं नृत्य का दौर चलता है, मण्डली के किसी भी सदस्य के घर पर जमावड़ा होता है अथवा कहीं और व्यवस्था की जाती है उन सब के लिए जिनकी उसमें रुचि हो। ऐसे हर जमावड़े के मौक़े पर कम से कम आधी मण्डली तो उपस्थित होती ही है। किरसानोव-दम्पत्ति को मिलाकर और सभी अपना आधा समय सभी के लिए व्यय करते हैं। यह दस्तूर स्वयं सिद्ध अंश तक सामान्य है। अलबत्ता, खेद की बात यह है, कि एक मामला है, जिसके बारे में बहुत-से लोगों को विस्तार से समझाना चाहिये। उस विशाल भेद के बारे में ज़रा सोचिये, जिसे आप खुद जानते हैं या जिसके बारे में आपने पढ़ा हो—पार्टी अथवा ओपेरा में अगर आप अकेले हैं या आपके साथ अनुराग का पात्र हो। है न जानी-पहचानी भावना, ठीक? स्थायी प्रेम का सर्वव्यापक आकर्षण इतना नहीं, जीवन की तीव्र चमक, जो कामना ओर आकांक्षा के उचटते क्षण के बाद भी जीवित रहे, हम जिसे प्रणय निवेदन के रूप में जानते हैं। प्रणय निवेदन, हर प्रकार से मधुर और प्रीतिकर पौ है, फिर भी ऐसे उज्ज्वलतर और आनन्दकर दिन का दूत मात्र है, जो इससे पहले कभी नहीं आया, प्रत्येक क्षण होता उज्ज्वलतर और आनन्दकर तथा दीर्घ, शानदार दोपहार के बाद भी दीर्घ दिन। हमेशा ऐसा ही नहीं था; युगल प्रेमी विवाह-सूत्र में आबद्ध होने के बाद काव्य-प्रेम खो बैठते थे। नये कहलानेवाले जन कितने भिन्न हैं: जितने अधिक समय वे साथ-साथ रहते हैं, उनका काव्य-प्रेम उतना ही सुस्पष्ट और सुदृढ़ होता जाता है। शाम तक उनकी दैनन्दिन चिन्तायें उन्हें घेरे रहती हैं और वे अपने बढ़ते हुए बच्चों की ओर ध्यान देने लगते हैं, सभी उन व्यक्तिगत स्वर्गिक सुखों से कहीं अधिक मधुर और उच्च कोटि का आनन्द जिसके बारे में इतने अपरिवर्तनीय रूप से दृढ़ शब्दों में जाने क्या-कुछ नहीं कहा गया है। पुरानी पीढ़ी को जो कुछ संक्षिप्ततम महीने अथवा दो महीने के लिए मिलता था, तरुण पीढ़ी अब उसका उपभोग अनेक वर्षों तक करती है।

क्यों? मैं सोचता हूं कि इसका भेद भी खोल ही दूं। यह अच्छा है, असानी से और बढ़िया तरीक़े से प्रयुक्त हो सकता है यदि प्रयोगकर्त्ता का हृदय शुद्ध हो, चरित्र उसका निष्कपट हो और मानवाधिकारों की आधुनिक संकल्पना उसके मन में बसी हो तथा

अपने साथी की स्वतंत्रता के प्रति सम्मान हो। जी हां, इतनी साधारण-सी बात है। अपनी पत्नी को उसी दृष्टि से देखिये जैसे अपनी नववधू को देखा था। समझ रखिये कि वह असंतोष के किसी भी क्षण में आपको मन से निकाल सकती है। इसी रूप में उसके बारे में सोचिये और वह आप में विवाह के दिन के दस वर्ष बाद भी, वही काव्यमय हर्षोन्माद से उद्वेलित करेगी और इससे भी बड़ी बात यह कि भावना की अधिक परिशुद्धता के लिए करेगी। उसकी स्वतंत्रता को उतनी ही उन्मुक्तता और निर्बन्ध रूप से स्वीकार कीजिये, जितना कि आप अपने मित्रों की करते हैं, अपनी मित्रता का सम्मान अथवा अपमान कुछ भी करने की दृष्टि से, और वह विवाह के दस और बीस वर्षों तक उसी प्रकार प्रेम करती रहेगी, जैसे कि उसने तब किया था, जब आपने प्रथम बार प्रणय निवेदन किया था। नयी पीढ़ी में विवाह यही है। वांछनीय व्यवस्था। पति और पत्नी परस्पर अधिक भावप्रणता से, अधिक काव्यमयता से प्रेम करते हैं, अपने विवाह-दिवस की तुलना में दस वर्ष बाद भी और इस सम्पूर्ण अवधि में अडिग रूप से निष्कपट रहते हैं: एक भी झूठा शब्द अथवा चुम्बन उनके बीच कभी भी नहीं आया होगा। किसी पुस्तक में किसी पात्र के बारे में कहा गया है: "झूठ ने कभी उसके होंठों का स्पर्श नहीं किया।" मुझे एक और उद्धरण स्मरण आ रहा है अथवा शायद उपरोक्त पुस्तक में से ही हो: "उसके हृदय में कोई छल-कपट नहीं था।" पाठक सोचेगा: "कितना चकित कर देनेवाला सद्गुण!" लेखक सोचता है: "यह है नायक, जो सभी को चकित कर देगा।" पहला लिखते समय अंधा था और दूसरा अब पढ़ते समय क्योंकि तब से जिस नये मनुष्य का उदय हुआ है अपनी मण्डली में एक भी तुच्छ आत्मा को प्रवेश नहीं देगा, ऐसे मित्र नहीं चाहता, और जो हैं भी उनमें कोई अपवाद नहीं मानता, जो नयी पीढ़ी के पूर्ण रूप से औसत सदस्यों के रूप में उपयुक्त हों।

यद्यपि, करुणाजनक है यह कि दक़ियानूसों की संख्या नये जन से कहीं अधिक है, कम से कम दस एक के अनुपात में। तथापि, यह स्वाभाविक ही है, कि दक़ियानूस संसार में अपनी दक़ियानूस आबादी।

15

"हमें अब साथ-साथ रहते तीन वर्ष हो चुके हैं (पहले वह कहती थी एक वर्ष और फिर दो, चार होनेवाले हैं आदि), और हम अभी भी उन प्रेमियों की भांति हैं, जिन्हें यदा-कदा अनुचित मुलाक़ात की जैसे-तैसे व्यवस्था करनी पड़ती है। लोग ऐसा सोचने पर बाध्य क्यों होते हैं कि मार्ग में कोई भी अवरोध न हो तो भी प्रेम तिरोहित हो जाता है? उन लोगों में सच्चे प्रेम के बारे में अज्ञान ही तो है जो केवल आत्म-प्रेम अथवा शृंगारिक कल्पना से ही परिचित हैं। सच्चा प्रेम सहजीवन से ही आरंभ होता है।"

"आपकी इस टिप्पणी का कारण कहीं मैं तो नहीं?"

"तुम? अगले तीन सालों में तुम अपने चिकित्साशास्त्र के बारे में सब कुछ भूल चुकी होगी और छह सालों में—पढ़ना भी। बस तुममें एक भी क्षमता नहीं रह जायेगी, बस दृष्टि को छोड़कर और उसको तुम केवल मेरी ओर ही समर्पित रखना।"

संक्षिप्त, बहुत कम और बहुत अन्तराल के बाद होते रहनेवाले ये वार्तालाप हुए अवश्य, इसमें सन्देह नहीं।

"प्रत्येक व्यतीत वर्ष के साथ, प्रिय, हमारा प्रेम बढ़ता रहता है।"

"तुमने उन अफ़ीमचियों की कहानी तो सुनी होगी, जिनकी लत हर साल बढ़ती ही रहती है? एक बार जिस परमानंद का अनुभव कर लिया वह कभी घटेगा थोड़े ही, बढ़ता ही रहेगा वह तो।"

"यह तो किसी भी गहन भावना के लिए सच है।"

"अनुराग परितृप्ति नहीं, बल्कि सिर्फ़ कुछ घंटों के लिए सन्तोषातिरेक जनता है।"

"परितृप्ति तो ऐसे स्वप्नदृष्टा की कोरी कल्पना की उपज है, हृदय की नहीं, जिसने जीवन से मुंह मोड़ लिया हो, उसके सच्चे और ओजस्वी पुत्र की नहीं।"

"मानो उपवास करने की कमी से क्षुधा मन्द हो गयी है अथवा प्रतिदिन, दिल खोलकर और बेरोकटोक भोजन ग्रहण करने से। मानो अच्छे भोजन से स्वाद में परिष्कार नहीं होता। क्षुधा तो जीवन के साथ ही उड़ जाती है और केवल उसी के मूल्य पर।" (स्थूल

प्रच्छन्न हो, तो यह उसे प्रयुक्त करने की शक्ति प्रदान करता है।"

"अपनी पत्नी को स्वतंत्र रूप से खड़ा रहने में मदद करनेवाला ही सच्चा प्रेम करता है।"

"प्रांजल विचार और दृढ़तर समझवाला व्यक्ति ही सच्चा प्रेम करता है।"

और सर्वाधिक तो यह कहा जाता था:

"प्रिय, मैं बोकाचियो पढ़ रही हूं अब। ('क्या होता जा रहा है दुनिया को!' हम भी अनुभूतिक्षम पाठक के साथ सहसा चिल्ला उठते हैं। 'स्त्री पढ़ रही है बोकाचियो को! वह तो केवल पुरुषों के लिए है!' यद्यपि मैं इस ओर ध्यान दिला सकूं कि अपने अनुभूतिक्षम पाठक से पांच मिनट की बातचीत में जो नपे-तुले गन्दे शब्द सुन सकती हूं वे तो बोकाचियो की पूरी रचनाओं में नहीं मिलेंगे और एक भी ऐसा प्रांजल विचार नहीं मिलेगा कि वह इस इटालवी लेखक की अद्भुत प्रतिभा का प्रतिद्वन्द्वी बन सके।) तुम ठीक कहते हो, प्रिय, अद्भुत प्रतिभा है इस लेखक में। मैं तो यहां तक कह सकती हूं कि उसकी कुछेक कहानियां तो मनोवैज्ञानिक कौशल की दृष्टि से शेक्सपीअर की सर्वोत्तम रचनाओं के तुल्य हैं।"

"हास्य कहानियों के बारे में क्या कहती हो?"

"कुछ मनोरंजक कहानियों के अलावा बाक़ी तो काफ़ी ऊबानेवाली हैं।"

"इतनी कठोर आलोचना मत करो बेचारे की: 500 वर्ष पहले उसके ज़माने में, हम जिसे अशिष्ट अश्लीलता कहते हैं, वह पूर्ण रूप से स्वीकार्य थी, मान्य थी।"

"बेशक 500 वर्ष से भी कम ही समय में हमारे कई रीति-रिवाज बुरे लगने लगेंगे। लेकिन यह तो अप्रासंगिक है। मैं तो उदात्त अनुराग की गंभीर रचनाओं की चर्चा कर रही हूं—निस्सन्देह उनमें बोकाचियो ने अपनी प्रतिभा के सीमान्त छू लिये हैं। मेरे कहने का तात्पर्य यह है: उसके स्पष्ट वर्णन के आधार पर मत बनाते समय यह कहा जा सकता है कि आनंदवाद के तथाकथित चरम काल

में प्रेम न तो इतना कोमल था और न ही इतना उत्कट, जितना कि आज है — बिल्कुल भी इसके निकट नहीं। वास्तव में भावना स्वयं ही अत्यन्त छिछली-छिछोरी थी, उन्माद अत्यन्त मद्धिम और क्षणभंगुर।"

"संवेगी शरीर में अपनी रचनात्मक गहराई के अनुसार संवेग की शक्ति भिन्न-भिन्न होती है। यदि उद्दीपन पूर्ण रूप से छिछला-छिछोरा तो इसकी अनुक्रिया भी उथली ही होगी, क्षणभंगुर और आयामहीन। यदि कोई इसीलिए पी लेता है कि उसे ऐसा करने का निमंत्रण दिया गया है तो वह मदिरा के बारे में कुछ नहीं जानता और इसके सुख को तो उससे भी कम। आनंद अधिक तीव्र होता है यदि वह कल्पना में रचा-बसा हो, उसकी चाह हो और उसी से उत्पन्न हुआ हो। तभी रूधिर प्रवाह तीव्रतर हो उठता है, विशिष्ट दमक उत्पन्न होती है, वही तो मधुरतम परमानंद का स्रोत है। लेकिन इससे भी बढ़कर है अन्तरात्मा के मर्म में बद्धमूल आनंद। वैसी स्थिति में सम्पूर्ण तंत्रिका प्रणाली, अविश्वसनीय चिरस्थायी शक्ति से आवेशित होती है, सम्पूर्ण वक्ष कल्पना के दयनीय संभ्रम से नहीं बल्कि हल्के-फुल्के उल्लास से उष्ण होता है, जो आक्सीजन समृद्ध ताज़ी हवा से ग्रहण किया लगता है अथवा सुहानी धूप की सेंक से होता है। बस, यह भेद बहुत बड़ा होता है: सचेतन आनंद की ताज़ा दम कर देनेवाली उष्णता आन्तरिक होती है और इसका प्रत्यक्ष अनुभव तंत्रिका प्रणाली प्रत्यक्ष एवं स्थायी प्रभाव के लिए करती है।"

"मैं बहुत खुश हूं कि मैंने वह हास्यास्पद चीज़ त्याग दी। तुम ठीक कहते थे: लेकिन उसके प्रचलन में किसी को बाधक नहीं होना चाहिये। मेरे रेशमी रूपरंग के बारे में अतिप्रशंसा क्यों? क्या इसकी आशा नहीं की जा सकती थी? वास्तव में तो इसकी बाबत पुनर्विचार की तो आवश्यकता भी नहीं, अलबत्ता, पैर को बहुत नुक्सान पहुंच सकता है। लम्बे मोज़ों को अपने आप, बिना किसी संकुचन के टिका रहना चाहिये — इससे देह में स्निग्धता आती है।

"पर इतनी जल्दी नहीं। मैंने तो केवल तीन वर्षों तक ही सीनाबन्द पहना था और हां हमारा विवाह होने से बहुत पहले उसे

पहनना छोड़ दिया था। लेकिन आजकल फ़ैशन ऐसा है कि फिर भी कपड़े कमर पर तंग होते हैं। क्या टांग की तरह कमर भी भरेगी? बहरहाल, इस समय तो यह अच्छी ही लग रही है—मैं सन्तुष्ट हूं इससे। काश, कि फ़ैशन इतना असह्य न होता। बहुत हो गया, हमें यूनानियों की बुद्धिमत्ता का फिर से सहारा लेना चाहिये—पोशाक कंधों से ढीली झूलना चाहिये और हमारी पोशाक है कि युवती की ठवन को बिल्कुल ही बेढंगा बना देती है। मेरी तो कम से कम सुधर रही है। मुझे यह जानकर प्रसन्नता है।"

"वेरा, तुम कितनी सुन्दर हो!"

"मैं कितनी खुश हूं, अलेक्सान्दर!"

...और मधुर मरमर स्वर *
जैसे झरना करता हो कुलेल
उसकी मुस्कान, उसका चुम्बन
उसकी दुलार भरी चितवन...

प्रिय मेरे, बुझाओगे **
उस आग को जो तुम्हारे होंठों में है:
मैं तो बस तुम्हारे सामीप्य को
महसूस करते ही परमानन्द से
उद्विग्न हो जाती हूं
जब तुम पास होते हो, और परमानन्द
मेरे गाल को आरक्त कर देता है
मेरे दिल को धड़कन देता है,
आंखों में दमक
जैसे आसमान तारों से दमकता है।

---

* गेटे के 'फ़ाउस्टस' से मरगारीता का गीत।—सं०

** अलेक्सेई कोलत्सोव (1809—1842) के 'रूसी गान' (1841) से ग़लत ढंग से उद्धृत। कोलत्सोव रूसी लोक काव्य की शैली के परिमार्जन के लिए विख्यात था।—सं०

16

वेरा पावलोव्ना का चौथा सपना

वेरा को स्वप्न में आवाज़ सुनायी पड़ती है—अब तो यह बहुत ही परिचित लगती है—आवाज़ निकट से निकटतर आ रही है।

कितना उल्लसित है अभिनन्दन *
प्रकृति आज
चमक-दमक रहा है सूरज
और मुस्करा रहा है शाद्वल-मार्ग!

सच है यह, शब्दश: सच... गेहूं के खेत में सुनहरी आभा बिखरी हुई है, मैदान में बहार छायी हुई है और उसे घेरे हुई झाड़ियां सैकड़ों व हज़ारों फूलों से जगमगा रही हैं, झाड़ियों के उस पार फैला हरियाला वन-प्रान्तर फूलों से लदा-फंदा है, खेत, मैदान और झाड़ियां तथा फूलों से ढका वन-प्रान्तर, डालों पर पक्षी फुदक रहे हैं, ख़ुशबू का गीत गाते हैं, और आगे नये खेत, चरागाह, कुंज और वन फैले हैं। और दूर-दूर तक, ढलानों पर फैली पेड़ों की क़तारें और उषाकाल में गहरे से गहरे नीले क्षितिज पर रुपहले, सुनहरे, बैंगनी और झीने बादल अठखेलियां कर रहे हैं। दिन आनंद की दीप्ति के साथ उगता है, यही तो प्रकृति का प्रताप है। आत्मा को प्रकाश, हार्दिकता, सुगन्ध, गीत, प्रेम और कमनीयता से भर देता है। प्रेम और अच्छाई का स्तुति-गान छेड़ देता है—ओ, धरती और हर्षोन्माद, सूरज, प्रसन्नता, प्रेम और प्रेम, वहां ऊंचाई से नीचे उतरते हुए बादलों की नाईं सुनहला चमकीला!

"जानते हो अब मुझे तुम क्या? यद्यपि तुम मेरे सौन्दर्य को, इसके सम्पूर्ण प्रताप को नहीं जानते, कोई भी नहीं जानता तुममें से। अब देखो अतीत, वर्तमान और भविष्य की ओर। देखो और सुनो:

कैसी नर्तन कर रही है मदिरा प्याले में
और पीनेवाले के नैन दमक रहे हैं... **

---

* गेटे के 'मई गीत' (1771) की प्रारंभिक पंक्तियां।—सं०

** शिलर की 'चार सदियां' (1802) कविता की प्रारंभिक पंक्तियां।—सं०

वन के अन्त में गिरिपीठ के पास फूलों से लदी झाड़ियों और ऊंचे-ऊंचे वृक्षों के गुल्म के बीच खड़ा है प्रासाद।

"उड़ चलें हम क्या?"

और वे उड़ चले।

कैसा राजसी दस्तरख़ान। मदिरा नर्तन कर रही है, पीनेवालों के नैन भी नाच रहे हैं। होहल्ले के बीच कानाफूसी भी चल रही है, हंसी-कहकहे, मेज़ के नीचे पकड़े-जकड़े हाथ अथवा चुपके से चुरा लिया गया चुम्बन। "गीत होने दो, बिना गीत के हंसी-ख़ुशी का क्या मज़ा!" कवि उठता है, उसकी भावभंगिमा से ही प्रेरणा टपक रही है। प्रकृति का विश्वासपात्र है वह, उसके लिए इतिहास के रहस्य उद्घाटित हैं और हज़ार साल के दृश्यों की शृंखला में अंकित हैं।

1

ख़ानाबदोशों के तम्बू, आस-पास चर रहीं भेड़ें, घोड़े और ऊंट। दूर जंगली ज़ैतून और अंजीर के पेड़। उससे भी दूर, उत्तर-पश्चिम की ओर क्षितिज पर पर्वत की दुहरी शृंखला है, चोटियों पर उनकी बर्फ़ है और वे नीचे तक देवदार के वृक्षों का लबादा ओढ़े हुए हैं। इनसे भी अधिक वैभवपूर्ण लग रहे हैं गड़रिये, ताड़ों से भी अधिक सुडौल हैं उनकी पत्नियां, मंथर गति चलते जीवन प्रवाह में रहती हैं निश्चिंत, अपनी हर घड़ी बिताती हैं प्यार में, प्रेम-गीतों और मधुर आलिंगन में।

गौर सुन्दरी कहती है: "नहीं, यह मेरे बारे में नहीं, पहले की बात है। तब स्त्री दासी थी। बिना समानता के मेरा अस्तित्व क्या। प्रेम और उर्वरता की देवी थी—अस्तारता, उस रानी को वे इसी नाम से ही तो बुलाते थे। देखो, वह रही!"

देदीप्यमान। सोने के बाज़ूबन्द और पाजेब पहने है, उसका कंठ भी सोने का है, भारी है, मोती-मूंगों से जड़ा है, उसके केशों से गन्धरस छलक रहा है, उसके मुखड़े पर वासना स्पष्ट कौंध रही है, नैनों में मदमत्त वासना।

अपने चरणों में लोटती स्त्री को वह आदेश देती है: "अपने मालिक के सम्मुख आत्मसमर्पण करो। लूट-पाट और डकैती के उसके जीवन में आये अलस अन्तराल की शोभा बढ़ाओ। तुम्हारे प्रेम का वह उसी प्रकार मालिक है, जैसे कि तुम्हारी देह का जो उसने खरीदी है। अगर तुमने इन्कार किया तो निश्चय ही वह तुम्हें मौत के घाट उतार देगा।"

गौरांग सुन्दरी कहती है: "समझ ही सकती हो, मैं वह नहीं हूं।"

2

अन्त:प्रेरणा फिर बोलती है। दृश्य परिवर्तित होता है।

नगर आता है। उत्तर और पूरब में दूर पर पर्वत, दक्षिण, पूरब और पश्चिम में सागर। आश्चर्यजनक नगर, इसके भवन देखने में न भव्य हैं और न विशाल। अनेक सार्वजनिक भवनों के साथ वे पहाड़ी को घेरे-समेटे हैं, लेकिन मन्दिर—कितने भव्य हैं, विराट प्रवेशद्वार के वैभव से आवेष्टित और कई सीढ़ियों से सुशोभित। इनमें से कोई भी आज की किसी भी राजधानी के सम्मान और वैभव को बढ़ा सकता है। इनके हॉलों में, तथा नगर के हर कोने में भी जो हज़ारों मूर्तियां बिखरी-सी पड़ी हैं, उनमें से कोई भी किसी भी संग्रहालय को विश्व में अनन्य बनाने में समर्थ होगी। सड़कों और चौराहों पर एकत्र सुन्दर युवकों, कमनीय स्त्रियों और युवतियों में से कोई भी किसी अत्यन्त कुशाग्रबुद्धि शिल्पकार के लिए प्रेरणा का पात्र बन सकता है। ये हंसमुख और प्रीतिकर लोग हैं, उनका जीवन सुरुचिसम्पन्न और सरल है। उनके साधारण घरों में भीतर सुरुचि और मनोरंजन-दक्षता की सम्पदा दृष्टिगोचर होती है। फ़र्नीचर और साज़-सज्जा की दूसरी सभी चीज़ों को देखकर नेत्रों को सुख मिलता है। सौन्दर्यबोधी चैतन्यता से भरपूर, आत्मतृप्त ये लोग प्रेम और सौन्दर्यमय जीवन व्यतीत करते हैं, इन्हीं के लिए जीते हैं। निर्वासित लौटता है अपनी सत्ता की पुन:प्राप्ति के लिए, जो उसने विप्लव के फलस्वरूप गंवा दी थी, फिर भी उसके विरुद्ध

एक भी हाथ नहीं उठता। क्यों? उसके साथ रथ में आश्चर्यजनक जाति के मध्य विलक्षण स्वप्न-देवी उत्थित है, वही उसे जनता के समक्ष प्रस्तुत करती है, अपनी संरक्षकता की उद्घोषणा करती है और उसके सौन्दर्य के माध्यम से पिसिस्त्रेतस* सफल होता है। वहां न्यायालय भी है जिसके न्यायाधीश ऐसे कठोर हैं कि वे सभी दूसरों के घुटने टेक दिये जाने के बाद भी तनकर खड़े हैं। किंवदन्तियों का कठोर और अप्रशम्य अरेओपेगस जिसकी मध्यस्थता एक बार स्वयं देवों ने भी चाही थी। आज यह उस स्त्री के सामने बैठा है, जिसे सभी ने एथेंस को नष्ट करनेवाला मान लिया था और हर कोई दिल ही दिल में उसको प्राणदण्ड दे चुका था। इस प्रकार के अपराध से मंडित अस्पासिया का प्रवेश और वे सभी, एकाएक उसके चरणों पर गिर पड़ते हैं। "तुम इतनी सुन्दर हो, कैसे चलाया जाय मुक़द्दमा तुम पर!" क्या यह सौन्दर्य का, प्रेम का परम नियम नहीं है?

गौर सुन्दरी कहती है: "नहीं, मेरा युग तो अभी आयेगा। तब स्त्री का सम्मान किया जाता था, लेकिन समान नहीं माना जाता था उसे। खिलवाड़ की वस्तु, उसे मानवीय संवेदना से वंचित समझते थे न सब। जहां मेरी बहन को सम्मान से वंचित रखा जाय, कैसे हो सकती हूं वहां मैं। रानी का नाम था अफ़्रोदीता! यह रही वह!"

वह आभूषण नहीं पहने है, क्योंकि उसका सौन्दर्य ऐसा है कि उसके पुरुष की सम्मोहित दृष्टि उसे आभूषणों से सज्जित अथवा आवेष्टित देखना ही नहीं चाहती।

अपने ही जैसी मोहिनी युवती से उसने क्या कहा जो उसकी वेदी पर लोबान बिखेर रही थी?

"पुरुष को आनंद प्रदान कर। वह तेरा स्वामी है। तेरी ज़िन्दगी अपनी नहीं, बल्कि उसकी है।"

उसके नेत्रों में दैहिक आनंद की क्लान्ति के सिवा और कुछ नहीं झलकता। उसके ठवन में अभिमान है और उसके मुख पर भी,

---

* पिसिस्त्रेतस—(560—527) ई० पू० की अवधि में एथेंस पर राज करनेवाला निरंकुश राजा।—अनु०

लेकिन इसका स्रोत दैहिक पराकाष्ठा मात्र ही है। उसके राज्य में स्त्री जाति का भाग्य क्या था? अधवारी में ताले में बन्द और पति के स्वत्त्वबोधक नेत्रों के सिवा सभी से दूर रखे जाना। स्वतंत्रता से कोई सरोकार नहीं। उनमें से जो अपने को स्वतंत्र कहती थीं, वे अपने आकर्षण का आनंद उसी भ्रान्ति का मूल्य लेकर प्रदान करती थीं। उनकी रानी रखैल ही तो थी। स्वतंत्रता के बिना, सुख के बिना, कैसे रह सकती हूं मैं।

3

कवि फिर कहता है।

दुर्ग के सामने विशाल मैदान, रंगभूमि में शानदार समागम। सामन्तगण चहलक़दमी कर रहे हैं। छज्जे पर बैठी कुमारी के हाथों में स्कार्फ़ है, जो विजेता को प्रदान किया जायेगा। विजेता को उसका हाथ चूमने का भी अधिकार होगा। घुड़सवारों की बरछेबाज़ी मृत्युपर्यन्त तक हुई, विजयी रहा टोग्गेंबर्ग।* "सामन्त महोदय, मैं आपको बहन की तरह प्रेम करती हूं। मेरा दिल न आपके आने पर धड़कता है और न ही जाने पर।" सामन्त बोला: "मेरा तो भाग्य ही रुद्ध हो गया," और वह समुद्री मार्ग से फ़लस्तीन के लिए रवाना हो गया। यद्यपि ईसाई जगत में उसके शानदार कारनामे की गूंज है, तो भी उसे मरना ही होगा अथवा अपने आत्मा की स्वामिनी से मिलना होगा। युद्ध से विस्मृत नहीं हुआ। वह लौटता है। "सामन्त महोदय, खटखटाइये मत, वह तो जा चुकी है, आश्रम में प्रवेश लेने।" वह अपने लिए मड़ैया बना लेता है, ताकि वह खुद अदृश्य रहकर, अपनी खिड़की से, सुबह के उजाले में उसे देख सके। वहीं रहता है, उसकी एक झलक देख पाने के लिए जो सूरज की तरह उजली है, तब तक, जब तक कि उसके प्राण साथ छोड़ दें और वह स्मृतिशेष हो जाय।

गौरांग सुन्दरी कहती है: "वह मैं नहीं, किसी भी रूप में नहीं। वह तो दूर से ही प्रेम करता था। उसकी पत्नी बनना, दासता

* टोग्गेंबर्ग — शिलर के गाथाकाव्य का नायक। —सं०

में जकड़ जाना था, भय और संकट का जीवन। उसने प्रिया को ताले में बन्द कर दिया, अपना प्रेम भूल गया और आखेट, युद्ध और दावतों में, अपनी दासियों से बलात्कार करने तथा अपनी पत्नी की उपेक्षा करने में संलग्न हो गया। जिस स्त्री को वह एक बार छू लेता, फिर सदा के लिए वह उसकी उपेक्षा का पात्र बन जाती। मेरा दिन अभी तक आया नहीं था। वह सतीत्व का साम्राज्य था। देखो, वह रही यह साम्राज्ञी!"

विनीत, संकोचशील, कमनीय, गौरांग, अस्तारता और यहां तक कि अफ्रोदीता से भी अधिक गौरवपूर्ण वह विषादग्रस्त शोक में डूबी हुई है। घुटने उसके आगे झुके हुए हैं, सम्मान प्रकट करने के लिए गुलाब हाथों में हैं। वह कहती है: "मेरी अन्तरात्मा जीवन-पर्यन्त शोकग्रस्त रहेगी। मेरा हृदय विदीर्ण है। मेरे देशवासियो, शोक मनाओ, क्योंकि तुम भी दयनीय हो। धरती—आंसुओं की घाटी है।"

गौरांग सुन्दरी अन्त में कहती है: "नहीं, मेरा समय तो अभी नहीं आया है।"

4

"इनमें से कोई भी रानी मुझसे नहीं मिलती। सब के पास शक्ति है, यद्यपि प्रत्येक अपनी उत्तराधिकारिणी के जन्म के साथ क्षीण होती है। इस प्रकार मेरा जन्म अन्तिम के दुर्बल हो जाने के साथ हुआ और सभी के ह्रास को अपने साथ लायी। नयी रानी दूसरे को अपदस्थ नहीं कर सकती थी, लेकिन एक साथ मिलकर सभी बची रहीं, मैंने उन सब का स्थान ग्रहण किया और अपनी गद्दी पर अकेले ही, बिना किसी के हस्तक्षेप के, बैठ गयी लेकिन फिर भी अपने अस्तित्व के लिए उनकी आवश्यकता थी।

"पुरुष ने जब तक सौन्दर्य की प्रशंसा करनी नहीं सीखी तब तक वह पशु था। स्त्री निर्बल थी, वह—अशिष्ट एवं क्रूर। तब शक्ति का ही बोलबाला था। उसने नव-प्राप्त मूल्य का बस अपहरण कर लिया और स्त्री को अपनी दासी बना लिया। अस्तारता का शासन ऐसा ही था।

"परिपक्वता के साथ सौन्दर्य की विलक्षण प्रशंसा का और निस्सन्देह इसकी प्रशस्ति का आविर्भाव हुआ। लेकिन स्त्री में चेतना का अभाव रहा। उसकी एकमात्र विशेषता उसकी सुकुमारता थी, उसके प्रत्येक विचार को पुरुष ही उसके मन में बैठाता था। पुरुष अपने को सभी जीव-जातियों में एकमात्र मानवोचित कहता था, इसलिए स्त्री अपने को मूल्यवान सम्पत्ति से कुछ भी अधिक नहीं मानकर सन्तुष्ट थी। अफ़्रोदीता के शासन में ऐसा ही था।

"लेकिन इसी में उसकी अपनी मानव-गरिमा का अंकुर पनपने लगा। इस ज्ञान की पहली झलक ने कितनी यातना दी होगी। क्योंकि अभी भी पुरुष उसके व्यक्तित्व को नहीं स्वीकारता था। पुरुष को दास के सिवा और किसी सहयोगी की आवश्यकता नहीं थी और स्त्री ने पुरुष को अस्वीकार कर दिया। जब वासना के वशीभूत होकर पुरुष को याचना करने पर विवश होना पड़ता, तो वह अत्यन्त विनीत हो उठता, अपनी अवमानना भूल जाता और ऐसी शीलवती दासी के लिए तड़पता, जो हमेशा उसकी पहुंच के बाहर होती। जैसे ही स्त्री अनुनय-विनय की ओर ध्यान देती और पुरुष-स्पर्श के लिए सहमत हो जाती, तो वह अपने हाथों से अधिक बलिष्ठ हाथों में आवेष्टित होती, क्रूर हाथ जो उसे बांध लेते दासता में और अवमानना में। बेचारी कन्या! देवी के दारुण राज्य में उसका भाग्य यही था।

"सदियां बीत गयीं और मेरी बहन—क्या तुम पहचानती हो उसे? वह तुम्हारे सपने में आयी—अपने लक्ष्य का अनुसरण किया। वह हमेशा रही, मनुष्य के जन्म से ही सदा उसके निकट रही, किसी भी दूसरे मनुष्य के संसर्ग में आने से पहले, उसने अथक श्रम किया है, नाना प्रकार की भीषण कठिनाइयों के होते हुए भी और यातना ही उसके भाग्य में बदी रही है, हां धीरे-धीरे उत्तरोत्तर प्रगति भी की है। पुरुष ने विवेक अंगीकार किया, स्त्री में समानता की भावना दृढ़ होने लगी और फिर समय की उपयुक्तता के साथ मेरा प्रादुर्भाव हुआ।

"यद्यपि हाल ही में, हे भगवान हाल ही में। क्या तुम्हें पता है कि सबसे पहले किसने पहचाना और मेरे जन्म का प्रतिपादन

किया? रूसो ने, नयी लुईस में। यह मेरे आगमन की प्रथम सूचना थी।

"मेरा अधिराज्य तीव्र गति से बढ़ रहा है। इसकी प्रजा अभी कम है, परन्तु आप तो वह दिन देख ही चुके हैं जब ये पृथ्वी को आवृत्त कर लेगी। तभी मेरे महत्त्व का आकलन सम्पूर्ण रूप से किया जा सकेगा। जो लोग मेरी सत्ता इस समय स्वीकार करते हैं, वे अभी भी इसलिए मेरी पूर्ण इच्छा को नहीं जानते और इसका अनुसरण नहीं करते कि यदि वे ऐसा करने का साहस करें तो कहीं शत्रु भाववाले जनसाधारण, जो मेरी इच्छायें नहीं मानते, उनके जीवन में ही विष घोल दें, मगर मुझे केवल सुख चाहिये, दुख-यातना नहीं, इसलिए मैं शहीद बनने के ख़तरे को उठाने के किसी भी प्रयास को मना करना चाहूंगी और अपनी प्रजा से उतनी ही आज्ञाकारिता की अपेक्षा करूंगी, जितनी से उन्हें कोई हानि न पहुंचे।"

"क्या मैं तुम्हारा पूर्ण परिचय जान सकती हूं?"

"क्यों नहीं। तुम्हारी स्थिति तो इतनी भाग्यशाली है कि तुम्हें डरने की कोई ज़रूरत नहीं। मेरी यह इच्छा कदापि नहीं कि किसी अज्ञानी के हाथों तुम अपने लिए कुछ अशुभ कर डालो। आज तक तुमने जो उपलब्धि अर्जित की है, वह तुम्हारी प्रत्येक महत्त्वाकांक्षा को तुष्ट करती है। अब तुम्हें कुछ और चाहिये भी नहीं। इसलिए मैं तुम्हें पूर्ण रूप से अपने बारे में बता सकती हूं।"

"अपना नाम बताओ मुझे—तुमने और सबके तो नाम ले दिये हैं, पर अपना नाम अभी तक नहीं बताया।"

"तुम मेरा नाम जानना चाहती हो? तो फिर ध्यान देकर सुनो।"

5

"क्या तुम मेरी आवाज़ पहचानती हो? मेरा चेहरा? क्या तुमने पहले कभी इसे देखा है?"

नहीं, कभी नहीं देखा उसने। यह कैसे सोच लिया उसने कि

देखा है? एक वर्ष बीत गया अब तो, जब उसने (वेरा ने) उससे बात करना शुरू किया था और उसने वेरा की ओर देखा था, चुम्बन लिया था। गौरांग सुन्दरी नियमित रूप से दर्शन देती रही थी, दोनों को और पूरी तरह।

"नहीं देखा है। तुम मेरे पास इतने महिमामंडित रूप में आयी कि मैंने बस इससे अधिक और कुछ नहीं देखा कि तुम सबसे गोरी हो। और तुम्हारी आवाज़ के बारे में भी यही कह सकती हूं कि वह सबसे अच्छी है।"

"तुम्हारे लिए वेरा, मैं अभी क्षण भर के लिए अपना प्रभामण्डल मन्द कर दूंगी, और मेरे बोलने में ही जो सहज और स्वाभाविक आकर्षण है उसे निष्पन्द कर दूंगी और तेजस्विता का लबादा गिर जाने दूंगी। अब तो तुमने देख लिया न? मेरी आवाज़ भी सुन ली? जान ही गयी आखिरकार मुझको? बस बहुत हुआ! अब मैं फिर रानी बन जाती हूं, अभी और सदा-सर्वदा के लिए।"

और इस प्रकार प्रभामण्डल फिर स्थान ग्रहण कर लेता है, और उसकी आवाज़ में सम्मोहन आ जाता है। यद्यपि, उस क्षण जब प्रभुप्रकाश के लिए तेजस्विता का परित्याग कर दिया था—क्या वह सच था? अथवा उसने जिस चेहरे की झलक देखी थी, वह आवाज़ जो उसने सुनी थी?

रानी बोली: "तुम मुझे जानना चाहती थीं और अब तुम जान भी गयी हो। तुम मेरा नाम जानना चाहती थीं: मेरा कोई नाम नहीं, लेकिन, वही नाम होता है, जिसके सामने मैं प्रकट होती हूं। मनुष्य से बड़ा और कोई जीव नहीं, स्त्री से बड़ा। मैं वही होती हूं जिसके पास जाती हूं, वही जो प्रेम करती है और बदले में प्रेम प्राप्त करती है।"

वेरा ने स्वयं को देखा था, अपने को ही देवी के रूप में देखा था। देवी का चेहरा उसी के जैसा था, बिल्कुल सुन्दर कदापि नहीं और प्रतिदिन दिखायी पड़नेवाले चेहरों में सबसे सुन्दर नहीं, फिर भी था उसका चेहरा प्रेम द्वारा प्रदीप्त प्राचीनकालीन शिल्पकारों और मुखाकृति अंकित करनेवाले दक्ष कलाकारों की चरमोत्कृष्ट रचना द्वारा स्थापित उच्चतम आदर्श से भी श्रेष्ठ। जी हां, देवी स्वयं अपना ही स्वरूप थी, प्रेम द्वारा अनुप्राणित, अत्यन्त अरुचिकर पीटर्सबर्ग

में सैकड़ों अन्य से कम पसन्द, अब वह लूव्र की अफ़्रोदीता को भी मात करती थी और सुप्रसिद्ध गौरांग सुन्दरियों को भी।

"दर्पण में जो तुम देख रही हो वह तुम हो, मेरे बिना। और मुझमें तुम अपने को अपने प्रेमी के नैनों से देखती हो, जहां कि मैं और तुम एक ही हैं। क्योंकि वह तुमसे सुन्दर और किसी युवती को जानता ही नहीं, तुम जो सम्पूर्ण आदर्श से भी श्रेष्ठ हो।"

"क्या ऐसा नहीं है?"

"है, बिल्कुल है!"

6

"अब तो तुम जानती हो मैं कौन हूं, अब यह जान लो मैं होऊंगी क्या...

"मुझमें अस्तारता की, उसके बाद की सभी रानियों की विषयासक्ति है। मुझमें अफ़्रोदीता के सौन्दर्य के प्रतिसम्मोहित सम्मान है और मुझमें सतीत्व की शुद्धता के प्रति श्रद्धा है।

"तथापि मैं भिन्न हूं: उच्चतर, अधिक शक्तिवान और अधिक पूर्ण। मुझमें ये तीनों समाहित हैं, प्रत्येक अभिवृद्ध और अधिक अनुप्राणित। पर अधिक, उस संयोग की शक्ति और सम्मोहन से कहीं अधिक, जो पूर्ण रूप से मेरी नयी शक्ति द्वारा प्रदत्त किया जाता है, जो मुझसे पहले की किसी रानी में था। कौन-सी बात मुझे औरों से अलग करती है, और सभी की मनोहरता की तुलना में मेरी मनोहरता को सबसे आकर्षक बनाती है—वह है सम्पूर्ण, मानवीय समता, जो मैं प्रेम में अभिषिक्त करती हूं।

"स्त्री को अपने समकक्ष स्वीकार करना उसके सम्बन्ध में सम्पत्ति के सभी अधिकारों का परित्याग करना है। तब उसका प्रेम, पुरुष के प्रेम की ही तरह स्वेच्छा से प्रदान किया जायेगा और यदि बाद में स्वेच्छा ही से उसका प्रत्याहार कर लिया जाय तो पुरुष का उस पर कोई दावा नहीं रहेगा और न स्त्री का उस पुरुष पर। इसीलिए मैं स्वतंत्रता का आलिंगन करती हूं।

"मेरी स्वाधीनता, समानता और अपने राजसी पूर्वजों से मैंने जो

कुछ भी विरासत में पाया है अब इतनी ऊंचाई पर उठ चुके हैं, जितनी पहले कभी किसी ने अर्जित नहीं की थी। मेरे सम्मुख सारा इतिहास निस्तेज हो जाता है।

"मुझसे पहले, भावना पूर्ण रूप से आनन्दकर और ऐसे प्रेम का प्रदीप्त परमानन्द नहीं था, जो दोनों ही पक्षों में अनजाने प्रविष्ट हो जाता था। न ही सौन्दर्य का पूर्ण रूप से रसपान ही किया जाता था, क्योंकि यदि यह स्वेच्छा और सुख से प्रकट न हो तो अभिप्राय का आनंद तिरोहित हो जाता है। विवश हर्षोन्माद का मेरे लिए कोई अर्थ नहीं।

"मैं अभिभूत सतीत्व से अधिक शुद्ध हूं, भले ही देह की दृष्टि से कितनी ही शुद्ध क्यों न हो, पर मैं तो दिल से शुद्ध हूं। मैं स्वतंत्र हूं क्योंकि मैं किसी बहाने अथवा झूठ का सहारा पसन्द नहीं करूंगी: मेरे होंठों से कोई ऐसा शब्द नहीं निकलेगा जो भावविहीन हो अथवा ऐसा चुम्बन जिसमें प्रेम न हो।

"मुझे जो भी नवीनतर उच्चतर आकर्षण प्रदान करता है वह वास्तव में मेरी सबसे मूल्यवान सम्पत्ति है। अपने दास से स्वामी संकोच महसूस करता है, और दास अपने स्वामी से भी। सिर्फ़ अपने जैसे के साथ ही सहजता का उपभोग किया जा सकता है। अधीनस्थ ऊबानेवाले होते हैं, समान जन सचमुच अनिर्वचनीय सुख प्रदान करते हैं। इस प्रकार, मुझसे पहले कोई भी मनुष्य प्रेम के पूर्ण आनंद से अथवा क्षण के तुच्छ आत्मसमर्पण के सिवा इस प्रकार के किसी ऐसे ही भाव से परिचित नहीं था। और स्त्री कितना दयनीय जीव थी! संत्रस्त और करुण, उसे प्रेम का अल्प ज्ञान था, क्योंकि प्रेम और भय में सह-अस्तित्व नहीं हो सकता।...

"इसलिए संक्षेप में, मैं समानता हूं। समानता के बिना देह और सौंदर्य निष्पन्द रहते हैं। आनंद संत्रस्त, वीभत्स होता है, हृदय में शुद्धता नहीं होती, केवल छद्म शुद्धता होती है, जो देह पर बलात् लदी होती है। समानता मेरी स्वतंत्रता का स्रोत है, मेरे अस्तित्व का ही आधार है।

"अब तक मैंने जो कुछ कहा है, अब तक मैं जो कुछ भी रही हूं, उसे यदि तुम बतलाना चाहो तो बता सकती हो। मेरा अधिराज्य तो इतना छोटा है, तथापि मुझे नासमझ लोगों के कटु वचनों

से अपनी रक्षा करनी होगी। यद्यपि, मेरी इच्छा है क्या इसे अभी तक हर कोई नहीं जानता। जब तक सम्पूर्ण मानवजाति मेरी नहीं हो जाती, हृदय से शुद्ध और मुखड़े से स्वच्छ, तब तक मेरा सम्पूर्ण वैभव प्रकट नहीं होगा। लेकिन तुम अकेली अत्यन्त भाग्यवान हो: तुम्हारे लिए यह जान लेने में न हानि है और न तकलीफ़ कि जब सभी, आज की तरह अत्यन्त नगण्य नहीं, मुझे रानी कह सकेंगे तब क्या होगा मेरा। तुम्हें ही मैं अपने भविष्य का भेद बताऊंगी। चुप रहने की सौगन्ध खाओ और ध्यान से मेरी बात सुनो।"

7

. . . .

8

"मेरे प्रेम, मैं तुम्हारी पूरी इच्छा अब जानती हूं, परिपूर्ति का विश्वास है मुझे लेकिन फिर भी पूछती हूं, कब ऐसा समय आयेगा? और तब कैसे रहेंगे लोग?"

"यह तो मैं अकेले नहीं बता सकती, किन्तु मुझे अपनी बड़ी बहन और तुम्हारी बड़ी पुरानी मित्र को बुलाना होगा। वह मेरी स्वामिनी भी है और दासी भी। जो मुझे बनाये वह, उससे अधिक मैं कुछ नहीं हो सकती और फिर भी वह मेरा काम करती है। बहन, कृपा करके मेरी सहायता करो।"

हज़ारों बहनों की बहन और अपने अनेक वरों की वधू का प्रवेश।

रानी का अभिवादन "जय हो" कहकर करती है और फिर वेरा की ओर मुड़ती है। "तो तुम भी यहां हो? तुम भी यह जानना चाहती हो कि मेरी रक्षिता और रानी के शासन में भविष्य कैसा होगा? तो देखो।"

ऐसा विशाल भवन दृष्टिगोचर होता है जिसकी बराबरी बहुत कम कर सकें अथवा कोई भी शानदार से शानदार राजधानी भी इस प्रकार के भवन के अस्तित्व का गर्व नहीं कर सकती! चारों ओर

खेतों, शाद्वलों और पेड़ों के झुरमुटों व बाग़ानों से घिरा। खेत जाने-पहचाने से लगते हैं, किन्तु हैं घने और अपेक्षाकृत लहलहाते हुए—शायद गेहूं के ही हों? इतनी शानदार बालें झूमती हुईं? निश्चय ही पौधाघर का गेहूं ही इतना सरस हो सकता है। शाद्वल भी लग तो बिल्कुल अपने जैसे ही रहे हैं लेकिन जंगली फूल ऐसे हैं, जो केवल हमारे माली ही उगाते हैं। नींबू, नारंगी, आड़ू और ख़ूबानी के उद्यान हैं—क्या खुले आकाश के नीचे यह संभव है? मगर, ये तो स्तम्भ खड़े हैं चारों ओर, यह तो ग्रीष्मकालीन के लिए मुक्ताकाश पौधाघर होना चाहिये। यद्यपि उद्यान हमारे जैसे ही हैं: बलूत, लिंडन, मैपिल, एल्म के वृक्ष, कितनी अच्छी तरह का रख-रखाव है, एक भी पेड़ बीमार नहीं लगता, फिर भी यही एकमात्र स्थल ऐसा है इस परिदृश्य में, जो अपरिवर्तित है। और इमारत—कैसा स्वरूप है उसका? नैनों के लिए बिल्कुल अपरिचित-सी, परन्तु लंदन के साइडनहैम हिल पर जो प्रासाद है उसमें इसकी कुछ तडित् झलक मिल सकती है: लोहा व कांच, कांच और लोहा, बस और कुछ नहीं। झटपट ही तो कह दिया ऐसा, मगर यह तो आवरण है, बाहरी दीवारें, दीर्घा जो विशाल घर को आलिंगनबद्ध किये हुए है। और भीतरी संरचना कितनी हल्की-फुल्की है! खिड़कियों के बीच में खम्भे कितने पतले हैं, फ़र्श से छत तक कांच का विस्तार! पत्थर की दीवारें भित्ति-स्तम्भ जैसी अधिक हैं, दीर्घा की ओर खुलनेवाली खिड़कियों को पक्का जमाने के लिए सतर्क। लेकिन फ़र्श और छतें? दरवाज़ें और खिड़कियों की चौखटें? कौन-सी धातु है यह—चांदी? प्लेटिनम? फ़र्नीचर पर भी इसका उपयोग हुआ है, काठ की वस्तुयें हैं लेकिन अज्ञात धातु से लक़दक़ नाना प्रकार की विचित्रता। सबसे बड़ी रानी आदेश देती है: "इस कुर्सी को खिसकाने की कोशिश तो करो।" यह तो हमारे शिरीष काष्ठ से बनी कुर्सियों से भी हल्की है। कौन-सी धातु हो सकती है यह? हां, अब याद आ गया, अलेक्सान्दर ने मुझे नमूना दिखाया था एक, पंख जैसा हल्का था वह, उसका इस्तेमाल अब ब्रूचों, कर्णफूलों और ऐसे ही आभूषणों में किया जा रहा है, अलूमीनियम, अलेक्सान्दर का कहना है कि किसी दिन यह काठ का स्थान ले लेगा और शायद पत्थर का भी। कैसा सुख-साधन! जहां भी देखो अलूमीनियम और खिड़कियों के बीच

लगे दर्पण और ये कालीन! जिस हॉल में फ़र्श आधा ही ढका है वहां भी बस अलूमीनियम ही! "यहां फ़र्श इतना चिकना नहीं है ताकि बच्चे खेलते समय फिसलें नहीं। अलबत्ता, अगले हॉल, बालरूम में कालीन नहीं बिछा था।" गर्म देशों में पाये जानेवाले पेड़ों और फूलों की बहुतायत थी; सच तो यह है कि पूरा भवन विशाल संग्रहालय ही था।

कौन है जो यहां किसी राजा से भी अधिक राजसी ठाठ-बाठ से रहता है? "पूरा का पूरा दल। चलें, देखें चलकर उनको।" सबसे ऊंची मंज़िल से लगी बालकनी पर बाहर निकल आते हैं वे। इसको वह पहले क्यों नहीं देख पायी, कैसे चूक गयी? "वे सब नीचे फैले खेतों में बिखर गये हैं, पुरुष, स्त्रियां, युवा और वृद्ध सब मिलकर। हां, युवजनों की संख्या अत्यधिक है। वृद्ध पुरुष बहुत कम हैं, वृद्धा महिलाओं की संख्या उनसे भी कम है, बच्चों से भी कम हैं वे, बच्चों का अनुपात भी कुछ कम नहीं कहा जा सकता। आधे से अधिक बच्चों को घर का कामकाज भली-भांति आता है और वे स्वयं पर्याप्त कर भी लेते हैं और कई वृद्धाओं की मदद से खुशी-खुशी करते हैं। सफ़ेद बाल आम तौर पर दुर्लभ है, क्योंकि बुढ़ापा ज़िन्दगी में काफ़ी देर से आता है—हितकर प्रशान्त जीवन जवानी की बहार को देर तक बनाये रखता है, न।" नीचे खेतों में काम करनेवाले दल हैं, लगभग सभी गीत गा रहे हैं। उनका काम कैसा है? देखती हूं, पूलियां बांध रहे हैं वे! कैसी सुन्दर गति है! क्यों न हो और क्यों न गायें वे गीत: काम का ज़्यादातर भार तो मशीनें उठा रही हैं, काटने, पूलियां बांधने और ढोने का भी—लगभग सभी लोग बस इतना कुछ करते हैं, मशीन चलाते हैं, उस पर सवारी करते हैं अथवा उसके साथ-साथ चलते हैं। कितना अद्भुत सुहावना समय व्यतीत करते हैं वे ऐसी तपिश भरी दोपहर में—उनके सिर के ऊपर तना चंदोवा, उनके पीछे-पीछे चल रहा है—कैसा चतुर प्रबन्ध है यह! तो फिर इसमें अचरज ही क्या कि उनका काम इतनी जल्दी और इतनी खुश-मिज़ाजी से हो जाता है! और तभी तो वे गाते हैं! इस प्रकार की ज़िन्दगी बिताते हुए क्यों वे खुश-मिज़ाजी से काम न करें और गीत न गायें! मुझे इस तरह का

जीवन भी अच्छा लगता है! गीतों से घिरे, नयी और पुरानी धुनें—सुनो, अब वे वही चिरपरिचित गीत गा रहे हैं:

हम शान से रहेंगे, तुम और मैं, *
इन जैसे बढ़िया मित्रों के साथ,
कि तुम्हारा मन बस जो चाहे
हम पा लेंगे, मेरे दोस्त और मैं।

आखिर, काम ख़त्म हो गया और सभी घर की ओर चल पड़े। "हम वापस घर चलेंगे और देखेंगे कि खाने में हमें क्या मिलनेवाला है, है न?" बड़ी बहन उन्हें उन सचमुच भीमकाय हॉलों में से सबसे बड़े की ओर ले चलती है, यद्यपि इसमें आधे से अधिक स्थान घेर रखा है मेज़ों ने, निस्सन्देह, यहां बैठने के लिए इतनी जगह है कि हज़ार या इसके अधिक एकसाथ जीम सकें। पर, पूरी बिरादरी नहीं, जो चाहें वे अपने-अपने कमरे में अकेले भोजन कर सकते हैं। डिनर उन लोगों ने, युवा और वृद्धों ने समान रूप से बनाया है, जो घर पर ही रुके हुए थे। बड़ी बहन का कहना है: "पकाना और मांजना उनके लिए बहुत हल्का काम है, जो और किसी काम को करने के अयोग्य हैं या अब वैसा कोई काम कर पाने में असमर्थ हैं।" मेज़ों का रूप देखते ही बनता है। सब बर्तन अलूमीनियम और बिल्लौरी शीशे के हैं और बीचों बीच गुलदानों में सजे फूल। सब कुछ तैयार है और इन्तज़ार है कि काम करनेवाले आयें और बावर्चियों के साथ अपना स्थान ग्रहण करें। "लेकिन उनको परोसेगा कौन?" बड़ी बहन उत्तर देती है: "कब? मेज़ पर? क्यों भला? कुछ मिलाकर पांच या छह व्यंजन ही तो हैं और जो गरमागरम परोसी जानेवाले हैं उन्हें गरम पानी से भरे बर्तन में जगह बनाकर रख दिया गया है। बस मुझे इतना बताओ कि तुम, जो अच्छा जीवन बिताती हो और भरपेट खाती हो, क्या अक्सर इस प्रकार के व्यंजन खाती हो?"—"साल में तीन या चार मर्तबा।"—"यहां तो यह रोज़मर्रा की बात है। जो कुछ और बेहतर चाहते हैं, वे मूल्य चुकाकर ले सकते हैं। और जो लोग मेज़ पर परोसे जानेवाले व्यंजनों

---

* अलेक्सेई कोलत्सोव की कविता 'पलायन' (1839) से उद्धृत।—सं०

से सन्तुष्ट हैं, उन्हें मुफ़्त मिलते हैं। यह वास्तव में सामान्य नियम है: सभी सहज रूप से ख़रीद सकें, ऐसी चीज़ें मुफ़्त, और मनपसन्द के इच्छुकों को तो उसका मोल चुकाना ही पड़ता है।"

"क्या ये मेरे लोग हो सकते हैं? मेरा देश? मैंने इन्हें रूसी गीत गाते सुना और रूसी भाषा में वे बोलते हैं।"—"वह दूर नदी दिखायी पड़ती है। ओका नदी है वह। बेशक वे हमारे ही लोग हैं, यह तुम जान लो कि मैं भी रूसी हूं।"—"तो क्या यह तुम्हारी करतूत है?"—"ऐसा मेरे लिए किया गया था, मेरे उकसावे पर मेरी बड़ी बहन ने ऐसा किया—करतूत उसकी है और उससे उत्पन्न सुख मेरा।"—"क्या हर कोई इसी तरह रहेगा?"—"शान्ति और वसन्त सभी के लिए और हमेशा के लिए ही रहेगा," बड़ी बहन का यही उत्तर था। "हमने अभी कार्य-दिवस के केवल आधे भाग का ही समापन देखा है। आओ अब हम दो महिने बाद की एक शाम पर दृष्टिपात करें।"

9

फूल मुरझा गये हैं, पत्तियां झड़नी शुरू हो गयी हैं, हवा में अवसाद की नमी है। छोटी बहन कहती है: "परिदृश्य नीरस है, यहां जीवन भी नीरस ही होगा, कम से कम मेरे लिए तो बहुत ही नीरस।" बड़ी बहन कहती है: "हॉल खाली पड़े हैं, खेत और फलोद्यान भी, मेरी बहन रानी की इच्छा के अनुसार मैंने इसका इंतज़ाम किया।"—"तो क्या प्रासाद भी सूना पड़ा है?"—"ऐसे नम और सर्दी के मौसम में, निस्सन्देह। 2000 निवासियों में से बस केवल दस से लेकर बीस सनकी ही उत्तरी शरत् के एकाकीपन का आनंद उठाने के लिए ठहरे हुए हैं। शीत आते ही हिमाच्छादित दृश्यावली के प्रेमियों का प्रति दूसरे या तीसरे दिन आने का तांता बंध जायेगा।"

"लेकिन सब इस समय कहां हैं?" बड़ी बहन कहती है: "जहां भी मौसम अच्छा और गर्म है। ग्रीष्मकाल में काम भी बहुत होता है और उजली धूप भी तो दक्षिण से पाहुनों का जमघट हो जाता

है। हम अब किसी रूसी घर को देखकर लौटे हैं, किन्तु विदेशी अतिथियों अथवा मेहमान और मेज़बान दोनों के लिए बहुत-से दूसरे मकान हैं—बस अपने-अपने चुनने की बात है। खेतों पर काम करने के लिए इतने अधिक लोगों को रखकर आपको ख़राब मौसम के 7 या 8 महीने गुज़ार लेने में मदद मिल जाती है—यह भी वही अपने-अपने पसन्द की बात हुई। लेकिन, सभी रूसियों को एक ख़ास इलाक़ा अपेक्षाकृत अधिक पसन्द है, उसे वह नया रूस कहते हैं।"—"ओदेसा और ख़ेर्सोन के पास?"—"तुम्हारे समय में वहां था। लेकिन अब तो देखो वह कहां है।"

पर्वतों की ढलानों पर फलोद्यानों का कवच चढ़ा हुआ है। संकरीली दरारें मैदानों के रूप में पसर जाती हैं। बड़ी बहन कहती है: "एक समय ये पथरीली चट्टानें थीं। अब मिट्टी की मोटी परत से ढकी ये फलोद्यानों में परिवर्तित हो गयी हैं, नमीवाली निचली घाटियों में कॉफ़ी की झाड़ियां हैं, अपेक्षाकृत ऊंचे स्थानों पर खजूर और अंजीर के पेड़ हैं, अंगूर के बाग़ानों के बीच में ईख और गेहूं के खेतों के बीच धान के बड़े-बड़े खेत हैं।"—"कौन-सा देश है यह?"—"ज़रा-सा और चढ़ जाओ ऊपर, फिर बहुत अच्छा दिखायी देगा।" जहां वेरा खड़ी है उस स्थान से धुर पूरब में मिलनेवाली दो नदियां उसकी उत्तर-पूरबी सीमा का द्योतक हैं। दक्षिण और पूरब में चौड़ी गहरी खाड़ी फैली है। दक्षिण में मैदानों का साम्राज्य है और संकीर्ण उपखाड़ी के चहुंओर पश्चिमी सीमा। इसके तथा सुदूर उत्तर-पश्चिम के सागर के बीच छोटा-सा स्थल डमरुमध्य फंसा हुआ है। वेरा आश्चर्यचकित है: "हम मरुस्थल के बीचों बीच नहीं खड़े हैं क्या?"—"पहले था मरुस्थल यह, अब फिर हरा-भरा हो गया है। शक्तिमान नदी से इसकी उत्तरी सीमा के पार पूरब तक और वहां से उत्तरी सागर तक जो कभी दूध और दही की नदियोंवाले प्रदेश के रूप में मशहूर था, विस्तृत और उर्वर धरती है। हम खेती की दक्षिणी सीमा से अधिक दूर नहीं हैं। पर्वतीय प्रदेश अब भी वैसा ही रेतीला और अनुर्वर है, जैसा कि पुराने ज़माने में सम्पूर्ण प्रायद्वीप था। हर साल तुम रूसी लोग रेगिस्तान को दक्षिण की ओर और धकेल देते हो जबकि अन्य लोग दूसरे देशों में काम करते हैं: "हर

एक के लिए जगह है और काफ़ी काम है—बड़ा विस्तार है। उत्तर-पूर्वी जल से और वहां से दक्षिण में अन्तरीप तक की आधी दूरी में घास हरी है, प्रकृति पुष्पित-पल्लवित, इमारतें एक दूसरे से दो और तीन मील की दूरी पर हैं, मानों विशाल शतरंज पर भीमकाय मोहरे खड़े हों। अब हम लोग एक इमारत तक चलें।" बड़ी बहन ने प्रस्ताव किया।

यह भी दूसरी की तरह ही विशाल और स्फटिक की है लेकिन स्तम्भ श्वेत हैं। बड़ी बहन बतलाती है: "ये अलूमीनियम के हैं और लोहे से कुछ महंगे हैं मगर ताप-प्रतिरोध में ज़्यादा उपयुक्त हैं।" उसी प्रकार से लम्बे शुण्डाकार खम्भे प्रासाद को क़रीब मील भर तक घेरे हुए हैं। उन पर और पूरी इमारत से कहीं ऊंचाई पर सफ़ेद चंदोवा तना हुआ है। वह अपनी बात फिर शुरू करती है: "इसको प्रत्येक खम्भे से उठनेवाले फ़ौव्वारों से निरन्तर जल की आपूर्त्ति की जाती है। इस प्रकार तापमान को नियंत्रित रखा जाता है।"—"और जिन्हें ताप और प्रत्यक्ष रूप से धूप का आनंद उपलब्ध रहता है, उनका अहवाल भी तो बताइये?"—"उनके लिए वहां मण्डप और तम्बू हैं। मेरा लक्ष्य तो हमेशा यही रहा है कि वे जो भी मन भावे वही करें।"—"अच्छा, उनके लिए नगर हैं, जो उन्हें पसन्द करते हैं?"—"ज़्यादा लोग पसन्द नहीं करते, इसलिए, शहरों की अवनति। जो अभी भी हैं, उनमें से अधिकांश अपेक्षाकृत बड़े बन्दरगाहों और व्यापारिक मार्गों के यातायात व संचार केन्द्रों के रूप में काम आते हैं। आज वे कहीं अधिक आकर्षक हैं। विविधता चाहनेवाले पर्यटकों का प्रवाह निरन्तर बढ़ता रहता है और अधिक व्यवस्थित निवासी कारोबार के अलावा और समय अधिकांश रूप से ग़ैरहाज़िर ही रहते हैं।"—"कुछ तो ऐसे ज़रूर होंगे, जो पूरे साल भर रहते हों?"—"भले ही वह अपने को चाहे जो कह ले, जैसे उनसे पहले लन्दनवासी, पेरिसवासी और पीटर्सबर्ग के निवासी कहते आये हैं। तो हम, 100 में से 99 वैसे ही रहना पसन्द करते हैं, जैसा कि मैंने मेरी बहन के साथ तुम्हें दिखाया, क्योंकि यह तरीक़ा अधिक लोकप्रिय और सस्ता है। अगर हम जल्दी करें तो प्रासाद देख पायेंगी—रात तेज़ी से बढ़ रही है।"

"लेकिन पहले मैं यह जानना चाहूंगी यह कैसे हुआ?"—"कैसे

माने क्या?"—"कैसे अनुर्वर बेकार पड़ी ज़मीन, साल के आठ महीनों के लिए हमारा आरामदेह घर कैसे बन गयी।"—"इसमें आश्चर्य की क्या बात है? एक अथवा कोई दस साल में तो ऐसा किया नहीं गया। उत्तर-पूर्व के नदी तटों से और उत्तर-पश्चिमी तट से मिट्टी लायी गयी (ऐसा करने के लिए पर्याप्त मशीनें हैं और विद्युत शक्ति भी), उससे फिसलती रेत को मज़बूत किया गया, सिंचाई की नहरों के साथ आयी हरियाली और शीतलकारी नमी। धीरे-धीरे उन्होंने प्रगति की। कई बार तो एक साल में सिर्फ़ एक मील, लेकिन आगे बढ़ते रहे और दक्षिण की ओर, आज तक भी बढ़ रहे हैं। कुछ और था भी तो नहीं, बस केवल उस ऊर्जा और उन संसाधनों को उपयोग में लाने की कर्मठता, जिन्हें कभी व्यर्थ ही बेकार के और यहां तक कि हानिकर उद्यमों के लिए बरबाद किया जाता था। मेरी शिक्षा के सुपरिणाम हुए हैं। तुम्हारे ज़माने के रूखे और विवेकहीन असभ्य ऐसा हरगिज़ नहीं कर सकते थे, फिर भी मैंने चेष्टा जारी रखी और जब अन्ततः इसकी समझ लोगों को आ गयी तो मुझे तत्पर अनुयायी मिल गये। मैं किसी प्रकार की निर्मम मांग नहीं करती, तुम्हें तो मालूम ही है, तुमने तो ख़ुद ही मेरे अनेक निर्देशों को अपनाया है। अपनी उस कार्यशाला के बारे में सोचो—क्या दूसरों के मुक़ाबले आपके पास ज़्यादा पैसे और साधन थे?"—"बिल्कुल नहीं।"—"किन्तु क्या तुम्हारे यहां काम करनेवाली युवतियां, उसी साधनवाली कार्यशालाओं की युवतियों की तुलना में दस गुना अधिक सुख-आराम, बीस गुना अधिक आनंद और दुर्भाग्य का सौंवां हिस्सा ही नहीं प्राप्त करतीं? क्या तुमने अपने ज़माने और युग में ऐसी स्वतंत्रता नहीं प्रदर्शित की जो व्यवहार में व्यक्त की जा सके? इस सब के लिए सामान्य विवेक, साधन-सम्पन्नता और उपलब्ध साधनों के न्यायसंगत उपयोग की दरकार नहीं होती, क्या?"—"हां, मुझे यह मालूम है।"—"तो आओ, और देखो कि वे लोग कैसे रहते हैं, जो वह जानते हैं, जिसे तुमने बहुत पहले खोज लिया था।"

10

वे प्रासाद में प्रविष्ट हुईं और एक और भव्य एवं विशाल हॉल में पहुंचीं। शाम अपने शबाब पर थी, वैसी ही जैसी कि सूरज डूबने के बाद चौथे घंटे में होनी चाहिये थी। यह हॉल इतने चमकीले ढंग से प्रकाशमान कैसे है? मोमबत्ती नहीं है और न ही कहीं कोई फ़ानूस ही दिखायी पड़ता है। हां, मिल गया उत्तर: गुम्बद में विशाल पारभासी कांच लगा है, अपनी रोशनी बिखेरने के लिए और ठीक वैसी ही, जैसी कि उसे फेंकनी चाहिये—धूप-सी उजली और चमकीली किन्तु चौंधियानेवाली नहीं—निस्सन्देह, बिजली, इस हॉल में हज़ार लोग थे लेकिन उसमें इसकी तिगुनी भीड़ आसानी से समा सकती थी। गोरी सुन्दरी कहती है: "कभी-कभी ज़्यादा लोग यहां होते हैं, आज से भी अधिक जब भी अतिथि आ जायें।"—"आज क्या अवसर है? ऐसा तो निश्चय ही नहीं लगता कि यह आम रातों की तरह की ही कोई रात है?"—"बिल्कुल आम रात है।"—"हमारे ज़माने में तो यह कोई शाही नाच-महफ़िल लगती है, महिलाओं की पोशाकें कितनी लुभावनी हैं, अलबत्ता हमारी पोशाकों की तरह बिल्कुल नहीं। जिन एक या दो महिलाओं ने आम फ़ैशन के कपड़े पहन भी रखे हैं, उन्होंने भी बस मनोरंजन के लिए, कुछ बदलाव दिखाने के लिए और वे भी कुछ मनोविनोद की तरंग में। दूसरे, अधिक मनोहर परिधान पूरब और दक्षिण की चकित कर देनेवाली विविधता प्रस्तुत करते हैं। इन सबमें सर्वाधिक लोकप्रिय है, प्राचीन एथेंस का रमणीय, हल्का-फुल्का परिधान, जिसे आज की रात अधिकांश महिलाओं ने धारण कर रखा है और अधिकांश पुरुषों ने उतनी ही ढीली-ढाली पोशाकें पहन रखी हैं, बस लबादा अतिरिक्त रूप से ओढ़ रखा है। यह संयत और अनलंकृत पोशाक स्पष्ट ही रोज़मर्रा की पोशाक ही है। यह देह को कितना सौष्ठव प्रदान कर देती है। प्रत्येक हाव-भाव प्रदर्शन को कैसा मोहक अन्दाज़ दे देती है! और वाद्यवृन्द मण्डली, पुरुष और महिला मिलाकर सौ से भी ऊपर वादक, बस वे केवल उस श्रेष्ठ संगीत मण्डली से ही कुछ कम है।"—"तुम्हें तो मालूम ही है कि तुम्हारे ज़माने में यूरोप इस हॉल में अथवा निश्चय ही किसी अन्य में उपस्थित सैकड़ों की सानी

के केवल दस गायक भी एकत्र नहीं कर सकता था: यहां पर उपलब्ध पूर्ण सुरुचि कंठ का संस्कार करती है, इसीलिए सुर परिष्कृत होता है।" गोरी सुन्दरी कहती है। इसके अलावा वादन मण्डली और गायन मण्डली दोनों में निरन्तर परिवर्तन होता रहता है क्योंकि लोग नाच में शामिल होते रहते हैं, और नाचनेवाले इन मण्डलियों में शामिल होते रहते हैं।

हम यह फिर बता दें, यह नाच और आमोद-प्रमोद की साधारण संध्या है—आज तक मैंने जितनी संध्यायें देखी हैं, वहां इतनी मौज-मस्ती नहीं थी। यद्यपि हमारे ज़माने में जो उल्लास अनजाना था, उसे यहां, पूरे और जल्द काम ख़त्म हो जानेवाले दिन के बाद सहज माना जा सकता है, बिना पूर्ण रूप से काम से थके क्या मौज-मस्ती का पूरा आनंद उठाया जा सकता है, भला। और ये सीधे-सादे लोग मौज मना सकते हैं, हमसे कहीं अधिक जोश से क्योंकि हम तो बहुत ग़रीब थे, पीड़ा और वंचना की स्मृति के बोझ से और ऐसी ही स्थिति के भविष्य में आगमन की आशंका से दबे हुए जो थे। उनका क्षण तो विस्मृति का था, निश्चय ही, क्या इस प्रकार की उत्कट आवश्यकता को कभी भुलाया जा सकता है क्या? रेत रेगिस्तान को रुद्ध कर देती है, है न ठीक? जैसे कि विषाक्त वाष्प इसके और दलदल के बीच की अच्छी धरती की एक पट्टी को विषैला कर देती है। यहां पर आवश्यकता की स्मृति नहीं और न ही भय, अच्छे के सिवा, श्रम मुक्त और सन्तोष-समृद्धि के सिवा कोई दूसरा विचार नहीं और वही भविष्य के बारे में भी सत्य है। तुलना करो तो! हमारे कामगार व्यक्ति की नसें इस्पाती हैं और शक्ति इतनी कि देर तक धमाचौकड़ी मचाते हुए रंगरलियां मना सके। उनमें भी कुछ कम इस्पाती शक्ति नहीं लेकिन अधिक परिष्कृत, अधिक संवेदनशील, सच तो यह कि बिल्कुल हम या तुम जैसे ही। उसमें, स्वस्थ आनंद की जो ललक है, हममें इसलिए नहीं कि स्वास्थ्य पुष्ट नहीं और निष्कपट श्रम के साथ-साथ प्रबुद्धता की कमनीयता है, जो हमारी विशिष्टता है। दूसरे शब्दों में हमारी नैतिक उपलब्धि, श्रम संलग्न पुरुष की दैहिक परिपुष्टता के साथ बंधी हुई है। इसलिए यह सहज बोधगम्य है कि उनका आमोद-प्रमोद, उनका

सुख और उनका अनुराग हमारी तुलना में कहीं अधिक व्यापकतर, मधुरतर, प्रफुल्लतर होता है—इंसानों में सबसे सुखी!

नहीं, संसार को अभी सच्चा समारोह देखना, इसके लिए उपयुक्त लोगों को उत्पन्न करना शेष है। केवल वही, जिन्हें हमने अभी-अभी देखा है, आनंद के प्याले की अन्तिम बूंद तक का रस ले सकते हैं! जीवन शक्ति के पूर्ण यौवन में वे शालीनता से ओतप्रोत होते हैं, उनके नैन-नक्श पैने और आकर्षक होते हैं। सभी एक से एक सुन्दर, उन्हें स्वाधीनता और श्रम के जीवन का वरदान मिला होता है—कैसा सौभाग्य, कितना उत्कट सौभाग्य!

लेकिन वे आधे जो आमोद-प्रमोद में ज़ोर-शोर से भाग नहीं ले रहे हैं, कहां हैं वे? गोरी सुन्दरी का उत्तर है: "हर जगह, थियेटर में, मंच पर अथवा प्रेक्षकों के रूप में, जहां जिसे अच्छा लगे वहीं। व्याख्यान हॉलों, संग्रहालयों और पुस्तकालयों में, पार्कों में, अपने कमरे में अकेले अथवा अपने बच्चों के साथ, लेकिन अधिकांश, जी हां अधिकांश मेरे रहस्य के भागीदार होते हैं। उन दमकते गालों और चमकते नैनों को तुमने नाच-हॉल में देखा था, सोचो आनेवालों के बारे में, जानेवालों के बारे में। मैंने ही तो उन्हें बुलाया था, क्योंकि मैं प्रत्येक कुमारी और पुरुष के कमरे में रहती हूं, जहां पर्दे पड़े दरवाज़े और गुदगुदे कालीन शोर नहीं होने देते और मेरा रहस्य अभेद्य बना रहता है। और मैंने ही उन्हें रहस्य से फिर रोशनी में और रुचिकर आमोद-प्रमोद की दुनिया में भेजा। यह मेरा साम्राज्य है।

"मेरा, मैं कहती हूं, यह सब मेरा है। श्रम मेरा आनंद को अपनी शक्ति और ऊर्जा प्रदान करता है, रंगरलियों को तत्परता और शान्तिपूर्ण संध्या-राग। मैं ही जीवन का चरमोत्कर्ष हूं।"

11

बड़ी बहन प्रकट होकर कहती है: "मेरी गौरांग और रानी बहन में उच्चतम सुख का शिखर तो है, लेकिन सभी के लिए मनपसन्द

खुशी उपलब्ध है। ये लोग जैसे चाहे वैसे रहते हैं अबाध स्वाधीनता में।

"हमने जो कुछ अभी दिखाया है, उसे शीघ्र उपलब्ध नहीं किया जा सकेगा। तुमने जो झांकी पूर्वाभास के रूप में देखी है वह आनेवाली कई पीढ़ियों तक यद्यपि बहुत अधिक नहीं, मूर्त नहीं हो सकेगी। तुम जानती हो, मेरा काम प्रत्येक व्यतीत वर्ष के साथ उत्तरोत्तर तेज़ गति पकड़ता जाता है। ताहम, तुम मेरी बहन के पूर्ण राज्याभिषेक को देखने के लिए जीवित नहीं रहोगी, तुम्हारे भाग्य में बस इसका पूर्वाभास ही बदा है। भविष्य उज्जवल और सुंदर है। उससे प्रेम करो, उसकी ओर अग्रसर होओ, उसके लिए काम करो, उसे निकट लाओ। भविष्य की जितनी बातों को वर्तमान में ला सकते हो, उन्हें लाओ, तुम्हारा जीवन उतना ही उज्ज्वल और भला, उतना ही हर्षदायी और आनंदमय होगा, जितना भविष्य तुम अपने वर्तमान में उतार सकोगे—इसी पर जीवन की गरिमा, इसका सुख-सौन्दर्य और सन्तोष निर्भर हैं।"

17

एक और साल बाद, नयी कार्यशाला आत्मनिर्भर हो चुकी थी। पुरानी, मूल संस्थापित संस्था से सम्बन्ध घनिष्ठ थे। मांग की बहुतायत और कमी दोनों ही मौक़ों पर एक कार्यशाला से दूसरी को आर्डर बराबर मिलते रहते थे, इस सिलसिले में हिसाब-किताब चालू रहता था। दोनों ही शिल्पशालाओं की परिसम्पत्ति को और उनमें घनिष्ठतर सम्पर्कों को ध्यान में रखते हुए अब यह संभव था कि नेव्स्की प्रोस्पेक्ट में दुकान खोल ली जाय। इसके फलस्वरूप वेरा और नताशा मेर्त्सालोवा दोनों ही, उचित रूप से, यदि हम कहें तो, भागदौड़ में लगी रहती थीं। हमेशा ही शहर और बाहर के आर्डरों के सिलसिले में दोनों कम्पनियों के बीच दोस्ताना सम्बन्धों के बावजूद पूर्ण रूप से परस्पर विलयन का विचार इतना नया था कि इसके लिए लम्बी और अत्यन्त सावधानी के साथ जांच-पड़ताल दरकार थी।

दुकान के मुनाफ़े के बारे में अलबत्ता किसी क़िस्म का कोई संदेह नहीं था। कई महीनों तक परस्पर आय-व्यय का आम लेखा बनाने का लाभ हुआ, नेव्स्की प्रोस्पेक्ट पर नया नामपट्ट—"Au bon travail. Magasin des Nouveautés"—लग गया और दुकान खुल गयी, फिर काम पहले से अधिक मुनाफ़े में चल निकला। वेरा और नताशा तो यह सपना भी देखने लगीं और इसके बारे में चर्चा भी करने लगीं कि वे कुछ ही सालों में दो कार्यशालायें नहीं बल्कि चार या पांच और फिर उसके बाद दस और बीस चलाने लगेंगी।

दुकान खुलने के तीन महीने बाद किरसानोव को किसी न्यूनाधिक (न्यून नहीं बल्कि अधिक ही) अपरिचित साथी की ओर से बुलावा आया। चिकित्सा के मामलों पर विस्तारपूर्वक विचार-विमर्श हुआ, विशेष रूप से उस साथी को उपचार में मिली आश्चर्यजनक सफलता पर। वह चार नैपकिनों में बर्फ़ का चूरा भरी दो लम्बी थैलियों को अलग-अलग लपेटकर सीने अथवा पेट पर रखकर इलाज करता था। अंत में, उस साथी ने अपने एक ख़ास साथी का उल्लेख इस रूप में किया कि उसने किरसानोव से परिचित होने की इच्छा प्रकट की थी।

किरसानोव ने इच्छा पूर्ण कर दी। वह व्यक्ति स्नेही सिद्ध हुआ। वार्तालाप में नाना प्रकार के विषय छिड़े और उसमें उस दुकान का ज़िक्र भी हो गया, जिसकी चर्चा हम पहले कर चुके हैं और जिसका लक्ष्य, जैसा कि किरसानोव ने बताया, मुख्य रूप से व्यावसायिक था। नामपट्ट में प्रयुक्त फ़्रांसीसी शब्द travail पर विशिष्ट रूप से देर तक विवाद हुआ। किरसानोव ने इसका अनुवाद "श्रम" के स्थान पर "कृति" का समर्थन किया और Au bon travail का अर्थ लगाया भली-भांति सम्पन्न किया गया कार्य अथवा इससे भी सटीक अच्छी शिल्पकला। इसी चर्चा से यह बात निकली कि क्या कोई उपनाम बेहतर नहीं होगा। इस पर किरसानोव ने कहा कि उसकी पत्नी का रूसी नाम ग्राहकों के लिए आकर्षक नहीं होगा। अन्ततः, हल निकल आया वेरा (विश्वास) के लिए फ़्रांसीसी शब्द foi, इस प्रकार Au bon travail बदलकर हो गया A la bonne foi, इसका अर्थ "ईमानदार दुकान" निश्चय ही इतना साधारण-सा था, प्रचलित रस्म के अनुसार भी उचित था, मालकिन का नाम उसमें

शामिल था, भले ही नाम मूल नाम ही क्यों न हो। उचित विचार-विमर्श के बाद मामला तय हो गया। इस और इससे सम्बद्ध प्रश्नों के बारे में किरसानोव की असाधारण उत्कटता पूर्ण रूप से विजयी रही और विजेता मन ही मन अत्यन्त प्रसन्न हो अपने घर लौटा।

पर वेरा और नताशा को अपने सपनों की ऊंची उड़ान का त्याग करने पर विवश होना पड़ा और आगे चलने के बजाय यथास्थिति से संतोष करना पड़ा।

अपने अतिरिक्त उत्साह पर इस प्रकार तुषारपात होने पर भी वे अपने को भाग्यवान मानती और समझती रहीं कि यथास्थिति तो बरक़रार है। इस बीच किरसानोव ने अपने नये और अत्यन्त रुचिकर मित्र के साथ सम्पर्क साधे रखा। दो वर्ष और बीत गये, निपट व्यर्थ, इनमें कोई भी तो घटना नहीं घटी।

18

कतेरीना वसील्येव्ना पोलोज़ोवा का पत्र

"सेंट पीटर्सबर्ग, 17 अगस्त, 1860

"मेरी प्यारी पोलीना,

"मैं अत्यन्त प्रसन्न हूं, अपने नये व्यवसाय में इतनी तल्लीन हूं (ज़रा सोचो तो कि अभी हाल में ही तो मैंने इसे शुरू किया है!) कि मैं तुम्हें इसके बारे में बताने के लिए बेताब हूं। तुम निश्चय ही मेरे इस सम्मोहन की सहभागी बनोगी, लेकिन इससे भी अधिक महत्त्वपूर्ण बात यह कि तुम भी शायद यही करना संभव मानो। पोलीना, यह बहुत ही आनंददायक है।

"इस सब का ताल्लुक पोशाक तैयार करने की कार्यशाला से है, एक नहीं दो। इनकी स्थापना विशिष्ट सिद्धान्त पर उस स्त्री ने की है, जिसे मैं सिर्फ़ दो हफ़्ते पहले मिली, और हम अच्छे मित्र बन गयीं। अब मैं उसकी मदद इस वादे के बदले कर रही हूं कि वह

मुझे अपनी कार्यशाला स्थापित करने में मदद करेगी। वेरा पावलोव्ना किरसानोवा, यही नाम है उसका। वह जवान है, दयालु है और उसमें बहुत जीवट है, बिल्कुल मेरे मनपसन्द का क्योंकि यह मेरी दिलेर पोलीना से मिलती-जुलती है, तुम्हारी मृदु व्यवहारवाली इस पत्र लेखिका से नहीं! बिल्कुल ही अकस्मात् मुझे उसके व्यवसाय के बारे में सुनने को मिला। उस समय केवल एक का ही ज़िक्र हुआ था, मैं सीधे ही उससे मिलने चली गयी, न कोई बहाना और न कोई सिफ़ारिश, और जाकर उसे अपना इरादा बतला दिया। हम तत्काल घुलमिल गये, इस तथ्य के कारण और भी सहजाता से, क्योंकि उसका पति वही डॉक्टर किरसानोव निकला, जिसने, तुम्हें बेशक याद ही होगा, पांच बरस पहले मेरी बहुत बड़ी मदद की थी।

"जब आधे घंटे के साक्षात्कार से उसे यह विश्वास हो गया कि मेरी मंशा सच्ची है, तो वेरा पावलोव्ना मुझे अपनी वर्तमान कार्यशाला में ले गयी (दूसरी पुरानी कार्यशाला की देखभाल अब उसकी घनिष्ठ मित्र और कुशल युवती करती है)। अब मैं इस प्रथम भेंट का वर्णन करना चाहती हूं। इसके लिए मैं अपनी उस पुरानी डायरी का सहारा ले रही हूं, जिसे लिखना बन्द कर चुकी थी, मगर किसी ख़ास घटना के फलस्वरूप, जिसके बारे में शायद फिर कभी तुम्हें लिखूंगी, उसे ढूंढ़ निकाला। इसमें मेरे उस दिन के भाव, अत्यन्त सटीकता से अंकित हैं। उन्हीं के आधार पर मैं तुम्हें लिख रही हूं। बहरहाल, इस कार्यशाला के संबंध में अपने सब विचार लिख लेने से मैं अत्यन्त प्रसन्न हूं, क्योंकि, ऐसा न होने की स्थिति में, मैं बहुत कुछ ऐसा छोड़ देती, जो मुझे उस समय विशिष्ट लगा था और अब दो हफ़्ते बाद जो बिल्कुल स्वाभाविक-सा ही लगता है। और अब, प्यारी पोलीना, मैं अपनी डायरी का सहारा लेती हूं। उसे ज्यों का त्यों उद्धृत करने के साथ बस वही आवश्यक विवरण यथास्थान जोड़ूंगी, जो बाद में मैंने ग्रहण किये।

"अच्छा बताओ, तुम जानती हो कि कार्यशाला होती क्या है? हम दरवाज़े पर रुके, वेरा पावलोव्ना मुझे ऊपर ले गयीं, बढ़िया सीढ़ियों पर चढ़ हम गयीं, ऐसी जिन पर तुम किसी द्वारपाल की उपस्थिति की आशा करोगी। तीसरी मंज़िल पर उसने घंटी बजायी और फिर मैं बड़े कमरे में दाखिल हुई, भली-भांति सजा-धजा,

बड़ा-सा प्यानो भी रखा था वहां, मानों वह ऐसे किसी घर-परिवार का अंग हो, जो 4-5 हज़ार रूबल प्रति वर्ष ख़र्च करता हो। यही थी कार्यशाला? दर्ज़िनों का कमरा है? 'यह सभी का आम कमरा है, लेकिन हम लोग रिहायशी हिस्से से ही शुरू करें—सभी काम करने गयी हैं इस वक़्त, हम किसी की भी शान्ति भंग नहीं करेंगी।'

"अब सुनो, उसने मुझे जो कुछ दिखाया।

"एक ही मंज़िल पर तीन फ़्लैटों को एक ही फ़्लैट में बदल लिया गया था। कभी ये फ़्लैट 700, 550 और 425 कुल मिलाकर 1675 रूबल प्रति वर्ष की दर पर चढ़े थे, लेकिन पांच साल की लीज़ के फ़ायदे को देखते हुए मकान-मालिक ने किराया कम करके 1250 रूबल कर दिया था। कुल मिलाकर 21 कमरे, 2 बहुत बड़े, चार-चार खिड़कियोंवाले। इनमें से एक कामन रूम और दूसरा भोजनालय के रूप में काम आते हैं। दो, कुछ कम बड़े नहीं, कमरे काम करने के लिए इस्तेमाल किये जाते हैं और बाक़ी रिहायश के लिए। हम इनमें से 6 या 7 कमरों से निकले (मेरा मतलब है, जब मैं पहली बार वहां गयी थी तब), मेरे विचार से वे सभी सुव्यवस्थित थे: तून और अख़रोट की लकड़ी का फ़र्नीचर, आदमक़द आईने, सिंगार मेज़ें, आरामकुर्सियां और सोफ़े, सभी बढ़िया ढंग के और अलग-अलग डिज़ाइनों के, एक-एक करके ख़रीदे गये होंगे, बिल्कुल उचित क़ीमत पर सेकेंडहैंड ख़रीदे होंगे। मुझे एक मध्य-वर्गीय घर याद आ गया, किसी वृद्ध विभाग अधिकारी अथवा उसके ईमानदार डिप्टी का। बड़े कमरों में तीन और एक में तो चार भी युवतियां रहती हैं, दूसरों में—प्रत्येक में दो।

"हमारे दौरे में अगला पड़ाव कार्यशाला के कक्ष थे। यहां कार्यरत युवतियां साधारण रेशम और मलमल की पोशाकें पहने, मध्य वर्गीय समृद्धि प्रकट कर रही थी। कमनीय कान्ति से स्पष्ट था कि उनका जीवन तृप्त है। तुम समझ ही सकती हो कि मैं कितनी भौचक्का रह गयी होऊंगी। हम वहां काफ़ी देर रुके कि इस बीच मैं कई युवतियों से मिली। वेरा पावलोव्ना ने उन्हें मेरे आने का मक़सद बताया। विकास का स्तर भिन्न था, शिक्षित बोलचाल, साहित्य, इतिहास और भूगोल के बारे में किंचित ज्ञान से लेकर कुछ अत्यन्त

पढ़ी-लिखी जोड़ी अथवा जो नयी रंगरूट थीं, उनमें से कुछ कम प्रबुद्ध युवतियां। अलबत्ता, इस कोटि की युवतियों से वार्तालाप द्वारा यह पता चला कि वे भी कुछ कम पढ़ी-लिखी नहीं हैं, उनका ज्ञान भी पर्याप्त था। आम तौर से कहें तो विकास का स्तर कार्यशाला से सम्बंध जुड़ने के समय के अनुपात से था।

"वेरा पावलोव्ना अपना काम-काज देखती-भालती रही, और समय-समय पर यह भी देखती रही कि युवतियों के साथ मेरा सम्पर्क कैसा चल रहा है। जब खाना परोसा गया तो वह उस दिन किसी भी सप्ताह के किसी आम दिन जैसा ही था, तीन व्यंजन थे, आज थे चावल का सूप, उबली मछली और बछड़े का मांस और अन्त में काफ़ी या चाय। मैंने बहुत स्वाद से खाया और यदि मुझे रोज ही यही भोजन परोसा जाय, तो मैं हरगिज़ यह नहीं कहूंगी कि मुझे अच्छा भोजन नहीं मिलता।

"यह भी तो याद करने की ही बात है कि मेरे पिता आज तक कितना बढ़िया खानसामा रखे हुए हैं।

"तो यह है मेरे पहले निरीक्षण के अवसर पर बनी मेरी राय का वर्णन। कार्यरत युवतियों के आवास के निरीक्षण के लिए तैयार, उनके कमरों को देखकर और उनका भोजन प्राप्त करने के बाद मैं उन युवतियों के आरामदेह कक्षों में पहुंची, जो मध्य और निम्न स्तर के भद्र लोगों के कक्षों जैसे ही थे। मुझे साधारण किन्तु तृप्तिदायक भोजन परोसा गया था और मैं आश्चर्यचकित थी कि यह सब कुछ कैसे संभव है।

"बिल्कुल साधारणतया, जैसा कि वेरा पावलोव्ना और उनके पति ने बतलाया, जब हम उनके घर लौटे। किरसानोव ने काग़ज के टुकड़े पर मोटे-मोटे रूप में हिसाब दर्ज किया। यह काग़ज आज भी मेरी डायरी में सुरक्षित है। मैं आगे उसे उद्धृत करूंगी, परन्तु पहले थोड़े-से विषयान्तर को अन्यथा न लेना।

"निर्धनता के स्थान पर मैंने अपेक्षाकृत सम्पन्नता वहां देखी। मैंने आशा की थी कि वहां गन्दगी होगी, परन्तु वहां तो एक भी दाग़-धब्बा नहीं थी, बल्कि इससे भी बढ़कर बात यह कि वहां सुख-साधन की झलक थी, संस्कृति की कमी तो अपने बिल्कुल विपरीत सम्भ्रान्त रूप में थी—यह सब एक ओर उच्चतर आय और

दूसरी ओर किफ़ायतशारी से किये जानेवाले परिव्यय की कृपा के फलस्वरूप था।

"पहले कारक के लिए किसी व्याख्या की दरकार नहीं: वे अपनी ही स्वामिनी होने के रूप में अपने लिए ही काम करने के कारण युवतियों को अपने वेतन के अतिरिक्त मुनाफ़ा भी मिलता है। इसके अलावा, तेज़तर उत्पादन और माल की कम बरबादी के ज़रिये कार्यकुशलता बहुत बढ़ती है।

"गृहस्थी के ख़र्च में बचत स्पष्ट दीखती है। उधार और ख़ुदरा ख़रीदने की तुलना में नक़द क़ीमत चुकाकर थोक में माल ख़रीदना काफ़ी सस्ता पड़ता है। चुनाव में अधिक सावधानी बरतने और प्रत्येक ख़रीद के बारे में पूरी जांच-पड़ताल से भी क्वालिटी उन्नत होती है।

"इस तरह कई ख़र्चों में भारी कटौती की जा सकती है अथवा बिल्कुल ही नहीं करने पड़ते। उदाहरण के लिए, ज़रा सोचो तो दुकानों पर प्रतिदिन दो और तीन मील आवाजाही से जूतों और कपड़ों का क्या हाल होगा। यह उदाहरण है तो यूं ही सा, लेकिन है लाक्षणिक। अगर छतरी न हो तो बारिश से कपड़ों को बड़ा नुक्सान होता। वेरा पावलोव्ना के अनुसार, साधारण किरमिच की छतरी 2 रूबल में तैयार हो सकती है, सहकारी के 25 सदस्यों पर कुछ 50 रूबल ख़र्च होंगे, यदि हरेक अपनी-अपनी ख़रीदने का तय करे और अगर कोई न लेने का तय करे तो प्रति व्यक्ति नुकसान दो रूबल से अधिक का ही होगा। लेकिन ये युवतियां साथ-साथ रहती हैं, और प्रत्येक अपनी ज़रूरत के वक़्त ही बाहर निकलती है। इनमें से अधिकांश की ज़रूरतें एक ही दिन तो उठती नहीं, इसके प्रतिकूल अवसर विरल ही आते हैं। इसलिए अच्छी क्वालिटी के पांच छाते ख़रीद लिये गये हैं, प्रत्येक 5 रूबल का है, कुल ख़र्च हुआ 25 रूबल अर्थात् प्रत्येक युवती से 1 रूबल लिया गया। देखो न, हरेक जो क़ीमत चुकाती है, उसके स्थान पर आधी क़ीमत में ही बढ़िया चीज़ इस्तेमाल के लिए होती है। और यही बात दूसरी चीज़ों पर भी लागू होती है, कमरे और रहने-खाने का तो ज़िक्र ही क्या! उदाहरण के लिए, जिस भोजन का उल्लेख मैंने पहले किया है उसका मूल्य 5 रूबल 50 कोपेक अथवा 5 रूबल 75 कोपेक, रोटी के साथ (चाय अथवा काफ़ी पर हुए ख़र्च को छोड़कर)। वेरा पावलोव्ना और मेरे

अलावा 37 लोगों ने खाया वह भोजन, यद्यपि, इसमें भी कोई शक नहीं कि इनमें कई बच्चे भी रहे होंगे। अब 5 रूबल 75 कोपेक को 37 से भाग दें तो प्रति व्यक्ति 16 कोपेक से कम का ही खर्च आयेगा अथवा प्रति मास 5 रूबल से कम। जैसा कि वेरा पावलोव्ना ने कहा कि यदि कोई व्यक्ति इतने ही खर्च से रहना चाहे तो उसे बाज़ार में मिलनेवाले दलिया और बहुत कम पाव-रोटी से ही काम चलाना होगा जबकि किसी ठीक-ठाक भोजनालय में उसे 30 और 40 कोपेक के बीच कुछ रक़म चुकानी पड़ेगी, फिर भी व्यंजनों की कोटि कहीं खराब होगी। इस प्रणाली से अनावश्यक खर्च में कटौती हो जाती है अथवा बिल्कुल होता ही नहीं, रसोई घर के खर्च में भी कमी आती है, बस युवतियों की अपनी ही किसी रिश्तेदारी की दो वृद्धाओं को वेतन देना पड़ता है। अब मैं अपने पहले निरीक्षण के मौक़े पर किरसानोव द्वारा मेरे लिए की गयी गणना का उल्लेख करूंगी।

"'मैंने जो आंकड़े दिये हैं वे अवश्य ही स्थूल हैं,' उसने सब आंकड़े लिख लेने के बाद कहा। 'निस्सन्देह, कोई भी चालू कारोबार, चाहे खुदरा हो अथवा माल तैयार करने का अपने ही नामे और जमा के मौलिक संतुलन का अनुसरण करता है, वैसे ही जैसे कि किसी भी घर-खर्च के सिलसिले में होता है, जब किसी खास चीज़ के लिए किसी दूसरी चीज़ के मामले में किफ़ायत बरती जाती है। मैं फिर कह दूं कि मैंने जो आंकड़े दिये हैं, वे मोटे-मोटे हैं और तर्क की खातिर, किसी अन्य व्यापारिक उपक्रम अथवा कम भाग्यवान परिवार द्वारा किये जानेवाले खर्च की तुलना में हमारी प्रणाली के अन्तर्गत हासिल किफ़ायतशारी को जानबूझकर कम आंका गया है।'

"उसने अपनी बात जारी रखते हुए कहा: 'कुल मुनाफ़े को आम तौर पर तीन बजट खातों में डाला जाता है: कर्मचारियों का वेतन, बंधा खर्च (इसमें मकान का किराया, रोशनी और कच्चे माल पर खर्च शामिल है) और अन्तिम, मगर कम महत्त्वपूर्ण नहीं, स्वामी के रूप में दर्ज़िनों का व्यक्तिगत अंश। मान लें हम कि ये अनुपात क्रमश: आधा, चौथाई और चौथाई हैं। वेतन के रूप में यदि 100 रूबल गये तो 50 रूबल हुए बंधे खर्च पर और 50 स्वामी की जेब में।

अब तुलना करो हमारी प्रणाली से,' और यह कहकर उसने जो लिखा था, उसे देखने को कहा।

"'कर्मचारी गण प्राप्त करते हैं:

वेतन आय के रूप में	100 रूबल
स्वयं आंशिक स्वामी होने के नाते मुनाफ़े के अंश के रूप में	50 रूबल
रहने और काम करने का स्थान एक होने के कारण किराये में हुई बचत और अतिरिक्त प्रयास के फलस्वरूप कच्चे माल के मितव्यव से प्राप्त हुई बचत के रूप में, लेकिन मैं संतुलित दृष्टिकोण अपनाकर आधे की जगह तिहाई बचत ही मानूंगा, तो 50 रूबल पर यह बचत हुई	16 रूबल 67 कोपेक
	166 रूबल 67 कोपेक

"'इस प्रकार, हमारे कर्मचारी पुराने प्रबंध के अन्तर्गत काम करनेवालों के लिए नियत 100 रूबल की तुलना में 166 रूबल 67 कोपेक प्राप्त करते हैं। इसके अतिरिक्त, वे अपने ही हित के लिए बेहतर काम करते हैं। पुराने उत्पादन को यदि हम 5 यूनिट मानें, हमारे संदर्भ में पोशाक, तो नयी उत्पादन दर (हमेशा की तरह संतुलित अनुमान) 6 होगी, हम मानक उत्पादक के 5 की तुलना में 6 रूबल का मुनाफ़ा कमाते हैं।

उत्पादन में सुधार
के ज़रिये बढ़ी आमदनी
पंचमांश के बराबर अथवा
166 रूबल 67 कोपेक

पर . . . . 33 रूबल 33 कोपेक
इसमें जोड़ दीजिये . . . 166 रूबल 67 कोपेक

---

200 रूबल 00 कोपेक

"'दूसरे रूप में, हमारी युवतियों की आय औसत दर्ज़िन से दुगुनी है और इसे वे कहीं अधिक बुद्धिमानी से ख़र्च भी करती हैं। पहली बात, जैसा कि आप जानती ही हैं, यह है कि सभी ख़रीद थोक में की जाती है, जिससे हमें प्रति रूबल 30 कोपेक की बचत होती है अथवा उधार-खुदरा दर के 3 रूबल के स्थान पर 2 रूबल। वास्तविक मितव्ययिता कहीं अधिक है, किराये को ही ले लें: रिहायश के रूप में 17 दो खिड़कियोंवाले कमरे, जिनमें प्रत्येक में 3 और 4 निवासी अथवा मोटे तौर पर कुल मिलाकर 55 व्यक्ति रहते हैं; दो तीन खिड़कियोंवाले कमरे, प्रत्येक में 6 निवासी, दो और कमरे चार खिड़कियोंवाले, 9 व्यक्तियों के लिए रिहायश का स्थान, मिलाकर हुए 30 और सभी निवासियों की संख्या हुई 85, 3 रूबल 50 कोपेक प्रति माह अथवा 42 रूबल प्रति वर्ष किराये के रूप में दें तो उनके निवास-स्थान का किराया प्रति वर्ष 3570 रूबल (42 गुणा 85) होगा, जबकि हमारे पूरे भवन के 1250 रुबल प्रति वर्ष किराये के कारण वे तिहाई अथवा लगभग इतना ही अदा करती। और यही बात भोजन के सिलसिले में लागू होती है अथवा लगभग इतनी ही। बचत तो आधी है, लेकिन मैं तिहाई ही ठीक मानता हूं। और इतना ही नहीं। हमने माल पर ख़र्च में कटौती का भी ज़िक्र किया है, कुछ चीज़ों पर तो ख़र्च बिल्कुल ही नहीं होता। मेरा ख़्याल है कि मेरी पत्नी ने कपड़ों और जूतों का उदाहरण दिया ही था। इसमें हम एक चौथाई बचत करते हैं अथवा नियमत: चार जोड़ी जूतों के स्थान पर तीन जोड़ी जूते, आम तौर पर 4 पोशाकों के स्थान पर उतना चलनेवाली 3 पोशाकें। ये तो तक़रीबन आंकड़े हैं, लेकिन देखें तो अब और क्या बचत हुई?"

समझदारी पूर्ण ख़रीददारी की आदतों से
एक तिहाई की बचत होती है
अथवा 2 चीज़ों की क़ीमत में
3 चीज़ें, और वही 3 काम करें 4 का;
इस प्रकार हमारी युवतियों के
200 रूबलों की क्रयशक्ति हो जाती है
300 रूबलों की, इसमें जोड़ दीजिये
सेवा-भार, इस प्रकार हो गये कुल . . 400 रूबल।

"'अब तुलना कीजिये 1000 रूबल प्रति वर्ष जीवन-यापन की और इस प्रकार से हो जानेवाले 4000 रूबलों से जीवन-यापन की। आप निश्चय ही सहमत होंगी इस बात से कि यह भेद अत्यधिक है। हमारे प्रबन्ध से यदि अधिक नहीं तो इतना लाभ तो उपलब्ध होता ही है। दो गुना आय और दो गुना अधिक उससे लाभ। तो फिर इसमें आश्चर्य कौन-सा कि आपने हमारे यहां की युवतियों को औसत दर्जिनों की तुलना में कहीं अधिक ख़ुशहाल पाया?'

"तो पोलीना, यही है वह अजब बात और कितनी सहज-साधारण। सच तो यह कि मैं इस विचार के बारे में हर दम सोचती रहती हूं। अब तो मुझे यही अजीब लगता है कि मैंने कभी इसे अजीब माना-सोचा था। मैं इससे अलग कुछ और आशा भी कैसे कर सकती थी? मुझे ज़रूर लिखना कि क्या तुम मेरे साथ ऐसे ही वस्त्र-सिलाई के या किसी दूसरे कारोबार को शुरू करने के काम में शामिल होने की इच्छा रखती हो या नहीं, जो इसी सिद्धान्त पर आधारित हो। कितना रोमांचक है यह!

"तुम्हारी क० पोलोज़ोवा।"

"पुनश्च। और हां, मैं पुरानी कार्यशाला को तो भूल ही गयी बिल्कुल। फिर कभी लिखूंगी उसके बारे में। इस समय इतना ही कहना पर्याप्त होगा कि हर दृष्टि से वह इससे कई गुना बेहतर चल रही है। दोनों में ब्योरों की जो विपुल भिन्नता है वही उनकी भिन्न परिस्थितियों को प्रतिबिम्बित करती है।"

पांचवां अध्याय

नये चेहरे और यवनिका

1

कतेरीना ने वेरा के पति के उस पर महान ऋण का उल्लेख किया ही है। इसके स्पष्टीकरण में यह उल्लेख परमावश्यक है, कि कतेरीना के पिता कौन थे।

शाही घुड़सवार सेना के अवकाश प्राप्त कप्तान अथवा लेफ़्टिनेंट थे वह, पोलोज़ोव ने अपनी सैनिक सेवा के दौरान, जैसा कि पहले ज़माने में होता भी था, विरासत में मिली प्रचुर धनराशि को उड़ा दिया था। जब धन समाप्त हो गया तो उनके होश ठिकाने आ गये, उन्होंने त्याग-पत्र दे दिया और अपने नुक्सान की बेहतर पूर्ति का बीड़ा उठाया। बचे-खुचे धन को जोड़-जाड़कर उनके पास अब बस दस हज़ार की दौलत बची थी... दुर्भाग्यवश, यह भी कागज़ी मुद्रा में थी, जिसे उन्होंने तत्काल ही गेहूं के व्यापार में लगा दिया और छोटे-मोटे ठेके लेने लगे। अपने सीमित साधनों को फ़ायदे के सौदों में लगाकर निरन्तर धन कमाया और दस वर्षों में अच्छी-खासी पूंजी जमा कर ली। उस समय तक उनकी प्रसिद्धि ठोस और कांइयां व्यापारी के रूप में फैल चुकी थी। पद की शान और स्थानीय लोगों में अपने कुलीन नाम के कारण अपने व्यापार के दोनों प्रान्तों के किसी भी सौदागर की बेटी को अपने लिए चुन सकते थे और उन्होंने चुनाव भी बुद्धिमता के साथ किया, दहेज में पांच लाख की राशि (वह भी कागज के नोटों में) प्राप्त की। उस समय उनकी उम्र चालीस वर्ष थी। उनकी बेटी कतेरीना से हमारी मुलाक़ात और वेरा से उसके घनिष्ठ परिचय होने से बीस साल पहले की बात

है यह। इस प्रकार, इतनी भारी-भरकम रक़म मिल जाने से उनके व्यापार में दिन दूनी रात चौगुनी बढ़ोतरी हुई और वह अपनें विवाह के बाद दस साल में लखपति बन गये। उस समय किये गये मुद्रा-सुधार के अनुसार उनके पास चांदी की इतनी मुद्रा थी। उनकी पत्नी ने अपने ग्रामीण सम्बन्धों व आदतों के कारण उन्हें राजधानी जाकर वहां कहीं बसने नहीं दिया, लेकिन पत्नी की मौत पर उन्होंने बेहतरी के लिए लम्बी छलांग भरी और एक और दशक में वे चालीस या पचास लाख से अधिक के स्वामी बन गये। विधवायें और कुंवारियां दोनों ही व्यर्थ ही बनाव-सिंगार करती थीं उन पर डोरे डालने के लिए क्योंकि उनका इरादा फिर से विवाह करने का क़तई नहीं था। कुछ तो अपनी पत्नी की स्मृति के प्रति वफ़ादारी के कारण, मगर मुख्य रूप से अपनी प्यारी बेटी के लिए उन्होंने उसे विमाता के बोझ से लादने से इन्कार कर दिया।

व्यापार बेहतर होता रहा और फलता-फूलता रहा। तीस या चालीस लाख अवश्य ही करोड़ हो गये होते, लेकिन उन्हें आढ़तदारी पसन्द नहीं थी, उसे वे ठेकेदारी से बहुत घटिया मानते थे। यद्यपि उनके लखपति साथी इस तरह का मीन-मेख निकालने की बड़ी खिल्ली उड़ाते थे—और यह निराधार नहीं था—तो भी वे यही इसरार करते थे कि "मेरा पेशा चोरी नहीं बल्कि व्यापार है, भले ही चोरी चाहे जितनी लाभकर क्यों न हो"। फिर, कतेरीना के वेरा से मिलने के साल भर या इतने ही समय से पहले, उन्होंने अपने इस सूक्ष्म भेद को पूर्ण रूप से अशुद्ध पाया, भले ही उनकी विचार-शैली में ऐसा न हुआ हो, किन्तु व्यवहार में तो अवश्य हो गया। इस सबकी शुरूआत एक बहुत बड़े ठेके से हुई—मुझे ठीक से याद नहीं आ रहा है कि यह ठेका किरमिच की सप्लाई का था या राशन या जूतों का। बहरहाल, अपरिवर्ती सफलता के वर्षों और बढ़ते सम्मान ने पोलोज़ोव को ज़िद्दी और अहंकारी बना दिया। वह किसी ऐसे व्यक्ति से झगड़ पड़े जिससे ऐसा नहीं करना चाहिये था, भयंकर गुस्से में उबल पड़े, गालियों की बौछार कर दी और खुद घनघोर मुसीबत में फंस गए। सप्ताह के बाद उनके सामने समझौता कर लेने का प्रस्ताव रखा गया जिसे उन्होंने स्वीकार नहीं किया, दोबारा प्रस्ताव आया फिर एक महीने के बाद, और उन्होंने हर बार

मना कर दिया और इस प्रकार तीनों अवसरों पर बरबादी का ख़तरा मंडराया। किरमिच अथवा जो भी माल सप्लाई किया गया था, उसकी पूरी-पूरी की खेप अस्वीकार कर दी गयी। इससे भी बुरी बात यह हुई कि कई असावधानियां, जो लगभग ठेके की शर्तों का उल्लंघन थीं प्रकाश में आयीं और इस प्रक्रिया में उनकी तीस या चालीस लाख की रक़म डूब गयी। संक्षेप में, साठ वर्ष की आयु में पोलोज़ोव भिखारी बन गये। भिखारी उस सन्दर्भ में, जो कुछ उनके पास पहले था मगर वह और किसी भी प्रकार से नहीं अर्थात् किसी स्टिऐरिन कारख़ाने में उनके कुछ हिस्से के कारण उन्होंने प्रबन्धक का स्थान प्राप्त कर लिया, जिसकी तनख़ा बहुत अच्छी थी। इसके अतिरिक्त, भाग्यवश उन्होंने कुछ हज़ार बचा लिये थे। दस या पन्द्रह वर्ष पहले इसी रक़म से वे फिर धन-लक्ष्मी के स्वामी हो सकते थे। मगर उम्र 60 वर्ष से ऊपर हो चुकी थी, इसलिए पोलोज़ोव इस कार्य को अपनी शक्ति से परे की बात मानते थे। अब इसके सिवा कुछ करने को बचा नहीं था कि वे कारख़ाना बेच दें, जिससे न तो कुछ मिल रहा था और नहीं कोई उम्मीद ही थी। उन्होंने भागीदारों को मना लिया कि कारख़ाना तत्काल बेच दिया जाय। उन्हें यही विश्वास दिलाया कि यही शेयरों में फंसी पूंजी निकालने की एकमात्र संभावना है। उन्होंने अपनी बेटी के लिए पति ढूंढ़ने की बात सोची, लेकिन सर्वोपरि समस्या थी कारख़ाना, उसे बेचना और इससे मिलनेवाली रक़म को पांच प्रतिशतवाले बांडों में लगा देना, उस समय यह अत्यन्त लोकप्रिय था—वह अपने शेष दिन शान्तिपूर्वक बिता रहे थे, पुराने शानदार दिनों की याद ताज़ा करते तथा जीवन में जितने उतार आये उन सबको झेलकर भी उनका उत्साह बिल्कुल मंद नहीं हुआ था।

2

स्नेही पिता के रूप में उन्होंने अपनी बिटिया को घमण्डी और अनुशासन प्रिय गवर्नेसों की लगाम से बचाये रखा। उनके अंग विन्यास व्यायाम, लालित्य व्यायाम और न जाने क्या-क्या हरकतों को

वे "अनाप-शनाप और बकवास" बतलाते थे। कात्या 15 वर्ष की थी, जब उन्होंने यह माना कि अब वह मिसों व मदामों के बिना काम चला सकती थी। इसके अलावा पन्द्रह वर्ष की आयु में वह ख़ुदमुख़्तार और अपनी ज़िम्मेदारी उठाने लायक़ हो गयी। उस समय यह ज़िम्मेदारी पढ़ना और सपने बुनना ही थी। उसकी मित्र-मण्डली छोटी थी, उसकी घनिष्ठ सहेलियों की संख्या अंगुलियों पर गिनी जा सकती थी। उसके प्रेमियों की संख्या नगण्य थी, यही तो शोभा देता है ऐसे व्यक्ति की अकेली बेटी को जो—कहते हुए थरथरा रहा हूं—चालीस लाख की वारिस थी।

मगर कतेरीना पढ़ती रही और सपने देखती रही, उसके प्रेमी निराश होते रहे। उसकी आयु 17 वर्ष थी और वह किसी व्यक्ति को प्रेम नहीं करती थी। तभी वह सहसा मुरझाने लगी, थक-सी गयी और उसने बिस्तर पकड़ लिया, बीमारी का शिकार हो गयी।

3

किरसानोव प्रैक्टिस नहीं करता था, पर वह सलाह देने के कर्तव्य का पालन ज़रूर करता था। इसके लिए उसे पीटर्सबर्ग के विशिष्ट बड़े-बड़े डाक्टरों की ओर से न जाने कितने निमंत्रण मिलते थे, तब उसकी प्रोफ़ेसरी का दूसरा वर्ष चल रहा था और अविवाहित जीवन का अन्तिम। इसके दो कारण थे। पहला तो यह कि क्लोद बर्नार्ड, जिसकी चर्चा बहुत पहले हो चुकी है, वास्तविक व्यक्ति थे और पेरिस में रहते थे। इन बड़े डाक्टरों में से एक ने सचमुच ही हाल की पेरिस यात्रा के समय उनसे मुलाक़ात की थी, जो विशिष्ट उद्देश्य से तो नहीं परन्तु असंदिग्ध रूप से वैज्ञानिक प्रयोजन से की गयी थी। उस डाक्टर ने अपनी सफलताओं, पदों और मरीज़ों का ज़िक्र किया। उस महान व्यक्ति ने इस डाक्टर को आधे घण्टे का समय दिया था और फिर कहा था: "चिकित्सा के क्षेत्र में नवीनतम प्रगति से अवगत होने के लिए आपको पेरिस आने की आवश्यकता नहीं थी, पीटर्सबग में ही यह तो आपको भली-भांति मालूम हो सकती थी।"

इसे उस बड़े डाक्टर ने अपने ही बड़े योगदान का अनुमोदन मान लिया और खुद यह ठान लिया कि जब वह स्वदेश लौटेगा तो बर्नार्ड का नाम प्रतिदिन दस बार यहां-वहां लिया करेगा। और ऐसा करते समय वह पांच बार "मेरे विद्वान मित्र" और "स्वनामधन्य साथी" जैसे विशेषणों का उपयोग करता। मैं आप से पूछता हूं इस प्रकार की वापसी के बाद कौन किरसानोव को मशविरे का निमंत्रण न देने का साहस कैसे करता? दूसरी, और पहली से भी अधिक महत्त्वपूर्ण बात यह थी कि सभी बड़ों-बड़ों की मण्डली को अपनी क़ीमती प्रैक्टिस के सिलसिले में किरसानोव से कोई खतरा नहीं था। निस्सन्देह, वह किसी दूसरे डॉक्टर के रोगी को कभी नहीं फुसलायेगा, भले ही उस पर कितना ही दबाव क्यों न डाला जाय। हम यह तो जानते ही हैं कि किसी लाइलाज रोगी को बड़े कहलानेवाले डाक्टरों को अपने किसी डाक्टर के पल्ले भेड़ देने की आदत होती है (उनकी राय के मुताबिक़ लाइलाज और भाग्य की विडम्बना के कारण वह किसी दूरस्थ स्वास्थ्य केन्द्र या विदेश जाने में असमर्थ हो) और कई बार तो वे इसके लिए कुछ रक़म भी अदा कर देते हैं। इस प्रकार के अनुरोधों को किरसानोव बहुधा ठुकरा देता था, इसके स्थान पर वह अपने किसी पेशेवर मित्र की सिफ़ारिश करता। बस वह किसी विरल मामले को इसलिए हाथ में लेता कि वैज्ञानिक दृष्टि से उसे उसमें रुचि होती। मैं फिर कहना चाहता हूं कि जिस व्यक्ति को विश्व-प्रसिद्ध क्लोद बर्नार्ड जानते हों और जो किसी दूसरे रोगी को हड़पने की कोशिश न करता हो, उसे कौन सलाह-मशविरे के लिए निमंत्रित नहीं करता?

एक बड़ा डाक्टर लखपति पोलोज़ोव का पारिवारिक डाक्टर था। इसलिए जब उनकी बेटी गंभीर रूप से बीमार पड़ी, तो उन्होंने सलाह-मशविरे के लिए सबसे मशहूर डाक्टरों को बुलाया। अन्ततः रोगी की हालत इतनी बिगड़ गयी कि किरसानोव को बुलाने का फ़ैसला किया गया। समस्या निश्चय ही अत्यन्त दुष्कर थी। रोगिनी के रोग के बारे में कुछ भी पता नहीं पड़ रहा था और उसकी हालत दिनोंदिन बिगड़ती जा रही थी। तो कम से कम रोग की प्रकृति को निश्चित करना चाहिये था। जो डाक्टर उसका इलाज कर रहा था, उसने रोग का नाम बताया तंत्रिका शोथ। मुझे नहीं मालूम कि इस

प्रकार का कोई रोग होता है या नहीं, किन्तु यदि ऐसा कोई रोग होता है, तो मैं भी समझ सकता हूं कि यह असाध्य ही होगा। और असाध्य को लाचारी में साध्य बनाने के लिए किरसानोव या उसके धृष्ट साथियों से अधिक उपयुक्त और कौन हो सकता है?

किरसानोव से मशविरा लिया गया। रोगी की जांच हुई और उससे सवालात पूछे गये जिनके जवाब उसने तत्परता से और शांतिपूर्वक दिये। आरंभ से ही किरसानोव ने इसमें कोई भाग नहीं लिया। उसने उस बेचारी युवती से बड़े डाक्टरों को तरह-तरह के अच्छे-बुरे सवाल पूछने दिये जब वे थक गये और शिष्टाचार की पूर्ति हो गयी, उन्होंने किरसानोव से पूछा कि "आप का क्या ख्याल है?" इस पर उसने उत्तर दिया: "मैं और पड़ताल करना चाहूंगा। रोगी का मामला दिलचस्प है। अगर इस पर भी दूसरे परामर्श की जरूरत महसूस हुई तो मैं सूचित कर दूंगा कार्ल फ़ेदोरिच को।" — "उसका तात्पर्य उस डाक्टर से था जो इलाज कर रहा था वे इस 'तंत्रिका शोथ' से मुक्ति प्राप्त करके बहुत खुश ही हुए।

जब दूसरे डाक्टर चले गये, तो किरसानोव रोगी के पलंग पर बैठ गया। कतेरिना ने उपहासपूर्ण मुस्कान बिखेरी।

किरसानोव ने कहना शुरू किया: "खेद का विषय है कि हम एक दूसरे से परिचित नहीं हैं। डाक्टर को अपने रोगी का विश्वास हासिल होना चाहिये। हो सकता है कि मैं आपका विश्वास जीत भी लूं। आपकी बीमारी ने दूसरों को चकरा दिया है क्योंकि उसे समझने के लिए चतुरता चाहिये। आपके सीने की धड़कन सुनने या उसे ठुक-ठुक करके देखने और नाना प्रकार के मिक्सचर देने का कोई फ़ायदा नहीं। हमें मुख्य रूप से यह पता लगाना है कि समस्या है क्या और फिर मिल-जुलकर उसे हल करने में अपना दिमाग़ लगाना चाहिये। आप मेरी मदद करेंगी?"

वह इस पर कुछ न बोली।

"आप शायद मुझसे बात ही नहीं करना चाहतीं?"

इसका उत्तर देना भी उस युवती ने मुनासिब नहीं समझा।

"मैं समझता हूं कि आप यही चाहती हैं कि मैं चला जाऊं। बस आप मुझे सिर्फ़ दस मिनट का समय दें। उसके बाद भी अगर आप मेरी मौजूदगी को बेकार-बेसूद समझें तो मैं दफ़ा हो जाऊंगा।

आप जानती हैं कि आपको व्यथा के सिवा और कोई भी बीमारी नहीं है? ऐसी मानसिक स्थिति यदि दो या तीन हफ़्ते अथवा इससे भी कम समय तक बनी रही तो फिर आप लाइलाज हो जायेंगी? पखवाड़े के ही भीतर-भीतर बेजान? क्षय रोग अभी प्रविष्ट नहीं हो पाया है, लेकिन तेज़ी से आप की तरफ़ बढ़ रहा है। आपकी उम्र की और आप जैसी मानसिक स्थितिवाली युवतियां कुछ ही दिनों में इसका शिकार हो सकती हैं।"

युवती ने कोई उत्तर नहीं दिया।

"आप कुछ नहीं बोलीं, उदासीन रहीं। लगता है, मैंने ऐसी कोई नयी बात आपको नहीं बतायी, जो आपको पहले से ही पता न हो। आपकी ख़ामोशी ही स्वीकारोक्ति है। क्या आपको यह पता है कि मेरी स्थिति में कोई भी दूसरा व्यक्ति क्या करेगा? वह आपके पिता जी से बात करेगा! मैं आपको बचा सकता था इस तरह, लेकिन आपकी इच्छा के प्रतिकूल ऐसा नहीं करूंगा मैं। मेरा नियम है कि मैं किसी व्यक्ति पर अपनी सहायता थोपूं नहीं, क्योंकि मैं स्वाधीनता को सर्वोपरि, जीवन से भी अधिक प्यारी मानता हूं। इसलिए, अगर आप वह बात अपने तक ही सीमित रखना चाहती हैं, जिसके फलस्वरूप आप का रोग इस ख़तरनाक मोड़ तक आ पहुंचा है, तो मुझे उसे टटोलने की ज़रूरत नहीं। अगर आप मरने की इच्छा व्यक्त करें, तो मैं यह तो पूछ सकता हूं कि किन कारणों से आप ऐसा करना चाहती हैं, लेकिन मैं हस्तक्षेप हरगिज़ नहीं करूंगा, भले ही उन कारणों को मैं चाहे जितना ग़लत मानूं और इसमें भी कोई शक नहीं कि यदि आप इसके विपरीत आचरण करें, तो मैं अपनी पूरी मदद करने के लिए वचनबद्ध रहूंगा। आप मांगिये कोई ज़हर मैं आपके लिए उसे हाज़िर कर दूंगा। इसीलिए तो मैं आपसे आपके रोग के कारणों को बताने की याचना कर रहा हूं।"

पर वह बताने के लिए तत्पर ही न थी।

"तो आप कोई जवाब नहीं देंगी? फिर मुझे सवाल करने का कोई हक़ नहीं। बल्कि मैं आपकी आज्ञा चाहता हूं, कुछ ऐसी आत्मस्वीकृति की, जिससे शायद मेरी ओर कुछ अधिक अनुकूल रवैया अपना लें। कह सकता हूं अपनी बात? शुक्रिया। कारण चाहे जो हो,

आप यातना झेल रही हैं, ठीक है न यह? मैं भी। मैं किसी महिला की तन-मन से पूजा करता हूं, लेकिन यह भी चाहता हूं कि वह मेरे मन की भावनायें जान न पाये। तो क्या मुझ पर करुणा करेंगी?"

वह कुछ बोली नहीं, बल्कि कुछ फ़ीकी-सी मुस्करायी।

"आपकी ख़ामोशी के बावजूद मैं समझ गया हूं कि मेरे अन्तिम शब्दों ने औरों के मुक़ाबले आपके दिल के तारों को कहीं अधिक झंकृत किया है। इससे मेरा निष्कर्ष यही है कि हमारी पीड़ा एक ही जैसी है। आप मर जाना चाहती हैं? क्षय धीमा और पीड़ादायक मार्ग है। अगर और किसी में नहीं तो इस सिलसिले में तो आपकी मदद कर ही सकता हूं मैं, आपको तेज़, पीड़ाहीन और भरोसेमंद ज़हर देकर। तो क्या अब आप बता सकती हैं मुझे कि आपकी स्थिति उतनी ही निराशाजनक है, जितना कि आप विश्वास करती हैं?"

आख़िरकार उसने सवाल किया: "आप मुझे धोखा तो नहीं देंगे?"

"मेरी आंखों में झांको तो, स्वयं पता चल जायेगा कि मैं ऐसा नहीं करूंगा।"

वह हिचकिचायी।

"कैसे विश्वास करूं। मैं तो आपको अच्छी तरह जानती भी नहीं।"

"मेरी स्थिति में कोई भी आपको यही विश्वास दिलायेगा कि आप किसी पुनीत ध्येय के लिए यातना झेल रही हैं। लेकिन मैं अभी ऐसा करने से बाज़ रहूंगा। क्या आप के पिता जी को मालूम है? याद रखिये, आपकी आज्ञा के बिना मेरे होंठ सिले रहेंगे।"

"उन्हें नहीं मालूम।"

"वे आपसे प्रेम करते हैं?"

"जी हां।"

"क्या आप कल्पना कर सकती हैं कि अब मैं आपसे क्या कहनेवाला हूं? आपने बताया कि आपके पिता जी आपको चाहते हैं और मैंने सुना है उनके बारे में कि वे विवेकी व्यक्ति हैं। तो फिर आप क्या सोचकर उनसे अपना प्रेम छिपाने की कोशिश कर रही हैं और उनकी अनुमति की ओर से निराश हैं? यदि उस नवयुवक के निर्धन होने का ही प्रश्न होता, तो शायद आप अपने

पिता को बताने में इस प्रकार झिझकती नहीं—अगर मैं आपको ठीक-ठीक समझ पाया हूं तो हरगिज़ नहीं। इसलिए आपको उनकी ख़राब राय का ही डर है, अन्यथा आपकी ख़ामोशी का कोई मतलब ही नहीं। ठीक कह रहा हूं न मैं?"

वह चुप्पी साधे रही।

"मैं समझता हूं, मैं ठीक कह रहा हूं। तो फिर अब क्या स्थिति है? आपके पिता जी व्यावहारिक व्यक्ति हैं, और आपको बिल्कुल अनुभव नहीं है। अगर आप दोनों किसी व्यक्ति के बारे में अलग-अलग राय बनायें, तो ग़लत आप ही निकलेंगी। मेरी बात विवेकपूर्ण भी है। आप मानेंगी कि मैं जो सोचता हूं वही कहता हूं बिना किसी बहाने के अथवा धोखा देने के तनिक-से भी विचार के। चाहे जो भी हो मैं आपका विश्वास अर्जित करके ही रहूंगा। मैं कम से कम निष्कपट रूप से तो सब कुछ कह ही रहा हूं, न?"

वह पहले कुछ हिचकिचायी, फिर जैसे-तैसे बोली: "डाक्टर, आप बड़े विचित्र प्राणी हैं।"

"विचित्र नहीं, केवल स्पष्टवादी। मैं ढोंगी नहीं। मैंने सीधे-सादे कहा जो सोचता हूं, यह सिर्फ़ अटकलबाज़ी है, हो सकता मैं ग़लत निकलूं। तो आप सच बतायेंगी अब मुझे? कौन है वह, जिसे आप प्रेम करती हैं? तब फिर मैं आपके पिता जी की परीक्षा इस बारे में ले सकूंगा—बेशक, आपकी आज्ञा के बिना नहीं!"

"आप क्या कहेंगे पिता जी से?"

"क्या वे भी उस व्यक्ति को अच्छी तरह जानते हैं?"

"घनिष्ठ रूप से।"

"तब तो मुझे उनसे आग्रह करना पड़ेगा कि वे आपकी शादी के लिए अनुमति दे दें, लेकिन यह अनुरोध अवश्य करूंगा कि अगले दो या तीन महीने के लिए उसे मुलतवी कर दें ताकि आप निरुद्वेग मन से इस पर विचार कर सकें कि कहीं आपके पिता की ही बात ठीक हो।"

"वह कभी राज़ी नहीं होंगे, इसके लिए।"

"मगर मैं सोचता हूं, हो जायेंगे। नहीं हुए तो मैंने जिस मदद का वादा किया है, वह आपको दूंगा।"

किरसानोव कुछ समय तक इसी तरह बातें करता रहा और फिर

अन्ततः उसे नवयुवक का नाम पता चल गया और साथ ही अपने रोगी की अनुमति भी मिल गयी कि वह उसके पिता जी से बात कर ले। पिता जी ही तो अधिक परेशानी का कारण बने हुए थे। उन्हें यह जानकर घोर आश्चर्य हुआ कि उनकी बेटी को केवल प्रेम का असाध्य रोग लगा है और बेटी की पसन्द जानकर तो वे हतप्रभ रह गये। उन्होंने दृढ़ता से यही कहा: "इससे तो मैं बेटी का मर जाना बेहतर समझूंगा। वह हम दोनों के लिए ही कम दुख की बात सिद्ध होगा।" वृद्ध की पूरी बात सुनकर किरसानोव को मजबूर होकर उनसे सहमत होना पड़ा। इससे वह विकट समस्या और भी अधिक विकट हो गयी।

4

प्रचुर धन-सम्पदा की वारिस युवती अपने प्रेमियों की गणना सैकड़ों में कर सकती है। पोलोज़ोव के डिनरों और पार्टियों में जमघट लगानेवाले उन अत्यन्त सन्देहात्मक, सन्देहास्पद रूप से सुरुचिसम्पन्न कोटी का उदाहरण थे, जो सभी उन नव-धनाढ्यों के हॉलों में उमड़ आते थे, जिन्हें अभी तक अभिजात वर्ग के अपने सम्बन्धियों ने वास्तव में अपनी कोटि में स्वीकार नहीं किया था। दुख का विषय है कि पोलोज़ोव और उनके जैसे धनाढ्य बदमाशों और आन्तरिक व बाह्य दोनों ही प्रकार के संस्कारों में विहीन आडम्बरी छैलों के शिकार बन जाते हैं। स्वभाविक ही था, कि कतेरीना को यह जानकर अचंभा हुआ कि इनके बीच उसे सच्चे परिष्कृत संस्कारवाला कोई सच्चा प्रेमी मिल गया: उसका व्यवहार, विनोदी स्वर और बोल-चाल की आकर्षक शैली में वह हरेक से बढ़कर था। उसके पिता ने शीघ्र ही उसकी पसन्दगी को ताड़ लिया था और कठोर तथा दृढ़ स्वभाव का व्यक्ति होने के नाते, उन्होंने बात को दो-टूक रूप में अपनी बेटी के सामने रख दिया: "कतेरीना, प्यारी, सोलोवत्सोव जो तुम्हारे पीछे लग गया है, उससे सावधान रहना: वह पाजी है और बिल्कुल ही हृदयहीन। वह तुम्हें इतना दुखी कर देगा कि मैं तो यही बेहतर समझूंगा कि उसकी पत्नी होने की जगह तुम मौत की गोद में सो

जाओ, हम दोनों के लिए यही अच्छा होगा।" कतेरीना स्नेह भरी बेटी थी, इसलिए पिता की राय का सम्मान करना उसका धर्म था: पोलोज़ोव ने कभी कोई रोक-टोक नहीं की थी, बल्कि हमेशा ही बेटी के प्यार का राग ही अलापा था। फिर कतेरीना के रक्त में ही यह था कि वह अपनी रमणीय आकांक्षा के मुक़ाबले दूसरों के बारे में अधिक सोचे, अपने घनिष्ठतम और प्रियतम से यही कहे कि "आपकी इच्छा ही मेरे लिए आदेश है।" और इसीलिए उसके पिता को उससे यही सुनने को मिला: "मैं सोलोवत्सोव को चाहती हूं, लेकिन अगर आप चाहते हैं कि मैं उसको त्याग दूं, तो ऐसा ही करूंगी।" सच बात तो यह है कि अगर वह उस व्यक्ति को प्रेम करती होती तो उसने न तो ऐसा किया होता और न ही कोई झूठा वादा किया होता। मगर उस समय भावना कमज़ोर थी, बिल्कुल ही नहीं के बराबर थी, जितनी रुचि औरों में हो सकती थी, उतनी ही, इससे अधिक कुछ नहीं। उसने आज्ञाकारी बेटी की तरह बेरूखी दिखानी शुरू कर दी और सब कुछ ठीक-ठाक हो गया होता बशर्ते कि उसके पिता जी ने ज़्यादती न कर दी होती, बहुत अधिक तो नहीं फिर भी इतनी तो ज़रूर ही जो तेज़ नज़र सोलोवत्सोव की निगाह के लिए पर्याप्त थी। वह तो शहीद की तरह अभिनय करता फिर ही रहा था और किसी बहाने की ही तलाश में था। तभी एक दिन पोलोज़ोव ने कोई कटूक्ति कर दी और वह युवक वहां से दुख के साथ, किन्तु गंभीरतापूर्वक चला गया और फिर कभी उनके यहां न आया था। एक सप्ताह बाद कतेरीना को एक भावपूर्ण किन्तु अत्यन्त विनम्र शब्दावली में लिखा गया पत्र मिला, जिसका सार यह था कि उसने कभी यह आशा ही नहीं की थी कि वह पत्र-लेखक की भावना का अनुकूल प्रत्युत्तर देगी किन्तु हल्की-सी झलक कभी-कभी मूक, संवादहीन झलक भी उसे उच्चतम सुख प्रदान करती थी, जिसका वह इस समय अपनी तमाम दीनता के बावजूद बख़ुशी उत्सर्ग कर चुका है, और वह कोई भी विशेष अनुकम्पा नहीं चाहता। इसके बाद कई अन्य पत्र भी इसी शैली और भावना में लिखे और अन्तत: उसे विजय मिली।

भले ही बहुत देर के बाद ऐसा हुआ। शुरू में कतेरीना इस बिछोह से न दुखी हुई थी और न ही विषादग्रस्त। उसके प्रति वही

रूखा व्यवहार रहा और अन्त तक अपने पिता की सलाह पर संयमित रूप से अमल करती रही। जब दो या तीन महीने बाद जब वह उदास रहने लगी, तो पोलोज़ोव उस पाजी को क्यों याद करता, जिसे न जाने कब भुला दिया गया था? "कुछ उदास लग रही हो, कतेरीना?"—"नहीं तो, पापा, मैं बिल्कुल ठीक हूं।" दो सप्ताह बाद सवाल का रूप बदला, कुछ यों: "तुम बीमार तो नहीं हो?" और जवाब वही पुराना रहा: "नहीं, पापा, मैं बिल्कुल ठीक हूं।" एक और पखवाड़ा बीत गया, पिता जी ने तय किया: "अच्छा हो कि हम किसी डाक्टर को बुला लें।" और तभी डाक्टर बुलाये गए। बुजुर्गवार को बड़ी तसल्ली हुई जब उन्हें पता चला कि थकान से अधिक और कोई गंभीर बीमारी नहीं है और गत शीत ऋतु में उत्पन्न तनाव को इस थकान का कारण समझा गया, जब पार्टियां रात के दो, तीन और कभी-कभी सुबह के पांच बजे तक चलती रहती थीं। जैसा कि सब को पता है, थकान ख़त्म हो ही जाती है। लेकिन कतेरीना के मामले में ऐसा बिल्कुल नहीं हुआ।

उसने अपने पिता को अपने मन की बात सच-सच क्यों नहीं बता दी? क्योंकि उसे यक़ीन था कि इससे कुछ भला होनेवाला नहीं। वह इतनी कठोरता से अपनी बात कह चुके थे उस दिन और वे ऐसे आदमी नहीं थे, जो व्यर्थ में ही शब्दों का अपव्यय करते हों। हरगिज़ नहीं, वे ऐसे व्यक्ति को अपनी बेटी का हाथ सौंपने को कभी राज़ी नहीं होंगे, जिसे वह क्षुद्र समझते हों।

और इस प्रकार कतेरीना अपने प्रेमी के संयत और निराशाजनक पत्रों को पढ़कर उसांसें भरती रही। इस हालत में छह महीने के बाद उसकी स्थिति क्षय रोग के चंगुल में फंसने के अनक़रीब पहुंच गयी, उसके पिता को अपनी ज़िम्मेदारी का ज़रा-सा भी अहसास नहीं हो पाया इस सिलसिले में। वह अपने पिता से सदैव की नाईं मृदु व्यवहार करती रही। "कुछ तकलीफ़ है, प्यारी बिटिया?"—"नहीं तो, पापा।"—"कोई परेशानी की बात तो नहीं तुम्हारे मन में?"—"नहीं तो, पापा।" निस्सन्देह, कुछ नहीं। बस जैसा डाक्टर ने कहा था, यह बीमारी ही निढाल करती जा रही थी। लेकिन यह बीमारी हुई कैसे? क्या उस निगोड़े नाचरंग और बेहूदा अंगवस्त्रों की बदौलत, डाक्टर के इसी उत्तर से तब तक सन्तुष्ट रहे, जब तक कि

खतरा उनके सर पर न मंडराने लगा और तंत्रिका शोथ का तत्काल आविष्कार कर लिया गया।

5

नामी डाक्टरों ने तो रोग की पुष्टि कर दी थी और रोग का कारण बताया विषादग्रस्त स्वभाव पर थोप दिये गये सामाजिक कार्यक्रमों का दौर-दौरा, लेकिन किरसानोव ने तो एक ही नज़र में मर्म पर हाथ रख दिया। पारिवारिक डाक्टर ने सलाह-मशविरे के पहले किरसानोव को रोगी की स्थिति का विवरण दिया: परिवार में कोई तकरार नहीं हुई, बाप और बेटी के सम्बन्ध अत्यन्त मधुर हैं। कैसी विचित्र बात थी कि बुज़ुर्गवार यह नहीं समझ पाये कि तबीअत की गड़बड़ी किस वजह से हुई। डाक्टर की अज्ञानता भी देखने लायक़ ही थी इस सिलसिले में। बड़ी हिकमतवाली होगी यह युवती कि वह इतने समय तक शिकायत और उसका कारण, दोनों ही छिपाये रही, डाक्टरों के "परामर्श" को इतनी स्थिर चित्तता से झेलती रही, ज़रा-सी भी अधीरता प्रकट नहीं की, और अपने भाग्य में जो लिखा है, उसे सहती रही, बेशक, वह ऐसी युवती है जिसका इलाज तो करना ही होगा—कुछ मदद कर सकता है क्या वह? बेशक, कुछ देर-सबेर हल तो निकल ही सकता है, भले ही देर से, मगर इतनी भी देर न हो जाय कि तीर कमान से छूट चुका हो। क्योंकि क्षय का रोग अगर एक बार लग गया, जैसा कि किसी भी दिन हो सकता था, तो फिर किसी भी प्रकार की मदद की गुंजाइश ही नहीं रहेगी।

पूरे दो घंटे वह युवती का विश्वास अर्जित करने और उसके पिता से बात करने की इजाज़त हासिल करने में जुटा रहा।

जैसा मैं बता चुका हूं, पोलोज़ोव को यह जानकर बहुत ही आश्चर्य हुआ कि समस्या की जड़ सोलोवत्सोव है। असंभव। कतेरीना, जिसने उनकी चेतावनी मान ली थी और उस पाजी युवक के प्रति

पूर्ण अवहेलना का भाव व्यक्त करना शुरू कर दिया था, उनकी अपनी कतेरीना प्रेम के कारण मर रही थी? सचमुच, कौन करता है ऐसा, कभी भी? घोर व्यावहारिक व्यक्ति थे वह, वह इस प्रकार की उदात्त भावना पर शंका किये बिना कैसे रहते। किरसानोव को बारम्बार यही सुनने को मिला: "अरे यह अस्थायी पसन्दगी है, किसी बच्चे जैसी"। बच्चे जैसी पसन्दगी ख़त्म नहीं होती और यह बच्ची बिल्कुल ही बचकाने से मर भी सकती है, यह बात समझाने में किरसानोव को बहुत कठिनाई हुई। अन्ततः, पोलोज़ोव ने यह बात तो मान ली, लेकिन इससे अधिक कुछ नहीं और फिर मेज़ पर मुक्का मारते हुए चीख़कर बोले: "ठीक है, तो फिर मर जाने दो उसे! हम दोनों के लिए यातना के वर्षों के समय से तो यही अच्छा होगा!"—यही मनोभाव उन्होंने अपनी बेटी से छह महीने पहले प्रकट किया था। कतेरीना ने उनकी हठधर्मिता के बारे में कोई ग़लत राय क़ायम नहीं की थी।

"मेरी बात तो सुनिये, विवेकपूर्ण बात सुनने के लिए भी आप तैयार नहीं? मैं यह मानने को बिल्कुल तैयार हूं कि सोलोवत्सोव का चयन समुचित नहीं, लेकिन वह मौत से तो बदतर नहीं हो सकता?"

"नहीं हो सकता! मगर वह हृदयहीन है, घिनौना लम्पट है और मेरी बेटी नाज़ुक और सौम्य है।" उन्होंने ऐसा कुरूप चित्रण करना आरंभ किया कि कोई भी किरसानोव उससे इन्कार नहीं कर सकता था और निश्चय ही उसे स्वीकार करने पर विवश होना पड़ा। क्योंकि सोलोवत्सोव और कोई नहीं वही व्यक्ति था, जान, जिसे हम स्तोरेश्निकोव, सेर्ज और जूली के साथ भोजन करते हुए मिल चुके हैं उस, ओपेरावाली रात को, स्तोरेश्निकोव द्वारा मंगनी का प्रस्ताव किये जाने से पहलेवाली। सच बात है, किसी भी शालीन युवती के लिए ऐसे राक्षस से विवाह करने के स्थान पर मरना बेहतर है।

किरसानोव अनेक क्षणों तक विचारमग्न रहा।

अन्त में वह बोला: "सचमुच ही श्रीमान, आपकी वाग्विदग्धिता सम्मोहित करनेवाली है। मगर हम यह भूल रहे हैं कि अगर वह

व्यक्ति इतना बुरा है, तो यह बहुत अच्छी बात है। अगर शान्त चित्त होकर, धीरज से विचार करने दिया जाय कुछ समय तो कतेरीना खुद ही अपने आप सब कुछ समझ जायेगी।" और इसके बाद उसने पिता को यह योजना सुझायी कि वे अपनी बेटी को यह कहकर इजाज़त दे दें कि यह उनका अनुमान वही था कि सोलोवत्सोव बुरा आदमी है—अगर उसका प्रेमपात्र अयोग्य सिद्ध हो तो वह स्वयं अपने प्रेमी को त्याग दे। अपने मन में उसे यह विश्वास था कि उपर्युक्त व्यक्ति निश्चयपूर्वक ही अयोग्य सिद्ध होगा, उसने अपने तर्क को और भी अधिक ज़ोरदार ढंग से पेश किया।

"मैं यह तो नहीं कहूंगा कि यदि सुशान्त चित्त से सोचा जाय तो विवाह इतना अधिक महत्त्वपूर्ण नहीं अथवा खुदा न करे दुखी पत्नी अपने पति को ही छोड़ दे। मगर आप इसे बहुत ही वर्जित मानते हैं और आपने अपनी बेटी का पालन-पोषण भी इन्हीं संस्कारों में किया है। इसलिए आप दोनों के लिए यह हानि अशोधनीय होगी। कुछ बेहतर सीख पाने से बहुत पहले ही वह क्षय रोग के फलस्वरूप होनेवाली मृत्यु से कहीं अधिक निर्मम मृत्यु का अनुभव कर चुकी होगी। मगर दूसरे दृष्टिकोण से सोचें तो आप अपनी बेटी के सामान्य विवेक पर भरोसा क्यों नहीं करते? सामान्य विवेक में पूर्ण विश्वास कीजिये, पूरी छूट दीजिये और यह कभी भी आपके साथ छल नहीं करेगा। आपने अपनी बेटी के सामान्य विवेक को जकड़ दिया है, खोल दीजिये इसे, वही आपको उसे (बेटी को) वापस आपके पास लौटा लायेगा, बशर्ते कि सच आपके साथ हो। मनोवेग किसी भी रुकावट के सामने भड़कता है। हटा दीजिये सब रुकावटें और आपकी बेटी फिर विवेकपूर्ण हो जायेगी। और उसे प्यार करने या न करने की, जो भी वह चुने, उसे करने की स्वतंत्रता दीजिये और वह उस व्यक्ति का मूल्यांकन सही-सही ढंग से स्वयं आंकेगी। उन्हें अपने वचन भरने दीजिये और वह शीघ्र ही उसका परित्याग कर देगी।"

यह सब वृद्ध पोलोज़ोव के लिए बहुत ही नयी-सी बात थी। उसने कुछ ऐसा कहकर इस सबका तिरस्कार कर दिया कि वह इस प्रकार की बकवाद बर्दाश्त नहीं कर सकते। उन्होंने अपने बाल धूप में सफ़ेद नहीं किये हैं। किसी व्यक्ति के सामान्य विवेक पर वे अपना दांव नहीं लगा सकते, और फिर 17 वर्ष की युवती पर तो हरगिज़

नहीं। किरसानोव का यह उत्तर भी कुछ प्रभाव न डाल सका कि इस मूर्खता के दो स्रोत हैं, केवल दो स्रोत: क्षण का आवेग और रुकावट से चिढ़। पोलोज़ोव की अटल राय के अनुसार, वही बकवाद। "कतेरीना का दिमाग़ चल गया है, कोई मूर्ख ही उसका विश्वास अपने भाग्य के फ़ैसले के बारे में करेगा। मैं तो यही बेहतर मानूंगा कि वह मर जाय।" वह तीनों ही सुझावों के प्रति अनम्य थे।

चाहे जितना भी कट्टर कोई क्यों न हो, लेकिन भ्रान्ति उच्चतर विकास, शिक्षा, समझ और सतत प्रहार के सम्मुख कैसे टिक सकती है। सही, लेकिन बुद्धि का यह युद्ध कितना लम्बा समय लेगा? ऐसी बात नहीं कि आज के वाग्युद्ध में कोई तेज़ी-तुर्शी न हुई हो, किंतु बाहरी तौर पर चोट का कोई निशान प्रकट नहीं हुआ, बुजुर्गवार को निश्चय ही सोचने का कुछ समय दे दिया गया था। बस, किरसानोव को अपना तर्क जारी रखे रहना था, जीत तो उसकी होनी ही थी। ताहम, उसका प्रतिद्वन्द्वी अनुभवी था और उसे अपने पर नाज़ था, अपने को अजेय समझता था और किसी भी परिस्थिति में कोई दूसरी बात नहीं कही होती—बेशक विवेक की बात उसके मन में बिठायी जा सकती थी, लेकिन काफ़ी लम्बे अर्से तक प्रयत्न करने के बाद ही। लेकिन, समय का महत्व अत्यधिक था, यदि देरी की गयी तो शायद परिणाम धातक हो और विवेकपूर्ण दृष्टिकोण की बढ़ती प्रक्रिया में अपरिहार्य भी।

उसे कठोर उपाय करने होंगे। सच है, कुछ जोखिम उठाना पड़ेगा, लेकिन निश्चित मृत्यु के विकल्प के रूप में जोखिम की क्या बिसात। किरसानोव से कुछ कम दृढ़ संकल्पी व्यक्ति को तो यह अत्यन्त भीषण लगेगी। वास्तव में, नगण्य, लेकिन काफ़ी गंभीर। अलबत्ता, इस लाटरी में केवल एक टिकट खाली था, बस यही था कि अगर भाग्य के किसी संयोग से कहीं वह इसी टिकट को हासिल कर ले तो फिर उसे परिणाम का दृढ़ता से सामना करना होगा। उसने युवती में जितना दृढ़ संकल्प देखा था उससे तो विश्वास ही प्रेरित होता था—क्या उस पर दांव लगाया जा सकता है? निश्चय ही। जो स्थिति थी उसमें प्रतिकूलता 100 की तुलना में 1 ही थी। युवती की तन्दुरुस्ती बिगड़ने के हक़ में थी और अगर अधिक नहीं

तो 50-50, अचानक मृत्यु के पक्ष में। मगर अब 1000 अवसरों में सिर्फ़ 1 उसके ख़िलाफ़ है। उसे अपना सब कुछ दांव इसी लाटरी पर लगाने दो, जितनी जल्दी हो उतना ही अधिक आतंकप्रद, लेकिन सच्ची बात तो यही है कि यही दांव लगाना बेहतर होगा।

उसने कहा: "बहुत बेहतर श्रीमान, यदि आप उसकी रक्षा अपने सम्मुख उपलब्ध साधनों से नहीं करना चाहते, तो फिर मुझे अपने साधन का ही सहारा लेना पड़ेगा। हम कल फिर एक बार सलाह-मशविरा करेंगे।"

वह अपनी रोगी के पास लौटा और उसे बताया कि उसके पिता धारणा के अनुसार कहीं अधिक अड़ियल साबित हुए हैं। अब तो उन्हें मिलकर धमाके के साथ प्रहार करना होगा।

युवती ने उसांस भरते हुए कहा: "व्यर्थ होगा वह।"

"आप को इतना अधिक विश्वास है?"

"जी हां।"

"और मृत्यु?"

"तैयार हूं उसके लिए मैं।"

"और अगर मैं आपको मृत्यु के ख़तरे में डाल दूं तो? मैंने यही तो कहा था कि आपका विश्वास अर्जित करने के लिए आपको यह कहूं कि आपके लिए मैं कुछ भी करने को तैयार हूं। मैं अब उस वादे को पुन: पुष्ट करता हूं। लेकिन अगर मुझे यह वादा पूरा करना ही पड़ जाय तो फिर क्या?"

"मैं तो न जाने कब से अपनी मौत आने का इन्तज़ार कर रही हूं—अब तो यह कुछ ही दिनों की बात है।"

"मान लो कि यह कल सुबह आ जाय तो?"

"जितनी जल्द हो उतना बेहतर।" वह पूर्ण रूप से शान्त थी। सब कुछ असफल हो जाय तो फिर मरने के लिए कृत संकल्प बस यही मुक्ति की गारंटी दे सकती है। "मेरी इच्छा पूरी करो अथवा मैं निश्चय ही मर जाऊंगी" इससे हमेशा ही लगभग मनोवांछित मिल जाता है यद्यपि इस सिद्धान्त को हल्के ढंग से नहीं लिया जाना चाहिये, अपनी इज़्ज़त को नहीं गिरने देना चाहिये, यदि असफलता हाथ आये और मरना पड़े, तो कोई चारा नहीं, मरना चाहिये।

किरसानोव ने जिस योजना पर तामील का चक्र चलाया था, पूर्वोक्त वर्णन से स्पष्ट हो जाना चाहिये।

6

निस्सन्देह, किन्हीं अन्य परिस्थितियों में, इस प्रकार की जोखिम उठाने के बारे में सोचा भी नहीं जा सकता था। युवती, जिसके साथ भी चाहे, उसके साथ उसे भाग जाने में मदद दी जाय, यही रास्ता और सभी तरीक़ों से अधिक सहज-सरल था। इस युवती की धारणाओं में बदचलन व्यक्ति से उसके प्रेम के कारण मसला गड़बड़ा गया था—वह विवाह को अविच्छेद्य मानती थी, इस प्रकार वह अपने उस निखट्टू के पल्ले ही पड़ी रह जाती, ज़िन्दगी चाहे जितनी नारकीय क्यों न लग रही हो। उन शर्तों पर विवाह तो मौत से भी बदतर होता। इस वजह से किरसानोव का विकल्प बस एक ही बच रहा था: युवती को मरने का मौक़ा देना अथवा अन्ततः होश-हवास दुरुस्त कर पाने का।

अगले ही दिन सलाह-मश्विरा हुआ, और उसमें पीटर्सबर्ग के चिकित्सा क्षेत्र की सभी प्रमुख हस्तियां सभी पांचों डाक्टर उपस्थित हुए: पोलोज़ोव तो सिर्फ़ इसी तरह प्रभावित हो सकते थे। किरसानोव बोला, सबने उसकी बात गंभीरता से सुनी और वैसी ही गंभीरता से हां-हूं भी करते रहे, जैसी गंभीरता की अपेक्षा उनसे की जाती थी जबकि विशिष्ट पेरिसवाली (याद है न आपको क्लोद बर्नार्ड की?) शैली में और बिल्कुल ही न समझ में आनेवाली बातें, जो ये सरगोशियों में बात करनेवाले महानुभाव कह सकते हैं, उस शैली में बात की जा रही हो। तो फिर हां-हूं के सिवा और किया भी क्या जा सकता है?

किरसानोव ने बतलाया कि वह रोगी की जांच भली-भांति कर चुका है। उसने डाक्टर कार्ल फ़्योदोरिच से सहमति प्रकट की कि युवती का रोग बिल्कुल असाध्य है। इस प्रकार के मामलों में मृत्यु अथवा एक भी घंटे के लिए ज़िंदगी को जारी रहने देना यातना ही है: इसलिए वह समझता है कि यह उनका मानवीय कर्त्तव्य है कि

अनंत निद्रा को सुनिश्चित कर देने के लिए पर्याप्त मार्फ़िया की खुराक देकर उसकी अनावश्यक यातना को समाप्त कर दिया जाय। और यह कहकर उसने अपने विद्वान सहयोगियों को रोगी का पुनर्निरीक्षण करने की और उसके निदान को पुष्ट करने अथवा उसका खण्डन करने की दावत दी। काफ़ी आंख-पलकें झपकाकर फिर निरीक्षण किया गया। इस दौरान वह लगातार कुछ न कुछ टीका-टिप्पणी करता ही रहा। फिर युवती के कमरे से पर्याप्त दूरी पर स्थित कमरे में जमा होकर उन्होंने यह तय किया कि... मार्फ़िया से उसकी यातना का अंत कर दिया जाय।

उनके इस निर्णय पर किरसानोव ने नौकर बुलाने के लिए घंटी बजायी और उसे अपने मालिक को बुला लेने का आदेश दिया। पोलोज़ोव तशरीफ़ ले आये, और वहां एकत्र चिकित्सकों में से सर्वाधिक सम्मानित से, गुरु-गंभीर वाणी में और अत्यन्त शालीन उच्चारण में उन सबकी राय सुनी।

उन पर मानो वज्रपात हो गया। निकट किन्तु कल्पनातीत भविष्य में संभावित मृत्यु और बस आधे घंटे के भीतर उसके हो जाने में कितना विराट अन्तर होता है। किरसानोव ने वृद्ध पर अपनी तेज़ आंख गड़ा दी: इसका परिणाम निश्चित रूप से क्या होना था, यह विश्वास उसे था, दो मिनट तक तो निस्तब्धता रही, घोर मौनता। फिर:

"नहीं! मैं ऐसा इलाज नहीं चाहता! मेरी मूर्खता ही उसे मारे डाल रही है! मैं कुछ भी करने को तैयार हूं, जो भी आप कहें वही करने के लिए! किसी न किसी तरह उसे बचा लीजिये, नहीं?"

"निश्चय ही, क्यों नहीं," किरसानोव बोला।

अगर उन धुरंधर लोगों को समय होता तो वे निश्चय ही कुपित होते, उस पर सोचकर और यह जानकर कि किस प्रकार उन्हें छला गया था, मानो वे किसी के हाथों की कठपुतली बन गये हों। मगर उस बाज़ीगर ने उनको एक दूसरे की नज़रों में नंगे हो जाने की तकलीफ़ से बचा लिया। उसने पीले पड़ गये पोलोज़ोव को नौकर से वहां से ले जाने के लिए कहा और तत्काल अपने शिकारों की ओर मुड़ा, उन्हें धन्यवाद दिया कि उन्होंने उसके इरादों का समर्थन इतनी दृढ़ता के साथ किया, उन्होंने यह समझा कि बीमारी दिल की

है और बूढ़े खूसट को केवल आतंक ही सचमुच की घातक मूर्खता करने से रोक सकता था। विदा होते समय प्रत्येक के मन में अपनी अन्त: दृष्टि और बुद्धिमता की सबके सामने ताईद हो जाने की खुशी चमक रही थी।

उधर, इस अविलम्ब सेवा का सर्जक अपनी रोगी को उसकी विजय की सूचना देने के लिए निकल गया। जैसे ही उसने बताना शुरू किया युवती ने उसका हाथ पकड़ लिया और चूम ही लेती अगर किरसानोव ने तत्काल ही उसे छुड़ा न लिया होता। उसने कहना जारी रखा: "मैं आपके पिता जी को यह बताने के लिए तब तक आने के लिए नहीं कहूंगा, जब तक कि मैं उन्हें पूरी तौर पर हिदायतें न दे दूं।" फिर उसने उन हिदायतों का वर्णन किया और वादा किया कि ये हिदायतें विस्तारपूर्वक दी जायेंगी।

आघात से वृद्ध का अहंकार पर्याप्त घट चुका था। उन्होंने अब किरसानोव का स्वागत उसी प्रकार से किया, जैसे कि मार्या अलेक्सेयेव्ना ने लोपुखोव का किया था जब वह उसे सपने में किसी बड़े व्यापारी के रूप में दिखायी दिया था। कल के पोलोज़ोव ने अपने आप से कहा था, पर्याप्त स्वाभाविक भी था यह: "मैं तुमसे बड़ा हूं और बुद्धिमान भी अधिक हूं, भले ही मानो या न मानो। इसके अलावा मैं क्यों उस मरभुक्खे की बात पर ध्यान दूं, मैं पूरे बीस लाख (चालीस लाख नहीं, जैसी कि अफ़वाह थी) कमा चुका हूं। इतना कमाकर दिखाओ, बस तभी बात होगी।" पर आज वह इस पर आमादा हो चुके थे: "बड़ा तगड़ा आदमी है। उसे पता है कि तिलों में से तेल कैसे निकाला जाय। पता है उसे।" तभी उसे अपने हुस्सार-सेना के दिनों की याद आयी, कुशल अश्वारोही जखारचेंको द्वारा 'वज्राघात' नाम के अश्व को साधने की और उस बेचारे के नथुनों से खून टपकने की याद आयी (जुकोव्स्की की कविताओं को उस समय सैन्य अधिकारी मण्डली में निश्चित लोकप्रियता प्राप्त थी और इसमें महिलाओं का हाथ कुछ कम नहीं था)।

पिता ने पूछा: "क्या सचमुच ही तुमने निदान पर अमल किया होता और घातक खुराक दे देते?" और फिर प्रशान्त उत्तर के रूप में "बेशक" सुनकर वह भयाक्रांत हो गये।

("हे भगवान, कैसा हत्यारा है। उसकी बात सुनकर ऐसे लगता था मानो कोई रसोइया खाने के लिए किसी मुर्गी की गर्दन मरोड़ने की बात कर रहा हो।")

"अगर यह नहीं कर पाता तो मेरा मोल ही क्या रह जाता!"

"तुम निश्चय ही भयंकर आदमी हो!" पोलोज़ोव बार-बार कहता रहा।

प्रतिपक्षी विहंसा: "अगर आप यह कह रहे हैं तो आपने वास्तव में भयंकर देखा है," और मन ही मन सोचा कि रहमेतोव के बारे में वह क्या कहेगा।

"तुमने उन शेखीबाज़ों को बहुत छकाया।"

किरसानोव हल्के से विद्रूप के साथ बोला: "उनको छकाने के लिए कुछ ज्यादा गुर की ज़रूरत तो थी नहीं!"

पोलोज़ोव को एक बार फिर ज़खारचेंको का ध्यान आ गया। उसने स्टॉफ़-कप्तान से विरोध प्रकट करते हुए कहा: "सम्माननीय, आप चाहते हैं कि मैं इस घोड़े को साध दूं? मुझे इस पर सवार होने में शर्म आती है!"

सवालों की पर्याप्त नीरस-सी बौछार को रोकने के बाद किरसानोव ने हिदायतें देना शुरू कर दिया।

"याद रखिये, दबाव में सीधे ढंग से सोचा-विचारा नहीं जा सकता, उत्तेजना के बिना आवेग नहीं होता, यदि कल्पना-लोक में विचरनेवाले को शान्त मूल्यांकन के लिए अकेला छोड़ दिया जाय तो फिर कल्पना का कोई दाम ही नहीं। अगर सोलोवत्सोव उतना बुरा है, जैसा कि आप बता रहे हैं—बहुत विश्वासदायक ढंग से, तो मैं आपको आश्वासन देता हूं कि आपकी बेटी खुद ही यह पहचान लेगी, मगर इससे पहले नहीं कि आप उसके बीच हस्तक्षेप करना बन्द कर दें और उसके मन से यह भाव निकाल दें कि आप सोलोव्तसोव के अथवा सामान्य रूप से उनके मिलन के खिलाफ़ कोई साज़िश कर रहे हैं। एक भी ग़लत बात हुई और योजना पखवाड़े भर के लिए रुक जायेगी। और कई ग़लतियां तो हमेशा-हमेशा के लिए बात बिगाड़ देंगी।" अतिरिक्त सावधानी के लिए इस प्रकार की हिदायतें भी थीं: "ऐसा कोई काम करने की ओर प्रवृत्त करना कठिन है, जिसमें किसी की कोई रुचि न हो। अगर मैं सफल हुआ

हूं, तो आपको मालूम होना चाहिये कि मेरी मंशा क्या है। विश्वास कीजिये, मुझे मालूम है। बस आपको केवल इतना करना है: सुनिये और जानिये।" पोलोज़ोव के साथ उस समय बात करने का एक ही रास्ता था, दो टूक कहना। और निश्चय ही उन्होंने घुटने टेक दिये और क़सम खायी कि वही करेंगे, जो कहा जायेगा। अपने से छोटे व्यक्ति की सत्ता के बारे में आश्वस्त होने के बाद भी वह दिग्भ्रमित थे: किरसानोव किसका पक्षधर था? एक ओर तो वह बेटी के पक्ष में सहायक बनने के लिए उसे विवश कर रहा था और दूसरी ओर बेटी के मन को बदलने के लिए काम भी कर रहा था। मगर दोनों में मेल क्या था?

"बिल्कुल साधारण। मैं तो बस यही चाहता हूं कि आप उसे मौक़ा दें कि वह अपना मन ठीक कर सके।"

पोलोज़ोव ने सोलोवत्सोव को पत्र भेजकर किसी मामले के बारे में आकर मिलने के लिए कहा। सोलोवत्सोव उसी शाम हाज़िर हो गया, बुज़ुर्गवार से हार्दिक किन्तु अति औपचारिक मेल-मिलाप हो गया और कतेरीना से विवाह का वादा भी मिल गया। विवाह की तिथि तीन महीने बाद की रखी गयी।

7

अब मामले से हाथ खींचना संभव नहीं था। इसलिए ही नहीं कि कतेरीना के लिए मोहभंग ज़रूरी हो गया था और इससे भी अधिक ज़रूरी यह था कि उसके पिता के ऊपर कड़ी निगाह रखी जाय, क्योंकि उनकी निगरानी रखने की आवश्यकता थी, जिससे कि वे दख़लंदाज़ी न करें। इसके बावजूद, उसने कुछ दिनों तक अलग रहना ही सर्वश्रेष्ठ समझा, क्योंकि लड़की अभी उत्तेजित ही थी और उसकी ख़ामोश नापसंदगी (क्योंकि निश्चय ही वह नापसंद करता) भी उसकी बीमार मानसिकता को गंभीर ही बनाती। इसकी जगह, वह उसके यहां क़रीब दस दिन बाद पहुंचा; बिलकुल तड़के, जिससे कि उसे नौजवान व्यक्ति का परिचय तो न मिले मगर वह उस लड़की की पूर्व सहमति प्राप्त कर सके। पीली और दुबली-पतली होने

के बावजूद उसका स्वास्थ्य सुधर रहा था—इसके बावजूद कि उसके चारों ओर उस विख्यात चिकित्सक के नुसखे बिखरे पड़े थे, जिसकी देख-रेख में किरसानोव ने उसे छोड़ा था। उसने कहा: "ऐसा लगता है कि अब उसकी कोई भी दवा तुम्हें नुकसान नहीं करेगी।" उसका स्वागत करने में होनेवाली खुशी उस समय आश्चर्य में बदल गयी जबकि उसने अपने आने के उद्देश्य की व्याख्या की।

"आपने तो मेरी ज़िन्दगी बचायी और अब यहां आने के लिए आपको मेरी अनुमति की आवश्यकता है?"

"जिस समय वह यहां था, अगर मैं उस समय आता तो तुम सोचतीं कि मैं दाल-भात में मूसलचंद बन रहा हूं। तुम्हें तो मेरा नियम मालूम ही है: कभी भी किसी के ऊपर अपनी सहायता को थोपो नहीं।"

बाद में जब दो या तीन दिन के बाद शाम को वह उससे मिलने आया, तब उसने उसके मंगेतर को ठीक वैसा ही पाया, जैसा कि पोलोज़ोव ने वर्णन किया था और स्वयं पोलोज़ोव भी बेहद सराहनीय स्थिति में था तथा निर्देशों के अनुसार उसने अपनी लड़की को पूरी स्वतंत्रता दे रखी थी। किरसानोव ने इन लोगों के साथ पूरी सांझ बितायी और इस बीच उसने उस बदमाश के बारे में एक बार भी किसी भी तरह से अपनी राय प्रकट नहीं की, न तो तब और न ही अपने मेज़बान से विदा लेते समय।

लेकिन संदेह पैदा करने के लिए इतना ही काफ़ी था। अगले दिन सारे समय वह यही सोचती रही: "किरसानोव ने यह नहीं बताया कि उसकी क्या धारणा थी; अगर उसकी राय अच्छी रही होती तो उसने ऐसा ज़रूर कहा होता। वह उसे नापसंद नहीं कर सकता; क्या वह ऐसा कर सकता है? उसमें ऐसा क्या है, जिसे नापसंद किया जाय?" और उस दिन शाम को जब उसका मंगेतर आया, तब उसने उसके एक-एक शब्द और तौर-तरीक़े पर ग़ौर किया, यह अच्छी तरह से प्रमाणित करने के लिए उसने अपने आप से कहा कि संभवत: किरसानोव को उसके अंदर एक भी दोष नहीं मिला होगा। वह पूर्णत: निष्ठावान थी। लेकिन आप जिस व्यक्ति को प्यार करते हों, उसके बारे में यह प्रमाणित करना कि वह बेदाग़ है, इसके विपरीत साबित करने से एक क़दम आगे जाता है।

इसके कई दिनों के बाद किरसानोव वापस आया और उसने उसके मंगेतर के बारे में एक भी शब्द नहीं कहा। फिर भी इस बार वह यह प्रश्न पूछे बिना न रही:

"हां तो क्या सोचते हैं आप? आप कुछ कहते क्यों नहीं?"

"मेरे पास यह जानने का कोई भी साधन नहीं है कि मेरा निर्णय तुम्हें कितना पसंद आयेगा या कितना निष्पक्ष प्रतीत होगा।"

"वह आपको पसंद नहीं?" वह ख़ामोश रहा।

"नहीं करते क्या?

"मैंने तो ऐसा नहीं कहा।"

"लेकिन यह साफ़ दिखायी देता है। लेकिन क्यों नहीं?"

"मैं उस समय तक प्रतीक्षा करूंगा, जब तक कि यह बात भी साफ़ न हो जाय कि क्यों।"

कतेरिना ने उस रात सोलोवत्सोव को और भी खोजपूर्ण निगाहों से देखा। "वह हर माने में परिपूर्ण है। सिर्फ़ किरसानोव न्यायपूर्ण व्यवहार नहीं कर रहा है। लेकिन मैं वह बात क्यों नहीं पता लगा सकती हूं, जिसे वह नापसंद करता है? क्या उसके प्रेम में पागल होकर मैं इतनी मंदबुद्धि हो गयी?" सोलोवत्सोव के लिए सर्वाधिक संकटपूर्ण दिशा में उसका आत्म-सम्मान जाग्रत हुआ था।

इसके कुछ दिनों के बाद आने पर किरसानोव ने अपने आपको अपेक्षाकृत अधिक सुदृढ़ स्थिति में पाया। सोलोवत्सोव से वह इस डर के कारण बचा रहा कि कहीं समय से पहले उसकी दख़लंदाज़ी से मेज़बान आशंकित न हो उठे। अब उसने इस सुखी जोड़े के इर्द-गिर्द एकत्र लोगों की बातचीत में हिस्सा लेना शुरू किया और बातचीत का रुख ऐसी दिशा में मोड़ दिया जिससे सोलोवत्सोव चरित्र का अनुमान लगे तथा उसे इस वार्तालाप में उलझा लिया। बातचीत में रुपये-पैसे का मसला आया और इसमें उसकी अत्यधिक रुचि से कतेरीना चकित रह गयी। महिलाओं की चर्चा चलने पर उसने इसमें ढिठाई के साथ भाग लिया और जब विवाहित जीवन की बात चली तो इसके विषय में भावशून्य विचार को वह भुला ही नहीं सकी। उसके जैसे इंसान के साथ पत्नी का जीवन असहनीय होगा।

और इस तरह से धारा का प्रवाह ही बदल गया। उस रात वह घंटों जागती रही। अपने सोलोवत्सोव के गंभीर अपकार पर

आत्मग्लानि में सिसकती रही। "नहीं, वह निपट नारी-विद्वेषी नहीं है, वह मुझे प्यार करता है, मेरी दौलत को नहीं। काश, कि इन शब्दों ने दूसरों की बात का खंडन किया होता; तब तो उसके मानस में टिकते भी। इसकी जगह पर, वे उसकी ऐसी आंतरिक आस्था पर आघात कर रहे थे, जिस तक वह स्वयं ही पहुंची थी। यह एक ऐसी सच्चाई थी जिसका कि खंडन नहीं किया जा सकता था और जिससे अधिक देर तक दूर रह पाना असंभव था। दूसरे दिन शाम को कतेरिना ने ही इस जांच-पड़ताल को आगे बढ़ाया, जिसे किरसानोव ने शुरू किया था। उसने अपने आप से कहा कि ऐसा करने में उसका एकमात्र उद्देश्य यह है कि उसके प्रियतम के साथ जो अन्याय हुआ है, उसका रहस्योद्घाटन हो। फिर भी उसने यह अनुभव किया कि उसके मन में संदेह घर कर गया है। एक और रात भी वह नहीं सो सकी। लेकिन इस बार उसका ग़ुस्सा अपने पर नहीं, वरन् उसके खिलाफ़ था। वह समाधान करने में विफल क्यों रहा, उसने उसकी कचोटनेवाली अस्थिरता को बढ़ा क्यों दिया? और फिर ग़ुस्से में वह अपने ही विरुद्ध हो गयी। एक नयी बात ज़ोर-शोर से साफ़-साफ़ उभरी: "मैं इतनी अंधी कैसे हो गयी थी?"

इसके बाद दूसरे और तीसरे दिन वह इस लोमहर्षक विचार से अभिभूत रही कि जल्दी ही इस ग़लती का—अगर कोई ग़लती हो तो—परिमार्जन का साधन नहीं रह जायेगा, और यह स्थिति समझ में आने लायक़ थी।

अपने अगले आगमन के समय किरसानोव ने समझा कि उससे बात करने के लिए अनुकूल समय है।

उसने कहना शुरू किया: "तुम सोलोवत्सोव के बारे में मेरी राय जानना चाहती थीं न। मगर मुख्य बात तो यह है कि तुम खुद क्या सोचती हो?"

इस बार ख़ामोश रहने की बारी उसकी थी।

"मैं तुम्हारे ऊपर दबाव डालने का साहस नहीं कर सकता हूं," ऐसा कहकर उसने विषय बदल दिया। फिर थोड़ी देर में वह किनारे हो गया।

आधा घंटा बीतने पर वह उसके पास पहुंची: "कृपया सुनिये!

मुझे आपकी सलाह चाहिये—आप तो समझ ही रहे होंगे कि मैं दुविधा में हूं।"

"मुझसे क्यों पूछती हो, तुम्हें तो भली-भांति मालूम ही है कि इस दुविधा से उबरा कैसे जाय?"

"उस समय तक इंतज़ार करें, जब तक यह खुत्म न हो जाय?"

"नौजवान महिला, ऐसा तुम कह रही हो, मैं नहीं।"

"मैं विवाह टाल दूंगी।"

"तुम जैसा ठीक समझो!"

"लेकिन वह क्या सोचेगा इसके बारे में?"

"देख-समझ लेना और फिर उसी के अनुकूल आचरण करना।"

"कितना दुखद होगा, उससे यह कहना-सुनना!"

"तुम ऐसा करने के लिए, हमेशा ही, अपने पिता जी से कह सकती हो।"

"किसी और के कंधे पर रखकर गोली दागूं? मैं स्वयं करूंगी यह काम।"

"ऐसा कर सको, तो यही सबसे ठीक है।"

किसी दूसरे के साथ, सचमुच ही उदाहरण के लिए वेरा के साथ, इस मंथर गति से बिलकुल ही काम नहीं चलता। हर किसी का स्वभाव अपना-अपना होता है: जबकि उत्तेजनाशील व्यक्ति सावधानी से खीझता है, शांत स्वभाव आकस्मिक उतावली से विद्रोह कर उठता है।

प्रेमियों के बीच बातचीत इतनी सफल हुई, जिसकी किरसानोव को स्वप्न में भी आशा नहीं थी। उसने तो यह सोचा था कि उसका विरोधी इतना तो समझदार है ही कि वह मतभेद तथा मामूली टकराव को सहन कर सकता है। लेकिन नहीं, इतनी विशाल संपदा को हाथों से निकलते देखकर सोलोवत्सोव के आत्मसंयम ने उसका साथ छोड़ दिया। वह इतना उद्विग्न हो गया कि उसने बची-खुची संभावना को भी नष्ट कर दिया। शिकायतों की लंबी फ़ेहरिस्त गिनाते हुए उसने पोलोज़ोव पर आरोप लगाया कि वह उसके विरुद्ध षड्यंत्र रच रहा है और उसने कतेरीना को बिलकुल ही दबा करके अपने नियंत्रण में रखा है। चूंकि अब तक उसके पिता को इस निर्णय

के बारे में कोई भी जानकारी नहीं थी, और सचमुच ही उन्होंने उसे अपनी मर्ज़ी से चलने की छूट दे रखी थी, इसलिए यह निन्दा अनुचित थी—दुखद तथा सरासर अन्यायपूर्ण—खास तौर पर यह बात कि सोलोवत्सोव यह समझे कि उसकी कोई अपनी इच्छा और अपना चरित्र नहीं है!

"तो आप यह समझते हैं कि मैं किसी और के इशारे पर नाचने-वाली कठपुतली हूं?"

"बिलकुल," वह पूरी तरह से उत्तेजित था।

"मैं अपने पिता के बारे में कुछ भी सोचे बग़ैर मरने को भी तैयार थी—लेकिन तुम इसे नहीं समझोगे। इसी क्षण वह सब समाप्त हो गया है जो कुछ भी हम दोनों के दरमियान था।" और वह कमरे से बाहर निकल गयी।

8

कतेरीना ने इस घटना के बाद कुछ समय तक तो शोक मनाया। गोकि अंत में इसके कारण वह दुखी नहीं रह गयी थी। एक विशेष प्रकार के स्वभाववाले लोग किसी खास बात के लिए उस समय तक परवाह नहीं करते हैं, जब तक कि इससे उनके सामान्य जीवन पर प्रभाव नहीं पड़ता हो, जो कि उनके विचार में कहीं अधिक महत्त्वपूर्ण है। इनमें जो मेधावी होते हैं, वे इन सर्वव्यापी धारणाओं की पुनर्व्याख्या को उद्यत होते हैं और पुराने ज़माने में दार्शनिक बन जाते थे। कान्ट, फ़िख्ते और हेगल ने प्रत्यक्ष की बिलकुल उपेक्षा की। बेशक, यहां पर हम केवल पुरुष वर्ग की ही बात कर रहे हैं, आम धारणा में महिलाओं को मेधावी नहीं माना जाता। प्रकृति ने उन्हें उसी तरह से वंचित रखा है, जैसे कि उसने लोहार को साफ़ रंग से वंचित रखा है, दर्ज़ी को सीधे और तगड़े कंधों से वंचित रखा है या मोची को सुगंध की कोमल क्षमता नहीं दी है। यह सब प्रकृति का ही खेल है, महिलाओं में प्रतिभा का अभाव है। लेकिन आम लोगों की सामान्य कोटि की ही चर्चा करें तो इसके सरल बुद्धिवाले सदस्य, निष्ठुर सीमा तक, शांतिप्रिय होते हैं, साधारण बुद्धिवाले

एकांत-प्रिय तथा दिवास्वप्नदर्शी होते हैं, इसका यह मतलब नहीं कि वे ऊट-पटांग कल्पनायें करते हैं। क्योंकि इनमें से बहुतेरे व्यावहारिक और रचनात्मक क़िस्म के होते हैं, जिन्हें कि चिन्तन में आनंद आता है।

कतेरीना सिर्फ़ प्रेम पत्रों के कारण प्यार करने लगी थी तथा एक शुद्ध काल्पनिक प्यार के बंधन में क़रीब-क़रीब मर मिटी थी। सिर्फ़ इसी बात से उसके रोमांटिक मस्तिष्क की ओर संकेत मिलता है। उसके पिता के घर का अशिष्ट तड़क-भड़क भरा वातावरण, और चाहे जैसा भी क्यों न रहा हो, इतने उच्चस्तरीय आदर्शवाद के उपयुक्त नहीं था—यही बात उसकी भावना के मूल तत्व की पुष्टि करती है। सचमुच ही, अपने पढ़ने तथा स्वप्न देखने के प्यार और आकर्षण में उसे यह कोलाहल बहुत पहले से ही कष्टप्रद लगने लगा था, लेकिन अब तो इसके स्रोत में निहित सम्पदा भी उसे किरकिराने लगी थी। ऐसी भावना किसी भी मायने में असमान्य नहीं है, वरन् यह तो धनिक और चिन्तनशील तथा आम तौर पर संकोची महिलाओं की विशिष्टता ही है। कतेरीना में यह आदत आम समय से बहुत पहले ही विकसित हो गयी थी—इसका कारण वह निष्ठुर पाठ था जो कि उसे मिल चुका था।

"अब मैं भरोसा करनेवाली कौन होती हूं? अब तो भरोसा करने के लिए धरा ही क्या है?" उसने अपने आपसे सोलोवत्सोव से संबंध समाप्त करने के बाद पूछा। और इसका जवाब था, कोई भी नहीं, कुछ भी नहीं। उसके पिता की दौलत के कारण शहर के सभी लालची, धोखेबाज़ और चालाक लोग आकर्षित हो रहे थे। वह स्वार्थी और चाटुकार लोगों से घिरी रहती, जिनके प्रत्येक शब्द में लाखों की बात होती।

उसके दिमाग़ में गंभीर से गंभीर बातें आतीं। धन-दौलत की बात, जो कि उसे परेशान करती, और ग़रीबी की बात, जिससे दूसरे पीड़ित थे। उसे पर्याप्त प्रचुर मात्रा में जेबख़र्च मिलता था और सभी दानशील महिलाओं की तरह वह भी ग़रीबों के लिए जितना संभव था, उतना करती थी। फिर भी पढ़ने और सोचने से वह इस नतीजे पर पहुंच चुकी थी कि उसकी सहायता से लोगों की उतनी भलाई नहीं होती, जितनी कि होनी चाहिये। अक्सर ही उसे चालाक

36—1127

और अनुपयुक्त ग़रीब धोखा दे देते थे, जबकि उसकी सहायता से लाभ उठानेवाले छह महीने या साल भर से अधिक समय तक मज़े में नहीं रहते। उसे अचरज होता कि ऐसा "क्यों" है, "दौलत केवल भ्रष्ट लोगों के पास ही क्यों रहती है और ग़रीबों से ग़रीबी चिपकी हुई क्यों रहती है? मुझे ग़रीबों में भी उतनी ही बुराई तथा दोष क्यों दिखायी देते हैं, जितने कि अमीरों में?"

इस स्वप्नदर्शी को उतने ही शांत सपने दिखायी देते, जितना शांत उसका स्वभाव था, वे भी उतने ही अभिमानरहित थे जितने कि उसका स्वभाव। जोर्ज सैंड की वह जितनी भी सराहना क्यों न करती हो, वह अपने को लीलिया, इंडियाना या कावालकान्ती के रूप में नहीं देखती थी और न तो कोन्सुएलो। जीन या अधिक आदतन जेनेवियेव के रूप में ही देखती थी, सपने में वह इन्हीं की भूमिकाओं में उलझी रहती। और जेनेवियेव उसकी प्रिय नायिका थी: उसे वह खेतों में चलती, अपने चित्रकार के लिए फूल चुनते या अन्द्रेइ से मिलते देखती। आह! कैसा मधुर मिलन! और फिर प्यार की पहचान! लेकिन यह सब तो केवल स्वप्न थे। उसे यह पता भी था। फिर भी वह इन्हीं में उलझी रहने को पसंद करती थी। वह फ़्लोरेंस नाइटिंगेल होने की कल्पना करती: उस विनम्र और सरल लेकिन प्रतिस्पर्द्धा करने योग्य क़िस्मतवाली प्राणी को अकेले में वह इस तरह संजोती मानो संपूर्ण इंग्लैंड का प्रिय पात्र होना पर्याप्त नहीं था? क्या अभी भी वह युवा थी, धनी या ग़रीब थी, अब वह प्रसन्न थी या उसे भाग्य ठोकरें मार रहा था? कभी किसी को तो इसके अलावा कोई दूसरा विचार भी नहीं आयेगा कि वह इंग्लैंड की इस दया की देवी को आशीर्वाद दे—उस देवी को जिसने स्कुटारी और क्रीमिया के युद्ध में इंग्लैंड के घायलों की सेवा की थी और स्वयं अपने ही कर्मठ हाथों की सेवा से बचाये गये सैकड़ों लोगों के साथ वह इंग्लैंड वापस लौटी थी, जिससे कि वह अब अपने देश में बीमारों की सेवा कर सके।... यही—और इससे अधिक कुछ नहीं—उसके प्रिय स्वप्न थे। क्या इन्हें विचित्र कहा जा सकता था?

जेनेवियेव को इन धोखेबाज़ों और छैलों के कर्कश संग-साथ में, मिस नाइटिंगेल को निराधार विलासी वातावरण में रखकर अपने आपसे ही पूछा जाय, क्या वह ऊब या उदास न हो सकती है? तब

यह बात समझ में आ सकती है कि अपने दिल के डूबने की जगह वह भावनाओं की दुनिया में बहुत ही ऊंचाई तक उठती और अपने पिता की बर्बादी को इसी रूप में देखती। उन्हें इतनी जल्दी और यकायक बूढ़ा और जर्जर होते देखकर कतेरीना को खुशी हरगिज़ न होती, उसे दूसरों के साथ कम बांट पाने का दुख भी होता और शुरू में तो वह उन लोगों की अवहेलना का भी बुरा मानती थी जो कभी बाप-बेटी की चाटुकारिता करते थे, फिर भी उसे इस कुटिल और अशिष्ट वातावरण से छुटकारा पाना अच्छा लगा, क्योंकि इससे वह उस कुटिल भीड़ से बच गयी और उनकी गंदगी तथा जालसाज़ी से छुटकारा मिल गया। अब तो उसे यह भी आशा करनी चाहिये कि अब अपने गुणों की वजह से उसे प्यार मिलेगा, न कि अपने पिता की दौलत के कारण।

9

अंशधारक और प्रबंध निदेशक के रूप में पोलोज़ोव अपने स्टिऐरिन कारखाने को बेचने के लिए उत्सुक था। छह महीने की अत्यधिक खोज के बाद एक ग्राहक मिला, जिसके कार्ड पर उसका नाम लिखा था: चार्ल्स ब्यूमोंट, जिसका उच्चारण अंग्रेज़ी परंपरा से किया जाता था, जो कि लंदन के प्रतिष्ठान हौजसन, लोटर एंड कंपनी के एक प्रतिनिधि के लिए स्वाभाविक ही था। यह कंपनी स्टीयरिक एसिड और चर्बी का कारोबार करती थी। वित्त एवं प्रबंध की दयनीय स्थिति के कारण यह कारखाना अपने साधनों से तो नहीं चल सकता था, लेकिन उम्मीद थी कि इसमें अच्छा मुनाफ़ा हो सकता है—5-6 लाख रूबल का निवेश करके एक लाख का मुनाफ़ा मिल सकता है। बशर्ते कि इसके मालिकान अधिक उत्साही हों। यह एजेंट बहुत ही सजग और निष्ठावान व्यक्ति था तथा अपनी सिफ़ारिश भेजने से पहले उसने कारखाने की सभी गतिविधियों तथा हिसाब-किताब की पूरी सतर्कता से छानबीन की। इसके बाद लंबी लगभग न खत्म होनेवाली समझौता-वार्ता शुरू हुई; रूसी अंशधारकों का स्वभाव ही ऐसा है—उन ग्रीकवासियों के धीरज की परीक्षा की

तरह, जिन्होंने दस वर्ष तक ट्रौय की घेराबंदी को झेला था। इस बीच गरज पड़ने पर लोगों को किस तरह पटाना चाहिये, उसके पुराने जांचे-परखे तौर-तरीक़ों के अनुसार पोलोज़ोव ने इस प्रतिनिधि की ख़ूब-ख़ूब ख़ुशामद की, उसे दावतें दीं। काफ़ी समय तक तो इस प्रतिनिधि ने दूरी बनाये रखी, लेकिन एक दिन अंशधारकों के साथ असाधारण लंबे विचार-विमर्श के बाद थके और भूखे होने के कारण, वहीं पास ही में रहनेवाले पोलोज़ोव के यहां भोजन का निमंत्रण स्वीकार कर लिया।

10

किसी भी दूसरे चार्ल्स, जौन, जेम्स या विलियम की तरह चार्ल्स ब्यूमोंट की प्रवृत्ति किसी से घनिष्ठ संबंध बनाने या घुलने-मिलने की नहीं थी। फिर भी, पूछे जाने पर वह अपनी कहानी संक्षेप में सुनाता। वह कहता कि उसके माता-पिता कनाडा के थे और इस देश के आधे से अधिक लोग फ़्रांसीसी उपनिवेशिकों के वंशज हैं। इसलिए उसका उपनाम फ़्रांसीसी है। इसीलिए ब्रिटिश या अमेरिकी प्रभाव के विपरीत वह सूरत में फ़्रांसीसियों से अधिक मिलता-जुलता है। वह बताता कि उसके दादा क्यूबेक छोड़ करके न्यू यार्क आ गये थे, जो कि धरती के उस भाग में अक्सर घटनेवाली घटना थी। इस आगमन के समय उसके पिता बच्चे थे और वे वहीं बड़े हुए। उनके वयस्क होने पर एक ऐसे धनी व्यक्ति ने उनसे संपर्क किया जो कि कृषिविज्ञान के क्षेत्र में उन्नत विचारोंवाला था और उसके अंदर यकायक ही क्रीमिया के अपने अंगूर के बाग़ को रुई उत्पादन क्षेत्र में बदलने की ललक पैदा हुई थी। इसके लिए उसने उत्तरी अमेरिका में एक प्रतिनिधि भेजा जो कि एक ओवरसियर की तलाश कर सके और उसने ख़ुद ही न्यू यार्क में जेम्स ब्यूमोंट को, जो कनाडा में जन्मे थे, प्राप्त कर लिया। कहने की कोई आवश्यकता नहीं कि उसने रुई के खेतों को कभी नहीं देखा था, जैसे कि आपको या मुझे, प्रिय पाठक, पीटर्सबर्ग या कुर्स्क से आरारात पर्वत कभी नहीं दिखायी देता है, लेकिन उन्नत विचारोंवाले व्यक्तियों

के साथ-साथ यह आम बात है। यह निश्चित है कि अमेरिकी प्रबंधक के रुई के बारे में पूर्ण अज्ञान से कोई नुकसान नहीं हुआ, क्योंकि क्रीमिया के लिए रुई की खेती उतनी ही विरल है, जितना कि पीटर्सबर्ग के लिए अंगूर। जब यह तथ्य प्रकाश में आया जब उसने केवल इतना ही किया कि रुई की खेती की जगह ताम्बोव में शराब के कारखाने में काम करने लगा और ज़िन्दगी के शेष दिन वहीं बिताये। यहीं उसका बेटा चार्ल्स पैदा हुआ तथा यहीं उसने अपनी पत्नी को, इसके कुछ समय बाद, दफ़नाया। 65 वर्ष की उम्र में, अपनी वित्तीय उपलब्धियों के साथ, वह अमेरिका वापस चला गया। उस समय चार्ल्स बीस वर्ष का हो चुका था। अपने पिता की मृत्यु के बाद वह अपनी मूल जन्मभूमि रूस लौटा और अपना बचपन तथा जवानी ताम्बोव में व्यतीत करने के कारण वह अपने को रूसी समझता था। पिता के साथ रहते समय उसने न्यू यार्क की एक व्यापारिक कंपनी में क्लर्क की नौकरी छोड़ी और उसी शहर में लंदन की हौजसन, लोटर एंड कंपनी के दफ़्तर में नौकरी कर ली, जिसके बारे में उसे पता था कि उसका कारोबार पीटर्सबर्ग में भी है। जैसे ही उसे यह अनुभव हुआ कि वह इस कंपनी में पूरी तरह से रम गया है, उसने यह प्रार्थना की कि उसे पीटर्सबर्ग में नियुक्त कर दिया जाय। उसने दावा किया कि उस देश को उतना ही जानता है जितना कि वहां रहनेवाला कोई बाशिंदा। पीटर्सबर्ग में इस प्रकार के प्रतिनिधि की मौजूदगी का लाभ उसके मालिकों के सामने इतना स्पष्ट था कि उन्होंने उसे अपने मुख्यालय में भेज दिया जहां कि उसकी ठोंक-बजाकर परीक्षा हुई तथा पोलोज़ोव के साथ भोजन पर बैठने के छह महीने पूर्व उन्होंने उसे इस उत्तरी राजधानी में 500 पाउंड सालाना के वेतन पर काम करने के लिए भेज दिया। यही कारण है कि वह त्रुटिरहित रूसी और फर्राटेदार अंग्रेज़ी बोलता था, जिसका कि उच्चारण ऐसा ही था जैसा कि वर्षों के अभ्यास और विदेशों में निवास के बाद होता है।

11

ब्यूमोंट उस दिन अकेले ही इस भद्र वृद्ध और उनकी सुंदर सुनहरे बालोंवाली, लेकिन कुछ-कुछ उदास, बेटी के साथ भोजन कर रहा था।

उसके मेज़बान ने कहा: "कभी सोचा भी नहीं होगा किसी ने कि कारख़ाने का पुराना माल कभी भी इतना अधिक महत्त्वपूर्ण हो जायेगा? कितना निष्ठुर है यह धक्का, अपनी इस उम्र में जो मुझे लगा। सौभाग्य से कतेरीना इस नुकसान के प्रति बिलकुल उदासीन है—और यह दौलत हमेशा ही मेरी क्या उसी की ही तो रही थी। पूंजी भी तो उसकी मां की ही थी और मेरे पास तो कोई ख़ास पूंजी थी ही नहीं। अलबत्ता, मैंने उसके हर रूबल से बीस रूबल कमाया है। इस तरह से तुम कह सकते हो कि यह सब कुछ मैंने ही कमाया-बढ़ाया है। मैंने इस सबके लिए कितना लंबा समय लगाया और इस बूढ़े दिमाग़ से कितना कुछ किया है!" और फिर तो वे आत्मप्रशंसा में कहते चले गये: "नौजवान! इसको कमाने में... ख़ून-पसीने के अलावा दिमाग़ लगा, सबसे अधिक दिमाग़।" और अंत में निष्कर्ष के रूप में उन्होंने वही दुहराया जो कि शुरू में कहा था कि उन्होंने इस निष्ठुर धक्के को झेल तो लिया, लेकिन अगर उनकी लड़की ने दिल छोटा किया होता तो वह पागल ही हो गये होते। लेकिन आत्मदया के स्थान पर बेटी ने उन्हें पूरा समर्थन प्रदान किया था।

तेज़ी के साथ धन जमा होने की श्लाघा करना या नुकसान के प्रति दुख प्रकट करना अमेरिकी नैतिकता या स्वयं उसके अपने स्वभाव के लिए अनजान था। इसके अलावा तीस-चालीस लाख की पूंजीवाली प्रतिभा का ढांढ़स बंधाने या उत्साहित करने के लिए ब्यूमोंट किसी भी भांति सक्षम नहीं था; विशेषत: इसलिए भी कि मेज़बान के पास स्पष्ट: काफ़ी पैसे रह गये कि ऐसा कुशल बावर्ची उनके लिए खाना पकाये। लेकिन फिर भी किसी न किसी प्रकार की सहानुभूति प्रकट करना ज़रूरी होने के कारण उसने कहा:

"यह निश्चय ही राहत की बात है कि किसी भी दुर्भाग्य के समय किसी व्यक्ति का परिवार एक होकर खड़ा हो जाय।"

"इसके बारे में तुम कुछ अधिक निश्चिंत प्रतीत नहीं होते, कार्ल याकोवलिच (बुज़ुर्गवार ने 'जेम्स के बेटे चार्ल्स' का रूसीकरण इसी प्रकार किया), या तुम क्या यह सोचते थे कि कात्या इस दौलत के लिए दुख मनायेगी। नहीं, महोदय, ऐसा नहीं; आप इस युवती के प्रति अन्याय कर रहे हैं। पता है, हमारे लिए दुखी होने के और भी कारण हैं, आप समझ ही रहे होंगे, मानव जाति से हमारा विश्वास उठ गया है।" यह बात उस तरह कुछ परिहास के स्वर में कही गयी थी, जिस तरह बुद्धिमान बुज़ुर्ग आज के भोले भाले नौजवानों की चर्चा करते समय कहते हैं।

उनकी बिटिया शर्मायीं। उसके पिता ने जिस तरह से उसकी भावनाओं को प्रकट किया था, उसकी वह किसी भी ढंग से सराहना नहीं कर सकती थी। फिर भी ऐसा कहने में पिता के प्यार के अलावा बुज़ुर्गवार के पास और भी कारण था: जिस मामले पर कहने के लिए कुछ भी न रह जाय, बात का रुख चौपायों—बिल्ली या कुत्ते की मौजूदगी—की तरफ़ चला जाता है या इसके अभाव में बच्चों के बारे में बात होने लगती है, या अंत में मौसम की चर्चा होने लगती है—सबसे अंतिम बचाव के रूप में।

"नहीं पापा, आप मेरे बारे में बढ़ा-चढ़ा करके कह रहे हैं: मैं तो स्वभाव से ही उदास और उचाट रहनेवाली हूं—बस, बात इतनी-सी है।"

"उदास तो वह होता है, जो उदासी उपजाये," ब्यूमोंट ने कहा, "लेकिन मैं उबाऊपन का हरगिज़ समर्थन नहीं कर सकता। हमारे ब्रिटिश भाई में यह चाहे जितना फैला हो, लेकिन उतना नहीं है कि हम अमेरिकी जानें। इसके लिए हमारे पास समय नहीं, हम बहुत व्यस्त हैं। मैं सोचता हूं, अरे (उसने अमरीकी लोगों की चूक फ़ौरन संभाल ली) मुझे मालूम होता है कि आप रूसियों को भी उसी से सबक़ लेना चाहिये—निश्चय ही आप भी बहुत व्यस्त हैं उदासी प्रकट करने के लिए। फिर भी, मुझे लगता है कि आप खिन्न रहते हैं, अंग्रेज़ों से भी अधिक। सारे युरोप और रूस के भी अनुसार अंग्रेज़ दुनिया में सबसे उबाऊ होते हैं। लेकिन मनोरंजन और चतुराई के स्तर पर वे रूसियों से उतना ही ऊंचे हैं जितने कि फ़्रांसीसियों से नीचे। ब्रिटिश मंदता की जो कहानियां आपके यात्रीगण

सुनाते हैं, वह इसी बात का सूचक है कि वे अपने घर की स्थिति के बारे में आंख बंद कर लेते हैं।

"हमें अपनी चिड़चिड़ाहट या उदासी का पूरा अधिकार है," कतेरीना बीच में ही बोल उठी। "रूसी कर ही क्या सकता है? कुछ भी नहीं, केवल मन मारकर बैठा रहे और अपना अंगूठा चूसता रहे। मुझे कोई भी करने लायक़ काम बताओ और फिर मैं शायद उदास रहना बंद कर दूं।"

"आप कुछ करना चाहती हैं? तो इसमें कठिनाई क्या है? आपके चारों ओर जो अज्ञान फैला हुआ है—आपके देश के बारे में या मैं कहूं कि अपने 'स्वदेश' के बारे में मेरे इस तरीक़े से बोलने को आप अवश्य ही क्षमा करेंगी (इस बार उसकी शैली अंग्रेज़ जैसी हो गयी थी), लेकिन मैं यहीं बढ़ा और पैदा हुआ। इसे मेरा अपना ही देश समझिये और इसलिए मैं साफ़-साफ़ सच बात कह सकता हूं। अर्थात् एशियाई अज्ञान और बेबसी। मैं इस देश से इसलिए नफ़रत करता हूं क्योंकि मैं इसे अपने देश की नाईं प्यार करता हूं। आपके विख्यात कवि के शब्दों में। अलबत्ता, यहां करने के लिए बहुत कुछ है।"

"लेकिन कोई भी—और ख़ास तौर पर कोई महिला—अपने बलबूते पर क्या कुछ उपलब्ध करने की आशा कर सकती है?"

पोलोज़ोव ने कहा: "कतेरीना, तुम अपनी बिसात भर तो कुछ करती ही हो। मैं तुम्हें उसका छोटा-सा भेद बताता हूं, कार्ल याकोवलिच! समय बिताने के लिए वह लोगों को पढ़ाती है। हर रोज़ 10 से 1 बजे तक लड़कियां आती हैं और वे कभी-कभी इस समय के बाद तक भी रुकती हैं।" ब्यूमोंट ने कतेरीना को आदर से देखा।

"यही तो अमेरिकी भावना है। वस्तुत: मैं स्वतंत्र उत्तरी राज्यों की बात कर रहा हूं—दक्षिण के लोग तो मैक्सिको के निवासियों से भी बुरे हैं। और घृणास्पद ब्राज़ीलियों की तरह ही बुरे हैं। (ब्यूमोंट हमेशा से ही उग्र दासता-विरोधी था)। फिर आपके पास ऊबने के लिए समय ही कहां बचता है?"

"क्या आप ईमानदारी से इसे कुछ करना समझते हैं, श्री

ब्यूमोंट? मैं तो उसे मनोरंजन ही कहूंगी। हां, मैं ग़लत भी हो सकती हूं! आप मुझे भौतिकवादी कह सकते हैं!"

"किसी अमेरिकी की ओर से यह शायद ही निन्दा हो, मिस साहिबा! सारी दुनिया क़सम खाकर यही कहती है कि हम डालर और केवल डालर कमाने में लगे हुए हैं।"

"सचमुच ही आप मज़ाक़ कर रहे हैं। लेकिन मैं तो अपनी बात गंभीरतापूर्वक कहने से इसलिए डर रही हूं कि कहीं आप यह न सोचें कि यह तो रूढ़िवादिता से बिलकुल मिलती-जुलती है!"

उसने सोचा: "अच्छा तो वह इस पर उतर आयी है। क्या सचमुच? विचित्र से भी विचित्र बात!"

उसने कहा: "मैं तो स्वयं भी रूढ़िवादी हूं, अमरीका के दक्षिणी भाग में उसके सभ्य मालिकों के मुक़ाबले में मैं नीग्रो का समर्थन करता हूं—क्षमा कीजिये, मैं अपनी अमरीकी संकीर्णता के बहकावे में आ गया। पर इस समय तो मेरी दिलचस्पी आपके विचारों में है।"

"अरे, यह तो पूर्णत: सामान्य है, श्रीमान ब्यूमोंट! मैंने उसे स्वयं अपने चारों ओर व्याप्त जीवन से सीखा है! मुझे डर है कि मैं जो काम कर रही हूं, वह एक-पक्षीय है तथा किसी भी तरह से जनता के हितों को आगे बढ़ाने में प्राथमिक नहीं है। मेरा ध्येय है कि उन्हें रोटी दो और वे खुद ही लिखना-पढ़ना सीख लेंगे। जब तक कि हम रोटी से शुरूआत नहीं करते हैं, यह समय की बर्बादी है।"

"तो फिर आप स्वयं ही श्रीगणेश क्यों नहीं करतीं?" ब्यूमोंट इस बात से कुछ उत्तेजित-सा हो गया था। "ऐसा किया जा सकता है। मैंने ऐसा होते देखा है... वहां अमेरिका में।"

"मैंने आप से कहा न कि इसमें मैं अकेली हूं। मुझे यह भी पता नहीं कि ऐसा कैसे होगा और अगर यह मुझे पता भी हो तो भी सफलता की कितनी संभावना है? कोई युवती तो सभी तरफ़ से बंधन में होती है। अपने कमरे के एकान्त में मैं स्वतंत्र हूं, लेकिन मैं वहां क्या कर सकती हूं? अपनी मेज़ पर किताब रखकर लड़कियों को पढ़ा भर ही तो सकती हूं। मैं कहां जा सकती हूं? मैं किससे मिल सकती हूं? अकेले मैं आखिर कर ही क्या सकती हूं?"

उसके पिता ने बीच में कहा: "कोई भी यही सोचेगा कि

मैं तुम्हारे सिर पर कोड़ा लिये खड़ा रहता हूं! लेकिन बिटिया, तुम्हारे इस स्मरणीय सबक़ के संदर्भ में तो कम से मैं निश्चय ही ऐसी ग़लती का दोषी नहीं हूं।"

"आपको तो मालूम ही है कि मैं इसके स्मरण मात्र से शरमा जाती हूं, पापा! तब मैं एक बच्ची भर थी। आप बहुत ही अच्छे हैं और आपने कभी हस्तक्षेप नहीं किया है। ग़लती तो समाज की है। श्रीमान ब्यूमोंट, क्या वह सच है कि अमेरिकी लड़की को कहीं अधिक स्वतंत्रता प्राप्त है?"

"हां! और यह ऐसी बात है जिस पर गर्व किया जा सकता है। ऐसा तो नहीं है कि उसमें किसी सुधार की गुंजाइश नहीं है, लेकिन फिर भी युरोप की तुलना में हम बहुत आगे हैं। हमारी युवतियां, जैसा कि बताया जाता है, हर माने में स्वतंत्र हैं।"

"जैसे ही श्रीमान ब्यूमोंट हमारा कारख़ाना ख़रीद लें, पापा, हमें तुरंत ही अमेरिका चलना चाहिये।" कतेरीना परिहास कर रही थी। "मैं वहां कुछ ज़रूर कर सकूंगी। क्या यह शानदार बात नहीं होगी?"

"यहीं पीटर्सबर्ग में भी तो करने को बहुत कुछ है," ब्यूमोंट ने उत्तर दिया।

"कहां?"

उसने कुछ सेकंड रुककर सोचा। इस यात्रा का आख़िर मतलब ही क्या है और उससे बढ़िया बिचौलिया कौन हो सकती है?"

"नवीनतम आर्थिक सिद्धांतों पर किये जा रहे प्रयोग के बारे में क्या आपने नहीं सुना कुछ? क्या आप इस विज्ञान से परिचित हैं?"

"हां! मैंने कुछ पढ़ा तो ज़रूर है। यह बहुत ही आकर्षक और उपयोगी प्रतीत होता है। क्या मैं इसमें शामिल हो सकती हूं? कहां हो रहा है यह प्रयोग?"

"इस दुकान की स्थापना मदाम किरसानोवा ने की थी।"

"डाक्टर की पत्नी ने?"

"तो आपका परिचय है उनसे? और उन्होंने आपको इसके बारे में कुछ भी नहीं बताया?"

"बहुत पहले की बात है, तब वे अविवाहित थे और मैं घातक

रूप से बीमार थी। वे कई बार आये और उन्होंने, अंत में, मुझे बचा लिया। कितने विलक्षण व्यक्ति हैं वे। क्या उनकी पत्नी भी कुछ उन्हीं जैसी हैं?"

"इन दोनों के बीच परिचय कराना शेष था—लेकिन कैसे? क्या ब्यूमोंट की सिफ़ारिश पर? किरसानोव-दम्पत्ति उसका नाम नहीं जानते तो फिर सिफ़ारिश कैसे! कोई बात नहीं, निश्चय ही, उसकी जैसी सहानुभूति, बिना उसके व्यक्तिगत हस्तक्षेप के, शीघ्र ही प्रसन्नतापूर्वक स्वीकार कर ली जायेगी। वे अस्पताल या अकादमी के ज़रिये पते की पुष्टि कर सकते हैं।

12

और इस तरह से ही कतेरीना वेरा पावलोव्ना को जान पायी, क्योंकि वह अगले दिन ही उससे तत्परतापूर्वक मिली। इस मामले में ब्यूमोंट की दिलचस्पी इतनी अधिक थी कि वह उसी दिन शाम को यह जानने के लिए आया कि उसने क्या धारणा बनायी है।

कतेरीना काफ़ी हद तक उत्साहित थी, उसकी निराशा का नामोनिशान तक नहीं रह गया था और उसकी स्वप्निल कल्पना विशुद्ध हर्षोन्माद में बदल चुकी थी। उसने सबेरे की गतिविधियों के बारे में ब्यूमोंट को अत्यंत रुचि से उत्साहपूर्वक बताया। अपने पिता को भी वह यह सब कुछ एक बार पूरे का पूरा बता चुकी थी—या एक बार पर्याप्त नहीं था बताना, वह तब से ही इन्हीं सबको निरंतर दुहरा रही थी। बिलकुल ठीक! उसका हृदय अब पूरी तरह से परिपूर्ण था, अब उसे संघर्ष के लिए एक मक़सद मिल चुका था। ब्यूमोंट ने उसकी बात को पूरी एकाग्रता से सुना। लेकिन उसने जितने की आशा कर रखी थी उतनी तन्मयता से नहीं।

वह रुष्टता के साथ बोली: "श्रीमान ब्यूमोंट, आप तो मुझे निराश कर रहे हैं, महोदय! क्या सचमुच ही आप इतने कम प्रभावित हैं कि विनम्र रुचि प्रदर्शित करने के अलावा कुछ भी नहीं कह सकते?"

"देवी जी! आप यह भूल रही हैं कि मैं यह सब कुछ अमेरिका

में देख चुका हूं। कुछ मामूली दिलचस्प बातों को छोड़ करके इस काम के बारे में मैं बहुत ही अच्छी तरह से जानता हूं। इसमें मेरे लिए कोई नयी बात नहीं, अलबत्ता इसके स्थानीय पायनियरों के चरित्र के संबंध में जानना शेष है। उदाहरण के लिए, आप मुझे मदाम किरसानोवा के बारे में क्या बता सकती हैं?"

"या ख़ुदा! क्या ऐसा हो सकता था कि मैं उस महिला को नापसंद कर सकती! उन्होंने मुझे कितने... कितने उत्साह से सब कुछ बताया-दिखाया।"

"आपने यही तो बताया है।"

"इससे अधिक क्या सुनना चाहते हैं आप? इससे अधिक मैं क्या कह सकती हूं? आप इसकी तो आशा नहीं करते कि जब मुझे अपने सामने इतना बढ़िया काम दिखायी दे रहा है तो मैं उनके बारे में विस्तारपूर्वक कुछ बताऊं?"

"मैं समझता हूं कि चित्ताकर्षक ध्येय, किसी के भी दिमाग़ से भी व्यक्तित्वों के बारे में सोचने की सभी बात निकाल देता है। फिर भी, क्या आप कुछ और भी नहीं बता सकती हैं मुझे?"

"बहुत कोशिश कराने पर भी, उसे पहले प्रभाव के अलावा कुछ और नहीं याद आ रहा था, जिसकी उसने सविस्तार चर्चा कर दी थी, जिसमें सामान्य व्यक्तित्व और बोलचाल का तरीक़ा शामिल था; इससे अधिक कुछ भी नहीं। संक्षेप में, उससे अधिक कुछ भी नहीं जो कि पहली मुलाक़ात में निगाह के सामने आता है। इसके अलावा उसने जो कुछ भी कहा, वह सब लगभग विशेष रूप से उस कार्यशाला के बारे में था, न कि उसकी संस्थापिका के बारे में। हां, यह ज़रूर था कि संस्थापिका ने कार्यप्रणाली के बारे में जो कुछ बताया था, यह उसे अत्यंत स्मरणीय लगा था।

"सोचता हूं कि आपसे इतनी जल्दी और इतना अधिक पूछना ग़लत था। फिर भी, मैं आपको छोड़ूंगा नहीं, कुछ ही दिनों में मैं दुबारा पूछने आ जाऊंगा।"

"अगर आप इतने ही अधिक उत्सुक हैं तो उससे स्वयं ही क्यों नहीं मिल लेते हैं?"

"मैं ऐसा चाहता तो हूं। और शायद किसी दिन मैं ऐसा करूंगा भी। लेकिन उस समय तक नहीं जब तक कि मेरी जानकारी पूरी

न हो जाय।" वह ज़रा-सा रुका, "मैं स्वयं अपने आप से ही यह तर्क-वितर्क कर रहा हूं कि आप से पूछूं या नहीं... ओह! मैं आप से पूछ ही क्यों न लूं—अगर बातचीत के दौरान मेरा नाम आ जाय तो कृपया यह मत कह दीजियेगा कि मैं उनके बारे में पूछ रहा था या उनसे मिलने की कोई इच्छा प्रकट कर रहा था।"

"श्रीमान ब्यूमोंट, आप तो हर मिनट रहस्यमय होते जा रहे हैं, क्या बात है?" कतेरीना ने कठोरता से कहा, "मैं तो आपको जानकारी जुटाती रहूं और आप पर्दे के पीछे छिपे रहें। क्या आप यही चाहते हैं?"

"मैं यह स्वीकार करता हूं कि—मगर इसे व्यक्त कैसे करूं?—इस समय और कुछ भी करने में मुझे अजब-सी अनिच्छा हो रही है।"

"यह तो बिलकुल विचित्र-सी बात लगती है, श्रीमान ब्यूमोंट!"

"क्या सचमुच ऐसा है! फिर तो मुझे इसे इस तरह से कहने दीजिये: मैं उन्हीं की भलाई के लिए डर रहा हूं। उन्होंने तो अभी मेरा नाम भी नहीं सुना होगा। लेकिन उनके परिचितों की मण्डली या उनके अतीत से मेरा कुछ संबंध रहा हो, शायद। अंततोगत्वा, एक ही बात है। संक्षेप में, मेरे लिए यह सुनिश्चित करना ज़रूरी है कि वे अपने जीवन में मेरे प्रवेश पर कोई आपत्ति तो नहीं करेंगे।"

"कितनी विचित्र बात है, श्रीमान ब्यूमोंट!"

"मैं निष्कपट आदमी हूं और इसलिए मुझे आपको यह आश्वासन देने का साहस हो रहा है कि कभी भी मैं जानबूझकर आपकी स्थिति को संकट में नहीं डालूंगा। यद्यपि हम अभी तक केवल दो-चार बार ही एक-दूसरे से मिले हैं, फिर भी मेरे दिल में आपके लिए सर्वाधिक सम्मान की भावना के अतिरिक्त और कुछ भी नहीं है।"

"आपका सम्मान तो स्वत: ही भली-भांति स्पष्ट है, महोदय, किन्तु फिर भी..."

"अगर आपकी यही राय है तो मैं इस बात की अनुमति चाहूंगा कि मैं आपसे उस समय तक मिलता रहूं, जब तक कि आप यह न अनुभव करने लगें कि आप मुझे इतनी अच्छी तरह से जानती हैं कि किरसानोव-दम्पत्ति के बारे में अपनी जानकारी मुझे बताने

में हिचक नहीं। या इससे अच्छा तो यह है कि मैं आप पर ही यह निश्चित करने को छोड़ दूं कि आप कब मेरी प्रार्थना पूरा कर सकती हैं। मैं अपनी तरफ़ से इस मसले पर दुबारा चर्चा नहीं करूंगा। आप सहमत हैं इससे?"

"हर तरह से, श्रीमान ब्यूमोंट!" उसने अपने कंधे उचकाये और कुछ हल्केपन से कहा, "लेकिन यह तो आपको मान ही लेना चाहिये..."

एक बार फिर उसने बात को यहीं छोड़ देने का फ़ैसला किया।

"कि मैं इसमें कुछ मदद नहीं कर सकता और सन्देहास्पद दिखायी देता हूं? सच! मुझे इस मामले को समय के हाथों में छोड़ना होगा और मेरे लिए इसे वही सुलझायेगा।"

13

ब्यूमोंट अब उनके यहां अक्सर ही आनेवाला अतिथि था। और बूढ़े पोलोज़ोव की राय यही थी: "और आखिर क्यों न आये? वह कतेरीना के लिए उपयुक्त वर साबित होगा। बेशक ऐसा तो नहीं, जिसे वह पहले प्राप्त कर सकती थी। लेकिन, वह इस बारे में कुछ हथिया लेनेवाली तो कभी भी नहीं थी। और इस समय जैसी कि स्थिति है, हम इससे कुछ बढ़िया की आशा भी तो नहीं कर सकते हैं।"

और इस बाबत पोलोज़ोव किसी भ्रम में थे भी नहीं। नौजवान व्यक्ति ने रूस में बसने का अपना इरादा घोषित कर रखा था, जिसे कि वह सचमुच अपनी जन्मभूमि मानता है। उसकी विश्वसनीयता के सबूत के रूप में शुद्ध कठिन परिश्रम के द्वारा इस तीस वर्षीय नौजवान ने शानदार स्थिति प्राप्त कर ली थी। किसी रूसी के लिए तो वह अभिजात्य रक्त और वंश की बात सोचता, लेकिन विदेशी से तो आप ऐसी कुछ अपेक्षा नहीं करते—खास तौर पर किसी फ़्रांसीसी से; किसी अमेरिकी से तो बिलकुल नहीं: उस नयी दुनिया में कोई व्यक्ति एक दिन मोची या किसान के यहां नौकरी कर सकता है, मगर दूसरे दिन जनरल का पद प्राप्त कर सकता है,

तीसरे दिन राष्ट्रपति हो सकता है और इसके बाद एक मामूली कर्मचारी के रूप में शेष जीवन बिता सकता है। वे तो लोग ही दूसरे तरह के हैं, अमेरिकी, और वे किसी व्यक्ति के बारे में अपनी राय उसके दिमाग़ और दौलत से ही बनाते हैं। "वे ठीक ही करते हैं," बुजुर्गवार ने सोचा, "ठीक मेरी ही तरह। मैं ख़ुद भी तो व्यापार में लगा और व्यापारी की लड़की से विवाह किया। ख़ास बात है दौलत तथा इसको पैदा करनेवाला दिमाग़! वह ब्यूमोंट इसी रास्ते पर तो है ही। वह इस सौदे को पूरा कर लेगा और प्रबंध मंडल में मैनेजर बन जायेगा और कालांतर में अंशधारी भी। उनके प्रबंध मंडल हमारी तरह के नहीं हैं। उसके पास स्याह-सफ़ेद करने के लिए लाखों की अपनी दौलत होगी।"

इस प्रकार अपने दामाद के बारे में पोलोज़ोव की व्यापारिक आकांक्षायें इतनी ही असंभावित थीं, जितनी कि कृषि आढ़त के व्यापार में लोपुख़ोव के संबंध में मार्या अलेक्सेयेव्ना की दृष्टि, जो कि किसी भी प्रकार से ब्यूमोंट की स्पष्टत: उपयुक्तता को, घटाती नहीं थी।

फिर भी क्या उसके मन में कुछ न कुछ आशंका नहीं बनी हुई थी? ब्यूमोंट के प्रथम आगमन के एक पखवाड़े के बाद सभी संदेह उस समय दूर हो गये जब उस नौजवान व्यक्ति ने सौदे को नक्की करने के बारे में एक सप्ताह के संभावित विलंब की घोषणा की। फिर भी यह अपेक्षाकृत अधिक हद तक श्री लोटर के आगमन से अधिक संबंधित था, जो कि चार दिन में आनेवाले थे और सारे दस्तावेज़ तैयार करने के लिए एक हफ़्ते का समय लग जाता और असल में यह कोई विलंब नहीं था।

इसका स्पष्टीकरण करते हुए ब्यूमोंट ने कहा था: "मैं स्वयं ही यह सौदा नक्की करना चाहता था, लेकिन हम लोगों के बीच जो व्यक्तिगत संबंध बन गये हैं, उन्होंने मामले को पेचीदा बना दिया है। इस संदर्भ में, किसी भी ग़लतफ़हमी से बचने के लिए मैंने अपने मालिकों को संक्षेप में यह लिख दिया है कि सौदे के बारे में बातचीत के दौरान इस फ़र्म के प्रमुख अंशधारक और प्रबंध निदेशक के साथ मेरे व्यक्तिगत संबंध बन गये हैं और इसलिए मैं यह प्रार्थना करता हूं कि इस सौदे को नक्की करने के लिए

वे कोई ऐसा व्यक्ति भेजें, जो मुझसे अधिक तटस्थ हो। इसी की वजह से मेरे वरिष्ठ अधिकारी बस अब आने ही वाले हैं।"

बहुत ही बुद्धिमानीपूर्ण क़दम! इससे उसके विवाह करने के इरादे के बारे में भी बहुत साफ़ और स्पष्ट संकेत मिलता है। साधारण मित्रता से तो, शायद, इतनी अधिक सुविचारित सतर्कता बरतने की ज़रूरत पड़ती ही नहीं।

14

अपनी अगली दो या तीन मुलाक़ातों के दौरान ब्यूमोंट को कतेरीना की ओर से बहुत ही रुखाईपूर्ण स्वागत मिला। जैसा कि संदेह था, वह इस बात को, कुछ हद तक, बुरी निगाह से देखती थी कि कोई अपेक्षाकृत अनजान व्यक्ति किसी ऐसे दम्पत्ति के बारे में रहस्यपूर्ण ढंग से रुचि ले रहा था, जिनके बारे में उसका दावा था कि वह उन्हें नहीं जानता है और फिर भी वह उनसे मिलने में इसलिए डर रहा था कि कहीं कोई अपमानजनक बात न कर बैठे अथवा ऐसा कुछ पहले ही कर बैठा है। फिर भी हर अवसर पर उसका संदेह वाद-विवाद की गर्माहट में तुरंत ही दूर हो जाता। अपने अब तक के जीवन में किरसानोव के अलावा वह उसके तरह के किसी दूसरे व्यक्ति से नहीं मिली थी, जो इतना अधिक सहानुभूतिपूर्ण हो, जिससे बात करना इतना सहज हो जितना कि किसी लड़की से लेकिन तब उसकी केवल एक ही असली मित्र थी, पोलीना, जिसने किसी मिल-मालिक से विवाह किया और उसके साथ मास्को में रहने चली गयी थी।

जहां तक ब्यूमोंट का प्रश्न है, यह बात साफ़ थी कि उसकी मूल रुचि उस कतेरीना में तो बिलकुल ही नहीं थी। बल्कि वह उसका इस्तेमाल वेरा पावलोव्ना के संबंध में सूचना प्राप्त करने के लिए ही करना चाहता था। इसके विपरीत दूसरी तरफ़, शुरू से ही या कम से कम ऊबाऊपन के बारे में उनकी बहस के समय से ही उसकी सहानुभूति और सम्मान की भावना अत्यंत स्पष्ट रूप से दिखायी पड़ती थी। दूसरी मुलाक़ात के समय वह कतेरीना

के नवप्राप्त उत्साह के प्रति और भी अधिक आकर्षित हुआ। और इसके बाद की हर मुलाक़ात के बाद वह इस तथ्य के बारे में अधिक से अधिक जागरूक होती चली गयी। कुछ ही समय में वे बहुत अच्छे मित्र बन गये: एक हफ़्ते में इस बात से आश्वस्त होकर कि उसके मन में कोई बुरी नीयत नहीं थी, वह किरसानोव-दम्पत्ति के बारे में जो कुछ भी जानती थी, उसे बताने लगी थी।

सच है कि जब कतेरीना ने पहली बार इस विषय पर चर्चा शुरू की तो उसने कहा था: "अभी इतनी जल्दी क्यों? आप मुझे जानती ही कितना हैं?"

"मैं इतना तो ज़रूर जानती हूं जिससे कि आपकी विचित्र इच्छा को स्पष्ट न करने की अनिच्छा को समझ करके यह मान सकूं कि इसके पीछे कोई बहुत ही उच्चतर दायित्व की भावना होगी। कुछ बातें अनिवार्यत: गोपनीय होती हैं।"

इस के जवाब में उसने कहा: "मैं जो कुछ जानना चाहता था, उसके लिए अब मैं उतना अधिक उत्सुक नहीं हूं।"

15

कतेरीना का उत्साह स्थिर, समुज्ज्वल मानसिक स्थिति में बदल गया था। जिस हद तक वह निर्णय कर सकती थी कि इस उत्साह के कारण ब्यूमोंट उसकी ओर आकर्षित था। और यह आकर्षण स्वत: ही स्पष्ट था। किरसानोव-दम्पत्ति के बारे में, दूसरी या तीसरी रिपोर्ट के बाद उसने चौथी रिपोर्ट के समय स्वयं ही रोक दिया था।

"मैं बस इतना ही जानना चाहता था। आपको धन्यवाद।"

"छोड़िये भी! आप जानते ही क्या हैं? मैंने तो आपको केवल इतना ही बताया है कि वे एक-दूसरे से प्यार करते हैं और एक-दूसरे के साथ बहुत ही खुश हैं।"

"मैं इतना ही तो सुनना चाहता था। इससे कुछ भिन्न सुनने की मैं आशा भी नहीं करता था।"

फिर वे दूसरी बातों की चर्चा करने लगे।

पहली बार जब उसने वेरा किरसानोवा के बारे में पूछा था तो

37 1127

कतेरीना ने यही सोचा था कि इसका कारण स्वाभाविक तौर पर प्रेम ही होगा: यह बात अब बिलकुल असत्य सिद्ध हुई। कतेरीना की वर्तमान जानकारी के अनुसार वह प्रेमान्ध हो नहीं सकता था, प्रेम तो कर सकता है। यद्यपि इस क्षण वह किसी को प्रेम करता है, तो केवल वही प्रेमपात्र हो सकती है।

16

क्या यह सचमुच ही प्रेम हो सकता है? स्वयं उसका क्या विचार है? सहृदयता दिखाने का अवसर आया तो था और उसका अंत किस तरह से हुआ था? उस तरह से तो हरगिज़ नहीं, जिसका अनुमान शुरूआत देख करके लगाया जा सकता। वह प्रतिदिन मिलने आता था, कभी-कभी इतनी अधिक देर के लिए नहीं जितना कि दूसरे मौक़ों पर, फिर भी प्रत्येक दिन—नहीं तो पोलोज़ोव उसके प्रणय के बारे में इतने विश्वास के साथ कैसे सोचते? खास तौर पर किसी भी अन्य संकेत के अभाव में? फिर वह शाम आयी जबकि वह मिलने नहीं आया।

"पापा! आपको तो यह पता नहीं होगा कि उसे क्या हुआ?"

"मैं तो इतना ही कह सकता हूं कि उसे आज रात आने के लिए समय नहीं मिला होगा।"

फिर दूसरी शाम हुई और उसके आगमन के बिना ही गुज़र गयी। तीसरे दिन, सबेरे वह बाहर जाने के लिए कपड़े पहन कर तैयार हुई।

"कतेरीना! कहां जा रही हो?"

"मुझे कुछ अपना काम करना है।"

वह ब्यूमोंट के यहां गयी। जिस समय वह पहुंची चौड़ी बांह का जैकेट पहन रखा था उसने और जैसे ही दरवाज़ा खुला तो उसने किताब पढ़ते-पढ़ते सिर उठाकर देखा।

"कतेरीना! आप? यहां आकर बड़ी मेहरबानी की आपने!" ठीक इसी तरह से उसने कतेरीना के पिता का भी स्वागत किया होता—लेकिन इतनी... इतनी हार्दिकता से नहीं।

"श्रीमान ब्यूमोंट, सब कुछ ठीक-ठाक तो है, इतने दिन तक आप हम लोगों से मिलने नहीं आये? मैं तो बहुत ही आशंकित रही। और... परेशान भी।"

"मैं बिलकुल भला-चंगा हूं, कतेरीना। आप देख ही रही हैं; मेरी तन्दुरुस्ती बिलकुल चकाचक है। एक कप चाय पीने का कष्ट उठायेंगी आप, क्या?"

"धन्यवाद! आप किस काम में उलझे रहे?"

"प्योत्र! कृपया एक और प्याला लाओ! देख ही रही हैं आप मुझे भला-चंगा। बस समझ लीजिये कि चिन्ता का कोई कारण नहीं है। बात केवल इतनी ही है कि जिस समय मैं पिछले दिन लोटर साहब को कारखाना दिखा रहा था, मैंने अपना हाथ किसी गियरिंग पर धर दिया था और इससे लापरवाही में बुरी खरोंच लग गयी थी। तब से मैं उपयुक्त जैकेट नहीं पहन पाता हूं।"

"आपने अगर तत्काल मुझे वह खरोंच नहीं दिखायी, तो मैं जाने क्या-क्या बुरी बातें सोचने लगूंगी।"

"अब तो सचमुच ही मिस साहिबा (इसी समय कतेरीना के लिए चाय का प्याला लेकर नौकर प्योत्र ने प्रवेश किया), मैं अपने दोनों हाथों का पूरा उपयोग कर लेता हूं। लेकिन अगर आप ज़िद्द ही कर रही हैं तो लीजिये। (उसने आस्तीन कोहनी तक चढ़ायी।) प्योत्र कृपया, यह राखदानी खाली कर दो और मेरा सिगारबक्स ले आओ। अध्ययन-कक्ष की मेज़ पर रखी है। आप तो देख ही रही हैं, ऐसा कुछ भी नहीं है जो कि प्लास्टर से ठीक न हो जाय।"

"लेकिन यह बहुत ही लाल और सूजा हुआ है।"

"कल जितना था, उससे तो बहुत ही कम है। कल तक यह ठीक हो जायेगा। (अपना काम पूरा करके प्योत्र बाहर चला गया।) मैं घायल युद्ध-वीर के रूप में हरगिज़ नहीं आपसे मिलना चाहता था।"

"आप हमें एक लाइन का खत लिख सकते थे।"

"आप जानिये। पहले दिन मुझे यह पक्का भरोसा था कि दूसरे दिन ठीक-ठाक कपड़े पहन करके मैं आ सकूंगा। इसके बाद मैंने अगले दिन की आस लगायी और इसके बाद इसके

अगले दिन की। सचमुच ही मैं तो यह मानता हूं कि यह आपको परेशान करने के क़ाबिल बात नहीं।"

"और मुझे आपकी इस पीड़ा के लिए इस तरह से दुगुनी परेशानी दी। मैं आपकी इस हरकत का हरगिज़ अनुमोदन नहीं कर सकती, जनाब! इस ख़रीद के कारोबार को आप कब तक समाप्त कर लेंगे?"

"आशा है, कुछ ही दिनों में यद्यपि इस विलंब के लिए लोटर साहब को या मुझे दोष नहीं दिया जा सकता है—यह तो आपके अपने अंशधारकों का निगम है न!"

"अभी-अभी आप पढ़ क्या रहे थे?"

"थेकरे की नवीनतम पुस्तक। यह सोचना कठिन है कि ऐसा प्रतिभावान व्यक्ति इतनी शुष्क रचना करेगा। यह सब विचारों की विपन्नता के कारण है।"

"मैं इसे पढ़ चुकी हूं, इसलिए मैं आप से पूर्णत: सहमत हूं।"

थेकरे के पराभव तथा इसी तरह के अन्य शोचनीय विषयों के बारे में उन्होंने आधे घंटे या कुछ अधिक समय तक बातचीत की।

"सचमुच ही, अब मुझे वेरा पावलोव्ना के यहां के लिए रवाना हो जाना चाहिये। अच्छा, याद आया, आप उनसे कब मिलना चाहते हैं? वे बहुत ही प्यारे दम्पत्ति हैं।"

"किसी भी दिन! और जिस दिन मर्ज़ी होगी, निश्चय ही आप से चलने के लिए कहूंगा। आने के लिए बहुत-बहुत धन्यवाद। क्या यह घोड़ा आपका है?"

"जी हां, मेरा ही है।"

"तभी तो मैंने आपके पिता जी को कभी इस पर नहीं देखा। बहुत ही उम्दा जानवर है।"

"ओह! मुझे घोड़ों की कोई समझ नहीं।"

"निश्चय ही यह बहुत ही उम्दा घोड़ा है। महोदय!" कोचवान ने उत्तर दिया और साथ ही यह जानकारी दे दी कि "इसका मूल्य पूरे 350 रूबल है।"

"इसकी उम्र क्या हुई?"

"यह छह वर्ष का है, जनाब!"

"मैं बैठ गयी हूं, ज़ाखार! चलो! नमस्ते, श्रीमान ब्यूमोंट! क्या आज शाम आप पधारेंगे हमारे यहां?"

"सोचता हूं, आज तो नहीं। बहुत संभव है कि मैं कल आऊंगा।"

17

भला यह किसी युवती के लिए कोई तरीक़ा है कि वह जिस आदमी से प्यार करती है, उससे इस तरह मिले? ऐसा नहीं है कि कोई सुसंभ्रान्त युवती कभी भी इस तरह का स्वप्न देखेगी, लेकिन वह अगर ऐसा करेगी तो उसका प्रभाव बहुत ही भिन्न होगा। नैतिक दृष्टि से अगर यह काम ही घिनौना था, तो उनकी बातचीत मान्य शिष्टता के कितनी विपरीत थी और इस घटना-विशेष के संदर्भ में इससे अधिक क्या कहा जाय? अंततोगत्वा, क्या उपर्युक्त घटना से ही यह बात स्पष्ट नहीं है कि ब्यूमोंट और कतेरीना मनुष्य नहीं, वरन् मछलियां हैं? या कम से कम पूरी तरह से मछलियों के रक्तवाली प्रजाति के हैं? इसके अलावा, यह मुलाक़ात भी उसी लहजे के अनुकूल थी, जिसे कि उसने अपनी आज तक की अन्य मुलाक़ातों में बनाये रखा था।

"मैं थक गयी हूं, श्रीमान ब्यूमोंट," ऐसा वह उस समय कहती जबकि वह शिष्टाचार से अधिक देर तक रुक जाता, "अब आप पापा के साथ बात कीजिये," और फिर वह तुरंत चली जाती।

कभी-कभी वह पन्द्रह मिनट और रुकने का अनुरोध करता और यह समय उसे मिल भी जाता। लेकिन अक्सर यही होता कि उसे तब उत्तर देना पड़ता, "अच्छा, अब शुभरात्रि!"

यह कौन-सी विचित्र प्रजाति है! मैं यह जानना चाहूंगा और साथ ही साथ इस बात पर चकित भी हूं कि क्या यह ऐसी उत्तम और सुसंस्कृत जोड़ी नहीं है, जिनके मिलन में जब भी और जितनी बार भी चाहें और या जब वे आपस में विवाह करना चाहें तो उसमें रुकावट डालने को कोई भी नहीं सोचेगा या दूसरे शब्दों में उनके लिए प्रचण्ड विद्रोह करने का कोई भी स्वाभाविक कारण

नहीं है। फिर भी उनके इतनी सुनियोजित निर्लेप मुद्रा से मैं व्याकुल, उनकी वजह से इतना अधिक नहीं, जितना कि स्वयं अपनी वजह से: क्यों मेरी यही दुखद नियति है कि मैं इस उपन्यास के सभी नायकों और नायिकाओं को अपने सौम्य पाठकों की निगाह में छोटा बनाऊं? या तो वे भोजन या मद्यपान कर रहे हैं, या बिना किसी अच्छे कारण के धमाचौकड़ी मचाये बग़ैर रहते हैं—यह कितना नीरस है।

18

फिर भी और किसी निश्चय के लिए अगर आपने पोलोज़ोव से पूछा होता तो विवाह माहौल में व्याप्त था—और वह भी भावी वधू एवं वर के अटपटे व्यवहार के बावजूद। शायद, बुज़ुर्गवार ने उन दोनों के बीच होनेवाली कोई बातचीत नहीं सुनी? मान लिया कि वे हमेशा ऐसे स्थान पर बातचीत नहीं करते थे जहां से उसे आसानी से सुना जा सके। अक्सर ही वे अधिक दूर के कमरों में बैठते थे, जिनका कि, दूसरी तरफ़, किसी समय क्या कहा जाता, उस पर सबसे कम प्रभाव पड़ता। सचमुच ही उन दोनों को बात करते सुनकर, मानव हृदय का बहुत ही विवेकी न्यायाधीश भी (कौन-सी ऐसी गल्प होती है, जिसका वास्तविकता से कोई न कोई साम्य न हो) उनके आपस में कभी भी क़समें न खाने पर दुखी होता। ऐसा कहने का यह तात्पर्य कदापि नहीं है कि वे सभी कोमल भावनाओं की चर्चा करने से कन्नी काटते थे—वे ऐसा नहीं करते थे, और न तो वे किसी भी अन्य विषय की ही चर्चा से परहेज़ करते थे। बस, सिर्फ़ इतना ही है कि इस पर शायद ही कभी बात होती हो और वह भी कैसे ढंग से और किन-किन शब्दों में। कैसे ढंग से—मेरा मतलब उस प्रशांत दृष्टिकोण से है जो वे इस बाबत अपनाते थे। और जहां तक इस प्रकार के शब्दों का संबंध है—वे तो स्तंभित कर देने की सीमा तक वाहियात क्यों थे? ज़रा, इस उदाहरण पर ग़ौर कीजिये: ब्यूमोंट द्वारा "आने के लिए बहुत-बहुत

धन्यवाद" कहने के एक सप्ताह बाद, उनके परिचय की तिथि से लगभग दो माह बाद, कारखाना बिक गया। अगले दिन वापस लौटने के लिए श्रीमान् लोटर ने तैयारी कर ली थी (और वे सचमुच ही चले गये, यहां पर कथानक में किसी आपातिक मोड़ की कल्पना मत कीजिये: उन्होंने अपना व्यापारिक लेन-देन पूरा किया, जिसकी कि किसी व्यापारी व्यक्ति से आशा भी की जाती है, 1000 पाउंड प्रतिवर्ष के वेतन पर ब्यूमोंट को प्रबंध निदेशक नियुक्त किया, इसकी भी उम्मीद थी ही और मेरे दोस्तो, यहां तक तो ऐसा ही हुआ; अपने मामले को छोड़कर दूसरे के मामले में संभवत: उनकी क्या रुचि हो सकती थी—मैं इसका निर्णय आपके ही ऊपर छोड़ता हू), उसी दिन पोलोज़ोव सहित सभी अंशधारकों को उनकी आधी रक़म नक़द मिल जानी थी (यहां पर भी कोई आपात घटना की संभावना नहीं, इतनी ठोस कंपनी—हौजसन, लोटर एंड कंपनी, के साथ तो बिल्कुल ही नहीं) और बाक़ी रक़म तीन महीनों के बाद भुगतान होनेवाली हुंडियों के ज़रिये मिलनी थी। पूर्ण रूप से संतुष्ट पोलोज़ोव कमरे में बैठे अपनी रक़म गिन रहे थे, लेकिन उनके कान इस जोड़े के बीच उस समय हो रही बातचीत को सुनने की ओर लगे हुए थे, जो कि उस समय उस कमरे से और सड़क की तरफ़वाले चारों कमरों में टहल रहे थे।

"अगर स्त्री पूर्वाग्रह से ग्रस्त हो," ब्यूमोंट ने कहा और उसके शब्दों में आंग्ल या अमेरिकी अंग्रेज़ी का कोई भी अतिरिक्त पुट नहीं था, "और आदमी भी—मेरा मतलब है, अपने सर्वाधिक सम्मानपूर्ण स्थिति में भी—तो इससे बेहद कष्ट झेलता है। आप ही मुझसे बताइये कि कोई व्यक्ति किसी ऐसी युवती से विवाह किस तरह कर सकता है, जिसे कि उसके प्रस्ताव को स्वीकार करने से आनेवाली ज़िम्मेदारियों और संबंधों के बारे में कुछ भी अनुभव न हो? उसके अर्थात् युवती के पास यह जानने का कोई भी साधन नहीं है कि अपने प्रियतम के साथ की नीरस ज़िन्दगी का कारोबार उसे किस तरह से रास आयेगा।"

कतेरीना ने तत्काल प्रतिवाद किया: "ठीक! लेकिन मान लीजिये कि विवाह-प्रस्ताव से पूर्व अपने प्रियतम के प्रति युवती का रवैया

38-1127

सीधा-सादा था, तो क्या यह इस बात की कुछ गारंटी नहीं कि वे दोनों एक-दूसरे के साथ सुखी रहेंगे?"

"कुछ हद तक तो ठीक है यह! लेकिन, सोचिये तो कि शुरूआत में अधिक सुस्पष्ट अनुभव के साथ युवती कितनी अधिक असंदिग्ध रहेगी। उसका अनुभव ऐसा है कि वह पति-पत्नी के संबंधों से पूरी तरह से अनजान है और इसलिए विवाह की सहमति देने में डर और जोखिम का शिकार हो सकती है। इसी तरह की स्थिति आदमी की भी है—सम्मानित आदमी की। अलबत्ता नाना प्रकार के महिला-स्वभाव से उसका पूर्व-परिचय पुरुष को सामान्य संदर्श के संदर्भ में कुछ अधिक सजग बना देता है।"

"क्या युवती अपने परिवार तथा अपनी मित्र मंडली को ध्यान से नहीं देख सकती है, क्या वह अपने मस्तिष्क का उपयोग भी नहीं कर सकती है?"

"यह सब तो बहुत ही उत्तम और अच्छा है, लेकिन फिर भी प्रत्यक्ष अनुभव की जगह तो नहीं ले सकता है।"

"फिर तो आप विवाह को केवल विधवाओं तक ही सीमित रखेंगे?" वह हंस पड़ी।

"खूब कहा है! लेकिन, सच तो यही है कि मासूम नौजवान युवतियों को वर्जित कर देना चाहिये।"

"जी, बिल्कुल ही," वह बेहद गंभीर थी।

इस प्रकार के वाद-विवाद या अपने कानों में सुनायी पड़नेवाले इस प्रकार के वाक्यांशों से पहले तो पोलोज़ोव स्तब्ध रह गये थे। लेकिन फिर धीरे-धीरे इस विचार के अभ्यस्त होते-होते वह यह सोचने लगे थे: "तो आखिर क्या हुआ है? भला मैंने पूर्वाग्रह छोड़ करके एक व्यापारी की लड़की से विवाह नहीं किया था?"

और इसके अगले दिन यह बात हुई—अलबत्ता बहुत ही व्यापक विचार-विमर्श के दौरान यह तो मामूली प्रसंग था—यह साधारण-सी बातचीत कुछ इस प्रकार से चलती रही:

"आपने मुझसे बताया था कि सोलोवत्सोव के प्रति आपके प्यार का परिणाम क्या हुआ। लेकिन, वह भावना क्या थी? केवल एक ..."

"हम बैठ क्यों न जायें? मैं थक गयी हूं।"

"ठीक है। गारंटियों से विहीन बचकानी कल्पना के बारे में हम लोग बराबर बात करते रहे हैं। याद करके हम उस पर हंस सकते हैं और दुख के लिए भी यह कोई मामूली कारण है। केवल भाग्य की असाधारण कृपा से ही आप बच गयीं कि अलेक्सान्दर जैसा व्यक्ति आपका इलाज कर रहा था।"

"किसका नाम लिया आपने?"

"मत्वेइच किरसानोव।" उसने जारी रखा, मानो उसने अपना वाक्य समाप्त न किया, "उनके बिना या तो आप तपेदिक़ की शिकार होतीं या वही गुंडा आपका जीवनांत ही होता। इससे आपकी सामाजिक स्थिति की अंतर्निहित बुराई पर उचित निष्कर्षों पर पहुंचने का परिपक्व मौक़ा था। और आपने निष्कर्ष निकाले। बहुत अच्छा। उस अनुभव से आप बेहतर और अधिक बुद्धिमती हुई हैं। लेकिन फिर भी यह तय कर पाने के लायक़ उपयुक्त नहीं कि विवाह करने का सर्वोत्तम पात्र कौन हो सकता है। बस आप इतना समझ गयी हैं कि कौन बदमाश है और कौन नहीं। यह भी अच्छा है! लेकिन क्या कोई स्वाभिमानी महिला इतने से ही संतुष्ट होगी, चाहे उसकी अंतिम पसंद के पात्र की चरित्रता कोई भी क्यों न हो? युवती और उसकी सभी बहनें सूक्ष्म प्रत्यक्ष ज्ञान चाहती हैं, पूर्ण रूप से भिन्न अनुभव। कल हम इस बात पर सहमत हुए थे कि, जैसा कि आपने कहा था, केवल विधवाओं को ही विवाह करना चाहिये। तो फिर आपकी स्थिति क्या होगी?"

उसके भाषण की कटुता अंत में विशुद्ध दुर्भाव में बदल चुकी थी।

"वाह! वाह!" उच्छ्वास-सा भरा उसने। "लेकिन फिर भी, मैं धोखा देने की गिरी हरकत तो नहीं कर सकती थी।"

"अगर आप कोशिश करतीं तब भी नहीं," उसने सहमति प्रकट की। "उस प्रकार के अनुभव का अभिनय नहीं किया जा सकता।"

"आप इस बात का इसरार कर रहे हैं कि हम लड़कियों में बुद्धिमत्तापूर्वक चयन करने की क्षमता का अपवाद तो हो सकता है, जिसके अंतर्गत अनुभव को तिलांजलि दी जा सकती है। एक निश्चित आयु के बाद किसी भी लड़की को अपनी इच्छा-अनिच्छा की

बेहतर जानकारी हो जाती है। जैसे कि मैं अपने बारे में जानती हूं और इसमें परिवर्तन की संभावना नहीं है। मैं 22 वर्ष की हूं तथा मैं जानती हूं कि सुखी होने के लिए मुझे क्या चाहिये: शांति, शांत वातावरण और इनमें किसी की दखलंदाज़ी न हो। न इससे कुछ अधिक, और न इससे कुछ कम।"

"प्रतीत तो ऐसा ही होता है।"

"ऐसे मामलों में किसी दूसरे में अनुकूल विशेषताओं की उपस्थिति या अनुपस्थिति को निश्चित कर पाना क्या इतना अधिक कठिन है? मैं तो सोचती हूं कि एक या दो बार की बातचीत इसके लिए काफ़ी होगी।"

"सच है। लेकिन आपने अभी स्वीकार किया है कि यह अपवाद है, न कि नियम।"

"बेशक! आज सामाजिक और नैतिक वातावरण जिस तरह का है, महोदय! कोई भी लड़की वह अनुभव अर्जित करने की आशा नहीं कर सकती, जिसको हमने अनिवार्य के रूप में परिभाषित किया है। सुविचारित चयन। आजकल युवती की स्थिति में और कोई चारा नहीं। वह किसी प्रकार के भी रिश्ते में क्यों न बंध जाय, सभी कार्यों एवं उद्देश्यों के लिए अनुभव पहुंच के बाहर रहता है और इसमें अंतर्निहित जोखिम हमेशा की तरह दुर्जेय रहते हैं। बहुत आसानी से वह कपटाचार की घटिया कला सीख सकती है। परिवार और मित्रों दोनों को ही धोखा देने या उनसे छिपने पर खुद को मजबूर कर सकती है और उसके बाद तेज़ी के साथ पूर्ण रूप से भ्रष्टाचार के रास्ते पर जा सकती है। या फिर उतनी ही आसानी से ज़िन्दगी के बारे में छिछोरेपन का रुख अपना सकती है। दोनों प्रकार की संभावनाओं का उसके पास एकमात्र विकल्प है: भग्न हृदय। और यह सब कुछ उस नीरस अनुभव में सिर्फ़ मामूली से लाभ के लिए, जिसकी हम चर्चा कर चुके हैं; क्योंकि भ्रष्टाचार और भग्न हृदय दोनों ही दिखावे के लिए, निरर्थक उद्दीपन के लिए स्थापित संबंधों के कारण होता है और इसका दैनंदिन जीवन-कर्म से तनिक भी संबंध नहीं होता। तो आप समझीं कि वह रास्ता समय के इस वर्तमान प्रकरण में अवरुद्ध है।"

"बिल्कुल ठीक। इससे सिर्फ़ यही पता चलता है कि समय का यह वर्तमान प्रकरण कितना ग़लत है।"

"फिर तो हमारे बीच पूर्ण सहमति है।"

"तो अब क्या, मैं पूछ सकता हूं कि वह क्या है? मेरा मतलब है कि निजी संदर्भ में इसका क्या अर्थ था, अगर सामान्य सारांश पर्याप्त उलझन पैदा करनेवाला है। "मैं इसके बारे में बहुत ही निश्चित नहीं हूं कि आप मेरे लिए अच्छी पत्नी सिद्ध होंगी," वह कहता है और वह जवाब देती है: "कृपया, आप प्रस्ताव तो करें!" कितनी अधिक अनुचित बात है! या हमें ग़लतफ़हमी हुई है? क्या वह यह कह सकता है कि, "मुझे इसमें कोई सन्देह नहीं कि मैं तुम्हारे साथ सुखी रह सकता हूं, केवल मैं तुमसे यही याचना करता हूं कि तुम सावधानीपूर्वक सोचो; अगर तुम मुझे चुनो तो इसके बारे में बार-बार सोचो। यह बहुत ही महत्त्वपूर्ण विषय है। बहुत ही कठोरतापूर्वक छानबीन के या बाद में भी सोच-विचार के बिना अपने को किसी भी पुरुष को मत सौंपो, मुझे भी नहीं जो कि तुम्हें इतना अधिक प्यार करता है।" और क्या उसका जवाब कुछ ऐसा होता, "प्रिय मित्र, तुम अपने बारे में नहीं, वरन् मेरे बारे में सोचते हो। तुम ठीक ही हमें आंख मूंदकर बरबादी के रास्ते पर चल निकले तुच्छ भोला-भाला जीव कहते हो! लेकिन तुम्हें मेरे लिए भयभीत होने की ज़रूरत नहीं है; मुझे कोई भी धोखा नहीं दे सकता। मेरा सुख सुरक्षित है। तुम अपनी समझ में जितने प्रशांत हो, मैं भी अपनी समझ में उतनी ही प्रशांत हूं।"

अगले दिन जब वे दोनों पोलोज़ोव के कमरे से होकर गुज़र रहे थे तब फिर ब्यूमोंट ने अपनी बात जारी रखते हुए कहा: "सचमुच ही आश्चर्यजनक बात यह है कि सुखी विवाहों का अस्तित्व इस प्रकार की भयंकर परिस्थितियों में भी होता है।"

"तुम इस पर नाराज़ लगते हो कि कोई विवाह सुखी हो ही क्यों।" वह उसी प्रशांत भाव से खिलखिलाकर हंसी जो कि अब उसकी सांकेतिक विशिष्टता बन चुकी थी।

"हां! इसके दुखद परिणाम भी होते हैं: अगर इतनी अधिक लड़कियां, पुरुषों की आवश्यकताओं एवं स्वभाव के बारे में अपने अज्ञान के बावजूद अच्छी तरह से चुनाव कर लेती हैं, तो सोचो कि

महिलाओं की बुद्धिमत्ता क्या है! प्रकृति ने इसे कितनी अचूक अंतर्दृष्टि प्रदान की है। और यह कितनी जटिल बर्बादी है कि समाज नारी के मन को तुच्छ समझकर और इससे जीवन को ही मिटाकर कितनी विकराल क्षति सहन करता है। मानव जाति अगर अपने विचार उन्मुक्त कर दे तो वह निश्चय ही दस गुनी तेज़ी के साथ प्रगति करेगी।"

"क्या कहने वाक्पटुता के, श्रीमान ब्यूमोंट! बिल्कुल ही नारीसुलभ है! लेकिन क्या यह अधिक आसान नहीं होगा कि इस सबको भाग्य के सहारे छोड़ दिया जाय?"

"यह विचार ही। कितने ही मामलों में भाग्य का महत्व माना जाता है, लेकिन जब यह संख्या बहुत ही अधिक हो जाय तो कोई सामान्य उद्देश्य होना ही चाहिये। और इस संदर्भ में एकमात्र संभव उद्देश्य वही है, जो मैंने सुझाया: अंतर्दृष्टि!"

"मैं यह घोषित करती हूं कि तुम महिला आंदोलन की हैरियट बीचर स्टोव हो, श्रीमान ब्यूमोंट! तुम्हें याद होगा उन्होंने गोरे व्यक्ति के मुक़ाबले नीग्रो की अधिक बुद्धिमान के रूप में प्रशंसा की थी।"

"तुम मज़ाक़ कर रही हो! मैं नहीं हूं मिस स्टोव!"

"कहीं आप नाराज़ तो नहीं हो गये कि मैं नारी के समक्ष नतमस्तक नहीं हूं? लेकिन फिर भी तुम यह तो मानोगे ही कि स्वयं अपनी ही प्रजाति की प्रशंसा कठिनाई से ही की जाती है।"

"तुम तो मज़ाक़ कर रही हो, मिस साहिबा, लेकिन मुझे तो यह पूरा प्रश्न ही परेशान कर रहा है।"

"कहीं तुम मेरे बारे में तो यह नहीं कह रहे? अगर महिलायें तुम्हारे आदेश के अनुरूप सिद्ध नहीं हो पातीं तो उसके लिए मुझे दोषी कैसे ठहराया जा सकता है? फिर भी, पूरी गंभीरता के साथ मैं तुम्हें यह बताऊंगी कि मैं सोचती क्या हूं, नारीत्व के बारे में नहीं—मैं अपने ही मामले में स्वयं निर्णायक बनने की कल्पना नहीं करती—लेकिन तुम्हारे बारे में, महोदय! तुम, अनन्त आत्मसंयमी व्यक्ति इस प्रश्न से अत्यंत घबराते हो। इसका आखिर क्या मतलब है? किसी प्रकार का पूर्वाग्रह, जो शायद, जिसे तुम महिलाओं में अनुभव का अभाव कहते हो, उसके कारण उत्पन्न हुआ हो।"

"शायद! पर मैं यह नहीं बताऊंगा कि ग़लती मेरी अपनी ही

है या मुझसे घनिष्ठ किसी दूसरे व्यक्ति की। मैं सलाह दूंगा कि इसके बारे में तुम कुछ सोचो। तुम्हारा जवाब मिलते ही मेरा स्पष्टीकरण मिल जायेगा और मैं यह अनुरोध करूंगा कि तीन दिन में मुझे उत्तर मिल जाय।"

"लेकिन अभी तुमने मुझसे अपना प्रश्न पूछा ही नहीं है? क्या मैं तुम्हें इतना कम जानती हूं कि मुझे इन तीन दिनों के समय की दरकार हो?" यह कहकर वह रुकी, ब्यूमोंट की गर्दन अपनी बांह में लपेट ली, उसका सिर झुकाया और पेशानी को चूम लिया।

प्रचलन और सामान्य शिष्टाचार का यही तक़ाज़ा था कि वह इस आलिंगन का जवाब दे और सीधे-सीधे उसके होंठों को चूम ले। लेकिन इसकी जगह उसने अपने गिर्द लिपटे हाथ को दबाया भर।

"बहुत अच्छा, कतेरीना, लेकिन फिर भी तुम इस पर सोच-विचार कर देखो।"

और इसके बाद ही वे आगे बढ़ गये।

"तुमसे ऐसा किसने कहा, चार्ली प्यारे कि मैंने इसके बारे में तीन दिनों से ज़्यादा समय तक नहीं सोचा-विचारा है?" उसने ब्यूमोंट का हाथ छोड़ा नहीं।

"यह बात तो बिल्कुल ही साफ़ है। तो भी, मैं यह मानता हूं कि अब मैं तुम्हें बता ही दूं कि... लेकिन चूंकि यह गोपनीय है, इसलिए चलो हम दूसरे कमरे में चलें। वहां से हमारी बात कोई सुन नहीं पायेगा।"

यह अंतिम वाक्य जिसे नयी शुरूआत का अंत कहा जा सकता है, उस समय कहा गया जब वे दोनों वृद्ध के पास से गुज़र रहे थे, जिन्होंने दोनों को पहली बार बांहों में बांहें डाले जाते देख करके अपने मन में ही कहा: "अहा! ब्यूमोंट ने हाथ मांग लिया है बेटी का और बेटी ने उसे स्वीकार कर लिया है। बहुत अच्छा है!"

"मुझे अपना भेद बताओ न, चार्ली! यहां से पापा हमारी बात नहीं सुन सकेंगे!"

"तुम इसे हास्यास्पद समझती हो कि मैं तुम्हारे लिए भयभीत होऊं; सच तो यह है कि इसकी कोई ज़रूरत नहीं। फिर भी, इस मामले में सतर्कता बरतने की मेरी बात की तुम सराहना करोगी—खास तौर पर तब जब मैं इस मामले में अपना अनुभव

बताऊं। इसमें शक नहीं कि तुम्हें हम लोगों का एक साथ रहने का जीवन पसंद आयेगा। फिर भी वह युवती... उसके प्रति मुझे करुणा प्रकट करनी ही पड़ी। इतने अधिक दिन तक यातना सहन करना, अपनी आकांक्षानुकूल जीवन के अभाव में इतने अधिक समय तक रहना—सचमुच ही वह सब दया के योग्य था। मैं स्वयं ही देख सकता था, इसकी चिन्ता मत करो कि कहां, कह सकते हैं कि न्यू-यॉर्क या बोस्टन या फ़िलाडेल्फ़िया। समझ सकती हो कि इससे कोई फ़र्क नहीं पड़ता। वह इतनी अच्छी महिला थी कि वह हरदम अपने पति के बारे में ही भला-भला सोचती रहती थी। वे दोनों ही एक-दूसरे को बहुत अधिक पसंद करते थे और फिर भी उसे यातना झेलने पर विवश होना पड़ा। उसकी ज़रा-सी खुशी के लिए वह अपना दाहिना हाथ कटा सकता था और फिर भी उसके साथ उसे ज़रा-सी भी खुशी नहीं मिली। अच्छी बात है कि जिस रूप में अंत हुआ वैसा ही होना चाहिये था। लेकिन फिर भी यह सब उसके लिए बेहद कठिन सिद्ध हुआ। क्योंकि इस बारे में तुम्हें कुछ पता नहीं था, इसीलिए मुझे अभी तक तुम्हारा जवाब मिल नहीं पाया है।"

"तुम्हें यह नहीं पता कि मुझे इस प्रसंग के बारे में किसी अन्य स्रोत से कुछ मालूम हो सकता है?"

"क्यों नही मालूम हो सकता?"

"खुद उसी के मुंह से ही?"

"संभवत:!"

"और मैंने अभी तक तुम्हें अपना जवाब नहीं दिया है?"

"अभी तक तो नहीं।"

"जवाब तो तुम जानते ही हो, क्या नहीं?"

"मैं जानता हूं," उसने कहा और इसके साथ ही दुलहिन और भावी दूल्हे के बीच प्रेमालाप का सामान्य सिलसिला शुरू हुआ।

19

अगले दिन, दोपहर के क़रीब तीन बजे कतेरीना वेरा पावलोव्ना से मिलने गयी।

"मैं परसों विवाह करने जा रही हूं," उसने दरवाज़े से ही घोषणा की, "और आज रात फिर अपने वाग्दत्त के साथ आपसे मिलने आऊंगी।"

"तो वह ब्यूमोंट ही होंगे, वही जिसकी तुम न जाने कब से प्रशंसा के पुल बांधती रही हो।"

"क्या, मैं? प्रशंसा के पुल बांधती रही हूं? यह सब तो इतनी ख़ामोशी से और उचित रूप से हुआ है।"

"मुझे विश्वास है कि हुआ है ऐसा, कम से कम तुम्हारे उस नवयुवक के साथ, लेकिन निश्चय ही मेरे यहां से तो ऐसा नहीं हुआ है।"

"सचमुच ही? कितनी अजब बात है! आप यह सुनकर तो और भी अधिक आश्चर्यचकित रह जायेंगी कि वह आप दोनों को कितना पसंद करता है। ख़ास तौर पर आपको, मदाम!"

"इतनी अजब बात तो यह नहीं है। बशर्ते कि मैंने उनके बारे में जो कुछ सुना है, उससे हज़ार गुना कम अंश में ही तुमने मेरी प्रशंसा उनसे की हो तो। तब तो फिर यह तर्कसंगत ही लगता है..."

"आप क्या सोचती हैं कि वह आपको मेरे ज़रिये जानता है? बात यही है, वह ऐसे नहीं जानता। वह स्वयं ही आपके बारे में बहुत अच्छी तरह जानता था।"

"यह तो मेरे लिए नयी सूचना है! क्या तुम विस्तारपूर्वक बता सकती हो?"

"क्यों नहीं। वास्तव में वह पीटर्सबर्ग पहुंचने के तुरन्त बाद आपसे मिलने को बहुत ही उत्सुक था। लेकिन, उसने ज़्यादा अच्छा यह समझा कि वह उस समय तक इन्तज़ार करे जब तक कि वह दुलहिन या पत्नी के साथ आपके यहां आ सके। उसका विश्वास था कि आपको यह अधिक अच्छा लगेगा। बस, जान लीजिये, आपकी वजह से ही हम लोगों का विवाह होने जा रहा है।"

"मुझसे मिलने के लिए ही वह तुमसे विवाह करने जा रहा है?"

"ऐसा कैसे समझ लिया आपने? कौन कहता है कि मुझसे विवाह करता है आपकी ख़ातिर? ज़रूर, हम इसलिए विवाह नहीं

करेंगे कि आपको इतना ज्यादा प्रेम करते हैं। लेकिन उसके आगमन से पहले क्या हम दोनों में से कोई भी एक-दूसरे के अस्तित्व के बारे में जानता था? अगर वह नहीं आया होता तो हम लोग एक-दूसरे से मिले ही नहीं होते! और पता है, वह आपके लिए ही आया था। आप अति विशेष हैं न!"

वेरा ने धड़कते हुए हृदय से पूछा: "तुम कह रही थीं न कि वह अंग्रेज़ी से कहीं अच्छा रूसी बोलता है?"

"उसकी रूसी उतनी ही बढ़िया है जितनी कि मेरी और अंग्रेज़ी भी।"

"कतेरीना! मेरी प्रिय सखी, मैं तो भावविभोर हूं!" वेरा उसे आलिंगन में जकड़ने के लिए लपकी! "साशा, जल्दी आओ तो!"

"वेरा? कुछ गड़बड़ है? ओह! नमस्ते, कतेरीना ..."

उसने अपना वाक्य पूरा भी नहीं किया था कि उनकी अतिथि ने उसे गले लगा लिया।

"यह ईस्टर रविवार है, अलेक्सान्दर; अब बोलो तो 'निश्चय ही वह जीवित हो उठा है!'"

"तुम्हें हो क्या गया है?"

"तुम बैठो तो! कतेरीना फिर सब कुछ बतायेगी: मैं तो अभी हवा में उड़ रही हूं। हम अब तक ईस्टर के उपलक्ष्य में पर्याप्त चुम्बन कर चुके हैं—मेरे सामने भी! कतेरीना, तुम्हीं बताओ तो अब!"

20

आशा के अनुरूप, उस शाम उत्तेजना अपेक्षाकृत बहुत अधिक रही। जैसे ही सब कुछ सामान्य हुआ, ब्यूमोंट को राज़ी कर लिया गया कि वह अपनी राम कहानी बताये और उसने अमेरिका में पहुंचने के बाद का अपना विवरण देना शुरू किया। उसने कहा: "मेरी पहली चिन्ता अमेरिका की नागरिकता पाने की थी। इसके लिए संपर्कों की ज़रूरत थी... प्रश्न था कि किस से तथा इसका स्पष्ट उत्तर था कि दासप्रथा के विरोधी लोगों से। मैंने रूस की संपूर्ण सामाजिक व्यवस्था पर

भूदासत्व के प्रभाव के बारे में 'ट्रिब्यून' में कुछ लेख लिखे। इनसे उन्हें दासप्रथा के विरुद्ध कई महत्त्वपूर्ण तर्क मिले—मेरा मतलब है दक्षिण राज्यों में—और मुझे मैसाचुसेट्स राज्य में नागरिकता मिल गयी। इन्हीं संपर्कों के माध्यम से मुझे उनकी विचारधारा की न्यू-यार्क स्थित, एक कंपनी में काम मिल गया।" इसके बाद की उसकी कहानी उन तथ्यों से मेल खाती है, जिन्हें हम जानते ही हैं। वही इस अंश की विश्वसनीयता का भी प्रमाण है।

21

उसी शाम को ही यह सहमति हो गयी कि दोनों दम्पत्ति अग़ल-बग़ल रहें। दोनों ही दम्पत्तियों के अनुकूल आवास प्राप्त करने और उन्हें सजाने में जो समय लगा, उसे ब्यूमोंट-दम्पत्ति ने स्टिऐरिन कारखाने के उन कमरों में बिताया, जिन्हें हौजसन, लोटर एंड कंपनी ने नये डाइरेक्टर के लिए अलग रख छोड़ा था। शहर के किसी उपनगर में इस प्रकार के एकांतवास को अंग्रेज़ों की बढ़िया परंपरा के अनुकूल कहा जा सकता था, जो अब युरोप में भी लोकप्रिय हो रही है।

छह सप्ताह के बाद, अग़ल-बग़ल के दो फ़्लैट मिल गये—इनमें से एक में किरसानोव-दम्पत्ति रहने लगे और दूसरे में ब्यूमोंट-दम्पत्ति। कारखाने का फ़्लैट बुज़ुर्ग पोलोज़ोव के लिए छोड़ दिया गया। उन्होंने वहां रहने की इच्छा व्यक्त की और पुराने शानदार अतीत की झलक दिलानेवाले स्थान को तरजीह दी। वह यहां पर रहने की शान से भी आकर्षित था, दो-तीन मील की दूरी में कोई ऐसा भवन था ही नहीं। उसे असाधारण सम्मान मिलता था, इसके अनेकानेक स्वरूप दीख पड़ते थे—न केवल अपने ही क्लर्कों और कर्मचारियों का वरन पड़ोसियों का भी और सचमुच ही इस पूरे इलाक़े की जनसंख्या का उसे सम्मान मिलता था, जिनमें ऊपर के लेकिन बहुत ऊपर नहीं और उससे नीचे स्तर के व्यापारी की प्रतिष्ठा मिलती थी। और इस तरह सामाजिक रुतबा हासिल होता था। इलाक़े में एकमात्र सम्माननीय हस्ती होने और इसी रूप में सर्वत्र ही समादृत पाने

से उसे अनन्त सुख का अनुभव होता था। उसका दामाद हर रोज़ सबेरे कारखाने में आता था। अक्सर ही श्रीमती ब्यूमोंट भी उसके साथ ही आतीं। गर्मी के मौसम में युवा दम्पत्ति यहीं रहने के लिए आ जाते थे (इस चलन का पालन आज तक हो रहा है) मानो यह उनका देहाती मकान हो। वर्ष के शेष भाग में, अपनी पुत्री तथा उसके पति (जो कि अपनी उत्तरी अमेरिकी पहचान क़ायम रखे हुए था) का प्रातःकाल स्वागत करने के अलावा बुजुर्गवार खुशमिजाज मेहबान बनते—सप्ताह में एक या अनेक शामों को उसी दम्पत्ति के साथ आनेवाले उसके मित्रों के मेज़बान होते। इस टोली में कभी-कभी तो किरसानोव-दम्पत्ति और कुछेक अन्य नौजवान ही होते। सच तो यह है कि कारखाना किरसानोव एवं ब्यूमोंट दम्पत्तियों के मित्रों के लिए सैर-तफ़रीह का केन्द्र बन गया था। पोलोज़ोव को तो इन सबमें मज़ा ही आता है—उसके दृष्टिकोण से ये आक्रमण सामान्य थे, क्योंकि वह तो जन्मजात मेज़बान और सब दृष्टियों से पैतृक सम्मान से सम्पन्न था।

22

दोनों ही परिवारों के अपने मनपसंद नियम-क़ायदे थे। एक में आम तौर पर अपेक्षाकृत शांति रहती थी और दूसरे में पहले की अपेक्षा अधिक गुल-गपाड़ा। इन दोनों घरों के बीच आवागमन इस तरह से था जैसे एक ही परिवार हो। एक दिन में दसियों बार आना-जाना होता। गोकि एक बार में कोई एक या दो मिनट से अधिक नहीं रुकता। किसी-किसी दिन तो एक फ़्लैट सबेरे से रात तक बिल्कुल ही खाली रहता और इसके निवासी अपने पड़ोसियों के साथ ही दूसरे फ़्लैट में रहते। जब जैसा मौक़ा होता। इसी तरह से इनकी स्थिति भी बदलती रहती थी, ताला बंद रहे या न रहे और दोनों फ़्लैटों के बैठकखानों के बीच का दरवाज़ा भी अक्सर बंद ही रहता। बस वेरा और कतेरीना के कमरों को जोड़नेवाले दरवाज़े को छोड़ करके लेकिन बात जारी रखें, बैठक का दरवाज़ा उस समय बंद रहता जबकि एक या दूसरे तरफ़ अतिथियों की संख्या कम

होती, लेकिन इसके विपरीत बड़ी भीड़ जमा होने की स्थिति में वह खुला रहता, तब किसी को भी यह याद नहीं रह जाता कि कौन किसका मेहमान है और न ही वेरा और कतेरीना में कौन मेज़बान है, इसकी भी सुध नहीं रहती। एक प्रकार से अंतर किया जा सकता है: जब भीड़ युवा और बैठी हो तो आम तौर पर वह कतेरीना के हिस्से में बैठी होती तथा जब यह भीड़ युवा और बैठी न होती तो अक्सर उसके हिस्से से निकल करके वेरा की तरफ़ पहुंच चुकी होती। लेकिन नौजवान लोग शायद ही उचित संगति होते हैं, इसलिए उन्हें लगातार ही "अच्छे दोस्तों की तरह" वेरा कतेरीना की तरफ़ भेज देती। "मैं आज रात तुम लोगों से उकता गयी, भद्र पुरुषो, अब तुम सब कात्या की तरफ़ जाओ। वह कभी भी हिम्मत नहीं हारेगी। अरे हां, तुम उससे बेहतर व्यवहार क्यों करते हो? वैसे सच बात तो यह है कि मैं उससे बड़ी हूं।"—"मैडम, चिन्ता मत कीजिये, हम उन्हें अधिक पसंद करते हैं।"—"क्या तुम यह जानती हो कात्या, ऐसा क्यों है?"—"मैं समझती हूं, कि इसका कारण शायद यह है कि मैं उन्हें कम चिढ़ाती हूं।"—"यही बात है, मैडम! कतेरीना हमसे गंभीर इरादेवाले संजीदा लोगों की तरह व्यवहार करती हैं और हम भी उनके साथ उसी तरह से व्यवहार करते हैं।"

पिछले जाड़े में अपनायी गयी विशेष योजना के अनुसार दोनों घरों के प्यानो एकसाथ लाकर रख दिये जाते, लाटरी निकाली जाती, मेहमान दो वाद्य मंडलियों में बंट जाते और दोनों की अपनी प्रधान गायिका होती, जिसे कि अपना प्यानो बजाने के लिए बैठना पड़ता और एक दूसरे आमने-सामने होतीं। उनकी अपनी नौजवान टोलियां इनके पीछे जमा होतीं। फिर संकेत मिलने पर समवेत स्वर में ये टोलियां गाना गातीं। इस साल यह फ़ैशन बदल गया था और दोनों ही पूर्व प्रधान गायिकायें 'अति उत्कृष्टता की भावना के बारे में, प्राचीन यूनानी दार्शनिकों की भूमिका अपनातीं। आकाश की ओर दृष्टि डालते हुए कतेरीना निर्जीव-सी आह भरकर कहती: "ओह शिलर! मेरी आत्मा के दिव्य हर्षोन्माद!"। इसके जवाब में वेरा धीरे-गंभीर स्वर में उत्तर देती: "कोरोलेव की दुकान से जूते भी इतने ही उम्दा हैं!" और सुंदर नाज़ुक-सी एड़ी दिखलाती, जो

भी कोई जरा भी ठी-ठी करता उसे कोने में भेज दिया जाता, जहां पर दो-तीन को छोड़कर सभी मूल दर्जन भर लोग मौजूद मिलते और जिस समय इस खेल में भाग लेने के लिए ब्यूमोंट स्वयं फंस जाता तो फिर मौजमस्ती का कोई ठिकाना नहीं रहता।

इससे अधिक हम क्या कह सकते हैं? कार्यशालायें पहले से अधिक घनिष्ठ सहयोग से काम कर रही थीं और अब तीसरी नवीनतम कार्यशाला की स्थापना कतेरीना ने कुछ समय पहले की थी, जिसने वेरा के अधिकांश पुराने दायित्व संभाल लिये थे और इस वर्ष के अंत तक तो उसे वेरा के सभी दायित्व संभाल लेने थे, आप जानें वेरा को (और कृपया उसे क्षमा कर दीजिये) इस साल डाक्टरी की योग्यता-परीक्षा में बैठना है, जिसके बाद उस के पास कार्यशाला के लिए समय ही नहीं होगा। "कैसी विडंबना है कि हम विस्तार नहीं कर सकते हैं; जरा सोचो तो, कितना-कुछ और किया जा सकता है।" उसने कहा और कतेरीना चुप तो रही लेकिन दृष्टि कुपित हो गयी, "तुम्हारा मिज़ाज कितना तीखा है, कतेरीना, क़सम से मुझसे भी बहुत ज्यादा। यही अच्छी बात है कि तुम्हारे पिता ने कुछ अपने लिए बचा रखा है।"—"निश्चय ही ऐसा है, वेरा! बच्चे के सिलसिले में तो बहुत आसानी से सोच सकती हूं।" इससे आप यह सहज कल्पना कर सकते हैं कि उसके बच्चा है! "लेकिन कतेरीना, तुमने मुझे असंभव बातें सोचने पर मजबूर कर दिया है, ज़िन्दगी तब आसानी से बीतने लगेगी।" कतेरीना ने कोई टिप्पणी नहीं की। "ऐसा होगा, कतेरीना, कहो कि ऐसा होगा, न हो तो मेरी खातिर कहो।" कतेरीना हंसने के लिए मजबूर हो गयी। "चूंकि मुझे क्या कहना है, इससे कोई फ़र्क़ नहीं पड़ता इसलिए मैं खुशी-खुशी पुष्टि कर दूंगी।"

और ज़िन्दगी, वस्तुत:, अपने शांत पथ का अनुसरण करती रहती है। हमारे चारों मित्र सद्भावपूर्वक और तारतम्य से रहते हैं, उनका समय कभी शांत और कभी गुल-गपाड़े में बीतता है, खुशी के क्षण होते हैं तथा परिश्रम के भी। लेकिन, ऐसा मत सोचिये कि मेरी कथा यहीं पर समाप्त होती है। वे अभी युवा तथा सक्रिय हैं और उन्होंने अपने जीवन में जो स्थायित्व प्राप्त कर लिया है वह किसी भी अर्थ में उन्हें कुछ कम दिलचस्प नहीं बना देता। इसके

विपरीत, इन के बारे में कहने के लिए बहुत कुछ और है, मेरा विश्वास करें, यह बहुत कुछ, उससे कहीं अधिक आकर्षक है, जो कुछ अब तक कह चुके हैं।

23

तात्पर्य यह कि वे कामकाज, खेलकूद, और शुद्ध मनोरंजन से भरपूर जीवन बिता रहे हैं और ऐसे भविष्य की आशा कर रहे हैं, जो भले ही कष्ट-से मुक्त न हो तो भी निश्चित हो और उसमें उन्नति की अच्छी संभावनायें हों। तीन साल पहले भी ऐसा था और अब इस वर्ष भी। जाड़ा क़रीब-क़रीब जा चुका है, बर्फ़ पिघलना शुरू हो गयी है और वेरा यही सोच रही है कि "क्या अब एक भी सर्दी का दिन नहीं होगा, कि जिसमें हम अंतिम बार स्लेज पर सैर कर लें?" किसे मालूम! लेकिन जैसे एक सुहावने दिन के बाद दूसरा दिन आता, इसकी संभावना क्षीणतर हो जाती। तभी एक दिन, अंत में, बर्फ़ पड़ ही गयी। जब सभी आशा समाप्त हो गयी थी, तब पड़ी बर्फ़। भरपूर जाड़े का दिन, हवा में हल्की सुगबुगाहट और निर्मल आसमान, बढ़िया शाम का प्रतीक। और अब बिना तैयारी के ही सैर को निकलना पड़ेगा, क्योंकि निमंत्रण भेजने या इस समय बड़ी टोली एकत्र करने के लिए समय ही कहां!

उस शाम दो स्लेज गाड़ियां रवाना हुईं। पहली गाड़ी में जीवंत चहचहाहट थी और इसमें परिहास का अभाव नहीं था और दूसरे में कुछ इस प्रकार का अनियंत्रित उत्तेजना का साम्राज्य था, जिसके बारे में मैं कुछ बता नहीं सकता। अलबत्ता जिस क्षण शहर उनके पीछे छूट गया तो वे सभी पूरे ज़ोर से गाने लगे। और कौन-सा गाना गाने लगे!

. . . .

निकली बाहर, युवती सुंदर और फुर्तीली,
निकल गयी बिल्कुल नूतन द्वारों से आगे उस रात,
नये थे ये द्वार और मेपल की लकड़ी से बने हुए थे,
बनी हुई हैं झंझरियां आकर्षक, उत्तम और सुगठित:

क्या करूं मेरा प्रिय पिता तो रूखा है
और इतना प्रचण्ड कि डरे सारी दुनिया
नहीं देगा मुझे जाने टहलने
क्योंकि हो गयी हो देर और समय है बात करने का
और जब युवक है अकेला—गर्वीला
वह तो आकर देता है दस्तक
लेकिन आज नहीं मानूंगी बापू का कहना
और बाहर ही रहूंगी, पूरी की पूरी रात

. . . .

मैं आप से ही पूछता हूं, कि यह कोई ऐसा गाना है जिसे गाना चाहिये? और फिर जैसे इतना ही काफ़ी न हो वे धीमे होकर चहलक़दमी करने लगे, क़रीब तीन सौ गज़ तक पीछे रह गये हैं और फिर हुंकारते हुए और हो-हल्ला मचाते सरपट आगे बढ़े ताकि फिर एक साथ हो जाय और कुछ कम उधमी परन्तु प्रफुल्ल स्लेज पर बर्फ़ के गोले बरसा रहे हैं। इस तरह से हमले का शिकार बननेवाली टोली ने तीसरी बार ऐसे हमले के बाद अपना बचाव करने का तय किया; औरों को आगे जाने दिया और चुपके-चुपके नयी गिरी बर्फ़ को जमा कर लिया। फिर तो रंगरलियां मनानेवाले रेंगने ही लगे, पीछे पड़ गये, फिर झपटकर लपके और एक बार फिर आगे बढ़े। उनके निशाने की टोली ने पता भी नहीं चलने दिया कि उन्होंने अपने बचाव की पूरी तैयारी कर ली है और अचानक ही उनको उचित मुंहतोड़ उत्तर देगी। तभी एकाएक, जब ये रंगरलियां मचानेवाले अपनी दाहिनी ओर मुड़े—उन्हें नाली पार करनी थी न (जो कि स्लेजवाली टोली के लिए वस्तुत: कुछ भी नहीं है) और वे उछल करके दस गज़ आगे पहुंच गये। "अरे, यह तो वही हो सकती है, उसने हमारी चालाकी देख ली है। देखो, न, कैसी रासें थामे खड़ी है?" प्रशांत स्लेज से शोर मचा, और अपने गंतव्य पर लुढ़कती रही। "हम उनका पीछा करेंगे।" अब तो जान की बाज़ी लगाकर दौड़ना है। वे दोषी व्यक्तियों को पकड़ भी पायेंगे या नहीं? "हम उन्हें पकड़ लेंगे!" वे पूर्ण उत्साह के साथ चिल्लाये और फिर निराश भी हो गये: "हम ऐसा नहीं कर पायेंगे!" और अंततोगत्वा, दुगुने उत्साह से बोले: "पकड़ लेंगे हम! हम पकड़ लेंगे!"—"खुदा

हमारी मदद कर, कहीं वे हमें पकड़ न लें!", दूसरे कसमसाये मगर तत्काल ही उल्लासित होकर बोले: "अरे नहीं, वे कहां पकड़ पायेंगे!" क्या होगा दोनों में से?

प्रशांत स्लेज गाड़ी में किरसानोव-दम्पत्ति बैठे हैं और इसी में ब्यूमोंट-दम्पत्ति भी हैं। रंगरलियां मनानेवाली में चार नौजवान तथा वह महिला भी हैं, जो कि इस सब मसखरी, मनमौजीपन की जड़ हैं!

"बधाइयां, भद्र महिलाओ और सज्जनो, हमें आप सबको देखकर बहुत अधिक खुशी हो रही है," वह महिला कारखाने की ड्योढ़ी से ही बोली। "अच्छा सज्जनो," वह अपने साथियों की तरफ़ मुड़ करके कहती हैं, "अब महिलाओं को उतरने में सहायता तो दीजिये।"

सभी, ठंडी रात की हवा से, जिनके गाल लाल हैं, भवन के भीतर उपलब्ध गर्माहट के लिए लपक पड़ते हैं।

"हलो! दादा जी! कहां हो कतेरीना, कैसे कह सकती हो ऐसा? ययाति कहीं भी तो नहीं दिखायी दे रहे हैं, तुमने तो मुझे विश्वास दिलाया था कि वे बूढ़े हैं। मैं दावे के साथ कह सकती हूं कि वे अभी भी इश्क़बाज़ी करेंगे। नहीं, क्या प्यारे बूढ़े दादा जी?"

"मुझे तो खुशी होगी मेम साहबा!" पोलोज़ोव एकदम लट्टू हो गये थे, उसने कितनी कमनीयता से उसके सफ़ेद गलमुच्छों को सहलाया था न।

"नौजवान, समय दो इनको कि ये मेरी मनुहार कर सकें?"

"अवश्य, अवश्य!" उन चारों में से एक ने कहा।

"बिल्कुल, नहीं!" अन्य तीन बोले।

वह महिला काला लिबास क्यों पहनती हैं? मातम है या महज सनक?

"ओफ़, मैं थक गयी हूं।" पूरे कमरे की लंबाई में फैले सोफ़े पर पसर जाती है। "नौजवान! हमारे लिए कुछ गद्दियां ले आओ! मैं समझती हूं कि और महिलायें भी थकी हुई हैं!"

"तुमने ही हम लोगों को दौड़ा-दौड़ा कर थका दिया है," कतेरीना ने स्वीकार किया।

"उन धचकों-धक्कों से मेरे सारे शरीर पर ही नील पड़ गये हैं," वेरा ने कहा।

"गनीमत हुई कि सिर्फ़ एक मील का टुकड़ा ही ऊबड़-खाबड़ था," कतेरीना बोली।

दोनों ही थकान से गद्दियों में धंस गयीं।

"बेवकूफ़ लड़कियां! या तुमने पहले कभी इतनी दौड़ नहीं लगायी? अगर तुम लोग भी उचकतीं जैसा कि मैंने किया तो इस समय तुम्हें शिकायत का कोई कारण ही नहीं मिलता!"

"हम लोग भी तो काफ़ी थक गये हैं," किरसानोव ने अपने और ब्यूमोंट की तरफ़ से बोलते हुए कहा।

वे भी सोफ़े पर अपनी पत्नियों के पास आ बैठे। किरसानोव ने अपनी पत्नी को आलिंगन में ले लिया और ब्यूमोंट ने कतेरीना का हाथ अपने हाथों में ले लिया। रमणीय स्थिति! आप नहीं मानेंगे ऐसा? सुखी वैवाहिक दृश्य से मुझे बहुत प्रसन्नता होती है। काले लिबासवाली महिला के चेहरे पर छाया-सी झलक जाती है। इतनी जल्दी खत्म भी हो जाती है कि उस नौजवान के अलावा इसे कोई भी दूसरा नहीं देख पाता, जो कि खिड़की पर पड़े तुषार के जड़ाऊ काम का अध्ययन करने लगता है।"

"देवियो, आप की कहानियां इतनी कुछ दिलचस्प हैं, फिर भी मैं केवल इतना जानता हूं कि वे मार्मिक, मनोरंजक और सुखांत हैं, यही तो मैं पसंद करता हूं! दादा जी किधर चले गये हैं?"

"वह नाश्ते का इंतज़ाम देख रहे हैं, कट्टर मेज़बान जो ठहरे," कतेरीना जवाब देती है।

"फिर तो उन्हें लगे रहने दो काम में। मेहरबानी से हमें अपनी-अपनी दास्तान सुनाओ; लेकिन संक्षेप में, क्योंकि मैं संक्षिप्त और मधुर बातें पसंद करती हूं।"

"मैं तो बिल्कुल ही संक्षिप्त में बखान करूंगी।" वेरा ने कहा, "और दूसरे अपने बारे में खुद कहें अलबत्ता। मैं यह चेतावनी ज़रूर देती हूं कि अंत में कुछ रहस्य भी छिपे हैं।"

"क्या हम भद्र पुरुषों को यहां से जाने को कह दें?"

"नहीं, वे भी सुन ही सकते हैं।"

और इसके साथ ही वेरा ने अपनी बात शुरू की।

. . . .

(हंसी का फ़ौव्वारा)। "तो यह है मेरी प्यारी जूली का पूरा रूप-स्वरूप; अभिनय कला उसकी चेरी: घुटने टेकती है, गालियां करती है, किसी शिष्टता बग़ैर व्यवहार करती है। प्यारी लड़की!"

. . . .

"मरहबा, वेरा, मरहबा! तो तुम खिड़की से बाहर कूद गयी होतीं क्या तुम सचमुच ही? भद्र जनो, क्या हम ऐसा करें," काली लिबासवाली महिला ने तालियां बजायीं। तत्काल ही कमरे में मौजूद सभी लोगों ने सहमति में तालियां बजायीं। तालियों की यह गड़गड़ाहट कर्ण भेदी थी।

. . . .

"क्या हुआ आखिर मामला क्या है?" कई क्षण बाद डर से चीख उठी कतेरीना।

"कुछ भी नहीं! कुछ भी तो नहीं। थोड़ा पानी दीजिये। मगर परेशान मत होइये। "मोसोलोव, धन्यवाद!" उसने गिलास ले लिया, उस नौजवान से जो कि खिड़की के पास पहले खड़ा था। "बहुत सधा हुआ है, है न? हमेशा ही औरों से एक क़दम आगे रहता है। बहुत बेहतर है अब। कृपया, सुनाती रहिये न, मेरे कान उधर ही लगे हैं।"

"नहीं, मैं तो बहुत थक गयी हूं।" उसने निर्विकार भाव से कहा। पांच मिनट बाद वह इसी प्रकार उठ गयी। "मुझे बस एक घंटे की नींद की ही ज़रूरत है। जानती हूं, निहायत अशिष्ट हरकत एकाएक कर रही हूं। मोसोलोव, आओ, दादा जी को ढूंढ़ें, वे हमारा इन्तज़ाम कर देंगे।"

कतेरीना ने आपत्ति की: "मेरा तो सचमुच यही विचार है कि यह इंतज़ाम मुझे ही करना चाहिये।"

"यह इतना कष्ट उठाने की बात है क्या?"

एक नौजवान ने मुहर्रमी सूरत बना करके कहा: "आप हमें इस तरह तिलांजलि नहीं दे सकतीं। अगर हमें पता होता कि आप ऐसा करेंगी तो हम लोग अपनी कटारें साथ लाये होते। इस समय तो हमारे पास ऐसा कुछ भी नहीं है, जिसे हम अपने दुखी हृदय में भोंक लें।"

"नाश्ते के लिए तो इंतज़ार करो, तब ढेर सारे कांटे मिल जायेंगे।" दूसरा नौजवान चिहुंककर बोला। वह अप्रत्याशित मुक्ति का मज़ा ले रहा था।

"मैं यह नहीं चाहती कि राष्ट्र की आशा समय से पहले डूब जाये," काली लिबासवाली महिला ने कहा और इतनी ही गंभीरता से कहा: "मेरे बच्चो, हौसला रखो। मोसोलोव, एक गद्दी तो रखो, छोटीवाली में से एक गद्दी मेज़ पर रख दो।"

मोसोलोव ने आज्ञा का पालन किया। धीरे-धीरे लेकिन शाही शान के साथ उसने अपना हाथ गद्दी पर रखा और एक के बाद दूसरे नौजवान ने झुककर हाथ का चुंबन लिया। कतेरीना अपने क्लांत अतिथि को अपने कमरे में ले गयी।

इस समय कमरे में प्रशांत टोली के बचे तीनों सदस्यों ने समवेत रूप से कहा: "बेचारी!"

तीन बचे हुए रंगरलियां मचानेवालों ने घोषणा की: "लेकिन है अद्भुत महिला!"

आत्मसंतुष्ट मोसोलोव ने कहा: "वाह! वाह!!"

"तुम उसे लंबे अरसे से जानते हो क्या?"

"तीन वर्षों से।"

"और पुरुष को?"

"काफ़ी अच्छी तरह से जानता हूं, लेकिन कृपया, कुछ अन्यथा न सोचें," उसने प्रशांत टोली से कहा, "वह केवल थकी हुई है। बस इतना ही।"

वेरा ने अपने पति और मित्र की तरफ़ अस्पष्ट-सा दृष्टिपात कर अपना सिर हिला दिया।

"थकी हुई, बिल्कुल बकवास!" किरसानोव ने कहा।

"सच्ची बात। और कुछ है नहीं। थोड़ी नींद लेने पर सब ठीक हो जायेगा। मोसोलोव का आश्वासन निरुत्साही था।

दस मिनट के बाद कतेरीना लौट आयी।

"सब ठीक तो है?" छह आवाज़ों ने पूछा। इसमें मोसोलोव का स्वर नहीं शामिल था।

"वह लेटी हुई है और इस समय, हम समझते हैं कि वह घोर निद्रा में निमग्न है।"

"मैंने कहा नहीं था? चिन्ता की कोई बात नहीं है," मोसोलोव ने कहा।

"बेचारी," कतेरीना बीच में बोल उठी, "हमें उसके ख़ातिर अपने पतियों से अलग रहना पड़ेगा। मैं वेरा के साथ और अलेक्सान्दर चार्ली के साथ समय बितायेंगे।"

"फिर भी इससे हमें कोई तकलीफ़ नहीं होनी चाहिये," मोसोलोव ने इसरार किया, "हम लोग गाना गा सकते हैं, नाच सकते हैं और जितना जी चाहे शोर कर सकते हैं, वह तो बहुत अधिक गहरी नींद सोती है।"

अगर वह सो रही है और बात भी कुछ नहीं, तो मामला क्या है? उसकी वजह से जो गड़बड़ हुई, वह पन्द्रह मिनट में विस्तृत हो गयी थी, बिल्कुल ही लुप्त और स्मृति के गर्त में चली गयी थी—लेकिन नहीं, पूरी तरह से नहीं। धीरे-धीरे शाम रंग पकड़ने लगी, उन लोगों के निर्धारित मानक स्तर तक पहुंच गयी और मनोरंजन का माहौल खिल गया।

मगर पूरी तरह से नहीं। महिलाओं ने अवश्य ही परस्पर कनखियों से बातें की होंगी, तनावपूर्ण, निर्जीव, उनके बीच से दृष्टिपात। वेरा ने दो बार अपने पति से फुसफुसाकर कहा: "अगर मेरे साथ ऐसा हुआ होता तो?" किरसानोव पहली बार तो यह समझ ही नहीं पाया कि वह क्या जवाब दे पर दूसरी बार उसने कहा: "शायद ऐसा नहीं हुआ होता।"—"तुम्हें पक्का यक़ीन है?"—"बिल्कुल!" कतेरीना और ब्यूमोंट के बीच भी आंख बचाकर ऐसी ही घुसफुस हुई, वह तो बस मुस्करा भी दिया। पहली बार न तो बहुत ही प्रफुल्ल मन से और न ही उत्साहवर्द्धक ढंग से। लेकिन दूसरी बार वह उसे यह आश्वासन देने में सफल हो गया कि "शायद ऐसा नहीं हो सकता है, शायद नहीं।"

लेकिन, जैसा कि मैंने कहा, यह उचटती-सी घटना थी और बहुत ही जल्द भुला भी दी गयी। लगभग सभी मौज में थे, वस्तुतः,

आधे घंटे की समाप्ति पर जो पूरी तरह से मस्त थे, चुहल, बातचीत, हंसी-मज़ाक़ और गाने का दौर चला। वह गहरी नींद सो रही है, मोसोलोव ने इसका पक्का विश्वास दिलाया और उसने ही महफ़िल का रंग जमाने में पहल की। सचमुच उसकी शांति भंग करने का तो प्रश्न ही नहीं उठ सकता था, वह तीन कमरे, एक बरामदा और एक ज़ीना और बीच में चौथा कमरा छोड़कर सोयी थी—संक्षेप में इस बहुत बड़े, विस्तृत फ़्लैट के बिल्कुल अलग हिस्से में।

इस प्रकार उनकी शाम फिर ढर्रे पर आ गयी। नौजवान लोग अपने स्वभाव के मुताबिक़, अकेले-अकेले या सभी मिलकर आम बातचीत में कभी भाग लेते, कभी नहीं लेते थे। ब्यूमोंट ने दो बार उनकी बातचीत में हिस्सा लिया और वेरा ने उनको कुछ कम गंभीर विषयों की ओर भटकाया।

अलबत्ता, विचार-विमर्श किसी की भी ओर से कुछ अधिक नहीं था।

फिर वे सभी साथ-साथ जमे हुए थे।

"ठीक है—लेकिन तो भी मैं यह जानना चाहूंगा कि हम अपनी बात किस पर ख़त्म करेंगे: शुभ अथवा अशुभ पर?" ऐसा उस नौजवान ने कहा, जिसकी मुहर्रमी सूरत का ऊपर ज़िक्र किया जा चुका है।

"शुभ की तुलना में अशुभ अधिक," वेरा ने कहा।

"ऐसा क्यों सोचती हो तुम?" कतेरीना ने पूछा।

"चाहे कुछ कहो, यही तो ज़िन्दगी है," ब्यूमोंट बीच में ही बोला।

"अपरिहार्य है," किरसानोव ने पुष्टि की।

"तो शुभ कोटि का अशुभ", मुहर्रमी सूरतवाले का निष्कर्ष यही था। उसके साथियों ने सहमति में सिर हिलाया: "क्या ख़ूब कही, निकीतिन!"

नौजवान अपनी अलग मंडली में थे।

"मैं तो उसे पहले से नहीं जानता था, निकीतिन, क्या तुम जानते थे?" मोसोलोव ने पूछा।

"कुछ दूरी से। उस समय मैं सिर्फ़ बच्चा था।"

"सोचो तो, उस समय वह कैसा लगा था तुम्हें, अनावश्यक रूप से प्रशंसित?"

"बिल्कुल नहीं।"

"तब से तो उसे किसी ने भी नहीं देखा है?"

"किसी ने भी नहीं। लेकिन याद आया तो ब्यूमोंट अमेरिका में था।"

"वह भी तो वहीं था! ब्यूमोंट? बात सुनेंगे क्या आप हमारी पल भर को? जब आप अमेरिका में थे तब तो वहां आपको वह रूसी व्यक्ति तो नहीं मिला था न? या मिला था?"

"नही, मेरी उससे मुलाक़ात नहीं हुई थी।"

"अब तो उसे स्वदेश लौट ही आना चाहिये।"

"बिल्कुल ठीक।"

"अभी-अभी मेरे मन में बहुत अनोखा ख़्याल आया है," निकीतिन बोला, "उस महिला के लिए वही उपयुक्त वर है।"

"भद्र जनो, मुझे गुरुध्वनि गायक चाहिये," वेरा ने पुकार लगायी, "स्वेच्छा से दो लोग आयें? इससे अधिक हो तो और भी ख़ुशी की बात है।"

निकीतिन और मोसोलोव पीछे रुक गये।

"मैं आप लोगों को देखने लायक़ एक दृश्य दिखा सकता हूं," मोसोलोव ने पेशकश की, "क्या आप समझते हैं कि वह सो रही है?"

"मिनट भर के लिए भी नहीं।"

"बस चुप रहो। बाद में बताइयेगा, जबकि आप उसे और भी अच्छी तरह से जानने लग जायें! लेकिन दूसरों को इसकी भनक भी न होने दें। वह नहीं चाहती है कि इसके बारे में चर्चा हो।"

खिड़कियां नीची थीं।

"यही कमरा होगा—जिसमें कि रोशनी है।" मोसोलोव ने छानबीन की। "ठीक, दिखायी दे रहा तुम्हें कुछ?"

काले लिबासवाली महिला डेस्क के पास बैठी हुई थी, अपनी बायीं कोहनी टिकाये हुए, सिर झुका हुआ, कनपटी और आधा चेहरा उसके हाथ से ढका हुआ था। अपने दायें हाथ से वह मेज़ पर अंगुलियां थिरका रही थीं, मानो कोई मूक सुर निकाल रही हो। उसका चेहरा किसी उदास किन्तु गंभीर सोच में डूबा हुआ था। उसके ललाट पर एक हल्का-सा बल पड़ा हुआ था।

"क्या हमेशा यही होता है, मोसोलोव?"

"देख तो रहे हो, लेकिन अच्छा हो कि हम यहां से खिसक चलें वर्ना बीमार पड़ जायेंगे। इस सर्दी में पन्द्रह मिनट तक यहां!"

"अवश्य ही, तुम्हारा दिल पत्थर का होगा!" पोर्च की रोशनी से गुज़रते हुए निकीतिन ने अपने मित्र की आंखों में घूरकर देखा।

"और तुम इतने विह्वल हो। तुम इसके आदी नहीं।"

भोजन परोसा गया।

"क्या वोद्का उत्कृष्ट नहीं प्रतीत होती," निकीतिन ने उत्साहित होकर कहा, "उफ़! बहुत ही तेज़ है, किसी भी आदमी को चित्त करने के लिए काफ़ी है।"

"अरे वाह, क्या देखकर ही आंखें लाल हो गयीं?" मोसोलोव ने चिढ़ाया और फिर सभी इस चुहल में शामिल हो गये।

"मैंने बस, ज़रा-सी चूक कर दी। मैं पी लेने के बाद भी संतुलन नहीं खोता हूं।"

क्या बजा है यह सभी जानना चाहते थे। ग्यारह? बस अभी इतना ही समय हुआ है? फिर तो मौज-मस्ती के लिए पूरा आधा घंटा है।

तीस मिनट बाद कतेरीना अपनी मेहमान को जगाने गयी, जिसने दरवाज़े पर ही एक उनींदी अंगड़ाई के साथ उसका अभिनंदन किया।

"अच्छी नींद आयी तुम्हें?"

"हूं, बहुत ही अच्छी।"

"अब कैसा लग रहा है तुम्हें?"

"बिल्कुल बढ़िया। मैंने तो कहा ही था आप से कुछ भी तो

नहीं हुआ। मैंने कुछ ज़रूरत से ज़्यादा ही उछल-कूद कर ली थी। आगे से अब मैं नियंत्रण रखूंगी अपने ऊपर।"

मगर अफ़सोस, वह ऐसा कर नहीं सकी। पांच मिनट से भी कम समय के अंदर ही वह पोलोज़ोव को अपनी शरारतों से लुभा रही थी, नौजवानों को तरह-तरह के आदेश दे रही थी। मेज़ पर दो कांटों के हत्थों को इस तरह से बजा रही थी कि उनसे किसी मार्च का कुछ-कुछ आभास मिल रहा था—फिर भी वह जाने के लिए बेहद उत्सुक थी, बेहद। मगर उसकी नवप्राप्त स्फूर्ति से प्रभावित दूसरों को अभी वहां से खिसकने की कोई भी जल्दी नहीं थी।

"क्या घोड़े जोते जा चुके हैं?" वह उठ पड़ी।

"बस हमने आदमी से कह तो दिया है।"

"कितने निष्ठुर हैं आप लोग। लेकिन अगर मुझे अभी इंतज़ार ही करना है, तो वेरा पावलोव्ना, क्या मेरे लिए एक गीत नहीं गाओगी तुम, सभी कहते हैं, तुम्हारी आवाज़ बहुत ही मधुर है।"

वेरा ने गाना सुना दिया।

"सच मेरा मन और बहुत-से गाने सुनने का हो रहा है।"

इस के बाद उसी का गाना सुनने के लिए लोगों ने गुहार मचा दी। यह अनुरोध अभी शुरू ही हुआ था कि वह प्यानो के पास पहुंच गयी थी।

"ठीक है, मैं कोई गायिका तो नहीं हूं। मगर बात ऐसी नहीं है कि यह बात या कुछ बात और मुझे गाने से रोके। पर इस बात का ध्यान रखिये कि मैं आप लोगों के लिए नहीं वरन् अपने बच्चों के लिए गाती हूं। बच्चो, मगर तुम खिल्ली मत उड़ाना!" उसने कुछ अंतरिम धुनें छेड़ीं। "अगर मैं गाने में डूब जाऊं तो आप लोग हंसने की धृष्टता न करें," और जितनी ज़ोर से वह गा सकी, उसने गाना शुरू कर दिया:

नीला कबूतर...*

* 1792 में रूसी भावना-प्रधान कवि इ० दीमित्रियेव (1760—1837) द्वारा लिखित प्रेम-कविता पर आधारित।—सं०

चौंकते हुए, नौजवान लोग मुंह दबाकर मुस्करा रहे थे, दूसरे तो खुल करके हंस रहे थे, गायिका ने खुशी-खुशी अपनी आवाज़ धीमी की और पहले से भी ऊंचे सुर में गाना शुरू किया:

...कराहता है
कराह रहा है दिन और रात,
अपना असली प्यार भरा गीत...

इस बार वह सचमुच थरथरायी, फिर रुक गयी। "मुझे डर है कि गाना बिल्कुल नहीं जम रहा है। ठीक ही तो है। चलो, कुछ बेहतर करें। मेरे शब्दों को याद रखना, बच्चो, और प्यार से नफ़रत करो। इतना अधिक कि कभी तुम शादी के बंधन में न फंसो।" और फिर उसने पूरी शक्ति के साथ मध्यम सुर छेड़ दिया:

पहाड़ों की ढलान पर, बहुत ही अधिक सुंदरता,*
हर आबनूसी आंख को दमकाने के लिए सितारे हैं
प्रेमी के मन में है मधुर और ईर्ष्याजनित आशा—
इसकी अंतिम पक्ति पीडापूर्ण है...
पराक्रमी, उसकी रंगरेलियां और उन्मुक्त आकाश
बात यह नहीं है; बच्चो, और तुम भी इसे जानते हो।
मत करो विवाह, कभी भी, बहादुर और स्वतंत्र
हमेशा ही, लेकिन, पूरे करते रहो मेरे आदेश...

"बाक़ी तो सब कुछ बकवास था—था ही, निस्संदेह। तुम प्यार कर सकते हो, मेरे बच्चो, और विवाह भी, तभी जब कि चयन बुद्धिमत्तापूर्वक तथा ईमानदारी से किया गया हो। अच्छा, अब मैं अपने विवाह के बारे में गाती हूं, पुराना, कितना पुराना रोमांस, उतनी ही पुराना जितनी कि तुम जानो मैं हूं। घटना स्थल डाल्टन हाल की दीर्घा है, वन और ब्रिनगाल नदी के तट के पास, मैं स्काट नारी हूं न, गोरी, सुनहरे बालोंवाली, सामंत की पुत्री तथा किसी निर्धन व्यक्ति को प्यार करती हूं। मेरा प्रेमी छज्जे के नीचे छिपा हुआ है और मैं गा रही हूं:

---

* मि० यू० लेरमोन्तोव (1814—1841) की रचना 'हमारे समय का नायक' (1840) मे उद्धृत।—सं०

अरे, किनारे हैं ब्रिनगाल नदी के बीहड़ और उजले,*
और ग्रेटां के वन हैं हरे-भरे,
और मैं विचरण करूंगी वहां एडमंड के साथ,

"हां! मुझे पता है कि वह वहां पर दिन की रोशनी में छिपा रहता है और कोई भी मकान ऐसा नहीं है, जिसे वह अपना कह सके।

तो वहां राज करे अंग्रेज रानी।

"यह नहीं कि इसके बारे में मैंने इतना अधिक सोचा हो, मेरे प्रिय! मैं तो तुम्हारे साथ ही आऊंगी। मैं गाती हूं और उसका जवाब क्या है?

कुमारी क्या तुम चलोगी संग संग मेरे,
महलों और नगर दोनों को छोड़कर,
मैं संभ्रान्त कुल-गोत्र में जन्मा हूं,
तुम्हें पहले होगा यह अनुमान तो लगा लो कि
घाटी रहते हैं कैसे हम?

"'तुम शिकारी हो गये?' मैं पूछती हूं, 'नहीं', मेरा प्रेमी जवाब देता है। 'शिकार चोर हो?'—'कुछ हद तक', वह कहता है।

और जब होता हूं, मैं अपने साथियों के संग,
मिलते हैं वासंती वन पादपों के नीचे,

"अपने और आप की तरह से भद्र महिलाओ तथा सज्जनो, मेरे आवारा बच्चो, हो घेरे से कहीं बहुत दूर।

हम क्या थे कभी, उस सब को जाते हैं भूल
और न ही सोचते हैं कि हम हैं क्या अब।

"वह गाता है, ओह, अरसा हुआ तुम्हारा रूप देखे, तुम बटमार ही हो ना लेकिन क्या वह है बटमार? हां, हां, सचमुच ही।

* वाल्टर स्कॉट (1771—1832) की कविता 'रोकबाय' (1813) से उद्धृत।—सं०

और फिर वह क्या जवाब देता है? वह कहता है: 'तुम जानो, तुम्हारी जोड़ी के रूप में कितना हीन हूं मैं।'

राक्षस, जिसकी लालटेन से उजाला होता है शाद्वल में
हो सकता है मुझसे अच्छा वर वही।

"यह सब बिल्कुल सच है। वासन्ती वन और उपत्यका में ज़िन्दगी ऐसी ही है निष्ठुर और सहज। जैसी कि वह बताता है: 'उनको मेरे साथ चलाने की बात मत सोचो।'

कौन जानता है कि घूम रहे हैं वहां पर कौन-कौन से भीषण पशु?
कुमारी! अनाम जीवन बिता रहा हूं मैं,
मरूंगा भी तो अनाम मौत ही;

"पर यही उसकी भूल थी, भले ही उस समय हम दोनों में से कोई भी भेद नहीं समझ सका था और फिर भी मैं अपनी बात पर अड़ी हुई थी।

अरे, किनारे हैं ब्रिनगाल नदी के बीहड़ और उजले,
और ग्रेटों के वन हैं हरे-भरे,
और मैं विचरण करूंगी वहां एडमंड के साथ,
तो वहा राज्य करे अंग्रेज़ रानी।

"और ऐसा ही, सचमुच, हुआ भी। मुझे किसी बात का ग़म नहीं हो सकता है; क्योंकि मुझे तो पहले ही चेतावनी मिल चुकी थी। इसी तरह से, मेरे बच्चो, मैं चाहूंगी कि तुम विवाह करो, सम्मान तथा पूरी बुद्धिमत्ता के साथ।

चन्द्रमा है शान्त,*
चढ़ रहा है ऊपर गुपचुप,
और नौजवान,
उद्यत हैं युद्ध के लिए...
शस्त्र सज्जित घोड़े पर सवार और तत्पर
...चीखती है बाला,
विदाई के दुख से

---

* मि० यू० लेरमोन्तोव की 'इसमाईल बेई' से उद्धृत।—सं०

मेरे प्रिय, बहादुर निर्भीक रहना
युद्ध करना
और करना नियति पर विश्वास।

("भूल जाओ कि मैंने क्या कहा था, अलेक्सान्दर, इस समय बस उसको सुनो भर!" फुसफुसाकर कहती है तथा दूसरे का हाथ थाम लेती है। "मैंने क्यों नहीं कहा ऐसा? लेकिन अब मैं ऐसा कहूंगी, बार-बार।" कोई दूसरी अपने पति को वचन देती है।)

"मैं इसी प्यार को स्वीकृति देती हूं बच्चों, और अपनी अंतरात्मा से आशीर्वाद देती हूं:

बनो बहादुर, मेरे प्रिय,
युद्ध करो,
और भरोसा करो नियति चक्र पर!

"इसने तो मेरे अंदर उत्साह का संचार फिर कर दिया है और निर्भीकता इसी प्रकार के तरल पदार्थ की मांग करती है।

ओह मेरी प्रियतमा,*
भर दो न मदिरा-पात्र
सोने का झागदार मध्वासव,

"निस्संदेह मध्वासव लाक्षणिक है। शब्दों के बिना संगीत की कल्पना नहीं की जा सकती। क्या कुछ शैम्पेन बची है? पूरी बोतल है? बढ़िया! लो खोलो!

मेरा मन मचल उठेगा,
फिर मनाओ आमोद-प्रमोद,
और पुराने दिनों की तरह!

"और क्या मैं पूछ सकती हूं कि यह हमारी प्रियतमा कौन है? यह मैं ही तो हूं।

हैं उसकी काली हैं भौंहें,
जूते उसके हैं चमचमाते, लाख की तरह

---

* 1837 के पोलिश युद्ध संबंधी उकाइनी महाकाव्य से उद्धृत।—सं०

और ताल दे रहे हैं, एड़ी बजा-बजाकर संगीत ..."

वह तत्काल अपने पैरों पर खड़ी हो गयी है। अपनी भौंहों पर हाथ तेज़ी से फेरा है, जिनका ज़िक्र हो चुका है और धीरे-धीरे ताल देती हैं।

"भद्र महिलाओ, भद्र जनो, दादा जी, बच्चो, उठाओ जाम — फिर आमोद-प्रमोद के लिए और पुराने ज़माने जैसी हंसी के लिए!"

"मेरी अपनी ख़ास प्रियतमा के लिए।"

"धन्यवाद आपको! मैं अपने स्वास्थ्य के लिए पी रही हूं।" और वह प्यानो की तरफ़ लपक पड़ी:

गम हो जाय धूल धूसरित!*

"और ऐसा ही होगा, ऐसा ही होगा!

और हृदय फिर प्राप्त करे
विश्वास में पूर्ण असीमित आनंद।

"निस्संदेह, ऐसा ही होगा।

उदासी भय और उदास आकृतियां**
प्रातः उड़ान भरती हैं छाया की तरह —
धरती पर प्रकट होता है नवयौवन
उदास अंधकार के लिए आनंदकर उजाला,
शीतल के लिए हार्दिक सुगंध —
मुझे खुमी के ऊपर गुलाब की गंध आ रही है।"

---

* नेक्रासोव की 'नव वर्ष' (1851) कविता से उद्धृत। — सं०

** अंग्रेज़ कवि थामस हुड (1799—1845) की कविता 'स्टेन्जाज़' का कुछ परिवर्तित रूप। — सं०

छठा अध्याय

दृश्य परिवर्तन

"अच्छा, हम चलते हैं," महिला बोली, लेकिन अब वह काले लिबास में नहीं थी। "चलो दुकान की ओर", आज उसका परिधान चमकदार गुलाबी है और उसके हैट का रंग भी यही है, लेकिन उसका दुपट्टा सफ़ेद है तथा उसके हाथों में गुलदस्ता है। उसके साथ मोसोलोव हैं; गाड़ी की अगली सीट पर मोसोलोव और निकीतिन बैठे हैं और तीसरा नौजवान कोचवान की जगह पर बैठा है। उसकी उम्र कितनी है? उसका दावा तो 25 वर्ष की होने का है, पर इतनी की है नहीं। अलबत्ता, 20 की तो है ही? लेकिन यह उसकी अपनी मर्ज़ी है वह अपनी उम्र में एक या दो वर्ष बढ़ा ले।

"इसके लिए मैं पूरे दो वर्षों से प्रतीक्षा करती रही हूं, मेरे प्रिय, नहीं—इससे भी अधिक समय से। जब मेरी इस नौजवान से मुलाक़ात हुई," वह निकीतिन की तरफ़ इशारा करती है, "तब यह पूर्वाभास मात्र था, धुंधली आशा जो शीघ्र ही निश्चितता में बदल गयी।"

"मैं आप से क्षमा चाहता हूं, महोदय," पाठक—और न केवल अनुभूतिक्षम पाठक बल्कि किसी भी प्रकार का पाठक यह समझते हुए स्तंभित हो जाता है कि "जब वह निकीतिन से मिली तब से दो से अधिक वर्ष बीत चुके हैं?"

"सही!" मैं जवाब देता हूं।

"लेकिन क्या उस रात ही वह ब्यूमोंट तथा किरसानोव-दम्पत्तियों से नहीं मिली थी, पिछले जाड़े में स्लेज की सवारी के समय?"

"इस बार भी सही," मैं जवाब देता हूं।

"फिर यह क्या है? आप लपककर 1865 में पहुंच रहे हैं?"

"जी हां, ऐसी ही बात है।"

"मेरे प्रिय मित्र! क्या यह बात इतनी अधिक मनोगम्य है!"

"मैं यह समझता हूं कि मुझे सब कुछ अच्छी तरह से पता है।"

"क्या कहने। आप यही आशा करेंगे कि हम आपकी बात सच मान लें?"

"मैं समझता हूं कि आप ऐसा नहीं करेंगे?"

"शायद ठीक ही कहते हैं!"

"अगर नहीं चाहेंगे तो नहीं ही चाहेंगे। बस मुझे अपनी उत्तर कथा को तब तक के लिए ताक पर रख देना होगा, जब तक कि आप उसे सुनना नहीं चाहें, पर मुझे यह विश्वास है कि वह समय बहुत दूर नहीं होगा।"

4 अप्रैल 1863